



# सतसई-सप्तक

अर्थात्

तुलसी, बिहारी, मतिराम, रसनिधि,  
रामसहाय, वृंद और विक्रम  
सतसइयों का संग्रह

संग्रहकर्ता और संपादक

श्यामसुंदरदास

प्रयाग

हिंदुस्तानी एकाडेमी, संयुक्त प्रांत

Published by  
The Hindustani Academy, U. P.,  
Allahabad.

---

---

First Edition  
Price Rs. 6/—

---

---

Printed by  
A. Bose,  
at The Indian Press, Ltd.,  
Benares-Branch.

सतसई-सप्तक





## भूमिका

आज दो वर्ष के लगभग होता है जब एक दिन मेरे मन में यह भावना उत्पन्न हुई कि हिंदी की प्रसिद्ध प्रसिद्ध सतसइयों का एक संग्रह निकाला जाय तो अच्छा हो। तुलसी, बिहारी, मतिराम, राम-सहाय और वृंद की सतसइयों पर तो सहसा ध्यान चला गया और यह विचार हुआ कि सतसई-पंचक के नाम से यह ग्रंथ प्रकाशित किया जाय। फिर ध्यान आया कि हिंदी में रसनिधि के दोहे प्रसिद्ध हैं और अधिक संख्या में मिलते भी हैं। उनमें से यदि ७०० दोहे चुन लिए जायें तो एक नई सतसई प्रस्तुत हो सकती है। इस विचार के अनुसार रसनिधि के दोहों का चुनना आरंभ हुआ और साथ ही एक सातवीं सतसई की खोज हुई। चंदन की सतसई भी प्रसिद्ध है, पर वह कहीं मिलती नहीं। इस बीच में एक दिन स्वर्गवासी लाला भगवानदीन ने विक्रम सतसई का ध्यान दिलाया। खोज करने पर कुँआर कन्हैया जू की कृपा से चरखारी से उसकी एक प्रति प्राप्त हुई। एक दूसरी प्रति के प्राप्त करने का भी उद्योग किया गया पर उसमें सफलता न हुई। अस्तु इस प्रकार इन सात सतसइयों का संग्रह प्रस्तुत हो गया। हिंदुस्तानी एकडेंमी ने इस सतसई-सप्तक के प्रकाशित करने की इच्छा प्रकट की और इस प्रकार इस ग्रंथ का छपना आरंभ हो गया। इसकी दीपिका तथा प्रस्तावना लिखने और मूल दोहों को पुनः संपादित करने में मेरे प्रिय शिष्य पंडित पीतांबरत्त बडध्वालद ने मेरी विशेष सहायता की है जिसके लिये मैं उनका कृतज्ञ हूँ। साथ ही मित्रवर रत्नाकरजी ने कठिन

स्थलों का अर्थ सुलभाने तथा संदिग्ध पाठों के संशोधन में मेरी विशेष सहायता की है, जिसके लिये मैं उनका अत्यंत आभारी हूँ ।

प्रतीकानुक्रमणिका भी यथासमय तैयार हो गई थी पर जब दुहराकर उसकी जाँच करने का समय आया तब पता लगा कि उसमें बहुत सी त्रुटियाँ हैं । यह काम पुनः करना पड़ा । इससे पुस्तक के प्रकाशन में डेढ़ महीने का विलंब हो गया ।

काशी  
१३-५-३१

}

श्यामसुंदरदास

# सूची

प्रस्तावना				१—५३
तुलसी-सतसई	...	...	...	१
बिहारी-सतसई	...	...	...	६१
मतिराम-सतसई	...	...	...	११७
रसनिधि-सतसई	...	...	...	१७३
राम-सतसई	...	...	...	२२६
वृंद-सतसई	...	...	...	२८७
विक्रम-सतसई	...	...	...	३४३
दीपिका	...	...	...	४०१
प्रतीकानुक्रमणिका	...	...	...	५०५



## प्रस्तावना

रचना-शैली के विचार से काव्य दो प्रकार का होता है—एक मुक्तक और दूसरा प्रबंध। प्रबंध-काव्य में सब पद्य एक दूसरे के आसरे खड़े रहते हैं। वह एक सुसंगठित समान है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति दूसरे के कार्य से लाभ उठाता है और स्वयं अपने कार्य से दूसरों को लाभ पहुँचाता है। एक के बिना दूसरा रह नहीं सकता। परंतु मुक्तक के राज्य में प्रत्येक पद्य स्वयं पूर्ण है। मुक्तक पद्य उस व्यक्ति को समान है जो स्वयं अपने लिये खेती करता है, कपड़ा बुनता है तथा अपने अस्तित्व के लिये सभी आवश्यक कार्यों को स्वयं करता है। मुक्तक काव्य में एक ही पद्य अपनी एक अलग दुनिया बनाकर रहता है। उसमें प्रत्येक पद्य की अलग सत्ता रहती है। अपने अस्तित्व के लिये उसे दूसरे पद्यों का सहारा नहीं लेना पड़ता। यद्यपि अभिनवगुप्ताचार्य ने कहा है—

‘पूर्वापरनिरपेक्षापि हि येन रसचर्चणा क्रियते तदेव मुक्तकम्।’

अर्थात् पूर्वापर प्रसंग के निर्देश के लिये और पद्यों का सहारा न होने पर भी जिसमें रस की अभिव्यक्ति हो जाय उसे मुक्तक कहते हैं, फिर भी यह आवश्यक नहीं कि मुक्तक पद्य में किसी रस की निष्पत्ति हो ही। उसमें सुभाषित मात्र भी हो सकता है, जिसमें केवल वाग्वैदग्ध्य की चमक हो। सुभाषित से हमारा तात्पर्य नीति-धर्म के उपदेश से युक्त सूक्ति से है। वास्तव में मुक्तक की स्वाभाविकता नीति-सुभाषित ही में परिलक्षित होती है। इसी लिये उसकी रचना में भी सौकर्य होता है। नीति-सुभाषित को पूर्वापर प्रसंग की

इतनी आवश्यकता नहीं रहती। परंतु जहाँ मुक्तक में रस का विचार रखा जाता है वहाँ मुक्तक-रचना बहुत कठिन हो जाती है। साहित्य-शास्त्र के अनुसार रस की निष्पत्ति के लिये विभाव, अनुभाव, संचारी भाव आदि बहुल सामग्रो का स्थायी भाव के साथ मिश्रण आवश्यक है। प्रबंध की विस्तृत भूमि में इस सामग्रो को जुटा रखने के लिये पर्याप्त स्थान रहता है। परंतु मुक्तक की संकीर्ण नली में इस सामग्रो को ला भरना बहुत कठिन काम है। प्रबंध में तो प्रसंग की परिस्थिति के साहचर्य से शब्द की अभिधा शक्ति द्वारा इस विषय में काम निकाल लिया जा सकता है, परंतु मुक्तककार को बार बार व्यंजना का आश्रय लेना पड़ता है। यह होते हुए भी यह बात नहीं है कि प्रत्येक दशा में मुक्तक-रचना प्रबंध-रचना से कठिन ही हो। दोनों की अपनी अपनी कठिनताएँ और सुविधाएँ हैं। मुक्तक में बहुधा पूर्वापर प्रसंग की कल्पना का कार्य सहृदय पाठक या श्रोता पर छोड़ दिया जाता है। श्रोता को मुक्तक का आनंद लेने के लिये एक पूरे प्रसंग का स्वतः अध्याहार करना पड़ता है। इससे बहुधा मुक्तककार को स्वतः सहृदय-समाज की प्रतिभा का श्रेय भी मिल जाता है और कवि की कल्पना पर अप्रासंगिकता का दूषण नहीं लगने पाता, चाहे वस्तुतः वह उसमें हो ही। परंतु इस विषय में मुक्तककार से प्रबंधकार का उत्तरदायित्व बहुत बढ़ा-चढ़ा रहता है। उसकी रचना का सारा सौंदर्य उसी की कल्पना पर अवलंबित रहता है और प्रसंग का थोड़ा भी अनौचित्य सहसा खटक जाता है।

मुक्तक और प्रबंध में भेद होने पर भी वे ऐसी परस्पर-विरोधिनी शैलियाँ नहीं हैं कि उनमें एक दूसरे का साथ ही न बन पड़े। बिना एक पूरे प्रसंग की कल्पना के बहुधा मुक्तक पद्यों का समझ में न आना इस बात का प्रमाण है कि उसका स्वाभाविक स्थान प्रबंध

के बीच में ही है। मुक्तक एक ऐसी मुक्तामणि है जिसे चाहे आप शतकों, सप्तशतकों वा सहस्रकों की छोटी-बड़ी पिटारी में संग्रह करे अथवा किसी प्रबंध के सूत्र में गूँथे। गोसाईं तुलसीदासजी की दोहावली और सतसई में कई मुक्तक दोहे ऐसे हैं जो रामचरित-मानस के प्रबंध-सूत्र से अलग करके संचित किए हुए मुक्ता-मणि हैं। यद्यपि मुक्ताएँ एक दूसरे से असंबद्ध एक राशि के रूप में कोष में भी जमा रखी जा सकती हैं, तथापि उनकी पूर्ण शोभा तभी खिल सकती है जब वे सूत्र में पिरोई जाकर द्वार में गुंथ जायँ। इसी प्रकार मुक्तक पद्य भी अपना पूर्ण प्रभाव तभी डाल सकता है जब वह अपनी गर्वीली स्वच्छंदता को त्यागकर प्रबंध के बीच में अपना उचित आसन ग्रहण करे। प्रबंध का प्रभाव स्थायी होता है और मुक्तक का क्षणिक। प्रबंध में “उत्तरोत्तर अनेक दृश्यों द्वारा संघटित पूर्ण जीवन” का दर्शन करते हुए “कथा-प्रसंग की परिस्थिति में अपने को भूला हुआ पाठक मग्न हो जाता है और हृदय में एक स्थायी प्रभाव ग्रहण करता है।” किंतु “मुक्तक में रस को ऐसे स्निग्ध छींटे पड़ते हैं जिनसे हृदय-कलिका थोड़ी देर के लिये खिल उठती है।” उसमें अधिक से अधिक “एक मर्मस्पर्शी खंड-दृश्य” के सहसा सामने ले आए जाने के कारण पाठक या श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाता है सही, किंतु कुछ क्षणों ही के लिये। शैली की अत्यंत संचिप्ता के कारण प्रभाव भी कुछ क्षण हो जाता है।

परंतु इस स्वावलंबी संचिप्ता का अपना ही उपयोग और महत्त्व है। इसके कारण मुक्तक का वहाँ उपयोग हो सकता है जहाँ प्रबंध का नहीं हो सकता। प्रबंध का आनंद उठाने के लिये स्वच्छंद अवकाश की आवश्यकता है। जहाँ मनुष्य एक दूसरे का समय कुछ आनंद-विनोद में व्यय कर रहे हैं वहाँ प्रबंध के लिये स्थान नहीं है। सभा-समाजों के लिये मुक्तक की ही संचिप्त रचना उपयुक्त है। विद्वान्



आलोचक पंडित रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में, जिनके एक दो वाक्यों का अवतरण हम ऊपर दे चुके हैं, “यदि प्रबंध-काव्य एक विस्तृत वनस्थली है तो मुक्तक एक चुना हुआ गुलदस्ता है।” सभा-समाजों की शोभा बढ़ाने के लिये एक वनस्थली की वनस्थली नहीं उठा ले आई जा सकती, जब कि गुलदस्तों और स्तवकों से सभा-मंडपों की सजावट करना अवसरोचित और स्वाभाविक है। मुक्तकों के इतने अधिक प्रचार का यही मूल कारण है। राजा-महाराजाओं की सभाओं तथा सहृदय कवि-मंडलियों में, जहाँ अनेक कवि अपनी प्रतिभा का चमत्कार दिखाने को लालायित रहते हैं वहाँ, अपनी कवित्व-शक्ति का चमत्कार दिखाने के उद्देश्य से यदि कोई कवि प्रबंध-काव्य लिखकर ले जाय तो वह कहाँ तक अपने महत्त्व की सद्यःस्वीकृति की आशा कर सकता है ? इसके लिये मुक्तक का ही आश्रय लिया जा सकता है। फलतः मुक्तक काव्य ने सभा-समाजों की चहल-पहल की वृद्धि में योग दिया और सभा-समाजों की चहल-पहल ने मुक्तक काव्य के प्रचार में। इन्हें मुक्तकों का संग्रह हमें आजकल नाना शतकों, सप्तशतियों और भांडागारों में मिलता है।

मुक्तकों के संग्रहों में सात सौ की संख्या के लिये जितना आग्रह दिखाई देता है उतना और किसी संख्या के लिये नहीं। अमरुक ने शतक लिखा और रसनिधि ने हजार लिखकर मुक्तक को हजारी का मनसब दिया सही, परंतु विशेषतः लोगों ने यही प्रयत्न किया कि उनके संग्रहों में लगभग सात सौ पद्य रहें। सात सौ से कुछ अधिक पद्य रहने पर भी उनके संग्रहों के नाम सप्तशती या सतसई ही रखे गए। ‘सतसई’ संस्कृत ‘सप्तशती’ का ही हिंदी रूप है। संस्कृत में गोवर्धनाचार्य की आर्यासप्तशती है, प्राकृत में सातवाहन की संग्रह की हुई गाथासप्तशती है। हिंदी में तो आठ नौ सतसइयों के नाम कहे जाते हैं जिनमें से छः के साथ रसनिधि

के रतनहजारा का संचित संस्करण जोड़कर यह सतसई-सप्तक प्रस्तुत किया गया है। एक धार्मिक ग्रंथ दुर्गा सप्तशती में भी इसी संख्या को आदर दिया गया है। हाल में 'वियोगो-हरि' जी की वीर-सतसई निकली है। नहीं जानते कि इस सात सौ की संख्या में क्या विशेषता है, जिससे लोग इसे इतना पसंद करते हैं या यों ही अनुकरण मात्र पर 'सतसई' लिखने की प्रथा चल पड़ी है। कहते हैं मंत्र-साहित्य में भी सात की संख्या को महत्त्व दिया गया है। कदाचित् इसी कारण से साहित्य-क्षेत्र में भी उसका आदर हुआ हो। सप्तशती और सतसई श्रुति-मधुर नाम तो अवश्य हैं।

यदि सतसई लिखने की प्रथा अनुकरण ही पर चली हो तो इसमें संदेह नहीं कि आदिम आदर्श सातवाहन की गाथासप्तशती ने ही उपस्थित किया। गोवर्धनाचार्य ने गाथासप्तशती की ही देखा देखी संस्कृत में अपनी आर्यासप्तशती लिखी। उनकी एक आर्या से इस बात का संकेत मिलता है—

वाणी प्राकृत समुचितरसा बलेनैव संस्कृतं नीता ।

निम्नानुरूपनीरा कलिंदकन्येव गगनतलम् ॥

( वाणी प्राकृत ही में रसीली लगती है, उसे मैं बलपूर्वक संस्कृत में बदल रहा हूँ, नीचे बहनेवाली यमुना को आकाश की ओर ले जाने का प्रयत्न कर रहा हूँ । ) "वाणी प्राकृत समुचितरसा" कहते हुए गाथासप्तशती पर उनकी दृष्टि थी इसमें संदेह नहीं, और "बलेनैव संस्कृतं नीता" से ध्वनित होता है कि उन्होंने किसी सीमा तक प्राकृत से अनुवाद किया है। आर्यासप्तशती में गाथासप्तशती का विषय और छंद-संख्या दोनों दृष्टियों से अनुकरण किया गया है। दुर्गासप्तशती और गाथासप्तशती में यदि कोई संबंध हो सकता है तो यही कि उसमें इसकी छंद-संख्या भर का अनुकरण है।

हिंदी में भी यह बात पाई जाती है। विहारी तथा उन्हीं के ढंग के कुछ कवियों की सतसइयों में गाथासप्तशती और आर्या-सप्तशती को विषय और छंद-संख्या दोनों के संबंध में आदर्श माना गया है, जब कि तुलसीदास आदि कुछ कवियों ने केवल छंद-संख्या के संबंध में अपनी सतसइयों में इन प्राचीन सप्तशतियों का अनुसरण किया है। इन पिछली सतसइयों के लिये विषय की दृष्टि से महाभारत में विदुर अथवा भीष्म पितामह-कथित नीति का आदर्श चुना गया है। इनमें भक्ति-संबंधी कुछ मुक्तकों को छोड़कर, जिनकी गणना शांतिरस में की जा सकती है, अधिकांश पद्य सूक्ति मात्र ही हैं। प्रस्तुत संग्रह में उपर्युक्त दोनों प्रकार की रचनाएँ संगृहीत हैं। तुलसीदास और वृंक्ष की सतसइयाँ सूक्ति-सतसइयाँ हैं और शेष शृंगार-सतसइयाँ।

पहले सूक्ति-सतसइयों को लीजिए। सूक्ति या सुभाषित का अर्थ ही अच्छे कथन से है। सूक्ति का प्रधान उद्देश्य उपदेश है। नित्य प्रति के व्यवहार में जिन बातों से लाभ उठाया जा सकता है उन्हीं बातों को सूक्तिकार एक मार्मिक और हृदयग्राही ढंग से कहता है, जिससे वह जनसाधारण के मन में चुभ जाती हैं। सूक्तिकार कोई नई बात कहने नहीं जाता। सामान्य अनुभूति के क्षेत्र के सामाजिक, नैतिक, धार्मिक और कभी कभी पारमार्थिक तथ्यों को ही वह एक नए और विशेष ढंग से कहता है। सामान्य अनुभूति-क्षेत्र की बात होने के कारण उसकी तथ्यता के विषय में किसी को अधिक संदेह में पड़ने की अथवा छानबीन करने की आवश्यकता तो पड़ती नहीं, “यह बात कितनी सच्ची है, इस ढंग से यह मेरे मन में पहले क्यों नहीं आई” कुछ ऐसी मनोवृत्ति के साथ वह श्रोता के मन में अपने लिये और भी गहरा स्थान कर लेती है। सूक्ति का आधार वह चमत्कार है जिसमें कोई पुरानी बात आश्चर्य

के साथ नए रूप में देखी जाती है। इस प्रभाव को लाने के लिये सूक्तिकार के पास कई साधनों का होना आवश्यक है। सबसे पहले उसके कथन में कुछ वक्रता या बाँकापन होना चाहिए। उसे घुमाव-फिराव से बात कहनी चाहिए। बिल्कुल सीधे ढंग से कहने से बात का महत्त्व बहुत कुछ घट जाता है। सिंहद्वार या सदर फाटक से आक्रमण करनेवाले को दृढ़ अवरोध का सामना करना पड़ता है। इसी लिये किले में प्रवेश करने के लिये आक्रमणकारी ऐसे किसी किनारे के छोटे-मोटे दरवाजे की टोह में रहते हैं जिसका कोट के निवासियों को उतना खयाल न हो। दिल में प्रवेश करने के लिये भी बात को ऐसे ही मार्ग ढूँढ़ने चाहिए। विदग्ध वाणी को ऐसे मार्ग सहज ही मिल जाते हैं। जो बात बहुत दिनों के शास्त्रार्थ और तर्क-वितर्क से किसी के मन में न जमाई जा सके वह सहसा किसी चतुराई भरी एक छोटी सी बाँकी उक्ति से एक क्षण में सुभाई जा सकती है। 'सहसा' शब्द पर विशेष ध्यान देना चाहिए। क्योंकि विदग्ध वाणी का प्रभाव भी बिना सहसा कहे बहुत कुछ चीग हो जाता है। अचानक और शीघ्र आक्रमण प्रभावशाली होता है। यदि आक्रांती को तैयारी का अवसर दे दिया जाय तो फिर विजय अनिश्चय में पड़ गई। विजय आक्रांत को आश्चर्य में डालने में है। आश्चर्य उतना अधिक गहरा होगा जितनी मात्रा में उक्ति सहसा कही जायगी और वेग-पूर्ण होगी। इन्हीं गुणों के कारण कोई व्यक्ति प्रत्युत्पन्नमति कहलाता है। अवसर पर फबती बात को अचानक कह बैठना यही प्रत्युत्पन्न मति का लक्षण है। सूक्तिकार को प्रत्युत्पन्नमति होना चाहिए। यह बात तो बिना कहे ही माननी चाहिए कि सूक्तिकार के पास ज्ञान का भांडार पर्याप्त होना चाहिए, परंतु उससे अधिक उसके पास अवसर के उपयुक्त उचित उपयोग करने की शक्ति होनी चाहिए।

जो व्यक्ति सुप्त स्मृति-भांडार में से प्रस्तुत घटना से मेल खाती हुई बातों को चुनकर एकाएक संबंध न घटित कर सके उसे अपनी प्रत्युत्पन्न मति और सभा-चातुरी का गर्व न करना चाहिए। दृष्टांत सूक्तिकार का सबसे बड़ा बल है। यदि उक्ति का बर्णन तलवार की धार है तो दृष्टांत तलवार की मूठ है। मूठ पर जितना अधिकार रह सकेगा, प्रहार उतना ही गंभीर और मर्मभेदी होगा।

ऊपर हम सूक्ति में वक्रता अथवा उक्ति-वैचित्र्य का उल्लेख कर आए हैं। वक्रोक्ति से यह न समझना चाहिए कि अर्थ विलकुल गोरखधंधे ही में बंद कर दिया जाय। ऐसा करना सूक्ति को उद्देश्य-भ्रष्ट करना होगा। जो बात समझ ही में न आवे उसका प्रभाव क्या हो सकता है ? किसी उक्ति की प्रभविष्णुता की रक्षा तभी तक हो सकती है जब तक उसमें भाषा की स्वाभाविकता की रक्षा हो। भाषा बनावटी न होनी चाहिए। जहाँ तक हो उसे नित्य की बोलचाल की भाषा की तरह चलती होना चाहिए। बोलचाल की भाषा का संपूर्ण माधुर्य निचुड़कर मुहावरे में आता है। परंतु मुहावरे का पूरा सौंदर्य बोलचाल की सरल और स्वाभाविक भाषा के संसर्ग में ही खिल सकता है। कृत्रिम भाषा के मेल में तो वह बहुत विलुप्त हो जायगा। कृत्रिम शैली के उदाहरण में गोसाईंजी के कूट रखे जा सकते हैं, जो हमारी समझ में किसी प्रकार भी उनके गौरव को बढ़ानेवाले नहीं हो सकते। क्लिष्ट कल्पना और विदग्धता इन दोनों के प्रभाव परस्पर विरोधी होते हैं। बल्कि ये कहना चाहिए कि जिस रचना में क्लिष्ट कल्पना आ जाती है उसका कोई प्रभाव ही नहीं होता, जब कि विदग्धता-सिद्ध वाणी अत्यंत प्रभविष्णु होती है। प्रभविष्णुता और प्रसाद गुण अगल-बगल चलते हैं। जो बात जितनी सुगमता से समझ में आवेगी

वह हृदय पर उतना ही अधिक भी प्रभाव डालेगी । यही संक्षेप में सूक्ति के गुण हैं ।

हम कह चुके हैं कि प्रस्तुत संग्रह में तुलसी-सतसई और वृंद-सतसई सूक्ति सतसईयों के अंतर्गत आती हैं । तुलसी-सतसई गोसाईं तुलसीदासजी के फुटकर दोहों का संग्रह है । गोसाईंजी की शिष्य-परंपरा में उनका जन्म-संवत् १५५४ माना जाता है । शिवसिंह सेंगर ने संवत् १५८३ में इनका जन्म होना लिखा है । पंडित रामगुलाम द्विवेदी के मत का समर्थन करते हुए डाकूर त्रिशर्जन १५८६ में उनका जन्म मानते हैं । हमने गोसाईंजी के जीवन-चरित में वेणोमाधवदास के साक्ष्य पर सं० १५५४ को ही ठीक माना है । वेणोमाधवदास के मूल गोसाईं-चरित के अनुसार इनका जन्म राजापुर में हुआ था । इनकी माता का नाम हुलसी था । इसका संकेत गोस्वामीजी की रचनाओं से भी मिलता है । इनके पिता राजगुरु थे । किंवदंती के अनुसार उनका नाम आत्माराम दूबे था । माता के गर्भ में ही इनके दाँत उग आए थे । जन्मते ही ये रोए-चिल्लाए नहीं बल्कि इन्होंने स्पष्टतया 'राम' शब्द का उच्चारण किया । इससे पहले कि बिरादरी के लोगों की सम्मति से पिता यह निश्चय कर सकें कि बालक का क्या करना चाहिए, हुलसी ने उसे अपनी एक दासी की सास के पास भेज दिया, जिसने पाँच वर्ष तक हरिपुर में उसका पालन-पोषण किया । हुलसी तो बालक को जन्म देने के दो ही तीन दिन पीछे मर गई थी । अब यह खो भी साँप के डसने से मर गई । कुलचणो समझकर पिता ने भी बालक की सँभाल नहीं की । कुछ दिनों तक तो बालक दरवाजे दरवाजे राम का नाम लेकर माँगता फिरा । इसलिये लोग इसे रामबोला कहते थे । जन्मते ही राम कहना भी उसके रामबोला कहलाए जाने का एक कारण

था। इस दशा में स्वामी रामानंद के शिष्य अनंतानंद को चले नर-  
हर्यानंद ने उसका उद्धार किया और अपना शिष्य बनाकर वे उसका  
पालन-पोषण करने लगे। उन्होंने इनके सब संस्कार किए और  
रामबोला से बदलकर तुलसीदास नाम रखा। कुछ समय तक  
तुलसीदास अपने गुरु के साथ भ्रमण करते रहे और समय समय  
पर रामचंद्र की कथा सुनते रहे, जिससे इनके हृदय में उत्कट राम-  
भक्ति का बीज बोया गया। फिर पंद्रह वर्ष तक ये काशी  
में शेषसनातनजी के पास शिष्या पाते रहे। उनके स्वर्गवासी  
होने पर जब ये राजापुर गए तो इनका सारा परिवार नष्ट हो  
चुका था। इनका विवाह यमुना के दूसरे तट पर स्थित तारपिता  
गाँव के किसी ब्राह्मण की कन्या के साथ हुआ था। अतिशय  
प्रेम के कारण एक दिन इनकी स्त्री के अपने मायके चले जाने पर  
ये भी उसके पीछे पीछे हो लिए। इस पर उसने इन्हें बहुत  
फिड़का जिससे इनको वैराग्य हो आया। इन्होंने चारों धाम  
की यात्रा की और जीवन पर्यंत अपने इष्टदेव का निरंतर  
आराधन करते हुए संवत् १६८० में अपनी इहलोक-लीला  
संवरण की।

सतसई के अतिरिक्त इन्होंने रामचरितमानस, गीतावली, विनय-  
पत्रिका, कवितावली, दोहावली आदि लगभग बारह उत्कृष्ट ग्रंथों की  
रचना की। पंडित रामगुलाम द्विवेदी के साथ कुछ लोगों को  
सतसई के गोसाईंजी रचित होने में संदेह है, क्योंकि इसमें  
कूट रचनाओं की अधिकता है। महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर  
द्विवेदी ने उसे किसी गाजीपुर-निवासी तुलसी-कायस्थ की रचना  
माना है, क्योंकि उसमें गणित का बहुत गहरा ज्ञान प्रदर्शित  
किया गया है, जो एक कायस्थ के ही उपयुक्त हो सकता है।  
कुछ ऐसे शब्दों का भी व्यवहार हुआ है जो गाजीपुर के अतिरिक्त

और कहीं प्रयोग में नहीं आते । यदि इस प्रकार की तर्क-शैली से काम लिया जाय तो गोसाईजी के गनी गरीब इत्यादि शब्दों के प्रयोग करने से कोई गोसाईजी को ईरान ले दौड़ेंगे और उनकी ज्योतिष-संबंधी रचनाओं के कारण उन्हें एक अन्य तुलसी जोशी की कल्पना करनी पड़ेगी । फिर जो लोग सतसई को गोसाईजी की नहीं मानते वे दोहावली को उनकी मानते हैं । परंतु दोहावली के लगभग डेढ़ सौ दोहे सतसई में मिलते हैं और दोहावली भी कूट रचनाओं से खाला नहीं है । सतसई में की जानकी-उपासना से भी लोगों को इसके तुलसीकृत होने में संदेह होता है । परंतु वेणीमाधवदास के मूलचरित्र से स्पष्ट है कि जिस समय उन्होंने सतसई की रचना की उस समय उनका मुकाब जानकीजी की ओर अधिक हो रहा था । गोसाईजी ने स्वयं सतसई का रचना-काल यों दिया है—

अहि-रसना (२) धन-धेनु (४) रस (६) गनपति (१) द्विज गुरुवार ।  
माधव सित सिय जनम तिथि सतसैया अवतार ॥

इससे संवत् १६४२ वैशाख मास में सीता की जन्म-तिथि पर यह ग्रंथ लिखा गया है । वेणीमाधवदास ने भी इस ग्रंथ के लिखे जाने का यही समय दिया है । सं० १६४० में गोसाईजी ने जनकपुर-यात्रा की । वेणीमाधवदास ने तो उन्हें जानकीजी के हाथ की खीर तक खिलाई है । तुलसी-सतसई के राजनीति और आत्मबोध-निरूपण सर्ग राजा जनक के स्मारक से लगते हैं । फिर जानकी-भक्ति राम-भक्ति की विरोधिनी भी नहीं है । उन्होंने सतसई में भिन्न भिन्न विषयों पर जो मत प्रकट किए हैं उनका अन्य ग्रंथों से विरोध भी नहीं पड़ता । इसके अतिरिक्त इस सतसई के कर्त्ता ने अपना निवास-स्थान गंगा किनारे लोलार्क के पास बताया है जो गोसाई



तुलसीदासजी के सिवाय और किसी का निवास-स्थान नहीं हो सकता—

रवि चंचल अरु ब्रह्मद्रव, बीच सुवास विचारि ।

तुलसिदास आसन करे, अवनिमुता उर धारि ॥

इन सब बातों से हमें इस सतसई को गोसाईंजी कृत मानने में कोई अड़चन नहीं जान पड़ती ।

तुलसी-सतसई में सात सर्ग हैं । प्रथम सर्ग में भक्ति-विषयक दोहे हैं, द्वितीय में उपासना पराभक्ति के, तीसरे में सांकेतिक वक्रोक्ति से राम-भजन किया गया है । चौथे, पाँचवें और छठे में क्रमशः आत्मबोध, कर्म-सिद्धांत और ज्ञान-सिद्धांत संबंधी दोहे और सातवें सर्ग के दोहों में राजनीति का निरूपण किया गया है । सूक्ति की जो कसौटी ऊपर निर्धारित की गई है उस पर गोसाईंजी के सब दोहे खरे नहीं उतरते । कुछ कबीर की साखों के ढंग पर कोरे उपदेश मात्र हैं जिनका महत्त्व यही है कि उनमें एक महान् तथ्य का कथन है । परंतु कथन में कितना ही महत्त्वपूर्ण तथ्य क्यों न हो जब तक वह प्रभावपूर्ण भी न हो तब तक उसका उतना मूल्य नहीं हो सकता ।

ज्ञान गरीबी गुरुधरम, नरम बचन निरमोख ।

तुलसी कबहुँ न छाँड़िए, सील सत्य संतोख ॥

इस सामान्य उपदेश से हमारा ज्ञान भर बढ़ सकता है, उसका कुछ प्रभाव भी हमारे ऊपर पड़ेगा या नहीं यह बाहरी परिस्थितियों पर निर्भर है; स्वयं इस उक्ति में कोई शक्ति नहीं है । प्रभावशाली होने के लिये सूक्ति में ज्ञान और शक्ति दोनों का सम्मिश्रण होना चाहिए । भारतीयों का सा अशक्त ज्ञान दुनिया के किसी काम में नहीं आ सकता, चाहे प्रत्येक देश के दो चार व्यक्ति उसकी प्रशंसा के पुल बाँधते रहें ।

इसी प्रकार तुलसी-सतसई का एक सर्ग का सर्ग कूट-कविताओं से भरा है जिनकी रचना केवल इसलिये की गई जान पड़ती है कि गोसाईजी अपने समय की सभी प्रचलित शैलियों में अपनी सिद्धहस्तता दिखाना चाहते थे । अन्यथा उनसे कोई विशेष प्रयोजन सिद्ध होता नहीं दिखाई देता । अर्थ तक पहुँचने के लिये ऐसी भूलभुलैयाँ से जाना पड़ता है कि लक्ष्य तक पहुँचने में कठिनता होती है । इस भूलभुलैयाँ के विशेषज्ञ टीकाकारों का भी विश्वास नहीं किया जा सकता । तुलसी-सतसई पर दो टीकाएँ हैं और दोनों में कूटों के संबंध में मतभेद दिखाई देता है । सचमुच कूटों की रचना से गोसाईजी का गौरव नहीं बढ़ा है, परंतु केवल इसी कारण हम एक तथ्य का अस्तित्व नहीं मिटा सकते ।

इतना होने पर भी गोसाईजी की सतसई में सुंदर मार्मिक सूक्तियाँ जहाँ-तहाँ बिखरी पड़ी हैं । उदाहरण-स्वरूप थोड़ी सी यहाँ पर दी जाती हैं—

हरे चरहिं तापहिं बरे, फरे पसारहिं दाय ।

तुलसी स्वारथ मीत जग, परमारथ रघुनाथ ॥

जगत् की स्वार्थपरता का कैसा स्पष्ट चित्र है । जब तक लता-वृक्षादि हरे रहते हैं वे चरे जाते हैं, जब उन पर फल लगते हैं तब सब लोग उनके फलों को खाते हैं परंतु जब पेड़ सूख जाते हैं तब उनके उपकार भुला दिए जाते हैं और लोग उन्हें जलाकर तापने लगते हैं ।

स्वामी होना सहज है, दुरलभ होना दास ।

गाडर लायो ऊन को, लाग्यो चरन कपास ॥

नाम मात्र को स्वामी होना तो सहज है परंतु वास्तविक स्वामी बनी हो सकता है जो उनकी सेवा करे जिनका वह स्वामी बनता है । उन के लिये यदि कोई भेड़ें लावे और उनकी देख-भाल और दहल-

सेवा न कर सके तो वे उसकी कपास भी चर लेंगी और शायद ला-  
परवाही के कारण लूट हो जाने से ऊन भी उनसे न मिल सकेगा ।

चलब नीति-मग राम-पग प्रेम निबाहब नीक ।

तुलसी पहिरिय सो बसन जो न पखारव फीक ।

इस बात को सभी पसंद करेंगे कि कपड़ा वही पहनना चाहिए जिसकी चटक धोने से फीकी न पड़े । जब सुननेवाले को मालूम होता है कि राम के चरणारविंद के सहारे न्याय-पूर्वक चलते हुए भगवत्-प्रेम का निर्वाह करना सदा एकरस चटकवाले वस्त्र को पहनने के समान है तब उसकी रुचि उस दिशा की ओर मुड़ ही जाती है ।

राजा को कैसा होना चाहिए, जरा यह भी सुन लीजिए—

बरखत हरखत लोग सब, करखत लखै न कोइ ।

तुलसी भूपति भानु सम, प्रजा भाग बस होइ ॥

सूर्य कब और कैसे पृथ्वी से रस को खींच लेता है, यह प्रकट रूप से किसी को भी नहीं देख पड़ता । किंतु जब पृथ्वी से खिंचा हुआ जल बरसता है तब सभी देखते हैं और प्रसन्न होते हैं । इसी प्रकार राजा को भी चाहिए कि वह कर इस प्रकार से उगाहे कि प्रजा को जान न पड़े और फिर कर रूप में आई हुई धनराशि को प्रकट रूप से प्रजा के हित में खर्च करे ।

ऊपर दी हुई सूक्तियों में रचना-चातुर्य के सहारे अप्रस्तुत दृष्टांत का प्रभाव प्रस्तुत में आरोपित कर दिया गया है । इसी प्रकार की सूक्तियाँ कविता के अंतर्गत आ सकती हैं । कूट रचनाओं को कविता मानना प्रायः कविता का निरादर ही करना है । कभी-कभी कूट में भी वाग्बिदग्धता के दर्शन हो सकते हैं, जैसे नीचे लिखे इस कूट में—

जग ते रहु छत्तीस है, राम चरन छव-तीन ।

तुलसी देखु बिचारि हिय, है यह मतो प्रबोन ॥

इसमें बात को दृष्टि-पथ में प्रस्तुत करने का जो आकस्मिक और आश्चर्यकर ढंग है उससे मन पर बहुत शीघ्र और गहरा प्रभाव पड़ता है ।

परंतु इसके लिये गोसाईं तुलसीदास के सदृश शक्तिशाली और तीव्र कल्पनावाले कवि की आवश्यकता है । गोसाईंजी में भी एक ही दो ऐसे कूट मिलते हैं और यह भी संभव है कि कुछ लोग इनको कूट मानने के लिये ही तैयार न हों ।

इस संग्रह में दूसरी सूक्ति-सतसई वृंद की है । वृंद का जन्म संवत् १७०० के आश्विन की शुक्ला प्रतिपदा गुरुवार को मेड़ते में हुआ । इनके पिता कविरूपजी ढिंगल भाषा के कवि थे । वृंद की शिक्षा काशी में हुई । इनके गुरु तारा पंडित ने इन्हें संस्कृत और पिंगल का अच्छा अध्ययन कराया था । काशी से लौटने पर पहले ये कुछ समय तक जोधपुर के महाराज जसवंतसिंह के दरबार में रहे । सं० १७३० में वजीर नवाब मुहम्मदशाह के द्वारा इनकी पहुँच औरंगजेब के दरबार में हुई, जहाँ इनको १० प्रति दिवस के हिसाब से वेतन मिलता रहा । कुछ वर्ष पीछे औरंगजेब की आज्ञा से ये उसके नाती अजीमुशान के साथ रहने लगे । सं० १७४२ में कृष्णगढ़ के महाराज मानसिंह ने इन्हें अपने राजकुमार राजसिंह की शिक्षा के लिये नियुक्त किया । कुछ समय तक ये अजमेर के सूबेदार मिरजा कादरी की कन्या के शिक्षक भी रहे । समय समय पर ये दिल्ली बराबर आते रहते थे, क्योंकि ये स्थायी रूप से दरबारी कवि थे । अंत में औरंगजेब के पुत्रों में उत्तराधिकार के युद्ध होने पर नए बादशाह से महाराजा राजसिंह ने, जो उनकी तरफ से लड़कर विजयी हुए थे, वृंद को माँग लिया । तब से लगभग पंद्रह वर्ष तक वे इन महाराज के दरबार में रहे और अंत में कृष्णगढ़ ही में इन्होंने ८० वर्ष की आयु भोगकर संवत् १७८० में इस नश्वर शरीर को छोड़ा ।

वृंद बड़ी स्वतंत्र प्रकृति के मनुष्य थे । इनको बादशाह ने 'सच्ची कहनेवाला कविराज' की उपाधि दी थी । यद्यपि ये औरंगजेब के दरबारी कवि थे फिर भी इन्होंने अपनी स्वतंत्र प्रकृति का त्याग नहीं किया । संवत् १७३६ में जोधपुर के महाराजा जसवंतसिंहजी के स्वर्गवासी होने पर औरंगजेब ने पचास मंदिर तुड़वाने का हुक्म दिया था । इस अवसर पर औरंगजेब की आड़े हाथों खबर लीते हुए वृंद ने कुछ कवित्त बनाए थे । उनमें से एक यहाँ दिया जाता है—

एहो शाह औरंग कहावत हो पातिशाह

आप ही बिचारो यह कैसी सुबहानगी ।

जब महाराज लाल ने डेरा लगाइ लूटे

तब क्यों न लरिकै दिखाई तेग-बानगी ॥

देस पर देस सूबा केतक इनाम दोन्हें

कीन्हीं दिलजोई प्यार परबानगी ।

जब जसवंत सुरपुर को सिधाए तब

तेग बाँध आए, यह कैसी मरदानगी ?

वृंद ने सत्य-स्वरूप रूपक-वचनिका, अलंकार-सतसई, शृंगार-शिक्षा, हितोपदेशाष्टक, भाव-पंचाशिका आदि कई ग्रंथ लिखे, परंतु कोई उतना प्रसिद्ध नहीं हुआ जितनी कि उनकी रची हुई वृंद-विनोद सतसई, जो इस संग्रह में वृंद-सतसई के नाम से ही गई है । इस ग्रंथ की रचना ढाका में संवत् १७६१ में हुई, जैसा कि कवि ने स्वयं ही ग्रंथ के अंत में कहा है—

संवत् ससि(१)रस(६)बार (७) ससि (१) कातिक सुदि ससि बार ।  
सातैं ढाका शहर में, उपज्यो इहै विचार ॥

गोसाईंजी की भाँति वृंद ने अपनी रचना में कूटों अथवा कोरे उपदेशों को स्थान नहीं दिया है । उनकी सूक्तियों में सर्वत्र एकरस

विदग्धता है। सूक्तियों के उपयुक्त कोई ऐसे गुण नहीं जो उनकी सूक्तियों में न पाए जाते हों। भाषा की सरलता, मुहावरों की प्रचुरता, कहावतों का बहुल प्रयोग ये सब बातें उनकी सूक्तियों में मिलती हैं।

वृंद की सतसई में भाषा के असाधु प्रयोग का एक ही उदाहरण हमें मिलता है—

खलजन सों कहिए नहीं गूढ़ कबहुँ करि मेल ।

यों फैलै जग माहि ज्यों जल पर 'बूँद' कि तेल' ॥

'तेल की बूँद' न कहकर 'बूँद की तेल' कहना यह एक बड़ा दोष है। परंतु अन्यत्र कहीं वाक्य-रचना का व्यतिक्रम वृंद की रचना में नहीं हुआ है इसी से इसको देखकर आश्चर्य होता है। और जगह भाषा बिल्कुल साफ है। बड़े चमत्कारी दृष्टांतों को ढूँढ़ने में जितनी सिद्धहस्तता वृंद में दिखाई देती है उतनी और किसी सूक्तिकार में नहीं मिलती। साधारण सी साधारण घटना में से वे ऐसे आश्चर्यकर असाधारण दृष्टांत निकाल लेते हैं कि सुननेवाले को चकित रह जाना पड़ता है। ऊपर कहे गए तथ्यों के साक्षीभूत उनकी सूक्तियों के कुछ थोड़े से उदाहरण यहाँ दिए जाते हैं —

पिसुन छल्यौ नर सुजन सों करत विसास न चूकि ।

जैसे दाधो दूध कौ पीवत छाछहि फूँकि ॥

बनती देख बनाइयै परन न दोजै खोट ।

जैसी चलै बयार जब तैसी दोजै ओट ॥

विधि के विरचे सुजनहू दुरजन सम हैं जात ।

दोपहि राखै पवन ते अंचल वहै बुझात ॥

भले बुरे सब एक से जौ लौं बोलत नाहि ।

जान परत हैं काक पिक अतु वसंत के माहि ॥

जैसा बंधन प्रेम को तैसा बंध न और ।

काठहि भेदै कमल कौ छेद न निकरै और ॥

जे चेतन ते क्यों तजै जाकौ जासौ मोह ।  
 चुंबक के पीछे लग्यो फिरत अचेतन लोह ॥  
 हरत दैव निबल अरु दुर्बल ही के प्रान ।  
 बाघ सिंह को छाँड़िकै देत छाग वलिदान ॥

वृंद की टकर का एक ही सूक्तिकार हुआ है, रहीम । कहते हैं कि रहीम ने भी एक सतसई लिखी थी परंतु उसके अब कुछ ही दोहे मिलते हैं । बिहारी, मतिराम आदि शृंगार-सतसईकारों ने भी अपनी सतसइयों में कहीं कहीं पर सूक्तियाँ कही हैं और बड़ी सुंदर कही हैं, परंतु वे संख्या में बहुत कम हैं । अतएव उनकी गिनती सूक्तिकारों में नहीं हो सकती । गोसाईजी ने भी कोई कोई सूक्तियाँ ऐसी कही हैं कि उनकी तुलना की सूक्ति हिंदी में ढूँढ़ निकालना कठिन है । परंतु ऐसी सूक्तियाँ उन्होंने बहुत कम कही हैं । उनमें अधिकांश कोरे उपदेश या कूट ही हैं । यदि गोसाईजी और बिहारी आदि कवियों की कीर्ति केवल सूक्तियों पर ही अवलंबित रखी जाय तो संभवतः उनको कल ही लोग भूल जाय परंतु वृंद की कीर्ति सूक्तिकार होने ही में है । कविता के और क्षेत्रों में भी उन्होंने अपना हाथ आजमाया है, परंतु उन्हें सर्वत्र घोर असफलता हुई । हाँ, सूक्ति कहना उनकी अपनी विशेषता है जिसमें वे पूर्णतया सफल हुए हैं ।

शृंगार-सतसइयाँ 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' की परिभाषा के अंतर्गत आती हैं । सूक्ति में रचना-चमत्कार मात्र के आ जाने से उसका उद्देश्य सिद्ध हो जाता है, परंतु शृंगारी कविता में जब तक रस का परिपाक न हो तब तक वह अपने उच्चतम आसन पर नहीं बैठ सकती । यहाँ पर थोड़े में इस बात पर विचार कर लेना आवश्यक है कि रस है क्या वस्तु ।

“काव्य के आस्वाद को रस कहते हैं । रसों के आधार भाव हैं । जो भाव मन में बहुत काल तक रहकर उसे तन्मय कर दे, वे ही रस हो जाते हैं । ऐसे भाव स्थायी भाव कहलाते हैं । अब तक प्रेम, हास, क्रोध, उत्साह, भय, घृणा, आश्चर्य, शोक और शांति ये नौ स्थायी भाव माने गए हैं । जो भाव मन में केवल अल्प काल तक संचरण कर चले जाते हैं वे संचारी भाव कहलाते हैं । ये प्रवृत्ति के अनुसार भिन्न भिन्न स्थायी भावों को रस की उच्च भूमि तक पहुँचाने में सहायक होते हैं । संचारी और स्थायी भावों के अतिरिक्त रस की निष्पत्ति के लिये विभावों और अनुभावों की आवश्यकता होती है । रसों को उदित और उद्दीप्त करनेवाली सामग्री विभाव कहलाती है । इसके तीन अंग हैं—आश्रय, आलंबन और परिस्थिति । विषयी आश्रय, विषय आलंबन और अनुकूल देशकाल परिस्थिति है । जैसे—सीता-विषयक प्रेम यदि राम में है तो राम को उसका आश्रय, सीता को आलंबन और जनकपुर के उपवन को परिस्थिति समझना चाहिए । परिस्थिति को साहित्यिक भाषा में उद्दीपन विभाव कहते हैं । अनुभाव आंतरिक मनोभाव का बाहरी शारीरिक लक्षण है । मुखमंडल की मुद्रा आदि भीतर के भावों को प्रकट करती ही हैं । जब ये कायिक लक्षण स्थायी भाव से मन की अत्यंत और विद्वलकारी तन्मयता सूचित करते हैं तब ये सात्त्विक कहलाते हैं । रोमांच, स्वेद, वैवर्ण्य, कंप, अश्रु, प्रलय, स्वरभंग और स्तंभ ये आठ सात्त्विक माने गए हैं । सात्त्विक लक्षण स्वतः प्रकट हो जाते हैं । परंतु कुछ कायिक परिवर्तन ऐसे भी होते हैं जिनमें प्रयत्न अपेक्षित रहता है । आँख नचाना, गर्दन मोड़ना, किसी अंग को दिखलाना, ये सब कार्य किए तो स्थायी भाव की उमंग की लपेट में जाते हैं परंतु किए जाते हैं इच्छावश । इन्हें ‘हाव’ कहते हैं । हावों का संबंध आलंबन से होता है और



सात्त्विक भावों का आश्रय से । इनमें कार्य-कारण का संबंध होता है । हावों को देखकर ही बहुधा सात्त्विक भावों का उदय होता है । परंतु यह अनिवार्य भी नहीं है । बिना हावों के भी सात्त्विक हो सकते हैं । हावों और सात्त्विक भावों की भी अनुभावों के ही अंतर्गत गणना की जानी चाहिए, यद्यपि इनके अतिरिक्त और भी अनुभाव हो सकते हैं जिनकी गिनती ही नहीं हो सकती । अतएव आश्रय के हृदय में आलंबन को विशेष परिस्थिति में देखकर जो विशेष प्रकार का बहुत देर तक उसे मग्न कर देनेवाला उसकी आकृति से लक्ष्यमाण भाव उदय होता है उसकी अनुभूति का पाठक या श्रोता के हृदय में, रस के रूप में, आविर्भाव होता है । दांपत्य प्रेम से शृंगार, संतान-प्रेम से वात्सल्य, हास से हास्य, क्रोध से रौद्र, उत्साह से वीर, भय से भयानक, घृणा से वीभत्स, शोक से करुण, आश्चर्य से अद्भुत और शांति अथवा निर्वेद से शांत-रस का उदय होता है । ”

इन सब रसों में से शृंगार-रस जितना सर्वप्रिय हुआ उतना कोई और रस नहीं । इसका भी कारण है । दांपत्य रति जितना व्यापक भाव है उतना संभवतः और कोई भाव नहीं । मनुष्य की वासना-वृत्ति को जितनी वृत्ति इस भाव से मिलती है उतनी और भावों से नहीं । इसके अतिरिक्त रस की आद्यंत संपूर्ण योजना की विवृति, शृंगार रस के अतिरिक्त और किसी रस में नहीं होती । अनुभावों के अंतर्गत हावों तथा सात्त्विक भावों का और रसों में कोई स्थान नहीं । शृंगार-रस में आश्रय और आलंबन दोनों की क्रोड़ा-स्थली हृदय हो सकता है, और आश्रय और आलंबन का विभेद कवि के ही दृष्टि-कोण से होगा, वास्तविक नहीं और फिर भी वे स्थान बदलते हुए दिखाई देंगे । अन्य रसों के विषय में यह बात नहीं कही जा सकती । उनमें आलंबन की अनुभूति आश्रय के स्थायी भाव का विषय

हो सकती है। किंतु स्थायी भाव आलंबन की अनुभूति का विषय कदापि नहीं हो सकता। जिसको देखकर आपको हँसी आती है वह आपसे रुष्ट होगा, आप पर हँसेगा नहीं। आपको आश्चर्य में डालनेवाला दृश्य अथवा व्यक्ति आपको आश्चर्य में पड़ा हुआ देखकर आश्चर्य-चकित न होगा। जो स्वयं करुण दशा में है उसके प्रति करुणा दिखलाने से वह कृतज्ञ होगा पर उसके हृदय में आपके प्रति करुणा का भाव उदय नहीं होगा। यही बात और रसों के विषय में समझिए। ऊपर संचारी भावों का उल्लेख हो चुका है। संचारी भाव तेतीस होते हैं—१ चिंता, २ निद्रा, ३ सुप्त, ४ मद, ५ स्मृति, ६ अमर्ष, ७ गर्व, ८ त्रास, ९ ईर्ष्या, १० दैन्य, ११ जड़ता, १२ हर्ष, १३ धृति, १४ शंका, १५ श्रम, १६ ग्लानि, १७ निर्वेद, १८ ब्रीड़ा, १९ विवोध, २० मोह, २१ अपस्मार, २२ आवेग, २३ सुमति, २४ अवहित्य, २५ तर्क, २६ उन्माद, २७ विषाद, २८ व्याधि, २९ चपलता, ३० उत्सुकता, ३१ उग्रता, ३२ मरण, ३३ अलसता। इनमें से अंतिम तीन को छोड़कर शेष सब शृंगार-रस की निष्पत्ति में सहायक होते हैं। और-रसों में इतने संचारियों का उपयोग नहीं हो सकता। हास्य में केवल तीन, अद्भुत में चार, वीभत्स में पाँच, वीर में छः, रौद्र में आठ, भयानक में दस और करुण में ग्यारह संचारियों का उपयोग हो सकता है। कवि देव की सन्मति में छल एक और संचारी भाव है, इसका भी शृंगार-रस में उपयोग हो सकता है। शृंगार-रस की इसी व्यापकता के कारण वह रसरज कहलाता है और इसी व्यापकता के कारण रस-विषयक ग्रंथ लिखनेवाले कवियों को रस-योजना को पूर्ण रूप से सादाहरण समझाने के लिये उसका ही आश्रय लेना पड़ा है। रस-विषयक किसी ग्रंथ को ले लीजिए। उसमें शृंगार-रस का विस्तारपूर्वक वर्णन मिलेगा। अन्य रसों का वर्णन बहुत

संक्षेप में किया हुआ पाइएगा । मध्य युग के साहित्य-प्रेमी राजा-महाराजाओं की विलास-प्रियता का भी शृंगार-रस के इस प्रचार में कुछ हाथ था, यह बात निस्संकोच कही जा सकती है । शृंगार-सतसङ्गों का रूप यद्यपि लक्षण-ग्रंथों का सा नहीं है तथापि इसमें कोई संदेह नहीं कि उनमें के पद्य भी साहित्य-शास्त्र के लक्षणों को ही सामने रखकर रचे गए हैं ।

रस का जो निरूपण ऊपर किया गया है उससे रसीले मुक्तक रचने-वाले कवियों की कठिनता का अनुमान किया जा सकता है । परंतु सप्तशतियों और सतसङ्गों के संबंध में यह कठिनता और भी बढ़ जाती है, क्योंकि इनके लिये बहुत छोटे छंद चुने गए हैं । हम यह देख चुके हैं कि शृंगार-सतसङ्गों का आदर्श प्राकृत गाथा-सप्तशती ने प्रस्तुत किया । उसके अनुकरण पर संस्कृत में आर्या-सप्तशती लिखी गई । दोनों को ध्यान में रखकर बिहारी ने हिंदी में अपनी सतसङ्ग लिखी और हिंदी-सतसङ्गकारों ने बिहारी-सतसङ्ग को अपना आदर्श बनाया । इन सब ग्रंथों को देखने से पता चलता है कि शार्दूलविक्रीड़ित, शिखरिणी आदि लंबे लंबे वृत्तों को छोड़कर प्राकृत में गाथा और संस्कृत में आर्या छंद चुने गए तथा हिंदी में सवैष्णव, कवित्त आदि लंबे छंदों को छोड़कर छोटा सा दोहा छंद चुना गया । कहीं कहीं दोहे के स्थान पर सोरठा भी देखा जाता है और विक्रम ने अपनी सतसङ्ग में कुछ बरवै भी कहे हैं । परंतु इससे वस्तु-स्थिति में कोई अंतर नहीं आता क्योंकि सोरठा और दोहे में कोई विशेष अंतर नहीं । दोहे के पहले और दूसरे तथा तीसरे और चौथे चरणों के स्थान परिवर्तन कर देने मात्र ही से दोहा सोरठे में बदल जाता है । बरवै दोहे से छोटा ही छंद है, बड़ा नहीं । इतने छोटे छोटे छंदों में भी रस की इस विशद और पेचीली सामग्री को भर देना, यह सतसङ्गकारों

का कठिन कर्त्तव्य है। इसमें वह जहाँ तक कृतकार्य होगा वहाँ तक साहित्य-शास्त्र की परिभाषा तथा रसिकों की दृष्टि में वह सफल कवि समझा जायगा।

प्रस्तुत संग्रह में पाँच शृंगार-सतसइयाँ हैं। समय तथा उत्कृष्टता दोनों की दृष्टि से पहला स्थान बिहारी-सतसई का है। बिहारी का जन्म संवत् १६५२ में ग्वालियर में हुआ था। उनके पिता का नाम केशवराय था और उनके दादा का वासुदेव। ये धौम्य-गोत्री घरबारी माथुर चौबे थे। इनकी माता के मर जाने पर इनके पिता ग्वालियर छोड़कर ओढ़छे चले गए। उसके पास ही गुदौ ग्राम में उनके गुरु दृष्टो संप्रदायी सरसदेवजी के शिष्य नरहरिदासजी रहते थे जिनके यहाँ प्रसिद्ध आचार्य केशवदास भी आया-जाया करते थे। बाबू जगन्नाथदास जी रत्नाकर का अनुमान है कि नरहरिदासजी के अनुरोध से केशवदासजी ने बिहारी को कुछ काल तक अपने साथ रखा और काव्य-रीति की शिक्षा दी। अब सं० १६७० में नरहरिदास की अनुमति से बिहारी के पिता रहने के लिये वृंदावन आए तो बिहारी को भी साथ लेते आए। वृंदावन में भी बिहारी को नागरीदासजी जैसे कई साहित्य-मर्मज्ञों की संगति का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यहीं सं० १६५७ में उनकी शाहजादा शाह-जहाँ से भी जान-पहचान हुई। शाहजहाँ अपने पिता जहाँगीर के साथ आया था। जहाँगीर ने अपनी तुजुक जहाँगीरी में वृंदावन आने और वहाँ चित्सखानंद स्वामी के दर्शन करने की बात का उल्लेख किया है। बिहारी की कविता सुनकर शाहजहाँ बड़ा प्रसन्न हुआ और उन्हें अपने साथ आगरे ले गया। यहाँ उनका खानखाना अब्दुर्रहीम के साथ परिचय हुआ। खानखाना ने भी उनकी कविता की प्रशंसा की। इनकी ख्याति और मान दिन दिन बढ़ने लगा। अपनी गुणग्राहकता का प्रदर्शन और शाहजहाँ को

प्रसन्न रखना ये दोनों शिकार एक ही ढेले से होते देख बहुत से राजा महाराजा बिहारी पर अपनी कृपा की वर्षा करने लगे । बहुत रियासतों से उनकी वार्षिक वृत्ति बँध गई और वे भिन्न भिन्न राजाओं के पास आने-जाने लगे ।

सं० १६८१ के आख पास एक बार वे अपनी वार्षिक वृत्ति के संबंध में आमेर पहुँचे । उस समय महाराज जयसिंह आमेर की गद्दी पर थे । उन्होंने हाल ही में नया व्याह किया था । नई रानी के प्रेम में वे इतना रम गए थे कि राज-काज की देख-भाल छोड़कर रात-दिन उसी के महल में पड़े रहते थे, बाहर निकलने का नाम न लेते थे । अंदर किसी की पहुँच नहीं होती थी । कहते हैं कि बाहर यह भी सुना गया कि महाराजा साहब कहते हैं कि कोई यदि हमारे रंग में भंग करेगा तो हम उसका अंग-भंग कर देंगे । मंत्री लोग चिंतित थे और महारानी अनंतकुमारी ( चौहानी रानी ) को भी अत्यंत दुःख था । बिहारी के वहाँ पहुँचने पर मंत्रियों ने उनसे प्रार्थना की कि कोई ऐसा उपाय सोचिए जिसमें राजा चेतें और राज-काज निभे तथा चौहानी रानी प्रसन्न हों । बिहारी शाहजहाँ के प्रोतिपात्र थे । वे जानते थे कि महाराजा मुझे छोड़ने का साहस नहीं कर सकते । इस-लिये उन्होंने निर्भय होकर यह दोहा लिखकर राजा के पास भिजवा दिया—

नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं बिकास इहि काल ।

अली कली ही सौ बँध्या आगै कौन हवाल ॥

दोहा पढ़ते ही राजा को चेत हुआ । 'आगै कौन हवाल' की गूढ़ व्यंजना भी राजा को सूझ गई । 'इस तरह बेखबर रहोगे तो आगे कैसे निभेगी । शाहजहाँ तुमसे भिड़ने का अवसर ही देख रहा है ।' महाराज ने बिहारी का बड़ा उपकार माना । बहुत सी

स्वर्ण-मुद्राएँ उनकी भेंटकर उन्होंने उनका सम्मान किया और आगे के लिये भी प्रति दोहा एक अशर्फी देने की प्रतिज्ञा की। राजा के बाहर आने से चौहानी रानी बड़ी प्रसन्न हुई। उन्होंने भी बिहारी को बहुत पारितोषिक और काली पहड़ी का गाँव भेंट किया तथा उन्हें अपनी ड्योढ़ी का कवि बना लिया। उन्होंने उक्त अवसर का एक चित्र भी खिंचवाया जो अब तक जयपुर के महल में लगा है।

इस प्रकार बिहारी के आमेर में रहने का आयोजन हुआ और वे समय समय पर दोहे रचकर राजा जयसिंह को दिखाने और प्रतिज्ञानुसार अशर्फियाँ पाने लगे। येही दोहे आगे चलकर सतसई के रूप में संगृहीत हुए। यह बात तो स्वयं बिहारी ने भी स्वीकार की है कि महाराजा जयसिंह के कहने पर ही सतसई के दोहों की रचना हुई—

हुकुम पाइ जय साहि को, हरि राधिका प्रसाद ।

करी बिहारी सतसई, भरी अनेक सवाद ॥

अनुमान होता है कि सतसई संवत् १७०४ के शीतकाल में पूर्ण हुई होगी, क्योंकि अंतिम दोहों में बलख की लड़ाई का उल्लेख है जो इसी संवत् में समाप्त हुई थी। इस लड़ाई में महाराज जयसिंह भी औरंगजेब की सहायता के लिये गए थे। वहाँ उन्होंने बड़ी वीरता से पठानों पर जय पाई और बड़ी युक्ति से सेना को बर्फ में दब जाने से बचाया—

सामाँ सेन, सयान की, सबै साहि कै साथ ।

बाहु-बली जयसाहि जू, फते तिहारै हाथ ॥

यौं दल काढ़े बलक तै, तै जयसिंह भुआल ।

उदर अघासुर कै परै, न्यौं हरि गाइ गुवाल ॥

सुना जाता है कि बिहारी के एक भाई और एक बहिन भी थी। भाई इनसे बड़ा था और बहिन छोटी। इनका भानजा कुलपति मिश्र भी अच्छा कवि हुआ। बिहारी को कोई संतान नहीं

हुई। उन्होंने अपने भतीजे निरंजनकृष्ण को गोद ले लिया था। इसी से उनका वंश चला। पत्नी की मृत्यु होने पर बिहारी वृंदावन चले गए। निरंजनकृष्ण को वे आमेर ही छोड़ गए। इन्हीं निरंजनकृष्ण के गोखुलदास, उनके खेमकरन, उनके दयाराम, उनके मानिक-मनि, उनके गनेस और उनके बालकृष्ण हुए। इन बालकृष्ण के पुत्र भ्रमरकृष्ण हुए। ऐसा जान पड़ता है कि निरंजनकृष्ण का दूसरा नाम कृष्णलाल था। कृष्णदत्त कवि ने सतसई पर सवैए लिखे हैं। वे इन कृष्णलाल से भिन्न हैं। लोग इन दूसरे कृष्ण कवि को भ्रमवश बिहारी का पुत्र मानते हैं।

सतसई के अतिरिक्त कोई और भी रचना बिहारी ने की है या नहीं इसका स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता। कुछ लोगों को तो सतसई के भी बिहारी कृत होने में संदेह है। बिहारी का एक दोहाबद्ध जीवन-वृत्त मिला है जिसमें लिखा है कि सतसई के दोहे वास्तव में बिहारी के नहीं उनकी स्त्री के बनाए हुए हैं। उसके अनुसार उनकी स्त्री घर पर कविता बनाया करती थी और ये राजाओं के दरबारों में जाकर उसे पढ़ आया करते थे। उसी वृत्त में यह भी लिखा है कि इनकी स्त्री ने चौदह सौ दोहे बनाए थे जिनमें से सात सौ चुनकर सतसई में रखे गए। स्त्री के द्वारा दोहों का रचा जाना किसी की उपजमात्र जान पड़ती है। उसको प्रमाणित करने के लिये कोई अन्य साक्ष्य नहीं मिलता। परंतु इससे यह जान पड़ता है कि बिहारी ने केवल सात सौ दोहे नहीं रचे थे। कहते हैं, जोधपुर में दूहा-संग्रह नाम से पंद्रह सोलह सौ दोहों का एक संग्रह है जिसमें बहुत से दोहे बिहारी के हैं। हो सकता है कि यह संपूर्ण संग्रह बिहारी-कृत हो।

बिहारी ने सतसई के अतिरिक्त कोई और रचना की हो या न की हो, परंतु उनके कीर्ति-विस्तार के लिये एक सतसई ही पर्याप्त है। जितना प्रचार उनकी सतसई का हुआ, रामचरितमानस को

छोड़कर उतना कदाचित् ही किसी अन्य ग्रंथ का हुआ हो। उसपर दर्जनों टीकाएँ हो चुकी हैं और अब तक होती जा रही हैं। कई कवियों ने उन पर सबैए, कुंडलिए और छप्पय बैठाने के प्रयत्न किए हैं परंतु कोई भी सफल न हुए और न हो ही सकते थे। इस सतसई के उर्दू और संस्कृत अनुवाद भी हो चुके हैं। संस्कृत अनुवाद शृंगार-सप्तशतिका नाम से पंडित परमानंद ने किया है और उर्दू अनुवाद गुलदस्तए-बिहारी नाम से बुंदेलखंड निवासी मुंशी देवीप्रसाद 'प्रीतम' ने। आधुनिक टीकाओं में पंडित पद्मसिंह शर्मा का संजीवन-भाष्य जितना प्रकाशित हुआ है उतना बहुत चुटीला और देखने ही योग्य है। परंतु न जाने क्यों उन्होंने अब तक उसे पूर्ण करने का कष्ट नहीं उठाया। बिहारी की सबसे गंभीर और मार्मिक टीका ब्रजभाषा के दिग्गज विद्वान् बाबू जगन्नाथदासजी की बिहारी-रत्नाकर है।

रसिक समाज में बिहारी की सतसई का इतना प्रचार यों ही नहीं हुआ। उसका दृढ़ कारण था। काव्यरीति का कोई ऐसा अंग नहीं जिसकी खूबियाँ बिहारी की कविता में न मिलें। कहीं कहीं तो एक ही दोहे में रस की मधुर व्यंजना, अलंकारों की सुष्ठु योजना और शब्दों का लालित्य साथ साथ देखने को मिलता है—

जुरे दुहुनु के दृग भूमकि, रुके न भोर्नै चीर ।

हलुकी फौज हरौल ज्यौ, परै गोल पर भीर ॥

लाज लगाम न मानहीं, नैना मो बस नाहिं ।

ये मुँह जेर तुरंग ज्यौ, ऐंचत हू चलि जाहिं ॥

इनकी पर्यवेक्षण शक्ति बहुत तीव्र थी। बारीक से बारीक बात भी इनकी आँखों से नहीं बच सकती थी। जिस दृश्य या चेष्टा को एक बार देख लेते उसका चित्र इनके मस्तिष्क में खिंच जाता था। उस आंतरिक सूक्ष्म चित्र को शब्द-चित्र में अभिव्यक्त



करने की इनकी शक्ति अतुलनीय थी । नहाकर तालाब से निकलकर आती हुई इस स्त्री का चित्र देखिए—

विहँसति सकुचति सी दिऐँ, कुच आँचर विच बाँह ।

भीजै पट तट कौ चली, न्हाइ सरोवर माँह ॥

इनके सरस हावों का वर्णन पढ़ते हुए एक चलचित्र सा आँखों के सामने खिंच जाता है, और ऐसा जान पड़ने लगता है मानों उन चेष्टाओं का हमारे सामने अभिनय हो रहा है । अपने कथन की पुष्टि में हम यहाँ पर केवल दो दोहे उदाहरण स्वरूप देते हैं—

बतरस लालच लाल की, मुरली धरी लुकाइ ।

सौह करै, भौहनु हँसै, दैन कहँ नटि जाइ ॥

भौह उँचै आँचर उलटि, मोरि मोरि मुँह मोरि ।

नीठि नीठि भीतर गई, दोठि दोठि सौ जोरि ॥

ऐसे ही सजीव चित्रों के कारण इनकी कविता में हृदय को आकर्षित कर लेने की शक्ति आई है । इस सूक्त की स्वाभाविकता देखिए—

कर मुँदरी की आरसी, प्रतिबिंब्यौ प्यौ पाइ ।

पीठि दिर्यै निधरक लखै, इकटक डीठि लगाइ ॥

प्रेम के कारण बुद्धि को जो अभिनव स्फूर्ति प्राप्त हो जाती है उसमें प्रेमी व्यक्ति अपने ऐसी ही प्रेम के विषय को देखने के लिये अनेक युक्तियाँ निकाल लेते हैं । किसी के पाँव में काँटा चुभ जाता है तो किसी का अंचल किसी भाड़ी से उलझ जाता है । परंतु ऐसी नायिकाएँ भी अपने नायकों को क्षण भर ही देख सकती हैं । निधड़क पर्याप्त समय तक प्रिय को देख सकने की युक्ति बिहारी की ही नायिकाओं को सूक्तती है, जिससे न प्रिय से भेपना पड़े और न लोगों का डर रहे । एक और युक्ति का दर्शन कीजिए—

मंजन करि खंजन-नयनि, बैठी ब्यौरति बार ।

कच अँगुरि न बिच दोठि है, चितवति नंदकुमार ॥

यह स्वाभाविक बात है कि अपने प्रिय के संबंध में सब कोई सभी बातें जानना चाहते हैं। वह कैसी स्थिति में रहता है, क्या करता है, हमें भी कभी याद करता है, यदि याद करता है तो प्रेम से या घृणा से। ये सब बातें हम जानना चाहते हैं और यदि हमें प्रिय के पास से आया हुआ कोई आदमी मिल जाता है तो हम उस पर इन प्रश्नों की झड़ी सी लगा देते हैं और उत्तर पाने पर भी हमारा जी नहीं भरता, बार बार पूछते ही जाते हैं। यही बात नीचे के दोहे में बिहारी की नायिका कर रही है—

फिरि फिरि ब्रूभति कहु कहा, कहौ साँवरे गात ?

कहा करत, देखे कहाँ, अली चली क्यों बात ?

कभी आप की ऐसी दशा हुई है कि हँसने का भी जी करता है और रोने का भी। ऐसी दशा को व्यक्त करना बड़ा कठिन होता है। इस दोहे में ऐसा ही भाव दिखाया है।

बालमु वारैं सौति कै, सुनि पर-नारि बिहार।

भो रसु अनुरसु रिस रली, रीझ खोझ इक बार ॥

बिहारी जो अपने छोटे छोटे दोहों में एक साथ रस की सारी सामग्री भर सके हैं उसका कारण यह है कि उन्होंने व्यंजना का बहुत अधिक आश्रय लिया है। हम यहाँ एक उदाहरण देंगे—

विशुरगौ जावकु सौति पग, निरखि हँसी गहि गाँसु।

सलज हँसौहीं लखि, लियौ, आधी हँसी उसाँसु ॥

सौत के पाँवों पर मेंहदो का रंग अच्छा नहीं लगा था, फैला हुआ सा था, जिससे मेंहदो लगानेवाला अनाड़ो मालूम पड़ता था। अपनी सौत से किसे द्वेष नहीं होता। यह देखकर नायिका को भी द्वेषपूर्ण हँसी आई है। उसने समझा, सौत को मेंहदो लगाना भी नहीं आता, वह नायक को क्या वश करेगी। सौत के लिये यह बड़ी लज्जा की बात थी। उसे नायिका के सामने लज्जा से गड़

जाना चाहिए था। पर वह उलटे सलज्ज हँसी हँसती है। इससे नायिका को विदित हो गया कि मेरा अनुमान गलत है। सौत ने अपने हाथ से मेंहदी नहीं लगाई है, नायक ने लगाई है। यह वस्तु-व्यंजना हुई। इससे भी फिर यह भाव व्यंजित हुआ कि नायक का सौत पर अत्यंत प्रेम है। यही समझकर अभी आधी हँस भी नहीं सकी थी कि नायिका विपाद के उच्छ्वास छोड़ने लगी।

इनके अलंकार भी बहुत स्वाभाविक लगते हैं। वे सिर उछाल उछालकर अपना अस्तित्व प्रकट नहीं करते। असंगति एक ऐसा अलंकार है कि जिसमें बहुत गढ़त की आवश्यकता होती है—परंतु इनके असंगति भी सुसंगति-पूर्ण होने से गढ़े से नहीं लगते। दो उदाहरण लीजिए—

हग चरुभूत दूतत कुटुम, जुरत चतुर चित प्रीति ।

परति गाँठि दुरजन हिए, दर्ई नई यह रीति ॥

हगनु लगत, बेधत हियहिं, बिकल करत अँग आन ।

ए तेरे सब तै विषम, ईछन तीछन बान ॥

इसमें तो संदेह नहीं कि जहाँ गागर में सागर भरना होता है वहाँ बिना प्रयत्न के काम नहीं चल सकता। विहारी की कविता भी बहुत परिश्रम से लिखी गई है। परंतु परिश्रम-प्रभव होने पर भी उसमें अस्वाभाविकता नहीं आई है, क्योंकि वास्तव में उनका परिश्रम उनकी काव्यानुभूति का सहायक मात्र है। इसी कारण उनकी कविता में बहुत कम उदाहरण ऐसे मिलते हैं जिनमें केवल चमत्कार हो। भाषा भी वे बहुत साफ और अधिकतर ब्रज की बोलचाल की प्रयोग में लाए हैं, जिसमें कुछ बुंदेलखंडीपन भी आ गया है।

उन्होंने शब्दों के साथ बलात्कार बहुत कम किया है। व्याकरण के नियमों का व्यतिक्रम उनकी रचनाओं में बहुत कम पाया जाता है। कहीं कहीं पर जो उनके शब्द अजनबी से लगते हैं वे इस

कारण कि उनका प्रयोग बहुत कम होता है जैसे बाइल के अर्थ में वार्द और साफ के लिये अच्छे । ये शब्द अव्यवहृत अवश्य हैं पर हैं शुद्ध संस्कृत के । जहाँ कहीं इन्हें शब्दों को विकृत भी करना पड़ा है वहाँ पर इन्होंने ऐसा तोड़ मरोड़ नहीं किया है कि शब्द का रूप ही कुछ का कुछ हो जाय और भावाभिव्यक्ति में अड़चन पड़ने लगे । इसके एक दो ही अपवाद मिलते हैं, अधिक नहीं, जैसे स्मर के लिये समर और साँस के लिये संसे । फारसी, अरबी के भी कई शब्दों का इन्होंने प्रयोग किया है जैसे किविलनुमा, ताफता, सबील, गनी इत्यादि । इनकी वाक्य-रचना बहुत गठी हुई है । उसमें एक भी शब्द भरती का नहीं पाया जा सकता । प्रत्येक शब्द किसी विशेष अभिप्राय से व्यवहृत हुआ है । परंतु इस ठूसाठूसी के कारण दूरान्वय का दोष तो इनकी कविता में पाया ही जाता है, भाव भी कहीं कहीं दुरुह हो गए हैं ।

परंतु जहाँ इनमें इतनी विशेषताएँ हैं वहाँ एकाध त्रुटियाँ भी मिलती हैं । ऊपर हम इनकी स्वाभाविकता का उल्लेख कर आए हैं । परंतु ऐसे भी स्थल मिलते हैं जहाँ इन्होंने अपने इस गुण को छोड़ दिया है । और जहाँ पर यह बात हुई है वहाँ पर इन्होंने अस्वाभाविकता की हद कर दी है । इनकी अतिशयोक्तियों में संभव असंभव का कुछ भी ध्यान नहीं किया गया है—

जिहिं निदाघ दुपहर रहै, भई माघ की राति ।

तिहिं उसीर की रावटी, खरी आवटी जाति ॥

आड़े दै आले बसन, जाड़े हूँ की राति ।

साहसु ककै सनेहवस, सखी सबै ढिग जाति ॥

इसी प्रकार इन्होंने व्रज में गली गली में कृष्ण-विरह में आँसुओं की नदियाँ बहाई-हैं, नायिका के घर के चारों पास से पूर्णिमा को छोड़कर सब तिथियों को निकलवा दिया है और विरह के दीर्घ

आसोच्छ्वासों को नायिका के दुर्बल शरीर के लिये हिंडोला बना दिया है ।

मतिराम सतसई के रचयिता मतिराम त्रिपाठी हैं । इनका जन्म सं० १६७४ के लगभग हुआ था । ये तिकवाँपुर जिला कानपुर के रहनेवाले थे और बहुत बड़े कवि थे । परंपरा से यह सुना जाता है कि हिंदी के प्रसिद्ध कवि चिंतामणि इनके बड़े भाई थे और भूषण छोटे । तिकवाँपुर से दो तीन कोस पर विलग्राम एक प्रसिद्ध कसबा है । यहाँ के रहनेवाले गुलामअली ने भी अपने ग्रंथ तजकिरा सर्व आजाद हिंद ( सं० १८१० ) में लिखा है कि चिंतामणि और भूषण इनके भाई थे । गुलामअली के मामा मीर जलील जाजमऊ और बैसवाड़े के दीवान रहिमतुल्ला के मित्र थे । रहिमतुल्ला बड़े गुणग्राही सज्जन थे और चिंतामणि का बड़ा आदर करते थे । अतएव गुलाम अली ऐसी स्थिति में थे कि उनको इस विषय में तथ्य मालूम हो जाता । इससे मालूम होता है कि चिंतामणि, मतिराम और भूषण के भाई होने की बात तथ्य है, परंपरागत किंवदंती मात्र नहीं है । कुछ लोग कवि जटाशंकर को भी भाई मानते हैं परंतु इसके कोई प्रमाण नहीं मिलते ।

ये बूंदी-नरेश छत्रशाल के पुत्र भावसिंह के आश्रित थे । भावसिंह के लिये इन्होंने 'ललित ललाम' की रचना की थी । इनका सबसे उत्कृष्ट ग्रंथ 'रसरज' है जिसको ये इससे पहले बना चुके थे । शिवाजी के पुत्र शंभाजी के दरबार में भी इनका रहना पाया जाता है । कमायूँ के राजा उदोतचंद के पुत्र ज्ञानचंद को इन्होंने 'अलंकार-चंद्रिका' लिखकर समर्पित की । जान पड़ता है कि ये कमायूँ से होकर गढ़वाल भी गए थे । वहाँ की राजधानी श्रीनगर में इन्होंने 'छंदसार पिंगल' ग्रंथ फतेहशाह को समर्पित किया था । कई राज्यों के पुस्तकालयों में उनके अन्य ग्रंथ भी मिलते हैं ।

इनसे जान पड़ता है कि वहाँ के राजाओं को उन्होंने ये ग्रंथ समर्पित किए थे ।

अपनी सतसई इन्होंने किसी भोगनाथ नामक राजा को समर्पण की थी । भोगनाथ का नाम सतसई में कई बार आता है । ग्रंथ की समाप्ति में इस प्रकार भोगनाथ की शुभ कामना की गई है ।

तिरछी चितवनि स्याम की लसति राधिका ओर ।

भोगनाथ कौं दीजियै, यह मन-सुख बर जोर ॥

मतिराम की रस-प्रसविनी लेखिनी ने कविता की स्वाभाविक धारा को बहाया । उनकी कविताओं में उनके हार्दिक भाव देखने को मिलते हैं । उनकी कविता बिहारी की कविता की भाँति प्रयत्न-प्रसूत नहीं है । यह उनकी तन्मयता का फल है । यद्यपि उनके पद्यों की गठन इतनी चुस्त नहीं है जितनी बिहारी के पद्यों की; पर वह शिथिल भी नहीं है । उनके न भाव कृत्रिम हैं और न भाषा । उनकी सतसई को उनकी संपूर्ण रचना का रस समझना चाहिए । उसके अधिकांश दोहे उनके सर्वश्रेष्ठ ग्रंथों, रसरज और ललित-ललाम, से लिए गए हैं । अतएव उनमें मतिराम-प्रतिभा की संपूर्ण प्रभा चमक उठी है ।

लिखति अबनि तल चरन सौं, बिहँसत विमल कपोल ।

अधनिकरे मुख-इंदु हैं, अमृत बिंदु से बोल ॥

इस एक दोहे में काव्य को न जाने कितने गुण आ गए हैं । इसमें स्पष्ट दो चित्र सामने आते हैं । एक तो तथ्य के लोक से संबंध रखता है और दूसरा कल्पना-जगत् से उसकी सौंदर्य-वृद्धि के लिये उतर आता है । यहाँ पर नायिका किसी ऐसे पुरुष से बातें कर रही है जिससे उसका नया नया स्नेह हुआ है । स्नेह-पात्र नायक के साथ बातें करने में उसे आनंद आ रहा है । इस-लिये उसके कपोल हँसते हुए से मालूम पड़ते हैं । परंतु साथ ही

उसे बड़ी जोड़ा भी हो रही है । खुलकर बात करते नहीं बनता । ऐसे धीरे धीरे बोलती है मानों उसके वचन आधे ही मुँह से बाहर निकलते हैं । जब मनुष्य को भोंप होने लगती है तब वह उसे छिपाने और स्वस्थचित्त होने के लिये कुछ और काम करने लगता है । कोई उँगली से बदन खुरचने लगता है, कोई पाँव को अँगूठे से पृथ्वी । यहाँ पर नायिका भी अपनी भोंप मिटाने के लिये पाँव से पृथ्वी पर कुछ लिख सी रही है । कैसा जीता जागता यथार्थ चित्र है । नायिका के अधनिकले 'बोल' की पूर्ण अनुभूति कराने के लिये तुलना में अमृत टपकाते हुए चंद्रमा का चित्र सामने लाया गया है । नायिका के वचन न पूरे बाहर ही निकलते हैं न मुँह के अंदर ही रहते हैं, वैसे ही जैसे चंद्रमा से अमृत की बूँद पसीज रही हो परंतु अभी आधी ही बाहर निकल पाई है । इसमें सादृश्य के साथ साथ मुख की शोभा और वाणी की मिठास की कितनी तीव्र अनुभूति होती है । कितनी सुंदर और सार्थक अलंकार योजना है । इसके अतिरिक्त पूरे दोहे से शृंगार रस की जो अत्यंत मधुर व्यंजना निकल रही है उसके विषय में तो कोई कह ही क्या सकता है । इतना होने पर भी क्या दोहे का भाव समझने में कोई देर लगती है ? प्रसाद गुण तो इनकी अपनी विशेषता है जो इनकी कविता के माधुर्य को हृदयंगम करने में सहायक होता है ।

वेदांत में उपालंभ का आरोप कर विप्रलंभ की सरस व्यंजना का अवलोकन कीजिए—

बरनत साँच असंग कै, तुम कौं बेद गोपाल ।

हियै हमारे बसत है, पीर न पावत लाल ॥

मतिराम की भाषा ब्रज की शुद्ध और साफ बोली है । उन्होंने अपनी कविता में बिहारी की तरह अप्रचलित और विकृत शब्दों का प्रयोग कहीं नहीं किया है । उनके भाव मधुर, भाषा प्रांजल और रचना प्रवाहमयी है ।

रसनिधि-सतसई रसनिधि कवि के 'रतन-हजारा' का संचित संस्करण है। रसनिधि उपनाम है। इनका वास्तविक नाम पृथ्वीसिंह था। ये दतिया रियासत के अंतर्गत बरौनी इलाके के जागीरदार थे। इनकी जीवनी के विषय में बहुत बातें नहीं मालूम हैं। इनका रचनाकाल संवत् १६६० से संवत् १७१७ तक पाया जाता है। इन दोनों संवत्‌ों की इनकी रचनाएँ मिलती हैं। रतन-हजारा के अतिरिक्त इनके विष्णुपद और कीर्तन (स्तुति), कवित्त (प्रेम विषयक), बारहमासी, गीतसंग्रह, स्फुट दोहा, रसनिधिसागर, अरिल्ल, हिंडोले आदि कई ग्रंथ खोज में मिले हैं जो अधिकतर प्रेम से संबंध रखते हैं। ये बड़े प्रेमीजन जान पड़ते हैं। जो प्रेम इनके जीवन में व्याप्त था उसके ये अंश-भक्त थे। इनकी कविता से इनके प्रेम की तन्मयता भल्लकी पड़ती है। पर इस तन्मयता के साथ साथ इनकी अभिव्यंजना में संयम नहीं है। कहीं कहीं इन्होंने फारसी तबीयतदारी के फेर में पड़कर, अत्यधिक अश्लीलता में पड़कर, सुरुचि की अवहेलना की है। जिन दोहों में यह बात पाई जाती है वे सतसई में नहीं आने पाए हैं। इनकी कविता की सरसता के कुछ उदाहरण यहाँ दिए जाते हैं—

रसनिधि जब कबहूँ बढै, वह पुरवइया वाइ ।  
 लगी पुरातन चोट जो, तब उभरति है आइ ॥  
 तौ तुम मेरे पलन तैं, पलक न होते ओट ।  
 व्यापी होती जो तुमैं, ओट भए की चोट ॥  
 वह पीतांबर की पवन, जब तक लगै न आइ ।  
 सुमन कली अनुराग की, तब तक क्यों बिगसाइ ॥  
 दरदहि दै जानत लला, सुध लै जानत नाहिं ।  
 कहो बिचारे नेहिया, तुव घाले किन जाहिं ॥



जिहि ब्राह्मण पिय गमन कौ, सगुन दियौ ठहराइ ।

सजनी ताहि बुलाइ दै, प्रान-दान लै जाइ ॥

जो कहिए तो साँच कर, को मानै यह बात ।

मन के पग छाले परे, पिय पै आवत जात ॥

इन्होंने शृंगार-संबंधी चमत्कारी उत्तियाँ भी खूब कही हैं जिनमें यमक और श्लेष का अधिकतर आश्रय लिया गया है—

जौ कछु उपजत आइ उर, सो वे आँखें देत ।

रसनिधि आँखें नाम इन, पायौ अरथ समेत ॥

सवन सुनौ है यह नयौ, नेह नगर में भाव ।

देत न तहँ मन भावतौ, मन को साटै पाव ॥

एक ही भाव को इन्होंने कई बार दुहराया भी है, जिससे उनका रस किरकिरा हो जाता है। पुनरुक्ति वही सहा हो सकती है जिसमें कुछ नवीनता भी हो। यह शक्ति इनमें नहीं देखी जाती। कहीं कहीं इनकी रचना शिथिल भी होती है। बिहारी के अनुकरण पर तो इन्होंने अपने दोहे प्रायः लिखे ही हैं। उनके भावों और यहाँ तक कि पदावली को भी व्यों की त्यों ले लिया है परंतु इनके हाथ लगाने से ही उनकी कांति जाती रही है।

इन्होंने आत्म तत्त्व पर भी कुछ कहा है और सूफियों के संसर्ग से वे हिंदू-मुस्लिम ऐक्य के प्रयासी भी हुए हैं—

हिंदू मैं क्या और हैं, मुसलमान मैं और ।

साहब सबका एक है, व्याप रहा सब ठौर ॥

राम-सतसई के रचयिता रामसहाय दास हैं जो काशीनरेश महाराजा उदितनारायणसिंह के आश्रित कवि थे। इनके पिता का नाम भवानीदास था। ये चौबेपुर बनारस के रहनेवाले और जाति के अस्थाना कायस्थ थे। ये बड़े भक्तजन थे। लोग इन्हें भगत कहा करते थे। कविता में अपना उपनाम भी इन्होंने भगत

ही रखा था। इनका कविता काल संवत् १८६० से १८८० तक ठहरता है। इनकी सतसई मविराम ही की भाँति सरस और स्वाभाविक है। उसमें माधुर्य और प्रसाद गुण की प्रचुरता है। पर ये भी सुरुचि का सर्वत्र विचार रख सके हैं, यह नहीं कहा जा सकता। फिर भी इनकी कविता रसवती होती थी, जिसके थोड़े से उदाहरण यहाँ दिए जाते हैं—

जान कहाँ तौ जाइए, कुसल रहौ हे कंत ।  
हौं बाचिहौं हिमंत सौं, सुख साचिहौं बसंत ॥  
निज घट उठवाती अरी, मो देती न उठाय ।  
आन कका को माथ की, साथ न जाउँ लवाय ॥

जरा उल्लास का यह कौतुक देखिए—

आज रही गृह काज तजि, अजब तमासे माहिं ।  
डारि तुला तोली तियै, तुली छमासे नाहिं ॥

उल्लास के आधिक्य से मनुष्य को ऐसा जान पड़ने लगता है जैसे वह बिल्कुल हलका हो गया हो, जैसे वह आकाश में उड़ रहा है, पृथ्वी पर उसके पाँव ही नहीं पड़ते। ऊपर की अतिशयोक्ति में इसी बात की व्यंजना है। सबकी भाँति इन्होंने भी अपनी सतसई विहारी के अनुकरण पर लिखी है।

विक्रम-सतसई के रचयिता महाराज विक्रमसाहि बुंदेलखंड की चर-खारी रियासत के राजा थे। इनका राजत्वकाल संवत् १८३६ से १८८६ तक रहा। इनका पूरा नाम विक्रमादित्य था। ये बड़े साहित्या-नुरागी और गुणग्राही नरेश थे। इनके यहाँ कवियों का बड़ा सम्मान होता था। चतुर्दिक से कविवृंद यहाँ घिर आते थे। खुमान, भोज, प्रताप, प्रयागदास, विजयबहादुर और बिहारीलाल सहस्र गुणी और अच्छे कविगण इनके आश्रय में रहते थे। इनके दरबार में रहनेवाले कवि बिहारीलाल सतसई के रचयिता

प्रसिद्ध कवि बिहारीदास से भिन्न थे । वे तिकवाँपुर के रहनेवाले थे । विक्रमादित्य स्वयं बहुत अच्छे कवि थे और विक्रम साहि के नाम से कविता किया करते थे । सतसई के अतिरिक्त इन्होंने श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध का हरिमक्ति-विलास नाम से हिंदी पद्यानुवाद किया और ब्रजलीला इत्यादि अन्य ग्रंथ भी लिखे । इनकी कविता साधारणतया अच्छी और सरस है । अपनी सतसई को इन्होंने बिहारी का आदर्श सामने रखकर बनाया है, परंतु अनुकरण अनुकरण ही है । कला का वह उत्कर्ष इनकी कविता में नहीं पाया जाता जो बिहारी और मतिराम की कविता में पाया जाता है । इनमें कोई ऐसी विशेषता नहीं दिखाई देती जो इनकी अपनी कही जाय । फिर भी इनकी कविता में रस की पर्याप्त व्यंजना है । यहाँ पर दो एक उदाहरण दे देना अच्छा होगा—

मिलत अगाऊ बिन कहे, यहै दोष इन माहिं ।  
 डर डरभावत हठनयन, सुरभावत फिर नाहिं ॥  
 मुख मीड़त अनखाति कति, कर कर टेढ़ो भौंह ।  
 होरी मैं यों होत है, मेरी तेरी सौंह ॥  
 होरी मैं जोरी करत, भोरी करि ब्रजबाल ।  
 कहूँ तकत घालत कहूँ, भरि भरि मूठ गुलाल ॥

खिले हुए कमलों के बीच में बैठी हुई रस कली के अप्रस्फुट नवल लावण्य को देखिए—

गौने आई नवल तिय, बैठी तियन समाज ।  
 आस पास प्रफुलित कमल, बीच कली छवि साज ॥  
 वयःसंधि का यह कैसा सुंदर और स्वाभाविक चित्र है—  
 अरुन उदै लौं तरुनई, अँग अँग भलकी आइ ।  
 छन-छन तिय तन आस सी मिटत लरिकई जाइ ॥

हम ऊपर कह चुके हैं कि बिहारी ने सतसई के दोहों की रचना करते समय अपने सामने गाथा-सप्तशती और आर्या-सप्तशती का आदर्श रखा था। बिहारी के पीछे के सतसई-कारों ने बिहारी को अपना आदर्श बनाया। यह दिखलाने के लिये हम शृंगार-सतसई-कारों के कुछ ऐसे पद्य यहाँ-दे देना आवश्यक समझते हैं जिनमें भाव-सादृश्य हो। इससे जहाँ यह स्पष्ट हो जायगा कि किसने कहाँ तक किसका अनुकरण किया है, यह अनुमान करने में भी सहायता मिलेगी कि किस कवि का कितना महत्त्व है। 'अनुमान' इसलिये कहते हैं कि हमारे विचार में किसी कवि को बड़ा और किसी को छोटा मानना साहस का काम है, क्योंकि किसी कवि का वास्तविक महत्त्व उन पद्याँ में हो ही नहीं सकता जिन्हें उसने दूसरों की नकल करके बनाया हो। जिस किसी को किसी कवि का महत्त्व देखना हो वह उसे नकल में नहीं, असल में देखे। भिन्न-भिन्न कवियों के हार्दिक भाव भी टकर खा जाते हैं, परंतु उन्हीं के आधार पर फैसला दे देना न्याय-निपुणता नहीं है, क्योंकि बहुत से हार्दिक भाव टकर नहीं भी खाते और ऐसे टकर न खानेवाले भावों की तुलना करना मानों अपनी हँसी उड़ाना है। यह बात ठीक है कि संसार में कोई बात नई नहीं है। जो इस बात का गर्व करे कि मैं बिल्कुल नई और सार्थक बात कह रहा हूँ, वह या तो मूर्ख है या पाखंडी। हाँ, निरर्थक नई बात कदाचित् कही जा सके, परंतु उस दशा में कहनेवाला कवि न होगा, पागल होगा। किंतु यह बात भी उतनी ही ठीक है कि बात पुरानी होकर भी नई हो सकती है। किसी दूसरे ने एक बड़ी अच्छी बात कही है, जो लोगों को पसंद आती है, हमें भी वही बात कहनी चाहिए, नकाल की यह मानसिक स्थिति होती है। नकाल दूसरों की पूँजी के आसरे पर अपना व्यापार चलाने की आशा रखता है, जब कि वास्तविक कवि को

अपने ही बल का भरोसा रहता है। वह उसी भाव को व्यक्त करता है जिसकी उसे स्वयं अनुभूति होती है। जिस बात का एक पूर्ववर्ती कवि अनुभव कर चुका है, उसी बात की अनुभूति परवर्ती कवि को भी हो सकती है। यही अनुभूति पुरानी बातल में नई मदिरा भरती है। परवर्ती कवियों को पूर्ववर्ती कवियों के व्यक्त किए हुए भावों की जब गहरी अनुभूति होती है तब उन पर इस नवीन कवि के व्यक्तित्व की छाप लग जाती है। इस यहाँ पर यही बताने की चेष्टा करेंगे कि यह छाप हमारे कवियों की भाव-सादृश्ययुक्त कविताओं में कहाँ तक पाई जाती है। इससे आगे बढ़कर कौन बड़ा और कौन छोटा कवि है, इस वखड़े में हम नहीं पड़ेंगे।

यद्यपि उनकी भाषा की उछल-कूद में समालोचना के महत्त्व की बहुत कुछ हानि हुई है, फिर भी हिंदी-साहित्य के क्षेत्र में तुलनात्मक समालोचना की ओर सबसे पहला प्रबल प्रयत्न पंडित पद्मसिंह शर्मा ने किया है। उन्होंने इस बात को भली भाँति सिद्ध कर दिया है कि बिहारी ने अपने बहुत से दोहों के भाव सातवाहन की गाथाओं और गोवर्धनाचार्य की आर्याओं से पाए हैं, परंतु उन्होंने यह भी दिखलाया है कि बिहारी ने उन पर अपनी छाप लगा दी है, केवल नकल नहीं उतारी है। उनकी पुस्तक से इसके एक आध उदाहरण यहाँ दिए जाते हैं।

गाथा-सप्तशती की एक गाथा है—

अव्वो दुक्करआरअ पुणो वि तंति करेसि गमणस्स ।

अज्जवि ण होंति सरला वेणीअ तरंगिणो चिउरा ॥ (३ । ७३)

[ अव्वो दुक्करकारक ! पुनरपि चिंता करोषि गमनस्य ।

अद्यापि न भवंति सरला वेण्यास्तरंगिणश्चिकुराः ॥ ]

वाह ! क्या अनहोनी बात कहते हो। फिर जाने की सोचने लगे। अरे देखते नहीं गुलफट पड़े हुए बाल तो अभी तक सीधे ही नहीं हो रहे हैं।

इसी भाव को बिहारी ने यों प्रकट किया है—

अजौं न आए सहज रंग बिरह दूबरै गात ।

अब ही कहा चलाइयति ललन चलन की बात ॥

आर्या और दोहा अपने अपने ढंग के दोनों अच्छे हैं । परंतु जिस उद्देश्य को दृष्टि में रखकर यह उक्ति कही जा रही है उसकी पूर्ति की ओर दोहा अधिक अग्रसर है । गाथा को सुनकर विदेश जाने को प्रस्तुत नायक को यही खयाल आयगा कि मैं बहुत जल्दी परदेश चला जा रहा हूँ और दूसरे यह कि मेरे चले जाने पर नायिका अपने बालों के संबंध में कुछ लापरवाह सी रहने लगेगी । उसे थोड़ा सा दुःख तो अवश्य होगा कि उसकी प्रिया के ऐसे सुंदर बालों की ऐसी दुर्दशा होगी, परंतु वह नायक को परदेश जाने से कदाचित् ही रोक सके । अधिक संभावना यह है कि 'अच्छा !' कहकर वह चल देगा । किंतु दोहे को सुनकर निर्मम होकर उससे चले जाते नहीं बनेगा, क्योंकि उससे मन पर गहरी ठेस लगती है । गुल-भट्ट पड़े बालों की जगह दुबले अंगों की ओर नायक का ध्यान खींचकर बिहारी ने नायक को उसके चले जाने से नायिका पर आने-वाली शारीरिक विपत्ति की सूचना दी है, जिसे पाने पर यदि वह सच्चा प्रेमी है तो उसे अपने कार्य पर फिर से बहुत सोच-विचार करने को बाध्य होना ही पड़ेगा । इसी से दोहा गाथा से अधिक प्रभविष्णु है ।

अब एक आर्या लीजिए—

भ्रामं भ्रामं स्थितया स्नेहे तव पयसि तत्र तत्रैव ।

आवर्तपतितनौकायितमनया विनयमपनीय ॥ ४२२ ॥

नायक के स्नेह-जल में पड़ी हुई नायिका ( अपनी सखी की ) विनय को न मानकर जलावर्त में पड़ी हुई नौका के समान फिर फिर वहीं घूम जाती है ।

बिहारी ने इसी भाव को लेकर यह दोहा कहा है—

फिर फिर चित्त उत्तर्ही रहतु टुटी लाज की लाव ।

अंग अंग छवि भौर मैं भयो भौर की नाव ॥

आर्या की नायिका में पर्याप्त तल्लोनता नहीं दिखाई देती । नायक के पास उसे ठहरने के लिये कुछ अपनी तरफ से भी जोर लगाना पड़ रहा है । उसके सब अंग उसके हृदय का साथ नहीं दे रहे हैं । उसके कान तो स्पष्ट ही हृदय का कहना नहीं मानते । उसके पास विनय को सुनने का अवसर है तभी तो वह उसे 'अपनीय' कर सकी है, हटा सकी है । साथ ही उससे निर्लज्जता व्यंजित होती है । ऐसी निर्लज्जता कहीं देखी नहीं । मानो पहले ही से समाज की मर्यादा के बंधन तोड़ बैठी है । सखियाँ अवश्य उस पर कुढ़ती होंगी । परंतु बिहारी की नायिका हमारी सहानुभूति को आकर्षित करती है । वह निर्लज्ज नहीं है, विवश है । अपनी ओर से उसने पूरा प्रयत्न किया कि शिष्टाचार की रक्षा की जाय । परंतु जब लज्जा की रस्सी स्वतः टूट गई तब वह बेचारी क्या करती । उसका कोई अपराध नहीं था, उसकी विवशता का अपराध था जो उसकी तन्मयता का द्योतन करती है । केवल 'विनयमपनीय' और 'टुटी लाज की लाव' ने भेद किया है किंतु भेद है आकाश पाताल का ।

जैसे बिहारी ने अपने से पहले के कवियों से भाव लिए हैं, वैसे ही उनसे पीछे के कवियों ने भी उनसे लिए हैं । पर जैसे बिहारी ने दूसरों से लिए हुए भावों पर अपनी छाप लगा दी है वैसे ही उनसे पीछे के कवि बिहारी से लिए गए भावों पर अपनी छाप लगाने को तो लगा गए हैं, पर वे अधिकतर सफल नहीं हुए हैं ।

ऐसे उदाहरण बहुत दिए जा सकते हैं जिनमें बिहारी के पद्य औरों के उन्हीं भावों पर बैठाए हुए पद्यों से स्पष्ट ही उत्तम हैं ।

भाषा की समास शक्ति और भाव की समाहार शक्ति बिहारी में चरम सीमा को प्राप्त हुई थी, इसी से उनकी कविता का अनुकरण करना कठिन काम था। जिस भाव को उन्होंने एक दोहे में कहा है उसी के लिये अन्य कवियों को कहीं कहीं दो दो दोहे कहने पड़े हैं और उस पर भी वे उसे पूरा नहीं प्रकाशित कर पाए हैं—

(१) दृग अरुभूत दृढत कुटुम जुरत चतुर चित प्रीति ।

परति गाँठि दुरजन हिऐं दई नई यह रीति ॥

बिहारी के इस एक दोहे का भाव प्रकाशित करने के लिये रस-निधि ने निम्नलिखित दो दोहे कहे हैं—

उरभूत दृग बँधि जात मन कहो कौन यह रीति ।

प्रेम नगर में आइकौ देखो बड़ो अनीति ॥

अद्भुत गति यह प्रेम की लखौ सनेही आय ।

जुरै कँहूँ दृटै कँहूँ कँहूँ गाँठ परि जाय ॥

इतना वाग्विस्तार होने पर भी ये दोहे असमर्थ से हैं। दूसरा दोहा तो अपने भाव को स्वयं प्रकाशित कर ही नहीं सकता है। जो बिहारी के दोहे को नहीं जानता उसके लिये वह बुझावला है।

(२) बर जीते सर मैन के ऐसे देखे मैं न ।

हरिनी के नैनानु तें हरि नीके ये नैन ॥

यह दोहा बिहारी का है। इसी भाव को लेकर रामसहाय कहते हैं—

खंजन कंज न सरि लहैं बलि अलि को न बखानि ।

एनी की अँखियानि ते' ए नीकी अँखियानि ॥

उत्तरार्द्ध तो दोनों का एक ही है। हरिनी की जगह एनी रख दिया गया है। इतना भेद अवश्य है कि रामसहाय के दोहे में दूसरा अँखियानि व्याकरण के अनुसार अशुद्ध है। पूर्वार्द्ध में कुछ भेद है। रामसहाय आँखों को खंजन और कमल से बढ़-



कर बताते हैं। खंजन, कंज और मृग-नयन तीनों एक ही गुण, सुंदरता, के द्योतक हैं। आँखों को तीनों में से एक से भी बढ़ा देना पर्याप्त होता। बिहारी ने यही किया है। और इस प्रकार थोड़े में उसका उपयोग उन्होंने बड़ी अच्छी तरह किया है जिससे उन्होंने रामसहाय से दो बातें अधिक कह डाली हैं। रामसहाय की नायिका की आँखें केवल सुंदर हैं, बिहारी की नायिका की आँखें मार करनेवाली हैं और विशेषता यह कि ये किसी बात में अपना सानी नहीं रखतीं—‘ऐसे देखे मैं न’। मैं और मैं न को यमक की दाद देने का अवसर नहीं है।

(३) आँख मिचौनी हो रही है। बिहारी कहते हैं—

दृग मिहचत मृग-लोचनी भरयो, उलटि भुज, बाथ।

जान गई तिय नाथ के हाथ परस हीं हाथ ॥

मतिराम ने भी इस दोहे का अनुकरण करने की चेष्टा की है—

खेलत चारमिहीचिनी परे प्रेम पहिचानि।

जानी प्रगटत परस तैं तिय-लोचन पिय-पानि ॥

परंतु नकल अधूरी ही रह गई है। बिहारी ने घटना का पूर्ण चित्र अंकित किया है। चित्र गतिवान् है। प्रिय ने पीछे से आकर पत्नी की आँखें मीचीं। स्त्री ने भुजाएँ पीछे की ओर उलटकर उसका आलिंगन किया। क्यों? क्योंकि वह आँखों पर उसका हाथ लगते ही पहिचान गई कि ये पति के हाथ हैं। मतिराम का दोहा इसके सामने कुछ नहीं है। ‘परे प्रेम पहिचानि’ और ‘जानी प्रगटत परस तैं’ में शब्दों की कितनी फिजूल खर्ची की गई है। स्पर्श से ही जब पहिचानना कहना था तो “परे प्रेम पहिचानि” की भूमिका बाँधने की क्या आवश्यकता थी। क्या उसी से प्रेम की व्यंजना नहीं हो जाती? और ‘भरयो, उलटि भुज, बाथ’ ने बिहारी के दोहे में जो सजीवता डाल दी है वह मतिराम के दोहे में कहाँ है?

(४) एक उदाहरण विक्रम से भी दे देना ठीक होगा । सखी मुग्धा नायिका की मिष्ट-भाषिता की नायक से प्रशंसा करना चाहती है । बिहारी उससे कहलाते हैं—

छिनकु छबीले लाल वह, जौ लागि नहिं बतराति ।

ऊख महुख पियूख की, तौ लागि भूख न जाति ॥

नायिका के बोल इतने मीठे होते हैं कि यदि नायक उन्हें सुन ले तो उसे ऊख, मधु और अमृत की इच्छा ही न हो, इनकी इच्छा तभी तक रहती है जब तक वह बोलती नहीं है ।

इसी के अनुकरण पर विक्रम कहते हैं—

कह मिश्री कह ऊखरस नहीं पियूष समान ।

कलाकंद कतरा अधिक तुअ अधरारस पान ॥

विक्रम ने 'बतराति' की जगह अधरारस पान रखा है । अच्छा, कोई बात नहीं । इससे कुछ विशेष अंतर नहीं पड़ता । परंतु जब मिश्री कह दी तब ऊख क्या चीज है और जब पीयूष का नाम ले चुके तब कलाकंद कहने की क्या आवश्यकता ? ऊख महुख पियूष के क्रमोत्कर्ष के सामने विक्रम का दुष्कर्मत्व कितना बुरा लगता है । और कतरा हिंदी के लिये इतना अकान्योपयोगी शब्द है कि उसके रहते कविता को कदाचित् कतराकर चला जाना पड़े । बिहारी की वचन-विदग्धता भी इसमें नहीं है ।

(५) फिर देखिए बिहारी ने कहा है—

लिखन बैठि जाकी सबी गहि गहि गरब गरूर ।

भए न केते जगत के चतुर चितेरे कूर ॥

कुछ यही भाव रखनिधि भी इस दोहे में लाए हैं—

चतुर चितेरे तुव सबी लिखत न हिय ठहराइ ।

कलम छुवत कर आँगुरी कटी कटाछन जाइ ॥

रामसहाय ने इस दोहे में इस भाव को लिया है—

सगरब गरब खीचै सदा चतुर चितेरे आय ।

पर बाकी बाँकी अदा नेकु न खींची जाय ॥

तीनों कवियों के चित्रकार चित्र नहीं खींच सके । रामसहाय का चित्रकार तो नायिका की बाँकी अदा के कारण चित्र खींचने में असमर्थ रहा । रूपाकार तो चित्रकार कागज पर बना सकता है । पर वह अदा को कैसे अंकित करेगा । रसनिधि के चित्रकार की तो उँगली ही कट गई है, नायिका के कटाक्ष इतने तेज हैं, फिर चित्र कैसे खींचे । यहाँ पर कहा जा सकता है कि कटाक्ष मर्म को बेधते हैं, हृदय पर प्रभाव डालते हैं । कुछ चाकू तो वे हैं नहीं कि चीर फाड़ के काम आवें । ठीक है जो लोग कटाक्षों से छुरी का काम लेते हैं वे कवित्व के क्षेत्र से बाहर चले जाते हैं ।

राधा के दृग खेल मैं मूँदे नंदकुमार ।

करनि लगी दृग कोर सो मई छेदि उर पार ॥

यहाँ पर मतिराम ने कटाक्षों से हाथ भी छिड़वा दिया है जो असंभव के साथ साथ अस्वाभाविक भी है । इसके विरोध में मतिराम के ही इस दोहे की स्वाभाविकता को देखिए जिसमें कटाक्षों की मार काट करने की शक्ति अपनी स्वाभाविक सीमा के अंतर्गत है—

लाल तिहारे नैन सर, अचिरज करत अचूक ।

बिन कंचुक छेदे करै, छाती छेदि छट्क ॥

पहले बाहर की वस्तु पर छेद होना चाहिए तब उसके नीचे की । यहाँ ऊपर की वस्तु पर आँच भी नहीं आई है और नीचे की वस्तु कटकर छः टुकड़े हो गई है । बात है आश्चर्य की । असंभव को संभव कर दिया है । और वह भी स्वाभाविकता के साथ बिना किसी कष्ट-कल्पना के ।

परंतु हमें तो रसनिधि का प्रयोग देखना है—

कलम छुवत कर आँगुरी कटी कटाछन जाइ ।

पहली दृष्टि में तो यह प्रयोग अनुचित लग सकता है परंतु विचार करने से मालूम होगा कि यदि अभिधा से काम न लेकर लक्षणा से काम लें तो इसमें कोई अनौचित्य न देख पड़ेगा । कटाँचों से उँगली कट गई । अभिप्राय यह कि कटाँचों ने उँगलियों को बेकाम कर दिया । यह उनकी सामर्थ्य के बाहर की बात है कि कटाँचों को चित्र पर उतार सकें ।

रामसहाय के चित्रकार का घमंड नायिका की अदा ने उतार दिया, और रसनिधि की उँगलियाँ उसके कटाँचों से कट गई । पर बिहारी का चित्रकार क्यों क्रूर हुआ, क्यों मूर्ख बना ? बिहारी स्वयं मौन हैं । वे इस विषय में कुछ नहीं कहते । क्या अदा से ? या कटाँचों से ? या इसलिये कि—

अरुन उदै लौं तरुनई अँग अँग भलकी आइ ।

छिन छिन तिय तन औस सी मिटत लरिकई जाइ ॥

[ लड़कपन के जाने और यौवन के आगम से पल पल में नायिका में परिवर्तन हो रहा है । ]

जब तक चित्रकार एक बार चित्र बनाकर फिर नायिका की ओर देखता है तब तक उसका रूप बदल जाता है । परंतु किसी एक कारण से, कदाचित् सभी कारणों से जिनमें से सब का ऊपर उल्लेख नहीं हुआ है, मौन भी रहे तो ऐसा जिससे श्रेय बढ़े ।

परंतु इससे यह न समझना चाहिए कि बिहारी से पीछे के कवि सदा उनसे पिछड़े ही रहे । कई स्थलों पर निस्संदेह उनमें से कोई कोई बिहारी से आगे भी बढ़ गए हैं । प्रमाण प्रस्तुत हैं । (१) बिहारी नायिका की एड़ी की लाली पर अतिशयोक्ति करते हुए कहते हैं—

पाइ महावरु दैन को नाइनि बैठी आइ ।

फिरि फिरि जानि महावरी एड़ी मीड़ति जाइ ॥

रामसहाय ने भी यही बात कही है, यद्यपि केवल एड़ी के लिये नहीं—

छैल छबीली की छटा लहि महावरी संग ।

जानि परै नाइन लगै जबहिं निचोरन रंग ॥

और विक्रमसाहि ने भी—

सहज अरुन एड़ीनि की लाली लखै बिसेखि ।

जावक दीवै जकि रही नाइन पाइन पेखि ॥

विक्रमसाहि ने ऐसा ही कुछ पाँव की उँगलियों के विषय में भी कहा है—

पाइन लखि लाली ललित नाइन अति सकुचात ।

चितै चितै मृदु आँगुरिन फिरि फिरि मीढ़त जात ॥

बिहारी की नाइन को नायिका की एड़ी में और महावर की गोली में कोई भेद नहीं दिखाई देता, वह एड़ी को महावर की गोली समझकर उसे मीढ़ती जाती है, निस्संदेह बहुत भद्दी एड़ी है ! या नाइन अपने काम से अनभिज्ञ है । रामसहाय की नाइन को भी कुछ देर तक यह भ्रम रहता है किंतु वह अपना काम जानती है । अधिक रंग निकालने की इच्छा से वह एँड़ी या उँगली को निचेड़ने लगती है । जब रंग नहीं निकलता है, तब भेद खुलता है । जहाँ उँगलियों की लाली के संबंध में विक्रमसाहि ने बिहारी की नकल की है वहाँ पर वे भी उसी भ्रम में पड़े हैं । इतना अवश्य है कि उनकी नाइन को डर है कि कहीं महावर और उँगली में भेद न जान पड़ने से नायिका की उँगली न मीढ़ी जाय । इतनी होशियारी पर भी वह करती वही है जिससे बचना चाहती है । स्मरण रखना चाहिए कि यहाँ भ्रमालंकार न होकर वास्तविक भ्रम है । चमत्कार भ्रम का नहीं है, अतिशयोक्ति का है । बात का बतंगड़ जहाँ पर बनाया जाता है, वहाँ पर गुल्ल गपाड़ा भी हो सकता है, पर रस नहीं आ सकता ।

किंतु पहले दोहे में जहाँ विक्रम ने बिहारी से केवल संकेत लिया है वहाँ उनके दोहे में बड़ी सरस स्वाभाविकता आ गई है ।

सहज अरुन एड़ीनि की लाली लखै बिसेखि ।

जावक दीवै जकि रही नाइन पाइन पेखि ॥

नाइन ने अभी एँड़ियों पर महावर नहीं लगाई है । परंतु नायिका की एँड़ियों की स्वाभाविक लाली से नाइन को भान होता है कि मानो उनपर महावर लग चुकी है । इसी से वह कुछ सहमी सी सोच रही है कि महावर लगाऊँ या न लगाऊँ ।

( २ ) नायक परदेश जाना चाहता है, उसे रोकने के लिये बिहारी की नायिका ने एक युक्ति सोची है—

पूस मास सुनि सखिनु पै साईं चलत सवार ।

गहि कर बीन प्रवीन तिय राग्यौ राग मलार ॥

यही भाव विक्रम ने लिया है—

माँगी बिदा बिदेस कौ दै जराइ अनमोल ।

बोली बोल न सुघर तिय दिय अलाप हिंडोल ॥

मतिराम भी कुछ ऐसा ही कहते हैं—

प्राननाथ परदेस कौ चलियै समौ विचारि ।

स्याम नैन घन बाल के बरसन लागे बारि ॥

बिहारी की नायिका जानती है कि यदि बरसात आरंभ हो जाय तो नायक को भी विरह की वेदना का शीघ्र अनुभव होने लगेगा और वह विदेश न जायगा । इसी लिये वह मलार राग गाती है । लोगों का विश्वास है कि मलार राग गाने से पानी बरसने लगता है । विक्रम की नायिका मलार की जगह हिंडोल गाती है । यह राग वसंत में गाया जाता है । प्रवीण गानेवाला हो तो, कहते हैं, हिंडोल गाने से वसंत ऋतु का आभास बिना ऋतु के भी मिल जाता है । यहाँ भी वही प्रभाव उद्दिष्ट है । बात एक ही है । दोनों नायिकाएँ

बड़ी प्रवीण जान पड़ती हैं । दोनों की प्रत्युत्पन्न मति है ।  
परंतु इतने पर भी क्या हुआ ? कौन जानता है कि मलार गाने  
से बरसात और हिंडोल गाने से वसंत ऋतु हो ही जायगी । यह  
विश्वास भर है । हम समझते हैं कि दोनों को अंत में हताश  
होना पड़ा होगा । परंतु मतिराम की नायिका के साथ वह बात  
नहीं है । क्योंकि उसने तो साक्षात् बरसात की झड़ी लगा दी—

स्याम नैन घन बाल के बरसन लागे बारि ।

मलार और हिंडोल गाकर क्रमशः बरसात और बसंत लाने के  
कृत्रिम प्रयत्नों के विरोध में आँखों से बरसती हुई यह झड़ी कितनी  
स्वाभाविक है ! उसके पीछे कितनी द्रव्यशीलता छिपी है । इसी से  
उसमें द्रावकता भी है ।

( ३ ) 'पहुँचति डटि रन-सुभट लौं रोकि सकैं सब नाहिं ।

लाखनहूँ की भीर मैं आँखि उहाँ चलि जाहिं ॥

यह दोहा बिहारी का है । इसी की टक्कर पर रामसहाय ने  
लिखा है—

धीर अभय भट भेदि कै भूरि भरी हू भीर ।

भूमकि जुरहिं दग दुहुँनि के नेकु मुरहिं नहिं बीर ॥

बिहारी ने नायिका की आँखों को सुभट माना है । उनका  
सुभटत्व इसी में है कि उन्हें नायक की ओर जाने से कोई नहीं  
रोक सकता, वे वहाँ चली ही जाती हैं । वहाँ जाकर भी कुछ सुभ-  
टत्व करती हैं या नहीं, बिहारी नहीं जानते । 'पहुँचति डटि रन  
सुभट लौं' के अनंतर 'उहाँ चलि जाहिं' बहुत शिथिल लगता है । राम-  
सहाय ने नायक-नायिका दोनों की आँखों को 'धीर अभय भट'  
बनाया है और उनके अभय भटत्व का पूरा निर्वाह किया है ।  
'भूरि भरी हू भीर' को बेधकर वे आपस में जुट जाती हैं—खूब  
मार करती हैं । फिर 'रोकि सकैं सब नाहिं' यह बड़ा असमर्थ

वाक्य है। बिहारी कहना चाहते हैं कि सब मिलकर भी नहीं रोक सकते, अर्थात् कोई नहीं रोक सकता परंतु वस्तुतः उसका अर्थ हो गया है—‘सब नहीं’ रोक सकते। कोई ही कोई रोक सकते हैं। इसके विरोध में ‘नेकु मुरहिं नहिं बोर’ कितना जोरदार वाक्य है।

( ४ ) कहा भयौ जो बीछुरे मो मन तो मन साथ।

उड़ो जाउ कितहूँ तऊ गुड़ी उड़ाइक हाथ ॥

बिहारी के इस दोहे को देखकर रसनिधि को क्या अच्छी सूझी है—

उड़ी गुड़ी लौं मन फिरै डोर लाल के हाथ।

नैन तमासे को रहे लगे निरंतर साथ ॥

बिहारी के दोहे का भाव रसनिधि के दोहे के पूर्वार्ध में आ गया है और उत्तरार्ध में एक अनूठी उक्ति ने चमत्कार को और भी बढ़ा दिया है। नायिका का मन उड़ा हुआ है। वह पतंग हो रही है जिसकी डोर नायक के हाथ में है। मन को तो नायक उड़ा रहा है, पर तुम्हारी आँखों को क्या हो गया, वे क्यों वहाँ चली जाती हैं जहाँ तुम्हारा मन उड़कर जाता है। जब गुड़ी उड़ाई जा रही है तो आँखें क्या तमाशा न देखेंगी। आँखें तटस्थ नहीं रह सकतीं, जब से गुड़ी का उड़ना आरंभ हुआ है तब से उसको देखते रहना उनकी देव हो गई है।

हमने ये उदाहरण इस उद्देश्य से नहीं दिए हैं कि शृंगारो कवियों में बिहारी को जो उच्च स्थान प्राप्त है उससे वे गिराए जायें। परंतु हमारा तात्पर्य यह दिखलाने का है कि और कवि भी बिल्कुल बेकाम नहीं हैं। बिहारी बड़े हैं सही, लेकिन छोटे कवियों का भी अपना मूल्य है। साथ ही जैसा हम ऊपर स्पष्ट कर आए हैं, यह भी हमारा उद्देश्य है कि लोग यह जान जायें कि दो कवियों के कुछ चुने हुए पद्यों को लेकर तुलना करने से चटपट किसी परिणाम



पर पहुँच जाना कितना भयावह है। ऐसे उदाहरण कम नहीं हैं जिनमें विशेषकर मतिराम और उनके बाद विक्रम बिहारी की बराबरी करने में समर्थ होते हैं, और कहीं कहीं तो वे उनसे बढ़ भी जाते हैं। रसनिधि और रामसहाय में भी ऐसे पद्य मिलते हैं परंतु बहुत कम। बिहारी के अनुकरण पर बहुत अच्छी कविता न लिख सकने के कारण हम किसी कवि के विषय में सामान्य मत नहीं स्थापित कर सकते। उन पद्यों के आधार पर जो मत निर्धारित होगा वह उन्हीं के संबंध में ठोक हो सकता है, वह सामान्य नियम के रूप में ग्रहण नहीं किया जा सकता।

फिर भी तुलना के लिये प्रस्तुत कवियों की समस्त रचनाओं को पढ़कर उनके संबंध में मन पर जो कोई सामान्य प्रभाव पड़ते हैं उनके आधार पर उनका थोड़ा बहुत आपेक्षिक महत्त्व अवश्य स्थिर किया जा सकता है। जैसे हम कह सकते हैं कि बिहारी के ऐसी भाषा की चुस्ती प्रस्तुत कवियों में से किसी में नहीं मिलती। परंतु जहाँ उनमें भाषा की चुस्ती है वहाँ ही कई स्थानों पर अभिव्यक्ति की कृत्रिमता और दूरान्वय आदि दोष भी आ गए हैं। मतिराम में भाषा की वैसी समास-शक्ति के वैसे दर्शन नहीं होते जैसे बिहारी में होते हैं, परंतु साथ ही उनकी भाषा शिथिल भी नहीं है। उसके साथ शैली और भाव की अकृत्रिमता के योग से उनकी रचनाएँ और भी चमक उठती हैं। हाव-विभावों और चेष्टाओं की जैसी सुंदर और सजीव योजना बिहारी में मिलती है वैसी और कवियों में नहीं देख पड़ती। यदि इस विषय में कोई बिहारी के निकट पहुँच सका है तो वह मतिराम ही हैं। विक्रम की रचनाओं में भी स्वाभाविकता का माधुर्य पर्याप्त है परंतु वे प्रत्यक्षवाद के इतने पक्षपाती मालूम होते हैं कि व्यंजना का उनके यहाँ कोई मूल्य ही नहीं माना जाता। जिस बात को और कवि केवल व्यंजित करते हैं उसे वे प्रत्यक्ष या नम्र रूप में कहकर

कभी कभी बहुत अश्लील हो जाते हैं । रसनिधि और रामसहाय भी समय समय पर जब अपने वास्तविक रूप में प्रत्यक्ष होते हैं तब उनके पद्य कविता की उच्च भूमि में पहुँच जाते हैं परंतु बहुधा उन्होंने बिना गहन अनुभूति के औरों के ही भावों को प्रदर्शित करने में अपना बल लगाया है, जिससे उनमें स्थान स्थान पर भावों और भाषा दोनों की शिथिलता आ गई है । परंतु जैसा हम कह चुके हैं, जहाँ तहाँ उनकी प्रतिभा वास्तविक काव्य के रूप में जगमगा उठी है ।



# अशुद्धि-पत्र

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
३	२४	मोह	मोर
२४	८	स	हंस
४२	१८	कह तब	कहतब
८६	१७	गा <sup>२</sup>	गाढ़ें
१०६	८	सैनन	सैन न
११	१४	क	नैक
१२१	२३	दियो	हियो
१२३	८	देह रहचटौ	नेह रहचटौ
१४७	२३	बिकल	बिकच
१५२	१४	मदर से	मदरसे
२१५	२१	बसनिका	बरनिक
२३१	१४	सिकै	हंसिकै
२३४	३	तू सतुराई	तूस तुराई
२३५	१०	चोट न	चोटन
२३७	२५	काया	का या
२३८	६	गरबाहीं	गर बाहीं
२४३	४	के दार	केदार
२४४	६	मैन	मैं न
२५६	१०	पीक हवह	पी कह वह
२५७	४	कुकुद	कुमुद
२५८	२६	त <sup>२</sup>	तहँ
२६१	६	न ओढ	नवोढ़
२७०	२	उतरत	उत रत
२८१	८	रज के	रजनी

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
३००	१८	जग	जन
३०५	२६	मन	मग
३१७	१२	उसारे	उखारे
३४८	२	सपनि	सवति
३५२	१२	राजत...बनी	राजति रवन वह रवनी
३५३	१३	लुं	तुं
३५५	६	चचतौ	चलतौ
"	१०	अरबस	अर-बस
३६२	१६	मूंदत	मूंदै
"	२०	खूदै	कूंदै
३६३	"	अरोरै	मरोरै
३७५	८	जाती	जानी
३७६	३	देखिस चिह्न	देखि स-चिह्न
"	"	बाधिमान	बाँधि मान
३७६	२६	मद	मम
"	"	गडुवा-...भेरि	गडु बागड़ तन बेरि
३७७	१२	नूह	नेह
३७८	३	वंशीवट	वंसी बट
"	१६	गरभ	गरम
"	२६	गाधर	आगर
३८०	२	हरदफ	हरदब
"	"	हरदफ	अरदब
३८१	१	नारद	भा रद

## ( १ ) तुलसी-सतसई

### प्रथम सर्ग

नमो नमो श्रीराम प्रभु परमात्म परधाम ।  
जेहि सुमिरे सिध होत है तुलसी जन-मन-काम ॥ १ ॥  
राम वाम दिसि जानकी लखन दाहिनी ओर ।  
ध्यान सकल कल्याणमय तुलसी सुर-तर तौर ॥ २ ॥  
परम पुरुष पर-धाम बर जापर अपर न आन ।  
तुलसी सो समुझत सुनत राम सोई निरबान ॥ ३ ॥  
सकल सुखद गुन जासु सो राम कामना-हीन ।  
सकल-काम-प्रद सरब-हित तुलसी कहहिँ प्रबोन ॥ ४ ॥  
जाके रोम रोम प्रति अमित अमित ब्रह्मंड ।  
सो देखत तुलसी प्रगट अमल सु-अचल प्रचंड ॥ ५ ॥  
जगत-जननि श्री जानकी जनक राम सुभ-रूप ।  
जासु कृपा अति अघ-हरनि करनि विवेक अनूप ॥ ६ ॥  
तात मातु पर जासु के तासु न लेस कलेस ।  
ते तुलसी तजि जात किमि निज घरतर पर-देस ॥ ७ ॥  
पिता विवेक-निधान बर मातु दया-जुत नेह ।  
तासु सुअन किमु पाइहैं अनत अटन तजि गेह ॥ ८ ॥  
बुद्धि-विनय-गति-हीन सिसु सुपथ कुपथ गत-ग्यान ।  
जननि जनक तेहि किमि तजहिँ तुलसी सरिस अजान ॥ ९ ॥  
मात तात सिध राम रुख बुद्धि विवेक प्रमान ।  
हरत अखिल अघ तरुन-तर तब तुलसी कह्यु जान ॥ १० ॥

जिनतें उदभव बर बिभव ब्रह्मादिक संसार ।  
 सुगति तासु तिनकी कृपा तुलसी बहहि विचार ॥ ११ ॥  
 ससि रवि सीता राम नम तुलसी उरसि प्रमान ।  
 उदित सदा अथवत न सो कुतसित तम कर हान ॥ १२ ॥  
 तुलसी कहत विचारि गुरु राम सरिख नहिँ आन ।  
 जासु कृपा सुचि होत रुचि बिसद बिबेक अमान ॥ १३ ॥  
 राम सरूप अनूप जल हरत सकल मल-मूल ।  
 तुलसी मम हिय जो लगहि उपजत सुख अनुकूल ॥ १४ ॥  
 रेफ रमित परमात्मा सह अकार सिय रूप ।  
 दीरघ मिलि विधि जीव इव तुलसी अमल अनूप ॥ १५ ॥  
 अनुस्वार कारन जगत श्रीकर करन अकार ।  
 मिलित अकार मकार भौ तुलसी हर-दातार ॥ १६ ॥  
 ग्यान विरागऽरु भगति सह मूरति तुलसी पेखि ।  
 बरनत गति मति अनुहरत महिमा बिसद बिसेखि ॥ १७ ॥  
 नाम मनोहर जानि जिय तुलसी करि परिमान ।  
 बरन-विपरजय भेद ते' कहैं सकल सुभ ग्यान ॥ १८ ॥  
 तुलसी सुभ-कारन समुक्ति गहत राम रस नाम ।  
 असुभ-हरन सुचि-सुभ-करन भगति-ग्यान-गुन-धाम ॥ १९ ॥  
 तुलसी राम समान बर सपनेहुँ अपर न आन ।  
 तासु भजन-रति-हीन अति चाहसि गति परमान ॥ २० ॥  
 अहि-रसना थन-धेनु रस गनपति-द्विज गुरु बार ।  
 माधव सित सिय-जनम-तिथि सतसैया अवतार ॥ २१ ॥  
 भरन हरन अति अमित विधि तत्त्व-अरथ कवि-रीति ।  
 सांकेतिक सिद्धांत-मत तुलसी बहत विनीति ॥ २२ ॥  
 विमल बोध कारन सु-मति सतसैया सुख-धाम ।  
 गुरु-मुख पढ़ि गति पाइहैं बिरति भगति अभिराम ॥ २३ ॥

म-न-भ-य-ज-र-स-त-लाग-जुत प्रगट छंद जत होय ।  
 सो घटना सुखदा सदा कहत सु-कवि सब कोय ॥ २४ ॥  
 जत समान तत जान लघु अपर बेद गुरु मान ।  
 संजोगादि विकल्प पुनि पदन अंत कहु जान ॥ २५ ॥  
 दीरघ लघु करि तहँ पढ़ब जहँ मुख लह बिसराम ।  
 प्राकृति प्रगट प्रभाव यह जनित बुधाबुध बाम ॥ २६ ॥  
 दुइ गुरु सीता सार गन राम सो गुरु लघु होइ ।  
 लघु गुरु रमा प्रतच्छ गन जुग लघु हर गन सोइ ॥ २७ ॥  
 सहस्र नाम मुनि-भनित मुनि तुलसी-बल्लभ नाम ।  
 सकुचत हिय हँसि निरखि सिय धरम-धुरंधर राम ॥ २८ ॥  
 दंपति रस रसना दसन परिजन बदन सु-गोह ।  
 तुलसी हर-हित वरन सिसु संपति सहज सनेह ॥ २९ ॥  
 हिय निरगुन नयनन्हि सगुन रसना राम सुनाम ।  
 मनहुँ पुरट-संपुट लसत तुलसी ललित ललाम ॥ ३० ॥  
 प्रभु-गुन-गन भूखन बसन बचन बिसेखि सुदेस ।  
 राम-सु-कीरति कामिनी तुलसी करतब कोस ॥ ३१ ॥  
 रघुवर-कीरति तिय-बदन क्यों कह तुलसी-दासु ।  
 सरद प्रकास अकास छवि चारु चिबुक तिल जासु ॥ ३२ ॥  
 तुलसी सोहत नखत-गन सरद सुधाकर साथ ।  
 मुकुता भालर भलक जनु राम सु-जस - सिसु-हाथ ॥ ३३ ॥  
 आत्म बोध बिबेक बिनु राम भजत अलसात ।  
 लोक सहित परलोक की अवसि बिनासी बात ॥ ३४ ॥  
 बरु मराल मानस तजै चंद सीत रवि घाम ।  
 मोह मदादिक कै तजै तुलसी तजै न राम ॥ ३५ ॥  
 आसन दढ़ आहार दढ़ सुमति ग्यान दढ़ होय ।  
 तुलसी बिना उपासना बिनु दुलहे की जोय ॥ ३६ ॥



राम-चरन-अवलंब बिनु परमारथ की आस ।  
 चाहत बारिद-बुंद गहि तुलसी चढ़न अकास ॥ ३७ ॥  
 राम नाम तरु-मूल रस आठ पात फल एक ।  
 जुग लसंत सुभ चारि जग वरनत निगम अनेक ॥ ३८ ॥  
 राम-काम-तरु परिहरत सेवत कलि-तरु ठूठ ।  
 स्वारथ परमारथ चाहत सकल मनोरथ भूठ ॥ ३९ ॥  
 तुलसी केवल काम-तरु रामचरित आराम ।  
 निशिचर कलि-कर निहत तरु मोहि कहत विधि वाम ॥ ४० ॥  
 स्वारथ परमारथ सकल सुलभ एक ही ओर ।  
 द्वार दूसरे दीनता उचित न तुलसी तोर ॥ ४१ ॥  
 हित सन हित रति राम सन रिपु सन बैर विहाय ।  
 उदासीन संसार सन तुलसी सहज सुभाय ॥ ४२ ॥  
 तिल पर राखेउ सकल जग विदित बिलोकत लोग ।  
 तुलसी महिमा राम की को जग जानन जोग ॥ ४३ ॥  
 जहां राम तहँ काम नहिँ जहां काम नहिँ राम ।  
 तुलसी कबहुँ होत नहिँ रवि रजनी एक ठाम ॥ ४४ ॥  
 राम दूरि माया प्रबल घटत जानि मन माँह ।  
 बढ़त भूरि रवि दूरि लखि सिर पर पग-तर छाँह ॥ ४५ ॥  
 संपति सकल जगत्र की स्वासा सम नहिँ होइ ।  
 सो स्वासा तजि राम-पद तुलसी अलग न खोइ ॥ ४६ ॥  
 तुलसी सी अति चतुरता राम-चरन लवलीन ।  
 पर-मन पर-धन हरन को गनिका परम प्रवीन ॥ ४७ ॥  
 चतुराई चूल्हे परे जम गहि ग्यानहिँ खाय ।  
 तुलसी प्रेम न राम-पद सब जर मूल नसाय ॥ ४८ ॥  
 प्रेम सरीर प्रपंच रुज उपजी अधिक उपाधि ।  
 तुलसी भली सो बैदई बेगि बांधई ब्याधि ॥ ४९ ॥

राम बिटप तरु बिसद वर महिमा अगम अपार ।  
 जा कहँ जहँ लागि पहुँच है ता कहँ तहँ लागि डार ॥ ५० ॥  
 तुलसी कोसल-राज भजु जनि चितवै फेहुँ ओर ।  
 पूरन राम मयंक मुख करु निज नयन चकोर ॥ ५१ ॥  
 ऊंचे नीचे कहुँ मिलै हरि-पद परम पियूख ।  
 तुलसी काम मयूख ते' लागै कवनिहुँ रूख ॥ ५२ ॥  
 स्वामी होनो सहज है दुरलभ होनो दास ।  
 गाढर लाए ऊन को लाग्यो चरन कपास ॥ ५३ ॥  
 चलव नीति-मग राम-पग प्रेम निवाहव नीक ।  
 तुलसी पहिरिय सो वसन जो न पखारत फोक ॥ ५४ ॥  
 तुलसी राम कृपालु ते' कहि सुनाउ गुन दोस ।  
 होय दूवरी दीनता परम पीन संतोस ॥ ५५ ॥  
 सुमिरन सेवन राम-पद राम-चरन पहिचानि ।  
 ऐसेहु लाभ न ललक मन तौ तुलसी हित-हानि ॥ ५६ ॥  
 सब संगी बाधक भए साधक भए न कोय ।  
 तुलसी राम कृपालु ते' भली होय सो होय ॥ ५७ ॥  
 तुलसी मिटइ न कलपना गए कलप-तरु छांह ।  
 जौं लागि द्रवइ न करि कृपा जनक-सुता को नाह ॥ ५८ ॥  
 बिलग बिलग सुख निकट दुख जनम मरन सोइ रीति ।  
 रहियत राखे राम के तजे ते उचित अनीति ॥ ५९ ॥  
 जाय कहव करतूति बिनु जाय जोग बिनु छेम ।  
 तुलसी जाय उपाय सब बिना राम-पद-प्रेम ॥ ६० ॥  
 तुलसी रामहिं परिहरै निपट हानि सुनु मोद ।  
 जिमि सुरसरि गत सलिल वर सुरा सरिस गंगोद ॥ ६१ ॥  
 हरे चरहिँ तापहिँ बरे फरे पसारहिँ हाथ ।  
 तुलसी स्वारथ-भीत जग परमारथ रघुनाथ ॥ ६२ ॥

तुलसी खोटे दास कर रघुपति राखत मान ।  
 ज्यों मूरख उपरोहितहिँ देत दान जजमान ॥ ६३ ॥  
 ज्यों जग बैरी मीन को आपु सहित परिवार ।  
 त्यों तुलसी रघुनाथ बिन आपनि दसा विचार ॥ ६४ ॥  
 तुलसी राम भरोस सिर लिए पाप धरि मोट ।  
 ज्यों व्यभिचारिनि नारि कहँ बड़ी खसम की ओट ॥ ६५ ॥  
 स्वामी सीतानाथ जी तुम लागि मेरी दैर ।  
 तुलसी काग जहाज कहँ सूझत और न ठौर ॥ ६६ ॥  
 तुलसी सब छल छाड़ि कै कीजै राम सनेह ।  
 अंतर पति सों है कहा जिन देखी सब देह ॥ ६७ ॥  
 सबही को परखे लखे बहुत कहे का होइ ।  
 तुलसी तेरो राम तजि हित जग और न कोइ ॥ ६८ ॥  
 तुलसी हम सों राम सों भलो मिलो है सूत ।  
 छोड़े बनइ न संग्रहे ज्यों घर माहँ कपूत ॥ ६९ ॥  
 कोटि बिघन संकट विकट कोटि सत्रु जौं साथ ।  
 तुलसी बल नहिँ करि सकै जौं सुदिष्ट रघुनाथ ॥ ७० ॥  
 लगन मुहूरत जोग बल तुलसी गनत न काहि ।  
 राम भए जेहि दाहिने सबै दाहिने ताहि ॥ ७१ ॥  
 प्रभु प्रभुता जा कहँ दर्ई बोल सहित गहि बांह ।  
 तुलसी ते गाजत फिरहिँ राम-छत्र की छांह ॥ ७२ ॥  
 साधन सांसति सब सहत सुमन सुखद फल लाहु ।  
 तुलसी चातक जलद की रीझ बूझ बुध काहु ॥ ७३ ॥  
 चातक जीवन जलद कहँ जानत समय सुरीति ।  
 लखत लखत लखि परत है तुलसी प्रेम-प्रतीति ॥ ७४ ॥  
 जीव चराचर जहँ लगे है सब को प्रिय मेह ।  
 तुलसी चातक मन वसेउ घन सों सहज सनेह ॥ ७५ ॥

डोलत बिपुल बिहंग बन पियत पोखरिन वारि ।  
 सु-जस धवल चातक नवल तोर भुवन दस-चारि ॥ ७६ ॥  
 मुख सीठे मानस मलिन कोकिल मोर चकोर ।  
 सु-जस सलिल चातक बलित रहेउ भुवन भरि तोर ॥ ७७ ॥  
 मांगत डोलत है नहीं तजि घर अनत न जात ।  
 तुलसी चातक भगत की उपमा देत लजात ॥ ७८ ॥  
 तुलसी तीनों लोक महुँ चातकही को माथ ।  
 सुनियत जासु न दीनता किए दूसरो नाथ ॥ ७९ ॥  
 प्रीति पपीहा पयद की प्रगट नई पहिचानि ।  
 जाचक जगत अधीन इन किए कनौड़ो दानि ॥ ८० ॥  
 ऊंची जाति पपीहरा पियत न नीचो नीर ।  
 कै जांचै घनस्याम सों कै दुख सहै सरीर ॥ ८१ ॥  
 कै बरसै घन समय सिर कै भरि जनम निरास ।  
 तुलसी जाचक चातकहि तऊ तिहारी आस ॥ ८२ ॥  
 चढ़त न चातक चित कबहुँ प्रिय पयोद के दोख ।  
 याते' प्रेम पयोधि वर तुलसी जोग न रोख ॥ ८३ ॥  
 तुलसी चातक मांगनो एक एक घन दानि ।  
 देत सो भू-भाजन भरत लेत घूंट भरि पानि ॥ ८४ ॥  
 हूँ अधीन जांचै नहीं सीस नाइ नहिं लेइ ।  
 ऐसे मानी मांगनहिं को बारिह बिनु देइ ॥ ८५ ॥  
 पवि पाहन दामिनि गरज अति भूकोर खर खीभ ।  
 दोस न प्रीतम रोस लखि तुलसी रागहिं रीभ ॥ ८६ ॥  
 को न जिआए जगत महुँ जीवन-दायक पानि ।  
 भयो कनौड़ो चातकहि पयद प्रेम पहिचानि ॥ ८७ ॥  
 मान राखिवो मांगिवो पिय सों सहज सनेहु ।  
 तुलसी तीनों तव फवै जब चातक मत् लेहु ॥ ८८ ॥

तुलसी चातक ही फवै मान राखिवो प्रेम ।  
 बक्र बूंद लखि स्वाति को निदरि निबाहै नेम ॥ ८६ ॥  
 उपल बरखि गरजत तरजि डारत कुलिस कठोर ।  
 चितब कि चातक जलद तजि कबहुँ आन की ओर ॥ ८७ ॥  
 बरखि परुख पाहन जलद पच्छ करै टुक टुक ।  
 तुलसी तदपि न चाहिए चतुर चातकहिँ चूक ॥ ८८ ॥  
 रटत रटत रसना लटी तृखा सूखि गो अंग ।  
 तुलसी चातक को हिए नित नूतनहि तरंग ॥ ८९ ॥  
 गंगा जमुना सुरसती सात सिंधु भरि पूरि ।  
 तुलसी चातक के मते बिना स्वाति सम धूरि ॥ ९० ॥  
 तुलसी चातक के मते स्वातिहुँ पियत न पानि ।  
 प्रेम-तृखा बाढ़ति भली घटे घटेगी कानि ॥ ९१ ॥  
 सर सरिता चातक तजेउ स्वातिहु सुधि नहिँ लेइ ।  
 तुलसी सेवक बस कहा जो साहिब नहिँ देइ ॥ ९२ ॥  
 आस पपीहा पयद की सुनि हो तुलसीदास ।  
 जो अँचवै जल स्वाति को परिहरि बारह मास ॥ ९३ ॥  
 चातक धन तजि दूसरो जिअत न नाई नारि ।  
 मरत न मांगै अरध-जल सुरसरिहु को बारि ॥ ९४ ॥  
 व्याधा बधेउ पपीहरा परेउ गंग-जल जाइ ।  
 चौँच भूँदि पीवे नहिँ धिग पोवन पन जाइ ॥ ९५ ॥  
 अधिक बधे परि पुन्य जल उपर उठाई चौँच ।  
 तुलसी चातक प्रेम-पट मरत न लायी खोंच ॥ ९६ ॥  
 चातक सुतहि सिखाव नित आन नीर जनि लेहु ।  
 यह हमरे कुल को धरम एक स्वाति सों नेहु ॥ १०० ॥  
 दरस परस नहिँ आन जल बिनु स्वाती सुनु तात ।  
 सुनत चेचुआ चित चुभेउ समुझि नीति बर बात ॥ १०१ ॥

तुलसी चातक देत सिख सुतहिं धार ही धार ।  
 तात न तरपन कीजियो बिना बारि-धर-धार ॥१०२॥  
 चरग चंगु-गत चातकहिं नेम प्रेम की पीर ।  
 तुलसी पर-बस हाड़ पर परिहै पुहुमी-नीर ॥१०३॥  
 अंड फोरि किय चेहुआ तुख पर-नीर निहारि ।  
 गहि चंगुल चातक चतुर डारेड बाहर बारि ॥१०४॥  
 होत न चातक पातकी जीवन-दानि न मूढ़ ।  
 तुलसी गति प्रह्लाद की समुक्ति प्रेम-पथ गृढ़ ॥१०५॥  
 तुलसी के मत चातकहिं केवल प्रेम - पियास ।  
 पियत स्वाति जल जान जग जांचित बारह मास ॥१०६॥  
 एक भरोसो एक बल एक आस बिस्वास ।  
 स्वाति सलिल रघुनाथ बर चातक तुलसीदास ॥१०७॥  
 आलबाल मुकुताहलनि हिय सनेह तरु - मूल ।  
 होइ हेतु चित चातकहिं स्वाति-सलिल अनुकूल ॥१०८॥  
 राम-प्रेम विनु दूबरो राम-प्रेम सह पीत ।  
 विसद सलिल सरवर बरन जन तुलसी मन-मीन ॥१०९॥  
 आप बधिक बर बेस धरि करेड कुरंगम राग ।  
 तुलसी जो मृग - मन मुरै परै प्रेम - पट दाग ॥११०॥

## द्वितीय सर्ग

खेलत बालक व्याल सँग मेलत पावक हाथ ।  
 तुलसी सिसु पितु मातु इव राखत सिय-रघुनाथ ॥१११॥  
 तुलसी केवल राम - पद लागै सरल सनेह ।  
 तौ घर घट वन बाट महुँ कतहुँ रहे किन देह ॥११२॥

कै ममता करु राम - पद कै ममता परिहेलु ।  
 तुलसी दुइ महँ एक अब खेल छाड़ि छल खेलु ॥११३॥  
 कै तोहि लागहिँ राम प्रिय कै तू प्रभु-प्रिय होहि ।  
 दुइ महँ रुचै जो सुगम सो तुलसी कीबे तोहि ॥११४॥  
 रावनारि के दास सँग कायर चलहिँ कु - चाल ।  
 खर दूखन मारीच सम मूढ़ भए वस काल ॥११५॥  
 तुलसी - पति दरबार में कमी वस्तु कछु नाहिँ ।  
 करम - हीन फलपत फिरत चूक चाकरी माहिँ ॥११६॥  
 राम गरीब-नेवाज हैं राज देत जन जानि ।  
 तुलसी मन परिहरत नहिँ घुरबिनियां की वानि ॥११७॥  
 घर कीन्हे घर होत है घर छोड़े घर जाय ।  
 तुलसी घर बन बीचही रहहु प्रेम-पुर छाँय ॥११८॥  
 राम राम रटिबो भलो तुलसी खता न खाय ।  
 लरिकाई को पैरिबो धोखेहु बूढ़ि न जाय ॥११९॥  
 तुलसी बिलंब न कीजिए भजि लोजै रघुबीर ।  
 तन तरकस से जात हैं स्वास सरीखे तीर ॥१२०॥  
 राम-नाम सुमिरत सुजन भाजन भएब कुजाति ।  
 कु-तरुक सुर-पुर-राज-मग लहत भुवन बिख्याति ॥१२१॥  
 नाम-महातम साखि सुनु नर की केतिक बात ।  
 सरवर पर गिरिवर तरे ज्यों तरुवर के पात ॥१२२॥  
 ग्यान गरीबी गुरु - धरम नरम बचन निरमोख ।  
 तुलसी कबहुँ न छाड़िए सील सत्य संतोख ॥१२३॥  
 असन बसन सुत नारि सुख पापिहु के घर होय ।  
 संत - समागम राम-धन तुलसी दुरलभ दोय ॥१२४॥  
 तुलसी तीरहि के बसे अवसि पाइए थाह ।  
 बेगहि जाय न पाइए सर सरिता अवगाह ॥१२५॥

पग अंतर मग अगम जल जल-निधि जल संचार ।  
 तुलसी करिया करम बस बूढ़त सरत न बार ॥१२६॥  
 तुलसी हरि - अपमान तें होत अकाज समाज ।  
 राज करत रज मिलि गए सदल सकुल कुरु-राज ॥१२७॥  
 तुलसी मीठे वचन ते' सुख उपजत चहुँ ओर ।  
 बसीकरन यह मंत्र है परिहर वचन कठोर ॥१२८॥  
 राम-कृपा तें होत सुख राम-कृपा बिनु जात ।  
 जानत रघुवर भजन तें तुलसी सठ अलसात ॥१२९॥  
 सनमुख हूँ रघुनाथ को देहु सकल जग पीठि ।  
 तजे कंचुरी उरग कहँ होत अधिक अति दीठि ॥१३०॥  
 मरजादा दूरहि रहे तुलसी किए विचार ।  
 निकट निरादर होत है जिमि सुरसरि-बर-बार ॥१३१॥  
 राम कृपा-निधि स्वामि मम सब विधि पूरन काम ।  
 परमारथ पर धाम पर संत-सुखद-वर धाम ॥१३२॥  
 रामहिँ जानहि राम रहु भजु रामहिँ तजु काम ।  
 तुलसी राम-अजान नर किमि पावहि पर-धाम ॥१३३॥  
 तुलसी-पति-रति अंक सम सकल साधना सून ।  
 अंक रहित कछु हाथ नहिँ अंक सहित दस गून ॥१३४॥  
 तुलसी अपने राम कहँ भजन करहु निरसंक ।  
 आदि अंत निरवाहिवो जैसे नव को अंक ॥१३५॥  
 दुगुने तिगुने चौगुने पंच षष्ठ औ सात ।  
 आठहु ते' पुनि नव गुने नव को नव रहि जात ॥१३६॥  
 नव को नव रहि जात हैं तुलसी किए विचार ।  
 रमेउ राम इमि जगत में नहीं द्वैत बिसतार ॥१३७॥  
 तुलसी राम सनेह करु लागु सकल उपचार ।  
 जैसे घटत न अंक नव नव को लिखत पहार ॥१३८॥



अंक अगुन आखर सगुन सामुक्ति उभय प्रकार ।  
 खोए राखे आपु भल तुलसी चारु विचार ॥१३६॥  
 जेहि बिधि ते' सब राम-मय समुझहु सुमति-निधान ।  
 याते' सकल बिरोध तजु भजु सब समुझ न आन ॥१४०॥  
 राम कामना-हीन पुनि सकल - काम - दातार ।  
 याही ते' परमात्मा अव्यय अमल उदार ॥१४१॥  
 जो कछु चाहत सो करत हरत भरत गत भेद ।  
 काहु सुखद काहु दुखद जानत हैं बुध वेद ॥१४२॥  
 संत-कमल मधु-मास कर तुलसी वरन विचार ।  
 जग-सरवर तर भरन-कर जानहु जल-दातार ॥१४३॥  
 एक सृष्टि में जाहि विधि प्रगट तीन कर भेद ।  
 सात्त्विक राजस तामसहिँ जानत हैं बुध वेद ॥१४४॥  
 सा विधि रघुवर नाम महँ वरतमान गुन तीन ।  
 चंद्र भानु अपि अनल विधि हरि हर कहहिँ प्रवीन ॥१४५॥  
 अनल रकार अकार रवि जानु मकार मयंक ।  
 हरी अकार रकार विधि मः महेस निरसंक ॥१४६॥  
 बन अग्यान कहँ दहन कर अनल प्रचंड रकार ।  
 हरि अकार हर मोह तम तुलसी कहहि विचार ॥१४७॥  
 त्रिविध-ताप-हर ससि सतर जानहु मरम मकार ।  
 विधि हरि हर गुन तीन को तुलसी नाम आधार ॥१४८॥  
 भानु कृसानु मयंक को कारण रघुवर नाम ।  
 विधि हरि संभु सिरोमनी प्रनत सदा सुख-धाम ॥१४९॥  
 अगुन अनूपम सगुन निधि तुलसी जानत राम ।  
 करता सकल जगत्र को भरता सब मन-काम ॥१५०॥  
 छत्र मुकुट सब विधि अचल तुलसी जुगल हलंत ।  
 सकल बरन सिर पर रहत महिमा अमल अनंत ॥१५१॥

रामानुज सदगुन विमल स्याम राम-अनुहार ।  
 भरता भरत सो जगत को तुलसी लसत अकार ॥१५२॥  
 राजत राजस ता अनुज वरद धरनि-धर धीर ।  
 विधि बिहरत अति आसु-कर तुलसी जन-गन-पीर ॥१५३॥  
 हरन करन संकट सतर समर-धीर वलधाम ।  
 मः महेश अरि-दमन वर लखन-अनुज अरि काम ॥१५४॥  
 राम सदा सम सील-धर सुख-सागर पर-धाम ।  
 अज कारन अद्वैत नित समतर पद अभिराम ॥१५५॥  
 होनहार सह जान सब बिभव बीच नहिँ होत ।  
 गगन गिरह करिवो कबै तुलसी पढ़त कपोत ॥१५६॥  
 तुलसी होत सिखै नहीँ तन गुन-दूखन-धाम ।  
 भखन सिखिन कौने कहेउ प्रगट विलोकहु काम ॥१५७॥  
 गिरत अंड संपुट अरुन जलज पच्छ अनयास ।  
 अलल सुअन उपदेस केहि जात सो उलटि अकास ॥१५८॥  
 विविध चित्र जल-पात्र बिच अधिक नून सम सूर ।  
 कब कौनै तुलसी रचेउ केहि विधि पच्छ मयूर ॥१५९॥  
 काक-सुता गृह ना करै यह अचरज बड़ बाय ।  
 तुलसी केहि उपदेस सुनि जननि-पिता घर जाय ॥१६०॥  
 सुपथ कुपथ लीन्हे जनित स्व-स्वभाव अनुसार ।  
 तुलसी सिखवत नाहिँ सिंसु मूषक हनत मजार ॥१६१॥  
 तुलसी जानत है सकल चेतन मिलत अचेत ।  
 कीर जात उड़ि तिय निकट बिनहिँ पढ़े रति देत ॥१६२॥  
 होनहार सब आप ते' वृथा सोच करि जौन ।  
 कंज सृंग तुलसी मृगन कहो उमेठत कौन ॥१६३॥  
 सुख चाहत सुख में बसत है सुख-रूप विसाल ।  
 संतत जा बिधि मान-सर कबहुँ न तजत मराल ॥१६४॥

नीति प्रीति जस अजस गति सब कहँ सुभ पहिचानि ।  
 बस्ती हस्ती हस्तिनी देति न पति रति दानि ॥१६५॥  
 तुलसी अपने दुखद ते' को कहु रहत षजान ।  
 कीस कुंत-अंकुर बनहि उपजत करत निदान ॥१६६॥  
 जथा धरनि सब बीज-मय नखत अकास निवास ।  
 तथा राम सब-धरम-मय जानत तुलसीदास ॥१६७॥  
 पुहसी पानी पावकहु पौनहु माहं समाइ ।  
 ता कहँ जानत राम अपि बिनु गुरु किमि लखि जाइ ॥१६८॥  
 अगुन ब्रह्म तुलसी सोई सगुन बिलोकत सोइ ।  
 दुख सुख नाना भाँति जो तेहि बिरोध ते' होइ ॥१६९॥  
 सूर जथा रन जीति कै पलटि आव चलि गेह ।  
 तिमि गति जानहु राम की तुलसी संत सनेह ॥१७०॥  
 परमात्म-पद राम पुनि दीजे संत सुजान ।  
 जे जग महँ विचरहिँ धरे देह विगत अभिमान ॥१७१॥  
 चौथी संख्या जीव की सदा रहत रत काम ।  
 ब्रह्म न संत न राम रत निसि बासर बसि बाम ॥१७२॥  
 सुख पाए हरखत हँसत स्वीभक्त लहे बिखाद ।  
 प्रगटत दुरत निरय परत केवल रत विख स्वाद ॥१७३॥  
 नाना विधि की कल्पना नाना विधि को सोग ।  
 सूखम अठ अखथूल तन कबहुँ तजत नहिँ रोग ॥१७४॥  
 जैसे कुष्ठो की दसा गलित रहत दोड देह ।  
 बिंदुहु की गति तैसई अंतरहु गति एह ॥१७५॥  
 त्रिधा देह गति एक विधि कबहुँ ना गति आन ।  
 विविध कष्ट पावहिँ सदा निरखहिँ संत सुजान ॥१७६॥  
 रामहिँ जानै संत वर संतहिँ राम प्रमान ।  
 संतहिँ केवल राम प्रभु रामहि संत न आन ॥१७७॥

तारें संत दयाल बर देत राम धन रीति ।  
 तुलसी यह जिय जानि कै करिय विहठि अति प्रीति ॥१७८॥  
 तुलसी संत सु - अंग - तरु फूलि फरहि पर - हेतु ।  
 ये इत तें पाहन हनै वे उत तें फल देतु ॥१७९॥  
 सुख दुख दोनों एक सम संतन के मन माहि ।  
 मेरु उदधि गत मुकुर जिमि भार भीजबो नाहि ॥१८०॥  
 तुलसी राम सुजान को राम जनानै सोइ ।  
 रामहि जानै राम - जन आन कबहुँ नहि होइ ॥१८१॥  
 सो गुरु राम सुजान सम नहीं बिखमता - लेस ।  
 ताकी कृपा-कटाच्छ तें रहे न कठिन कलेस । ॥१८२॥  
 गुरु कह तब समुझै सुनै निज करतव कर भोग ।  
 कह तब गुरु करतव करै मिटै सकल भव-सोग ॥१८३॥  
 सरनागत तेहि राम के जिन्ह दिय धी सिय-रूप ।  
 जा पदनि-धर उदय भए नासे भ्रम - तम - कूप ॥१८४॥  
 जा पद पाए पाइए आनंद पद उपदेस ।  
 संसय रोग नसाय सब पावै पुनि न कलेस ॥१८५॥  
 मेधा सीता सम समुझि गुरु बिबेक सम राम ।  
 तुलसी सिय सम सो सदा भएउ विगत भग वाम ॥१८६॥  
 आदि मध्य अवसान गत तुलसी एक समान ।  
 तेई संत सख्य सुभ जे अनित्य गति आन ॥१८७॥  
 एई सुद्ध उपासना परा भगति की रीति ।  
 तुलसी एहि भग पग धरे रहै रामपद प्रीति ॥१८८॥  
 जहँ तें जो आएउ सो है जाइ जहां है सोइ ।  
 तुलसी विन गुरु-देव के किमि जानै कहु कोइ ॥१८९॥  
 अपगत खे सोई अवनि सो पुनि प्रगट पताल ।  
 कहां जनम कहँ मरन अपि समुझहि सुमति रसाल ॥१९०॥

संग दोख तें भेद अस मधु मदिरा मकरंद ।  
 गुरु - गम ते' देखहि प्रगट पूरन परमानंद ॥१८१॥  
 डाबर सागर कूप गत भेद दिखाई देत ।  
 है एकै दूजो नहीं द्वैत आन के हेत ॥१८२॥  
 गुन गत नाना भांति तेहि प्रगटत कालहि पाइ ।  
 जानि जाइ गुरु-ग्यान ते' बिनु जाने भरमाइ ॥१८३॥  
 तुलसी तरु फूलत फरत जेहि बिधि कालहि पाय ।  
 तैसेही गुन - दोख - गत प्रगटत समय सुभाय ॥१८४॥  
 दोखहुँ गुन की रीति यह जानु अनल गति देखि ।  
 तुलसी जानत सो सदा जेहि बिबेक सु-बिसेखि ॥१८५॥  
 गुरु ते' आवत ग्यान डर नासत सकल बिकार ।  
 जथा निलय-गत दीप तें मितत सकल अंधियार ॥१८६॥  
 जद्यपि अवनि अनेक सुख तोय तामरस ताल ।  
 संतत तुलसी मानसर तदपि न तजत मराल ॥१८७॥  
 तुलसी तोरत तीर-तरु मानस हंस बिडार ।  
 बिगत नलिन अति मलिन जल सुरसरिहू बढ़ियार ॥१८८॥  
 जो जल जीवन जगत को परसत पावन जैन ।  
 तुलसी सो नीचे ढरत ताहि निवारत कौन ॥१८९॥  
 जो करता है करम को सो भोगत नहि आन ।  
 वोअनहार लुनिहै सोई देनी लहइ निदान ॥२००॥  
 रावन रावन को हनेउ दोख राम को नाहि ।  
 निज हित अनहित देखु किन तुलसी आणुहि माहि ॥२०१॥  
 सुमिरु राम भजु राम-पद देखु राम सुनु राम ।  
 तुलसी समुझहु राम कहँ अह-निसि यह तुय काम ॥२०२॥  
 रज अप अनल अनिल नभ जड़ जानत सब कोइ ।  
 यह चैतन्य सदा समुझु कारज-रत दुख होइ ॥२०३॥

निज कृत बिलसत सो सदा बिनु पाए उपदेस ।  
 गुरु-पद पाइ सुमग धरै तुलसी हरइ कलेस ॥२०४॥  
 सलिल सुकर सोनित समुझ मल अरु असथि समेत ।  
 बाल कुमार जुवा जरा है सो समुझ करु चेत ॥२०५॥  
 ऐसहि गति अवसान की तुलसी जानत हेतु ।  
 तातै यह गति जानि जिय अबिरल हरि चित चेतु ॥२०६॥  
 जानै राम सरूप जब तब पावै पद संत ।  
 जनम मरन पद तें रहित सुखमा अमल अनंत ॥२०७॥  
 दुख-दायक जाने भले सुख-दायक भजु राम ।  
 अब हमको संसार को सब विधि पूरन काम ॥२०८॥  
 आपुहि मद को पान करि आपुहि होत अचेत ।  
 तुलसी विविध प्रकार को दुख उत्पति एहि हेत ॥२०९॥  
 जासों करसि बिरोध हठि कहु तुलसी को आन ।  
 सो तैं सब नहिँ आन तब नाहक होसि मलान ॥२१०॥  
 चाहसि सुख जेहि मारि कै सो तो मारि न जाय ।  
 कौन लाभ बिख ते' बदलि तैं तुलसी बिख खाय ॥२११॥  
 कोह द्रोह अथ मूल है जानत को कहु नाहिँ ।  
 दया धरम-कारन समुझि को सुख पावत नाहिँ ॥२१२॥  
 बनो घनायो है सदा समुझ रहित हो मूल ।  
 अरुन बरन केहि काम को बिना बास को फूल ॥२१३॥

### तृतीय सर्ग

जनक-सुता दस-जान-सुत उरग-ईस अ-म जौर ।  
 तुलसिदास दस पद परसि भव सागर गौ पौर ॥२१४॥

तुलसी तेरो राग-धर तात मातु गुरु देव ।  
 ता तजि तोहि न उचित अब रुचित आन पद-सेव ॥२१५॥  
 तरक - बिसेख - निखेध - पति - उर-मानस सुपुनीत ।  
 बसत मराल ल-रहित करि तेहि भजु पलटि विनीत ॥२१६॥  
 सुकलाऽऽदिहिँ कल देहु एक अंत-सहित सुख-धाम ।  
 दै कमला कल मध्य को अंत सकल सुख-धाम ॥२१७॥  
 बीज धनंजय रवि सहित तुलसी तथा मयंक ।  
 प्रगट तहां नहिँ तम तमी सम चित रहत असंक ॥२१८॥  
 रंजन कानन कोकनद वंस विमल अवतंस ।  
 गंजन पुरहित-अरि सदल जग-हित मानस-हंस ॥२१९॥  
 जग ते' रहु छत्तोस है राम-चरन छव तीन ।  
 तुलसी देखु बिचारि हिय है यह मतो प्रबोन ॥२२०॥  
 कं दिग दून नछत्र हनि गुनी अनुज तेहि कीन ।  
 जेहि हरि कर मनि मान हनि तुलसी तेहि पद लीन ॥२२१॥  
 सिला-साप-मोचन चरन हरन-सकल जंजाल ।  
 भरन करन सुख सिद्धि-तर तुलसी परम कृपाल ॥२२२॥  
 मरन-बिपति-हर धुर-धरम धरा-धरन बल-धाम ।  
 सरन तासु तुलसी चहत वरन सकल अभिराम ॥२२३॥  
 बिहंग बीच रैयत तृतीय पति पति तुलसी तोर ।  
 तासु बिमुख सुख अति बिखम सपनेहु होसि न भोर ॥२२४॥  
 दुतिय कोल राजिव प्रथम बाहन निहचय माहिँ ।  
 आदि एक कल दै भजहु बेद-विदित गुन जाहि ॥२२५॥  
 बसत जहाँ राघव-जलज तेहि मिति गो जेहि संग ।  
 भज तुलसी तेहि अरि-सु-पद करि उरु प्रेम अभंग ॥२२६॥  
 भजहु तरनि-अरि-आदि कहँ तुलसी आत्मज अंत ।  
 पंचानन लहि पदुम मथि गहे विमल मन संत ॥२२७॥

बनिता सैल-सुतास की तासु जनम को ठाम ।  
 तेहि भजु तुलसीदास हित प्रनत सकल-सुख-धाम ॥२२८॥  
 भजु पतंग-सुत-आदि कहँ मृत्युंजय-अरि अंत ।  
 तुलसी पुष्कर - जग्य - कर चरन - पांसु इच्छंत ॥२२९॥  
 उलटे तासी तासु पति सौ हजार मन सत्य ।  
 एक-सून-रथ तनय कहँ भजसि न मन समरत्य ॥२३०॥  
 दुतिय वृत्तिय हर कासनहि तेहि भजु तुलसीदास ।  
 का कासन आसन किए सास न लहै उपास ॥२३१॥  
 आदि दुतिय अवतार कहँ भजु तुलसी नृप-अंत ।  
 कमल प्रथम अरु मध्य सह बेद-विदित मत संत ॥२३२॥  
 जेहि न गनेउ कछु मानसहु सुर-पति-अरि-भव-त्रास ।  
 जेहि पद सुचिता-अवधि-भव तेहि भजु तुलसीदास ॥२३३॥  
 नैन करन-गुन-धरन वर ता वर धरन बिचार ।  
 चरन सतर तुलसी चहसि उबरन सरन-अधार ॥२३४॥  
 भजु हरि आदिहिं वाटिका भरि ता राजिव-अंत ।  
 करता पद बिस्वास भव-सरिता तरसि तुरंत ॥२३५॥  
 जड़-मोहन-वरनादि कहँ सह चंचल चित चेत ।  
 भजु तुलसी संसार-अहि नहिं गहि करत अचेत ॥२३६॥  
 अमर-अधिप-बारन-वरन दूसर अंत अगार ।  
 तुलसी इखु-सह राग-धर तारन तरन आधार ॥२३७॥  
 जौ उरबिज चाहसि भटिति तौ करि घटित उपाय ।  
 सुमनस-अरि-अरि-वर-चरन-सेवन सरल सुभाय ॥२३८॥  
 दुतिय पयोधर परम-धन बाग-अंत-जुत सोय ।  
 भजु तुलसी संसार-हित या ते अधिक न कोय ॥२३९॥  
 पति पयोधि पावन पवन तुलसी करहु बिचार ।  
 आदि-दुतिय अरु अंत-जुत ता मत तव निस्तार ॥२४०॥



हंस कपट रस सहित गुन अंत आदि प्रथमंत ।  
 भजु तुलसी तजि वाम गति जेहि पद रत भगवंत ॥२४१॥  
 कना समुक्ति क बरन हरहु अंत-आदि-जुत सार ।  
 स्त्री-कर तम-हर बरन बर तुलसी सरन उवार ॥२४२॥  
 अंक दसा रस-आदि जुत पांडु-सूनु सह अंत ।  
 जानि सुअन सेवक सतर करिहैं कृपा तुरंत ॥२४३॥  
 भटिति सखाहि विचारि हिय आदि बरन हरि एक ।  
 अंत प्रथम स्वर दे भजहु जा उर तत्त्व-विवेक ॥२४४॥  
 आदि चंद्र चंचल सहित भजु तुलसी तजु काम ।  
 अघ-गंजन रंजन सुजन भव-भंजन सुख-धाम ॥२४५॥  
 विगत देह-तनुजा-सु-पति पद रति सहित सनेम ।  
 जौ अति मति चाहसि सु-गति तौ तुलसी करु प्रेम ॥२४६॥  
 करता सुचि-सुर-सर-सुता ससि सारंग महि जान ।  
 आदि-अंत सह प्रथम-जुत तुलसी समुक्तु न आन ॥२४७॥  
 गिरिजा-पति कल आदि इक नक्खत हरि जुध जान ।  
 आदि-अंत भजु अंत पुनि तुलसी सुचि मन मान ॥२४८॥  
 रितु-पति पद पुन पड़िक युत प्रथम आदि पुनि लेहु ।  
 अंत हरन पद दुतिय महैं मध्य बरन सह नेहु ॥२४९॥  
 बाहन सेख सु-मधुप रव भरत-नगर जुत जान ।  
 हरि भरि सहित विपरज करि आदि मध्य अवसान ॥२५०॥  
 तुलसी उडुगन को बरन बनज - सहित दोष अंत ।  
 ता कहैं भजु संसय - समन रहित एक कल अंत ॥२५१॥  
 बारिज बारिज बरन बर बरनत तुलसीदास ।  
 आदि आदि भजु आदि पद पाए परम प्रकास ॥२५२॥  
 भजु तुलसी कुलिसांत कहैं सह अगार तजि काम ।  
 सुख-सागर नागर ललित बली अली पर - धाम ॥२५३॥

चंचल सहितऽरु चंचला अंत अंत - जुत जान ।  
 संत-साख-संमत समुक्ति तुलसी कर परमान ॥२५४॥  
 आदि वसंत इकार दै आसय तासु विचार ।  
 तुलसी तासु सरन परे कासु न भएउ उवार ॥२५५॥  
 धरा धरा-धर धरन-जुग सरन हरन भव-भार ।  
 करन सतरतर परम पद तुलसी धरमाधार ॥२५६॥  
 बरन धनंजय - सूनु - पति चरन - सरन - रति नाहिँ ।  
 तुलसी जग-बंधक विद्वठि किए विधाता ताहि ॥२५७॥  
 तुलसी रजनी पुरनिमा हार-सहित लखि लेहु ।  
 आदि अंत-जुत जानि कर तासों सरल सनेहु ॥२५८॥  
 भानु गोत्र तमि तासु पति कारन अति हित जाहि ।  
 ग्यान - सु - गति - जुत सुख सदन तुलसी मानत ताहि ॥२५९॥  
 भजु तुलसी ओघादि कहँ सहित तत्त्व-जुत-अंत ।  
 भव आयुर-जय जासु बल मन चल अचल करंत ॥२६०॥  
 देत कहा नृप काज पर लेत कहा इत राज ।  
 अंत - आदि - जत-सहित भजु जौ चाहसि सुभ काज ॥२६१॥  
 चंद्र-रमनि भजु गुन-सहित समुक्ति अंत अनुराग ।  
 तुलसी जौ यह वनि परै तौ तव पूरन भाग ॥२६२॥  
 जिनके हरि वाहन नहीं दधि-सुत-सुत जेहि नाहिँ ।  
 तुलसी ते नर तुच्छ हैं बिना समीर उड़ाहिँ ॥२६३॥  
 रवि चंचल अरु ब्रह्म - द्रव बीच सु - वास विचारि ।  
 तुलसिदास आसन करे अवनि-सुता उर धारि ॥२६४॥  
 वन वनिता दृगकोपमा जुत कर सहित विवेक ।  
 अंत आदि तुलसी भजहु परिहरि मन कर टेक ॥२६५॥  
 उरबी अंतहु आदि - जुत कुल - सोभा - कमलादि ।  
 करि विपरज ऐसेहि भजहु तुलसी समन बिखादि ॥२६६॥

तौ तोहि कँ सब कोउ सुखद करहिँ कहा तव पाँच ।  
 हरब तृतीय बारिज - बरन तज बलीन सुनु साँच ॥२६७॥  
 तजहु सदा सुभ-आसु-अरि भजु सुमनस-अरि-काल ।  
 सजु मत ईस अवंतिका तुलसी विमल विसाल ॥२६८॥  
 एत-वंस वर बरन जुग सेतु जगत सब जान ।  
 चेत सहित सुमिरन करत हरत सकल अघ - खान ॥२६९॥  
 मैत्री बरन यकार को सह स्वर आदि विचारि ।  
 पंच प-बरगहि जुत सहित तुलसी ताहि सँभारि ॥२७०॥  
 हल वम-मध्य समान जुत या ते' अधिक न आन ।  
 तुलसी ताहि बिसारि सठ भरमत फिरत भुलान ॥२७१॥  
 कौन जाति सीता सती को दुखदा कटु वाम ।  
 को कहिए ससिकर दुखद सुखदायक को राम ॥२७२॥  
 को संकर गुरु-बाग वर सिव-हर को अभिमान ।  
 करता को अज जगत को भरता को हरि जान ॥२७३॥  
 स्वर स्नेयस राजीव - गुन करु तेहि दृढ़ पहिचान ।  
 पंच प-बरगहि जुत सहित तुलसी ता हित मान ॥२७४॥  
 होत हरख का पाय धन निपति तजे का धाम ।  
 दुखदा कुमति कुनारितर अति सुखदायक राम ॥२७५॥  
 बीर कवन सह मदन-सर धीर कवन रत राम ।  
 कवन कूर हरि-पद-बिमुख को कामी बस वाम ॥२७६॥  
 कारन को कं जीव को खं गुन कह सब कोय ।  
 जानत को तुलसी कहत सो पुनि आन न होय ॥२७७॥  
 जासु आस सर देव को अरु आसन हरि-वाम ।  
 सकल दुखद तुलसी तजहु मध्य तासु सुख-धाम ॥२७८॥  
 तुलसी बरन बिकल्प ते' औ चप - तृतीय-समेत ।  
 अन - समुझे जड़ सरिस नर समुझे साधु सचेत ॥२७९॥

चंचल तिय भजु प्रथम हरि जो चाहसि परधाम ।  
 तुलसी कहहिँ सुजन सुनहु यही सयानप-काम ॥२८०॥  
 कुलिस-धरम-जुग-अंत-जुत भजु तुलसी तजु काम ।  
 असुभ-हरन संसय-समन सकल-कला-गुन-धाम ॥२८१॥  
 स्त्री-फर को, रघुनाथ, हर, अनय कहत सब कोय ।  
 सुखदा को जानति सुमति तुलसी समता दोय ॥२८२॥  
 बैर-मूल-हर हित-वचन, प्रेम मूल उपकार ।  
 दो'हा' सरल सनेह - मय तुलसी किए विचार ॥२८३॥  
 प्राग कवन, गुरु-लघु, जगत तुलसी अवर न आन ।  
 श्रेष्ठ कवन हरि-भगति सम को लघु लोभ समान ॥२८४॥  
 बरन दुतिय नासक निरय तुलसी अंत रसाल ।  
 भजहु सकल स्त्री-फर सदन जन-पालक खल-साल ॥२८५॥  
 चप स्नेयस-स्वर-सहित गुनि यम-जुत दुखद न आन ।  
 तुलसी हल-जुत ते कुसल अंतिकार सह जान ॥२८६॥  
 तुलसी यम गुन बोध बिनु कहूँ किमि मिटइ कलेस ।  
 ताते' सतगुरु सरन गहि जाते' पद - उपदेस ॥२८७॥  
 भगन जगन का सो करसि राम-अपर नहिँ कोय ।  
 तुलसी पति-पहिचान बिनु कोउ तुल कबहुँ न होय ॥२८८॥  
 तुलसी तगन बिहीन नर सदा नगन के बीच ।  
 तिनहिँ यगन कैसे लहइ परे सगन के फीच ॥२८९॥  
 इंद्र-रवनि सुर देव-रिषि रुकुमनि-पति सुभ जान ।  
 भोजन दुहिता काक अलि आनँद असुभ समान ॥२९०॥  
 को हित संत अहित कुटिल नासक को हित लोभ ।  
 पोखक तोखक दुखद अरि सोखक तुलसी छोभ ॥२९१॥  
 सदा नगन-पद-प्रीति जेहि जानु नगन-सम ताहि ।  
 जगन ताहि जय जुत रहत तुलसी संसय नाहिँ ॥२९२॥

भगन भगति करु भरम तजि तगन सगन विधि होय ।  
 सगन - सुभाव तजो समुझि भजे न दूखन कोय ॥२८३॥  
 सुंगज-असन स जुक्त जू बिहरत तीर सुधीर ।  
 जग्य-पाप-मय-त्रान-पद राजत स्त्री-रघुबीर ॥२८४॥  
 वान-जुक्त जू तट निकट बिहरत राम सुजान ।  
 तुलसी कर-कमलन ललित लसत सरासन वान ॥२८५॥  
 मृदु मेवक सिर-रुह रुचिर सीस तिलक भ्रू वंक ।  
 धनु सर गहि जनु तड़ित जुत तुलसी लसत मयंक ॥२८६॥  
 'स कमल बिच बरन जुग तुलसी अति प्रिय जाहि ।  
 तीन लोक महुँ जो भजै लहै तासु फल ताहि ॥२८७॥  
 आदि म है अंतहु म है मध्य र है तेहि जान ।  
 अनजाने जड़ जीव सब समुझे संत सुजान ॥२८८॥  
 आदि द है मध्ये र है अंत द है सो बात ।  
 राम बिमुख के होत है राम भजन तें जात ॥२८९॥  
 ललित चरन कटि कर ललित लसत ललित बनमाल ।  
 ललित चिबुक द्विज अधर सह लोचन ललित बिसाल ॥३००॥  
 भरन हरन अव्यय अमल सहित बिकल्प विचार ।  
 कह तुलसी मति अनुहरत दोहा अरथ अपार ॥३०१॥  
 विसिष्टाद्यलंकार महुँ संकेतादि सु-रीति ।  
 कहे बहुरि आगे कहब समुझब सु-मति विनीति ॥३०२॥  
 कोस अलंकृत संधि गति मैत्री बरन विचार ।  
 हरन भरन सु-बिभगति बल कविहि अरथ निरधार ॥३०३॥  
 देस काल करता करम बुधि विद्या गति हीन ।  
 ते सुर-तरु-तर दारिदो सुर-सरि-तीर मलीन ॥३०४॥  
 देस काल गति हीन जे करता करम न ग्यान ।  
 तेऽपि अरथ-मग पग धरहि तुलसी खान समान ॥३०५॥

अधिकारी बस ओसरी भलो जानिबो मंद ।  
 सुधा-सदन बसु बारहें चौथे चौथिउ चंद ॥३०६॥  
 नर बर नभ-सर बर सलिल बन-ज विनय विग्यान ।  
 सु-मति सुक्तिका सारदा स्वाती कहहिं सुजान ॥३०७॥  
 सम दम समता दीनता दान दयादिक रीत ।  
 दोख दुरत हर दरद दर चर बर विमल विनीत ॥३०८॥  
 धरम धुरीन सु-धीर-धर धारन बर पर-पीर ।  
 धरा धरा-धर सम अचल वचन न बिचल सु-धीर ॥३०९॥  
 चौतिस के प्रस्तार में अरथ भेद परमान ।  
 करहु सुजन तुलसी कहत या विधि तें पहचान ॥३१०॥  
 बेद बिखम क बरन सुतर सतर राम की रीति ।  
 तुलसी भरत न भरि हरत भूलि हरहु जनि प्राति ॥३११॥  
 बन तें गुन कहि जानिए ताते दिग दिग तीन ।  
 तुलसी यह जिय समुझि करि जग-जित संत प्रवीन ॥३१२॥  
 चंद्र अनल नहिं है कहूं भूँठो बिना बिबेक ।  
 तुलसी ते नर समुझिहैं जिनहिं ग्यान रस एक ॥३१३॥  
 सतसैया तुलसी सतर तम हरि पर-पद देत ।  
 तुरित अविद्या जन दुरित बर तुल सम करि लेत ॥३१४॥

### चतुर्थ सर्ग

चौदह चारि अठारहो पढ़े सुने का होइ ।  
 तुलसी अपने राम कहैं जौं लगि लखै न कोइ ॥३१५॥  
 तन सुखाइ पंजर करै धरै रैन दिन ध्यान ।  
 तुलसी मिटै न बासना बिना बिचारे ग्यान ॥३१६॥

हँसि उतारि हिय तैं दर्ई तुम जु तिहिँ दिनी लाल ।  
 राखति प्राण कपूर ब्यों वहै चुहुटिनी-माल ॥ ६० ॥  
 कोऊ कोरि क संग्रहौ कोऊ लाख हजार ।  
 मो संपति जदुपति सदा बिपति-बिदारनहार ॥ ६१ ॥  
 द्वैज सुधादीधिति-कला लखि लखि दीठि लगाइ ।  
 मनौ अकास-अगस्तिया एकै कली लखाइ ॥ ६२ ॥  
 गदराने तन गोरटो ऐपन - आड़ लिलार ।  
 हूठ्यौ है इठलाइ दग करै गँवारि सुवार ॥ ६३ ॥  
 तंत्री-नाद कवित्त-रस सरस-राग रति-रंग ।  
 अनबूढ़े बूढ़े तरे जे बूढ़े सब अंग ॥ ६४ ॥  
 सहज सचिक्कन स्याम-रुचि सुचि सुगंध सुकुमार ।  
 गनतु न मनु पशु अपशु लखि बिथरे सुथरे बार ॥ ६५ ॥  
 सुदुति दुराई दुरति नहिँ प्रगट करति रति-रूप ।  
 छुटैं पीक औरै उठी लाली ओठ अनूप ॥ ६६ ॥  
 बेई गड़ि गाड़ै परीं उपठ्यौ हारु हियै न ।  
 आन्यौ मोरि मतंगु मनु मारि गुरेरु मैत ॥ ६७ ॥  
 नैक न भुरसी बिरह-भर नेह-लता कुम्हिलाति ।  
 नित नित होति हरी हरी खरी भालरति जाति ॥ ६८ ॥  
 हेरि हिँडोरै गगन तैं परी परी सी दूटि ।  
 धरी धाइ तिय बीच ही करी खरी रस छूटि ॥ ६९ ॥  
 नैक हँसैहीं बानि तजि लख्यौ परतु मुहुँ नीठि ।  
 चौका - चमकनि - चौध मै परति चौधि सी डीठि ॥ १०० ॥  
 प्रगट भए द्विजराज-कुल सुबस बसे ब्रज आइ ।  
 मेरे हरौ कलेस सब केसव केसवराइ ॥ १०१ ॥  
 केसरि कै सरि क्यौं सकै चंपकु कितकु अनूप ।  
 गात-रूप लखि जातु दुरि जातरूप कौ रूप ॥ १०२ ॥

मकराकृति गोपाल कै सोहत कुंडल कान ।  
 धरगौ मनौ हिय-धर समरु ड्यौढ़ी लसत निसान ॥१०३॥  
 खौरि-पनिच भृकुटी-धनुषु बधिकु समरु तजि कानि ।  
 हनतु तरुन-मृग तिलक-सर सुरक-भाल भरि तानि ॥१०४॥  
 नीकौ लसतु लिलार पर टीकौ जरितु जराइ ।  
 छबिहि बड़ावतु रबि मनौ ससि-मंडल में आइ ॥१०५॥  
 लसतु सेत सारी ढ्यौ तरल तरगौना कान ।  
 परगौ मनौ सुरसरि-सलिल रबि-प्रतिबिंबु बिहान ॥१०६॥  
 हम हारीं कै कै हहा पाइनु पारगौ प्यौरु ।  
 लेहु कहा अजहूं किए तेह-तरेरगौ त्यौरु ॥१०७॥  
 सतर भौंह रुखे बचन करति कठिनु मनु नीठि ।  
 कहा करौं है जाति हरि हेरि हँसौहो डीठि ॥१०८॥  
 वाहि लखैं लोइन लगै कौन जुवति की जोति ।  
 जाकैं तन की छांह-ढिग जोन्ह छांह सी होति ॥१०९॥  
 कहा कहौं वाकी दसा, हरि प्राननु कै ईस ।  
 बिरह-ज्वाल जरिवो लखैं मरिबौ भई असीस ॥११०॥  
 जेती संपति कृपन कै तेती सूसति जोर ।  
 बढ़त जात ज्यौं ज्यौं उरज त्यों त्यों होत कठोर ॥१११॥  
 ज्यौं ज्यौं जोवन-जेठ दिन कुच मिति अति अधिकाति ।  
 त्यों त्यों छिन छिन कटि-छपा छीन परति नित जाति ॥११२॥  
 तेह-तरेरौ त्यौरु करि कत करियत दग लोल ।  
 लीक नहीं यह पीक की सुति-मनि-भलक कपोल ॥११३॥  
 नैक न जानी परति यौं परगौ बिरह तनु छासु ।  
 उठति दियैं लौं नादि हरि लियै तिहारौ नामु ॥११४॥  
 नभ-लाली चाली निसा चटकाली धुनि कीन ।  
 रति पाली आली अनत आए बनमाली न ॥११५॥



सोवत सपनै' स्याम-धनु हिलि मिलि हरत बियोगु ।  
 तव हीं टरि कितहूँ गई, नौदौ नौदनु जोगु ॥११६॥  
 संपति केस सुदेस नर नवत दुहुनि इक बानि ।  
 बिभव सतर कुच नीच नर नरम बिभव की हानि ॥११७॥  
 कहत सबै कवि कमल से मो मत नैन पखानु ।  
 नतरुक कत इन बिय लगत उपजतु विरह-कृसानु ॥११८॥  
 हरि हरि बरि बरि उठति है करि करि थकी उपाइ ।  
 बाकौ जुरु बलि बैद जौ तो रस जाइ तु जाइ ॥११९॥  
 यह विनसतु नगु राखि कै जगत बड़ौ जसु लेहु ।  
 जरी विषम जुर जाइयै आइ सुदरसनु देहु ॥१२०॥  
 या अनुरागी चित्त की गति समुझै नहिँ कोइ ।  
 ज्यौं ज्यौं बूढ़ै स्याम रँग त्यों त्यों उज्जलु होइ ॥१२१॥  
 बिय सौतिनु देखत दर्ई अपने हिय तै' लाल ।  
 फिरति सवनु में डहडही उहँ मरगजी माल ॥१२२॥  
 छला छनीले लाल कौ नवल नेह लहि नारि ।  
 चूँवति चाहति लाइ उर पहिरति धरति उत्तारि ॥१२३॥  
 नित संसौ हंसौ बचतु मनौ सु इहिँ अनुमानु ।  
 विरह-अग्नि-लपटनु सकतु भपटि न मीचु-सचानु ॥१२४॥  
 थाकी जतन अनेक करि नैक न छाड़ति गैल ।  
 करी खरी दुवरी सु लागि तेरी चाह-चुरैल ॥१२५॥  
 लाज गहौ वेकाज कत घेरि रहे घर जाहि ।  
 गोरसु चाहत फिरत है गोरसु चाहत नाहि ॥१२६॥  
 घाम घरीक निवारियै कलित ललित अलि-पुंज ।  
 जमुना-तीर तमाल - तरु मिलित मालती - कुंज ॥१२७॥  
 उन हरकी हँसि कै इतै इन सौपी मुसकाइ ।  
 नैन मिलै मन मिलि गए दोक मिलवत गाइ ॥१२८॥

परजौ जेरु बिपरीत रति रुपी सुरत-रन-धीर ।  
 करति कुलाहलु किंकिनी गह्यौ मौनु मंजीर ॥१२६॥  
 बिनती रति बिपरीत की करी परसि पिय पाइ ।  
 हँसि अनवोलैं हों दियौ ऊतरु दियौ बताइ ॥१२७॥  
 कैसें छोटे नरनु तैं सरत बड़नु के काम ।  
 मढ़गौ दमामौ जातु क्यों कहि चूहे कै चाम ॥१२८॥  
 सकत न तुव ताते वचन मो रस कौ रसु खोइ ।  
 खिन खिन औटे खीर लौं खरौ सवादिलु होइ ॥१२९॥  
 कहि लहि कौनु सकै दुरी सौनजाइ में जाइ ।  
 तन की सहज सुवास बन देती जौ न बताइ ॥१३०॥  
 चाले की बातें चलों सुनत सखिनु कै टोल ।  
 गोएँ हूँ लोइन हँसत बिहँसत जात कपोल ॥१३१॥  
 सनु सूक्यौ बीत्यौ बनौ ऊखौ लई उखारि ।  
 हरी हरी अरहरि अजौ धरि धरहरि जिय नारि ॥१३२॥  
 आए आपु भली करी मेदन मान-मरोर ।  
 दूरि करौ यह देखिहै छला छिगुनिया-छोर ॥१३३॥  
 मेरे ब्रूकत बात तू कत बहरावति बाल ।  
 जग जानी बिपरीत रति लखि विंदुली पिय-भाल ॥१३४॥  
 फिरि फिरि बिलखी हूँ लखति फिरि फिरि लेति उसासु ।  
 साईं सिर-कच-सेत लौं बीत्यौ चुनति कपासु ॥१३५॥  
 डगडु डगति सी चलि ठठुकि चितई चली निहारि ।  
 लिए जाति चितु चोरटी वहै गोरटी नारि ॥१३६॥  
 करी बिरह ऐसी तरु गैल न छाड़तु नीचु ।  
 दीनैं हूँ चसमा चखनु चाहै लहै न मीचु ॥१३७॥  
 जपमाला छापा तिलक सरै न एकौ कामु ।  
 मन-कांचै नाच बृथा सांचै चै रामु ॥१३८॥

जो वाके तन की दसा देख्यौ चाहत आपु ।  
 तौ बलि नैक बिलोकियै चलि अचकां चुपचापु ॥१४२॥  
 जटिल नीलमनि जगमगति सींक सुहाई नांक ।  
 मनौ अली चंपक-कली बसि रसु लेतु निसांक ॥१४३॥  
 फेरु कछुक करि पैरि तैं फिरि चितई मुलकाइ ।  
 आई जावनु लैन जिय नेहैं चली जमाइ ॥१४४॥  
 जदपि तेज रौहाल-बल पलकौ लगी न बार ।  
 तौ ग्वैंडौ घर कौ भयौ पैंडौ कोस हजार ॥१४५॥  
 पूस-मास सुनि सखिनु पैं साईं चलत सवार ।  
 गहि कर बीन प्रवीन तिय राग्यौ रागु मलार ॥१४६॥  
 बन तन कौ निकसत लसत हँसत हँसत इत आइ ।  
 दृग-खंजन गहि लै चल्यौ चितवनि-चैंपु लगाइ ॥१४७॥  
 मरनु भलौ बरु बिरह तैं यह निहचय करि जोइ ॥  
 मरन मिटै दुखु एक कौ बिरह दुहँ दुखु होइ ॥१४८॥  
 हरषि न बेली लखि ललनु निरखि अमिलु सँग साथु ।  
 आंखिनु हीं मैं हँसि धर्यौ सीस हियैं धरि हाथु ॥१४९॥  
 को जानै हूँहै कहा ब्रज उपजी अति आगि ।  
 मन लागै नैननु लगैं चलै न मग लागि लागि ॥१५०॥  
 घरु घरु डोलत दीन हूँ जनु जनु जाचतु जाइ ।  
 दियैं लोभ चसमा चखनु लघु पुनि बडौ लखाइ ॥१५१॥  
 लै चुभकी चलि जाति जित जित जल केलि अधोर ।  
 कीजत केसरि-नीर से तित तित के सरि नीर ॥१५२॥  
 छिरके नाह नबोढ़ दृग कर-पिचकी-जल-जोर ।  
 रोचन रँग लाली भई बिय तिय-लोचन-कोर ॥१५३॥  
 कहा लड़ैते दृग करे परे लाल बेहाल ।  
 कहूँ मुरली कहूँ पीत पटु कहूँ मुकुट बनमाल ॥१५४॥

राधा हरि हरि राधिका बनि आए संकेत ।  
 दंपति रति-विपरीत-सुख सहज सुरतहूं लेत ॥१५५॥  
 चलत पाइ निगुनी गुनी धनु मनि-मुत्तिय-माल ।  
 भेंट होत जयसाहि सौं भांगु चाहियतु भाल ॥१५६॥  
 जसु अपजसु देखत नहीं देखत सांवल गात ।  
 कहा करौं लालच - भरे चपल नैन चलि जात ॥१५७॥  
 नख सिख रूप भरे खरे तौ मांगत मुसकानि ।  
 तजत न लोचन लालची ए ललचौंहीं बानि ॥१५८॥  
 छुँ छिगुनी पहुँची गिलत अति दीनता दिखाइ ।  
 बलि बावन कौ व्यौतु सुनि को बलि तुम्हें पत्याइ ॥१५९॥  
 नैना नैक न मानहीं कितो कह्यो समुझाइ ।  
 तनु मनु हारैं हूं हँसैं तिन सौं कहा बसाइ ॥१६०॥  
 मोहन मूरति स्याम की अति अदभुत गति जोइ ।  
 बसतु सु-चित अंतर तऊ प्रतिबिंबितु जग होइ ॥१६१॥  
 लटक लटक लटकतु चलतु डटतु मुकुट की छांह ।  
 चटक भरयो नदु मिलि गयौ अटक भटक बट मांह ॥१६१॥  
 मलिन देह वेई बसन मलिन बिरह कै रूप ।  
 पिय-आगम औरै चढ़ो आनन ओप अनूप ॥१६३॥  
 रंगराती रातैं हियैं प्रियतम लिखी बनाइ ।  
 पाती काती बिरह की छाती रही लगाइ ॥१६४॥  
 लाल अलौकिक लरिकई लखि लखि सखी सिहांति ।  
 आज कार्हि मैं देखियतु उर उकसौंही भांति ॥१६५॥  
 बिलखी डभकौंहीं चखनु तिय लखि गवनु बराइ ।  
 पिय गहवरि आएँ गरैं राखी गरैं लगाइ ॥१६६॥  
 प्रतिबिंबित जयसाहि दुति दोपति दरपन-धाम ।  
 सबु जगु जीतन कौं करयो काय व्यूहु मनु काम ॥१६७॥

बाल कहा लालो भई लोइन-कोइनु मांह ।  
 लाल तुम्हारे दृगनु की परी दृगनु में छांह ॥१६८॥  
 तरुन कोकनद बरन बर भए अरुन निसि जागि ।  
 वाही कै अनुराग दृग रहे मनौ अनुरागि ॥१६९॥  
 तजतु अठान न दृठ परयो सठमति आठौ जाम ।  
 भयौ बामु वा बाम कौ रहै कामु बेकाम ॥१७०॥  
 आवत जात न जानियतु तेजहिं तजि सियरातु ।  
 घरहँ जँवाई लौं घट्यौ खरौ पूस दिन-मानु ॥१७१॥  
 चलत चलत लौं लै चलैं सब सुख संग लगाइ ।  
 ग्रीषम-बासर सिसिर-निसि प्यौ मो पास बसाइ ॥१७२॥  
 बेसरि - मोती - दुति - झलक परी ओठ पर आइ ।  
 चूनौ होइ न चतुर तिय क्यों पट पोछ्यौ जाइ ॥१७३॥  
 चितु बितु बचतु न हरत दृठि लालन-दृग वरजोर ।  
 सावधान के बटपरा ए जागत के चोर ॥१७४॥  
 बिकसित नवमल्ली - कुसुम निकसित परिमल पाइ ।  
 परसि पजारति बिरहि-हिय वरसि रहे की वाइ ॥१७५॥  
 गोप अथाइनु तैं उठे गोरज छाई गैल ।  
 चलि बलि अलि अभिसार की भली सँभौखैं सैल ॥१७६॥  
 पहुँचति डटि रन-सुभट लौं रोकि सकैं सब नाहि ।  
 लाखनु हूँ की भीर मैं आखि उहीं चलि जाहि ॥१७७॥  
 सरस सुमिल चित-तुरंग की करि करि अभित उठान ।  
 गोइ निबाहैं जीतियै खेलि प्रेम-चौगान ॥१७८॥  
 हँसि हँसि हेरति नवल तिय मद के मद उमदाति ।  
 बलकि बलकि बोलति बचन ललकि ललकि लपटाति ॥१७९॥  
 मिलि चंदन-बेंदी रही गोरैं मुँह न लखाइ ।  
 ज्यों ज्यों मद-लाली चढ़ै त्यों त्यों उधरति जाइ ॥१८०॥

मैं समुझ्यौ निरधार यह जगु कांचो कांच सौ ।  
 एकै रूपु अपार प्रतिबिंबित लखियतु जहां ॥१८१॥  
 जहां जहां ठाढ़ा लख्यौ स्यामु सुभग-सिरमौर ।  
 बिन हूं उन छिनु गहि रहतु दृगनु अजौ वह ठौर ॥१८२॥  
 रंगी सुरत-रंग पिय हियें लगी जगी सब राति ।  
 पैड़ पैड़ पर ठठुकि कै ऐंड़-भरी ऐंड़ाति ॥१८३॥  
 लालन लहि पाएँ दुरै चोरी सौंह करै न ।  
 सीस चढ़े पनिहा प्रगट कहैं पुकारै नैन ॥१८४॥  
 तुरत सुरत कैसैं दुरत मुरत नैन जुरि नीठि ।  
 डौंडो दै गुन रावरे कहति कनौड़ी डीठि ॥१८५॥  
 मरकत - भाजन - सलिल - गत इंदु-कला केँ बेख ।  
 भौन भगा मैं भलमलै स्यामगात - नख-रेख ॥१८६॥  
 बालमु वारै सौति केँ सुनि परनारि - विहार ।  
 भो रसु अनरसु रिस रली रीभ खीभ इक वार ॥१८७॥  
 दुरत न कुच बिच कंचुकी चुपरी सारी सेव ।  
 कवि-आंकनु के अरथ लौं प्रगटि दिखाई देत ॥१८८॥  
 भई जु छवि तन बसन मिलि बरनि सकैं सु न वैन ।  
 आंग-ओप आंगी दुरी आंगी आंग दुरै न ॥१८९॥  
 सोनजुही सी जगमगति अंग अंग जोवन - जोति ।  
 सुरंग कसूभी कंचुकी दुरंग देह-दुति होति ॥१९०॥  
 बड़े न हूजै गुननु बिनु विरद-बड़ाई पाइ ।  
 कहत धतूरे सौं कनकु गहनौ गढ़यौ न जाइ ॥१९१॥  
 कनकु कनक तैं सौगुनौ मादकता अधिकाइ ।  
 उहिं खाएं बैराइ इहिं पाएं हीं बैराइ ॥१९२॥  
 डीठिबरत बांधी अटनु चढ़ि धावत न डरात ।  
 इतहिं उतहिं चित दुहुनु के नट लौं आवत जात ॥१९३॥

भटकि चढ़ति उतरति अटा नैंक न थाकति देह ।  
 भई रहति नट कौ बटा अटकी नागर-नेह ॥१-६४॥  
 लोभ लगे हरि-रूप के करी सांठि जुगि जाइ ।  
 हौं इन बेची बीच हौं लोइन बड़ो बलाइ ॥१-६५॥  
 चिलक चिकनई चटक सौं लफति सटक लौं आइ ।  
 नारि सलोनी सांवरी नागिनि लौं डसि जाइ ॥१-६६॥  
 तो रस रांच्यौ आन बस कहौ कुटिल-मति कूर ।  
 जीभ निबौरी क्यौं लगै वौरी चाखि अँगूर ॥१-६७॥  
 जुरे दुहुनु के दृग भूमकि रुके न भानैं चीर ।  
 हलुकी फौज हरौल ज्यौं परै गोल पर भीर ॥१-६८॥  
 केसर केसरि-कुसुम के रहे अंग लपटाइ ।  
 लगे जानि नख अनखुली कत बोलति अनखाइ ॥१-६९॥  
 दृग मिहचत मृग-लोचनी भर्यौ उलटि भुज बाथ ।  
 जानि गई तिय नाथ के हाथ परस हौं छाथ ॥२००॥  
 तजि तीरथ हरि-राधिका-तन-दुति करि अनुराग ।  
 जिहिं ब्रज-केलि-निकुंज-मग पग पग होतु प्रयागु ॥२०१॥  
 खिन खिन मैं खटकति सु हिय खरी भीर मैं जात ।  
 कहि जु चली अनहीं चितै ओठनु हौं बिच बात ॥२०२॥  
 अजौं न आए सहज रँग बिरह-दूबरै गात ।  
 अब हौं कहा चलाइयति ललन चलन की बात ॥२०३॥  
 अपनैं कर गुहि आपु हठि हिय पहराई लाल ।  
 नौल सिरी औरै चढ़ो बैलसिरी की माल ॥२०४॥  
 नई लगनि कुल की सकुच विकल भई अकुलाइ ।  
 दुहूं ओर ऐंची फिरति फिरकी लौं दिनु जाइ ॥२०५॥  
 इत तैं उत उत तैं इतै छिनु न कहूं ठहराति ।  
 जक न परति चकरी भई फिरि आवति फिरि जाति ॥२०६॥

निसि अंधियारी नील पटु पहिरि चली पिय-गेह ।  
 कहाँ दुराई क्यों दुरै दीप-सिखा सी देह ॥२०७॥  
 रह्यौ ढीठु ढाढ़सु गहँ ससहरि गयौ न सूरु ।  
 मुरगौ न मनु मुरवानु चभि भौ चूरनु चपि चूरु ॥२०८॥  
 सोहत अंगुठा पाइ कै अनवटु जरगौ जराइ ।  
 जीत्यौ तरिवन-दुति सु ढरि परगौ तरनि मनु पाइ ॥२०९॥  
 जंघ जुगुल लोइन निरे करे मनौ बिधि मैन ।  
 केलि - तरुनु दुख दैन ए केलि तरुन - सुख-दैन ॥२१०॥  
 रही पकरि पाटी सु रिस भरे भौंह चितु नैन ।  
 लखि सपनैँ तिय आनरत जगतहु लगत हियैँ न ॥२११॥  
 किय हाइलु चित-चाइ लागि बजि पाइल तुव पाइ ।  
 पुनि सुनि सुनि मुँह-मधुर-धुनि क्यों न लालु ललचाइ ॥२१२॥  
 लीनैँ हूँ साहस सहसु कीनैँ जतन हजारु ।  
 लोइन लोइन - सिंधु तन पैरि न पावत पारु ॥२१३॥  
 पट की ढिग कत ढांपियति सोभित सुभग सुबेख ।  
 हृद-रद-छद छवि देति यह सद-रद-छद की रेख ॥२१४॥  
 नाह गरजि नाहर-गरज बोलु सुनायौ टेरि ।  
 फँसी फौज मैं बंदि-बिच हँसी सबनु तनु हेरि ॥२१५॥  
 बाल-बेलि सूखी सुखद इहिँ रुखी रुख-घाम ।  
 फेरि डहडही कीजियै सुरस सोंचि घनस्याम ॥२१६॥  
 औंधाई सीसी मुलखि बिरह - बरनि बिललात ।  
 बिच हीँ सूखि गुलाबु गौ छोटौ छुई न गात ॥२१७॥  
 तजी संक सकुचति न चित बोलत बाकु कुबाकु ।  
 दिन छिनदा छाकी रहति छुटतु न छिन छवि-छाकु ॥२१८॥  
 फिरि फिरि ब्रूभति कहि कहा कहाँ सावरे गात ।  
 कहा करत देखे कहाँ अली चली क्यों बात ॥२१९॥



नव नागरि-तन-मुलुकु लहि जोवन - आमिर - जौर ।  
 घटि बढि तैं बढि घटि रकम करीं और की और ॥२२०॥  
 कीजै चित सोई तरे जिहि पतितनु के साथ ।  
 मेरे गुन - औगुन - गननु गनौ न गोपीनाथ ॥२२१॥  
 मृगनैनी दृग की फरक उर - उछाह तन - फूल ।  
 विन हीं पिय-आगम उमगि पलटन लगी दुकूल ॥२२२॥  
 रहे बरोठे में मिलत पिब प्राननु के ईसु ।  
 आवत आवत की भई विधि की घरी घरी सु ॥२२३॥  
 रवि बंदै कर जोरि ए सुनत स्याम के बैन ।  
 भए हँसैहैं सबनु के अति अनखैहैं नैन ॥२२४॥  
 हीं हीं बैरी बिरह-बस कै बौरै सबु गाँ ।  
 कहा जानि ए कहत हैं ससिहि सीतकर नाँ ॥२२५॥  
 अनी बड़ो उमड़ो लखै असि बाहक भट भूप ।  
 मंगलु करि मान्यौ हिये भो मुँहु मंगलु रूप ॥२२६॥  
 सोवत जागत सुपन-बल रस रिस चैन कुचैन ।  
 सुरति स्यामधन की सु रति बिसरै हूँ बिसरै न ॥२२७॥  
 संगति सुमति न पावहीं परे कुमति कै धंध ।  
 राखौ मेलि कपूर में हाँग न होइ सुगंध ॥२२८॥  
 बड़े कहावत आप सौ गरुवे गोपीनाथ ।  
 तौ बदिहौं जौ राखिहौ हाथनु लखि मनु हाथ ॥२२९॥  
 कौड़ा आंसू-बूंद कसि सांकर बरुनी सजल ।  
 कीने वदन निमूंद दृग - मलिंग डारे रहत ॥२३०॥  
 उयौ सरद-राफा-ससी करति क्यौं न चित चेतु ।  
 मनौ मदन छितिपाल कौ छाहगीरु छवि देतु ॥२३१॥  
 ढरे ढार तेहीं ढरत दूजैं ढार ढरैं न ।  
 क्यौंहूँ आनन आन सौ नैना लागत नै न ॥२३२॥

सोवत लखि मन मानु धरि ढिग सोयौ प्यौ आइ ।  
 रही सुपन की मिलनि मिलि तिय हिय सौं लपटाइ ॥२३३॥  
 जोन्ह नहीं यह तमु बहै किए जु जगत निकेतु ।  
 होत उदै ससि के भयौ मानहु ससहरि सेतु ॥२३४॥  
 जात जात बितु होतु है ज्यौं जिय में संतोषु ।  
 होत होत जौ होइ तौ होइ घरी में मोषु ॥२३५॥  
 तन भूषन अंजन दृगनु पगनु महावर - रंग ।  
 नहिँ सोभा कौं साजियतु कहिबैं हों कौं अंग ॥२३६॥  
 पाइ तरुनि-कुच उच्च पदु चिरम ठग्यौ सबु गाउँ ।  
 छुटैं ठौर रहिहै वहै जु हो मोलु छबि नाउँ ॥२३७॥  
 नित प्रति एकत हों रहत बैस बरन मन एक ।  
 चहियत जुगल किशोर लखि लोचन जुगल अनेक ॥२३८॥  
 मन न धरति मेरौ क्यौ तूं आपनैं सयान ।  
 अहे परनि परि प्रेम की परहथ पारि न प्रान ॥२३९॥  
 नख-रेखा सोहैं नई अलसौहैं सब गात ।  
 सौहैं होत न नैन ए तुम सौहैं कत खात ॥२४०॥  
 हरि कीजति बिनती यहै तुम सौं वार हजार ।  
 जिहिँ तिहिँ भांति डर्यौ रह्यौ पर्यौ रह्यौ दरबार ॥२४१॥  
 भौंह उँचै आँचरु उलटि मौरि मोरि मुँह मोरि ।  
 नीठि नीठि भीतर गई दोठि दोठि सौं जोरि ॥२४२॥  
 रस की सी रुख ससिमुखी हँसिँ सि बोलत बैन ।  
 गूढ़ मानु मन क्यौ रहै भए बूढ़-रंग नैन ॥२४३॥  
 जिहिँ निदाघ-दुपहर रहै भई माघ की राति ।  
 तिहिँ उसीर की रावटो खरी आवटो जाति ॥२४४॥  
 रहो दहेंडो ढिग धरी भरी मथनिया बारि ।  
 फेरति करि उलटो रई नई बिलोवनहारि ॥२४५॥

देवर-फूल-हने जु सु सु उठे हरषिं अंग फूलि ।  
 हँसी करति औषधि सखिनु देह-ददोरनु भूलि ॥२४६॥  
 फूले फदकत लै फरी पल कटाच्छ करवार ।  
 करत बचावत बिय-नयन-पाइक घाइ हजार ॥२४७॥  
 पहुला-हारु छियँ लसै सन की बेदी भाल ।  
 राखति खेत खरे खरे खरे उरोजनु बाल ॥२४८॥  
 लई सौंह सी सुनन की तजि मुरली धुनि आन ।  
 किए रहति नित राति दिनु कानन लागे कान ॥२४९॥  
 तू मति मानै मुकतई कियँ कपट चित कोटि ।  
 जौ गुनही तौ राखियै आखिनु माँझ अगोटि ॥२५०॥  
 गिरि तैं ऊंचे रसिक-मन बूड़े जहाँ हजार ।  
 वहै सदा पसु नरनु कौ प्रेम-पयोधि पगारु ॥२५१॥  
 भावकु उभरौहों भयौ कछुकु परयो भरुआइ ।  
 सीप-हार कैं मिसि हियौ निसि दिन हेरत जाइ ॥२५२॥  
 गली अंधेरी सांकरी भौ भटभेरा आनि ।  
 परे पिछाने परसपर दोऊ परस पिछानि ॥२५३॥  
 कहि पठई जिय-भावती पिय आवन की बात ।  
 फूली आगन में फिरै अंग न अंग समात ॥२५४॥  
 जिन दिन देखे वे कुसुम गई सु बीति बहार ।  
 अब अलि रही गुलाब में अपत कँटोली डार ॥२५५॥  
 मैं बरजी कै बार तू इत कित लेति करौट ।  
 पँखुरी लगैं गुलाब की परिहै गात खरौट ॥२५६॥  
 नीचीयै नीची निपट दीठि कुही लौं दौरि ।  
 उठि ऊंचैं नीचौ द्यौ मनु कुलिंगु भूपि भौरि ॥२५७॥  
 सूर उदित हूँ मुदित मन मुखु सुखमा की ओर ।  
 चितै रहत चहुँ ओर तैं निहचल चखनु चकोर ॥२५८॥

स्वेद-सलिलु रोमांच-कुसु गहि दुलही अरु नाथ ।  
 दियौ हियौ सँग हाथ कै हथलैयें हीं हाथ ॥२५६॥  
 दच्छिन पिय हूँ वाम-भ्रस विसराई तिय आन ।  
 एकै बापरि कै विरह लागो बरष विहान ॥२६०॥  
 मोहूं दोजै मोषु ज्यों अनेक अधमनु दियौ ।  
 जौ बांधैं ही तोषु तौ बांधौ अपनै गुननु ॥२६१॥  
 चितु तरसतु मिलत न बनतु बसि परोस कै बास ।  
 छाती फाटो जाति सुनि टाटो-ओट उसास ॥२६२॥  
 जालरंध्र-भग अंगनु कौ कछु उजास सौ पाइ ।  
 पोछि दिये जगलौ रह्यौ डीछि भरोखें लाइ ॥२६३॥  
 परतिथ-दोषु पुरान सुनि लखि मुलकी सुख दानि ।  
 कसु करि राखी मिश्र हूं मुँह-आई मुसकानि ॥२६४॥  
 सहित सनेह सकोच सुख स्वेद कंप मुसकानि ।  
 प्रान पानि करि आपनै पान धरे मो पानि ॥२६५॥  
 सीरैं जतननु सिसिर रितु सहि विरहिनि-तन-तापु ।  
 वसिवे कौं ग्रीष्म दिननु परयो परोसिनि पापु ॥२६६॥  
 सोहतु संगु समान सौं यहै कहै सबु लोगु ।  
 पान-पीक ओठनु बनै काजर नैननु जोगु ॥२६७॥  
 तूं रहि हौं हीं सखि लखौं चढ़ि न अटा बलि घाल ।  
 सबहिनु विनु हीं ससि-उदै दीजतु अरघु अकाल ॥२६८॥  
 दियौ अरघु नीचैं चलौ संकटु भानैं जाइ ।  
 सुचिती हूँ औरो सबै ससिहिँ बिलोकैं आइ ॥२६९॥  
 ललित स्याम लीला ललन घड़ी चिबुक छवि दून ।  
 मधु छाक्यौ मधुकर पर्यौ मनौ गुलाब प्रसून ॥२७०॥  
 सबै सुहायई लगैं बसैं सुहायें ठाम ।  
 गोरैं मुँह बेंदी लसैं अरुन पीत सित स्याम ॥२७१॥

भए बटाऊ नेहु तजि वादि बकति वेकाज ।  
 अब अलि देत उराहनौ अति उपजति दर लाज ॥२७२॥  
 मानु करत बरजति न हैं उलटि दिवावति सौंह ।  
 करी रिसौहीं जाहिँगी सहज हँसौहीं भौंह ॥२७३॥  
 तिय तिथि तरुन किसोर बय पुन्यकाल-सम दोनु ।  
 काहूँ पुन्यनु पाइयतु वैस संधि संक्रोनु ॥२७४॥  
 गनती गनिबे तैं रहै छत हूँ अछत समान ।  
 अलि अब ए तिथि औम लौं परे रहौ तन प्रान ॥२७५॥  
 सबै हँसत करतार दै नागरता कै नावँ ।  
 गयौ गरबु गुन कौ सरबु गये गँवारै गावँ ॥२७६॥  
 जाति मरी बिछरी घरी जल सफरी की रीति ।  
 खिन खिन होति खरी खरी अरी जरी यह प्रीति ॥२७७॥  
 पिय - प्राननु की पाहरु करति जतन अति आपु ।  
 जाकी दुसह दसा पर्यौ सौतिनिहूँ संतापु ॥२७८॥  
 अहे कहै न कहा कहाँ तोसौं नंदकिसोर ।  
 बड़बोली बलि होति कत बड़े दगनु कै जोर ॥२७९॥  
 दियौ जु पिय लखि चखनु मैं खेलत फाग - खियालु ।  
 बाढ़त हूँ अति पीर सु न काढ़त बनतु गुलालु ॥२८०॥  
 मैं तपाइ त्रयताप सौं राख्यौ हियौ हमासु ।  
 मति कबहुँक आएँ यहाँ पुलकि पसीजै स्यासु ॥२८१॥  
 बहकि बड़ाई आपनी कत रांचत मति-भूल ।  
 बिनु मधु मधुकर कै हियँ गढै न गुड़हर-फूल ॥२८२॥  
 आड़े दै आले बसन जाड़े हूँ की राति ।  
 साहसु ककै सनेह-बस सखी सबै ढिग जाति ॥२८३॥  
 सब अँग करि राखी सुघर नाइक नेह सिखाइ ।  
 रसजुत लेति अनंत गति पुतरी पातुर-राइ ॥२८४॥

सुनत पथिक मुँह माह-निसि चलति लुवै उहि गाम ।  
 बिनु बूमैं बिनु हौं कहैं जियति बिचारी बाम ॥२८५॥  
 अनत बसे निसि की रिसनु उर बरि रही बिसेखि ।  
 तऊ लाज आई भुक्त खरे लजैहैं देखि ॥२८६॥  
 सुरँगु महाबरु सौति-पग निरखि रही अनखाइ ।  
 पिय-अँगुरिनु लाली लखैं खरी उठी लागि लाइ ॥२८७॥  
 मानहु मुँह-दिखरावनी दुलहिहि करि अनुरागु ।  
 सासु सदन मनु ललन हूं सौतिनु दियौ सुहागु ॥२८८॥  
 कत सकुचत निघरक फिरौ रतिथौ खोरि तुम्हैं न ।  
 कहा करौ जा जाइ ए लगै लगौहैं नैन ॥२८९॥  
 आपु दियौ मनु फेरि लै पलटैं दीनी पीठि ।  
 कौन चाल यह रावरी लाल लुकावत डीठि ॥२९०॥  
 गोपिन संग निसि सरद की रमत रसिक रस-रास ।  
 लहाछेह अति गतिनु की सबनु लखे सब-पास ॥२९१॥  
 स्याम - सुरति करि राधिका तकति तरनिजा-तीरु ।  
 अँसुवनु करति तरौंस कौ खिनकु खरौहैं नीरु ॥२९२॥  
 गोपिनु कैँ अँसुवनु भरी सदा असोस अपार ।  
 डगर डगर नै हूँ रही बगर बगर कैँ बार ॥२९३॥  
 दुचितै चित हलति न चलति हँसति न भुक्तति बिचारि ।  
 लखत चित्र पिड लखि चितै रही चित्र लौं नारि ॥२९४॥  
 कन दैवौ सौँप्यौ ससुर बहू शुरहथी जानि ।  
 रूप - रहचटै लागि लग्यौ मांगन सबु जगु आनि ॥२९५॥  
 निरखि नबोढ़ा नारि तन छुटत लरिकई लेस ।  
 भौ प्यारौ प्रीतमु तियनु मनहु चलत परदेस ॥२९६॥  
 प्रान प्रिया हिय में बसै नखरेखा - ससि भाल ।  
 भलौ दिखायौ आइ यह हरि - हर - रूप रसाल ॥२९७॥

तिय निय हिय जु लगी चलत पिय-नख-रेख-खरौंट ।  
 सूखन देत न सरसई खोटां खोटां खत - खौंट ॥२८८॥  
 सघन कुंज घन घन-तिमिरु अधिक अंधेरी राति ।  
 तऊ न दुरिहै स्याम वह दीप सिखा सी जाति ॥२८९॥  
 स्वारथु सुकृतु न श्रमु बृथा देखि बिहंग विचारि ।  
 बाज पराएँ पानि परि तूं पच्छीनु न मारि ॥३००॥  
 सीस - मुकट कटि-काछनी कर-मुरली उर-माल ।  
 इहिँ बानक मो मन सदा बसौ बिहारी लाल ॥३०१॥  
 भृकुटी - मटकनि पीतपट चटक लटकती चाल ।  
 चलचल चितवनि चोरि चितु लियौ बिहारी लाल ॥३०२॥  
 संगति - दोषु लगै सबनु कहे ति सांचे बैन ।  
 कुटिल बंक भ्रुव सँग भए कुटिल बंक गति नैन ॥३०३॥  
 जरी - कोर गोरी बदन बढी खरी छवि देखु ।  
 लसति मनौ बिजुरी किए सारद ससि परिवेखु ॥३०४॥  
 चितवनि भेरे भाइ की गोरी मुँह मुसकानि ।  
 लागति लटक अली-गरी चित खटकति नित आनि ॥३०५॥  
 इहिँ द्वैहीं मोती सुगथ तूं नथ गरबि निसांक ।  
 जिहिँ पहिरै जग-दृग असति लसति हँसति सी नांक ॥३०६॥  
 हरि-छवि-जल जब तैं परे तब तैं छिनु बिछुरै न ।  
 भरत ढरत बूझत तरत रहत घरी लौ नैन ॥३०७॥  
 मार - सुमार - करी डरी मरी मरीहिँ न मारि ।  
 सोंचि गुलाब घरी घरी अरी बरीहिँ न बारि ॥३०८॥  
 क्यों हूँ सहबात न लगै थाके भेद - उपाइ ।  
 हठ - दृढ़ गढ़ - गढ़वै सु चलि लीजै सुरंग लगाइ ॥३०९॥  
 तो ही को छुटि मानु गौ देखत हीं ब्रजराज ।  
 रही धरिक लौं मान सी मान करे की लाज ॥३१०॥

न ए बिससियहि लखि नए दुरजन दुसह-सुभाइ ।  
 आटैं परि प्राननु हरत काटैं लौं लगि पाइ ॥३११॥  
 सखि सोहति गोपाल कै उर गुंजनु की माल ।  
 बाहिर लसति मनौ पिए दावानल की ज्वाल ॥३१२॥  
 गहिली गरबु न कीजियै समै-सुहागहिं पाइ ।  
 जिय की जीवनि जेठ सो माह न छांह सुहाइ ॥३१३॥  
 हँसि हँसाइ उर लाइ उठि कहि न रुखौहैं बैन ।  
 जकित थकित है तकि रहे तकत तिलौंछे नैन ॥३१४॥  
 तीज-परव सौतिनु सजे भूषन बसन सरीर ।  
 सबै मरगजे-मुँह करीं इहाँ मरगजैं चीर ॥३१५॥  
 गढ़-रचना बरुनी अलक चितवनि भौह कमान ।  
 आघु बँकाई धौं चढ़ै तरुनि तुरंगम तान ॥३१६॥  
 इत आवति चलि जाति उत चली छसातक हाथ ।  
 चढ़ो हिंडोरैं सैं रहै लगी उसासनु साथ ॥३१७॥  
 डर न तरै नौद न परै हरै न काल-विपाकु ।  
 छिनकु छाकि उछकै न फिरि खरौ विषमु छवि-छाकु ॥३१८॥  
 रमन कह्यौ हठि रमन कौं रति विपरीत बिलास ।  
 चितई करि लोचन सतर सजल सरोस सहास ॥३१९॥  
 ऐंचति सी चितवनि चितै भई ओट अलसाइ ।  
 फिरि उभकनि कौं मृगनयनि दृगनि लगनिया लाइ ॥३२०॥  
 नर की अरु नल-नीर की गति एकै करि जोइ ।  
 जेतौ नीचौ हूँ चलै तेतौ अंचौ होइ ॥३२१॥  
 भूषन-भारु सँभारिहै क्यौं इहिं तन सुकुमार ।  
 सूधे पाँय न धर परै सोभा हौं कै भार ॥३२२॥  
 मुँह मिठासु दृग चीकने भौहैं सरल सुभाइ ।  
 तऊ खरैं आदर खरौ खिन खिन हियौ सकाइ ॥३२३॥



जदपि नाहिँ नाहीं नहीं बदन लगी जक जाति ।  
 तदपि भौंह - हांसी - भरिनु हांसीयै ठहराति ॥३२४॥  
 छुटन न पैयतु छिनकु बसि नेह-नगर यह चाल ।  
 मारयौ फिरि फिरि मारियै खूनी फिरै खुस्याल ॥३२५॥  
 चुनरी स्याम सतार नम मुँह ससि की उनहारि ।  
 नेह दबावतु नोंद लौं निरखि निसा सी नारि ॥३२६॥  
 कहत सबै बेंदी दियैं आंकु दसगुनौ होतु ।  
 तिय-लिलार बेंदी दियैं अगनितु बढ़तु उदेतु ॥३२७॥  
 तर भरसी ऊपर गरी कज्जल-जल छिरकाइ ।  
 पिय पाती बिनहीं लिखी वांची विरह-बलाइ ॥३२८॥  
 विरह सुकाई देह नेहु कियौ अति डहडहौ ।  
 जैसैं बरसैं मेह जरै जवासी जौ जमै ॥३२९॥  
 देखी सो न जु ही फिरति सोनजुही सैं अंग ।  
 दुति-लपटनु पट सेत हूँ करति बनौटी रंग ॥३३०॥  
 बढ़त बढ़त संपति-सलिलु मन-सरोजु बढ़ि जाइ ।  
 घटत घटत सु न फिरि घटै बरु समूल कुम्हिलाइ ॥३३१॥  
 ह्याँ न चलै बलि रावरी चतुराई की चाल ।  
 सनख हिथैं खिन खिन नटत अनख बढ़ावत लाल ॥३३२॥  
 डीठि न परतु समान-दुति कनकु कनक सैं गात ।  
 भूषन कर करकस लगत परसि पिछाने जात ॥३३३॥  
 करतु मलिन आछी छबिहिँ हरतु ज सहजु बिकासु ।  
 अंगरागु अंगनु लगै ज्यौं आरसी उसासु ॥३३४॥  
 पहिरि न भूषन कनक के कहि आवत इहिँ हेत ।  
 हरपन के से मोरचे देह दिखाई देत ॥३३५॥  
 जदपि चवाइनु चीकनी चलति चहुँ दिसि सैन ।  
 तऊ न छाड़त दुहुनु के हूँसी रसीले नैन ॥३३६॥

अनरस हूँ रसु पाइयतु रसिक रसीली पास ।  
 जैसे सांठे की कठिन गांठ्यौ भरी मिठासु ॥३३७॥  
 गोरी छिगुनी नखु अरुनु छला स्यामु छवि देइ ।  
 लहत मुकति रति पलकु यह नैन त्रिबेनी सेइ ॥३३८॥  
 उर मानिक की उरबसी डटत घटतु दृग-दागु ।  
 छलकतु बाहिर भरि मनौ तिय-हिय कौ अनुरागु ॥३३९॥  
 सहज सेत पँचतोरिया पहिरत अति छवि होति ।  
 जलचादर के दीप लौं जगमगाति तन-जोति ॥३४०॥  
 कोटि जतन कोऊ करै परै न प्रकृतिहिं बीचु ।  
 नल-बल जलु ऊँचै चढ़ै अंत नीच को नीचु ॥३४१॥  
 लगत सुभग सीतल किरन निसि-सुख दिन अवगाहि ।  
 माह ससी-भ्रम सूर-त्यौं रहति चकोरी चाहि ॥३४२॥  
 तपन-तेज तपु-ताप तपि अतुल तुलाई माह ।  
 सिसिर-सीतु क्योंहुँ न कटै बिनु लपटै तिय नाह ॥३४३॥  
 रहि न सकी सब जगत में सिसिर-सीत के त्रास ।  
 गरम भाजि गढ़वै भई तिय-कुच अचल मवास ॥३४४॥  
 भूठे जानि न संग्रहे मन मुँह निकसे बैन ।  
 याही तै मानहु किए वातनु कौं विधि नैन ॥३४५॥  
 सुघर-सौति-बस पिउ सुनत दुलहिनि दुगुन हुलास ।  
 लखी सखी तन दीठि करि सगरब सलज सहास ॥३४६॥  
 लिखन बैठि जाकी सबी गहि गहि गरब गरूर ।  
 भए न कते जगत के चतुर चितेरे कूर ॥३४७॥  
 दुनहाई सब टोल में रही जु सौति कहाइ ।  
 सु तैं ऐंचि प्यौ आपु त्यौं करी अदोखिल आइ ॥३४८॥  
 दृगनु लगत बेधत हियहिं बिकल करत अँग आन ।  
 ए तेरे सब तैं बिषम ईछन-तीछन बान ॥३४९॥

पीठि दियै हों नैक मुरि कर घूंघट-पट्टु टारि ।  
 भरि गुलाल की मूठि सौं गई मूठि सी मारि ॥३५०॥  
 गुनी गुनी सबकैं कहैं निगुनी गुनी न होतु ।  
 सुन्यौ कहूं तरु अरक तैं अरक समानु उदोतु ॥३५१॥  
 छुटत मुठिन सँग हों छुटी लोक-लाज कुल-चाल ।  
 लगे दुहुनु इक बेर ही चल चित नैन गुलाल ॥३५२॥  
 ज्यों ज्यों पटु भटकति हठति हँसति नचावति नैन ।  
 त्यों त्यों निपट उदारहूं फगुवा देत बनै न ॥३५३॥  
 ज्यों ज्यों पावक लपट सी तिय हिय सौं लपटाति ।  
 त्यों त्यों छुही गुलाब सैं छतिया अति सियराति ॥३५४॥  
 भाल-लालवेंदी - छप छुटे बार छबि ऐत ।  
 गह्यौ राहु अति आहु करि मनु ससि सूर समेत ॥३५५॥  
 तिय कित कमनैती पढ़ो बिनु जिहि भौंह-कमान ।  
 चलचित - बेभैं चुकति नहिं वंक बिलोकनि-वान ॥३५६॥  
 दुसह दुराज प्रजानु कौं क्यों न बढ़ै दुख-दंढु ।  
 अधिक अंधेरो जग करत मिलि मावस रवि चंदु ॥३५७॥  
 ललन-चलनु सुनि पलनु में अंसुवा भलके आइ ।  
 भई लखाइ न सखिनु सौं झूठैं हों जमुहाइ ॥३५८॥  
 कंचन-तन-धन-वरन वर रह्यो रंगु मिलि रंग ।  
 जानी जाति सुबास हों केसरि लाई अंग ॥३५९॥  
 खरैं अदब इठलाहटी उर उपजावति त्रासु ।  
 दुसह संक बिस कौ करै जैसे सोंठि-मिठासु ॥३६०॥  
 तौ लगु या मन-सदन में हरि आवैं किहिं वाट ।  
 बिकट जटे जौ लगु निपट खुटैं न कपट-कपाट ॥३६१॥  
 है कपूर मनिमय रही मिलि तन-दुति मुकतालि ।  
 छिन छिन खरी बिचच्छिनौ लखति छाइ तिनु आलि ॥३६२॥

दृग उरभक्त दूदत कुटुम जुरत चतुर-चित प्रीति ।  
 परति गांठि दुरजन हियँ दई नई यह रीति ॥३६३॥  
 नहिँ नचाइ चितवति दृगनु नहिँ बोलति मुसकाइ ।  
 ज्यों ज्यों रूखी रुख करति त्यों त्यों चितु चिकनाइ ॥३६४॥  
 वैसीयै जानी परति भगा ऊजरे माहँ ।  
 मृगनैनी लपटत जु यह बेनी उपटो बाहँ ॥३६५॥  
 प्यासे दुपहर जेठ के फिरे सबै जलु सोधि ।  
 मरुधर पाइ मतीरु हौं मारु कहत पयोधि ॥३६६॥  
 बिषम वृषादित की वृषा जिए मतीरनु सोधि ।  
 अमित अपार अगाध जलु मारौ मूढ़ पयोधि ॥३६७॥  
 निपट लजीली नवल तिय बहकि बारुनी सेइ ।  
 त्यों त्यों अति मीठी लगति ज्यों ज्यों ढीठ्यौ देइ ॥३६८॥  
 सरस कुसुम मँडरातु अलि न भुकि भूपति लपटातु ।  
 दरसत अति सुकुमारु तनु परसत मन न पत्यातु ॥३६९॥  
 निरदय नेहु नयौ निरखि भयौ जगतु भय भोतु ।  
 यह न कहूँ अव लौं सुनी मरि मारियै जु मीतु ॥३७०॥  
 भजन कह्यौ तातैं भज्यौ भज्यौ न एकौ बार ।  
 दूरि भजन जातैं कह्यौ सो तैं भज्यौ गँवार ॥३७१॥  
 नैन लगै तिहिँ लगनि जु न छुटैं छुटैं हूँ प्रान ।  
 काम न आवत एक हूँ तेरे सैक सयान ॥३७२॥  
 उड़ति गुड़ी लखि ललन की अँगना अँगना माहँ ।  
 बैरी लौं दैरी फिरति छुवति छबोली छाहँ ॥३७३॥  
 ऊँचै चितै सराहियतु गिरह कबूतरु लेतु ।  
 भलकित दृग मुलकित बदनु तनु पुलकित किहिँ हेतु ॥३७४॥  
 लागत कुदिल कटाच्छ-सर क्यों न होहिँ बेहाल ।  
 कढ़त जि हियहिँ दुसाल करि तऊ रहत नटसाल ॥३७५॥

जनमु जलधि पानिपु विमल भौ जग आधु अपारु ।  
 रहै गुनी है गर परगौ भलैं न मुकता हारु ॥३७६॥  
 गहै न नेकौ गुन गरबु हँसौ सबै संसारु ।  
 कुच उच पद लालच रहै गरैं परैं हूँ हारि ॥३७७॥  
 तज्यौ आंच अब बिरह की रह्यो प्रेम-रस भीजि ।  
 नैननु कै मग जलु बहै हियौ पसीजि पसीजि ॥३७८॥  
 छला परोसिन हाथ तैं छलु करि लियौ पिछानि ।  
 पियहिं दिखायौ लखि बिलखि रिस-सूचक मुसकानि ॥३७९॥  
 हठि-हितु करि प्रीतम-लियौ कियौ जु सौति सिंगारु ।  
 अपनै कर मोतिनु गुह्यो भयो हरा हर-हारु ॥३८०॥  
 बसै बुराई जासु तन ताही कौ सनमानु ।  
 भलौ भलौ कहि छोड़ियै खोटैं ग्रह जपु दानु ॥३८१॥  
 वै ठाढ़े उमड़ाहु उत जल न बुझै बड़वागि ।  
 जाही सौ लाग्यौ हियौ ताही कै हिय लागि ॥३८२॥  
 ढोठि परोसिनि ईठि है कहे जु गहे सयानु ।  
 सबै सँदेसे कहि कह्यौ मुसकाहट मैं मानु ॥३८३॥  
 छिनकु चलति ठठुकति छिनकु भुज प्रीतम-गल डारि ।  
 चढ़ी अटा देखति घटा बिज्जु-छटा सी नारि ॥३८४॥  
 धनि यह द्वैज जहां लख्यौ तज्यौ दगनु दुख-दंदु ।  
 तुम भागनु पूरब उयौ अटो अपूरबु चंदु ॥३८५॥  
 लरिका लेवे कै मिसनु लंगरु मो ढिग आइ ।  
 गयौ अनाचक आंगुरी छाती छैलु छुवाइ ॥३८६॥  
 ढोठ्यौ दै बोलति हँसति पोढ़-बिलास अपोढ़ ।  
 त्यों त्यों चलत न पिय-नयन छकए छकी नबोढ़ ॥३८७॥  
 रनित भृंग-घंटावली भरित दान मधु-नोरु ।  
 मंद मंद आवतु चल्यौ कुंजरु कुंज-समीरु ॥३८८॥

रहो रुकी क्यौं हूं सु चलि आधिक राति पधारि ।  
 हरति तापु सब घौस कौ डर लगि यारि बयारि ॥३८८॥  
 चुवति स्वेद मकरंद-कन तरु-तरु-तर बिरमाइ ।  
 आवतु दच्छिन देस तैं थक्यौ बटोही बाइ ॥३८९॥  
 पतवारी माला पकरि और न कछू उपाउ ।  
 तरि संसार-पयोधि कौं हरि-नावैं करि नाउ ॥३९०॥  
 लपटी पुहुप-परांग-पट सनी स्वेद मकरंद ।  
 आवति नारि नवोढ़ लौं सुखद बायु गति मंद ॥३९१॥  
 ललन सलोने अरु रहे अति सनेह सौं पागि ।  
 तनक कचाई देत दुख सूरन लौं मुँह लागि ॥३९२॥  
 न करु न डर सबु जगु कहतु कत बिनु काज लजात ।  
 सौं हैं कीजै नैन जौ सांची सौं हैं खात ॥३९३॥  
 रहि हैं चंचल प्रान ए कहि कौन की अगोट ।  
 ललन चलन की चित धरी कल न पलनु की ओट ॥३९४॥  
 जौ चाहत चटक न घटै मैलौ होइ न मित्त ।  
 रज राजसु न छुवाइ तौ नेह-चोकनौं चित्त ॥३९५॥  
 कोरि जतन कीजै तऊ नागर-नेहु दुरै न ।  
 कहैं देत चितु चीकनौ नई रुखाई नैन ॥३९६॥  
 लाल तुम्हारे रूप की कहौ रीति यह कौन ।  
 जासौं लागत पलकु दग लागत पलक पलौ न ॥३९७॥  
 कालबूत दूती बिना जुरै न और उपाइ ।  
 फिरि ताकैं टारैं बनै पाकैं प्रेम-लदाइ ॥३९८॥  
 रख्यौ ऐंचि अंतु न लहै अवधि-दुसासनु बीरु ।  
 आली बाढ़तु बिरहु ज्यौं पंचाली कौ चोरु ॥४००॥  
 यह बरिया नहिँ और की तूं करिया वह सोधि ।  
 पाहन-नाव चढ़ाइ जिहिँ कीने पार पयोधि ॥४०१॥

पावक-भर तैं मेह-भर दाहक दुसह बिसेखि ।  
 दहै देह वाकैं परस याहि दगनु हीं देखि ॥४०२॥  
 चलित ललित श्रम-स्वेदकन कलित अरुन मुख तैं न ।  
 बन - बिहार थाकी तरुनि खरे थकाए नैन ॥४०३॥  
 कुढंगु कोपु तजि रँग-रली करति जुबति जग जोइ ।  
 पावस गूढ़ न बात यह बूढ़नु हूँ रँगु होइ ॥४०४॥  
 न जक धरत हरि हिय धरैं नाजुक कमला बाल ।  
 भजत भार-भय-भीत है धनु चंदनु बनमाल ॥४०५॥  
 नासा मोरि नचाइ जे करी कका की सौंह ।  
 काटे सी कसकैं ति हिय गढ़ी कंटोली भौंह ॥४०६॥  
 क्यों बसियै क्यों निबहियै नीति नेह-पुर नाहि ।  
 लगालगी लोइन करें नाहक मन बँधि जाहि ॥४०७॥  
 ललन-चलनु सुनि चुप रही बोली आपु न ईठि ।  
 राख्यौ गहि गाढ़ें गरैं मनौ गलगली डोठि ॥४०८॥  
 अपनी गरजनु बोलियतु कहा निहोरौ तोहिं ।  
 तू प्यारौ मो जीय कौं मो ब्यौ प्यारौ मोहिं ॥४०९॥  
 रह्यौ चकितु चहुँघा चितै चितु मेरौ मति भूलि ।  
 सूर उर्यै आए रही दगनु साँझ सी फूलि ॥४१०॥  
 अति अगाधु अति औथरौ नदी कूपु सरु बाइ ।  
 सो ताकौ सागरु जहाँ जाकी प्यास बुझाइ ॥४११॥  
 कपट सतर भौहैं करीं मुख अनखौहैं बैन ।  
 सहज हसौहैं जानि कै सौहैं करति न नैन ॥४१२॥  
 मानहु विधि तन-अच्छ छवि स्वच्छ राखिबै काज ।  
 दग - पग - पोंछन कौं करे भूषन पायंदाज ॥४१३॥  
 बिरह-बिथा-जल-परस-बिन बसियतु मो-मन-ताल ।  
 कछु जानत जल-थंम-विधि दुर्जोधन लौं लाल ॥४१४॥

रुख रुखी मिस-रोष मुख कहति रुखाँहैं वैन ।  
 रुखे कैसेँ होत ए नेह चीकने नैन ॥४१५॥  
 पति-रितु-औगुन-गुन बढ़तु मानु माह कौ सीतु ।  
 जातु कठिन है अति मृदौ रवनी-मनु नवनीतु ॥४१६॥  
 त्यों त्यों प्यासेई रहत ज्यों ज्यों पियत अघाइ ।  
 सगुन सलोने रूप की जु न चख-वृषा युभाइ ॥४१७॥  
 अरुन - धरन तरुनी - चरन - अँगुरी अति सुकुमार ।  
 चुवत सुरँगु रँगु सी मनौ चपि बिछियतु कैँ भार ॥४१८॥  
 मोर-मुकुट की चंद्रिकनु यों राजत नंदनंद ।  
 मनु ससिसेखर की अकस किय सेखर सतचंद ॥४१९॥  
 अधर धरत हरि कैँ परत ओठ डीठि पट जोति ।  
 हरित बांस की बांसुरी इंद्रधनुष - रँग होति ॥४२०॥  
 तौ अनेक औगुन-भरिहिँ चाहै याहि बलाइ ।  
 जौ पति संपति हूँ विना जदुपति राखे जाइ ॥४२१॥  
 प्रीतम दृग मिहचत प्रिया पानि-परस-सुख पाइ ।  
 जानि पिछानि अजान लौँ नैकु न होति जनाइ ॥४२२॥  
 देखौं जागत वैसियै साँकर लगी कपाट ।  
 कित है आवत जात भजि को जानै किहिँ बाट ॥४२३॥  
 करु उठाइ घूँघटु करत उभरत पद-गुभरौट ।  
 सुख-मोटै लूटौं ललन लखि ललना की लौट ॥४२४॥  
 करौ कुवत जगु कुटिलता तजौं न दीनदयाल ।  
 दुखी होहुँगे सरल हिय बसत त्रिभंगी लाल ॥४२५॥  
 निज करनी सकुचेहिँ कत सकुचावत इहिँ चाल ।  
 मोहूँ से नित-विमुख-त्यों सनमुख रहि गोपाल ॥४२६॥  
 मोहिँ तुम्हें बाढ़ी बहस को जीतै जदुराज ।  
 अपनैँ अपनैँ बिरद की दुहूँ निवाहन लाज ॥४२७॥



दूरि भजत प्रभु पीठि दै गुन बिस्तारन काल ।  
 प्रगटत निर्गुन निकट रहि चंग-रंग भूपाल ॥४२८॥  
 कहै यहै सुति सुभित्यौ यहै सयाने लोग ।  
 तीन दबावत निसकहीं पातक राजा रोग ॥४२९॥  
 जो सिर धरि महिमा मही लहियति राजा राइ ।  
 प्रगटत जड़ता अपनियै सु मुकटु पहिरत पाइ ॥४३०॥  
 को कहि सकै बढेनु सौं लखै वढीयौ भूल ।  
 दीने दर्ई गुलाब की इन डारनु वे फूल ॥४३१॥  
 समै समै सुंदर सबै रूपु कुरूपु न कोइ ।  
 मन की रुचि जेती जितै तित तेती रुचि होइ ॥४३२॥  
 या भव - पारावार कौं उलँघि पार को जाइ ।  
 तिय - छबि - छाया ग्राहिनी ग्रहै बीचहीं आइ ॥४३३॥  
 दिन दस आदर पाइकै करि लै आपु बखानु ।  
 जौ लगि काग सराधपखु तौ लगि तौ सनमानु ॥४३४॥  
 भरतु प्यास पिंजरा-परगै सुआ समै कैं फेर ।  
 आदर दै दै बोलियतु बाइसु बलि की बेरं ॥४३५॥  
 वेई कर न्यौरनि वहै न्यौरौ कौन बिचार ।  
 जिनहीं उरभगौ मो हियौ तिनहीं सुरभे बार ॥४३६॥  
 इहीं आस अटक्यौ रहतु अलि गुलाब कैं मूल ।  
 ह्वै फेरि बसंत अतु इन डारनु वे फूल ॥४३७॥  
 वे न इहां नागर बढी जिन आदर तो आब ।  
 फूल्यो अनफूल्यो भयौ गवई गाव गुलाब ॥४३८॥  
 चल्यो जाइ ह्यां को करै हाथिनु कौ न्यापार ।  
 नहि जानतु इहि पुर बसैं धोबी ओइ कुँभार ॥४३९॥  
 खरी लसति गोरेँ गरैं धँसति पान की पीक ।  
 मनौ गुलीबंद-लाल की लाल लाल दुति-लीक ॥४४०॥

पाइल पाइ लगी रहै लगौ अमौलिक लाल ।  
 भोडर हूं की भासिहै बेंदी भामिनि-भाल ॥४४१॥  
 कुटिल अलक छुटि परत मुख बढ़िगौ इतौ उदेतु ।  
 वंक वकारी देत ज्यों दामु रुपैया होतु ॥४४२॥  
 रहि न सक्यौ कसु करि रहौ बस करि लीनौ मार ।  
 भेदि दुसार कियौ हियौ तन - दुति भेदै सार ॥४४३॥  
 खल-बढ़ई बलु करि थके कटै न कुबत-कुठार ।  
 आलबाल उर भालरी खरी प्रेम - तरु - डार ॥४४४॥  
 स्यों बिजुरी मनु मेह आनि इहां विरहा धरे ।  
 आठौ जाम अछेह हग जु बरत बरसत रहत ॥४४५॥  
 कत बेकाज चलाइयति चतुराई की चाल ।  
 कहे देति यह रावरे सब गुन निरगुन माल ॥४४६॥  
 उनकौ हितु उनहीं बनै कोऊ करौ अनेकु ।  
 फिरतु काक गोलकु भयौ दुहूं देह ज्यों एकु ॥४४७॥  
 बड़े बड़े छबि-छाक छकि छिगुनी-छोर छुटैं न ।  
 रहै सुरंग रंग रंगि उहीं नह-दी महदी नैन ॥४४८॥  
 बाढ़तु तो उर उरज - भरु भरि तरुनई - बिकास ।  
 बोझनु सौतिनु कैं हियैं आवति रुंधि उसास ॥४४९॥  
 अलि इन लोइन-सरनु कौ खरौ विषम संचार ।  
 लगैं लगाएँ एक से दुहूंनु करत सुमार ॥४५०॥  
 मूढ़ चढ़ाएँऊ रहै पर्यौ पोठि कच-भार ।  
 रहै गँ परि राखिबौ तऊ हियैं पर हार ॥४५१॥  
 करतु जातु जेती कटनि बढ़ि रस-सरिता-स्रोतु ।  
 आलबाल उर प्रेम-तरु तितौ तितौ दृढ़ होतु ॥४५२॥  
 राति घौस हौंसै रहै मानु न ठिक्कु ठहराइ ।  
 जेतौ औगुनु दूढ़ियै गुनै हाथ परि जाइ ॥४५३॥

मनु न मनावन कौं करै देतु रुठाइ रुठाइ ।  
 कौतुक-लाग्यौ ज्यौ प्रिया-खिभूहं रिभूवति जाइ ॥४५४॥  
 बिरह-बिपति-दिनु परत हीं तजे सुखनु सब अंग ।  
 रहि अब लौं अब दुखौ भए चलाचलै जिय-संग ॥४५५॥  
 नयैं बिरह बढ़ती बिथा खरी बिकल जिय बाल ।  
 बिलखी देखि परोसिन्यौ ढरखि हँसी तिहिं काल ॥४५६॥  
 छतौ नेहु कागर हियैं भई लखाइ न टांकु ।  
 बिरह-तचैं उघरगौ सु अब सेंहुड़ कैसो आकु ॥४५७॥  
 फूलीफाली फूल सो फिरति जु विमल-विकास ।  
 भोर तरैयां होहु ते चलत तोहिं पिय-पास ॥४५८॥  
 अरी खरी सटपट परी बिधु आधैं मग हेरि ।  
 संग-लगैं मधुपनु लई भागनु गली अंधेरि ॥४५९॥  
 चलतु बैरु घर घर तक घरी न घर ठहराइ ।  
 समुझि उहीं घर कौं चलै भूलि उहीं घर जाइ ॥४६०॥  
 इक भीजैं चहलैं परैं बूड़ैं बहैं हजार ।  
 किते न औगुन जग करै बै-नै चढ़ती बार ॥४६१॥  
 गाँ ठाढ़ें कुचनु ठिलि पिय-हिय को ठहराइ ।  
 उकसौंहीं हीं तौ हियैं दर्ई सबै उकसाइ ॥४६२॥  
 दीप-उजैरैं हूं पतिहिं हरत बसनु रति-काज ।  
 रही लपटि छवि की छटनु नैकौ छूटी न लाज ॥४६३॥  
 लखि दारत पिय-कर-कटकु बास-छुड़ावन-काज ।  
 बरुनी-वन गाढ़ै दगनु रही गुढ़ौ करि लाज ॥४६४॥  
 सकुचि सुरत-आरंभ हीं बिछुरी लाज लजाइ ।  
 ढरकि ढार दुरि ढिग भई ढोठि ढिठाई आइ ॥४६५॥  
 सकुचि सरकि पिय-निकट तैं मुलकि कछुक तनु तोरि ।  
 कर आंचर की ओट करि जमुहानी मुँहु मोरि ॥४६६॥

देह लग्यौ ढिग गेहपति तऊ नेहु निरबाहि ।  
 नीची अखियनु हों इतै गई कनखियनु चाहि ॥४६७॥  
 मारगौ मनुहारिनु भरी गारगौ खरी मिठाहिं ।  
 वाकौ अति अनखाहटौ मुसकाहट बिनु नाहि ॥४६८॥  
 नाचि अचानक हीं उठे विनु पावस वन मोर ।  
 जानति हैं नंदित करी यह दिसि नंद-किसोर ॥४६९॥  
 मैं यह तोही मैं लखी भगति अपूरब बाल ।  
 लहि प्रसाद-माला जु भौ तनु कदंब की माल ॥४७०॥  
 जाकै एकाएक हूं जग व्यौसाइ न कोइ ।  
 सो निदाघ फूलै फरै आकु डहडहौ होइ ॥४७१॥  
 बतरस-लालच लाल की मुरली धरी लुकाइ ।  
 सौंह करें भौहनु हंसै दैन कहैं नटि जाइ ॥४७२॥  
 रही लट्ट है लाल हैं लखि वह बाल अनूप ।  
 कितौ मिठास दयौ दर्ई इतै सलोनैं रूप ॥४७३॥  
 नहिं पावसु ऋतुराजु यह तजि तरवर चित-भूल ।  
 अपतु भएँ विनु पाइहै क्यों नव दल फल फूल ॥४७४॥  
 वन बाटनु पिक वटपरा लखि बिरहिनु मत मैं न ।  
 कुहौ कुहौ कहि कहि उठै करि करि राते नैन ॥४७५॥  
 दिसि दिसि कुसुमित देखियत उपवन विपिन समाज ।  
 मनहुँ बियोगिनु कौं कियौ सर - पंजर ऋतुराज ॥४७६॥  
 टटकी धोई धोवती चटकीली मुख - जोति ।  
 लसति रसोई कै बगर जगरमगर दुति होति ॥४७७॥  
 सोहति धोती सेत मैं कनक - बरन - तन बाल ।  
 सारद - बारद - बीजुरी-भा रद कीजति लाल ॥४७८॥  
 बहु धनु लै अहसानु कै पारौ देत सराहि ।  
 वैद - बधू हंसि भेद सौं रही नाह - मुँह चाहि ॥४७९॥

रहौ गुही बेनी लखे गुहिबे के त्योंनार ।  
 लागे नीर चुचान जे नीठि सुकाए वार ॥४८०॥  
 भीत न नीति गलीतु है जौ धरियै धनु जोरि ।  
 खाएँ खरचैँ जौ जुरैँ तौ जोरियै करोरि ॥४८१॥  
 दुरैँ न निघटघट्यौ दियैँ ए रावरी कुचाल ।  
 बिषु सी लागति है बुरी हँसी खिसी की लाल ॥४८२॥  
 छाले परिबे कैँ छरनु सकैँ न हाथ छुवाइ ।  
 भक्तकत हियैँ गुलाब कैँ भँवा भँवैयत पाइ ॥४८३॥  
 तिय - तरसौँहैं मुनि किए करि सरसौँहैं नेह ।  
 धर - परसौँहैं है रहे भर - बरसौँहैं मेह ॥४८४॥  
 घन - घेरा छुटि गौ हरषि चली चहुँ दिसि राह ।  
 कियौ सुचैनौ आइ जगु सरद - सूर-नरनाह ॥४८५॥  
 पावस-घन-अधियार महि रहौ भेदु नहिँ आनु ।  
 रात शौस जान्यौ परतु लखि चकई चकवानु ॥४८६॥  
 अरुन सरोरुह कर चरन दग खंजन मुख चंद ।  
 समै आइ सुंदरि सरद काहि न करति अनंद ॥४८७॥  
 नाहिँन ए पावक प्रबल लुवैँ चलैँ चहुँ पास ।  
 मानहु विरह बसंत कैँ शोषम लेत उसास ॥४८८॥  
 कहलाने एकत बसत अहि मयूर मृग बाध ।  
 जगतु तपोबन सौ कियौ दीरघ दाध निदाध ॥४८९॥  
 पग पग मग अगमन परत चरन अरुन दुति भूलि ।  
 ठौर ठौर लखियत उठे दुपहरिया से फूलि ॥४९०॥  
 नीच हियैँ हुलसे रहैँ गहे गेद के पोत ।  
 ज्यों ज्यों मार्यैँ मारियत ल्यों त्यों ऊंचे होत ॥४९१॥  
 ज्यों ज्यों बढ़ति बिभावरी ल्यों त्यों बढ़त अनंत ।  
 ओक ओक सब लोक-सुख कोक-सोक हेमंत ॥४९२॥

रह्यौ मोहु मिलनौ रह्यौ यौ कहि गहैं मरोर ।  
 उत दै सखिहिं उराहनौ इत चितई मो ओर ॥४६३॥  
 नहिं हरि लौं हियरा धरौं नहिं हर लौं अरधंग ।  
 एकत ही करि राखियै अंग अंग प्रति अंग ॥४६४॥  
 कियौ सबै जगु काम बस जीते जिते अजेइ ।  
 कुसुम-सरहिं सर धनुष कर अगहन गहन न देख ॥४६५॥  
 छकि रसाल-सौरभ सने मधुर माधुरी-गंध ।  
 ठौर ठौर भौरत भूपत भौर-भौर मधु-अंध ॥ ४६६ ॥  
 मिलि बिहरत बिछुरत मरत दंपति अति रति-लीन ।  
 नूतन बिधि हेमंत सबु जगतु जुराफा कीन ॥४६७॥  
 पल सोहैं पगि पीक-रंग छल सोहैं सब बैन ।  
 बल-सौहैं कत कीजियत ए अलसौहैं नैन ॥४६८॥  
 कत लपटइयतु मो गरैं सो न जु ही निसि सैन ।  
 जिहिं चंपक-बरनी किए गुल्लाला-रंग नैन ॥४६९॥  
 नैक उते उठि बैठियै कहा रहे गहि गेहु ।  
 छुटो जाति नह-दी छिनकु महदी सूकन देख ॥५००॥  
 लटुवा लौं प्रभु कर गहैं निगुनी गुन लपटाइ ।  
 वहै गुनी-कर तैं छुटैं निगुनीयै ह्वै जाइ ॥५०१॥  
 है हिय रहति हई छई नइ जुगती जग जोइ ।  
 दीठिहिं दीठि लगै दई देह दूबरी होइ ॥५०२॥  
 जज्यौ उभकि भांपति बदन भुक्ति बिहंसि सतराइ ।  
 तत्यौ गुलाल-मुठो मुठो भुभकावत प्यौ जाइ ॥५०३॥  
 छिनकु छबीले लाल वह नहिं जौ लगि बतराति ।  
 ऊख महुष पियूष की तौ लगि भूख न जाति ॥५०४॥  
 अंगुरिनु उचि भरु भीति दै उलमि चितै चख लोल ।  
 रुचि सौं दुहं दहंनु के चूमे चारु कपोल ॥५०५॥

नागरि बिबिध बिलास तजि बसी गवेलिनु माहि ।  
 मूढनि में गनबी कि तू हूथ्यौ दै इठलाहि ॥५०६॥  
 बिशुरयौ जावकु सौति-पग निरखि हँसी गहि गांसु ।  
 सलज हँसौहीं लखि लियौ आधी हँसी उसांसु ॥५०७॥  
 मो सौं मिलवति चातुरी तूं नहिं भानति भेड ।  
 कहे देत यह प्रगट हों प्रगट्या पूस पसेड ॥५०८॥  
 सौंहे हूं हेरयौ न तैं केती धाई सौंह ।  
 एहो क्यों बैठो किए ऐंठो ग्वैंठो भौंह ॥५०९॥  
 ही औरै सी हूँ गई तरी औधि कैं नाम ।  
 दूजैं कै डारी खरी बौरी बौरैं आम ॥५१०॥  
 सही रंगीलैं रति-जगै जंगी पगी सुख चैन ।  
 अलसौंहे सौंहे कियै कहैं हँसौहे नैन ॥५११॥  
 कहा कुसुमु कह कौमुदी कितक आरसी जाति ।  
 जाकी उजराई लखैं आखि ऊजरी होति ॥५१२॥  
 पहिरत हीं गोरेँ गरें यौ दौरी दुति लाल ।  
 मनौ परसि पुलकित भई बालसिरी की माल ॥५१३॥  
 रस भिजए दोऊ दुहुनु तब टिकि रहे टरैं न ।  
 छवि सौं छिरकत प्रेम-रंगु भरि पिचकारी नैन ॥५१४॥  
 कारे बरन डरावने कत आवत इहिं गेह ।  
 कै वा लखी सखी लखैं लगै शरथरी देह ॥५१५॥  
 कर के मीढ़े कुसुम लौं गई विरह कुम्हिलाइ ।  
 सदा-समीपिनि सखिनु हूं नीठि पिछानी जाइ ॥५१६॥  
 चितवत जितवत हित हियैं कियैं तिरीछे नैन ।  
 भीजैं तन दोऊ कपैं क्यों हूं जप निबरैं न ॥५१७॥  
 कियौ जु चिबुक उठाइ के कंपित कर भरतार ।  
 टेढ़ीयै टेढ़ी फिरति टेढ़ें तिलक लिलार ॥५१८॥

भौ यह ऐसोई समौ जहां सुखद दुखु देत ।  
 चैत-चांद की चांदनी डारति किए अचेत ॥५१६॥  
 कत कहियत दुखु देन कौ रचि रचि बचन अलीक ।  
 सबै कहाउ रह्यौ लखैं लाल महावर-लीक ॥५२०॥  
 लोपे कोपे इंद्र लौ रोपे प्रलय अकाल ।  
 गिरिधारी राखे सबै गो गोपी गोपाल ॥५२१॥  
 ठोरी लाई सुनन की कहि गोरी मुसुकात ।  
 थोरी थोरी सकुच सी भोरी भोरी बात ॥५२२॥  
 आज कछू औरै भए छए नए ठिक ठैन ।  
 चित के हित के चुगल ए नित के होहिं न नैन ॥५२३॥  
 छुटै न लाज न लालचौ प्यौ लखि नैहर-गेह ।  
 सटपटात लोचन खरे भरे सकोच सनेह ॥५२४॥  
 ह्यां तैं ह्यां ह्यां तैं इहां नेको धरति न धीर ।  
 निसि दिन डाढ़ी सी फिरति बाढ़ी गाढ़ी पीर ॥५२५॥  
 विरह-विकल बिनु हों लिखी पाती दर्ई पठाइ ।  
 आंक-बिहूनीयौ सुचित सूनें बांचत जाइ ॥५२६॥  
 समरस समर सकोच वस बिबस न ठिक ठहराइ ।  
 फिरि फिरि उभकति फिरि दुरति दुरि दुरि उभकति आइ ॥५२७॥  
 फिरत जु अटकत कटनि बिनु रसिक सु रस न खियाल ।  
 अनत अनत नित नित हितनु चित सकुचत कत लाल ॥५२८॥  
 अरैं परै न करै हियौ खरैं जरैं पर जार ।  
 लावति घोरि गुलाब सौं मलै मिलै घनसार ॥५२९॥  
 दोऊ चोर-मिहीचनी खेलु न खेलि अघात ।  
 दुरत हियैं लपटाइ कै छुवत हियैं लपटात ॥५३०॥  
 मिसि हों मिसि आतप दुसह दर्ई और बहराइ ।  
 चले लनन मन भावतिहिं तन की छांह छिपाइ ॥५३१॥



लहलहाति तन तरुनई लचि लग लौं लकि जाइ ।  
 लगैं लांक लोइन भरी लोइनु लेति लगाइ ॥५३२॥  
 रही अचल सी है मनौ लिखी चित्र की आहि ।  
 तजैं लाज डरु लोक कौ कहै बिलोकति काहि ॥५३३॥  
 पल न चलैं जकि सी रही थकि सी रही उसास ।  
 अबहीं तनु रितयौ कहै मनु पठयौ किहिँ पास ॥५३४॥  
 मैं लै दयौ लयौ सु कर छुवत छिनकि गौ नीर ।  
 लाल तिहारौ अरगजा उर है लग्यौ अवीर ॥५३५॥  
 चलौ चलैं छुटि जाइगौ हठु रावरैं सँकोच ।  
 खरे चढ़ाए हे ति अब आए लोचन लोच ॥५३६॥  
 कहे जु बचन बियोगिनी बिरह-बिकल बिललाइ ।  
 किए न को अँसुवा सहित सुवा ति बोल सुनाइ ॥५३७॥  
 छिप्यौ छबीलौ मुँहु लसै नीलै अंचर-चीर ।  
 मनौ कलानिधि भलमलै कालिंदी कै नीर ॥५३८॥  
 मानु तमासौ करि रही बिबस बारुनी सेइ ।  
 झुकति हँसति हँसि हँसि झुकति झुकि झुकि हँसि हँसि देइ ॥५३९॥  
 सदन सदन के फिरन की सद न छुटै हरि-राइ ।  
 रुचै तितै बिहरत फिरौ कत बिहरत उरु आइ ॥५४०॥  
 प्रलय-करन वरषन लगे जुरि जलधर इक साथ ।  
 सुरपति-नारबु हरयौ हरषि गिरिधर गिरि धरि हाथ ॥५४१॥  
 करे चाह सौं चुटकि कै खरैं उड़ोंहैं मैन ।  
 लाज नवाएँ तरफरत करत खूँद सो नैन ॥५४२॥  
 ज्यों ज्यों आवति निकट निसि त्यों त्यों खरी उताल ।  
 भ्रमकि भ्रमकि टइलैं करै लगी रहचटैं बाल ॥५४३॥  
 रही पैज कीनी जु मैं दीनी तुमहिँ मिलाइ ।  
 राखहु चंपकमाल लौं लाल हियैं लपटाइ ॥५४४॥

दोऊ चाह भरे कछू चाहत कह्यौ कहैं न ।  
 नहिँ जाचकु सुनि सूम लौं बाहिर निकसत वैन ॥५४५॥  
 सुभर भर्यौ तव गुन कननु पक्यौ कपट कुचाल ।  
 क्यौं धौं दार्यौ ज्यौं हियौ दरकतु नाहँन लाल ॥५४६॥  
 चितु दै देखि चकोर त्यौं तीजै भजै न भूख ।  
 चिनगी चुगै अँगार की चुगै कि चंद-मयूख ॥५४७॥  
 तुहँ कहति है आपु हूँ समुझति सबै सयानु ।  
 लखि मोहनु जौ मनु रहै तौ मन राखौ मानु ॥५४८॥  
 धुरवा होहिँ न अलि उठै धुवां धरनि चहुँ कोद ।  
 जारत आवत जगत कौं पावस प्रथम पयोद ॥५४९॥  
 नख-रुचि-चूरनु डारि कै ठगि लगाइ निज साथ ।  
 रह्यौ राखि हठि लै गए हथाहथी मनु हाथ ॥५५०॥  
 चलत देत आभारु सुनि उहाँ परोसिहिँ नाह ।  
 लसी तमासे की दगनु हांसी आसुन माँह ॥५५१॥  
 सुरति न ताल न तान की उठ्यौ न सुरु ठहराइ ।  
 एरी रागु विगारि गौ बैरी बोलु सुनाइ ॥५५२॥  
 पजर्यौ आगि बियोग की बह्यौ बिलोचन नीर ।  
 आठौं जाम हियौ रहै उड़्यौ उसास समीर ॥५५३॥  
 उरु उरुभ्यौ चितचोर सौं गुरु गुरुजन की लाज ।  
 चढ़ैं हिडोरैं सैं हियैं कियैं वनै गृह-काज ॥५५४॥  
 पट सौं पोंछि परी करौ खरी भयानक भेष ।  
 नागिनि है लागति दगनु नागवेलि-रँग-रेख ॥५५५॥  
 तो लखि मो मन जो लही सो गति कही न जाति ।  
 ठोढ़ी गाढ़ गढ़्यौ तऊ उड़्यौ रहै दिन राति ॥५५६॥  
 मैं लखि नारी-ज्ञानु करि राख्यौ निरधार यह ।  
 वहई रोग निदानु वहै वैदु औषद वहै ॥५५७॥

जो तिय तुम मन भावती राखी हियँ बसाइ ।  
 मोहिँ भुकावति दगनु है वहई उभक्तति आइ ॥५५८॥  
 दोऊ अधिकारि भरे एकैं गौं गहराइ ।  
 कौनु मनावै को मनै माने मन ठहराइ ॥५५९॥  
 उर लीनै अति चटपटी सुनि मुरली-धुनि धाइ ।  
 हौं निकसी हुलसी सु तौ गौ हुलसी हिय लाइ ॥५६०॥  
 ब्रजवासिनु कौ उचित धनु जो धन रुचित न कोइ ।  
 सु चित न आयौ सुचितई कहौ कहाँ तै' होइ ॥५६१॥  
 दठु न हठीली करि सकै यह पावस ऋतु पाइ ।  
 आन गांठि घुटि जाइ त्यों मान-गांठि छुटि जाइ ॥५६२॥  
 तेऊ चिरजीवी अमर निधरक फिरौ कहाइ ।  
 छिनु बिछुरै जिनकी नहीं पावस आइ सिराइ ॥५६३॥  
 भेटत बनै न भावतौ चितु तरसतु अति प्यार ।  
 धरति लगाइ लगाइ उर भूषन बसन हृथ्यार ॥५६४॥  
 वाही दिन तै' ना मिट्यौ मानु कलह कौ मूल ।  
 भलैं पधारे पाहुने है गुड़हर कौ फूल ॥५६५॥  
 मोहिँ लजावत निलज ए हुलसि मिलत सब गात ।  
 भानु-उदै की ओस लौं मानु न जानति जात ॥५६६॥  
 तो तन अवधि-अनूप रूप लग्यौ सब जगत कौ ।  
 मो दग लागे रूप दगनु लगी अति चटपटी ॥५६७॥  
 रहैं निगोड़े नैन डिगि गहैं न चेत अचेत ।  
 हौं कसु कै रिस के करौं ये निसुके हँसि देत ॥५६८॥  
 मोहूँ सौं वातनु लगै' लगी जीभ जिहिँ नाइ ।  
 सोई लै उर लाइयै लाल लागियतु पाइ ॥५६९॥  
 नावक-सर से लाइ कै तिलकु तरुनि इत तांकि ।  
 पावक-भर सी भूमकि कै गई भरोखा भांकि ॥५७०॥

सुख सौं बीती सब निसा मनु सोए मिलि साथ ।  
 मूका मेलि गहे सु छिनु हाथ न छोड़े हाथ ॥५७१॥  
 बाम बांह फरकति मिलैं जौ हरि जीवनमूरि ।  
 तौ तोहीं सौं भेटिहैं राखि दाहिनी दूरि ॥५७२॥  
 छुटे छुटावत जगत तैं सटकारे सुकुमार ।  
 मनु बांधत वेनी बंधे नील छबीले वार ॥५७३॥  
 इहिँ बसंत न खरी अरी गरम न सीतल वात ।  
 कहि क्यौं भलके देखियत पुलक पसीजे गात ॥५७४॥  
 चित पितमारक-जोगु गनि भयौ भयैं सुत सोगु ।  
 फिरि हुलस्यौ जिय जोइसी समुझैं जारज-जोगु ॥५७५॥  
 चमचमात चंचल नयन विच घूंघट पट भीन ।  
 मानहु सुरसरिता विमल जल उछरत जुग मीन ॥५७६॥  
 रहि मुँहु फेरि कि हेरि इत हित समुहौ चितु नारि ।  
 डीठि-परस उठि पीठि के पुलके कहैं पुकारि ॥५७७॥  
 बिछुरै' जिए सकोच इहिँ बोलत बनत न वैन ।  
 दोऊ दौरि लगे हियैं किए लजौहैं नैन ॥५७८॥  
 मोहिँ करत कत बावरी करें दुराठ दुरै' न ।  
 कहे देत रँग राति के रँग निचुरत से नैन ॥५७९॥  
 छिपै' छिपाकर छिति छुवैं तम ससिहरि न सँभारि ।  
 हँसति हँसति चलि ससिमुखी मुख तैं आंचरु टारि ॥५८०॥  
 अपनै' अपनै' मत लगे बादि मचावत सोरु ।  
 ज्यौं त्यौं सब कौं सेइबौ एकै नंद-किसोरु ॥५८१॥  
 लहि सूनै' घर करु गहत दिठादिठी की ईठि ।  
 गढ़ी सु चित नार्हीं करति करि ललचौहीं डीठि ॥५८२॥  
 पिय कै' ध्यान गही गही रही बही है नारि ।  
 आपु आपु हौं आरसी लखि रीभति रिभवारि ॥५८३॥

बुरौ बुराई जौ तजै तौ चितु खरौ डरातु ।  
 ज्यों निकलंकु मयंकु लखि गनै लोग उत्तपातु ॥५८४॥  
 मरिबे को साहसु ककौ बढै विरह की पीर ।  
 दैरति है समुही ससी सरसिज सुरभि समीर ॥५८५॥  
 कव की ध्यान लगी लखै यह घरु लागिहै काहि ।  
 डरियतु भृंगी-कीट ली मति बहई है जाइ ॥५८६॥  
 विलखी लखै खरी खरी भरी अनख वैराग ।  
 मृगनैनी सैनन भजै लखि बेनी के दाग ॥५८७॥  
 अनियारे दीरघ दगनु किती न तरुनि समान ।  
 वह चितवनि औरै कछू जिहिँ वस होत सुजान ॥५८८॥  
 भुकि भुकि भूपकौहैं पलनु फिरि फिरि जुरि जमुहाइ ।  
 बौदि पिआगम नौद-मिसि दौ सब अली उठाइ ॥५८९॥  
 ओछे बड़े न है सकैं लगौ सतर है गैन ।  
 दीरघ होहिँ न क हूँ फारि निहारै नैन ॥५९०॥  
 गहौ अबोलौ बोलि प्यौ आपुहिँ पठै बसीठि ।  
 दीठि बुराई दुहुनु की लखि सकुचौहौँ दीठि ॥५९१॥  
 दुख-हाइनु चरचा नहो आनन आनन आन ।  
 लगी फिरै दूका दिए कानन कानन कान ॥५९२॥  
 हितु करि तुम पठ्यौ लगै वा विजना की बाइ ।  
 टली तपति तन की तऊ चली पसीना न्हाइ ॥५९३॥  
 ध्यान आनि ढिग प्रानपति रहति मुदित दिन राति ।  
 पलकु कँपति पुलकित पलकु पलकु पसीजति जाति ॥५९४॥  
 सकै सताइ न तमु बिरहु निसि दिन सरस सनेह ।  
 रहै वहै लागी दगनु दीप-सिखा सी देह ॥५९५॥  
 बिरह जरी लखि जीगननु कह्यौ न डहि कै बार ।  
 अरी आठ भजि भीतरी बरसत आजु अंगार ॥५९६॥

फिरि घर कौ नूतन पथिक चले चकित चित भागि ।  
 फूल्यौ देखि पलासु बन समुही समुझि दवागि ॥५८७॥  
 गड़ी कुटुम की भीर में रही बैठि दै पोठि ।  
 तऊ पलकु परि जाति इत सलज हँसौहीं डोठि ॥५८८॥  
 नाउँ सुनत हों हैं गयौ तनु औरै मनु और ।  
 दबै नहों चित चढ़ि रह्यौ अबै चढ़ाएँ त्यौर ॥५८९॥  
 दुसह सौति-सालें सु हिय गनति न नाह-बियाह ।  
 धरे रूप गुन कौ गरबु फिरै अछेह उछाह ॥६००॥  
 डिगत पानि डिगुलात गिरि लखि सब ब्रज बेहाल ।  
 कंपि किसोरी दरसि कै खरै लजाने लाल ॥६०१॥  
 और सबै हरषी हँसति गावति भरी उछाह ।  
 तुँहीं बहू बिलखी फिरै क्यों देवर कै ब्याह ॥६०२॥  
 बाल छबोली पियनु में वैठी आपु छिपाइ ।  
 अरगट हों पानूस सी परगट होति लखाइ ॥६०३॥  
 एरी यह तेरी दर्ई क्यों हूँ प्रकृति न जाइ ।  
 नेह भरै हिय राखियै तउ रुखियै लखाइ ॥६०४॥  
 इहि काँटै मो पाइ गड़ि लीनी मरति जिवाइ ।  
 प्रीति जनावत भीति सौं भीति जु काढ़्यौ आइ ॥६०५॥  
 नांक चढ़ै सीबी करै जितै छबोली छैल ।  
 फिरि फिरि भूलि वहै गहै ज्यौ कँकरीली गैल ॥६०६॥  
 नटि न सीस साबित भई लुटी सुखनु की मोट ।  
 चुप करि ए चारी करति सारी परी सलोट ॥६०७॥  
 जिहि भामिनि भूषनु रच्यौ चरन-महावर भाल ।  
 उहीं मनौ अँखियाँ रँगौ ओठनु कै रँग लाल ॥६०८॥  
 तूँ मोहन-मन गड़ि रही गाढ़ी गड़नि गुवालि ।  
 बठै सदा नटसाल ज्यौ सौतिनु कै चर सालि ॥६०९॥

लाज-लगाम न मानहीं नैना मो बस नाहिँ ।  
 ए मुँहजोर तुरंग ज्यों ऐंचत हूँ चलि जाहिँ ॥६१०॥  
 कर-मुँदरी की आरसी प्रतिबिंबित प्यौ पाइ ।  
 पीठि दियै निधरक लखै इकटक डीठि लगाइ ॥६११॥  
 इती भीर हूँ भेदि कै कित हूँ है इत आइ ।  
 फिरै डीठि जुरि डीठि सौं सब की डीठि बचाइ ॥६१२॥  
 लाई लाल बिलोकियै जिय की जीवन-मूलि ।  
 रही भौन के कोन मैं सोनजुही सी फूलि ॥६१३॥  
 ओठु उँचै हांसी भरी दग भौहनु की चाल ।  
 मो मनु कहा न पी लियौ पियत तमाकू लाल ॥६१४॥  
 जे तब होत दिखा दिखी भई अमी इक आँक ।  
 दगैं तीरछी डीठि अब है वीछी कौ डाँक ॥६१५॥  
 नैकौ उहिँ न जुपी करी हरषि जु दी तुम माल ।  
 उर तैं वासु छुट्यौ नहीं बास छुटै हूँ लाल ॥६१६॥  
 बिहँसि बुलाइ बिलोकि उत प्रौढ़ तिया रस घूमि ।  
 पुलकि पसीजति पूत कौ पिय-चूम्यौ मुँहु चूमि ॥६१७॥  
 देख्यौ अनदेख्यौ कियै अँगु अँगु सबै दिखाइ ।  
 पैठति सी तन मैं सकुचि बैठी चितै लजाइ ॥६१८॥  
 पटु पांखै भखु काँकरै सपर परेई संग ।  
 सुखी परेवा पुहुमि मैं एकै तुहीं बिहंग ॥६१९॥  
 अरे परेखौ को करै तुहीं बिलोकि बिचारि ।  
 किहिँ नर किहिँ सर राखियै खरै बहै परिपारि ॥६२०॥  
 तौ बलियै भलियै बनी नागर नंद-किसोर ।  
 जौ तुम नीकै कै लख्यौ मो करनी की ओर ॥६२१॥  
 चाह भरीं अति रस भरीं बिरह भरीं सब बात ।  
 कोरि सँदेसे दुहुनु के चले पौरि लौं जात ॥६२२॥

सुनि पग-धुनि चितई इतै न्हाति दियै हौं पीठि ।  
 चकी भुंकी सकुचो डरी हँसी लजी सी डोठि ॥६२३॥  
 कर लै सुंघि सराहि हूँ रहे सबै गहि मौनु ।  
 गंधी अंध गुलाब कौ गवई गाहकु कौनु ॥६२४॥  
 मिलि चलि चलि मिलि मिलि चलत आंगन अथयौ भानु ।  
 भयों मुहूरत भोर कौ पौरिहि प्रथमु मिलानु ॥६२५॥  
 पचरँग रँग बेंदी खरी उठै ऊगि मुख-जोति ।  
 पहिरै चीर चिनौटिया चटक चौगुनी होति ॥६२६॥  
 हँसि ओठनु बिच करु उचै कियै निचैहैं नैन ।  
 खरैं अरैं प्रिय कैं प्रिया लगी विरी मुख दैन ॥६२७॥  
 बारौ बलि तो हगनु पर अलि खंजन मृग मीन ।  
 आधी डोठि-चितैनि जिहि किए लाल आधोन ॥६२८॥  
 जात सयान अयान है वे ठग काहि ठगैं न ।  
 को ललचाइ न लाल के लखि ललचैहैं नैन ॥६२९॥  
 लखि लखि अखियनु अधखुलिन आंगु मोरि अंगिराइ ।  
 आधिक उठि लेटति लटकि आलस-भरी जम्हाइ ॥६३०॥  
 प्रेमु अडोलु डुलै नहीं मुँह बोलैं अनखाइ ।  
 चित उनकी मूरति बसी चितवनि माहि लखाइ ॥६३१॥  
 नाक मोरि नार्हीं ककै नारि निहोरैं लेइ ।  
 छुवत ओठ पिय आंगुरिनु विरी बदन प्यौ देइ ॥६३२॥  
 गिरै कंपि कछु कछु रहै कर पसीजि लपटाइ ।  
 लैयौ मुठी गुलाल भरि छुटत झुठी है जाइ ॥६३३॥  
 देखत कछु कौतिगु इतै देखौ नैक निहारि ।  
 कब की इकटक डटि रही टटिया अंगुरिनु फारि ॥६३४॥  
 कर लै चूमि चढ़ाइ सिर उर लगाइ भुज भेटि ।  
 लहि पाती पिय की लखति बांचति धरति समेटि ॥६३५॥



चकी जकी सी है रही बूझैं बोलति नीठि ।  
 कहूँ डीठि लागी लगी कै काहू की डीठि ॥६३६॥  
 भावरि अनभावरी भरे करौ कोरि बकवाहु ।  
 अपनी अपनी भांति कौ छुटै न सहजु सवाहु ॥६३७॥  
 दूरयौ खरे समीप कौ लेत मानि मन मोहु ।  
 होत दुहुनु के दगनु हीं बतरसु हँसी बिनोदु ॥६३८॥  
 मुखु छ्यारि पिउ लखि रहत रहौ न गौ मिस सैन ।  
 फरके ओठ उठे पुलक गए उधरि जुरि नैन ॥६३९॥  
 पिय-मन रुचि हैवौ कठिनु तन-रुचि होहु सिंगार ।  
 लाखु करौ आखि न बढ़ें बढ़ें बढ़ाएँ बार ॥६४०॥  
 मनमोहन सौ मोहु करि तू घनस्यामु निहारि ।  
 कुंजबिहारी सौ बिहरि गिरधारी उर धारि ॥६४१॥  
 मैं मिसहा सोयौ समुझि मुँहु चूम्यौ ढिग जाइ ।  
 हँस्यौ खिसानी गल गह्यौ रही गरैं लपटाइ ॥६४२॥  
 नीठि नीठि उठि बैठि हूँ प्यौ प्यारी परभात ।  
 दोऊ नोंद भरैं खरैं गरैं लागि गिरि जात ॥६४३॥  
 तनक भूठ न सवादिली कौन बात परि जाइ ।  
 तिय - मुख रति-आरंभ की नहिँ भूठियै मिठाइ ॥६४४॥  
 नहिँ अन्हाइ नहिँ जाइ घर चितु चिहुँट्यौ तकि तीर ।  
 परसि फुरहरी लै फिरति बिहँसति घँसति न नीर ॥६४५॥  
 सटपटाति सैं ससिमुखी मुख घूँघट-पटु ढांकि ।  
 पावक-भर सी भूमकि कै गई भरोखा भांकि ॥६४६॥  
 ज्यौ कर त्यों चिकुटी चलति ज्यौ चिकुटी त्यों नारि ।  
 छवि सौ गति सी लै चलति चातुर कातन-हारि ॥६४७॥  
 बुधि अनुमान प्रमान श्रुति किऐं नीठि ठहराइ ।  
 सूखम कटि पर ब्रह्म की अलख लखी नहिँ जाइ ॥६४८॥

खिचै' मान अपराध हूं चलि गै बढैं अचैन ।  
 जुरत डीठि तजि रिस खिसी हँसे दुहुनु के नैन ॥६४६॥  
 रूप-सुधा-आसव छक्यौ आसव पियत बनै न ।  
 प्यालैं ओठ प्रिया-बदन रख्यौ लगाए' नैन ॥६५०॥  
 यौ दलमलियतु निरदई दई कुसुम सौ गातु ।  
 करु धरि देखौ धरधरा उर कौ अजौ न जातु ॥६५१॥  
 किती न गोकुल कुलबधू किहि' न काहि सिख दीन ।  
 कौनैं तजी न कुल-गली हूँ मुरली-सुर-लीन ॥६५२॥  
 खलित बचन अधखलित दृग ललित स्वेद-कन-जोति ।  
 अरुन बदन छबि मदन की खरी छबोली होति ॥६५३॥  
 बहकि न इहि' बहिनापुली जब तब बोर बिनासु ।  
 बचै न बड़ो सबील हूँ चील-घोसुवा मांसु ॥६५४॥  
 लहि रति-सुखु लगियै हियै' लखी लजौहीं नीठि ।  
 खुलति न मो मन बँधि रही वहै अधखुली डीठि ॥६५५॥  
 कियौ सयानी सखिनु सौं नहि' सयानु यह भूल ।  
 दुरै, दुराई, फूल लौं क्यों पिय - आगम - फूल ॥६५६॥  
 आयौ मीतु बिदेस तै' काहू कछौ पुकारि ।  
 सुनि हुलसौं बिहँसौं हँसौं दोऊ दुहुनु निहारि ॥६५७॥  
 जद्यपि सुंदर सुधर पुनि सगुनौ दीपक-देह ।  
 तऊ प्रकासु करै तितौ भरियै जितै' सनेह ॥६५८॥  
 पलनु प्रगटि बरुनीनु बढि नहि' कपोल ठहरात ।  
 अँसुवा परि छतिया छिनकु छनछनाइ छिपि जात ॥५६६॥  
 फिरि सुधि दै सुधि छाइ प्यौ इहि' निरदई निरास ।  
 नई नई बहुरयौ दई दई उसासि उसास ॥६६०॥  
 समै पलट पलटै प्रकृति को न तजै निज चाल ।  
 भौ अकरुन करुनाकरौ इहि' कपूत कलिकाल ॥६६१॥

पारगौ सोरु सुहाग कौ इनु बिनु हीं पिय-नेह ।  
 उनदौहीं अँखियां ककै कै अलसौँहीं देह ॥६६२॥  
 इन दुखिया अँखियानु कौं सुखु सिरज्यौई नाहि ।  
 देखैं बनै न देखतै अनदेखैं अकुलाहि ॥६६३॥  
 लगी अनलगी सी जु बिधि करी खरी कटि खोन ।  
 किए मनौ वै हीं कसर कुच मितंब अति पीन ॥६६४॥  
 छिनकु उधारति छिनु छुवति राखति छिनकु छिपाइ ।  
 सबु दिनु पिय-खंडित अधर दरपन देखत जाइ ॥६६५॥  
 मुँहु पखारि मुड़हरु भिजै सीस सजल कर छाइ ।  
 मौरु उचै घूटेनु तैं नारि सरोबर न्हाइ ॥६६६॥  
 कोरि जतन कोऊ करौ तन की तपनि न जाइ ।  
 जौ लौ भीजे चीर लौ रहै न प्यौ लपटाइ ॥६६७॥  
 चटक न छाड़तु घटत हूं सज्जन-नेहु गँभीरु ।  
 फीकौ परै न बरु फटै रँग्यौ चोल-रँग चीरु ॥६६८॥  
 दुखह विरह दारुन दसा रहै न और उपाइ ।  
 जात जात ज्यौं राखियतु प्यौ कौ नाउँ सुनाइ ॥६६९॥  
 फिरि फिरि दौरत देखियत निचले नैक रहैं न ।  
 ए कजरारे कौन पर करत कजाकी नैन ॥६७०॥  
 को छूट्यौ इहिँ जाल परि कत कुरंग अकुलात ।  
 ज्यौं ज्यौं सुरभि भज्यौ चहत त्यों त्यों उरभूत जात ॥६७१॥  
 अब तजि नाउँ उपाउ कौ आए पावस मास ।  
 खेलु न रहिबौ खेम सौं केम-कुसुम की बास ॥६७२॥  
 लसै मुरासा तिय-सत्रन यौं मुकतनु दुति पाइ ।  
 मानहु परस कपोल कैं रहे स्वेद-ज्वन छाइ ॥६७३॥  
 मिलि परछाँहीं जोन्ह सौं रहे दुहुनु के गात ।  
 हरि राधा इक संग हीं चले गली मढ़िँ जात ॥६७४॥

बिधि बिधि कौन करै टरै नहीं परै हूँ पानु ।  
 चितै कितै तै लै धर्यौ इतौ इतै तन मानु ॥६७५॥  
 मोर-चंद्रिका स्याम-सिर चढ़ि कत करति गुमानु ।  
 लखिबी पाइनु पर लुठति सुनियतु राधा-मानु ॥६७६॥  
 चिरजीवौ जोरी जुरै क्यों न सनेह गँभीर ।  
 को घटि ए वृषभानुजा वे हलधर के वीर ॥६७७॥  
 औरै गति औरै बचन भयौ बदन-रँगु औरु ।  
 घोसक तैं पिय-चित चढ़ी कहैं चढ़ैं हूँ त्यौर ॥६७८॥  
 बेंदी भाल तँबोल मुँह सीस सिलसिले बार ।  
 हग आजे राजै खरी एई सहज सिँगार ॥६७९॥  
 अंग अंग प्रतिबिम्ब परि दरपन सैं सब गात ।  
 दुहरे तिहरे चौहरे भूषन जाने जात ॥६८०॥  
 सघन कुंज छाया सुखद सीतल सुरभिसमोर ।  
 मनु है जातु अजौं वहै उहि जमुना कै तीर ॥६८१॥  
 मोहि भरोसौ रीझिहै उभकि भाँकि इक बार ।  
 रूप रिभावनहार वह ए नैना रिभवार ॥६८२॥  
 भौइनु त्रासति मुँह नटति आखिनु सौं लपटाति ।  
 ऐँचि छुड़ावति करु ईँची आगै आवति जाति ॥६८३॥  
 रुक्यौ साँकरैं कुंज-मग करतु भाँकि भक्रुरातु ।  
 मंद मंद मारुत-तुरँगु खूंदतु आवतु जातु ॥६८४॥  
 जदपि लौंग ललितौ तऊ तूं न पहिरि इक आँक ।  
 सदा साँक बढ़ियै रहै रहै चढ़ी सी नाक ॥६८५॥  
 बरजै दूनी हठ चढ़ैं ना सकुचै न सकाइ ।  
 दूत कटि दुमची-मचक लचकि लचकि बचि जाइ ॥६८६॥  
 कर समेटि कच भुज उलटि खएँ सीस-पट्ट टारि ।  
 काकौ मनु बाँधै न यह जूरौ-बाँधनहारि ॥६८७॥

पूछै क्यौं रूखी परति सगिबगि गई सनेह ।  
 मन मोहन-छवि पर कटी कहै कँठ्यानी देह ॥६८८॥  
 सोहत ओढ़ै पीतु पटु स्याम सलैनै गात ।  
 मनौ नीलमनि-सैल पर आतपु परगौ प्रभात ॥६८९॥  
 भाल लाल बेंदी ललन आखत रहे बिराजि ।  
 इंदुकला कुज में बसी मनौ राहु-भय भाजि ॥६९०॥  
 अंग अंग छवि की लपट उपटति जाति अछेह ।  
 खरी पातरीऊ तऊ लगै भरी सी देह ॥६९१॥  
 दृग थिरकौहैं अधखुलैं देह थकौहैं ढार ।  
 सुरत सुखित सी देखियति दुखित गरम कै भार ॥६९२॥  
 बिहँसति सकुचति सी दिऐं कुच-आंचर बिच बांह ।  
 भीजैं पट तट कौं चली न्हाइ सरोवर मांह ॥६९३॥  
 बरन बास सुकुमारता सब विधि रही समाइ ।  
 पँखुरी लगी गुलाब की गात न जानी जाइ ॥६९४॥  
 रंच न लखियति पहिरि यौ कंचन सैं तन बाल ।  
 कुँमिलानै जानी परै उर चंपक की माल ॥६९५॥  
 गोधन तूं हरष्यौ हियै धरियक लेहि पुजाइ ।  
 समुझि परैगी सीस पर परत पसुनु के पाइ ॥६९६॥  
 मुहुँ धोवति एड़ी घसति हसति अनगवति तीर ।  
 घसति न इंदीवर-नयनि कालिंदी कै नीर ॥६९७॥  
 बढ़त निकसि कुच-कोर-रुचि कढ़त गौर भुजमूल ।  
 मनु छुटि गौ लोटनु चढ़त चोटत ऊंचे फूल ॥६९८॥  
 अहे दहेंडी जिनि धरै जिनि तूं लेहि उतारि ।  
 नीकैं ही छोकैं छुवै ऐसैई रहि नारि ॥६९९॥  
 न्हाइ पहिरि पटु डटि कियौ बेंदी-मिसि परनामु ।  
 दृग चलाइ घर कौं चली बिदा किए घनस्यामु ॥७००॥

ज्यों है हीं त्यों होऊँगौ हीं हरि अपनी चाल ।  
 हठु न करौ अति कठिनु है मो तारिबौ गोपाल ॥७०१॥  
 परसंत पोंछत लखि रहतु लगि कपोल केँ ध्यान ।  
 कर लै प्यौ पाटल बिमल प्यारी-पठए पान ॥७०२॥  
 बामा भामा कामिनी कहि बोलौ प्रानेस ।  
 प्यारी कहत खिसात नहिँ पावस चलत बिदेस ॥७०३॥  
 उठि ठकु ठकु एतौ कहा पावस केँ अभिसार ।  
 जानि परैगी देखियौ दामिनि धन-अंधियार ॥७०४॥  
 कैवा आवत इहिँ गली रहैं चलाइ चलैं न ।  
 दरसन की साधै रहै सूधे रहैं न नैन ॥७०५॥  
 बेसरि-मोती धनि तुहीं को बूझै कुल-जाति ।  
 पीवौ करि तिय-भ्रोठ कौ रसु निवरक दिनराति ॥७०६॥  
 तिय-मुख लखि हीरा-जरी बेंदी बढैं बिनोद ।  
 सुत-सनेह मानौ लियौ बिधु पूरन बुधु गोद ॥७०७॥  
 गोरी गङ्कारी परैं हँसत कपोलनु गाढ़ ।  
 कैसी लसति गवारि यह सुनकिरवा की आढ़ ॥७०८॥  
 जौ लौं लखौं न कुल-कथा तौ लौं ठिक ठहराइ ।  
 देखैं आवत देखि हीं क्यों हूँ रह्यौ न जाइ ॥७०९॥  
 सामां सेन सयान की सबै साहि केँ साथ ।  
 बाहुबली जयसाहिजू फते तिहारैं हाथ ॥७१०॥  
 यौं दल काढ़े बलक तै' तै' जयसिंह भुवाल ।  
 उदर अघासुर केँ परैं ज्यों हरि गाइ; गुवाल ॥७११॥  
 घर घर तुरकिनि हिंदुनी देति' असीस सराहि ।  
 पतिनु राखि चादर चुरी तै' राखी जयसाहि ॥७१२॥  
 हुकुमु पाइ जयसाहि को हरि-राधिका-प्रसाद ।  
 करी बिहारो सतसई भरी अनेक सवाद ॥७१३॥



## ( ३ ) मतिराम-सतसई

मो मन-तम-तोमहिँ हरौ राधा कौ मुख-चंद ।  
 बढ़ै जाहि लखि सिंधु लौं नंद-नंदन-आनंद ॥ १ ॥  
 मंजु गुंज के द्वार छर सुकुट मोर-पर-पुंज ।  
 कुंज बिहारी बिहरियै मेरैई मन-कुंज ॥ २ ॥  
 रति-नायक सायक-सुमन सब जग जीतन-वार ।  
 कुबलय - दल - सुकुमार तन मन - कुमार जय मार ॥ ३ ॥  
 राधा मोहन - लाल कौ जाहि न भावत नेह ।  
 परियौ मुठी हजार दस ताकी आखिनि खेह ॥ ४ ॥  
 नागरि-नैन कमान-सर करत न ऐसी पीर ।  
 जैसी करत गँवारि के दृग धनुहीं के तीर ॥ ५ ॥  
 तन रोचित रोचन लहै रंच न कंचन - गोतु ।  
 पिया पिया बासौ दिया छिया छिया जग होतु ॥ ६ ॥  
 सुत कौ सुनौ पुरान यौ लोगनि कह्यौ निहोरि ।  
 चाहि चाह-जुत नाह-मुख मुसिक्यानी मुख मोरि ॥ ७ ॥  
 कंत-चौक सीमंत की बैठी गांठि जुराइ ।  
 पेखि परौसिन कौ पिया घूँघट में मुसिक्याइ ॥ ८ ॥  
 गुरुजन दूजै व्याह कौ प्रति दिन कहत रिसाइ ।  
 पति की पति राखति बहू आपुनि बाँझ कहाइ ॥ ९ ॥  
 बरसा रितु वीतन लगी प्रति दिन सरद-उदेति ।  
 लह लह जोति जुवार की अरु गँवारि की होति ॥ १० ॥  
 नये बिरह अँसुवानि कौ छिन छिन होत उदेत ।  
 अँखियन लग्यौ अपार वह तन-पानिप कौ सोत ॥ ११ ॥



नवल नेह में दुहुनि की लखी अपूरब बात ।  
 ज्यों सूखति सब देह है त्यों पानिप अधिकात ॥ १२ ॥  
 कत सजनी है अनमनी अँसुवा भरति ससंक ।  
 बड़ें भाग नँदलाल सौं भूठ हूँ लगत कलंक ॥ १३ ॥  
 औगुन बरनि उराहनौ ज्यों ज्यों ग्वालनि देहि ।  
 त्यों त्यों हरि-तनु हेरि हँसि हरषति महरिहि येहि ॥ १४ ॥  
 लगनि - लगे लोचन लखे जासौं मोहन लाल ।  
 करि सनेह ता बाल सौं सिखें सकल ब्रजबाल ॥ १५ ॥  
 तेरी औरै भाति की दीप-सिखा सी देह ।  
 ज्यों ज्यों दीपति जगमगै त्यों त्यों बाढ़त नेह ॥ १६ ॥  
 पानिप में घरमीन कौ कहत सकल संसार ।  
 दृग-मीननि कौ देखियत पानिप पारावार ॥ १७ ॥  
 देखें बानिक आजु की बारों कोटि अनंग ।  
 भलौ चलयौ मिलि सांवरे अंग-रंग पट-रंग ॥ १८ ॥  
 अवहीं सब तुम हेरतीं हँसि हँसि बातनि पागि ।  
 मेर चितवत नैकुँहीं ब्रज में लागति आगि ॥ १९ ॥  
 पगी प्रेम नँदलाल कैं भरन आपु जल जाइ ।  
 घरी घरो घर के तरैं घरनि देति ढरकाइ ॥ २० ॥  
 लपटानी अति प्रेम सौं है उर उरज उत्तंग ।  
 घरी एक लागि छुटैं हूँ रही लगी सी अंग ॥ २१ ॥  
 नौंद भूख अरु प्यास तजि करती है तन राख ।  
 जलसाई बिन पूजिहैं क्या मन के अभिलाख ॥ २२ ॥  
 जावक सी रागी पगनि हरित नगन अँगुरीन ।  
 जावक सी रागी पगनि मनु कीनो परबीन ॥ २३ ॥  
 प्राण पियारौ पग परगौ तू न लखति इहि ओर ।  
 ऐसौ उरज कठोर तौ उचितै उर जु कठोर ॥ २४ ॥

लचकौहौं सौ लंक उर उचकौहौं सौ ऐन ।  
 बिहँसौहैं से बदन में लसत नचौहैं नैन ॥ २५ ॥  
 उर्यौ ज्यौं परसै लाल तन त्यों त्यों राखति गोइ ।  
 नवल बधू लाजनि ललित इंद्रबधू सी होइ ॥ २६ ॥  
 नवल बधू के संग में अहितौ बात हिताति ।  
 ताती सांसनि के लगैं छाती अति सियराति ॥ २७ ॥  
 सूखति है वह सुंदरी कनक-बेलि अभिराम ।  
 वाकी तपनि मिटै जु रस बरसौ घन घनत्याम ॥ २८ ॥  
 नंदलाल कहियै कहां लह्यौ अपूरब हार ।  
 गुन-बिहीन किंसुकनि कौ तिन मधि मुकुर सुधार ॥ २९ ॥  
 नैन बिसारे बान सौं चली बटाउहिं मारि ।  
 बचन-सुधा रस सींचि कै वाहि जीव दै नारि ॥ ३० ॥  
 हन्यौ मोहिं उहिं नैन सौं नैनहिं कियौ सचेत ।  
 काटि बहुरि बिष आपनौ ज्यौं बिषधर हरि लेत ॥ ३१ ॥  
 तेरी मुख-समता करी साहस करि निरसंक ।  
 धूरि परी अरविंद-मुख चंदहिं लग्यौ कलंक ॥ ३२ ॥  
 खेलत मार सिकार है जो रे पास समेत ।  
 नैन मृगनि सौं बांधि कै नैन-मृगनि गहि लेत ॥ ३३ ॥  
 मृगपति जित्यौ सुलंक सौं मृगलच्छन मृदु हास ।  
 मृग-मद जित्यौ सुनैन सौं मृग-मद जित्यौ सुवास ॥ ३४ ॥  
 छपै छपाएँ अब नहीं मैं पायौ लखि अंक ।  
 नाहिंन जु पै कलंक तौ कैसैं बदन ससंक ॥ ३५ ॥  
 चौंसठि-कला-बिलास-जुत वदन-कलानिधि पेखि ।  
 दुतिया की देखै कला को दुति या की देखि ॥ ३६ ॥  
 पावै ऐपन ओप नहिं कहै कुरंटक कौन ।  
 सोनौ सोनजुही लहै ललित देह-दुति सौ न ॥ ३७ ॥

तौ मैं अनमिष नैनता किए लाल बस ऐन ।  
 अनमिष नैन सुनैन ए निरखत अनमिष नैन ॥ ३८ ॥  
 नारि नैन के नीर कौ नीरधि बढ़ै अपार ।  
 जारै जौ न वियोग के बड़वानल की भार ॥ ३९ ॥  
 जात - रूप रूपहिं लखत बांधत प्रभु-मन ऐन ।  
 निपट निहारे निलज ए लोन-हरामी नैन ॥ ४० ॥  
 रोस न करि जौ तजि चलयौ जानि अंगार गँवार ।  
 छिति पालनि की माल मैं तैहीं लाल सिंगार ॥ ४१ ॥  
 कहा भयौ मतिराम हिय जौ पहिरी नँदलाल ।  
 लाल मोल पावै नहीं लाल गुंज की माल ॥ ४२ ॥  
 गुन औगुन कौ तनकऊ प्रभु नहिँ करत विचार ।  
 केतकि कुसुम न आदरत हर सिर धरत कपार ॥ ४३ ॥  
 भाल लाल बेंदी दिए उठे प्रात अलसात ।  
 लोनी लाजनि गड़ि गईं लखैं लोग मुसकात ॥ ४४ ॥  
 जौतैं पहिरै सुंदरी सो दुति अधिक उदेतु ।  
 तेरे सुबरन रूप तैं रूपौ सुबरन होतु ॥ ४५ ॥  
 भजे अँधारी रैन मैं भयो मनोरथ काज ।  
 पूरे पूरब पुन्य तैं परयो परावन आज ॥ ४६ ॥  
 निज बल कौं परिमान तुम तारे पतित बिसाल ।  
 कहा भयौ जु न हौं तरतु तुम खिस्थाहु गोपाल ॥ ४७ ॥  
 कर धरि काँधैं कंत के चलै लटपटी चाल ।  
 थकित करति पथिकनि सबनि थकित पंथ मैं बाल ॥ ४८ ॥  
 नैकु न थाकत पंथ मैं चलैं जु कोस हजार ।  
 चंचल लोयनि-हयनि पर भए जात असवार ॥ ४९ ॥  
 ललित नाक नथुनी बनी चुनी रहौ लचकाइ ।  
 गज-मुकतनि के बिच परयो कहाँ कहाँ मन जाइ ॥ ५० ॥

भूठें हों ब्रज में लग्यौ मोहिं कलंक गोपाल ।  
 सपनैं हूँ कबहूँ हिएं लगे न तुम नंदलाल ॥ ५१ ॥  
 चंद-किरनि लगि बाल-तन उठै आगि अति जागि ।  
 परस करत दिनकर किरनि ज्यों दरपन में आगि ॥ ५२ ॥  
 दसा सुनैं निज बाग की लाल मानिहौ भूठ ।  
 पावस रितुहूँ में लखैं डाढ़े ठाढ़े दूठ ॥ ५३ ॥  
 तरनि-किरनि झलमलित मुख लाली ललित कपोल ।  
 प्यास लगावति दृगनि में प्यासी बाल अमोल ॥ ५४ ॥  
 लाल तिहारे संग में खेलै खेल बलाइ ।  
 मूंदत मेरे नैन हौ करनि कपूर लगाइ ॥ ५५ ॥  
 खेलत चोरमिहीचिनी परे प्रेम पहिचानि ।  
 जानी प्रगटत परसतैं तिय-लोचन पिय-पानि ॥ ५६ ॥  
 खेलत खेल सखीनि में उतै धूरि अवगाह ।  
 पलक न लागति एक पल इतै नाह-मुख-चाह ॥ ५७ ॥  
 निडर बटोही वाट में ऊखनि लेत उखारि ।  
 अरे गरीब गँवार तैं काहै करत उजार ॥ ५८ ॥  
 मेरैं सिर कैसी लगै यौ कहि बांधी पाग ।  
 सुंदरि रति विपरीत में प्रगट कियौ अनुराग ॥ ५९ ॥  
 नहिँ सुहाइ परगोत है गोत आपनौ पाइ ।  
 बिदा करी कुल-कानि की नैननि नयन बसाइ ॥ ६० ॥  
 शोषम हूँ रितु मैं भरी दुहूँ कूल पैराइ ।  
 खारे जल की बहति है नदी तिहारै गाँइ ॥ ६१ ॥  
 दियो हिए सौं मिलि चलयौ नैन चले मिलि नैन ।  
 इतै उतै मारी फिरै लाज कहूँ ठहरै न ॥ ६२ ॥  
 बसिबे कौं निज सरवरनि सुर जाकौं ललचाहिँ ।  
 सो भराल बक-ताल में पैठन पावत नाहिँ ॥ ६३ ॥

अद्भुत या धन कौ तिमिर मो पै कहाँ न जाइ ।  
 ज्यों ज्यों मनिगन जगमगत त्यों त्यों अति अधिकाइ ॥ ६४ ॥  
 कहा दवागिनि कैँ पियँ कहा धरँ गिरि धीर ।  
 बिरहानल मैं बरत जो बूढ़त लोचन-नीर ॥ ६५ ॥  
 सतरौंहीं भौंहनि नहीं दुरै दुराएँ नेह ।  
 होति नाम नंदलाल कौ नीपमाल सी देह ॥ ६६ ॥  
 सूखी सुता पटेल की सूखी ऊखनि पेखि ।  
 अब फूली फूली फिरै फूली अरहरि देखि ॥ ६७ ॥  
 चपल चित्त बेध्यौ निरखि याही डरनि दुराति ।  
 नैन बान वै देखि कै लाज नहीं ठहराति ॥ ६८ ॥  
 भलौ एक मनहीं गह्यौ सज्जनता कौ नेम ।  
 दृगनि मारि घाइल कियौ तासौं बांधत प्रेम ॥ ६९ ॥  
 कोटि कोटि मतिराम कहि जतन करौ सब कोइ ।  
 फाटे मन अरु दूध मैं नेह न कबहूँ होइ ॥ ७० ॥  
 पानि पियूख-पयोधि मैं नैक नहीं ठहराइ ।  
 नैन-मीन इक पलक मैं मन-जहाज गिलि जाइ ॥ ७१ ॥  
 पानिप-पूर-पयोधि मैं रूप-जाल बगराइ ।  
 नैन-मीन ए नागरिन बरबट बांधत आइ ॥ ७२ ॥  
 कंटक काढ़त लाल की चंचल चाहनि चाहि ।  
 चरन खँचि लीनौ तिया हँसि भूठें करि आहि ॥ ७३ ॥  
 सुबरन बरन सुबास जुत सरस दलनि सुकुमार ।  
 ऐसे चंपक कौं तजै तँहीं भौर गँवार ॥ ७४ ॥  
 देखै हूँ बिन देखि हूँ लगी रहै अति आस ।  
 कैसैं हूँ न बुझाति है ज्यों सपने की प्यास ॥ ७५ ॥  
 सखिनि दियौ उपदेस जो नहिँ कैसेहुँ ठहरात ।  
 नवल-नेह-चित-चीकनैं ढरकि तोय लौं जात ॥ ७६ ॥

सौंहनि करि पाइनि परगौ तेरें रिसै उदेति ।  
 नाह-नेह तो मैं लखौ तूं कत रखी होति ॥ ७७ ॥  
 भौंहनि संग चढ़ाइयौ कर गहि चाप मनोज ।  
 नाह-नेह साथहिं बढ़गौ लोचन लाज उरोज ॥ ७८ ॥  
 लई जु पीर जनाइ कै करि मिलाप की आस ।  
 मन उड़ात अजहूँ रहै ऊंची उहीं उसास ॥ ७९ ॥  
 नैन मिली मन हूँ मिली वातनि मिली बनाइ ।  
 क्यों न मिलावति देह सौं देह रहचटौ लाइ ॥ ८० ॥  
 लाज छुटो गेह्यौ छुट्यौ सुख सौं छुट्यौ सनेह ।  
 सखि कहियौ वा निठुर सौं रही छूटिबैं देह ॥ ८१ ॥  
 दुरजन वे निंदत रहैं गुरुजन गारी देत ।  
 सहियत बोल कुबोल ए लाल तिहारें हेत ॥ ८२ ॥  
 लगे लूत के जाल ए लखौ लसत इहिं भौन ।  
 जानि कुहू-रजनी मनौ कियौ नखत-गन गौन ॥ ८३ ॥  
 मेरे तन के रोम ए मेरे नहीं निहान ।  
 उठि आदर अगमन करें करौं कौन बिधि मान ॥ ८४ ॥  
 अनमिख लोचन बाल के यातैं नंद-कुमार ।  
 गई मीच परसत पजरि विरहानल की भार ॥ ८५ ॥  
 जलदि निकासी रैन दिन रहै नैन-भर लागि ।  
 बाढ़ति जाति बियोग की बिधुत की सी आगि ॥ ८६ ॥  
 मौर नूत नूतन रहैं देखि धरैं क्यों धीर ।  
 मनौ मनोज महीप कै तीरनि भरे तुनीर ॥ ८७ ॥  
 दियै देह-दीपति गयौ दीप बयारि बुझाइ ।  
 अंचल-आट किए तऊं चली नबेली जाइ ॥ ८८ ॥  
 ऐसे बोलौ बोल बलि जैसे याहि सुहात ।  
 बेलि नबेली फनक की झुकति तनकही बात ॥ ८९ ॥

सारी लटकति पाट की बिलसति फुँदी लिलार ।  
 मनौ रूप-मंदिर वँधे सुंदर बंदनवार ॥ ६० ॥  
 पति आयौ परदेस तैं हिय हुलसी अति बाम ।  
 टूक टूक कंचुक कियौ करि कमनैती काम ॥ ६१ ॥  
 लाल तिहारे नैन-सर अचिरज करत अचूक ।  
 बिन कंचुक छेदे करें छाती छेदि छट्क ॥ ६२ ॥  
 पिय के दरपन मैं निरखि प्रतिबिंबित निज रूप ।  
 बाल लाल-मुख लखि भई रिस भरि भौह अनूप ॥ ६३ ॥  
 और बात कहियै कहा सुनियै नंद-कुमार ।  
 विरह आच सांचे भए याके अंग अंगार ॥ ६४ ॥  
 ललित लाइ की लपट सी चली जाति जहँ नारि ।  
 विरह-अग्नि की भार तहँ जारि जात भोकारि ॥ ६५ ॥  
 जहाँ तहाँ रितुराज मैं फूले किंसुक-जाल ।  
 मानहु मान मर्तग कै अंकुस लोहू लाल ॥ ६६ ॥  
 बितैं सिसिर रितु-रजनि कै मधुर प्रताप-सुवैन ।  
 जाग्यौ मैन-महीप सुनि पिक बंदिनि कै बैन ॥ ६७ ॥  
 होत दसगुनौ अंकु है हियें एक ज्यौं बिंदु ।  
 दियैँ डिठौना यौं बढ़ी आनन-आभा-इंदु ॥ ६८ ॥  
 तूँ सोने की सटक है रही और गुन पागि ।  
 बिनु लागैँ पीरहिँ करै हरै पीर उर लागि ॥ ६९ ॥  
 मान जनावति सबनि कौं मन न मान कौ ठाट ।  
 बाल मनावन कौं लखै लाल तिहारी बाट ॥ १०० ॥  
 नखतावलि नख इंदु मुख तनु-दुति दीप अनूप ।  
 होति निसा नंदलाल मन लखै तिहारौ रूप ॥ १०१ ॥  
 इतै उतै सचकित चितै चलै हुलावति बांह ।  
 डीठि बचाइ सखीनि की छिन इक निरखति छांह ॥ १०२ ॥

सांभ समै वा छैल की छलनि कही नहि जाइ ।  
 बिनु डर बन डरपाइ कै लियौ मोहि उर लाइ ॥१०३॥  
 राति अँधारी भभकि भुकि भूँठैं हीं भय भागि ।  
 ललित बाल मन भावती रही लाल-डर लागि ॥१०४॥  
 हम सौं तुम सौं लाल इत नैननि हीं कौ नेह ।  
 उत प्यारी की दृगनि कै सलिल सींचियति देह ॥१०५॥  
 जैतवार इहि मार सौं अकस करौ जिन चेत ।  
 भामिनि-भौंह कमान कै गोसा हीं गहि लेत ॥१०६॥  
 सुधा-मधुर तेरौ अघर सुंदर सुमन-सुगंधु ।  
 पीव-जीव कौ बंधु यह बंधु जीव कौ बंधु ॥१०७॥  
 पग जराइ की गूजरी नथुनी मुकुट सुठार ।  
 घने घेर कौ बांधरौ धूँधरवारे बार ॥१०८॥  
 वंदन तिलक लिलार मैं ऐसी मुख-छवि होति ।  
 रूप भौन मैं जगमगै मनौ दीप की ज्योति ॥१०९॥  
 मन तें नैननि कौ भली नैननि तैं मन-काज ।  
 द्वै दीपक की छांह लौं बीच बिलानी लाज ॥११०॥  
 पीन पयोधर-भार यह धरे छीन कटि-ऐन ।  
 छोटे मुख मैं लसत हैं बड़े बड़े ए नैन ॥१११॥  
 तेरे मुख की मधुरई जो चाखी चख चाहि ।  
 लगत जलज जंबीर सौ चंद चूक सौ ताहि ॥११२॥  
 तेरी मुख-छवि लखि लखै होत चंदता तूल ।  
 कंद खाइ कै चूसियै ज्यों रुखे कौ फूल ॥११३॥  
 निज नीचे कौं निरखि नित ऊंचे होत उरोज ।  
 यातें मुख के होत हैं नीचे नैन-सरोज ॥११४॥  
 ज्यों ज्यों ऊंचे होत हैं उरज बाल कै ऐन ।  
 सब सौतिनि कै होत हैं त्यों त्यों नीचे नैन ॥११५॥



जब जब चढ़ति अटानि दिन चंद-मुखी यह धाम ।  
 तब तब घर घर धरत हैं दीप बारि सब गाम ॥११६॥  
 छुवत परस्पर हेरि कै राधा नंद-किसोर ।  
 सब मैं वैई होत हैं चोर-मिहिचिनी चोर ॥११७॥  
 खंजन कमल चकोर अलि जिते मीन-मृग-ऐन ।  
 क्यों न बड़ाई कौं लहैं तरुनि तिहारे नैन ॥११८॥  
 अंसुवा वरुनी हूँ चलत जल चादर कै रूप ।  
 अमल कपोलनि की झलक झलकति दीप अनूप ॥११९॥  
 कुच तैं श्रम-जलधार चलि मिली रुमावलि-रंग ।  
 मनौ मेरु की तरहटी भयौ सितासित-संग ॥१२०॥  
 सरदागम पिय-आगमन जगी जोति मुख-इंदु ।  
 अंग अमल पानिप भयौ फूले दृग-अरविंद ॥१२१॥  
 मो मन सुक लौं उड़ि गयौ अब क्यों हूँ न पत्याइ ।  
 बसि मोहन बनमाल मैं रह्यौ बनाउ बनाइ ॥१२२॥  
 बेंदी ललित मसूर की लसति सलौनै भाल ।  
 मनौ इंदु कै अंक मैं इंदु-कामिनी-लाल ॥१२३॥  
 फिरि फिरि आवति द्वार तैं झूठैं झुकि अलसाति ।  
 लेति आगि तितनी बहू जो बीचहीं बुझाति ॥१२४॥  
 अमल कपोलनि मैं अरुन झलकति पीक अनूप ।  
 उठी मनौ रवि-किरन सौं आगि लपट कै रूप ॥१२५॥  
 बार बार वा गेह सौं बारि बारि लै जाति ।  
 काहे तैं बिन बातहीं बाती आजु बुझाति ॥१२६॥  
 नीठि बीठि आगें परै पैग परगौ जनु फंद ।  
 को न होति गति मंद है लखि तेरी गति मंद ॥१२७॥  
 नैन जोरि मुख मोरि हँसि नैसुक नेह जनाइ ।  
 आगि लैन आई हियै मेरे गई लगाइ ॥१२८॥

सुवरन बेलि तमाल सौं धन सौं दामिनि-देह ।  
 तूं राजति धनस्याम सौं राघे सरसि सनेह ॥१२६॥  
 है सांचै कैधौ भई मेरीई मति भंग ।  
 आजु बदलि काहें गयौ बदलि बसन तन रंग ॥१३०॥  
 सुरत-अंत सुख-समिह हूँ भोर भएँ निसि जागि ।  
 उर सोई लागी अज्यौ जो उर सोई लागि ॥१३१॥  
 दूनी मुख में छवि भई वेसरि धरी उतारि ।  
 हरि कै उर सोई लगी करत रसोई नारि ॥१३२॥  
 जब तें मिलि बरुनीनि सौं अच्छिनि की छवि अच्छ ।  
 जनु अवनीप अनंग कै तरल तुरंग सपच्छ ॥१३३॥  
 लसत बूंद अंसुवानि कै बरुनिनि छोर उदार ।  
 दृग-तुरंग-फूलनि मनौ भलकत मुकुत सुढार ॥१३४॥  
 मान हूँ मैं विनु भूषननि धरति अधिक छवि अंग ।  
 नैन तरंगनि तै भए तरल तुरंग सुरंग ॥१३५॥  
 ज्यौ ज्यौ छवि अधिकाति है नवल बाल-मुख-इंदु ।  
 त्यों त्यों मुरभत सौति कौ अमल वदन-अरविंदु ॥१३६॥  
 अंजन-जुत अंसुवानि की धार धसति जुग नैन ।  
 मनौ डोर मखतूल कौ बांधे खंजन मैन ॥१३७॥  
 बिंदु लसत अंसुवानि कै लाल भए दृग-कोर ।  
 देखै विन पिय चंद-मुख चिनगी चुगत चकोर ॥१३८॥  
 सपने मैं लालन चलत लखि रोई अकुलाइ ।  
 जागत हूँ पिय हिय लगी हिलकी तऊ न जाइ ॥१३९॥  
 पिय-आगम सुनि बाल-तन बाढ़े हरख-बिलास ।  
 प्रथम बूंद बारिद उठै ज्यौ बसुमती-सुवास ॥१४०॥  
 याके मन मैं जानियत कोऊ लग्यौ सभाग ।  
 कहत गान विन अरथ कौ प्रगट अरथ अनुराग ॥१४१॥

छाप तरौना नगनि की सोवत लगी कपोल ।  
 मनौ मदन की मोहिनी मूंगा-माल अमोल ॥१४२॥  
 मोकों तुम क्यों कहति है लै गोपाल कौ नाउँ ।  
 रिस-मिस नेह गोबिंद कौ कहति फिरै सब गाउँ ॥१४३॥  
 नर नारी सब जपत हैं घर घर हरि कौ नाउँ ।  
 मेरै मन धोखै कढ़त परति गाज ब्रज-गाउँ ॥१४४॥  
 पगनि परे पिय-पीठि पर परे नैन-जल द्रुति ।  
 साँची मनौ सनेह-रस गयौ मान-मन छूटि ॥१४५॥  
 पगनि पर्यौ लखि प्रानपति दिखौ मुग्ध तिय रोइ ।  
 कजल-छल मन-मलिनता ल्याए अँसुवा धोइ ॥१४६॥  
 इंदु-उपल सर बाल कौ कठिन मान में होत ।  
 देखै बिनु कैसें द्रवै तो मुख-इंदु-उदोत ॥१४७॥  
 भौंह बीच तिल तनक सै सोहत सुखमा संचि ।  
 दियौ डिठौना रीझि सौं मानहु विरचि विरंचि ॥१४८॥  
 चलत लाल कैं मैं कियौ सजनी हियौ पखानु ।  
 कहा करौं दरक्त नहीं भरै बियोग-कृसानु ॥१४९॥  
 चढ़ी रहै प्रति दिन छटा सखि सनेह सुख सोरि ।  
 लोचन पियत पियूष हैं प्रेसि पान पिय पौरि ॥१५०॥  
 कहा छपावति मुग्ध तिय बोलि चातुरी बोल ।  
 कहे देति अनुराग की कीरति कलित कपोल ॥१५१॥  
 बरसाइति बर कौं चहुं बहु बिधि पूजि बिसेखि ।  
 पूरत हैं मनकाम कौं काम-तरोवर लेखि ॥१५२॥  
 सहज बात ब्रूमत कछुक बिहँसि नवाई गोव ।  
 तरुन हियै तरुनी दई नई नेह की नीव ॥१५३॥  
 करति मनोरथ बहु बहू दगनि अनंद उदोत ।  
 उठत सीतलायत सखी सीतल हीतल होत ॥१५४॥

दसा हीन राधा भई सुनियै नंदकिसोर ।  
 दीपसिखा ली देखियति वारि-वयारि-भक्कोर ॥१५५॥  
 निसि दिन निंदति नंद है छिन-छिन सासु रिसाति ।  
 प्रथम भए सुत कौ बहू अंकहिं लेत लजाति ॥१५६॥  
 कुसुम-खेत कौ खेद सब कहत तिहारै रूप ।  
 ऊंचौ लेति उसास तन श्रम-जल-कलित अनूप ॥१५७॥  
 वांचत कुसुम कुसुंभ के रहे लागि अभिराम ।  
 कंटक छत छतियां छपै क्यों न छपावति वाम ॥१५८॥  
 जानति हैं वा खेत सौं आई बीनि कुसुंभ ।  
 कलित कंटकनि काय कुल कुसुम-कलित कुच-कुंभ ॥१५९॥  
 जानति खेत कुसुंभ के तेरी प्रीति अमोल ।  
 चुभत करनि कंटकनि तौ कत कंटकित कपोल ॥१६०॥  
 अब तेरौ वसिबौ इहां नाहिंन उचित मराल ।  
 सकल सूखि पानिप गयौ भयौ पंकमय ताल ॥१६१॥  
 तिय-पग पिय-अँगुरी परस भो उर आनंद-खानि ।  
 कह्यौ सु परि पिय-पीठि पर सुधा-सीत अँसुवानि ॥१६२॥  
 बिछुरत रोवत दुहुँनि की सखि यह बात लखै न ।  
 दुख-अँसुवा पिय-नैन मैं सुख-अँसुवा तिय-नैन ॥१६३॥  
 पग परिवौ मुरि बैठिबौ यहै तिहारे काज ।  
 तुम्हें मनावन कौ नई इहै मान की लाज ॥१६४॥  
 परसत हौं याकौं भई तन कदंब की माल ।  
 रह्यौ कहा परि पगनि मैं क्यों न अंक भरि लाल ॥१६५॥  
 नील-नलिन - दल - सेज मैं परी सुतनु - तनु - देह ।  
 लसै कसौटी मैं मनौ तनक कनक की रेह ॥१६६॥  
 मुख नीचें ऊंचें लसैं तरुनि-उरज उर मांह ।  
 मनौ मुदित मन कोक जुग पाइ कोकनद-छांह ॥१६७॥

पिय अपराध अनेक निज आखिनिहूँ लखि पाइ ।  
 तिय इकंत हूँ कंत सौ मानौ करत लजाइ ॥१६८॥  
 तो रसु रास्यौ रैन दिन सुख - समुद्र कैं सोत ।  
 याही तैं सौतीनि के ये अनखहु छत होत ॥१६९॥  
 निसि नियराति निहारियत इन कौँ मुख-अरविंदु ।  
 सखी एक यह देखियत तेरोई मुख - इंदु ॥१७०॥  
 उजियारी मुख - इंदु की परी उरोजनि आनि ।  
 कहा निहारति मुगध तिय पुनिपुनि चंदन जानि ॥१७१॥  
 दुबराई गिरि जातु है कंकन कामिनि बाह ।  
 उपदेसन ठहरात व्यौँ दुरजन के उर माह ॥१७२॥  
 मन है सुनियै लाल यह तनक तरुनि की बात ।  
 अँसुवा - उड़गन गिरत हैं होन चहत उतपात ॥१७३॥  
 कहति आपु हीं बैन है ऊख पियूष रसाल ।  
 कित बोलति कोकिल अली पुनि पुनि ब्रूँकति बाल ॥१७४॥  
 जिन मैं निसि दिन बसतु है तुम घन सुंदर नाह ।  
 क्यों न चलै तिय दृगनि तैं बहुल बाह परबाह ॥१७५॥  
 जलद स्याम निज नाम यह करत कहा इत आपु ।  
 जा उर नैकु बसौ करौ ताही कैं तन तापु ॥१७६॥  
 दिसि दिसि बिगलति मालती निसि नियराति निहारि ।  
 ऐसैं अतनु-अराम मैं भ्रमि भ्रमि भौर निबारि ॥१७७॥  
 नारि - नैन कौ नीर अरु तरुनी तीर उतंग ।  
 बढ़त सरित परवार कैं गिरत एकही संग ॥१७८॥  
 बाल सखिनि की सीख तैं मान न जानति ठानि ।  
 पिय बिनु अगमन भौन मैं बैठी भौंहनि तानि ॥१७९॥  
 परिकर पंकज के किए नैननि राज - बिलास ।  
 मैन मित्र मंत्री मिरग खंजन किए खवास ॥१८०॥

लाल जनायौ मैं तुम्हें लागन चहत कलंक ।  
 चंद-मुखी वह चंद सों भव चित्तवति निरसंक ॥१८१॥  
 बड़े हमारे दृग कहौ तुम कहि सकौ सु मैं न ।  
 पिय नैननि भीतर सदा बसत तिहारे नैन ॥१८२॥  
 आभा तरिवन लाल की परी कपोलनि आनि ।  
 कहा छपावति चतुर तिय कंत-दंत-छद जानि ॥१८३॥  
 गहि कोमलता सरसता सेनौ होइ सुगंधु ।  
 तबहुं कवहुं न होइ सखि तेरे तन कौ बंधु ॥१८४॥  
 दुख दीनै हूं सुजन जन छोड़त निज न सुदेस ।  
 अग्रह डारियत आगि मैं करत सुवासित केस ॥१८५॥  
 तू राखो करि लाल है निज उर मैं बनमाल ।  
 तैं राख्यौ करि लाल है कंठमाल कौ लाल ॥१८६॥  
 जगै जोन्ह की जोति यौ छपै जलद की छांह ।  
 मनौ छीर-निधि की उठै लहरि छहरि छिति मांह ॥१८७॥  
 अभिनव जोवन-जोति सौं जगमग होत बिलास ।  
 तिन कैं तन पानिप बढ़ें पिय कैं नैननि प्यास ॥१८८॥  
 वासन कौ पानिप बढ्यौ तन पानिप की आस ।  
 मिटी पथिक की वदन तैं लगी दृगनि मैं प्यास ॥१८९॥  
 दिनकर-तनया - श्याम - जल द्वै घट भरे बनाइ ।  
 तार्कै भर गरुए भए हरए धारति पाइ ॥१९०॥  
 चलत सुन्यौ परदेस कौं हियरौ रखौ न ठौर ।  
 लै मालिनि मीतहिं दियौ नव रसाल कौ मौर ॥१९१॥  
 प्यौ राख्यौ परदेस तैं करामात अधिकाइ ।  
 कनक-कलस पानिप भरे सगुन उरोज दिखाइ ॥१९२॥  
 सुन्यौ माइकै तैं बहू आयौ बाभन कंत ।  
 कुसल पूछिवे के मिसनि लीनौ बोलि इकंत ॥१९३॥

श्रम-जल-कन भलकन लगे अलकनि कलित कपोल ।  
 पलकनि रस छलकन लगे ललकन लोचन लोल ॥१-६४॥  
 गौने की चरचा चलें दिए तहां चित बाल ।  
 अधमूंड़ी अखियानि सौं गूंड़ी गूंढति माल ॥१-६५॥  
 सखी तिहारे नेह के होत घरहिँ घर घेर ।  
 पीतम - तन - पानिप परें फैलि रह्यौ चहुँ फेर ॥१-६६॥  
 तूं न करति मन - भावती रति बिपरीत विचार ।  
 ह्वै सूधे सुरत में बिछियन कौ भनकार ॥१-६७॥  
 कहति सांच तूं भावती मेरें चित अति प्रीति ।  
 किए बिना बिपरीत रति हियें न होति प्रतीति ॥१-६८॥  
 दान - वीर - रस के सखी तेरे नैन निकेत ।  
 दान-समै मन दान है हंसि उछाह कहि देत ॥१-६९॥  
 रोस किए कौसौ करें सखी तिहारे नैन ।  
 सहज मधुर मुसिक्यानि में हनत मानुसनि ऐन ॥२००॥  
 चंचलता तो चखनि की कही न जाइ बनाइ ।  
 जिन्हें चाहि चंचल महा चितौ अचल है जाइ ॥२०१॥  
 तेरें अंगनि लाल छवि मुख-मयंक सुख माहिँ ।  
 त्यों चकोर लखि लाल के क्यौं न बाल ललचाहि ॥२०२॥  
 नंदलाल के रूप पर रीझि परी इक बारि ।  
 अधमूंड़ी अखियनि दर्ई मूंड़ी प्रीति उचारि ॥२०३॥  
 कोंपनि तैं किसलय जबै होहिँ कलिनि तैं कौल ।  
 तब चलाइयै चलन की चरचा नायक नौल ॥२०४॥  
 कामिनि दामिनि-दमक-सी बरनि कौन पै जाइ ।  
 डीठिन हीं ठहराइयै डीठि नहीं ठहराइ ॥२०५॥  
 रात्यों दिन जागति रहै अगनि लगनि की मोहिँ ।  
 मो हिय में तूं बसतु है आंच न पहुँचति तोहिँ ॥२०६॥

चलन लगी अँखियां चपल चलन लगी लखि छाहँ ।  
 तन जोवन धावन लग्यौ मन भावन मन माहँ ॥२०७॥  
 बिनु देखैं दुख के चलैं देखैं सुख के जाहिँ ।  
 कहौ लाल इन दृगनि के अँसुवा क्यैं ठहराहिँ ॥२०८॥  
 बरसाइति मैं सखिनि हठि साजे अंग सिंगार ।  
 पधिले कंचन-आभरन लगनि अगनि की भार ॥२०९॥  
 डारि तिहारे नेह मैं अगनि लगनि की मैन ।  
 तलफत याके मीन से लाल सखोने नैन ॥२१०॥  
 कौन बसत हैं कौन मैं यैं कछु कही परै न ।  
 पिय - नैननि तिय - नैन हैं तिय - नैननि पिय - नैन ॥२११॥  
 लाल बाल कौ उर कठिन उरजहिँ निपट कठोर ।  
 ताहि छेदि तीछन गई तेरी ईछन - कोर ॥२१२॥  
 बाल निहाल भई लखैं ललित लाल मुख-इंदु ।  
 मनु पियूष बरषा भई नैननि भलके बिंदु ॥२१३॥  
 तिय-हिय लौं पहुँचै कहों सीख सखिनि की बात ।  
 बिरह-आंच जरि जाति है अन-समीपहिँ जात ॥२१४॥  
 भुज फुलेल लावत सखी कर चलाइ सुसिक्खाइ ।  
 गाढ़ै गह्यौ उरोज पिय विहसी भौह चढ़ाइ ॥२१५॥  
 इंद्र - जाल कंदर्प कौ कहै कहा मतिराम ।  
 आगि - लपट बरषा करै ताप धरै घनस्याम ॥२१६॥  
 दुहँ अटारिनि मैं सखी लखी अपूरव बात ।  
 उतै इंदु मुरझातु है इतै कंज कुम्हिलात ॥२१७॥  
 जोवन मैं अँखियां सखी परीं लाज के जेल ।  
 लरिकाई के सौरियत चोर मिहिचिनी-खेल ॥२१८॥  
 राधा के दृग खेल मैं मूँदे नंदकुमार ।  
 करनि लगी दृग कोर सो भई छेदि उर-पार ॥२१९॥



मैं मूंदति हँ खेल मैं तेरे लोचन बाल ।  
 मेरे कर अति प्यार सौं चूमत हँ नँदलाल ॥२२०॥  
 सुरभि-लोभ-जुत अलिनि मैं सहत अघर कौ रंग ।  
 मनौ तरनि तनया मिली बानी गंग-तरंग ॥२२१॥  
 सेत बसन मैं यौं लगैं उघरत गोरे गात ।  
 उडै आगि ऊपर लगी ज्यौं विभूति अवदात ॥२२२॥  
 रूप-जाल नँदलाल कैँ परि करि बहुरि छटैं न ।  
 खंजरीट मृग मीन से ब्रज-वनितनि के नैन ॥२२३॥  
 जिन कैँ सील समान है सांचे होत सु-मित्र ।  
 नेही चंचल चखनि कौ चाहौ चंचल चित्त ॥२२४॥  
 खिन मैं प्रफुलित होत हँ खिन मैं मुकुलित होत ।  
 इंदीबर अरविंद से चख मुख इंदु-उदोत ॥२२५॥  
 ग्रीष्म हूँ रवि तपत हूँ रहै जलद जनु भूमि ।  
 तपी हगनि सीतल करै गांड निकट की भूमि ॥२२६॥  
 नैन निवासी सौं चलयौ मन परदेस अनेह ।  
 लखति आज अनभावती सपने नैननि गेह ॥२२७॥  
 आजुहिँ चलयौ विदेस कौं तजि सनेह चित-चोर ।  
 लखति भरैं घर भावती जमी घास चहुँ ओर ॥२२८॥  
 खरी दूबरी सेज मैं सखी निहारहि नीठि ।  
 परसति नहीं डराति सी जरिबे कैँ डर डीठि ॥२२९॥  
 लखति एकटक सांवरी मूरति कौ मुख-इंदु ।  
 रीझ-भार अँखियां थकीं झलके सम-जल-बिंदु ॥२३०॥  
 चलौ लाल उहिँ बाग मैं लखौ अपूरब केलि ।  
 आलबाल घन-समय कौ ग्रीष्म ऋतु की बेलि ॥२३१॥  
 कहा कहाँ वाकी दसा निठुर कही नहिँ जाइ ।  
 अंग अँगारिन कौ मिटै रंग आंच अधिकाइ ॥२३२॥

बड़वानल से जे लगे अलिनि करत उपचार ।  
 मिलत लगे घनस्याम-ठर ते अँग ज्यों घनसार ॥२३३॥  
 गई छबीली छूटि वह छल सौं नेह जनाइ ।  
 कहौ कौन के लै छला आए लाल छलाइ ॥२३४॥  
 पियराई तन में परी पानिप रह्यौ न देह ।  
 राख्यौ नंदकुँवार तैं करि कुँवार कौ मेह ॥२३५॥  
 बांधी दृग-डोरानि सौं घेरी बरुनि समाज ।  
 गई तऊ नैनानि तैं निकसि नदीसी लाज ॥२३६॥  
 लोक-लाज कुल-कानि सौं गरब करौ जिन बीर ।  
 ऐन मैन ब्रजराज के नैन मैन के तीर ॥२३७॥  
 क्यों न फिरै सब जगत में करत दिगविजै मार ।  
 जाके दृग-सावंत-सर कुबलय जीतनवार ॥२३८॥  
 नेह छुटै हूं रावरौ यातैं जीवति बाल ।  
 चलत सहज हूं गलिनि में तमहिँ बिलोकति लाल ॥२३९॥  
 केलि भौन की देहरी करी बाल छवि नौल ।  
 काम-कलित हिय कौल है लाज ललित दृग-कौल ॥२४०॥  
 नित उठि ऐसे रूप सौं आवत है ब्रजराज ।  
 सो तुम सौं पिय रिस करै ताके हियैं न लाज ॥२४१॥  
 तुम सौं कीजै मान क्यों ब्रजनायक मन-रंज ।  
 बात कहत यौ बाल के भरि आए दृग-कंज ॥२४२॥  
 ढीली बांहनि सौं मिली बोली कछु न बोल ।  
 सुंदरि मान जनाइ यौ लियौ प्रानपति मोल ॥२४३॥  
 आवत उठि आदर कियौ बोले बोल रसाल ।  
 बांह गहत नंदलाल कैं भए बाल दृग लाल ॥२४४॥  
 बेनी गूंदत एक की नंदलाल चित-लो ल ।  
 चूमत प्यारी बाल के बिहँसत गोल कपोल ॥२४५॥

मन भावन सौं व्याह की सुनी सलोनी बात ।  
 अँगिया में न उरोज अरु आनंद उर न समात ॥२४६॥  
 लखि जैहैं ब्रज गाँव की सबै चतुर हैं बाल ।  
 छतिया नख-छत देहु जिन छँल छबीले लाल ॥२४७॥  
 भलौ न केतकि रूख यह सजनी गेह-अराम ।  
 बसन फटैं कंटक लगैं निसि दिन आठौ जाम ॥२४८॥  
 जु पै द्वार में बसत तौ पथिक जाइ जिन सोइ ।  
 मेरौ घर सूनौ इहां चोरनि कौ डर होइ ॥२४९॥  
 प्रोषम रितु में देखि कै बन में लगी दँवारि ।  
 बड़ी अपूरब बात है मन में जरति गँवारि ॥२५०॥  
 जरद भई तिय हरद-रँग बाढ़ैं दरद अतूल ।  
 लागे बीतन संगहीं कुसुम-फूल हिय-फूल ॥२५१॥  
 छरी सपन्नव लाल-कर लखि तमाल की बाल ।  
 मुरझानी हिय साल धरि फूल - माल सी हाल ॥२५२॥  
 लसति गूजरी ऊजरी विलसत लाल इजार ।  
 हिण्ड हजारनि को धरै बैठी बाल बजार ॥२५३॥  
 कहत तिहारौ रूप सखि यह पैड़े कौ खेद ।  
 ऊँची लेति उसास है कलित सकल तन स्वेद ॥२५४॥  
 लै आवति हैं सेज इत तेरी प्रीति गोपाल ।  
 बात कहौ अंकहिँ भरौ दुख न दीजियै लाल ॥२५५॥  
 कैसे ल्याऊँ हैं इहां है जित नंदकिसोर ।  
 दिन हूँ मैं मुख चंद कौ लखि ललचात चकोर ॥२५६॥  
 औरनि कैं पाइनि दियौ नाइनि जावक लाल ।  
 प्रानपियारी रावरी पेखति तुम्हैं गोपाल ॥२५७॥  
 पिय-बियोग तिय-दृग-जलधि जल-तरंग अधिकाइ ।  
 बरुनि - मूल - बेला परसि बहुरौं बहुरि बिलाइ ॥२५८॥

धन कैं हेत विलासिनी रहै सवारे बेस ।  
 जो तिथ को हिय में बसै सो पिय बसै विदेस ॥२५६॥  
 कोऊ करौ अनेक यह तजौ न टेक गोपाल ।  
 निसि औरनि कैं पग परौ दिन औरनि कैं लाल ॥२६०॥  
 कंत कहा सौंहनि करौ जानि पर्यौ अब नेह ।  
 दैन कह्यौ सो बिनु दियैं जान न पैहौ गेह ॥२६१॥  
 आई गौने कालिह हौं सीख्यौ कहा सयान ।  
 अबहीं तैं रुसन लगी अबहीं तैं पछितान ॥२६२॥  
 जोरत हूँ सजनी बिपति तोरत बिपति-समाज ।  
 नेह कियौ बिनु काज पुनि तेह कियौ बिनु काज ॥२६३॥  
 लख्यौ न कंत सहेट में लखत नखत कौ राइ ।  
 अमल कमल सौ बाल कौ बदन गयौ कुम्हिलाइ ॥२६४॥  
 तिय कौं मिल्यौ न प्रान-पति सजल-जलद-तन नैन ।  
 सजल जलद लखि कै भए सजल जलद से नैन ॥२६५॥  
 बिहँसि केलि-मंदिर गई लख्यौ न जिय कौ नाथ ।  
 नैन करनि तैं जल बलय गिरे एकही साथ ॥२६६॥  
 साहस करि कुंजनि गई लख्यौ न नंदकिसोर ।  
 दीप - सिखा सी थरहरी लगैं बयारि भकोर ॥२६७॥  
 कत न कंत आयौ सखी लाजनि वृष्णि सकै न ।  
 नवल बाल पलिका परी पलक न लागत नैन ॥२६८॥  
 पीउ न आयौ नौद कौ मूंदे लोचन बाल ।  
 पलक उघारे पलक में आयौ होइ न लाल ॥२६९॥  
 कंत-बाट लखि गेह कौ कुंज देहरी आइ ।  
 ऐहैं पीव विचारि यौ नारि फेरि फिरि जाइ ॥२७०॥  
 लखत बाट पिय की तिया अंगरानी अंग मोरि ।  
 पैढ़ि रही पलिका मनौ डारी मदन मरोरि ॥२७१॥

डीठि बचाइ सखीनि की केलि - भौन में जाइ ।  
 पौढ़ि परै पलिका पलक पलक अन्नंग अधिकाइ ॥२७२॥  
 सब सिंगार सुंदरि सजै वैठी सेज बिछाइ ।  
 भयौ द्रौपदी कौ बसन वासर नहिँन बिहाइ ॥२७३॥  
 मन भावन के मिलन कौ करै मनोरथ नारि ।  
 धरै पौन के सासुहँ दिया भौन को वारि ॥२७४॥  
 पिय-मिलाप कै हेत तिय सजे उछाह सिंगार ।  
 दृग कमलनि के द्वार में बांधे वंदनवार ॥२७५॥  
 अली चली नवलाहिँ लै पिय पै साजि सिंगार ।  
 क्यों मतंग अँड़दार कौं लिए जात गँड़दार ॥२७६॥  
 जेवन - मद गज - मंद - गति चली वाल पति - गेह ।  
 पगनि लाज - आँदू परी चढ्यौ महावत नेह ॥२७७॥  
 सजि सिंगार सेजहिँ चली वाल जहां पति - प्रान ।  
 चढ़त अटारी की सिढ़ी भई कोस परिमान ॥२७८॥  
 स्याम बसन में स्याम निसि दुरै न तिय की देह ।  
 पहुँचाई चहुँ ओर घिरि भौर - भीर पिय-गेह ॥२७९॥  
 मलिन करी छवि जोन्ह की तन छवि सौं बलि जाँउ ।  
 क्यों जैहै पिय पै सखी लखि जैहै सब गाँउ ॥२८०॥  
 जेठ मास की दुपहरी चली वाल पिय-भौन ।  
 आगि - लपट तीखन लुवै भए मलय के पौन ॥२८१॥  
 नागरि सकल सिंगार करि चली प्रान - पिय पास ।  
 बाढ़ि चली बिहँसनि मनौ बारिधि-बीचि-बिलास ॥२८२॥  
 क्यों सहिहै सुकुमारि वह पहिलौ विरह गोपाल ।  
 जब वाकै चित हित भयौ चलन लगे तब लाल ॥२८३॥  
 अबहीं तौ मिलि मोहिँ सखि चलत आजु ब्रजराज ।  
 अँसुवनि राखति रोकि तिय जियहि निकासति लाज ॥२८४॥

फूली नागरि कमलिनी उड़ि गए मित्र मलिन ।  
 आयौ मित्र बिदेस तैं भयौ सुदिन आनंद ॥२८५॥  
 भरीं भांवरै सांवरै रास - रसिक रस - जान ।  
 तिनहीं मैं मनु भवतु है है बाँडर कौ पान ॥२८६॥  
 चलत पीय परदेस कौ बरजि सकौ नहिं तोहि ।  
 लै ऐहौ आभरन जौ जीवत पैहौ मोहि ॥२८७॥  
 सजनी मेरौ मन पर्यौ मन - मोहन कै अंग ।  
 छटपटात छूटत न ज्यों पंजर पर्यौ पतंग ॥२८८॥  
 जा दिन तैं गौनौ भयौ आई बाल रसाल ।  
 ता दिन तैं विरहिनि भई उर मोतिन की माल ॥२८९॥  
 सपनै हूं मन - भावतौ करत नहीं अपराध ।  
 मेरे मन ही मैं सखी रही मान की साध ॥२९०॥  
 दच्छिन नायक एक तुम नंदलाल ब्रजचंद ।  
 फुलए ब्रज - वनितानि के दृग - इंदीवर - वृंद ॥२९१॥  
 निलज नैन कुलटानि के आइ बसे ब्रजराज ।  
 हिए तिहारे तैं सकल मारि निकारी लाज ॥२९२॥  
 पियत रहौ अधरानि कौ रसु अति मधुर अमोल ।  
 तातैं मीठे कढ़त हैं बाल बदन तैं बोल ॥२९३॥  
 लोचन पानिप ढिग सजी लट बंसी परबीन ।  
 मो मन बार - बिलासिनी फासु लियौ मनु मीन ॥२९४॥  
 या मैं कौन सयान है मोहनलाल सुजान ।  
 आपु करत अपराध हूं आपुहिं पुनि अभिमान ॥२९५॥  
 पिय-मिलाप कौ सुख सखी कहौ न जाइ अनूप ।  
 सौतुक तौ सपनौ भयौ सपनौ सौतुक रूप ॥२९६॥  
 चित्रहुं मैं सखि जाहि लिखि होत अनंत अनेंद ।  
 नैन कुवलयनि सौं कहूँ सो लिखिबौ ब्रजचंद ॥२९७॥

वाकौ मन लीने लला बोलो बोल रसाल ।  
 भुकति तनक वह बात में कनक बेलि वह बाल ॥२८८॥  
 सखी सलोनी देह में सजे सिँगार अनेक ।  
 कजरारी अँखियानि में भूल्यो काजर एक ॥२८९॥  
 सरद चांदनी में प्रगट होत न तिय के अंग ।  
 सुनत मंजु मंजीर अब सखी न छोड़ति संग ॥३००॥  
 सखी सरस रस-केलि में आपुनयौ सुधि जाति ।  
 कंत संग हेमंत की छिन सी राति सिराति ॥३०१॥  
 लाल तिहारे विरह तैं माघ मास की राति ।  
 करि कपूर की कीच सो सखी समीपहिँ जाति ॥३०२॥  
 कहा जनावति चातुरी कहा चढ़ावति भौह ।  
 अधनिकरे अखरानि सौँ सौहैं कीजै सौँह ॥३०३॥  
 लाल निहारै नैकुहीं नैन तिहारे तीर ।  
 वाके कंचुक - कलित कुच कांपत जोध अधीर ॥३०४॥  
 बाल रही इकटक निरखि लाल - बदन अरबिंदु ।  
 सियराई अँखियनि परी पियराई मुख - इंदु ॥३०५॥  
 पिय समीप कौ मुख सखी कहै देत ये बैन ।  
 अबल अंग निरबल बचन नवल सुनोंदे नैन ॥३०६॥  
 खाटे फल आगै धरे सखी आनि मुसिक्याइ ।  
 पिय समीप प्यारी प्रिया रही सकुचि सिर नाइ ॥३०७॥  
 पिय आयौ परदेस तैं बहुतै द्यौस बिताइ ।  
 सखी छठाई पास तैं भूठे हीं जमुहाइ ॥३०८॥  
 पासे गर्भवती तिया सिथिल हाथ ढरकाइ ।  
 हँसत लाल - लोचन लखै लोचन रही नवाइ ॥३०९॥  
 ध्यान करत नंदलाल कौ नए नेह में बाम ।  
 तनु बूड़त रँग पीत में मन बूड़त रँग स्याम ॥३१०॥

पिय आयौ परदेस तै' हिय मैं आयो प्रान ।  
 मिलत विरहिनी कै भयौ छिन जनु जुग परिमान ॥३११॥  
 कहा भयौ मेरी हितू है तुम सखी अनेक ।  
 सपनै मिलवत नाथ कौ नौद आपनी एक ॥३१२॥  
 कंप प्रसेद षडै चडै भौह मनोभव चाप ।  
 अपने पिय सौं जानियत सपनै करति मिलाप ॥३१३॥  
 प्यारी की मुसुक्यानि सी सरद - जेन्ह तू है न ।  
 वह नैननि सीतल करै तू कत जारति नैन ॥३१४॥  
 अली चली कहु कौन पै बड़े कौन के भाग ।  
 उलट्यौ कंचुक कुचनि पर कहे देत अनुराग ॥३१५॥  
 सकुचि न रहियै साँवरे सुनि गरवीले बोल ।  
 चढ़ति भौह विकसत नयन बिहँसत गोल कपोल ॥३१६॥  
 मनभावन कौ भावती भेंटति रति - उत्कंठ ।  
 बाँही छुटै न कंठ तै' नाहीं छुटै न कंठ ॥३१७॥  
 बिरी अधर अंजन नयन मिहिँदी पग अरु पानि ।  
 तन कंचन के आभरन नीठि परत पहिचानि ॥३१८॥  
 कहा लाज कुल-कानि सौं लोक-लाज किन जाइ ।  
 कुंजबिहारी कुंज मैं कहूँ मिलैं मुसिकाइ ॥३१९॥  
 लखी अपूरव लाल मैं वाकी दशा बनाइ ।  
 हियरै' है सुधि रावरी हियरौ गयौ हिराइ ॥३२०॥  
 सरद - चंद की चांदनी जारि डारि किन मोहि ।  
 वा मुख की मुसिक्यानि सी क्यों हूँ कहौ न वोहि ॥३२१॥  
 मोहिँ रसाल की मंजरी क्यों न करी करतार ।  
 सुंदर औन समीप जौ राखै नंद - कुमार ॥३२२॥  
 बिकल लाल कौ हाल तू क्यों न विलोकति आनि ।  
 बोलि कोकिलनि सौं कहैं बोल तिहारे जानि ॥३२३॥



सुजस - भोज सौ साह - सुत सिवा सूर - सिरदार ।  
 सरद चंद आतप कियौ सुचि आतप इक बार ॥३२४॥  
 पिसुन - बचन सबजन चितै सकै न फोरि न फारि ।  
 कहा करै लगि तोय मैं तुपक तीर तरवारि ॥३२५॥  
 निहवै नखत निहारियत मथुनी - मुकत - प्रकास ।  
 कैसैं करि पावै कहा नीच न नाक - निवास ॥३२६॥  
 खेत तिहारौ धान कौ यौ बूझत मुसिक्याइ ।  
 यहौ हमारौ है कछौ सघन ज्वारि दरसाइ ॥३२७॥  
 राखै भरि दुपहरि सखी सघन छांह मैं गोइ ।  
 सहै घाम का कार की जार खेत जुन होइ ॥३२८॥  
 भौंह - कमान कटाछ सर समर भूमि बिचलै न ।  
 लाज तजै हूं दुहुँचि के सलज सुभट से नैन ॥३२९॥  
 अरुन बसन निकरी पहरि पावस मैं छविखानि ।  
 इंद्र - गोप सी गोपिका गोप - इंद्र लखि आनि ॥३३०॥  
 अति सुठार अति हीं बड़े पानिप भरे अनूप ।  
 नाक - मुकत नैनानि सौं होइ परी इहि रूप ॥३३१॥  
 कियौ और कौ सब कछू मान आपनौ लेइ ।  
 क्यौं न लहै संताप जौ भार आप सिर देख ॥३३२॥  
 लीनी तो अँखियानि उन औ मुसिक्यानि रसाल ।  
 तुहं लाल - लोचननि की लेहि लालसा बाल ॥३३३॥  
 सखी तिहारे हगनि की मधुर मंद मुसिक्यानि ।  
 बसति रहै निसि घौस हूं अब उनकी अँखियानि ॥३३४॥  
 रूप-सदन मिलि तन-बदन रदन रुचिर-रुचि होति ।  
 दामिनि मैं बिधु-बिंब जनु बिधु मैं दामिनि-जोति ॥३३५॥  
 मो जीवन तू कहतु है ब्रज-जीवन तू पीठ ।  
 जु पै जीव बिन जियत तौ धिग जीवन यह जीठ ॥३३६॥

प्रान निवासी तोहिँ तजि कब कौ कियौ उजार ।  
 तू अजहूँ लौं बसतु है प्रान कहा सु बिचार ॥३३७॥  
 तुरत दीठि लगि जाइगी हौं बिलखी अति आनि ।  
 अनखन है कै कीजियै अनख भरी अँखियानि ॥३३८॥  
 विषमय किधौं पियूषमय तेरी मृदु मुसिक्यानि ।  
 यहै मूरछित करति है यहै जियावति आनि ॥३३९॥  
 निज पग-सेवक समुझि करि करि उर तैं रिस दूरि ।  
 तेरी मृदु मुसिक्यानि है मेरी जीवन - मूरि ॥३४०॥  
 लाल अमोलक लालची करत कोटि मनुहारि ।  
 मंदिर आवत इंदिरा है न किवार गँवारि ॥३४१॥  
 तरु है रह्यौ करार कौ अब करि कहा करार ।  
 उर धरि नंद-कुमार कौ चरन-कमल सुकुमार ॥३४२॥  
 असन वरन बरनि न परै अमल अधर-दल माँझ ।  
 कैधौं फूली दुपहरी कैधौं फूली साँझ ॥३४३॥  
 बाल वदन-प्रतिबिंब-बिधु बिंब रह्यौ तिहिँ संग ।  
 उयौ रहत अब रैन दिन तपन तपावत अंग ॥३४४॥  
 प्रगट दरप कंदरप कौ तेरौ अंग अनूप ।  
 सुतौ लियौ नंदनंद जित सुंदर स्याम सरूप ॥३४५॥  
 रोमावली कृपान सौं मारौ सिवहि मनोज ।  
 ताके भए स्वरूप है सोहत बाल - उरोज ॥३४६॥  
 कुंद न पावत रदन रुचि कुंदन अंग-प्रकास ।  
 चंद न पावत बदन-छवि चंदन अंग - सुवास ॥३४७॥  
 रूप-रासि वह लच्छ की तुला चढ़ो वह बाल ।  
 तऊ न पावति रावरौ मिलन अमोलिक लाल ॥३४८॥  
 ललित मंद कल हंस गति मधुर मंद मुसिक्याति ।  
 चली सारदा बिसद-रुचि सरद-चांदनी राति ॥३४९॥

मैं जानी ही मिलन तैं मिटिहै तन - संताप ।  
 अब सजनी दूनौ चढ़ौ हतक मनोजहिँ दाप ॥३५०॥  
 साँच मदनजित आजु तुम रंजन रसिक रसाल ।  
 अनल-ज्वाल हग देखियत लाल लाल रुचि माल ॥३५१॥  
 पाइन प्रेम जनाइ जिन परियै नंद - कुमार ।  
 अनल-ज्वाल पग लंगति है जावक-लील लिलार ॥३५२॥  
 रोस - भरी अँखियानि लखि लोगनि मैं अनखाइ ।  
 हँसि इकंत लपटाइ कै एक रूप है जाइ ॥३५३॥  
 प्रीति द्वैज द्विजराज की कला कलप करि चित्र ।  
 जगत लोक बंदित उदित बढ़त मित्र जो मित्र ॥३५४॥  
 अँखियनि उमँग अनंग की छुवत अंग अनखाइ ।  
 प्रीतम-तन तावति तरुनि लाइ लगनि की लाइ ॥३५५॥  
 दिन दिन दुगुन बढ़ै न क्यौँ लगनि-अगिनि की भार ।  
 उनै उनै हग दुहुँनि कै बरसत नेह अपार ॥३५६॥  
 लिखति बाल नख भूमि-तन लखत लाल-मुसिक्यानि ।  
 लाज छुटो निसि जानियति लाज-भरी अँखियानि ॥३५७॥  
 चंचल निसि उदबसि रही करन प्रात बसि राज ।  
 अरबिंदनि पै इंदिरा सुंदरि - नैननि लाज ॥३५८॥  
 बढ़त बढ़त बढ़ि जाइ पुनि घटत घटत घटि जाइ ।  
 नाह रावरे नेह बिधु - मंडल जितौ बनाइ ॥३५९॥  
 तलफत घाइनि जीव कौँ कौन जियावत आनि ।  
 जो न होति उन हगनि मैं सुधा मधुर मुसिक्यानि ॥३६०॥  
 सोइ संग सुख जागि दुख लहि समुझौँ निरधार ।  
 छीन-पुन्य सुरलोक तैं लेत अवनि अवतार ॥३६१॥  
 तनु आगै कौँ चलतु है मन वाही मग लीन ।  
 सलिल सोत मैं ज्यौँ चपल चलत चढ़ाऊ मीन ॥३६२॥

प्रतिबिंबित तो बिंब में भूतल भयौ कलंक ।  
 निज निरमलता दोष यह मन में मानि मयंक ॥३६३॥  
 तिहिं पुरान नव-हूँ पढ़े जिहिं जानी यह बात ।  
 जो पुरान सो नव सदा नव पुरान है जात ॥३६४॥  
 सपने में सपनौ समुझि होति दूरि ज्यौ संक ।  
 संक छोड़ि संसार की रही जानि निरसंक ॥३६५॥  
 तिय हिय आनंद बढ़त हूँ पर न प्रान-पिय पेखि ।  
 धिन देखत कौ दुख परै दीन दृगनि में देखि ॥३६६॥  
 लिखति अवनितल चरन सौं बिहँसत विमल कपोल ।  
 अधनिकरे मुख - इंदु तैं अमृत - बिंदु से बोल ॥३६७॥  
 उमगी उर आनंद की लहरि छहरि दृग राह ।  
 बूढ़ी लाज जहाज लौं नेह - नीर - निधि माह ॥३६८॥  
 हैन मन मोहन कौ लखति हौं न आपुनी बाढ ।  
 करत नैन नंद-लाल के हँसत हेरि उर गाढ ॥३६९॥  
 बसत रहत मतिराम निसि द्यौस काम-अभिराम ।  
 इंदीवर छवि दृगनि में इंदीवर छवि स्याम ॥३७०॥  
 ज्वलित ज्वाल सी जेन्ह यह डारति अंग उलीचि ।  
 भई पियूष-मरीचि की मो कौं मरिच मरीचि ॥३७१॥  
 लोक प्रसून - पराग ते' लखत पिंजरिन भृंग ।  
 भए चँवेली कौ' विरह पीत रंग सब अंग ॥३७२॥  
 मानत लाज-लगाम नहिं नैकु न गहत मरोर ।  
 होत तोहिं लखि बाल के दृग - तुरंग मुँह-जोर ॥३७३॥  
 सघन स्याम कादंबिनी राख्यौ रोकि अकास ।  
 अति संकट पावत नहीं जिय हिय में अवकास ॥३७४॥  
 हिये' बसत मुख हसत है हम कौं करत निहाल ।  
 घट - घट - व्यापी ब्रह्म तुम . प्रगट भए नंदलाल ॥३७५॥

बरनत सांच अरुंग कै तुमकौं बेद गोपाल ।  
 हियै हमारे बसत है पीर न पावत लाल ॥३७६॥  
 चढ़े उरोज पहार ए डर उनके अठिलाहि ।  
 तो तन नित लाली चढ़ै ललित लाल पियराहि ॥३७७॥  
 कुच कठोर पाषाण तै क्यौं न करै डर पीर ।  
 बड़े नरम जग नैन कत होत बिषम बिष-तीर ॥३७८॥  
 सखी तिहारी सांच यह दीप - सिखा सी देह ।  
 दिन दीपति पियराति है अधिक राति रति-नेह ॥३७९॥  
 दरपन मैं निज रूप लखि नैननि मोद उमंग ।  
 तिय - मुख पिय-बसकरन कौं बढ़ायै गरब कौ रंग ॥३८०॥  
 निज पाइनि बलि आइ कै तो घर बाइनि देख ।  
 जाति बाल निज गेह कौं डर उछाह दग सेइ ॥३८१॥  
 तो तन सुवरन बरन है कुटिल स्याम मन मांह ।  
 सखि सनेह कैसै रहै छुवन न पैयति छांह ॥३८२॥  
 तिय-हिय मैं पिय-इंदु-मुख निसि दिन करत प्रकास ।  
 सीख सखिनि की छांह लौं नैकु न पावति बास ॥३८३॥  
 नैकु ओट करि गिरि धर्यौ लसत सकंप गोबिंदु ।  
 ब्रज बेरत अब इंद्र लौं यह तेरौ मुख-इंदु ॥३८४॥  
 करवर पर गिरिबर धरे ललित लाल ललचाइ ।  
 जांके चितवन चखनि कुच सो सकुचति सुसिक्खाइ ॥३८५॥  
 हारे बरसत बारि अरु तन दीपति अभिराम ।  
 निदरे सब घनस्याम तूं भांति भांति घनस्याम ॥३८६॥  
 छाती कुच - कुंकुमनि की छाप करी जिहि बाल ।  
 ताकौं डर मन मैं नहीं मिलत मोहि नंदलाल ॥३८७॥  
 नैन मीन उहि बाल के लाज जाल परि आनि ।  
 पियत रहत तो बदन की सुधा मधुर सुसिक्खानि ॥३८८॥

मेरे हग - बारिद बृथा बरषत बारि-प्रवाह ।  
 उठत न अंकुर नेह कौ तो उर ऊसर मांह ॥३८६॥  
 राधा चरन सरोज नख इंद्र किए व्रजचंद ।  
 मोर मुकुट चंद्रकनि तूं चख चकोर आनंद ॥३८७॥  
 सुखद साधुजन कौ सदा गजमुख दानि उदार ।  
 सेवनीय सब जगत कौ जग-माया-सुकुमार ॥३८८॥  
 मद-रस - मत्त मिलिंद-गन गान मुदित गन - नाथ ।  
 सुमिरतं कवि मतिराम कै सिद्धि रिद्धि निधि हाथ ॥३८९॥  
 अंग ललित सित - रंग पट अंग राग अवतंस ।  
 हंस - बाहिनी कीजियै वाहन मेरौ हंस ॥३९०॥  
 नृपति-नैन-कमलनि बृथा चितवत बासर जाहि ।  
 हृदय-कमल में हेरि लै कमलमुखो कमलाहि ॥३९१॥  
 व्रज ठकुराइन राधिका ठाकुर किए प्रकास ।  
 ते मन-मोहन हरि भए अव दासी के दास ॥३९२॥  
 पियत अधर यौ देति है कर-कमलनि की मारु ।  
 लगति खादु के सिंधु में मिरचि - किरच लौं चारु ॥३९३॥  
 पियत अधर तूं देति है कर-कमलनि की मारु ।  
 होत पंच अंगुरी लगै सबल पंचसर मारु ॥३९४॥  
 करति केलि अति प्रेम सौं पगे प्रेम - मद नैन ।  
 अंबर में चंचल लसै खंजरीट से नैन ॥३९५॥  
 प्राननाथ परदेस कौ चलिए समौ विचारि ।  
 स्याम नैन-धन बाल के बरसन लागे बारि ॥३९६॥  
 सरद - चांदनी में बिकल बिमल मालती - कुंज ।  
 जगत जोतिमय मैन के मनौ सुजस के पुंज ॥४००॥  
 कोमल कमलनि से कहैं तिन्हें न नैकु सयान ।  
 होत पार लागत हियै नैन मैन के बान ॥४०१॥

ओठ खंडिवे कौं अरगौ मुख - सुवास - रस - रत्न ।  
 स्याम-रूप नंदलाल अलि नहिँ अलि अलि उनमत्त ॥४०२॥  
 मूढ़ इंदु अरबिंद मैं कहत सुधा मधु बास ।  
 तो मुख मंजुल अधर मैं तिनकौ प्रगट प्रकास ॥४०३॥  
 औरै कछु चितवनि चलनि औरै मृदु मुसकानि ।  
 औरै कछु सुख देति हैं सकै न बैन बखानि ॥४०४॥  
 जो निसि दिन सेवन करै अरु जो करै बिरोध ।  
 तिन्हें परम पद देत प्रभु कहौ कौन यह बोध ॥४०५॥  
 लखे लाल तुमकौं लखै ए बिलास सरसात ।  
 बिहँसत ललित कपोल हैं मधुर नैन सुसिक्क्यात ॥४०६॥  
 पर्गी प्रेम नंदलाल कै हमें न भावत जोग ।  
 मधुप राजपद पाइ कै भीख न मांगत लोग ॥४०७॥  
 मधुप त्रिभंगी हम तर्जौ प्रगट परम करि प्रीति ।  
 प्रगट करी सम जगत मैं कटु कुटिलनि की रीति ॥४०८॥  
 हरि-मुख लखि लोचन सखी सुख मैं करत विनोद ।  
 प्रगट करत कुबलयनि कौ चंद्रोदय तै मोद ॥४०९॥  
 विषयनि तै निरबेद उर ज्ञान जोग ब्रत नेम ।  
 विफल जानियौ ए बिना प्रभु - पद - पंकज-प्रेम ॥४१०॥  
 देखत दीपति दीप की देत प्रान अरु देह ।  
 राजत एक पतंग मैं बिना कपट कौ नेह ॥४११॥  
 ललित राग रंजित हियौ नायक जोति बिसाल ।  
 बाल विहारै कुचनि बिच लसत अमोलिक लाल ॥४१२॥  
 कहा भयौ जग मैं बिहित भएँ उदित छबि लाल ।  
 तो ओठनि की रुचिर रुचि पावत नहीं प्रवाल ॥४१३॥  
 प्रगट कुटिलता जौ करी हम पर स्याम सरोस ।  
 मधुप जोग विष उगिलियै कछु न तिहारौ दोस ॥४१४॥

हँसत बाल के वदन में यौ छवि कछू अतूल ।  
 फूली चंपक बेलि तैं भरत चमेली फूल ॥४१५॥  
 भयौ सिंधु तैं विधु सुकंवि बरनत सुमति-विचार ।  
 उपज्यौ तो मुख-इंदु तैं प्रेम - पयोधि अपार ॥४१६॥  
 पियत रहत पिय-नैन यह तेरी मृदु मुसिक्यानि ।  
 तऊ न होति मयंक-मुखि तनक प्यास की हानि ॥४१७॥  
 पिय - नैननि के राग कौं भूषन सजे बनाइ ।  
 निरखि तिहारी छवि सुतौ सौति-दगनि सरसाइ ॥४१८॥  
 उदै भयौ है जलद तू जग कौ जीवन - दानि ।  
 मेरौ जीवन हरतु है कौन वैर मन मानि ॥४१९॥  
 विरह-आंच मन उड़ि सखी घन-सुंदर-तन जाइ ।  
 दुगुनि दाह वाढ़ैं तहां आपुहिं जात बिलाइ ॥४२०॥  
 जिनकौं अतुल विलोकियै पानिप - पारावार ।  
 उमड़ि चलत तिन दगनि भरि तो मुख रूप अपार ॥४२१॥  
 मन जद्यपि अनुरूप है तऊ न छूटति संक ।  
 दूटि परै जिन भार तैं निपट पातरी लंक ॥४२२॥  
 जुपै सखी ब्रजांड में घर घर सहज चबाड ।  
 तौ हरि मुख लख देति किन नैन - चकोरनि चाड ॥४२३॥  
 कनक-बेलि में कोकनद ता में स्याम सरोज ।  
 तिन में मृदु मुसिक्यानि है ता में मुदित मनोज ॥४२४॥  
 मो मन मेरी बुद्धि लै फरि हर कौं अनुकूल ।  
 लै त्रिलोक की साहिबी दै घटूर कौ फूल ॥४२५॥  
 फिरि फिरि आवति जाति चलि अँगरानी मुसिक्याति ।  
 बाल लाल कौ ललित मुख लखि लजाति ललचाति ॥४२६॥  
 तो मुख-छवि सौं हारि जग भयौ कलंक समेत ।  
 सरद इंदु अरविंद मुखि अरविंदनि दुख देत ॥४२७॥



मधुप-मोह मोहन तज्यौ यह स्यामनि की रीति ।  
 करौ आपने काज कौं तुम्हें जाति सी प्रीति ॥४२८॥  
 गंग-नीर बिधु-रुचि-भल्लक मृदु मुसक्यानि उदेति ।  
 कनक-भौन के दीप लौं जगमगाति तन-जोति ॥४२९॥  
 खल बचननि की मधुरई चाखि सांप निज श्रौन ।  
 रोम रोम पुलकित भए कहत मोद गहि मौन ॥४३०॥  
 मेरी सिख सीखै न सखि मोसौं उठै रिसाइ ।  
 सोयौ चाहति नौंद भरि अंग अंगार बिछाइ ॥४३१॥  
 हरि की सुधि कौं राधिका चली अकेली भौन ।  
 हँसत बीच हों मिलि गए बरनि सकै सुख कौन ॥४३२॥  
 मंत्रिनि के बस जो नृपति सो न लहत सुख-साज ।  
 मनहि बांधि हंग देत हंग मन-कुमार कौं राज ॥४३३॥  
 दधि छिनार मोहन लियौ सखी सघन बन ठौर ।  
 बड़ौ लाभ मन में गनों जौ न कियौ कछु और ॥४३४॥  
 कहा भयौ तजि जात है मलिन मधुप दुख मानि ।  
 सुबरन बरन सुवास-जुत चंपक लहै न हानि ॥४३५॥  
 देह-दीप - दीपति दिपै बदन-चंद की ज्योति ।  
 दामिनि- दुति मुसक्यानि मृदु, सुख की खानि उदेति ॥४३६॥  
 मुक्त-हार हरि कै हियै मरकत मनिमय होत ।  
 पुनि पावत रुचि राधिका-मुख-मुसक्यानि-उदेति ॥४३७॥  
 बदन-चंद की चादिनी देह-दीप की जोति ।  
 राति बितैहूँ लाल उहि भौन राति सी होति ॥४३८॥  
 लाल बाल अनुराग सौं रंगति नित सब अंग ।  
 तऊ न छाड़त रावरौ रूप सांवरौ रंग ॥४३९॥  
 आई फूलनि लैन कौं चलौ बाग में लाल ।  
 मृदु बोलनि सौं जानिहौ मृदु बोलनि में बाल ॥४४०॥

ग्वालनि देउँ वताइ हैं मोहिँ कछू तुम देहु ।  
 बंसीबट की छाँह में लाल जाइ लखि लेहु ॥४४१॥  
 सरद चंद की चाँदिनी को कहियै प्रतिकूल ।  
 सरद चंद की चाँदनी को कहियै प्रतिकूल ॥४४२॥  
 को हरि - वाहन जलधि-सुत को को ज्ञान-जहाज ।  
 तहां चतुर उत्तर दियौ एक वचन द्विजराज ॥४४३॥  
 भोर भएँ आए भवन स्याम-वसन-जुत स्याम ।  
 हँसि अंबर केसरि-रंग्यौ आगँ राख्यौ वाम ॥४४४॥  
 यौ न प्यार विसराइयै लियो मोहिँ तू मोलि ।  
 मुख बिलोकि नँदलाल कौ कहै सखी सौँ वोलि ॥४४५॥  
 लखत लाल मुख पाइहौ वरनि सकै नहिँ बैन ।  
 लसत बदन सतपत्र सौ सहसपत्र से नैन ॥४४६॥  
 उड़ि गुलाल पिय-करनि तैं लगत प्रिया-मुख-चंद ।  
 मनौ कोकनद रजनि करि करत रजनिकर मंद ॥४४७॥  
 सेव वसन की चाँदिनी परत गुलाल सुरंग ।  
 मानौ सुर-सरिता मिलति सरसुति-तरल-तरंग ॥४४८॥  
 सित अंबर-जुत तियनि में उड़ि उड़ि परत गुलाल ।  
 पुंढरीक पटलनि मनौ बिलसत आतप-बाल ॥४४९॥  
 स्याम-रूप अभिराम अति सकल विमल गुन-धाम ।  
 तुम निसि दिन मतिराम की मति विसरौ मति राम ॥४५०॥  
 प्रेम लग्यौ अंगार है सीता मन विन ज्ञान ।  
 देत अँगूठी राम की मानिक भो हनुमान ॥४५१॥  
 रहे और ही रूप है विषम विरह दुख सानि ।  
 डोठि परैं हूँ परसपर नोठि परैं पहिचानि ॥४५२॥  
 मोहीं कौँ किन मारि तूँ विरह-विपति मैं गाड़ि ।  
 जलज-मुखी कौँ जलद जिन तड़ित-चावुकनि ताड़ि ॥४५३॥

अजहूं प्रगटित होत है पुलक पटल ता माह ।  
 जौन अंग डिढ़ है कढ़त छुऐ छैल की छाह ॥४५४॥  
 सिरिस कुसुम सम बाल के कुम्हिलाने सब गात ।  
 करत प्रात अलसात अति सौति-हियनि उतपात ॥४५५॥  
 प्रतिपालक सेवक सकल खलनि दलमलत डांठि ।  
 शंकर तुम सम सांकरैं सबल सांकरैं काटि ॥४५६॥  
 सेवक सेवा के सुनैं सेवा देव अनेक ।  
 दीनबंधु हरि जगत है दीनबंधु हर एक ॥४५७॥  
 सघन तिमिर मैं तरुनि की जगमगाति तन-जोति ।  
 प्रेम हेम पावस - कुहू - निसा कसौटी होति ॥४५८॥  
 रूप बसै मदिरा मदन मदन मदरि से नैन ।  
 प्रेम छके पिय-छवि छके हटके नैंकु रहैं न ॥४५९॥  
 पिय मुख रुचि चारो चुगैं करत परस्पर चैन ।  
 मदन मदर से बाल के वदन मदरि से नैन ॥४६०॥  
 वदन इंदु अरबिंदु सौं सुधा-मधुर मधु वैन ।  
 मेरे होत चकोर से चंचरीक से नैन ॥४६१॥  
 बरनत भौंह कमान जुत बरनत वैन वनै न ।  
 सरल सरल सत मदन के तरल तरलतर वैन ॥४६२॥  
 तेरी मूरति - जुत लिखी निज सूरति लिखि बाल ।  
 धनि मानति मनभावती निज तनु हैं नंदलाल ॥४६३॥  
 तची न तो औगुननि सौं रची न तो अनुराग ।  
 ब्रज मैं देहु बताइ कै ऐसी तिया सभाग ॥४६४॥  
 बिहँसि बढ़ायौ लाल तुम तिय-हिय मैं अनुराग ।  
 बिफल क्यौं न दुख देत जौं आप लगायौ बाग ॥४६५॥  
 निसा समैं अरबिंद रुचि द्यौस इंदु की ज्योति ।  
 बाल-वदन-छवि तो बिरह लाल कहा धौं होति ॥४६६॥

चली सहेट निकुंज कौं धरि सित भूषन चोर ।  
 जेन्ह वीच अंजुज - मुखी भई कंवु कौ छोर ॥४६७॥  
 मेरे मन तो बसति है नैन कियो अपराध ।  
 तुम्हें दोस को देतु है है यह काम असाध ॥४६८॥  
 जमुना-तट वा कुंज में तुम जु दर्ई ही माल ।  
 निकसत जीवहि बाधि कै तासौं राखति बाल ॥४६९॥  
 जिन चलाइयै चलन की चरचा स्याम सुजान ।  
 हौं देखति हौं वाहि इहिं बात सुनत बिन प्रान ॥४७०॥  
 नैननि कौं आनंद है जिय कौं जीवन जानि ।  
 प्रगट दरप कंदरप कौं तेरी मृदु मुसक्यानि ॥४७१॥  
 कहा करौं परबस भई लखि मुख रूप रसाल ।  
 बेची मैं न दलाल हूँ लीनी मैं नंदलाल ॥४७२॥  
 निठुर गई नहिं निठुर पैं कहति लांच किन बात ।  
 लगे कंट कित कुचनि मैं भए कंटकित गात ॥४७३॥  
 कहा भयौ जौ तूं भट्ट गुन-गन - मय सब देह ।  
 जोवनवारी तौ सफल जौ वनवारी - नेह ॥४७४॥  
 मुकत - माल मंडित लसैं बाल उरोज उत्तंग ।  
 नखत - पाति सोमित मनौ विवि सुमेरु के शृंग ॥४७५॥  
 दोष - ज्योति के जाल से जगमगात अति अंग ।  
 मानस-मानस के चपल उड़ि उड़ि परैं पतंग ॥४७६॥  
 निंदत अति अभिराम तौ इंदीवरनि अनूप ।  
 भलकत तो अखियानि मैं अति घनस्याम - सरूप ॥४७७॥  
 लसत सुरत-श्रम - सलिल - फन ललित बाल नंदलाल ।  
 फलौ मनौ मुकता-फलनि कंचन बेलि तमाल ॥४७८॥  
 बिहंसतु नील दुकूल मैं लसतु बदन अरविंदु ।  
 भलकत जमुना - रूप मैं मानौ पुरनु इंदु ॥४७९॥

जरतारी सारी ढके नैन लसत मतिराम ।  
 मनौ कनक पंजर परे खंजरीट अभिराम ॥४८०॥  
 कान्ह करज छत देत यौ सोहत बाल - उरोज ।  
 सर - सरोज सौ संभु कौ मारत मनौ मनोज ॥४८१॥  
 स्याम - नैन - प्रतिबिंब - जुत तिय के उरज उतंग ।  
 मनौ मनोज - सरोज - सर लगे ईस के अंग ॥४८२॥  
 रचे बिरंचि बनाइ कै तेरे ईस उरोज ।  
 तिनके पूजन कौ किए हरि के हाथ सरोज ॥४८३॥  
 बदन इंदु तेरौ अली दग अरविंद अनूप ।  
 तिनमें निसि बासर सदा बसत इंदिरा - रूप ॥४८४॥  
 तो मुख-मंजुल-हास-मृदु मदन-मोद कौ मूर ।  
 पिय नैननि सीतल करत है कपूर कौ चूर ॥४८५॥  
 तेरे आनन - चंद कौ मधुर मंद मृदु हास ।  
 मेरै जान मनोज कौ कीरति - पुंज-प्रकास ॥४८६॥  
 रचो बिरंचि बनाइ तूं सुबरनमय बर. बाल ।  
 बढ़ै जोति तौ जौ मिलै इंद्र-नील-रुचि लाल ॥४८७॥  
 विमल बाम के बदन में राजत ओठ रसाल ।  
 मनौ सरद - विधु - बिंब में लसत बिंबफल लाल ॥४८८॥  
 लसति मुकुट - रुचि लाल की मेरै ओठनि सेइ ।  
 अति अद्भुत यह बात पुनि लाल मुकुट रुचि लेइ ॥४८९॥  
 अली तिहारे अघर में सुधा - भोग कौ साज ।  
 द्विजराजनि-जुत न्यौतियै लाल - बदन - दुजराज ॥४९०॥  
 दुहुँ दिसि सघन नितंब कुच खँचत हैं निधि-सार ।  
 छीजै क्यौं न मयंक - मुखि ललित लंक सुकुमार ॥४९१॥  
 क्यौं न लहै सुख-भोग कौ ललित बाल के साथ ।  
 नीबी नीबी मदन की परी नाह के हाथ ॥४९२॥

कर-सरोज सौं गहि रही पिय - कर गहत उरोज ।  
 लाज प्रबल मन में भई मन में सबल मनोज ॥४८३॥  
 बैठि रहै रोवै हँसै आतुर उत्तरि उताल ।  
 प्रथम सुरति विपरीति की रीति न जानति बाल ॥४८४॥  
 शकी सुरत विपरीत में लियौ विजन कर बाल ।  
 लोचन रही छपाइ कै लख्यौ हँसत मुख लाल ॥४८५॥  
 भोर होत पिय कौं लख्यौ छोड़्यौ चहत समीप ।  
 बिधु-मुख लोचन कमल से तनु-दीपति तनु-दीप ॥४८६॥  
 परै न धुनि सुनि सखिनि कौं लाजनि होति अधीर ।  
 कर-कमलनि सौं गहि रहै सुरत-मुखर मंजीर ॥४८७॥  
 बाल सुरत-रस-रीति में गही लाज अस मैन ।  
 करनि बिरल अँगुरीनि करि मूंदति नायक नैन ॥४८८॥  
 लाज मैन दुहुँ बिच परी सुरत-समै मुसक्याइ ।  
 कमल चलावै करनि गहि दीप-समीप बचाइ ॥४८९॥  
 रति विपरीत प्रस्वेद-कन पिय कौं सींचति वाम ।  
 मनौ प्रौढ़ पुत्राग कै मुकुलनि पूजति काम ॥४९०॥  
 राजत अरुन सरोज हैं मानहु रँगो कुसुंभ ।  
 जोवन - मद गज - कुंभ कै सात कुंभ के कुंभ ॥४९१॥  
 ऊंची स्वासनि सौं प्रिया सुरत - अंत मुसक्याइ ।  
 पुनि प्रीतम कै मैन की दीनी आगि जगाइ ॥४९२॥  
 मनौ मैन के निधि - कलस तेरे तरुनि उरोज ।  
 चाहत जे तिय पै इन्हें बाननि हनत मनोज ॥४९३॥  
 पल्लव पग कर अधर है फल उरोज नख फूल ।  
 भौर - भीर बर बार हैं बाल बेलि कै तूल ॥४९४॥  
 नख गांसी सर आंगुरी कर पग चारु तुनीर ।  
 दसौं दिसनि जिनि बर जिते प्रबर पंचसर बीर ॥४९५॥

ज्वाल - जाल विज्जुलि - छटा घटा धूम अनुहारि ।

विरहिनि - जारन कौ मनौ लाई मदन देवारि ॥५०६॥

बलम पीठि तरिवन भुजनि उर कुच-कुंकुम - छाप ।

तितै जाहु मनभांवे जितै विकाने आप ॥५०७॥

इन झूठी सौंहनि किर्यै नहि हैहौ अकलंक ।

कियौ अधर - अंजन - प्रभा बदन - चंद सकलंक ॥५०८॥

बैठ्यौ आनन कमल के अरुन अधर - दल आइ ।

काटन चाहत भांवे दीजै भौर उड़ाइ ॥५०९॥

चित्रन इत उत चटपटे कहत लटपटे बात ।

X X X X X X ॥५१०॥

जावक दीयौ पगनि में जुवती जाति सिंगार ।

पुरुष प्रानप्रिय जानियत मंडन कर्यौ लिलार ॥५११॥

भली लगै मनभांवे करी आभरन आप ।

काम निसेनी सी बनी यह बेनी की छाप ॥५१२॥

अजौ उड़ावत है नहीं पीर न होति सभाग ।

ठौर ठौर या भौर के डसै अधर - दल दाग ॥५१३॥

भीनै भगा बिलोकियत नख - छत छबि - धर नाह ।

भलै विराजत ए नए चंद्रहार हिय मांह ॥५१४॥

ललित तिहारे गुननि सौं अति खनेह सरसाइ ।

काम - ओज वाकौं हियै दीनौ दीप जगाइ ॥५१५॥

अतनु - तेज तलफै सुतनु तनु जीवन ज्यों मीन ।

नंदलाल वह है रही चंद - कला - सम छीन ॥५१६॥

कहा कहीं वाकी दसा सुनौ सांवेरे बात ।

देखै बिनु कैसें जियै देखत दृग न अघात ॥५१७॥

धरै कौन विधि धीर वह सुनौ धीर बलबीर ।

काम - तीर की भीर भरि हियरौ भयौ तुनीर ॥५१८॥

वाके हिय के हनन कौं भयौ पंचसर बोर ।  
 लाल तुम्हें बस करन कौं रहे न तरकस चीर ॥५१६॥  
 वचन कहत आवत न बनि चलौ लखौ बलि आपु ।  
 प्रबल अनंग - प्रताप सौं अंग अंग संतापु ॥५२०॥  
 सखिनि करत उपचार अति परति विपति इत रोज ।  
 भुरसत ओज मनोज कै परसि उरोज - सरोज ॥५२१॥  
 जागत ओज मनोज के परसि प्रिया के गात ।  
 पापर होत पुरैनि के चंदन पंकिल पात ॥५२२॥  
 घन - सुंदर तो छवि - घटा उनै रही मन छाड़ ।  
 लाज चंचला लौं चमकि चंचल जाति बिलाइ ॥५२३॥  
 सुंदरि नगर अनंग कौ तेरौ अंग अनूप ।  
 सोभित सुबरन वरन में उरज गुरज कै रूप ॥५२४॥  
 तुम लाइक हम हैं कहां तुम हम तैं कमनीय ।  
 मो मन तो तन में बस्यौ बसति पाइ रमनीय ॥५२५॥  
 रंघ - जाल मग है कढ़त तिय - तन - दीपति पुंज ।  
 भूमिया कौ सौ घट भयौ दिनहीं मैं बन कुंज ॥५२६॥  
 सुनि सुनि गुनि सब गोपिकनि समुझ्यौ सरस सवाद ।  
 कढ़ो अघर की माधुरी मुरली है करि नाद ॥५२७॥  
 अब फिर आवत है नहीं मो तन जीवन - हीन ।  
 तो तन पानिप - रूप मैं भौ मन - मीन बिलीन ॥५२८॥  
 भई देवता भाव सब हैं तुम कौं बलि जाउँ ।  
 वाही कौ मुख रूप मन वाही कौ मुख नाउँ ॥५२९॥  
 कहै चीर के चोर सौं बातें भौंह चढ़ाइ ।  
 लखें परस्पर गोपिका आपस में मुसक्याइ ॥५३०॥  
 बिसरि जात सब दुख सखी मन में आनत जाहि ।  
 अवलोकन पैयत नहीं अवलोकनि सौं ताहि ॥५३१॥



करियै संग सखीनि कै कहौ कौन विधि सैल ।  
 अलि रोकत मग वा सबै छैल गाँड में गैल ॥५३२॥  
 सिला सघन घनस्याम उर तिय कुच सैल कठोर ।  
 मुकत - हार दरि जात हैं परिरंभन कै जोर ॥५३३॥  
 लगी रहै हरि - हिय यहै करि ईरखा विसाल ।  
 परिरंभन में वल्लवी भली दली वनमाल ॥५३४॥  
 अधम अजामिल आदि जे हैं तिनकौ हैं राड ।  
 मोहूं पर कीजै मया कान्ह दया - दरियाड ॥५३५॥  
 लसति दांत की ज्योति यों बाल - बदन मुसक्यात ।  
 अमल किंजलक - भलक ज्यों कमल प्रफुल्लित प्रात ॥५३६॥  
 मिलि बिसरैहौ आपुको सुमिरत सुधि न सँभार ।  
 किंकिन कौ उर हार करि करिहौ कहा बिहार ॥५३७॥  
 अधर-रंग बेसरि-मुकत मानिक-बानिक लेत ।  
 हँसत बदन-दीपति बहुरि होत हरी-छवि सेत ॥५३८॥  
 अनमिष नैन कहै न कह्यु समुझै सुनै न कान ।  
 निरखैं मोर-पखानि कै भई पखान समान ॥५३९॥  
 उठे जगत दुख दैन कौ तो कठोर कुच-कुंभ ।  
 निसिचर कुंभ-निकुंभ ज्यों दानव सुंभ निसुंभ ॥५४०॥  
 प्रतिबिंबित निज रूप लखि पिय के नैननि मांह ।  
 मुख चुंबन कौ प्रेम सौं गह्यौ कंठ दुहुं बांह ॥५४१॥  
 सकल कला-कमनीय पिय मिलन-मोद अधिकात ।  
 बिलसति मालति मुकुल निसि निसि-मुख मृदु मुसिक्यात ॥५४२॥  
 दरकत नहीं बियोग में लगै घनक घन घोर ।  
 तेरे उरजनि मिलि भयौ मेरौ हियौ कठोर ॥५४३॥  
 हरि रानिनि मैं राधिका जुवतिनि बानी एक ।  
 बर सुहाग अनुराग कौ कीनौ विमल विवेक ॥५४४॥

राधा की बेनी लखी जो हरि गूंदी आपु ।  
 चित-मुख-सागर कौ भयौ बड़वानल संतापु ॥५४५॥  
 लसति लाल-रुचि तरुनि कै अमल कपोलनि पीक ।  
 रुचि रुचि परसत मुकुर में मनौ अनल की लीक ॥५४६॥  
 बाल लाल-मुख सौति कौ सुन्यौ नाम परकास ।  
 बरषे बादर सैन पर उड़्यौ हंस सम हास ॥५४७॥  
 कहा रहे निहचिंत है लखे लाल चलि आपु ।  
 प्रलय-अनिल-सम खास हैं प्रलय-अनल-सम तापु ॥५४८॥  
 चाहति फल तेरौ मिलन निसि बासर बह बाल ।  
 कुच-सिव पूजति नैन-जल-बुंद मुक्तमय माल ॥५४९॥  
 तरुनि अरुन एड़ीनि के किरन-समूह-उद्देत ।  
 बेनी मंडि न मुक्त को पुंज गुंज-दुति होत ॥५५०॥  
 लाल-वदन लखि बाल कै कुचनि कंप-रुचि होति ।  
 चपल होत चकवा मनौ चाहि चंद की जोति ॥५५१॥  
 गयौ महाउर छूटि यह रह्यौ सहज इक अंग ।  
 फिरि फिरि भांवति है कहा रुचिर चरन के रंग ॥५५२॥  
 लसत कोकनद करनि में यौ मिहँदी के दाग ।  
 ओस-बिंदु परि कै मिट्यौ मनौ पल्लवनि राग ॥५५३॥  
 सुनि इत दै मन मानिनी बिनु अपराध रिसानि ।  
 नेह जरावन कौ महा दीप जोति उर आनि ॥५५४॥  
 सुनि मानिनि अपराध बिनु कहा तजति दृग-बारि ।  
 निसि बासर यह भानियै डारै राग पखारि ॥५५५॥  
 बैठ्यौ ओज जगाइ कै मन सिंहासन मारु ।  
 मनौ छपाकर छत्र छवि किरनै चांवरु चारु ॥५५६॥  
 हँसनि जोन्ह तेरी लखै सुनियै नंदकिसोर ।  
 वाके नैना होत हैं कुबलय किधौ चकोर ॥५५७॥

मंडित मृदु मुसिक्यानि-दुति देखत हरत कलेस ।  
 ललित लाल तेरौ बदन तिय - लोचन - तारेस ॥५५८॥  
 रह्यौ हारि बिपरीति में पिय-नैननि में आइ ।  
 चंदमुखी सोंचति मनौ सुधा - कलस - कुच नाइ ॥५५९॥  
 सखी सबै सिंगार सुभ सजि सुंदरि कै अंग ।  
 केलि - भौन पहुँचाइ कै फिराँ लाज कै रंग ॥५६०॥  
 नीबी खोलनि कौँ गही पिय अनुराग निखोट ।  
 हरष नयन जलमय वसन दियौ लाज निज ओट ॥५६१॥  
 आंसु छपाए हरष के सजनी भौह चढ़ाइ ।  
 कुच कंचुक रोमांच कौँ क्यों न दुरायौ जाइ ॥५६२॥  
 है छपाइ भूषननि सौँ आए गात छपाइ ।  
 भए चीन्ह छत छपारत ए नहिँ जात छपाइ ॥५६३॥  
 रहत नहीं मो जीव यह चलत तिहारै संग ।  
 याकौँ नीकैँ राखियौ पिय बसाइ निज अंग ॥५६४॥  
 डीठि रूप श्रुति वचन तनु परस सुखद दिन राति ।  
 जीभ अधर - रस नासिका मुख - सुवास न अघाति ॥५६५॥  
 परसत तिय के करनि तैं चल्थो पिधिलि नवनीत ।  
 चलनहार परदेस कौँ कियौ न पुनि मन मीत ॥५६६॥  
 कहा भयौ जौ सुत्रतु में फूले रूख बिसाल ।  
 कलकंठी सुख लहति है प्रफुलित पाइ रसाल ॥५६७॥  
 कलकंठी तो नाम है रही मौन सब काल ।  
 पाइ प्रसाद रसाल कौ बोलन लगी रसाल ॥५६८॥  
 भौर भावरै भरत हैं कोकिल-कुल मँडरात ।  
 या रसाल की मंजरी सौरभ सुख सरसात ॥५६९॥  
 कासौं जात बखानि है आब-कली-रस मित्त ।  
 बिसरायौ जिहिँ जाति तै चंचरीक कौ चित्त ॥५७०॥

लीनौ रस कोकिल-कुलनि आंब - कली कौ भारि ।  
 तासौं मन मान्यौ मधुप सुमना सुमन विसारि ॥५७१॥  
 बहु नाइक सौं बावरी मधुर वचन मुख वोलि ।  
 उतरि जाइगौ रूप-मद कटुक-वचन मुख वोलि ॥५७२॥  
 कियौ कंत चित चलन कौ तिय-हिय भयौ बिषाद ।  
 बोल्यौ चरनायुध सु तौ भयौ नखायुध-नाह ॥५७३॥  
 फूल कपोल मधूक के अधर बिंश-फल रत्त ।  
 रस चाखत पिय बुद्धि बन क्यों न होइ उनमत्त ॥५७४॥  
 निरखि तरनि-कर-निकर कौ अरु बरनत आलोक ।  
 होत प्रफुल्लित सोक तजि सकल कोकनद कोक ॥५७५॥  
 प्रिय आलोकनि मैं निरखि पीक-अरुन-वर जोति ।  
 तन-दीपति दिन-दीप सम सब सौतिनि हों हेति ॥५७६॥  
 वसन हरयो पिय सुरत मैं तिय-तन-जोति समीप ।  
 केलि-भौन मैं राति हूं भए द्यौस के दीप ॥५७७॥  
 अटा ओर नँदलाल उत निरखौ नैकुँ निसंक ।  
 चपला चपलाई तजी चंदा तज्यौ कलंक ॥५७८॥  
 पिय-मुख - पंकज मैं परे तिय-दृग-मधुप उड़ाइ ।  
 अरुन भए रस - पान - बस राग - पराग लगाइ ॥५७९॥  
 आनँद - आंसुनि सौं रहे लोचन पूरि रसाख ।  
 दीनी मानहु लाज कौ जल-अंजुलि वर बाल ॥५८०॥  
 विरह अनल कुमुदिनि हियैं डार्यौ जोन्ह बुझाइ ।  
 तिन तैं मानो धूम-रुचि अलि कुल चले उड़ाइ ॥५८१॥  
 पति-विलास सुक सारिकनि कहे गुरुनि मैं प्रात ।  
 लाज ललित गुन-गौरि के दुरे गात मैं गात ॥५८२॥  
 परी बाल - मुख - चंद मैं विरह राहु की छाँह ।  
 कै दृग - दान छुड़ाइयै सुकृत - हेतु करि नाह ॥५८३॥

अति अवशत महा मिही कसी उरोज उत्तंग ।  
 फेसरि रंग रँगो लगै अंगिया अंगनि संग ॥५८४॥  
 फूले नहीं पलास ए वन मैं लगी देवारि ।  
 सांध कहति सजनी न तौ सकै न नैननि जारि ॥५८५॥  
 उड़त भौर ऊपर लसै पल्लव लाल रसाल ।  
 मनौ सधूम मनोज की ओज-अनल की ज्वाल ॥५८६॥  
 विकच अरुन मेचक वरन गुंजा - बीज - समान ।  
 किंसुक मनौ मनोज के कालकूट-जुत बान ॥५८७॥  
 प्रथम कामि-जन-मननि कौं रंगत सुरभि-रितु राग ।  
 करत अलंकृत पल्लवनि पुनि पीछें वन-बाग ॥५८८॥  
 देखि परै नहि दूबरी सुनिथै स्याम सुजान ।  
 जानि परै परजंक मैं अंग - आंव-अनुमान ॥५८९॥  
 सपनैं हूं चितवत नहीं और - और बर बाल ।  
 तूं अपने अनुराग के रँग्यो रंग मैं लाल ॥५९०॥  
 कहा होति अति हीं निठुर तूं न विलोकि बाम ।  
 तो सिंगार-रस - रंग मैं अंग रँगो निज स्याम ॥५९१॥  
 दिसि दिसि तुम्हैं विलोकि वह बाल तजति अति सोक ।  
 तो प्रतिबिंबनि सहित सब भयौ मुकुर नर लोक ॥५९२॥  
 कीनौ अति अनुराग सौं पीतम प्राधे रूप ।  
 मनौ लिए गुन गौरि तैं गुन गौरि तैं अनूप ॥५९३॥  
 जे अंगनि पिय संग मैं वरखत हुते पियूष ।  
 ते बाछू के डंक से भए मयंक - मयूष ॥५९४॥  
 जाहि चाहि उद्दिम कियौ गने न निसि मग-डाभ ।  
 कंत विकान्यौ अनत सो रह्यो अजस कौ लाभ ॥५९५॥  
 मनमोहन तौ सकत क्यों यौ अपराधनि ठानि ।  
 जौ न मनावन हेतु यह होति मधुर मुसक्यानि ॥५९६॥

पियहि उठावति पगनि तैं क्यौं न कौन यह ज्ञान ।  
 दुख-सागर मैं बूढ़िहै बाधि गरैं गुरु मान ॥५६७॥  
 जो सजनी गुन गननि-बस अति सनेह-रस मानि ।  
 भयौ दास तब सो लखै अब उदास अँखियानि ॥५६८॥  
 सुनि सजनी वह सांवरी धरि गुंजनि के हार ।  
 राखतु है हिय आपुनै तो सनेह - धनसार ॥५६९॥  
 अलि यह अनल अनंग कौ अंग-अंग अधिकात ।  
 क्यौं धौं चंचल प्राण ए पारद लौं न उड़ात ॥६००॥  
 कहा लियौ गुरु मान कौ अति ताती है नेम ।  
 पारद सौ उड़ि जाइगौ अलि चंचल यह प्रेम ॥६०१॥  
 जानति सौति अनीति है जानति सखी सुनीति ।  
 गुरुजन जानत लाज है प्रीतम जानत प्रीति ॥६०२॥  
 लसत चारु तीरनि सहित तिय लोचन कमनीय ।  
 चढ़े खंजरीटनि मनौ चंचरीक रमनीय ॥६०३॥  
 नींद - भार दाबे दृगनि लसत पीक बड़ भाग ।  
 कुबलय मुकलित होत ज्यौं परसि प्रात रवि - राग ॥६०४॥  
 दरपन अमल कपोल मैं परत पानि - प्रतिबिंब ।  
 पुनि पुनि पोंछति पीक भ्रम देखि आदरस बिंब ॥६०५॥  
 कल कल कलिका कुल ललक कोकिल-कुल की केलि ।  
 लोलै कला कलोल कै लाल लाल कंकेलि ॥६०६॥  
 जल - पूरित - घनस्याम - रुचि उनई अँखियनि आइ ।  
 रही कदंब कलीनि की अंग बाल छवि छाइ ॥६०७॥  
 तन दुरबल मनमथ प्रबल ढिग बसंत पिय दूरि ।  
 अचल विरह चल जीव सखि तनक न सुख दुख भूरि ॥६०८॥  
 हरयौ वसन मन - भावते फिरि किंकिनि गुन तोट ।  
 करै मनौ मन-भावती पुलक - पटल - पट ओट ॥६०९॥

औरनि हूं के लखत हैं अति अनियारे नैन ।  
 मन मानत हैं न वे सो मन लागत पैन ॥६१०॥  
 है इहि गांव गुलाब वर पुर - ठाकुर कै गोह ।  
 चलौ न आवति वास है जो देवर की देह ॥६११॥  
 पूरत मन की लालसा जगनि जगति गुन-गाथ ।  
 सुर - नर - पल्लव अरुन रुचि भोग नाथ के हाथ ॥६१२॥  
 कलपद्रुम - पल्लव भयौ तूं अति दानि निदान ।  
 भोग नाथ नर - नाथ के हाथ - साथ पढ़ि दान ॥६१३॥  
 लाल भाल जावक लगे उठे रसिक सिरताज ।  
 सौति लखी सुंदरि दृगनि रोस हास अरु लाज ॥६१४॥  
 लगे निसा - अभिसार मैं कंटक तिय कै पाइ ।  
 अजौ न सरुहे निठुर तुम भए और हीं भाइ ॥६१५॥  
 मो नैननि नीकी लगै रही लपटि यह भाल ।  
 तनक रेंगी यह पाग अव लाल करै सब लाल ॥६१६॥  
 लाल तिहारे चलन की सुनी वाल यह बात ।  
 सरद नदी के सोत लौं प्रतिदिन सूखत गात ॥६१७॥  
 कियौ प्यार मोपर प्रकट मैं लीनौ धरि सीस ।  
 पिय प्यारी कै नाम यह दियौ मोहि बकसीस ॥६१८॥  
 तुरतहि गयौ बिलाइ कै हुत्यौ परम अभिराम ।  
 नाह रावरौ नेह यह भयौ गंधरव - गाम ॥६१९॥  
 हिय - अनुराग रंगे लला वे कछु और अमोल ।  
 ओठनि हीं के रंग भए रंगि रंगि बोलत बोल ॥६२०॥  
 पर्गों प्रेम नंदलाल कै हमें न आवत जोग ।  
 मधुप राजपद पाइ कै भीख न मांगत लोग ॥६२१॥  
 छोड़ि नेह नंदलाल कौ हम नहि चाहति जोग ।  
 रंग वाति क्यो लेत हैं रतन - पारखी लोग ॥६२२॥

भोगनाथ नर-नाथ के गुन-गन बिमल विसाल ।  
 भिच्छुक सेवत पानि हैं पग सेवत महिपाल ॥६२३॥  
 अद्भुत गावत जगत सब भोगनाथ-गुन-गाथ ।  
 भूमिपाल सेवत चरन भिच्छुक सेवत हाथ ॥६२४॥  
 एक घौस की औधि पिय अति साहस आरंभ ।  
 मन सौं कहु वरि जात क्यों भुजनि जलधि कौ अंभ ॥६२५॥  
 हरद धरन तैं अधिक बढ़ि जरद होत वह मित्त ।  
 सरद जोन्ह में मानिनी दरद न आवत चित्त ॥६२६॥  
 जा बियोग-बढ़वागि की ज्वालनि नैंकु जरौ न ।  
 सो सागर अनुराग कौ सूखत जानि परौ न ॥६२७॥  
 ज्यों ज्यों विषम वियोग की अनल-ज्वाल अधिकाइ ।  
 त्यों त्यों तिय की देह में नेह उठत उफिनाइ ॥६२८॥  
 बढ़वानल पर बढ़त है विरह - ताप तिय - अंग ।  
 अति अद्भुत अधिकाति है प्रेम - पयोधि - तरंग ॥६२९॥  
 बहै सबै अनुनय - सहित मधुर वचन चित-चाउ ।  
 क्यों राखै अब रोकि सखि फूट्यौ प्रेम - तलाउ ॥६३०॥  
 अति उत्तंग उरजनि लसत चपल मुक्त - वर हार ।  
 मनौ मेरु - विवि-शृंग तैं गिरति गंग - जुग-धार ॥६३१॥  
 सरस बाल कौ मन लला पारावार अनूप ।  
 नीरस मानसरोवरौ मारवार कै रूप ॥६३२॥  
 चढ़त सुन्यौ नहि स्याम में और रंग गरु बाल ।  
 अधर राग सौं हैं रंगे अद्भुत तैं नंदलाल ॥६३३॥  
 एक भए मन दुहुनि के छुटै न कियै उषाइ ।  
 कहाँ सिंधु संभेद कौ कोउ न सकत छुड़ाइ ॥६३४॥  
 हरिन - रूप विरहीनि कौ जलद - जाल बगराइ ।  
 बांधि बृंद बाननि बधत मार बधिक सम आइ ॥६३५॥



प्रफुली सुमन रसाल के कंघ बिटप भुज मेलि ।  
 वात निवारी विरह की फूल निवारी बेलि ॥६३६॥  
 निज स्वरूप प्रभु देत हैं सांच कहत मुनि - गोत ।  
 भोगनाथ की रीझ में भोगनाथ कवि होत ॥६३७॥  
 सरल बान जानै कहा प्रान - हरन की घात ।  
 वंक भयंकर धनुष कौ गुन सिखवत उतपात ॥६३८॥  
 कियौ भोग सपनै रमन परम मुगध - मन बाल ।  
 सौतुक देति उराहनौ लई अंक भरि लाल ॥६३९॥  
 दियौ कान्ह निज कान तै तुम गुलाब को गुच्छ ।  
 गुरुजन में अवतंस करि फिरति लाज करि तुच्छ ॥६४०॥  
 सखी सिखापन रावरै कहौ कहा अब होइ ।  
 मोहन - तन - पानिप गई लाज दगनि की धोइ ॥६४१॥  
 लाज गहै नोंदहि लहै निसि दिन दहै न देह ।  
 सुनौ सांवरे रावरे तहां न दीजै नेह ॥६४२॥  
 चढ़ी अटारी बाम वह कियौ प्रनाम निखोट ।  
 तरनि किरनि तै दगनि कौ कर - सरोज करि ओट ॥६४३॥  
 कढ़त पियूषहुं तै मधुर मुख सरसुति के सोत ।  
 भोगनाथ नर - नाथ कै साथ बसै कवि होत ॥६४४॥  
 दिनहुं मैं अति जगमगै बाल - वदन - विधु - काँति ।  
 लखौ लाल या संधि में उदै सैल की भाँति ॥६४५॥  
 भोगनाथ - मुख चंद की ओर लखत वर जोर ।  
 करौ कौन विधि मान ए लोचन होत चकोर ॥६४६॥  
 अंग करत परि रंग में सुधा - समुद्र - विनोद ।  
 सुरत अंतहुं पाइयै सुरत आदि कौ मोद ॥६४७॥  
 असुवनि के परबाह मैं अति वूड़िवै डराति ।  
 कहा करै नैनानि कौ नोंद नहीं नियराति ॥६४८॥

अनल - ज्वाल सी लगति है बालपने में बाल ।  
 जग जारन कौं जानियत जोवन में जंजाल ॥६४८॥  
 पलक पलक लागै बिना क्यों करि दगनि बिनोद ।  
 सोवन देत न सरद में बिकच कुमुद आमोद ॥६५०॥  
 तेरौ सखो सुहाग बर जानत हैं सब लोक ।  
 होत चरन कै परस पिय प्रफुलित सुमन असोक ॥६५१॥  
 प्रोतम प्रिया पियाइ कै मुख - सुख-सुधा अनूप ।  
 पुलक - मुकुल केसर - पटल करि केसरि अनुरूप ॥६५२॥  
 पिय कै मन मन-भावती और बात नहि फूल ।  
 कुच - परिरंभन सौं तरुनि करि कुरबक तरु - तूल ॥६५३॥  
 करि चख - चारु - चितौनि सौं सुमन कलित-अनुकूल ।  
 तरुन तिलोकी-तिलक कौं तरुनि तिलक - तरु - तूल ॥६५४॥  
 चितवनि कुच परिरंभ मुख सिद्ध चरन हति-केलि ।  
 कियो तिलक कर बक निलित लाल बकुल कंकलि ॥६५५॥  
 होत जगत में सुजन कौं दुरजन रोकनहार ।  
 केतकि कमल गुलाब के कंटक मय परिहार ॥६५६॥  
 कछु न गनति दुरजननि लखि तोहि दगनि सुख देति ।  
 निदरि कंटकनि मधुकरी रस गुलाब कौ लेति ॥६५७॥  
 फूलति कली गुलाब की सखि यहि रूप लखै न ।  
 मनौ बुलावति मधुप कौं दै चुटकी की सैन ॥६५८॥  
 भ्रमत रहत निस दौस हूं करी मधुकरी तूल ।  
 कित वह डारी सो हितू कित बकिनव को फूल ॥६५९॥  
 मिले मोहि अति प्रेम सौं सटपटात उठि प्रात ।  
 छोड़ि आपुनौ भौन तुम भौन कौन कै जात ॥६६०॥  
 हियौ जरायौ बाल कौं अनल ओज निज सैन ।  
 ता पर तेरे देत दुख लाल सलोने नैन ॥६६१॥

हरि - हिय तैं रति रंग में गिरे गुंज गुन दृष्टि ।  
 मनौ स्याम घन तैं परे इंद्र गोप गन छूटि ॥६६२॥  
 करति रसोई बाल वह मगन तिहारैं ध्यान ।  
 जरति आगि निजु आंगुरी होत नहीं मन ज्ञान ॥६६३॥  
 प्रथम अरध छोटी लगी पुनि अति लगी बिसाल ।  
 बामनि कैसी देह निसि भई बाल कौं लाल ॥६६४॥  
 करौ कोटि अपराध तुम वाके हियै न रोष ।  
 नाह - सनेह - समुद्र में बूढ़ि जात सब दोष ॥६६५॥  
 बिरह - तचे तिय-कुचनि लौं अँसुवा सकत न आइ ।  
 गिरि उड़गन ज्यौं गगन तै' बीचहिँ जात बिलाइ ॥६६६॥  
 स्याम तिहारैं बिरह दृग करत सकजल रोज ।  
 मनौ बढ़ावत प्रेम सौं सूर सुताहिँ सरोज ॥६६७॥  
 छांह बिना ज्यों जेठ-रवि ज्यों बिनु औषधि रोग ।  
 ज्यों बिनु पानी प्यास यौं तेरौ दुसह बियोग ॥६६८॥  
 मो दृग-कंजनि कौं दियौ दरसन मोद निदानु ।  
 भोगनाथ मन-भावते भए भोर के भानु ॥६६९॥  
 भोगनाथ नरनाथ कौ बदन इंदु अरविंदु ।  
 करत कवित्ति करत बर मधुर सुधा-मधु-बिंदु ॥६७०॥  
 कमल मुखनि कुबलय दृगनि कुमुद मधुर मुसक्यानि ।  
 लखौ लाल ऊपर महल कमलाकर सुख दानि ॥६७१॥  
 तब लौं नहिँ जानति दृगनि जब लौं नहीं उदेति ।  
 बिहँसन छोर मिठास मय मठा चंद की जोति ॥६७२॥  
 जब जब तेरी बाल कैं चित्त चढ़ै मुसकानि ।  
 अधर-कपोल-बिलोचननि तब तब झलकति आनि ॥६७३॥  
 वासर मैं रबि हा तहीं जामैं निरखत भौंह ।  
 सुनौ लाल ता प्रेम के परी आइ बिच सौंह ॥६७४॥

कपट बचन अपराध तैं निपट अधिक दुखदानि ।  
 जरे अंग मैं संकु ज्यों होत बिथा की खानि ॥६७५॥  
 लाल तिहारै बिरह नित छीन बाल के अंग ।  
 जानति हों चाहत दियौ निज सायुज्य अनंग ॥६७६॥  
 बाल अल्प-जीवन भई ओषम - सरित - सरूप ।  
 अब रस परिपूरन करौ तुम घनस्याम अनूप ॥६७७॥  
 मुख-बिधु छिनु छिनु यों रहै एक द्यौस हीं मांभ ।  
 पून्यौ हुती प्रभात अब होति अमावस सांभ ॥६७८॥  
 कहा कहै रखे बचन सातिक भाव अपार ।  
 तरुनि छपायौ चहति तूं तिन की ओट पहार ॥६७९॥  
 तेरी मृदु मुसक्यानि लखि सरद - जोन्ह - सम रंग ।  
 बाढ़ति मोद - पयोधि कै दृगनि तरंग उत्तंग ॥६८०॥  
 अँसुवनि सों छाए रहैं लाल बाल के नैन ।  
 जब तैं तो दरसन छुट्यौ तब तैं कछू लखै न ॥६८१॥  
 बाल गहत दसननि लसत लाल-अधर-बर-बिंब ।  
 मनौ दसत अरविंद है सरद इंदु कौ बिंब ॥६८२॥  
 सखि छपाउ यह भाउ अब चाहत भयौ जनाउ ।  
 अँगिया मैं डर की समगि रखौ तनीनि तनाउ ॥६८३॥  
 अंजन - जुत अँसुवा ढरत लोचन मीन समान ।  
 लसत नीलमनि दंड जुत मनौ मनोज - निसान ॥६८४॥  
 सेद - बिंदु चंदन सहित गिरत भाल तैं दृष्टि ।  
 बिधु - डर तैं जनु बिधु - बधू परति भान करि छूटि ॥६८५॥  
 जाकैं बर बरजोर यह करत सकल तन ऐनि ।  
 बरछी मनो मनोज की तिरछी चारु चितौनि ॥६८६॥  
 डोठि परस्पर दुहुनि की दर्ई बदलि जनु मैनि ।  
 तिय - मुख मैं पिय - नैन हैं पिय - मुख मैं तिय-नैन ॥६८७॥

दुहं ओर मुख दुहुनि के बिधु लौं करत प्रकास ।  
 लाज-अंधारी दुहुनि की कहूं न पावति बास ॥६८८॥  
 कौन भांति कै बरनियै सुंदरता नंदनंद ।  
 वाके मुख की भीख लै भयै ज्योतिमय चंद ॥६८९॥  
 दिन मैं सुभग सरोज हैं निसि मैं सुंदर इंदु ।  
 चौस राति हूं चारु अति वाकौ बदन गोबिंदु ॥६९०॥  
 दियौ दरस कीनी भली मोहन नंद-कुमार ।  
 भलौ बन्यौ मुकतानि कौ अंग अंग सिंगार ॥६९१॥  
 लसत रतन-दरपन बिमल तो कपोल बसि नारि ।  
 सनमुख रहि जो भाल मैं लीजै तिलक सँवारि ॥६९२॥  
 सुनत सदा गुरु - बचन हित रहत बिबुध-गन साथ ।  
 भोगनाथ यह जानियत सदा भूमि-सुरनाथ ॥६९३॥  
 सरनागत-पालक महा दान जुद्ध अति धीर ।  
 भोगनाथ नरनाथ यह पग्यौ रहत रस-वीर ॥६९४॥  
 भोगनाथ नरनाथ के लोचन लखत बिसाल ।  
 रहत गरीबी गहि दुवन नीबी गहि बर बाल ॥६९५॥  
 जगति जगति दोऊ भुजा जग्य रूप कै रूप ।  
 भोगनाथ नरनाथ की भौंह निहारत भूप ॥६९६॥  
 तब लौं सजनी बोलियै ये गरबीले बैन ।  
 जब लागि तुम निरखे नहीं भोगनाथ के नैन ॥६९७॥  
 तुरग अरब एराक के मनि - आभरन अनूप ।  
 भोगनाथ सौं भीख लै भए भिखारी भूप ॥६९८॥  
 भोगनाथ नरनाथ की रीझ्यौ खीझ अनूप ।  
 होत भिखारी भूप हैं भूप भिखारी - रूप ॥६९९॥  
 सुरलीधर गिरिधरन प्रभु पीतांबर घनस्याम ।  
 बकी-बिदारन कंस - अरि चीर - हरन अभिराम ॥७००॥

पोत भँगुलिया पहिरि कै लाल लकुटिया हाथ ।  
 धूरि भरे खेलत रहैं ब्रजवासनि ब्रजनाथ ॥७०१॥  
 तिरछी चितवनि स्याम की लसति राधिका ओर ।  
 भोगनाथ कौं दीजियै यह मन-सुख बरजोर ॥७०२॥  
 मेरी मति मैं राम हैं कवि मेरे 'मतिराम' ।  
 चित मेरौ आराम मैं चित मेरैं आराम ॥७०३॥



## ( ४ ) रसनिधि-सतसई

लसत सरस सिंधुर-बदन भालथली नखतेस ।  
 बिघन - हरन मंगल - करन गौरी - तनय गनेस ॥ १ ॥  
 नमो प्रेम - परमारथी इह जाचत हैं तोहि ।  
 नंदलाल को चरन कौं दे मिलाइ किन मोहि ॥ २ ॥  
 नमो प्रेम जिहि नै कियौ हिय लग आइ प्रकास ।  
 रंगरत बासी नाक कौं कान्ह गोपकन पास ॥ ३ ॥  
 निसि दिन गुंजत रहत जे बिरद गरीब-नेवाज ।  
 है निज मधुकर-सुतन की कमल-नैन तुहि लाज ॥ ४ ॥  
 अब तौ प्रभु तारैं वनै नातर होत कुतार ।  
 तुमहीं तारन-तरन हौ सो मोरै आधार ॥ ५ ॥  
 सुवस बसत ते चित नगर जहां बसत हरि आइ ।  
 ऐसै तौ ऊजर परी तन की किती सराइ ॥ ६ ॥  
 बिरह धाम इन पै जबै तनिकौ सही न जाइ ।  
 चरन-कमल नंदलाल के तब दृग लागत जाइ ॥ ७ ॥  
 अदभुत गति यह रसिकनिधि सरस प्रीत की बात ।  
 आवत ही मन सावरो डर कौ तिमिर नसात ॥ ८ ॥  
 बिबछि गयौ मन लागि ज्यों ललित त्रिभंगी संग ।  
 सूधौ होत न और तनि नचत रहै वह अंग ॥ ९ ॥  
 कैइक स्वांग बनाइ कै नाचौ बहु बिधि नाच ।  
 रीभत नहिं रिभवार वह बिना हिए के सांच ॥ १० ॥  
 जाकौ गति चाहत दियौ लेत अगति तै राखि ।  
 रसनिधि हैं या बात के भक्त भागवत साखि ॥ ११ ॥



चित है दियौ विसार जनु विरदं गरीब-निवाज ।  
 ब्रजवासिन को दरद कौ पहुँचत नहिँ ब्रजराज ॥ १२ ॥  
 अंबुज चरन पराग हर रही धरन ब्रज पूरि ।  
 अजौ परस तन करत वह बिरह-बिधा को दूरि ॥ १३ ॥  
 धनि गोपी धन ग्वाल वे धनि जसुदा धनि नंद ।  
 जिनके मन आगे चलै धायौ परमानंद ॥ १४ ॥  
 आदि अंत अस् मध्य में जो है स्वयं-प्रकास ।  
 ताके चरन की धरै रसनिधि मन में आस ॥ १५ ॥  
 काल - पखेरू तैं सही यों तन खेत उबेर ।  
 यह बिरियाँ ऐसे समय हरिया हरिया ढेर ॥ १६ ॥  
 यह प्रसिद्ध है रसिकनिधि मनमोहन की बात ।  
 पनिवारे घट में बसै पनिघटि ओर न जात ॥ १७ ॥  
 भूले तैं करतार के रागु न आवै रास ।  
 यही समुक्त कै राख तू मन करतारैं पास ॥ १८ ॥  
 हरि कौ सुमिरौ हर घरी हरि हरि ठौर जुवान ।  
 हर बिधि हरि के है रहौ रसनिधि संत सुजान ॥ १९ ॥  
 मजनु लख लै है गए लैं लैं लैलै नाम ।  
 अचरज कह जौ कृष्ण कहि मिलैं चरन अभिराम ॥ २० ॥  
 मनि समान जाके मनी नैकुं न आवत पास ।  
 रसनिधि भावुक करत है ताही मन में बास ॥ २१ ॥  
 जिन काढ़ौ ब्रजनाथ जू मो करनी कौ छोर ।  
 मो कर नीके कर गहौ रसनिधि नंदकिसोर ॥ २२ ॥  
 रसनिधि वाकौ कहत हैं याही तैं करतार ।  
 रहत निरंतर जगत कौ वाही के कर तार ॥ २३ ॥  
 तेरी गति नंदलाडले कछू न जानी जाइ ।  
 रजहू तैं छोटी जु मन तामैं बसियत आइ ॥ २४ ॥

सब सुख छाड़े नेहिया तुव सुख लेत उठाइ ।  
 सब सुख चाहत सबि रहै तुव सुख नहीं मिठाइ ॥ २५ ॥  
 मोहे नैकु न नैन जे मनमोहन कै रूप ।  
 नीरस निपट निकाम ज्यों बिन पानी कै कूप ॥ २६ ॥  
 बेदव्यास सब खोजहीं नैकु न पावहिं ताहि ।  
 मोहन मन दग करनि - कर ब्रज-बालनि लिय जाहि ॥ २७ ॥  
 मन तूं मोहन सौं हमै काहे पारत बीच ।  
 पगौ रहत है रैन दिन रे बिषयारस नीच ॥ २८ ॥  
 दंपति चरन सरोज पै जो अलि मन मढ़राइ ।  
 तिहि के दासन दास कौ रसनिधि संग सुहाइ ॥ २९ ॥  
 जो चाहै तिहि चाहियै ज्यों उर लेवौ हार ।  
 स्याम सनेहन के कछू रसनिधि मते अपार ॥ ३० ॥  
 घरी बजी घरयार सुन बजिकै कहत बजाइ ।  
 बहुरि न पैहै यह घरी हरि-चरनन चित लांइ ॥ ३१ ॥  
 हरि बिनु मन तुव कामना नैकु न आवै काम ।  
 सपने के धन सौं भरे किहि लै अपनौ धाम ॥ ३२ ॥  
 जिन बारे नंदलाल पै अपने मन धन ल्याइ ।  
 उनके बारे की कछू मोपै कही न जाइ ॥ ३३ ॥  
 हरि - पूजा हरि - भजन में सो ही ततपर होत ।  
 हरि उर जाही आइ कै हरवर करै उदोत ॥ ३४ ॥  
 रसनिधि मन मधुकर रमहिं जो चरनांबुज माहिं ।  
 सरस अनखुलौ खुलत है खुलौ खुलौई नाहिं ॥ ३५ ॥  
 रूप दृगन श्रवनन सुजस रसना में हरिनाम ।  
 रसनिधि मन में नित बसै चरन कमल अभिराम ॥ ३६ ॥  
 कपटौ जब लौं कपट नहिं सांच बिगुरदा धार ।  
 तब ला कैसे मिलैगौ प्रभु सांचौ रिक्खवार ॥ ३७ ॥

नेत नेत कहि निगम पुनि जाहि सकौ नहिँ जान ।  
 भयौ मनोहर आइ ब्रज वही सो हरि हर आन ॥ ३८ ॥  
 परम दया करि दास पै गुरु करी जव गौर ।  
 रसनिधि मोहन भावतौ दरसायौ सब ठौर ॥ ३९ ॥  
 पाप पुन्य अरु जोति तैं रवि ससि न्यारे जान ।  
 जद्यपि सो सब घटन मैं प्रतिबिंबित है आन ॥ ४० ॥  
 आपु भँवर आपुहि कमल आपुहि रंग सुवास ।  
 लेत आपुही वासना आपु लसत सब पास ॥ ४१ ॥  
 पवन तुहीं पानी तुहीं तुहीं धरनि आकास ।  
 तेज तुहीं पुनि जीव है तुहीं लियौ तन वास ॥ ४२ ॥  
 वे खाए ते वेवफा वफा रहै ठहराइ ।  
 मीनै कीनै दूर ज्यों तेही तैं रह जाइ ॥ ४३ ॥  
 कहूं हाकमी करत है कहूं बंदगी आइ ।  
 हाकिम बंदा आपही दूजा नहां दिखाइ ॥ ४४ ॥  
 सांची सो यह बात है सुनियौ सज्जन संत ।  
 स्वांगी तौ वह एक है वहि के स्वांग अनंत ॥ ४५ ॥  
 कोटि घटन मैं विदित ज्यों रवि प्रतिबिंब दिखाइ ।  
 घट घट मैं त्योंही लिप्यौ स्वयं-प्रकासी आइ ॥ ४६ ॥  
 आसिक अरु महबूब बिच आप तमासा कीन ।  
 ह्याँ है अलगरजी करै ह्याँ है होइ अधीन ॥ ४७ ॥  
 लेत देत आपन रहै सिर अपने नहिँ लेत ।  
 ह्याँ है चित को लेत है ह्याँ है चित कौ देत ॥ ४८ ॥  
 आपु फूल आपुहि भँवर आपु सुवास बसाइ ।  
 आपुहि रस आपुहि रसिक लेत आपु रस आइ ॥ ४९ ॥  
 ब्रह्म फटिक मन सम लसै घट घट मांझ सुजान ।  
 निकट आय बरतै जो रँग सो रँग लगै दिखान ॥ ५० ॥

वही रंग वह आपुही भयौ तिली में तेल ।  
 आपुन वास्यौ सुमन है आपुहि भयौ फुलेल ॥ ५१ ॥  
 यौ सब जीवन की लखौ ब्रह्म सनातन आद ।  
 ज्यों माटी के घटन की माटी पै बुनियाद ॥ ५२ ॥  
 जलहूँ मैं पुनि आपही थलहूँ मैं पुनि आपु ।  
 सब जीवन मैं आपु है लसत निरालौ आपु ॥ ५३ ॥  
 अनल दिवैया आपु ही अनल लिवैया आपु ।  
 अनल मांझ जो अनिल वह रसनिधि सोई आपु ॥ ५४ ॥  
 मोहनवारौ आपु ही मन मानिक पुनि आपु ।  
 पोहनवारौ आपु ही जोहनिहारौ आपु ॥ ५५ ॥  
 वंसी हूँ मैं आपु ही सप्त सुरन मैं आपु ।  
 वजवैया पुनि आपु ही रिझवैया पुनि आपु ॥ ५६ ॥  
 बोज आपु जर आपु ही डार पात पुनि आपु ।  
 फूलहि मैं पुनि आपु फल रस मैं पुनि निधि आपु ॥ ५७ ॥  
 पंचन पंच मिलाइ कै जीव ब्रह्म मैं लीन ।  
 जीवन-मुक्त कहावही रसनिधि वह परवीन ॥ ५८ ॥  
 आसिक हू पुनि आपु त्यों महवूवा पुनि आपु ।  
 चाहनहारौ आपु त्यों वेपरवाही आपु ॥ ५९ ॥  
 कुदरत वाकी भर रही रसनिधि सब हो जाग ।  
 ईधन बिन बनियौ रहै ज्यों पाहन मैं आग ॥ ६० ॥  
 अलख सवैई लखत वह लख्यौ न काहू जाय ।  
 दृग तारिन के तिलक की भांकि न भांकी जाइ ॥ ६१ ॥  
 तिलन मांझ पुनि आपु त्यों सुमन मांझ पुनि आपु ।  
 बासनवारौ आपु त्यों पेरेनवारौ आपु ॥ ६२ ॥  
 गरजन मैं पुनि आपु ही बरसन मैं पुनि आपु ।  
 सुरभन मैं पुनि आपु त्यों उरभन मैं पुनि आपु ॥ ६३ ॥

कहूँ गावै नाचै कहूँ कहूँ देत है तार ।  
 कहूँ तमासा देखही आपु बैठ रिभवार ॥ ६४ ॥  
 नर पसु कीट पतंग मैं थावर जंगम मेल ।  
 ओट लियै खेलत रहै नयौ खिलारी खेल ॥ ६५ ॥  
 आपुहि वा महबूब मैं बेदरदी सरसाइ ।  
 आपुहि आसिक मैं इहां दरद अँगेजत आइ ॥ ६६ ॥  
 हिंदू मैं क्या और है मुसलमान मैं और ।  
 साहिब सबका एक है व्याप रहा सब ठौर ॥ ६७ ॥  
 कहूँ नाचत गावत कहूँ कहूँ बजावत बीन ।  
 सब मैं राजत आपु ही सब ही कला प्रवीन ॥ ६८ ॥  
 जल समान माया लहर रवि समान प्रभु एक ।  
 लहि वाके प्रतिविंब कौ नाचत भांति अनेक ॥ ६९ ॥  
 राई कौ बीसौ हिसा ताहू मैं पुनि आइ ।  
 प्रभु बिन खाली ठौर कहूँ इतनौहूँ न दिखाइ ॥ ७० ॥  
 अलख जात इन दृगनि सौं बिदित न देखी जाइ ।  
 प्रेम कांति वाकी प्रगट सब ही ठौर दिखाइ ॥ ७१ ॥  
 जदपि रहौ है भावतौ सकल जगत भरपूर ।  
 बल जैयै वा ठौर की जहँ ह्वै करै जहूर ॥ ७२ ॥  
 कौन रीभवायै सकै को बस करै रिभाइ ।  
 आपु रिभावन ह्वै रहौ आपुहि रीभत आइ ॥ ७३ ॥  
 पंच तत्त्व की देह मैं त्यों सुर व्यापक होइ ।  
 बिस्वरूप मैं ब्रह्म ज्यों व्यापक जानौ सोइ ॥ ७४ ॥  
 रस ही मैं औ रसिक मैं आपुहि कियौ उदोत ।  
 स्वाति-बूंद मैं आप ही आपहि चात्रिक होत ॥ ७५ ॥  
 घट भीतर जो बसत है दृगनस वाकी जोत ।  
 देखत सब पै सबन मैं बिरल न जाहिर होत ॥ ७६ ॥

अलख सबै जापै कहै लखौ कौन बिधि जाइ ।  
 पाक जात की रसिकनिधि जगत सिफात दिखाइ ॥ ७७ ॥  
 करत फिरत मन बावरे आप नहीं पहिचान ।  
 तो ही मैं परमात्मा लेत नहीं पहिचान ॥ ७८ ॥  
 तूं सज्जन या बात कौं समुझ देख मन माहिं ।  
 अरे दया मैं जो मजा सो जुलमन मैं नाहिं ॥ ७९ ॥  
 सज्जन हो या बात को करि देखो जिय गौर ।  
 बोलन चितवन चलन वह दरदवंत कौ और ॥ ८० ॥  
 मीता तूं या बात कौं हिए गौर करि हेर ।  
 दरदवंत वेदरद कौं निसि बासर कौं फेर ॥ ८१ ॥  
 कठिन दुहुं बिधि दीप कौ सुन हो मीत सुजान ।  
 सब निसि विन देखै जरै मरै लखै मुख भान ॥ ८२ ॥  
 सीख सुधाई तीर तैं तज गति कुटिल कमान ।  
 भावै चिल्ला बैठ तूं भावै विच मैदान ॥ ८३ ॥  
 विन आदर जौं रूप नृप छवि मुकताहल देत ।  
 दग जाचक ये दीठ कर विन सनमान न लेत ॥ ८४ ॥  
 सज्जन पास न कहु अरे ये अनसमझी बात ।  
 मोम-रदन कहूँ लोह के चना चबाए जात ॥ ८५ ॥  
 जब देखौ तब भलन तैं सजन भलाई होहि ।  
 जारै जारै अगर ज्यों तजत नहीं खसबोहि ॥ ८६ ॥  
 वेदाना सै होत है दाना एक किनार ।  
 बेदाना नहिं आदरै दाना एक अनार ॥ ८७ ॥  
 प्रीतम इतनी बात कौ हिय कर देखु विचार ।  
 बिनु गुन होत सु नैकहूँ सुमन हिए कौ हार ॥ ८८ ॥  
 हित करियत यह भाति सौं मिलियत है वह भांत ।  
 छीर नीर तैं पूछ लै हित करिबे की बात ॥ ८९ ॥

बढ़त आपनौ गोत कौ और सबै अनखाइ ।  
 सुहृद नैन नैना बड़े देखत हियौ सिहाइ ॥ ८० ॥  
 पसु पच्छो हू जानहीं अपनी अपनी पीर ।  
 तब सुजान जानौं तुमैं जब जानौ पर-पीर ॥ ८१ ॥  
 इतनैई कहनो हतौ प्रीतम तोसौं मोहि ।  
 मान राखबी बात तौ मान राखनौ तोहि ॥ ८२ ॥  
 मदन गवन जब करत है जाही तन में आइ ।  
 छवि बाकी सब तैं सरस नैनन वही दिखाइ ॥ ८३ ॥  
 नेह मौन छवि मधुरता मैदा रूप मिलाय ।  
 बेचत हलुवाई मदन हलुआ सरस बनाय ॥ ८४ ॥  
 मदन भूप राजै जहां सहसा सकौ न जाइ ।  
 रूप चांदनी में धरौ पौछ पलन दग पाइ ॥ ८५ ॥  
 अरे जरे की पीर कौ तू तौ जानत है न ।  
 नेहनि जारत फिरत तूं जान बूझ कै मैन ॥ ८६ ॥  
 बिन हूं बाग लगाम वह चावुक लेत न हाथ ।  
 फेरत बाहक मैन लख नैन हरिन एक साथ ॥ ८७ ॥  
 अबलख नैन तुरंग ये पलकैं पाषर डार ।  
 आयौ मदन सवार है अब को सकै संहार ॥ ८८ ॥  
 सारी ढाली हरित अति लोचन मुंडा डार ।  
 अलिखावलि बागुर रची खेलत मदन सिकार ॥ ८९ ॥  
 कहन सुनन चितवन चलन बिहँसन सहज सुभाइ ।  
 सब अंगन कौ देत है आइ अनंग सिखाइ ॥ ९० ॥  
 कीन्हें बिदित सु मार नै नेही जिते सुमार ।  
 आवत नहीं सुमार मैं ते वे किए सुमार ॥ ९१ ॥  
 बाल - बदन को मदन - नृप रूप - इजाफा दीन ।  
 नैन-गजन पर भौंह जनु मीनकेत धर लीन ॥ ९२ ॥

बिधए मैन खिलार नै रूप - जाल दृग - मीन ।  
 रहत सदाई जे भए चपल गतिन रसलीन ॥१०३॥  
 लखौ मैन तै मैन में यह अद्भुत गत आइ ।  
 वह पिघलत लागि भापि कै यह लागि मन पिघलाइ ॥१०४॥  
 वदन - सरोवर तै भरे सरस रूप - रस मैन ।  
 डोठ-डोर सौं बांधि कै डोलत सुंदर नैन ॥१०५॥  
 करत न जब तक मदन - नृप रूप - सनद पर छाप ।  
 तब तक दृग-दीवान ढिग होत न वाकी थाप ॥१०६॥  
 छवि तावन यह तिल सिला रूप सजल लख नैन ।  
 कलपै दै हित कलप पै मन पट धोबी मैन ॥१०७॥  
 जब तै दीन्हों है इन्हें मैन महीपति मान ।  
 चित चुगली लागे करन नैना लागि लागि कान ॥१०८॥  
 सिद्ध कला जब तै इन्हें लला पढ़ाई मैन ।  
 सुरजन मन बस करत हैं तब तै तेरे नैन ॥१०९॥  
 नेही - दृग - दीवान नै जब तै कीनी थाप ।  
 रूप - सनद पै कर दर्ई मदन भूप तिल - छाप ॥११०॥  
 नेह नगर में कहि फिरै मैन लाग मनु कान ।  
 रुजू होव नँदलाल सैं चित वित ल्याइ सुजान ॥१११॥  
 कोमल किसलय दलनि सैं जे तिय हैं अभिराम ।  
 दहत सतन कौ आइ कै देख अतन के काम ॥११२॥  
 रूप - नगर बस मदन नृप दृग - जासूस लगाइ ।  
 नेहिनि - मन कौ भेद उन लीनौ तुरत मँगाइ ॥११३॥  
 रूप - तख्त पै आइ कै बैठौ मदन सु भूप ।  
 नेही - दृग मन - नजर लै राजत द्वार अनूप ॥११४॥  
 वदन - वहल कुंडल - चका मौह - जुवा हय - नैन ।  
 फेरत चित - मैदान में वहलवान वर मैन ॥११५॥



नागर सागर रूप कौ जोवन तरल तरंग ।  
 सकत न तर छवि भँवर पर मन वृद्धत सब अंग ॥११६॥  
 अजब साँवलौ रूप लखि दृगन चरौई जाइ ।  
 जिहि उर तन मो उर तिमिर तुरत दुरौई जाइ ॥११७॥  
 रूप-समुद छवि-रस भरौ अति ही सरस सुजान ।  
 ता में तैं भर लेत दृग अपनै घट उनमान ॥११८॥  
 अरे मीत या बात कौ देख दिष्ट कर गौर ।  
 रूप दुपहरी छांह कब ठहरानी इक ठौर ॥११९॥  
 रूप - बाग में रहत हैं बागवान तुव नैन ।  
 मन-धन लै छवि-अमृत-फल दैन कहत पै दें न ॥१२०॥  
 आखिन के जब पल अधर हेरत चिबुके जात ।  
 मधुर रूप सोहै भरौ हिय तक जाकौ गात ॥१२१॥  
 लाल भाल पै लसत है सुंदर बिंदी लाल ।  
 कियौ तिलक अनुराग ज्यों लख कै रूप रसाल ॥१२२॥  
 उर दियला राख्यौ जु मैं सरस सनेह भराइ ।  
 बेग भावते कीजियै रूप रोसनी आइ ॥१२३॥  
 रूप - सिंधु में जाइ कै जब तैं परस्यौ नेह ।  
 तब तैं कैयौ रंग सौ रूप दिखाई देह ॥१२४॥  
 प्रीतम - रूप - कजाक के समसर कोई नाहि ।  
 छवि-फांसी है दृग गरै मन-धन कौ लै जाहि ॥१२५॥  
 बिधि ने जग में तैं रच्यौ ऐसी भांति अनूप ।  
 आभूषन कौ है लला आभूषन तुव रूप ॥१२६॥  
 मन - कन पलटै मिलत है जिन्हें रूप-धन-माल ।  
 तिनहीं के बिधि ने रचे जग में भाल बिसाल ॥१२७॥  
 रूप - चांदनी की गढ़ी खच्छ राखिबे हेत ।  
 दृग - फरास हाजिर खड़े बरुनि बहारु देत ॥१२८॥

तौ कैसै तन पालते नेही - नैन - मराल ।  
 जौ न पावते रूप-सर छवि - मुक्ताहल लाल ॥१२६॥  
 रूप - दीप जेतौ धरौ मन - फानूस दुराह ।  
 तऊ जोत वाकी दृगन होत प्रकासित आह ॥१३०॥  
 सुंदर जोवन रूप जो बसुधा में न समाह ।  
 दृग - तारन - तिल विच तिन्हें नेही धरत लुकाह ॥१३१॥  
 छोके रूप - मद - पान कै ठहरत नहिँ पल पाह ।  
 लटपटाह दृग - दीठ कर गहति प्रीति - पट धाह ॥१३२॥  
 बेपरवाही बांध बँध राख्यौ मन अटकाह ।  
 नतर कुरूप - प्रवाह उहि देतौ कितै बहाह ॥१३३॥  
 बहुत निकाइन तै लख्यौ तेरौ रूप निकाह ।  
 नव अनुरागी दृग रहे तेरे हात विकाह ॥१३४॥  
 मलयागिरि-चंदन सरस घिसि घिसि ल्यावत कूर ।  
 जात तपन कहूँ दृगन की बिन वा रूप-कपूर ॥१३५॥  
 ज्यों उत रूप अपार है त्यों इत चाह अपार ।  
 नैन विचौही दुहुन कौ पाह सकैं नहिँ पार ॥१३६॥  
 रूप - निकाई मीत की ह्याँ तक लौं अधिकात ।  
 जास न हेरौ निमिख कै रीझहि रीझी जात ॥१३७॥  
 और सवादन पै लखौ भूलहु चित्त न देइ ।  
 अँखियां मोहन रूप कौ बिन रसना रस लेइ ॥१३८॥  
 छवि कन दै दृग जाचकन जे नहिँ पालत आन ।  
 रूप - रासि उनकौ दर्ई दर्ई कहा धौ जान ॥१३९॥  
 पलक पुरौ नहिँ होइ दृग निसि नारी के साथ ।  
 रूप-कूप तैं कौन विधि रस लागत है हाथ ॥१४०॥  
 निज करनी लखि आपनी रहियत है अरगाह ।  
 काचे घट चाहियत भरौ नव सरूप-रस ल्याह ॥१४१॥

दृग रचना जानत सही मधुर रूप रस हैन ।  
 सकर मय पावत सुनी कहूं हाट की गौन ॥१४२॥  
 रूप - कहर - दरियाव में तरिवौ है न सलाह ।  
 नैनन समुझावत रहै निसि दिन ज्ञान मलाह ॥१४३॥  
 जो भावै सो कर लला इन्हें बांध वा छोर ।  
 हैं तुव सुवरन रूप को ये मेरे दृग चोर ॥१४४॥  
 तुव बन में खोयौ गयौ मन - मानिक ब्रजराज ।  
 लगे संग ही फिरत हैं नैना पावन काज ॥१४५॥  
 मदन जुवा के खेल में रूप सई कौ देत ।  
 दुवा और कौ मैट कै लाल तियाही लेत ॥१४६॥  
 रूप - नगर में बसत है नगर - सेठ तुव नैन ।  
 मन - जामिन लै नेहियन लगे पुंजी छवि दैन ॥१४७॥  
 और - वार दृग जे परै तेरे रूप अहोर ।  
 मन - मलाह अव सकत नहिं यातैं इन्हें बहोर ॥१४८॥  
 वरुनी जोती पल पला डांडी भौह अनूप ।  
 मन पसंग तौलै सुदृग हरवौ गरवौ रूप ॥१४९॥  
 मुकत स्वेदकन चिबुक लख लखी न अलि कै जाल ।  
 बदन रूप-रस में फँस्यौ रसनिधि सुमन सराल ॥१५०॥  
 जौ नहिं करतौ भावतौ रूप - भूप - प्रतिपाल ।  
 तौ इन लोभी दृगन कौ होतौ कौन हवाल ॥१५१॥  
 भले छकाए नैन ये रूप सबो के कैफ ।  
 देत न मृदु मुसक्यान की गजकि आइ वेहैफ ॥१५२॥  
 सरस रूप कौ भार पल सहि न सकैं सुकुमार ।  
 याही तैं ये पलक जनु भुकि आवैं हर वार ॥१५३॥  
 पल - पिंजरन में दृग-सुवा जदपि मरत है प्यास ।  
 तदपि तलफ जिय राखही रूप-दरस-रस-आस ॥१५४॥

रूप भूप कौ हुकुम यह इतनी किन कहि देव ।  
 बिना सनेहा दग हियौ आवन इहाँ न देव ॥१५५॥  
 यारि फेर कै आप पै जरति न मोरे अंग ।  
 रूप - रोसनी पै भूपै नेहो - नैन - पतंग ॥१५६॥  
 खोर खोर सब देत हैं मेरे नैनन खोर ।  
 लाल मनोहर रूप कौ देत न कोऊ खार ॥१५७॥  
 बिरह - पीर कौ नैन ये सकैं नहीं पल कांध ।  
 मीत आइ कै तूं इन्हैं रूप पोठ दै बांध ॥१५८॥  
 रूप - ठगौरी डार मन - मोहन लैगौ साथ ।  
 तब तैं सांसैं भरत है नारी नारी हाथ ॥१५९॥  
 रूप किरकिरी पर गई जब तैं दृगन मँभार ।  
 लाल भए तब तैं रहत बरषत अँसुवन धार ॥१६०॥  
 लाल - रूप के अमृत - फल दग - द्रुम लागत आइ ।  
 याही तैं बिधि नै दर्ई बरुनी - बारि बनाइ ॥१६१॥  
 जा दुकान कौ रूप मद अमली दृगन रेहाइ ।  
 जिय गहनै घर पियत है बार बार ह्रां जाइ ॥१६२॥  
 डर - तम मैं आवत डरौ जौ तुम नंदकुमार ।  
 चित - सुरोसनी रूप तुव लियै खड़े दग द्वार ॥१६३॥  
 कबहुं न ये आवत इहाँ कुहू - निसा लखि लेत ।  
 भूप भांकिति चहुँ ओर तैं कहु चकोर कोहि हेत ॥१६४॥  
 रूप - स्वाद कौ दृगनि सम जौ पल लेते जान ।  
 मीत लखत होते नहीं ये विच आगे आन ॥१६५॥  
 जुलुफ - निसैनी पै चढ़े दग घर पलकैं पाइ ।  
 रूप - महल छवि - रोसनी तब देखै है आइ ॥१६६॥  
 माफी की तौ कर दर्ई सनद दृगन कर हेत ।  
 रूप जिनस पल गौन मैं काहे भरन न देत ॥१६७॥

अरे वैद चहिए दवा सो नहि तेरे पास ।  
 नैन जखम तिनि रूप रस आवत हैगौ रास ॥१६८॥  
 नित हित सौं पालत रहै रूप - भूप नंदलाल ।  
 छवि - पनिवारन में मनौ दृग पर वारन हाल ॥१६९॥  
 मीत सुमुख की जोत तौ नहै राखत पोषि ।  
 दीप - जोत तौ लेत है सिर सौं नहै सोपि ॥१७०॥  
 सकै सताइ न पल इन्है विरहा - अनिल सुछंद ।  
 न जरै जे नजरै रहै प्रीतम तुव मुखचंद ॥१७१॥  
 जव जव वह ससि देत है अपनी कला गँवाइ ।  
 तव तव तुव मुख - चंद पै कला मांगि लै जाइ ॥१७२॥  
 कुहू - निसा तिथि - पत्र में वाचन कौ रह जाइ ।  
 तुव मुख - ससि की चांदनी उदै करत है आइ ॥१७३॥  
 वह ससि निसि में देखिए तारन मांह सुछंद ।  
 निसि दिन दृग - तारनि लसै तुव मुख तारन चंद ॥१७४॥  
 दृग - मृग नेहनि के कहूं फांद न पावहि जान ।  
 जुलफ - फँदा मुख - भूमि पै रोपे बधिक - सुजान ॥१७५॥  
 सुमन सहित आंसू - उदक पल - अँजुरिन भरि लेत ।  
 नैन - ब्रती तुव चंद - मुख देखि अरध कौं देत ॥१७६॥  
 छवि - धन पैयत अमित जहँ लख मुख - चंद उदेत ।  
 मन - नग मोहन - मीत पै बारै बारौ होत ॥१७७॥  
 भावंता मुख स्वच्छ पै जो यह तिल दरसाइ ।  
 मो दृग - तारन में जु तिल ताकी आभा आइ ॥१७८॥  
 मदन कहन जब सौं लगे तब तैं चतुर विचार ।  
 हरौ गयौ याकौ सुमद मोहन - वदन निहार ॥१७९॥  
 हीरा भुज ताबोज में सोहत है यह बान ।  
 चंद लखन मुख मीत जनु लग्यौ भुजा सन आन ॥१८०॥

जब लग हिय - दरपन रहै कपट - मोरचा छाइ ।  
 तब लग सुंदर मीत - मुख कैसे हगन दिखाइ ॥१८१॥  
 जातैं ससि तुव मुख लखै मेरो चित्त सिद्धाइ ।  
 भावंता उनिहार कछु तो मैं पैयत आइ ॥१८२॥  
 नंदमहर के बगर - तन अब मेरै को जाइ ।  
 नाहक कहूँ गड़ि जाइगौ हित - कांटौ मन पाइ ॥१८३॥  
 नेही तिल रसनिधि लखौ सुमन संग पिरि जाइ ।  
 निरमोही मुख के जु तिल सुमन पेरी वच जाइ ॥१८४॥  
 तिल न होइ मुख - मीत पर जानौ वाकौ हेत ।  
 रूप खजानै की मनौ हबसी चौकी देत ॥१८५॥  
 मोहन बाँसुरी लेत है बजि कै बसुरी जीत ।  
 बसुरी यासौँ चलत नहिँ बस कर करत अनीत ॥१८६॥  
 कानन लग कै तै' हमैं कानन दियौ बसाइ ।  
 सुचिती है तै' बाँसुरी बस अब वृज में आइ ॥१८७॥  
 ऐसे जौ नित बाँसुरी वह बजाइहै आन ।  
 तौ कैसे रंदि सकैगी या वृज में कुलकान ॥१८८॥  
 मत बजाय इत आइ कै मोहन मुरली - तान ।  
 हरि लैहै काहू मनै नाहक लगिहै कान ॥१८९॥  
 मोहन बसुरी सौँ कछू मेरौ बस न बसाइ ।  
 सुर - रसरी सौँ स्रवन - मगु बांधि मनै लै जाइ ॥१९०॥  
 सुनियत मीननि - मुख लगै बंसी अबै सुजान ।  
 तेरी ये बंसी लगै मीनकेत कौ बान ॥१९१॥  
 अब लग बेधत मन हते हग अनियारे बान ।  
 अब बंसी बेधन लगी सप्त सुरन सौँ प्रान ॥१९२॥  
 बिछुरत सुंदर अधर तै' रहत न जिहि घट सांस ।  
 मुरली सम पाई न हम प्रेम प्रीत को आंस ॥१९३॥

तोहि बजै बिष जाइ चढ़ि आइ जात मन मैर ।  
 बंसी तेरे बैर कौ घर घर सुनियत घैर ॥१८४॥  
 करत त्रिभंगी मोहनहिँ मुरली लग अधरान ।  
 क्यों न तजै ताके सुनै और सबै कुलकान ॥१८५॥  
 मैन चैंपु हित सांठ की डीठ लगाइ उगै न ।  
 धरत अहेरी मन हियै तेरे खंजन नैन ॥१८६॥  
 रूप - नगर दृग - जोगिया फिरत सु फेरी देत ।  
 छबि - मन पावत है जहां पल - भोरी भरि लेत ॥१८७॥  
 तुव अनियारे दृगन कौ सुनियत जग में सोर ।  
 अजमावत का फिरत है कमजोरन सौं जोर ॥१८८॥  
 नजरैई सब रहत हैं एक नजरिया घोर ।  
 उतने ही मैं चोरही चित वित तुव दृग - चोर ॥१८९॥  
 रसनिधि सुंदर मीत के रंग चुचैहैं नैन ।  
 मन - पट कौं कर देत हैं तुरत सुरंग ये नैन ॥२००॥  
 कजरारे दृग की घटा जब उनवै जिहि ओर ।  
 बरसि सिरावै पुहुम - उर रूप - भलान - भकोर ॥२०१॥  
 कैसे मन धन लूटते भावता के नैन ।  
 मनमथ जौ देते नहीं इनकर बरछी सैन ॥२०२॥  
 मतवारे दृग - गज कहूं ऐसे दीजत छोड़ ।  
 नेही - दृग - तन क्यों सकैं इनकी भोकेँ ओड़ ॥२०३॥  
 मैन - महावत दृग - गजन हुलसत वाही ओर ।  
 लाखन में लखि लेत है हिय ही कौ चित-चोर ॥२०४॥  
 मन धन तौ राख्यौ हतौ मैं दीबे कौ तोहि ।  
 नैन - कजाकन पै अरे क्यों लुटवायो मोहि ॥२०५॥  
 प्रेम - नगर दृग - जोगिया निस दिन फेरी देत ।  
 दरस - भीख नँदलाल पै पल - भोरिन भरि लेत ॥२०६॥

दरस - दान तो पै चहै दृग पल - अँजुरी बोड़ ।  
 पूरन कर मन कामना इनै विमुख मत छोड़ ॥२०७॥  
 तब जानै ससि और पै तोए लेव चलाय ।  
 दृग - चकोर तौ रावरी खासी रैयत आय ॥२०८॥  
 जौ नहिं देतौ अतन कहूँ दृगन हरबली आय ।  
 मन-मवास जे सुतिन के को सर करतौ जाय ॥२०९॥  
 देतौ जौ नहिं भेद कहूँ नैनन सौँ मिलि नैन ।  
 मीत उजागर आवतौ कैसे मन धन लैन ॥२१०॥  
 छूटे दृग गज - मीत के बिच यह प्रेम - बजार ।  
 दोजौ नैन - दुकान के महुकम पलक - किवार ॥२११॥  
 जिहि लालच मन-धन दियौ दृगन मीत तुहि ल्याइ ।  
 काहे ते वह रूप - रस देत न इनको प्याइ ॥२१२॥  
 मोहन - छवि - दरियाव में जाइ सकै नहिं पार ।  
 भुभुकि रहत है देखि कै पैरवार दृग - वार ॥२१३॥  
 प्रथम सुमिर तुव दृगन कौं जे प्रनाम करि लेत ।  
 मीता उनको जगत में जादा आदर देत ॥२१४॥  
 नातवान तन पै सुनो एती ताकत है न ।  
 मत भुकाव मों सामुहै गज - मतवारे नैन ॥२१५॥  
 मीत नीत की चाल ये चल जानत हू है न ।  
 छवि - सैना सजि धावहाँ अबलन पै तुव नैन ॥२१६॥  
 ऐसो तौ कीन्हो हतो कछु गुनाह भी मैं न ।  
 मो तन पै भुभुकावही गज - मतवारे नैन ॥२१७॥  
 जब तै नागर मन बसौ आइ सु मैना-मैन ।  
 पहिराए करकै नसा चित - चोरी को नैन ॥२१८॥  
 सिसुताई के अमल में दबे रहत हैं नैन ।  
 मैन अमल के होत कछु लगै पयानौ दैन ॥२१९॥



मीत विदित ये बात ही नैन तुम्हारे आइ ।  
 बरुनी कर जित देत हैं नेहन सीस चलाई ॥२२०॥  
 डीठ - बरत पर नैन चढ़ि कैयक पलटा लेत ।  
 देख तमासौ रीझि कै नेही मन - धन देत ॥२२१॥  
 जिहि मग दैरत निरदई तेरे नैन कजाक ।  
 तेहि मग फिरत सनेहिया कियै गरेवां चाक ॥२२२॥  
 आप बसातै बहुत सौं मन को कियौ बचाय ।  
 हौ न लची दृग लालचिन दीन्हो मनहि लचाय ॥२२३॥  
 रसनिधि नैनन परि गई कछुक अनोखी वान ।  
 पीवत ही छवि पल मधुर लगै लखेटी आन ॥२२४॥  
 रूप - ठगौरी डारि कै मोहन गौ चित चोरि ।  
 अंजन मिस जनु नैन ये पियत हलाहल घोरि ॥२२५॥  
 गुरुजन - नैन - विजातियन परी कौन यह वान ।  
 प्रीतम - मुख अवलोकतन होत जु छाड़े आन ॥२२६॥  
 दृग-द्विज ये उठि प्रातही करि अंसुवनि असनान ।  
 रूप - भूप पै जाचहीं छवि - मुक्ताहल - दान ॥२२७॥  
 अरुन तगा कै नैन जनु गरै जनेऊ डार ।  
 रूप - दान मांगत रहैं ये पल करन पसार ॥२२८॥  
 त्रपत न मानत नैन ये लेत रूप - रस - दान ।  
 रहत पसारै लोभिया निस वासर पल - पान ॥२२९॥  
 जब तैं वह सिर पढ़ि दियौ हेरन मैं हित बील ।  
 पल घर मैं बैठत नहीं तब तैं दृग हुइ सील ॥२३०॥  
 दृग मृग - नैननि को कहूं फांद न पावै जान ।  
 जुलफ - फँदा मुख - भूमि पर रोपै अधिक सुजान ॥२३१॥  
 मत चलाव मो सामुहै इनको तैं अरु मार ।  
 नजर - कटारी बांकुरी पल - न्यानै घर यार ॥२३२॥

रीभूत आपु नजार कौ लखि छवि नंदकुमार ।  
 मन कौ डारत वार जे नोखे दृग रिभवार ॥२३३॥  
 नेह - नगर में कहु तुहीं कौन बसे सुख चैन ।  
 मन - धन लूटत सहज में लाल - बटपरा - नैन ॥२३४॥  
 देखत नैन न देखती यह डर मोहन ओर ।  
 आप लागि करिहैं करन मेरे मन पर जोर ॥२३५॥  
 सुरत - सहेली बाल - छवि नित सँवार कौ ल्याइ ।  
 दृग प्रोतम कौ देत है आळी भाँति मिलाइ ॥२३६॥  
 साधत इक छूटत सहस लगत अमित दृग गात ।  
 अरजुन सम बानावली तेरे दृग करि जात ॥२३७॥  
 तेरे नैन मसालची रूप - मसाल दिखाइ ।  
 नेही - तन तैं विरह - तम दीनौ दूर भजाइ ॥२३८॥  
 मेरे जान सुजान तुव नैन - किलकिला आइ ।  
 हृदय - सिंधु तैं मीन - मन तुरत सुधरि लै जाइ ॥२३९॥  
 सज्जन साँची बात यह यामैं नहीं विबाद ।  
 बिना जीभ के लेत दृग मोहन - रूप - सवाद ॥२४०॥  
 जे अँखियाँ बैरा रहीं लगै विरह की बाइ ।  
 प्रीतम - पग - रज कौ तिन्हें अंजन देहु लगाइ ॥२४१॥  
 हेरत मोहन - रूप कौ बृज - बाला न अघाइ ।  
 चहुँ ओर तैं दौर कौ दृग - कोरन मिल जाइ ॥२४२॥  
 अंजन होइ न लसत तौ ढिग इन नैन बिसाल ।  
 पहिराई जनु मदन गुर स्याम बंदनी माल ॥२४३॥  
 विदित न सनमुख हूँ सकैं अँखियाँ बड़ी लजोर ।  
 बरुनी सिरकिन - ओट हूँ हेरत मोहन ओर ॥२४४॥  
 अवगाहे इन रूप - निधि जब तैं नैन - मलाह ।  
 तब तैं मन - नृप चलत है इनही वृष्णि सलाह ॥२४५॥

जामै ये छवि पावतौ छवि पावता भात ।  
 रसनिधि अँखियां ता हियै नित अवलोकि सिहात ॥२४६॥  
 दृग - दुस्सासन लाल के ज्यौ ज्यौ खँचत जात ।  
 त्यों त्यों द्रौपदि - चीर लौं मन - पट बाढ़त जात ॥२४७॥  
 बाहुक दृग नँदलाल के ऐँड़न ऐँठी घाल ।  
 आड़ि छुटावति मन - हयन तुरत चलावत चाल ॥२४८॥  
 दृग दरजी घरुनी मुई रेसम डोरे लाल ।  
 मगजी ज्यौ मो मन सियौ तुव दामन सौं लाल ॥२४९॥  
 भावंता लखि लगत पल जानत कौ केहि हेत ।  
 पल - ओटन सौं नैन ये रूप - स्वाद कौं लेत ॥२५०॥  
 जब जब निकसत भावतौ रसनिधि इहि मग आइ ।  
 नेह अतर लै डीठ कर लोचन देत लगाइ ॥२५१॥  
 वैहकाए तै' और के ये ही तै' जनि वैकु ।  
 देखन दै मुखचंद कौ नैन - चकोरन नैकु ॥२५२॥  
 थिरकत सहज सुभाव सौं चलत चपल गत सैन ।  
 मनरंजन रिक्कार के खंजन तेरे नैन ॥२५३॥  
 नौंद निरादर देत है नेही - दृग इहि आस ।  
 कबहुँक देखौं उदित है भावंता दृग पास ॥२५४॥  
 सिसक्यौ जल किन लेत दृग भर पलकन मैं आल ।  
 बिचलत खँचत लाज कौं मचलत लखि नँदलाल ॥२५५॥  
 दृगनि दृगन सौं मिल कियौ भेद प्रथम ही जाइ ।  
 मैं न दियौ मन उन लियौ मुहिसल मैं लगाइ ॥२५६॥  
 बिधिवत छबि के फंद सौं नेही मन अभिराम ।  
 खंजन - दृग लखि भीत कौ करत बधिक के काम ॥२५७॥  
 तुव दृग सतरँज - बाज सौं मेरौ बस न बसात ।  
 पादशाह मन कौ करै छबि सह दैकर मात ॥२५८॥

दैन लगत है पास जब विरह - अहेरी आइ ।  
 प्रीतम - रूप - मवास विच बचत नैन - मृग जाइ ॥२५॥  
 अंजन आंदू सौं भरे जद्यपि तुव गज नैन ।  
 तदपि चलावत रहत हैं झुकि झुकि चोटै सैन ॥२६०॥  
 खैचे अंकुस-लाज के रूप - पलक कर है न ।  
 धीरज - द्रुम तोरत फिरैं गज कोमल तुव नैन ॥२६१॥  
 रस रेसम मैं जो दर्ई गांठ अनख भकभोर ।  
 ते तुव दृग नख माहिँ सौं सहजहिँ डारत छोर ॥२६२॥  
 डोठ लगत उर ईठ तन इकटक सकत न हेर ।  
 तऊ लेत दृग लालची चोरी चोरा हेर ॥२६३॥  
 वास्यौ सुमन - सुवास तैं जब तैं पीतम आइ ।  
 तब तैं इन अलि दृगन पर पास न छोड़ौ जाइ ॥२६४॥  
 ठगिया तेरे नैन ये छल बल भरे कितेब ।  
 कतरत पल मकराज सौं नेही मन की जेब ॥२६५॥  
 जुरत दृगन सौं दृगन की पल बागै मुर जाइँ ।  
 पैने नेजा नजर के सौँहै उर उर जाइ ॥२६६॥  
 इनमें है दरसात है हर मूरत की लोइ ।  
 यातैं लोइन कहत हैं इन सौं मिल सब कोइ ॥२६७॥  
 नैन - बान जिहि उरछि है ससकत लेत उसास ।  
 मीत सु उनकी है दवा मिलै न बैदन पास ॥२६८॥  
 उत अलगरजी चाहि इत लगी हियै सर सान ।  
 दृग अनुरागिन कौ परी कठिन दुहूँ बिधि आन ॥२६९॥  
 विरह बांह कह सकत नहिँ होय गए अति छीन ।  
 नैन झिलमिली जानि कै पल बल बारे दीन ॥२७०॥  
 बदन - कूप तैं रूप - रस दृग बिन गुन भर लेत ।  
 और कूप बिन गुन पथिक व्यासे फेरी देत ॥२७१॥  
 २५

लघु मिलनो विछुरन घनो ता बिच बैरिन लाज ।  
 दृग अनुरागी भावते कहु कह करै इलाज ॥२७२॥  
 भूखे लोभी नैन सौं छवि - रस आए चाख ।  
 दृग - तारे दै कै इन्हें नजरबंद कर राख ॥२७३॥  
 ताजी ताजी गतनि ये तब तैं सीखैं लैन ।  
 गाहक मन राजी करै बाजी तेरे नैन ॥२७४॥  
 दृग - नकीब ठाढ़े रहत पल - पौरन यह हेत ।  
 मन - मजलिस में मीत जहँ और भकन ना देत ॥२७५॥  
 रूप - इमारत में इन्हें जाँ तू दए लगाइ ।  
 दरस - मजूरी दै लला नैन - मजूरन आइ ॥२७६॥  
 प्रथमहि नैन - मलाह जे लेव सुनेह लगाइ ।  
 तब मभयावत जाय कै गहिर रूप दरियाइ ॥२७७॥  
 मन में आन न आनही अलबेले तुव नैन ।  
 ता में भयौ हिमायती आइ सो इनकौ मैन ॥२७८॥  
 मीत बिरह की पीर कौ सकैं न पल दृग कांध ।  
 रूप - कपूर लगाइ कै प्रीत - पटी सौं बांध ॥२७९॥  
 गैना नैना लाल के हित में जानत नाह ।  
 नहे नेह की बहल में घुरला जानत नाह ॥२८०॥  
 बनै जहाँ के तहँ रहै लगै होइ उर पार ।  
 बिधि तो हीं कौं रचि दियौ ऐसे दृग हथियार ॥२८१॥  
 प्रथमहि दारू खाइ कै पीछै गोली खाहि ।  
 तेरे नैन बँदूक ये चोटहि चूकत नाहि ॥२८२॥  
 गुरुजन - डर सौं चतुरई बरुनी झिलमैं डार ।  
 निधरक प्रीतम - बदन तन अँखियां रहीं निहार ॥२८३॥  
 रसनिधि मोहन रूप तौ जिहि में तिहि सरसाइ ।  
 तिनकौ राखौ नेहियन नैन मांझ ठहराइ ॥२८४॥

टौना अँखि बस - करन कौ करे हते इन जाइ ।  
 अब उलटे रौना पर्यौ गरे दृगन के आइ ॥२८५॥  
 मन सुबरन धरिया हियौ लाल सुहाग मिलाइ ।  
 दृग सुनार हित आंच दै कुंदन कियौ तपाइ ॥२८६॥  
 रूप लोभ बस मिल गए नैन पहरवा जाइ ।  
 तब लौं तौ चित चोर नै मन धन लियो चुराइ ॥२८७॥  
 नैन सनेहन के मनौ हलवी सीसा आइ ।  
 गुपत प्रगट तिन में सदा भीत - सुमुख दरसाइ ॥२८८॥  
 जालिम नैनन के जुलम कहियै काके पास ।  
 पल पल खँचत रहत हैं पल सँड़सिन सौं मास ॥२८९॥  
 मोहन - मुख लखि आपुही ये सरसावत हेत ।  
 चाह वावरी मांभ दृग मन कौ गोता देत ॥२९०॥  
 एक नजरिया कै लखै जो कोइ होइ निहाल ।  
 तौ यामैं तुव गाँठ कौ कहा जात है लाल ॥२९१॥  
 तनिक किरकिरी कै परै पल पल में अहटाइ ।  
 क्यौं सोवै सुख नोंद दृग भीत बसै जब आइ ॥२९२॥  
 नैना मोहन रूप सौं मन कौ देत मिलाइ ।  
 प्रीत लगै मन की बिथा सकैं न ये फिर पाइ ॥२९३॥  
 धरे हते मुहरा घनै मैले हियौ बिसात ।  
 मो मन साहिय कौ करौ तैं दै दृग सह मात ॥२९४॥  
 बरुनी - बंधनवार रचि पल - मंडप द्विज मैन ।  
 छवि - धन सौं चित चाय सौं भरत भावरे नैन ॥२९५॥  
 मेरेई दृग भीत कर जौ मन भावै वैच ।  
 तौ याके इनसाफ कौ काहि बुलाऊं खँच ॥२९६॥  
 दृग माली ये डीठ कर निरखि रूप की बेल ।  
 लेत सु चुन छवि की कली पल भोरिन सौं भेल ॥२९७॥

तीन पैंड़ जाके लखौ त्रिभुवन में न समाइ ।  
 धन राधे राखत तिन्हें तूं दग आधिन माइ ॥२६८॥  
 मेरे नैननि हूँ लखौ लाल आपनौ रूप ।  
 भावत हूँगौ भावतौ कैसी भांति अनूप ॥२६९॥  
 मन गरुवौ कुच गिरिन पै सहजै पहुँच सकै न ।  
 याही तै लै डीठ के पैरे बांधत नैन ॥३००॥  
 मन - धन तो पै भावते जे वारैई देत ।  
 दग चोरन बन कै हियौ क्यों वारैई देत ॥३०१॥  
 नेहिन दर आवत लखौ जबहीं धीरज सैन ।  
 सैफी - हेरन मैं पटे कैफी तेरे नैन ॥३०२॥  
 पीवत नहीं अघात छिन नार्हीं कहत बनै न ।  
 पलवो कै बाधै रहैं छबि - रस - प्यासे नैन ॥३०३॥  
 सुहृद - जगत मैं दगन से रसनिधि दूजे नार्हि ।  
 बड़े दगन लखि आप तौ तन मन हियौ सिहाहि ॥३०४॥  
 नैन - अनी जब जब जुरै रूप बनी मैं आइ ।  
 तब तब आड़ी बीच मैं लाज परत है आइ ॥३०५॥  
 पल जौरन कै दग पला जब तैं सिखए सैन ।  
 तब तैं नेही चित छला लगे लला कौ दैन ॥३०६॥  
 भरत सांस लै हर घरी रूप दरस की आस ।  
 वृषित दगन की मिटत कहुँ आंसू-घूटन प्यास ॥३०७॥  
 वृषित दृगन की वृपति जौ ध्यान धरै तैं होइ ।  
 ओसन बुझती प्यास जौ नीर न पीतौ कोइ ॥३०८॥  
 नैन कमल ह्यां लगत हैं कमल लगत हैं वाइ ।  
 कमल - नाल सज्जन हियौ दैनौं येक सुभाइ ॥३०९॥  
 जादूगर तुव दगन यह यौं कर लियौ सुतंत्र ।  
 तब तैं वाहि न फुरत है तंत्र न जंत्र न मंत्र ॥३१०॥

बिना तमाखू सूरती छवि वीरा न मिठाइ ।  
 परै अनैखौ अमल यह गरै दृगन के आइ ॥३११॥  
 अपने से दृग लागनै जो तूं लखतौ और ।  
 तौ तेरोऊ चित लला नैक न रहतो ठौर ॥३१२॥  
 मैं दीनौ उननै लियौ मन - धन देखत ऐन ।  
 बूझे मुकरे जात हैं अब काहे तुव नैन ॥३१३॥  
 बैपारी दृग मीत के तिनही वाले देत ।  
 बधी बांध कै बाट की बिन जोखे मन लेत ॥३१४॥  
 कछू सुलोच न नखन मैं लाल सुलोचन आइ ।  
 चित-चेरौ जातै सुचित बहुर न सकियतु पाइ ॥३१५॥  
 तिल चुन लालच लाग कै दृग खंजन चल जाइ ।  
 जुलफ फँदा तैं जाँ बचै दृग फंदन परिजाइ ॥३१६॥  
 रिस रस दधि सकर जहाँ मधु मधुरी मुसक्यान ।  
 घृत सनेह छवि पय करै दृग पंचामृत पान ॥३१७॥  
 गढ़ि गढ़ि जो छवि के छला पल मैं करै तयार ।  
 ये नौने पहिराइहै तुव दृग मीत सुनार ॥३१८॥  
 नैन लगार घूंघट खुलहि पवन खोल जब लेत ।  
 नेही मन किरवान कन भपट सतूना देत ॥३१९॥  
 दीन्हौ नेहन कौ अमी मद असनेहन प्याइ ।  
 हियौ समुद मनमथ मथौ तामैं तैं दृग ल्याइ ॥३२०॥  
 फोरत बानै ढाल कै तनिक लगायै मैन ।  
 अचरज कहि भेदौ जु मन मैन भरे सर नैन ॥३२१॥  
 षरी करेजै नैन तुव सरसि करेजे वार ।  
 अजहूं सुरभक्त नाहि ते सुर-हित करत पुकार ॥३२२॥  
 सोहत हैं यह भांति जे भावंता के नैन ।  
 तारे मधुकर कमल दल बैठे जनु रस लैन ॥३२३॥



प्रगटत अंजन लीक छवि अहि - सावक मति जान ।  
 अलक भुअंगम देख जनु सकुच रहे जस मान ॥३२४॥  
 क्यौं न रसीले होहिँ दृग जे पोपे हित लाल ।  
 खाटे आम मिठात हैं भुस में दीनै पाल ॥३२५॥  
 पल अंजुल जोरै कहै दो 'हा' सौं बिच सैन ।  
 मन-मोहन सौं रुचिर छवि रुचि सौं मांगत नैन ॥३२६॥  
 दरसति जब वाढ़ी हती सो तुम दृगन न दीन ।  
 अरुनिन फिरयादी जहै वसन भगौहैं कीन ॥३२७॥  
 तेरी यह अदभुत कथा कही जाइ नहिँ वैन ।  
 चित - चीतन कौ तैं कियै अरी सेर मृग - नैन ॥३२८॥  
 तुव दृग नागर सुघर जे वाहि न लेते मोल ।  
 को लै सकतो लाल मन रसनिधि अधिक अमोल ॥३२९॥  
 जान जान कीनै जु तैं नेहन ऊपर वार ।  
 भरे जु नैन कटाछ को खंजर पंजर फार ॥३३०॥  
 यातैं पल - पलना लगत हेरत आनंदकंद ।  
 पियत मधुर छवि दृगन को जात ओठ हैं बंद ॥३३१॥  
 यह छोटे बित नैन ये करत बड़े से काम ।  
 तिल तारन बिच लै धरे मोहन मूरति स्याम ॥३३२॥  
 बरजि राख बटपार थे अरी आपनै नैन ।  
 मन मथिबे को मनमथहिँ देत चवाई सैन ॥३३३॥  
 पीवत पीवत रूप - रस बढ़त रहै हित प्यास ।  
 दर्ई दर्ई नेही दृगन कछू अनौखी प्यास ॥३३४॥  
 बात चलत जाकी करै असुराई नेहीन ।  
 है कछु अदभुत मद भरो तेरे दृगन प्रवीन ॥३३५॥  
 पुरजा पुरजा करत है प्रथम करेजा थान ।  
 फिर बरनी सूजन सियै दरजी नैन सुजान ॥३३६॥

हेरत जित ये सहज ही तुव दृग सुभट अमोर ।  
 मुर मुर जाती नैन की सैना जुरी करोर ॥३३७॥  
 हरे सुखवि तृन चरत ये मन मृग रूप कछार ।  
 सिंह रूप तुव दृग लखै गिरत सु खाइ पछार ॥३३८॥  
 छवि धन में दौरन लगे जब तैं तुव दृग मेव ।  
 तब तैं कढ़ै सनेहिया मन छन लैकै छेव ॥३३९॥  
 मनहुं की गति करत हैं ये पल पल में पंग ।  
 करत खुरी पल में अमित तेरे नैन तुरंग ॥३४०॥  
 रुकत न खंजन नैन ये जतन कीजियत कोर ।  
 प्रीतम मन तन चञ्चल है पल पिंजरन कौं तोर ॥३४१॥  
 भौह कुटिल बरुनी कुटिल नैना कुटिल दिखात ।  
 बेधन कौं नेही हियौ क्यों सूधे हूँ जात ॥३४२॥  
 नैन - वान जिहि उर छिदै कसकत लेत न सांस ।  
 मीतहि उनकी है दवा मिलै न वैदन पास ॥३४३॥  
 जौ कछु उपजत आइ उर सो वे आखैं देत ।  
 रसनिधि आखैं नाम इन पायौ अरथ समेत ॥३४४॥  
 नैन किलकिला मीत के ऐसे कछू प्रबोन ।  
 हिय समुद्र तैं लेत हैं वीन तुरत मन - मीन ॥३४५॥  
 उपजत जीवन-मूर जहँ मीत - दृगन में आइ ।  
 तिनके हेरै तुरत ही अतन सतन हूँ जाइ ॥३४६॥  
 प्रेम - नगर में दृग - वया नोखे प्रगटे आइ ।  
 दो मन कौं कर एक मन भाव दियौ ठहराइ ॥३४७॥  
 अदभुत रचना विधि रची यामैं नहीं विवाद ।  
 बिना जीभ के लेत दृग रूप सलौनौ स्वाद ॥३४८॥  
 रूप - सरोवर माहिँ तुव फूलै नैन - सरोज ।  
 ता हित अलि नेही तहां आवत दैरे रोज ॥३४९॥

या ब्रज में है बसतही हेली आइ सुतंत्र ।  
 हेरन में कछु पढ़ि दियौ मोहन मोहन - मंत्र ॥३५०॥  
 चतुर चितेरे तुव सबी लिखत न हिय ठहराइ ।  
 कलम छुवत कर आगुरी कटी कटाछन जाइ ॥३५१॥  
 नैक नजरिया के लखै जौ कोउ होइ निछाल ।  
 तौ यामैं तुव गाँठ कौ कहा जात है लाल ॥३५२॥  
 यह उर दग नहिं लख सकै सूधे मोहन ओर ।  
 बदन कमल में गड़हिगी बरुनी अनी कठोर ॥३५३॥  
 करि उपाय बहुतौ थके काढ़े कढ़ते नाहिं ।  
 रूप - बदन के जे पला हेरत ही चुभि जाहिं ॥३५४॥  
 उपमा भौहन जो दर्ई लहै न एते साज ।  
 टेढ़ी पैनी स्याम अति जैसे नाखन बाज ॥३५५॥  
 मेरे मन के बध दये जब तैं इन्हें लगाइ ।  
 फिरै न भौंह कमान तूं अर बरही ठहराइ ॥३५६॥  
 श्रवत रहत मन कौ सदा मोहन-गुन अभिराम ।  
 तातैं पायौ रसिकनिधि श्रवन सुहायौ नाम ॥३५७॥  
 नेही मन कटि जात लखि प्रीतम कटि अभिराम ।  
 करि करि ऐसो काट यह पायौ है कटि नाम ॥३५८॥  
 मन गर्यंद छबि मद छके तोर जँजीरन जात ।  
 हित के भीनै तार सौ सहजैहीं बँधि जात ॥३५९॥  
 जोरति है मन जतनि कै बहुतक धीरज घेर ।  
 बिथुर जात है तुरत ही मीत सैन कौ हेर ॥३६०॥  
 जो कहियै तौ सांच कर को मानै यह बात ।  
 मन के पग छालें परे पिय पै आवत जात ॥३६१॥  
 मन मैला मन निरमला मन दाता मन सूम ।  
 मन ज्ञानी अज्ञान मन मनहि मचाई धूम ॥३६२॥

मन-गज मद-मौकल भयौ रहत न अपनै हाथ ।  
 लग्यौ रहत पर मोह कौ पीलवान चित साथ ॥३६३॥  
 उड़ौ फिरत जो तूल सम जहां तहां बेकाम ।  
 ऐसे हरये कौ धर्यौ कहा जान मन नाम ॥३६४॥  
 को अवराधे जोग तुव रहु रे मधुकर मौन ।  
 पीतांबर को छोर तैं छोर सकै मन कौन ॥३६५॥  
 तुव छवि सौंहनि सौं अरे जो मन लागत आइ ।  
 दित अनहित दुहु बीच ही पल पल छीजत जाइ ॥३६६॥  
 छवि-धन दै नँदलाल ये किये अयाची आइ ।  
 पल-कर तब तैं घोर पै दृग न पसारत जाइ ॥३६७॥  
 निरख छवीले लाल फौ मन न रहौ मो हाथ ।  
 बँधौ गयौ ता बसि भयौ छवी-दान के साथ ॥३६८॥  
 मट की मटकी सीस धर चल कछु बकि मुसक्याइ ।  
 लखि वह घट की सुध गई छवि अटकी दृग आइ ॥३६९॥  
 बनवारी वारी गई बनवारी पै आज ।  
 मन-वारी हर लै गयौ वा मोहन ब्रजराज ॥३७०॥  
 घैर मथन सुनियत रहै जहां तहां ब्रज - भौन ।  
 मोहन - छवि - छकि ना गरी सोच नागरी कौन ॥३७१॥  
 वाढो सुंदरता अधिक हरिहर अंग अनेक ।  
 कितै , कितै हेरै अरी द्रोठ बिचारी एक ॥३७२॥  
 करत जतन बल बहुत सौं नैकहु निकस सकै न ।  
 छवि - चहले मैं जा फँसे बिरह - दूबरे नैन ॥३७३॥  
 रूप - नगर मैं बसत हैं नगर - सेठ तुव नैन ।  
 मन - जामिन लै नेहियन लगे पुँजी - छवि दैन ॥३७४॥  
 रसनिधि प्रेम तबीब यह दियौ इलाज बताइ ।  
 छवि अजवाइन लख दृगन बिरह गिरानी जाइ ॥३७५॥

प्रीतम मरजी के भए जवि जु मरजिया आइ ।  
 छवि-मुकता उनही लहे रूप-समुद में जाइ ॥३७६॥  
 दृग रिभवारन हिय रहै यहै परेखौ एक ।  
 वारन कौ मन एक इत उत है अदा अनेक ॥३७७॥  
 कोटि भानु दुति दिपत है मोहन छिगुरी छोर ।  
 यातै बरनी ओट हू दृग हेरत वह ओर ॥३७८॥  
 नैनन की अरु करन की तारी तारी दोइ ।  
 मीत पूछ यह बात तूं जिहि निरधारी होइ ॥३७९॥  
 यह विचार छवि रस इन्हें बार बार तूं प्याइ ।  
 प्यास और तैं सौगुनी लगत घाइलन आइ ॥३८०॥  
 इही मतौ ठहराइये अली हमारे जान ।  
 जान न दीजै कान्ह कौ जान दीजिये जान ॥३८१॥  
 रसनिधि जब कबहुं बहै वह पुरवइया बाइ ।  
 लगी पुरातन चोट जो तब उभरति है आइ ॥३८२॥  
 नैन चकोरन है लखौ जब ससि मुख कौ आइ ।  
 तब याकी चित - चाह कछु तुमकौ जानी जाइ ॥३८३॥  
 भेजौ सुमन सनेह में कछुक पथिक कै साथ ।  
 बाह लगायौ कै नहीं गात आपनै हाथ ॥३८४॥  
 दिवस बितावत ब्रज बधू सुरत ध्यान में पूर ।  
 बदन-चंद लखि बिरह-तम निस कौ करती दूर ॥३८५॥  
 सब दरदन कौ ज्यौ दवा जग में बिधि कर दीन ।  
 बेदरदी महबूब की काहे खोइ न दीन ॥३८६॥  
 उड़ौ गुड़ौ लौं मन फिरै डोर लाल के हाथ ।  
 नैन तमासे कौ रहै लगे निरंतर साथ ॥३८७॥  
 निस बासर घनस्याम पै चहै स्वांति छवि बूंद ।  
 दृग - चातिक लखि आन रस रहै चौंच पल मूंद ॥३८८॥

नगर बसै न गरै लगै सुनियै नागर नार ।  
 पगरै रगरै सुमन लै डारै बगर बहार ॥३८६॥  
 भोर होत पीरी लगी यातै ससि मुख जोत ।  
 सरसन दरद चकोर की आइ हियै सुधि होत ॥३८७॥  
 लगन लाग दुउ एक सम इन में अंतर एह ।  
 वह आसा लीनै रहै यह आसा तज देह ॥३८८॥  
 जसुमति या ब्रज में कहौ अब निबाह क्यों होइ ।  
 तब दधि चोरी होत ही अब चित चोरी होइ ॥३८९॥  
 किसलै - दल के बान जे घाले अंबुज ईठ ।  
 अजौ फिरत है अलि लखौ हरद लगायै पीठ ॥३९०॥  
 ससि चकोर दृग आरसी लखि अपनौ मुख आइ ।  
 अनदेखै देखै यहै लगियौ दृगनि सुहाइ ॥३९१॥  
 प्रीतम कहि यह बात कौ जानो जात न हेत ।  
 मो दृग तारन कौन बिधि बदन चंद भर देत ॥३९२॥  
 दृग सेवक नृप रूप में ऐसौ सुनियत हेत ।  
 ये मन हीरा देत हैं वे छबि हीरा देत ॥३९३॥  
 लागै सकत सनेह जहँ जानत वहै सरीर ।  
 सुन्यौ न लोहे लहत कहूँ घायल दिल की पीर ॥३९४॥  
 सुध न रही देखतु रहै कल न लखै बिन तोहि ।  
 देखै अनदेखै तुहै कठिन दुहुँ बिधि मोहि ॥३९५॥  
 नौद दुहुन के दृगन में सकै न पल ठहराइ ।  
 जो चोरी कौ फिरत है जिहि चित चोरौ जाइ ॥३९६॥  
 हित मन कौ पहिचानि जौ ससि लखतौ वह ओर ।  
 चुनते चोच अंगार लै काहै काज चकोर ॥४००॥  
 उदौ करत जब प्रेम-रवि पूरब दिसि तैं आइ ।  
 कहूँ नैम तम जात है देखौ जात बिलाइ ॥४०१॥

बाँधे जे मन चित्त तैं सरस प्रेम की डोर ।  
 अनख नखन सौं भावते उन्हें सकै को छोर ॥४०२॥  
 चसमन चसमा प्रेम कौ पहिले लेहु लगाइ ।  
 सुंदर मुख वह मीत कौ तव अवलोकौ आइ ॥४०३॥  
 रिझवारे नंदलाल पै मन मेरो न अघाइ ।  
 घर लौं आवत वार कै फिर चल वारन जाइ ॥४०४॥  
 राखे हैं हिय - सेज मैं चुन कै सुमन बिछाइ ।  
 अरे गुमानी पलक तौ इहाँ पावँ घर आइ ॥४०५॥  
 अद्भुत गत यह प्रेम की बैनन कही न जाइ ।  
 दरस भूख लागै दृगन भूखहि देत भगाइ ॥४०६॥  
 अकथ कथा यह प्रेम की कही जाइ नहिं बैन ।  
 रूप - सिंधु भर लेत है पल - प्यालिन मैं मैन ॥४०७॥  
 प्रेम - पियाला पो छके तेई हैं हुसियार ।  
 जे माया मद सौं भरे ते बूड़े मँझधार ॥४०८॥  
 हरि बिछुरत बीती जु हिय सो कछु कहत बनै न ।  
 अकथ कथा यह प्रेम की जिय जानै कै नैन ॥४०९॥  
 उरभूत दृग बँधि जात मन कही कौन यह रीति ।  
 प्रेम - नगर मैं आइ कै देखी बड़ी अनीति ॥४१०॥  
 भरि आए हैं सुमन ए फूल हियै सरसान ।  
 हरिआए हैं बन सघन हरि आए बन जान ॥४११॥  
 प्रेम नगर की रीत कछु बैनन कहत बनै न ।  
 रुजू रहत चितचोर सौं नेहिन के मन नैन ॥४१२॥  
 प्रेम नगर के कान दै सुनौ चरित ये चार ।  
 जोई चित वित कौ हरै करै वहै हिय हार ॥४१३॥  
 न्यारौ पैड़ौ प्रेम कौ सहसा धरौ न पाव ।  
 सिर के पैड़ै भावते चली जाय तौ जाव ॥४१४॥

नैम न हूंदे पाइयै जेहि थल बाढ़ै प्रेम ।  
 रहत आइ हरि दरस के प्रेम आसरै नेम ॥४१५॥  
 या रस कौ रसना श्रवन कहन सुनन के नाहिँ ।  
 सैना सैनी बैन कौ नैना समझ सिहाहिँ ॥४१६॥  
 मन मैं बस कर भावते कहौ कवन यह हेत ।  
 प्रगट दृगन कौ आइ कै क्यौ न दिखाई देत ॥४१७॥  
 केसी कंस सको नहीं जासौ जोर चलाइ ।  
 तापर अबला सहज ही मुरली लेत छिनाइ ॥४१८॥  
 हिय दरपन कौ देख जब पारो प्रीत लगाइ ।  
 तब वा महुँ नँदलाल कौ सुंदर मुख दरसाइ ॥४१९॥  
 उर अकास जहँ आइकै हित ससि कियौ उदेत ।  
 प्रीत जुन्हैया कौ तहाँ कहु दुराव कहँ होत ॥४२०॥  
 डोठ डोर नैना दही छिरक रूप रस तोइ ।  
 मथ मो घट प्रीतम लियौ मन नवनीत बिलोइ ॥४२१॥  
 रसनिधि यह नैनन लखौ नवल प्रीत के रंग ।  
 रूप रोसनी दीप मुख नेह लग्यो मो अंग ॥४२२॥  
 तौ तुम मेरे पलन तैं पलक न होते ओट ।  
 व्यापी होती जो तुमैं ओट भए की चोट ॥४२३॥  
 जा काहु कौ देत प्रभु तैं लगाइ कै हेत ।  
 फिर तिहि पलकन ओट पल कहु काहे कर देत ॥४२४॥  
 वह पीतांबर की पवन जब तक लगै न आइ ।  
 सुमन कली अनुराग की तब तक क्यौ बिगसाइ ॥४२५॥  
 सांची है यह भावते भय बिन प्रीत न होइ ।  
 बिदित प्रीत भय तै लखौ तन दुति पौरी होइ ॥४२६॥  
 अदभुत गत यह प्रेम की लखौ सनेही आइ ।  
 जुँरै कहूँ दूटै कहूँ कहूँ गांठ परि जाय ॥४२७॥



प्रीत तार अरु तार में राग जोत ठहराइ ।  
 लै छूटै करतार तौ फिर कुतार है जाइ ॥४२८॥  
 हिय-सीसा मध हित-अतर जितौ राखिए बंद ।  
 खसबोई वाकी तिती रसनिधि रहै सुछंद ॥४२९॥  
 और चोट बच जात है कछुक पाइकै ओट ।  
 पलक ओट प्रीतम भए लागत दूनी चोट ॥४३०॥  
 मेरेई अनुराग में कछु इक खोट दिखाइ ।  
 जातैं मन पट लाल कौ हो न रंगिलौ जाइ ॥४३१॥  
 नेहिन के मन कांच से अधिक कनकनै आइ ।  
 दृग - ठोकर के लगत ही टूक टूक होइ जाइ ॥४३२॥  
 सपनै हू आए न जे हित गलियन मझियाइ ।  
 तिन सौं दिल को दरइ कहि मत दे भरम गमाइ ॥४३३॥  
 नेह लगे सै ये बदन चिकनै सरस दिखाइ ।  
 नेह लगायै भावतौ क्यों रुखो होइ जाइ ॥४३४॥  
 सरस सुमन सौं वास कै तिल समान सौं पेर ।  
 कीन्हौ नेह तयार जहँ भीत रुखाई हेर ॥४३५॥  
 असनेही जानै कहा नेही मन अनुराग ।  
 कहूँ हंसन की चाल कौ चल जानत है काग ॥४३६॥  
 तिल ताबे है भावते नेह त्याग पिर जात ।  
 पेरे हू छोड़े नहीं नेही नेही गात ॥४३७॥  
 तेरे नट पट नैन ये कछू न जानै जात ।  
 जाही तन में तू बसत तेही पेरे जात ॥४३८॥  
 जारत दीप पतंग कौं या आसा सौं आइ ।  
 लेत सनेही जान कै यातैं जोत मिलाइ ॥४३९॥  
 जैसे दुवि अच्छर मिलै नाम कहावत नेह ।  
 जुगल किसोरी परसपर यह बिधि सुनौ सनेह ॥४४०॥

हेरत नैक न सामुहै मुख मोरै री जात ।  
 चित चोरैई जात हित जोरैई चित जात ॥४४१॥  
 और लतन सौं हित-लता अद्भुत गति सरसाइ ।  
 सुमन लगै पहिलै इहै पाछे कै हरियाइ ॥४४२॥  
 हित बतियन की रसिकनिधि लखि अद्भुत गति एह ।  
 प्रीतम मुख पर जोत है मेरे हिय में नेह ॥४४३॥  
 स्वच्छ सुतिय तन भूमि लहि जहँ पानिय सरसाइ ।  
 मन माली दीन्ही तहां हित की लता लगाइ ॥४४४॥  
 या भीनै हित तार में बल एतो अधिकाइ ।  
 अखिल लोक को ईश जो जासौ बाँधौ जाइ ॥४४५॥  
 नेही लोहा नूर लखि कटत कटाछन माह ।  
 असनेही हित खेत तजि भागत लोहे जाइ ॥४४६॥  
 नेहिन के मन भावते बिरह आँच सौं ताइ ।  
 कुंदन सौं कर लेत है रूप - कसौटी लाइ ॥४४७॥  
 नेह अतर की चिकनई जेहि दृग परसी जाइ ।  
 भलकत जलकन की रहै बिच नहि पलकन आइ ॥४४८॥  
 या घट को सौं टुक कर दीजै नदी बहाइ ।  
 नेह भरे हूँ पै जिन्हें दैर रुखाई जाइ ॥४४९॥  
 रुखे रुखे जे रहत नेह बास नहि लेई ।  
 उन तै वै मखियां भली नेह परसि जिय देई ॥४५०॥  
 हित राजी में राखबी चित राजी की बात ।  
 इतराजी कर कहूँ सुनै प्रीतम नेह निभात ॥४५१॥  
 यामैं कछु धोखौ नहीं नेही सूर समान ।  
 दोऊ सनमुख सहत हैं दृग अनियारे बान ॥४५२॥  
 प्रीतम ही तै नेह कौ हान न दीजै छीन ।  
 नेह घटै ही लगत है दीपक - जोति मलीन ॥४५३॥

मृदु बिहँसन मुसक्यान में कर नेही दृग बंद ।  
 काहे कौ खोलत अरे तै' ये जुलफन फंद ॥४५४॥  
 विधि हूँ ते जे अधिक हैं नेह सु मेरे जान ।  
 मीत दरस कौं देत कर नैनमई तन प्रान ॥४५५॥  
 मन माली हिय भूमि में बोवै हित कौ बाग ।  
 मोहन आन निहारियै लागै फल अनुराग ॥४५६॥  
 बिन दामन सौं दाम लै सुनी न अब तक बात ।  
 बिन दामन हित हाट मैं नेही सहज बिकात ॥४५७॥  
 उतै रुखाई है घनी थोरो मुक्त पै नेह ।  
 जाही अंग लगाइयै सोई सोखै लेह ॥४५८॥  
 बार बार ब्रज बाल कौं यह विध हियौ डराइ ।  
 नेह लगै मोहन दसा मत हम सी होइ जाइ ॥४५९॥  
 रूप चिराक चिराक की गत एकैई जान ।  
 दुऔ नेह सौं करत हैं प्रगट रोसनी आन ॥४६०॥  
 सुंदर पलकन पै लसै ए निस तारे आइ ।  
 रसनिधि नेही दिलन के ए दृग तारे आइ ॥४६१॥  
 व्यंग बचन तैं कढ़त है जौ कोई धुन आइ ।  
 ताहि समझ नेही हियौ बार बार अकुलाइ ॥४६२॥  
 मांगत विधि सौं ब्रज - बधू प्रनपत कर बड़ एह ।  
 हम सौं मोहन नेह कै हम सौं करै न नेह ॥४६३॥  
 धनि दृग तारन के जु तिल जिन में स्याम सनेह ।  
 बिना नेह के तिल किते परे रहत हैं देह ॥४६४॥  
 चित इक हित बहु सजन यह कर देखो हिय गौर ।  
 धरी जात कछु कौन बिध एक बस्तु छै ठौर ॥४६५॥  
 हित लालहिं लै हिय डबा जे तौ धरौ दुराइ ।  
 होत जोत वाकी प्रगट तरु दृगन में जाइ ॥४६६॥

सवन सुनौ है यह नयौ नेह नगर में भाव ।  
 हेत न तहँ मन भावतौ मन के साटै पाव ॥४६७॥  
 नेह - नगर में रीत यह लखौ अनोखी बाहु ।  
 रसनिधि चित के चोर हू बिदित कहावत साहु ॥४६८॥  
 मन विकिगौ हित हाट में नंदनंदन के पान ।  
 ऐसौ समयौ जुरत है परम भाग तै आन ॥४६९॥  
 चित वित नेहिन के जहां निबहन पावत नाहिँ ।  
 असनेही निरमै फिरै मन नग लादे जाहिँ ॥४७०॥  
 हरवौ हरवौ धरन पै धरियै प्रीतम पाइ ।  
 सुमन सनेहिन के बिछे मत कहूँ बिछलै जाइ ॥४७१॥  
 दरद दवा दोनौ रहै प्रीतम पास तयार ।  
 नेहिन कौ निरबाहवौ वाही के अखत्यार ॥४७२॥  
 दरदहि दै जानत लला सुध लै जानत नाहिँ ।  
 कहे बिचारे नेहिया तुव धाले कित जाहिँ ॥४७३॥  
 अद्भुत बात सनेह की सुनौ सनेही आइ ।  
 जाकी सुध आवै हियै सबई सुध बुध जाइ ॥४७४॥  
 कहनावत यह मैं सुनी पोषत तन कौ नेह ।  
 नेह लगायै अब लगी सूखन सिगरी देह ॥४७५॥  
 और जवाहिर की प्रभा जहां धरौ तहँ होत ।  
 हित मानिक की जगत में सरस प्रकासित जोत ॥४७६॥  
 रखी राखहि कहत सब मोह अचंभौ एह ।  
 पटहू के बर लाग बहु खँच नेह कौ लेह ॥४७७॥  
 बोलन चितवन चलन मैं सहज जनाई देत ।  
 छिपत चतुरई कर कहूँ अरे हिए कौ हेत ॥४७८॥  
 बांध अरे हित यार कौ पहिलै मुहकम आइ ।  
 तब गहिरौ हूँकै इहां नेह नीर ठहराइ ॥४७९॥

मीता तूं चाहत कियौ रूखी बतियन जोत ।  
नेह बिना ही रोसनी देखी सुनी न होत ॥४८०॥  
नेहिन पै मन भावते मति तैं रूखो होइ ।  
राख रूखाई देयगी नेह चिकनई खोइ ॥४८१॥  
तूं इन सौं नित व्याज की कथा चलावत आइ ।  
नेहिन तौं मन - धन दियौ तुहि निरव्याजौ ल्याइ ॥४८२॥  
नेह ललक घन सौ भयै हित सौ भीनौ तार ।  
मन गयंद तासौ वंधौ भूमत प्रीतम द्वार ॥४८३॥  
आप बसातै सज्जना नेह न दीजे जान ।  
नेही तिल नेहै तजै खरि हो जात निदान ॥४८४॥  
रूप सिंधु मथि स्याम दृग मोहन बनक बनाइ ।  
दीनों नेहिन बिरह विष छवि मद असुरन प्याइ ॥४८५॥  
तुम गिरि लै नख पै धरौ इन तुमको दृग कोर ।  
दो मैं तै तुमही कहौ अधिक कियौ कोहि जोर ॥४८६॥  
तनि मुख तौं चाहियत हतौ हर विष विधहि मनाइ ।  
भली भई जो सखि भयौ मोहन मथुरै जाइ ॥४८७॥  
बारक तुम गिर कर धरौ गिरधर पायो नाम ।  
सदा रहैं तुम्ह उर धरै उनको अबला नाम ॥४८८॥  
पोर - पोर - तन आपनौ अनत बिधायौ जाइ ।  
तब मुरली नंदलाल पै भई सुहागिन आइ ॥४८९॥  
तेरे घर बिधि कौं दयौ दयौ न कोऊ खात ।  
गोरस हित घर घर लला काहे फिरत ललात ॥४९०॥  
घट बड़ इनमें कौन हैं तुहीं सामरे ऐन ।  
तुम गिरि लै नख पै धरौ इन गिरिधर लै नैन ॥४९१॥  
जान अजान न होत है जगत बिदित यह बात ।  
बेर हमारी जान कै क्यों अजान होइ जात ॥४९२॥

नंदलाल सँग लग गए बुध बिचार बर ज्ञान ।  
 अथ उपदेसनि जोग ब्रज आयौ कौन सयान ॥४८३॥  
 यह अथ कौन कला निधी कहौ कलानिधि आप ।  
 होइ सुधाकर करत है विरहिनि तन संताप ॥४८४॥  
 इनसौं घट भर लीजिए या मैं नहीं बिबाद ।  
 जान सकै रस कूप कौ रसना कहा सवाद ॥४८५॥  
 कै राखौ कर मैं छला कै मन कौ ब्रजनाथ ।  
 एक हाथ मैं ए दोऊ कैसे रहिहैं साथ ॥४८६॥  
 जो चकोर सम आवतौ लखि तुहि सरसिजं माल ।  
 होतौ विदित चकोर तिय ससि तेरीई हाल ॥४८७॥  
 बचो रहौ चित - चोट तैं मेरे मोहनलाल ।  
 चोट लगै हुइ जाइगौ मेरीई सौ हाल ॥४८८॥  
 अधियारी निस कौ जनम कारे कान्ह गुवाल ।  
 चित - चोरी जो करत है कहा अचंभौ लाल ॥४८९॥  
 सुध लै जानत है कछू कै भौहैंई तान ।  
 यही वृक्ष पै आप तुम बड़े कहावत जान ॥५००॥  
 जिन मोहन ने सहज मैं नख पर धरौ पहार ।  
 भारी कैसे कै लगै तिनहि विरह कौ भार ॥५०१॥  
 गिरधर लियौ छिपाइ कै तन तिनका की ओट ।  
 और कहा कछु कलन की अली बांधियत मोट ॥५०२॥  
 होत सनेही कौ तहां कहु कैसे निरवाह ।  
 चित बित हर दृग रावरे जहां कहावत साह ॥५०३॥  
 तीन पैर जाके लखौ त्रिभुवन मैं न समाहि ।  
 धन राखे राखत तिन्हें लोइन कोइन माहि ॥५०४॥  
 इंद्र गरब हर सहज मैं गिर नख पर धर लीन ।  
 इह इतना बितना भरा कहु कितना बल कीन ॥५०५॥

गोपी जो तुहिँ प्रेम करि करती नहीं सनाथ ।  
 को कहतौ तुहिँ नंद - सुत जग मैं गोपीनाथ ॥५०६॥  
 जदपि भयौ है ससि अरे मन ही तै उतपन्न ।  
 तऊ चक्रोरन मन विथर नीकौ जानत धन्न ॥५०७॥  
 यह बिधनै तोही दई अजब करामत हाथ ।  
 रवि तरवन राखै रहै तैं निज मुख ससि साथ ॥५०८॥  
 रसनिधि कारे कान्ह ए रहे मधुपुरी छाया ।  
 विप उगलत ऊधौ फिरै अचरज लखि यह आया ॥५०९॥  
 रसनिधि मोहन नाम कौ अरथ न लिय निरधार ।  
 प्रथम समझ तव कीज तौ वासौं प्रीत विचार ॥५१०॥  
 हियै नगर वा लगत है लगत न गरुवै आइ ।  
 येते पर सबही कहैं तोह नगरुवा आइ ॥५११॥  
 जब ही जड़ हुइ जात है मिलत बात लग सीत ।  
 तब हित पावन लगत है विरह आंच सो भीत ॥५१२॥  
 बड़ी विरह की रैन यह क्यों हूं कै न बिहाइ ।  
 भीत सुमुख दरसाइ कै इहां सुदिन कर आइ ॥५१३॥  
 कहो नैक समुझाइ मुहिँ सुरजन प्रीतम आप ।  
 बस मन मैं मन कौ हरी क्यों न विरह संताप ॥५१४॥  
 गोवरधन नख धर लियौ गोपी ग्वाल बलाइ ।  
 अब गिरधर यह विरह सिर क्यों न उठावत आइ ॥५१५॥  
 मोहिँ जिवायौ चहत जौ तौ यह फेर कहाइ ।  
 सखी कहानी कान्ह की कानन सुनी सिहाइ ॥५१६॥  
 जौ न मिलेंगे स्याम - धन वाहि तुरतही आइ ।  
 विरह - अग्नि सौं राधिका दैहै ब्रजहि जराइ ॥५१७॥  
 छिन भर बिन प्रीतम लखै नैना भर भहरात ।  
 धीरज - पारद कहूँ सुनौ विरह - आंच ठहरात ॥५१८॥

विरह - अग्नि सुन सुन लगै जब जब घर में आन ।  
 तब तब नैन बुझावहीं बरस सरस अँसुवान ॥५१६॥  
 आपुन तौ है भावते सोहत है सुख - सेज ।  
 मो तन त्रासत रहत है विरह - पियादौ भेज ॥५२०॥  
 प्रीतम अपनी बाह ज्यों निपट निकट दरसाइ ।  
 पै टिहुनी पर्वत भई मुहि तक सकौ न आइ ॥५२१॥  
 यह वूझन को नैन ये लग लग कानन जात ।  
 काहू के मुख तुम सुनी पिय आवन की बात ॥५२२॥  
 आसिक बिछुरन दरद कौ सकतौ नहीं अँगेज ।  
 जोऽब दिलासा की दवा मीत न देतौ भेज ॥५२३॥  
 सुध आवै जब मीत की घन जिमि बरसत नैन ।  
 थकित रहै बाँही पथिक खोइ सबै सुख चैन ॥५२४॥  
 शोषम बासर विरह के लगे जनावन जोर ।  
 आइ इतै बरसाइये रस घन स्याम किसोर ॥५२५॥  
 राखत अँसुवन जल भरे पलकन आठौ जाम ।  
 तलफत जदपि सुमीन दृग बिना लखै घनस्याम ॥५२६॥  
 मन घन हतौ बिसात जो सो तोहिँ दियौ बताइ ।  
 बाकी वाके विरह की प्रीतम भरी न जाइ ॥५२७॥  
 गुन खोवत ह्याँ आपनौ रे तबीब बेकाज ।  
 नैन जहमतिन कौँ लगै मोहन रूप इलाज ॥५२८॥  
 बिन दरसन सरसन लगौ विरह तरित तन जोर ।  
 आइ स्याम घन बरसिए मेह - नेह यह ओर ॥५२९॥  
 विरह - सिंधु अवगाहि मन लग्यौ करार करार ।  
 प्रीतम अजौ उबार लै कर गहि बाँह पसार ॥५३०॥  
 आसत चित्त - गयंद कौँ विरह - ग्राह जब आइ ।  
 हरि प्यारे मन कमल लै नेही देत छुड़ाइ ॥५३१॥



जब लग कांचे घट पको विरह अग्नि में नाहिँ ।  
 नेह नीर उनमें अरे भरे कौन बिधि जाहिँ ॥५३२॥  
 घट जाती संजोग में तब न कियौ मैं घैर ।  
 भावंता बिन निस अरी क्यों बढ़ि करती घैर ॥५३३॥  
 दरस - मूर देखौ नहीं जौ लौ मोत चुकाइ ।  
 विरह - ब्याज बाकौ अरे नितहु वाढ़त जाइ ॥५३४॥  
 यहि डर सों हौं डरपि कै सकौं न नेह लगाइ ।  
 मत वह परसै तन बढ़ै विरह - अनल भहराइ ॥५३५॥  
 रही न तन की सुध वहै कहत बुलाए आइ ।  
 यह औसर है वाहि अव मोत आइवौ आइ ॥५३६॥  
 वेग आइकै मीत अव कर हिसाव यह साफ ।  
 मेहर नजर कै विरह की बाकी कर दै माफ ॥५३७॥  
 जौ कहूँ प्रीति विसाहनी करतौ मन नहिँ जाइ ।  
 काहे कौ कर मांगतौ विरह जगाती आइ ॥५३८॥  
 कंचन से तन मैं इहां भरौ सुहाग बनाइ ।  
 विरह आंच बापै कहौ सही कौन बिधि जाइ ॥५३९॥  
 कियौ समुद मुनि पान जो सो भरतौ क्यों ऐन ।  
 करते जो न सहाइ जा पानी कर तुव नैन ॥५४०॥  
 अरे कलानिधि निरदर्ई कहा नवो यह आइ ।  
 पोखत अमृत कलन जग विरहिन देत जराइ ॥५४१॥  
 पोर पोर पेरत तनहिँ विरहा दै दै ताइ ।  
 दृग प्यासन कौं रूप रस प्यारे प्या रे आइ ॥५४२॥  
 का गद कागद मैं अरे सहै विरह की बात ।  
 मस मिस लिखत निअंक ते हियै पार होइ जात ॥५४३॥  
 तीछन बान जो विरह कौ तान दियौ तन माहँ ।  
 सज्जन - चुंबक उर बसै तातै निकसत नाहँ ॥५४४॥

रहे जु कान्ह सुहाग सँग जे सुबरन से गात ।  
 विरह - घाम की आंच सौ ते कैसे ठहरात ॥५४५॥  
 मिलिकर तव सुख देत है मोहन प्यारे ईस ।  
 विछुर चलावन अब लगे विरह - आरकस सीस ॥५४६॥  
 हित आचारज दग सुवन नेह सुघट भर लेत ।  
 विरह - अगिन में मैन - द्विज मन की आहुति देत ॥५४७॥  
 रसनिधि पल भर होत ही भावंता पल - ओट ।  
 नहीं सम्हारी जात है यह अनचाही चोट ॥५४८॥  
 बात बात मो दरद की पहुँचावै तुव कान ।  
 यहि आसा घट में रहै ये अनुरागी प्रान ॥५४९॥  
 जे अँखियां वैराइहीं लगै विरह की बाइ ।  
 प्रीतम - पग - रज कौ तिन्हें आजन देहु लगाइ ॥५५०॥  
 निकसत नार्हीं जतन कर रही करेजे साल ।  
 चुंवक भीत मिले बिना विरह साल की भाल ॥५५१॥  
 रे निरमोही मनहरन आरे आरे आइ ।  
 भारे आरे विरह के मत मो सीस चलाइ ॥५५२॥  
 कहियौ पथिक सँदेस यह मन मोहन सौं टेरे ।  
 विरह - बिथा जो तुम हरी हरी भई ब्रज फेर ॥५५३॥  
 पल अँजुरिन सौं पियत दग जल अँसुवा भर सास ।  
 गनत रहत है अवधि के दिन पखवारे मास ॥५५४॥  
 पलक पानि ब्रुस बसनिका जल अँसुवा दुज मैन ।  
 पियहि चलत सुख नीद कौं करत संकल्प नैन ॥५५५॥  
 जिहि ब्राह्मन पिय गमन कौ सगुन दियौ ठहराइ ।  
 सजनी ताहि बुलाइ दै प्रान - दान लै जाइ ॥५५६॥  
 अरी नोंद आवै चहै जिहि दग बसत सुजान ।  
 देखी सुनी धरी कहूं दो असि एक मयान ॥५५७॥

मन के संग जु नैन चलि देख आवते तोहि ।  
 तौ काहे कौ विरह यह नित दुख देतौ मोहि ॥५५८॥  
 अबै इसक को दरद कौ मरम न सकिहै पाइ ।  
 जा तबीब घर आपनै मत तू भरम गमाइ ॥५५९॥  
 एक दिना मैं एक पल सकै न पल भर देख ।  
 विरह पीर कौ भावतौ कैसे होइ बिसेख ॥५६०॥  
 विरह भार तन भसम भौ अवधि पात भए जोग ।  
 इहै जान पठ्यौ इहां हमै जोग लिख जोग ॥५६१॥  
 अब लौं यह तन राखियौ अवध आस कौ जेर ।  
 अब जीवौ दुरलभ भयौ गरजत घन चहुँ ओर ॥५६२॥  
 सुन पयान घनस्याम कौ जोग अराध्यौ बाल ।  
 नैन मेखला मैं मनौ गूँथत डेरे लाल ॥५६३॥  
 सासन चाहत साँख अब अवधि आस गइ बीत ।  
 कै आइस कै आइवौ जौ राखत पत प्रीत ॥५६४॥  
 जा दिन तै पिय गमन किय विरह पौर प्रतिहार ।  
 नींद भूख रोक्क्यौ हरष कियौ आप अधिकार ॥५६५॥  
 जीवै लैवा जोत कौ दोऊ देहु मिलाइ ।  
 ऊधौ जोग बियोग मैं अंतर कह ठहराइ ॥५६६॥  
 आपहि यह इनसाफ कौ कीजे प्रान अघार ।  
 विरह भार सहि सकत कहूँ हित को भोने तार ॥५६७॥  
 अग्नि होत री नैन ये मीत दरस कै हेत ।  
 विरह अग्नि हिय कुंड मैं निस दिन आहुति देत ॥५६८॥  
 विरह तपन तन अति बढ़ी बरसु स्यामघन आइ ।  
 सीतलता सरसै हियै दरद गरद दबि जाइ ॥५६९॥  
 दैन लगे मन मृगहिँ जब विरहि अहेरी पास ।  
 जाइ लेत है दैर जब प्रीतम सुवन मवास ॥५७०॥

विरह समुद्र बाढ़ौ अरे यह गरुआ तक आइ ।  
 इह बिरियां ऐसे समै तूं गरुआ लग जाइ ॥५७१॥  
 रसनिधि विन प्रीतम लखै क्यों ए लहते चैन ।  
 ध्यान जखीरा जो जमा कर नहिँ धरते नैन ॥५७२॥  
 विरह बैर आसा गढ़ी छिके प्रान रन सूर ।  
 भर राखै हग ध्यान जल रूप जखीरा पूर ॥५७३॥  
 हरि बिछुरत रहते नहीं बिरहिन के तन प्रान ।  
 अमृत रूप लहते नहीं जौं मनमोहन ध्यान ॥५७४॥  
 कर गहि ध्यान मलाह तूं करतौ जौं न सहाइ ।  
 नेहिन विरह समुद्र तैं कौन काढ़तौ आइ ॥५७५॥  
 जदपि सुगहिरी लाज तैं ठहर सकै नहिँ पाइ ।  
 ध्यान निवारै बैठ कै भावंता इत आइ ॥५७६॥  
 मन हरिबे की ज्यों पढ़े पाटी स्याम सुजान ।  
 तौ यहऊ पढ़ते कहूं दीवौ दरसन-दान ॥५७७॥  
 दरसन कौ चलतौ कहूं जो सुमरन सौं काज ।  
 हग चकोर हेते नहीं ससि मुख के मुहताज ॥५७८॥  
 कसर न मुझमें कुछ रही असर न अब तक तोहि ।  
 आइ भावते दीजिए बेग सुदरसन मोहि ॥५७९॥  
 कियौ भीत ने है उदौ सबही जागै आइ ।  
 विरह अँधेरी रैन जहँ उदौ उदौ होइ जाइ ॥५८०॥  
 नेही यामैं पलत है अरे भीत अभिराम ।  
 दरस देत तुव गिरह के खर्च होत कछु दाम ॥५८१॥  
 भीता मोतै लेत क्यों निज मुखचंद छिपाइ ।  
 ऊंच नीच घर चंद तौ उवत एक सौ आइ ॥५८२॥  
 जिते नखत बिधि हग तिते जो रच देतौ मोहि ।  
 वृषित न होते वे तऊ निरख भावते तोहि ॥५८३॥

रसनिधि पल भर होत ही भावता पल ओट ।  
 नहीं सन्हारी जात है यह अनचाही चोट ॥५८४॥  
 हिय घरिया तामें सुमन विरह आंच सौं ताइ ।  
 सुबरन कीनौ मीत नै बूटी दरस मिलाइ ॥५८५॥  
 होती वैदन के करै विरह बिथा जौ दूर ।  
 काहे कौ दृग दूढ़ते दरस सजीवन-मूरि ॥५८६॥  
 बिन देखे तुम भावते कछु वै भावत नाहिं ।  
 जन्म अलेखै आइकै लेखै आवत नाहिं ॥५८७॥  
 नेही दृग जोगी भए वरुनी जटा बनाइ ।  
 अरे मीत तैं दै इन्हें दरसन भिच्छा आइ ॥५८८॥  
 दरसन भिच्छा के लियै फेरी दै दै जाइ ।  
 जोगी तैं का घट भयौ नैन बियोगी आइ ॥५८९॥  
 दै अनुरागी दृगन कौ दरस सजीवन-मूर ।  
 उलफत कीजै बिरह की कुलफत कीजै दूर ॥५९०॥  
 भीजे तन अंसुवन लखौ रविन्दुति मुख अभिराम ।  
 रसनिधि भीजे बसन कौ दियौ चाहियत घाम ॥५९१॥  
 पायै बिहित अहार कौ सबकौ मन भरि जाइ ।  
 मन भर देखौ मीत कौ पल भर मन न अघाइ ॥५९२॥  
 यामें अपनी गांठ कौ कह कछु छोरै देत ।  
 दरसन लव मांगत दृगन क्यों मुख मोरै लेत ॥५९३॥  
 जो पल तकिया छोड़ दृग सकै न तुव तक आइ ।  
 दरस भीख चनकौ कहा दीजत नहिं पहुँचाइ ॥५९४॥  
 बिरहा शीषम दुपहरी ज्यास दुहुन अधिकाति ।  
 मन बन मैं लखि लखि जियै नैन लवा इह भांति ॥५९५॥  
 मोहन लखि जो बढ़त सुख सो कछु कहत बनै न ।  
 नैनन कै रसना नहीं रसना कै नहिं नैन ॥५९६॥

गजगत में घर प्रथम ही फिर तन कतरौ जाइ ।  
 तब यह पहुँचत भीत लौं सोजन बदन छिदाइ ॥५६७॥  
 कमला लै कै कमल कर लखि गुरुजन की भीर ।  
 धर-हरि-धर-जिय ए भ्रमर मिलहि तरुनजा-तीर ॥५६८॥  
 जुदे रहन मन मिलन की सीख दगन के अंग ।  
 सोवत जागत संग ही जित चाहौ तित संग ॥५६९॥  
 प्रगट मिले बिन भांवते कैसे नैन अघात ।  
 भूखे अफरत कहूँ सुनै सुरत मिठाई खात ॥६००॥  
 रही कहां चक आइ चित चल पिय सादर देख ।  
 लोहा कंचन होत तहँ पारस परस बिसेख ॥६०१॥  
 मान मनायौ माननी मति तैं धरै गुमान ।  
 जातै पाइन परन कौं उनै परै सुख जान ॥६०२॥  
 व्यापी होती जो तुमैं मिल विछुरे की पीर ।  
 मिलि कै पलक न विछुरते जैसे पय अरु नीर ॥६०३॥  
 सिखे आपनै दगन सैं इकताई की बात ।  
 जुरी डीठ इक सग रहै जदपि जुदे दिखात ॥६०४॥  
 मैं जानी रसनिधि सही मिली दुहुनि की बात ।  
 जित दग तित चित जात है जित चित तित दग जात ॥६०५॥  
 बड़ौ भीत तुव मिलन कौ चित राजी कौ चाव ।  
 इतराजी मत कर अरे इत राजी है आव ॥६०६॥  
 जल-कन तिल-कन पलक मैं कहु आली केहि हेत ।  
 भावंता लखि बिरह कौ नैन तिलांजुलि देत ॥६०७॥  
 नहिं राती है प्रीति सौं है अरात पै रात ।  
 प्रीतम के संयोग मैं क्यौं अब नहीं बड़ जात ॥६०८॥  
 लगत कमल-दल नैन-जल भपट लपट हिय आइ ।  
 विरह-लपट अकुलाइ जब भाज हिए तैं जाइ ॥६०९॥

अमरैया कूकत फिरै कोइल सवै जताइ ।  
 अमल भयौ ऋतुराज कौ रुजू होहु सब आइ ॥६१०॥  
 मैं धन ये छनए लखै नए नए चित चाइ ।  
 तऊ न ये मानत नए लाल न ए पगि आइ ॥६११॥  
 अरी मधुर अधरान तैं कटुक वचन मत बोल ।  
 तनक खुटाई तैं घटै लखि सुवरन को मोल ॥६१२॥  
 अरी जात है ब्रजहि जौ मोहन मुख मत जोइ ।  
 फिर न छिपायै छिपहिगी इसक मुसक की वोइ ॥६१३॥  
 मान कही मेरौ अरी भूल उतै मत जाइ ।  
 ऐहै लखि ब्रजचंद कौ मन नग नैन गँवाइ ॥६१४॥  
 हित मित विन मन धन दिए क्योंकर सकियै पाइ ।  
 विन गथ सौदा हाट तैं ल्यायौ कौन विसाइ ॥६१५॥  
 भूलै हूं मत दरद कहु बेदरदिन के पास ।  
 पीनसवारौ कंब लहै सरस अतर की बास ॥६१६॥  
 याही तैं यह आदरै जगत माह सब कोइ ।  
 बोलै जवै बुलाइयै अनबोले चुप होइ ॥६१७॥  
 मोहन तूं या बात कौ अपनै हियै विचार ।  
 बजत तमूरा कहूँ सुनै गांठ गठोले तार ॥६१८॥  
 छवि मुकता लूटन लगे आइ जरा बटपार ।  
 बैठ विसूरै सहर के बासी कर कट तार ॥६१९॥  
 जंग तरबर तैं फल लगै जौ लग कांचौ गात ।  
 पाके तै फल आप ही डारनि तैं छुटि जात ॥६२०॥  
 विन औसर न सुहाइ तन चंदन ल्यावै गार ।  
 औसर की नीकी लगै मीता सौ सौ गार ॥६२१॥  
 हुकां सौ कहु कौन पै जात निबाहौ साथ ।  
 जाकी स्वासा रहत है लगी स्वास के साथ ॥६२२॥

चल आयौ जैहै चलौ जगत विदित व्यौहार ।  
 गाहि लियै जोवन - कन्हि रहित ठहर इक प्यार ॥६२३॥  
 बार बार नहिँ होत है औसर मौसर बार ।  
 सौ सिर दीबे कौ अरे जौ फिर हूजे त्यार ॥६२४॥  
 बित चोरन चितचोर मैं व्योरौ इतनौ आइ ।  
 इन्हैं पाइकै मारियै उनके लगियै पाय ॥६२५॥  
 समै पाइकै लगत है नीचहु करन गुमान ।  
 पाय अमर-पख दुजनि लौ काग चहै सनमान ॥६२६॥  
 भूठे ही जर जात है याके साखी पांच ।  
 देखी कौ काहु सुनी लगत सचि कौ आंच ॥६२७॥  
 जिन नैनन मैं बसत है रसनिधि मोहनलाल ।  
 तिन मैं क्यौं घालत अरी तैं भर मूठ गुलाल ॥६२८॥  
 नेह अतर छवि अरगजा भर गुलाल अनुराग ।  
 खेलत भरी उछाह सौं पिय सँग होरी फाग ॥६२९॥  
 मुख मीड़त आंजत दगन प्रेम मुदित ब्रजबाल ।  
 कहत सबै नंदलाल सौं हो हो होरी लाल ॥६३०॥  
 रे कुचोल तन तेलिया अपनौ मुख तौ हेर ।  
 सुमननि बासे तिलन कौं काहे डारत पेर ॥६३१॥  
 अरे बजावत कौन ढिग हित रबाब के तार ।  
 जु रौ जात है आइकै बिरहिन कौ दरबार ॥६३२॥  
 जिहिँ कनैल के फूल की लेत न बास सुहाइ ।  
 माली सुमन गुलाब के उन पै मत लै जाइ ॥६३३॥  
 करबी मैं जौ ऊख सम रस सरसातौ आइ ।  
 साजन देते याह क्यौं सहसा पसुन खवाइ ॥६३४॥  
 जदपि सु कोल्हू मैं उनै विदित सु पेरौ आइ ।  
 बासे तिलवा सुमनि सँग वास न ताकी जाइ ॥६३५॥



तन मन तोपै बारिबौ यह पतंग कौ नाम ।  
 एते हूं पै जारिबौ दीप तिहारोहि काम ॥६३६॥  
 चेतन होइ न एक सुर कैसे बनै बनाइ ।  
 जड़ मृदंग बेसुर भए मुँहै थपेरै खाइ ॥६३७॥  
 कूकत अवध लवा लियै अरे अधिक बेकाज ।  
 फिर आवत काहू सुनै चाक चढ़े चित बाज ॥६३८॥  
 अलगरजी घन सौं नहीं सुनियौ संत सुजान ।  
 अरजी चात्रिक दीन की गरजी सुनै न फान ॥६३९॥  
 और कहा देखत नहीं तुव ससि मुख की ओर ।  
 चोर लियौ तैं सवन में काहे चित्त चकोर ॥६४०॥  
 कहा भयौ जौ सिर धर्यौ फान्ह तुम्हें करि भाव ।  
 मोरपँखा बिन और तुम उहां न पैहौ नाव ॥६४१॥  
 रवि ससि अवनि सघन पवन और अग्नि की ज्वाल ।  
 ऊंच नीच घर सम लखै दुबिधा तज कै लाल ॥६४२॥  
 होत दूबरौ कूबरौ ससि तैं हर पखवार ।  
 तोही सौं हित राखहीं दग चकोर रिभवार ॥६४३॥  
 हरी करत है पुहुमि सब घन तूरस बरसाइ ।  
 आक जवासे कौं अरै काहे देत जराइ ॥६४४॥  
 तोय मोल में देत है छीरहि सरस बढ़ाइ ।  
 आंच न लागन देत वह आप पहिल जर जाइ ॥६४५॥  
 लखि बड़वार सुजातिया अनख धरै मन नाहि ।  
 बड़े नैन लखि अपुन पै नैना सही सिहाहि ॥६४६॥  
 अरे निरदई मालिया फूले सुमननि तोर ।  
 नैक कसक कर हेरतौ प्रीत डार की ओर ॥६४७॥  
 दुइ मन तौल मिलाइ कै पुन इकठे कर हेर ।  
 ये गौहूं अरु बाजरै बड़े भाव में फेर ॥६४८॥

प्यास सहत पी सकत नहिँ औघट घाटनि पान ।  
 गज की गरुवाई परी गज ही के गर आन ॥६४८॥  
 औघट घाट पखेरुवा पोवत निरमल नीर ।  
 गज गरुवाई तैं फिरै प्यासे सागर तीर ॥६५०॥  
 अंधियारी निस विच नदी तामैं भँवर अपार ।  
 पार जवैया दरद कव लहै रहै या बार ॥६५१॥  
 हरौ हरौ रँग देखि कै भूलत है मन हैफ ।  
 नीम-पतौवन में मिलै कहूँ भाग कौ कैफ ॥६५२॥  
 धरि सौनै कै पीजरा राखौ अमृत पिवाइ ।  
 विष कौ कीरा रहत है विष ही में सुख पाइ ॥६५३॥  
 कोलत काठ कठोर क्यौ होत कमल में बंद ।  
 आई मो मन-भँवर की इतनी बात पसंद ॥६५४॥  
 धरे जदपि बहु मोल के घरन जवाहिर हूब ।  
 आनंद के औसर तऊ सीस बांधियत दूब ॥६५५॥  
 चित चाहन जिहि मुख लहैं स्वाद नागरी पान ।  
 ठाक पात भावत सुनौ तिनकौ कहा सजान ॥६५६॥  
 सबही कौ पोषत रहै अमृत-कला सरसाइ ।  
 ससि चकोर के दरद कौ अजौ सकत नहिँ पाइ ॥६५७॥  
 चार जाम दिन के जिन्हें कल्प समान बिहात ।  
 चंद चकोरन दरस अब दैन लगौ अधरात ॥६५८॥  
 समय पाइ कै रूप धन मिलत सबैई आइ ।  
 बिलस न जानै याह जो समय गए पछताइ ॥६५९॥  
 बैठत इक पग ध्यान धरि मीनन कौ दुख देत ।  
 बक मुख कारे हो गए रसनिधि याही हेत ॥६६०॥  
 जब देखौ चाहियै तुहें तब तू नहीं दिखात ।  
 लीलकंठ जोतैं दसैं फिर है कीरा खात ॥६६१॥

याके बल वह लेत है पावक चिनगी खाइ ।  
 चंदहि जौ जारन लगै तौ चकोर कित जाइ ॥६६२॥  
 अमित अथाहै है भरै जदपि समुद अभिराम ।  
 कौन काम के जौ न तुम आए प्यासन काम ॥६६३॥  
 सरस मधुप गुंजत रहै लेत सुमन की बास ।  
 कुम्हल्यानै फिरता नहौ अली रली ता पास ॥६६४॥  
 रती रती के बढ़त हीं मन बढ़ि जात अतौल ।  
 घटै भाव के मन यहै लहै न कौड़ी मोल ॥६६५॥  
 ससि चकोर के दरद कौ जब तुहिँ असर न होइ ।  
 कुहू निसा षोड़स कला तब तैं बैठत खोइ ॥६६६॥  
 अरे निरदर्ई मालिया कहुँ जताय यह बात ।  
 केहि हित सुमनन तोरि तैं छेदत सौजन गात ॥६६७॥  
 गुल गुलाब अरु कमल कौ रस लीन्हौ इक ताक ।  
 अब जीवन चाहत मधुप देख अकेलौ आक ॥६६८॥  
 काग आपनी चतुरई तब तक लेहु चलाइ ।  
 जब लग सिर पर दैइ नहिँ लगर सतूना आइ ॥६६९॥  
 जा गुलाब के फूल कौ सदा न रँग ठहराइ ।  
 मधुकर मत पच तूं अरे वासौ नेह लगाइ ॥६७०॥  
 सब रंगन में नीर तुम मिलकै रँग सरसात ।  
 मीत प्रेम रँग सै कहौ क्यों न्यारे ह्वै जात ॥६७१॥  
 उयै सोख जल लेत है बिना उयै दुख देत ।  
 कठिन दुहूँ बिधि कमल कौ करै मीत सौ हेत ॥६७२॥  
 जानत सही चकोर कर ससि सौ प्रेम सलूक ।  
 अमृत सराबी के रसहि समुझहि कहा उलूक ॥६७३॥  
 मोलै मोला कहत हैं फलै अंबिया नाव ।  
 और तरुन में नूत यह तेरौ धन्य सुभाव ॥६७४॥

ससि निरमोही हौ भले भोर भयै घर जाव ।  
 दिनकर विरह चकोर कौ मेट न सकिहौ दाव ॥६७५॥  
 तिन सौं चाहत दाद तैं मन पस कौन हिसाब ।  
 छुरी चलावत हैं गरै जे वेकसक कसाव ॥६७६॥  
 मीत वधिक जे निरदई भूजि करेजा खाइ ।  
 जबह करत जे जियन की कब मन में कसकाइ ॥६७७॥  
 मीता कसक कसाव कौ कहि हिसाब कह कौन ।  
 कसकै हियै कसाव जौ छुरी चलावै कौन ॥६७८॥  
 होते जो पै चलत कहूँ सदा चाम के दाम ।  
 रहन न देते वेदरद काहू तन में चाम ॥६७९॥  
 बूझत आजजि हाल नहिँ यही हियै है सूल ।  
 भई आज जिय आवते प्रभु दरगाह कबूल ॥६८०॥  
 चल न सकै निज ठौर तैं जे तन द्रुम अभिराम ।  
 तहाँ आइ रस बरसिबौ लाजिम तुहि घनस्याम ॥६८१॥  
 तेरी है या साहिबी वार पार सब ठौर ।  
 रसनिधि कौ निसतार लै तुही प्रभु कर गौर ॥६८२॥  
 रोम रोम जो अब भयौ पतितन में सिरनाम ।  
 रसनिधि चाहि निवाहिवौ प्रभु तेरोई काम ॥६८३॥  
 गंग प्रगट जिहि चरन तैं पावन जग कौ कीन ।  
 तिहि चरनन कौ आसरौ आइ रसिकनिधि लीन ॥६८४॥  
 मधुसूदन यह विरह अरु अरि नित मांडत रार ।  
 करुनानिधि अब यह समै अपनौ विरद विचार ॥६८५॥  
 लखि औगुन तन आपनै भूल सबै सुधि जाइ ।  
 अधम-उधारन-विरद तुव रसनिधि सुमिर सुहाइ ॥६८६॥

भगतन तौ तुम तारिहौ अधम कौन पै जाइ ।  
 अधम-उधारन तुम बिना उन्हैं ठौर कहूँ नाइ ॥६८७॥  
 गिनति न मेरे अधन की गिनती नहीं बढ़ाइ ।  
 असरन-सरन कहाइ प्रभु मत मोहिँ सरन छुड़ाइ ॥६८८॥  
 हैं अति अघ-भारन भरौ अधमन कौ सिरदार ।  
 अधम-उधारन नाम तुव सो मेरै आधार ॥६८९॥  
 मैं गीधौ लखि गीध गति गीधे गीधहि जान ।  
 गीधे पतितहिँ तारिहौ तब बदिहैं प्रभु बान ॥६९०॥  
 जौ करुनामय हेरिहौ सो करनी की ओर ।  
 मोसौ पतित न पाइहौ दूँदूँदूँ छिति छोर ॥६९१॥  
 गह्यौ ग्राह गज जिहि समै पहुँचत लगी न बार ।  
 और कौन ऐसे समै संकट काटनहार ॥६९२॥  
 तुम जगदीस दयाल प्रभु हौ सबही सुनु चेत ।  
 दीनन भूलत हौ दिए दीनबंधु केहि हेत ॥६९३॥  
 अधम-उधारन बिरद कौ तुम बांधौ सिर नेत ।  
 रसनिधि अब या अधम की सुधि काहे नहिँ लेत ॥६९४॥  
 अधम-उधारन बिरद तुव अधम-उधारन काज ।  
 जो पै रसनिधि औगुनी तुमैं सौगुनी लाज ॥६९५॥  
 हैं दुरबल - तन प्रभु सुनौ उत भवसिंधु अपार ।  
 तुमही राखत बार जो कौन लगावै पार ॥६९६॥  
 स्थाही बारन तैं गई मन तैं भई न दूर ।  
 समझ चतुर चित बात यह रहत बिसूर बिसूर ॥६९७॥  
 अधम - उधारन प्रभु कहौ करिहौ जौ न सम्हार ।  
 हूँहै मोसौ पतित क्यों या भवसागर पार ॥६९८॥

हेरत कहूँ जौ दीन तन वाहि आवती लाज ।  
 प्रीतम तौ न कहावतौ दीन - बंधु ब्रजराज ॥६६॥  
 जदपि अकरनी है करी मैं हर भांति मुरारि ।  
 प्रभु करनी कर आपनी सब विध लेहु सुधारि ॥७००॥  
 कहै अलप मति कौन विध तेरे गुन विस्तार ।  
 दीन-बंधु प्रभु दीन कौं लै हर विधि निस्तार ॥७०१॥



## ( ५ ) राम-सतसई

श्रीस्यामा कों करत हैं रामसहाय प्रनाम ।  
 जिन अहिपतिघर कों कियौ सरस निरंतर धाम ॥ १ ॥  
 अरुन अयन संगीत तन बृंदावन हित जासु ।  
 नगधर कमला सकत बर विपुंगवासन आसु ॥ २ ॥  
 अबलि अली लै बृजगली रली करीजै आय ।  
 ते राधा माधव हूरैं बाधा रामसहाय ॥ ३ ॥  
 भूमहिँ भुमके स्याम के अली भली छवि जोइ ।  
 मनहु भुकोरे खात हैं काम - हिँडोरे दोइ ॥ ४ ॥  
 मृदु धुनि करि मुरली पगी खगी रहै हरिगात ।  
 या मुरली की है अली बनी भली विधि बात ॥ ५ ॥  
 धन जोबन चय चातुरी सुंदरता मृदु बोल ।  
 मनमोहन-नेहै बिना सब खेहै कै मोल ॥ ६ ॥  
 कत मुकुरो लाज न धरो यह छबीहि पी पाय ।  
 उर लखि अलिक अधर लखो प्रतिबिंबीहि मँगाय ॥ ७ ॥  
 मन - मलिनाई परिहरैं सुनि मेरी सिख बानि ।  
 पिय की जीवन - मूरि है तिय तेरी मुसक्यानि ॥ ८ ॥  
 धीर धरो सोच न करो मोह भरो जदुराय ।  
 सुदति सँदेसे सुनि रही अधरनि मैं मुसक्याय ॥ ९ ॥  
 छाया रही सखि बिरह सों बे-आबी तन छाम ।  
 पी आए लखि बरि उठी महताबी सी बाम ॥ १० ॥  
 त्रिबलि-निसेनी चढ़ि चलयौ लेन सुधा मुसक्यानि ।  
 उचके कुच उचके अरी उचके चितहि बिचानि ॥ ११ ॥



लावति वीर पटीर घसि ज्यौं ज्यौं सीरे नीर ।  
 त्यों त्यों ज्वाल जगै दई या मृदु बाल सरीर ॥ १२ ॥  
 तब अली न तोसों कही प्रीति की रीति भली न ।  
 अब मलीन चित कित किए चितवति चकित गलीन ॥ १३ ॥  
 विषधर-स्वास सरिस लगे तन सीतल बन-वात ।  
 अनलहु सों सरसे दगे हिमकर-कर धन-गात ॥ १४ ॥  
 फूल विसूँ देहि री ही हूँ अलि अंध ।  
 तन मन रंध करै पवन सीतल मंद सुगंध ॥ १५ ॥  
 विहसिन आई नीर को वीर तरनिजा-तीर ।  
 वीर गिरी तिहि हेरि री पहिराई बलवीर ॥ १६ ॥  
 प्रथमहि पारद में रही फिरि सौदामिनि माह ।  
 तरलाई भामिनि-दृगनि अब आई वृजनाह ॥ १७ ॥  
 बकुल निकुंज मिले हरि न हरिन भयो मुख ऐन ।  
 चकित चितौति खरी किए डरे हरिन से नैन ॥ १८ ॥  
 पहिरा री बे - हूनरी सुरंग चूनरी ल्याय ।  
 पहिरे सारी सौसनी कारी देह दिखाय ॥ १९ ॥  
 अजब बनक औरै बनी मनमोहन की नारि ।  
 बलि तिहि छनक निहारि ले घूँघट तनक उधारि ॥ २० ॥  
 जमुनातट नटनागरै निरखि रही ललचाइ ।  
 बार बार भरि गागरै बारि ढारि मुसुक्याइ ॥ २१ ॥  
 घन घहराय घरी घरी जब करिहैं भर नीर ।  
 चहुँ दिसि चमकै चंचला कस बचिहै बलवीर ॥ २२ ॥  
 को कब लों सिख देय जू सैन नारंगी बाल ।  
 नवल कुचहि दलि जात हो यह अनारपन लाल ॥ २३ ॥  
 रुचिराई चितवनि निकनि चलनि चातुरी चारु ।  
 हित चित की रुचि चुनि दई सुनि तोही करतारु ॥ २४ ॥

ललन कृसन की अरुनई जुरि अधरन में आइ ।  
 कामिनि के तन की दमक दामिनि में दरसाइ ॥ २५ ॥  
 बढि बढि मुख समता लिए चढि आयौ निरसंक ।  
 तातें रंक मयंक री पायौ अंक कलंक ॥ २६ ॥  
 इंदुमुखी तो गुन लिखत अधर लग्यौ मसि बिंदु ।  
 जौ गुनहीं छमिही लगै जौ गुनहीन न निंदु ॥ २७ ॥  
 भादों गरु मरु गयौ आयौ सरद हरी न ।  
 अव डर मार सुमार री जनम भयौ कानीन ॥ २८ ॥  
 कोरि जतन करि करि थकी सुधिहि सकी न सँभारि ।  
 छाक छयल छवि की छकी जकी रही यह नारि ॥ २९ ॥  
 कत सौहें करि हेठ तकि तकि न जेठ की धूप ।  
 यह सौहें चारी करै देह कँटारी रूप ॥ ३० ॥  
 बस की इन अँखिर्यानि कों नवनारी मग जात ।  
 सिकै दस गारी दई सुनि रस की इक बात ॥ ३१ ॥  
 ललन चलन सुनि महि गिरी मुख कफ री लखि बीर ।  
 तरफराति है राति तें मनु सफरी बिन नीर ॥ ३२ ॥  
 ऐसे बड़े बिहार सों भागनि बचि बचि जाय ।  
 सोभा ही के भार सों बलि कटि लचि लचि जाय ॥ ३३ ॥  
 तुमहिँ सुधासानी कहो बानी रस सरसात ।  
 करि यारी हरि सों न करि करियारी सी बात ॥ ३४ ॥  
 लखि रमनी कों अनमनी सोखधनी कों दीन ।  
 गौनो रह्यौ बिदेस जौ तौ गौनो न्यौ कीन ॥ ३५ ॥  
 कमलावर करकमल लखि कमल गयौ कुँभिलाय ।  
 कमलनि कमल भरे रही कमली लों चकवाय ॥ ३६ ॥  
 हो हरि गोरी खेलते होरी रह्यौ न धीर ।  
 संगहिँ अँखियनि में धसे अलि बलबीर अबीर ॥ ३७ ॥

त्रिन तनयाहि छुवन न है निति अति दारुन सास ।  
 पठवति मोहि अकेलिए दुपहर चुनन कपास ॥ ३८ ॥  
 लोललोचनी कंठ लखि संख समुद के सोत ।  
 अरु उड़ि कानन कों गए फेकी गोख कपोत ॥ ३९ ॥  
 निपट कसनि कटि-काछनी अंसनि लसनि भुवास ।  
 मृदु बिहँसनि हेरनि हरी अरी करी दृग वास ॥ ४० ॥  
 सजनी विसद जलद गरल नभ निरमल दुखफंद ।  
 पावक सी रजनी लगै नावक सर कर चंद ॥ ४१ ॥  
 सिर धारी सारी हरी हरि गिरधारी होइ ।  
 खरे धरे गिरिए कहीं परे धरे गिरि होइ ॥ ४२ ॥  
 चली कामिनी जामिनी भेटन नंदकिसोर ।  
 भुके चकोर सुचांदनी जानि दामिनी मोर ॥ ४३ ॥  
 सदन निकट के ताल में बंसी बाजी लाल ।  
 सुनत नवेली ही परी तलवेली नटसाल ॥ ४४ ॥  
 मन उलहै दुलहै लखन चषन सकुच रहि जाय ।  
 भांकि भरोखे कामिनी दामिनीव दुरि जाय ॥ ४५ ॥  
 सुधर बदन के अधर सद रदन सुखइ छविछाज ।  
 मदन कदन कर सदन ते मनु आयौ द्विजराज ॥ ४६ ॥  
 इक दरसावै आरसी इक सुरभावै वार ।  
 बीचे चष नीचे किए चितवत नंदकुमार ॥ ४७ ॥  
 उँजियारी में जौ कहै उँजियारी मिलि जाय ।  
 अरु अँधियारी राति में जाय उँज्यारी छाया ॥ ४८ ॥  
 सटपटाति हारी भई कारी राति निहारि ।  
 बन तन कों चलि बलि गई सिति पट घंघट टारि ॥ ४९ ॥  
 तन मन बेधक हैं गनी रहहि तनी अति पैन ।  
 नहिं तरुनी वरुनी घनी बनी अनी सर सैन ॥ ५० ॥

मेरे दृग को दोस री लाइ लगावैं धाइ ।  
 विन जितए चितचोर के भरि आवैं अकुलाइ ॥ ५१ ॥  
 हिय तकि कन बिहँसन लगी अब धन तन दिन माहँ ।  
 भई लरिकई तरुनई पूरब पर दल छाहँ ॥ ५२ ॥  
 जान कहौ तौ जाइए कुसल रहौ हे कंत ।  
 हैं वाचिहैं हिमंत सेां सुख साचिहौ बसंत ॥ ५३ ॥  
 पी उठिगे सुठि हठ-पगी किए अयान छमा न ।  
 अब पछतान कहा लगी की यह मान अमान ॥ ५४ ॥  
 नासी दामिनि की प्रभा सहजहि हांसी माह ।  
 वा नवला सी हेम की लवलासीहु न नाह ॥ ५५ ॥  
 घट ल्याई डटि पीत पट कसब दियौ ढरकाइ ।  
 विहँसि चली चहि सास-रुष चंचल चषनि चलाइ ॥ ५६ ॥  
 विधु बंधुर मुख भा बड़ी वारिज नैन प्रभाति ।  
 भौंह तिरीछी छवि गड़ो रहति हिए दिन राति ॥ ५७ ॥  
 हैं दृग कर जोरे रहैं याते जानत बाल ।  
 उहि नागरि जो भाल कों लाल कियौ हे लाल ॥ ५८ ॥  
 जऊ सौंह नख-खत भरे खरी डिठाई खात ।  
 तऊ सलोनी की रही भरी मिठाई बात ॥ ५९ ॥  
 भूलि रहे बलबीर घर बीर धरों किमि धीर ।  
 जमुना तीर करीर तर हनत कुसुम सर तीर ॥ ६० ॥  
 चित चंचल जग कहत है मो मति सो ठहरै न ।  
 या ठोढ़ी की गाढ़ गड़ि थिर है फिरि निकरै न ॥ ६१ ॥  
 ए जीगन न उड़ाहि री बिरह जरीहि जरायँ ।  
 इत आरी मदनागि की चिनगारी रहिं छायँ ॥ ६२ ॥  
 लखि लखतहि मन हरि गयौ जग्यौ सुमन सर जोर ।  
 मूरति सी निरखति खरी सूरति नंदकिसोर ॥ ६३ ॥

सजनी निपट अचेत है दगादगी समुझै न ।  
 चित बित परकर देत है लगालगी करि नैन ॥ ६४ ॥  
 तू सतुराई में दुरे दूरो जाय न त्यागि ।  
 पूस तुहिन की त्रास सों सूरों सेवत आगि ॥ ६५ ॥  
 निधरक छवि छाकैं छकैं चलहिं न अरु बिचलैं न ।  
 ए लोचन अति लालची बरजेहु मानैं न ॥ ६६ ॥  
 छन बिछुरन चित चैन नहिं चलन चहत नंदलाल ।  
 अब लखबी री होति है याको कौन हवाल ॥ ६७ ॥  
 धवल अटारी लखि खरी नवल बधू हरि दंग ।  
 सादी सारी सबनमी लसत गुलाबी रंग ॥ ६८ ॥  
 या ठोढ़ी सरि कों जबै सफल भए बौराय ।  
 तबहिं रसालनि कों गई कोइल दाग लगाय ॥ ६९ ॥  
 प्रीतम पैरि खरे रहे भरे सनेह निहारि ।  
 हरषी दैरि परोसिनी बिलखी नागरि नारि ॥ ७० ॥  
 लाल अचंचल चख खरे चितवत हैं चित लाइ ।  
 बाल हगंचल जल भरे अंचल है मुसुक्याइ ॥ ७१ ॥  
 बीर बधू ही पापिनी बीर बधू हरि लेहिं ।  
 और पीर कहां जापिनी पीर पपीहा देहिं ॥ ७२ ॥  
 अँखियनि की गति लखि अरी विषम जो लाइ लगाइ ।  
 ज्यों ज्यों ताहि बुभावती त्यों त्यों अति सरसाइ ॥ ७३ ॥  
 काको पा गहि भा भली पागहि दीनी लाल ।  
 को निगुनी गुन लै दर्ई यह निगुनी नव माल ॥ ७४ ॥  
 दर्ई बाम-तन छाम मैं काम कियौ यह काम ।  
 भई माघ की चांदनी यह निदाघ को घाम ॥ ७५ ॥  
 जे हरि मोहन रूप सों कीन्ह्यौ मार सुमार ।  
 ते हरि तूं मोहे अरी जेहरि की भनकार ॥ ७६ ॥

भोनी सादी कंचुकी कुच रुचि दीसी आज ।  
 जनु बिबि सीसी सेव मैं केसरि पीसी राज ॥ ७७ ॥  
 मोसों क्यों न कहै हृष्टा मैं न हनै सर पैन ।  
 राजिवनैन बसे कहा नहिँ आए रँग ऐन ॥ ७८ ॥  
 जमुनातट घट भरि चली अधरनि मैं मुसुकाय ।  
 चितवनि सों यक सुधि लई दर्ई कई ही घाय ॥ ७९ ॥  
 सखि कपोल उर लाल कै लखि हँसि बाल-लिलार ।  
 दीनी बेंदी लाल लै बाल ससी आकार ॥ ८० ॥  
 अधर मधुरता लेन कों जात रहौ ललचाइ ।  
 हा लोटन मैं मन गिरयो उरजन चोट न खाइ ॥ ८१ ॥  
 नैननि मढ़ि चित चढ़ि रही वह स्यामा वह सांभ ।  
 भलकी दै ओभल भई भाँकि भरोखे सांभ ॥ ८२ ॥  
 अरी होन दै अब हँसी लहरि भरी हैं जोइ ।  
 हैं वा कारे की दसी तीतो मीठो होइ ॥ ८३ ॥  
 पो आवन की को कहै सावन मास अँदेस ।  
 पाती हू आती न ती अरु पाती न सँदेस ॥ ८४ ॥  
 चित चिहुँटै मग पाय गो डहडहाय तन बार ।  
 मन खुसिहाली लहलहे लखि साली घनहार ॥ ८५ ॥  
 भोरहि उठि आए ललन कल न परी निसि सैन ।  
 मेरे अनुरागनि रँगो तरुन अरुन ये नैन ॥ ८६ ॥  
 सेज चमेली की रचै बासै बास सुबास ।  
 धन तन गन भूषन भरै मन मैं भरी हुलास ॥ ८७ ॥  
 लखि नवला की वर प्रभा नहिँ चपला ठहराय ।  
 फाटत ही करहाट को हाटक हाट विकाय ॥ ८८ ॥  
 मोती भालर । भलभलैं भीने धूँघटे माह ।  
 मनु तारागन भलभलैं सरवर अमल अथाह ॥ ८९ ॥

कित चित गोरी जौ भयौ ऊख रहरि को नाख ।  
 अजहुं अरी हरी हरी जहँ तहँ खरी कपास ॥ ८० ॥  
 निज घट उठवाती अरी मो देती न उठाय ।  
 आन कका के साथ की साथ न जाउँ लवाय ॥ ८१ ॥  
 तेरी चेरी चंचला केसरि हेसरि नाहिँ ।  
 कंचन रुचि रंचन लहँ चंपक चपि छपि जाहिँ ॥ ८२ ॥  
 हँसि आवै हँसि जाय है कसि अँगियै अँगिराय ।  
 भौंहनि को सतराय कै अँखियनि सो बतराय ॥ ८३ ॥  
 स्यामरूप स्यामा किए बिहरि रही सखि संग ।  
 हरि आए पट कपट गो उघरि लपटि रहि अंग ॥ ८४ ॥  
 यौ तमोल की सुरँग दुति राजति दसननि माह ।  
 जनु जागति मुकुतानि मैं अरुन मनन की छांह ॥ ८५ ॥  
 मन नितंब पर गामरु तरफरात परि लंक ।  
 बर बेनी नागिनि हन्यौ खर बीछी को डंक ॥ ८६ ॥  
 आए हैं मनुहारि हित धारि अपूर बहार ।  
 लखि जीके नीके सुखद ये पोके त्योंनार ॥ ८७ ॥  
 गहति हाथ लखि लहति नहिँ लंक सलोनी नीठि ।  
 सुछवि उदधि अवगाह मैं लसति लहरि सी ईठि ॥ ८८ ॥  
 बसन हरत बस नहिँ चल्यौ पिय बतरस बस आय ।  
 अँगन चिलक तिय नगन की लीनी लाज बचाय ॥ ८९ ॥  
 सब घन नीचे दामिनी नचत लखँ खन बाम ।  
 हों घन ऊपर दामिनी नचत लखी इक - जाम ॥ ९० ॥  
 अहे दीनता सो रहे विनय बैन को भाखि ।  
 मानि कहो मो मान तजि कान मान को राखि ॥ ९१ ॥  
 आधे नख कर आंगुरी मेंहदी ललित बिराजि ।  
 मनु गुलाब की पांखुरी बीरबधू रहि छाजि ॥ ९२ ॥

ठठकि चलनि कटि की लचनि चखनि नचनि सकुचानि ।  
 मो चित वा रुचि की रचनि रुचिर रची नित जानि ॥१०३॥  
 चलि गो कुंकुम गात तें दलिंगो नयौ निचोल ।  
 दुरै दुराए क्यों सुरत मुरत जुरत चख चोल ॥१०४॥  
 क्यों न एक मन होत तन दोय प्रान इक बार ।  
 ये नीकी रिझवारि है वे नीके रिझवार ॥१०५॥  
 हारी जतन हजार कै नैना मानहिं नाहिं ।  
 माधव-रूप बिलोकि री माधव लो मँडराहिं ॥१०६॥  
 दिन बिहाय गृहकाज मैं सजनी सदन न सास ।  
 नाह स्वाय छन लहति हैं रजनी मांह सुपास ॥१०७॥  
 निरखि कलाधर की कला कनक कलस पर बीर ।  
 नाथ नाथ के माथ पै भूलि कहैं कबि धीर ॥१०८॥  
 नँदनदन मन लै गए निज संगै यह पेखि ।  
 चंदन चंद न ही हरेँ धन तन ताप बिसेखि ॥१०९॥  
 सरद-जामिनी कुंज को लिए चले यदुराय ।  
 मिली कामिनि चांदनी केसनि दई बताय ॥११०॥  
 बजनी पँजनी पायलौ मनभजनी पुर वाम ।  
 रजनी नौद न परति है सजनी बिन घनस्याम ॥१११॥  
 हिय सुधादीधिति-कला सुमधु पिय हित नैन ।  
 भाल भौम बालहि लला धरि कीन्हैं कित सैन ॥११२॥  
 ता दिन ते जकि सी रही थकि सी आठौ जाम ।  
 जा दिन ते चित मैं चुभी चोखी चितवनि स्याम ॥११३॥  
 समुझैवे ही कहत है सहज समुझि जिय माह ।  
 रीति रँगै किति प्रीति की लाल रँगै तिय आन ॥११४॥  
 होनहारु काया घरी यह गति आनि निहारु ।  
 बाल-बदन बारिज अरी मार्यौ बिरह निहारु ॥११५॥



चंद-मरीची सी अरी कौन खरी लखि आय ।  
 कसे कंचुकी तास की हास भरी अँगिराय ॥११६॥  
 जो तब छनहुँ न सहि सक्यौ बिछुरन नंदकिसोर ।  
 सो हिय दरकत कत न अब भरे विरह भरु जोर ॥११७॥  
 छार अँगारनि परत हैं मनु तजि वैर समूल ।  
 माह सीत की भीत सेों दहनौ ओढ़े तूल ॥११८॥  
 आज अचानक मिलि गली चली गई वह हाय ।  
 अधरनि मैं सुसुक्याय कै अखियनि आख लगाय ॥११९॥  
 कालि ससुरपुर को गई सजनी नंद पियारि ।  
 जमुना जाउँ अकेलियै रजती आनन चारि ॥१२०॥  
 एड़िन चढ़ि गुलुफन चढ़ो मुरवन बचो दवाइ ।  
 सो चित चिकने जघन चढ़ि तितहिँ परे बिछिलाइ ॥१२१॥  
 लगन नई सेों सखि गई सुधि करि लखन तमाल ।  
 मग लखि ललन मगन भई प्रसुद समुद मैं वाल ॥१२२॥  
 दुरी दुराएहू हिए भीने पट वंसी न ।  
 सखि तिय दिसि लखि हँसि कही है यह वीन नवीन ॥१२३॥  
 कितिक मदन को रूप री को न सिँगार कहाइ ।  
 यह आछी छवि छैल की छलकि रही तकि आइ ॥१२४॥  
 सूखे पतवारी बली कुंजर लीन वनाव ।  
 करनधार बिनती अली नव संकेत बताव ॥१२५॥  
 परदे बाला घर लसै घेरु दाव नहिँ पाय ।  
 गिरवानहु असि ती न तकि रीझहुगे सुकवाय ॥१२६॥  
 इहां दुरावत कत लला कपट-कला के जोर ।  
 यह नहिँ जानत हो भला चोन्हत चोरहि चोर ॥१२७॥  
 तकि तकि जिनहि लता रही थकि थकि सीस नवाय ।  
 ते भुज भाई रावरी पो-मन देहि भँवाय ॥१२८॥

तन मन रीझे मार से सुंदर नंदकुमार ।  
 यातें है उचितै चितै हंसि बोलै इक बार ॥१२६॥  
 पुहुपित पेखि पलास-वन तव पलास तन होइ ।  
 अब मधु मास पलास भो सुचि जवास सम सोइ ॥१३०॥  
 मुह माहीं नाहीं रही ही मैं हाहीं धारि ।  
 गरबाहीं कीन्हें तिया रही पियाहि निहारि ॥१३१॥  
 मदनातुर चातुर पियै पेखि भयौ चित लोल ।  
 पुनि पट सरकौहैं भए फरकौहैं सुकपोल ॥१३२॥  
 सजल जलद से नैन ए बैन रुके किहि भेव ।  
 अंग थरहरे क्यौं भरे खरे तनोज पसेव ॥१३३॥  
 प्रीति प्रतीति लिए मुधा मान ठानि बोलै न ।  
 सौहैं सौहैं खात कित होत हंसौहैं नैन ॥१३४॥  
 लखि सुछबोले रीझिहौ सुछबोली छन माहि ।  
 छिगुनी छोरहु के छले कटि ढोले ह्वै जाहि ॥१३५॥  
 पी पेखे ती-बदन निसि दिवस ससी अनुहारि ।  
 तनु मनु हारि चरन लगे करन लगे मनुहारि ॥१३६॥  
 नहिँ आए निसि आधिहू कहुँ छाए बस नेह ।  
 उर उरभी गुरु लाज के तिय यह जिय संदेह ॥१३७॥  
 हरि छबि सुधि बुधि हरि लई वीर भयो यह हाल ।  
 परिरंभन लागी करन जमुना-तीर तमाल ॥१३८॥  
 धन इत तकि कित चित गयौ कैसी चंदन लाइ ।  
 अहे कहे तो तन रहे सघन अरुन कन छाइ ॥१३९॥  
 रिसु करि कछु बोली न ती इत उत डोली ऐन ।  
 सनखौहैं पी तकि भए तनु अनखौहैं नैन ॥१४०॥  
 कोऊ कोरिक खोरि दे नासा भौंह सिकोरि ।  
 दूजी हरितन हरि तर्कें इत तें हित दग जोरि ॥१४१॥

सब विधि अति रति-कोविदा कोक-कला की नाइ ।  
 कनक-वेलि सी केलि में तिय पिय हिय लपटाइ ॥१४२॥  
 रमन गमन सुनि सखिन तन तकि न कहति कछु वार ।  
 नैननि इंदीवरनि तें बहति कलिंदी धार ॥१४३॥  
 सुखदायक दूती चतुर करि परपंच बनाय ।  
 छरि जु निसातम सुबसु करि नवलहि दर्ई मिलाय ॥१४४॥  
 कामुक अंधियारी गली हरज्यौ कामिनि हेरि ।  
 आलिंगन करतहि अली आए वारिद घेरि ॥१४५॥  
 तिय तव ये नैना दिए हिए उछाह अछेह ।  
 पिय बिछुरे दुखप्रद भए नेह किए अब मेह ॥१४६॥  
 धीर अभय भट भेदि कै भूरि भरी हू भीर ।  
 भूमकि जुरहि हग दुहुनि को नेकु मुरहि नहि वीर ॥१४७॥  
 सुनि गौने की बात कल भए पनसफल गात ।  
 मसकि गई आंगी नई उकसे उर उरजात ॥१४८॥  
 अहनिसि नहि ठिग तें टरै भरै अनंद अनेक ।  
 बिन देखै मनभावनै कल न परै पल एक ॥१४९॥  
 अंगिरानी आंगी चितै हगनि हगनि तें जोरि ।  
 रंगराती रंग राति कै बिहंसि गई मुख मोरि ॥१५०॥  
 चारु भए भरि भार कुच सकुच भई रसलीन ।  
 लगे नयन लौ करन क्यौं ललन न होय अधीन ॥१५१॥  
 बाल गुलाब प्रसून को अब न चलावै फेरि ।  
 परीं लाल के गात में खरो खरोटें हेरि ॥१५२॥  
 भांकि भरोखे जनि जुरै रिभवारिन की सेन ।  
 बलि कहि मोहै रावरै ये न नैन लखि केन ॥१५३॥  
 धनि धनि है धन के चरन सिंजित मनि मंजोर ।  
 कल हंसन के चेदुवन मन ललचावन वीर ॥१५४॥

जब तन दीप्यौ दीप लों अतन जग्यौ मन माहँ ।  
ललचि चले चख तब चले को निज तन की छाहँ ॥१५५॥  
नख - रेखें देखें नए श्रमकन छलकैं छाया ।  
पलकैं भलकैं पीक की अलकैं रहै दुराय ॥१५६॥  
हैं न सखी ऐसी लखी जैसी है यह चाल ।  
लाल नयन सद मद छके भूमि रही यह बाल ॥१५७॥  
सहित भला कहि चित अली लिए कजाकी माहिँ ।  
कला लला की ना लगी चली चलाकी नाहिँ ॥१५८॥  
गहि बरुनी बरछो बनी अरु कटाछ तरवारि ।  
नैन बीर लैं भीर धसि धीर अमी रहि मारि ॥१५९॥  
बानि तजैं नहिँ बावरे कानि कि हानि लजै न ।  
सौहें दरसत सांवरे होत हसौहें नैन ॥१६०॥  
आज अचानक गैल मैं लखत गयौ हरि धीर ।  
काढ़े कढ़त न गड़ि रहे अँखियनि मैं बलबीर ॥१६१॥  
बैरी मोहि बिचारि कै कत कहियत छल बैन ।  
इतनोई कहि चुप रही भरि आए जल नैन ॥१६२॥  
ससि लखि जगत बिदित कहा जाय कमल कुँभिलाय ।  
यह ससि कुँभिलानो अहो कमलहि लखि किहि भाय ॥१६३॥  
सारी सारी लै भजे चढ़े कदम की डाल ।  
अबला जन गड़ि जाति हैं अब लाजन गोपाल ॥१६४॥  
घरहाइन की घेरुहू लाज सकी न बचाय ।  
अरी हरी चित लै गयौ लोचन चारु नचाय ॥१६५॥  
आयौ दुसह बसंत री कंत न आए बीर ।  
तन मन बेधत तंत री मदन सुमन के तीर ॥१६६॥  
जातरूप परिजंक की पाटी रहि लपटाइ ।  
मीच बीच ही चहि चकी तनु न पिछानी जाइ ॥१६७॥

दामिनि निज दुति दरपकै दमकि न अब इहि कोति ।  
 कामिनिहूँ तो सी लसै विमल भरी तन जोति ॥१६८॥  
 जौ वाके सिर पै परै छाहँ सुमन की आय ।  
 तौ बलि ताके भार सों लंक वंक ह्वै जाय ॥१६९॥  
 सब गनना चितचोर सों बनी सुनत यह बोल ।  
 भरके तनसिज तरुनि के फरके गोल कपोल ॥१७०॥  
 सोच विमोचन हैं अली भरे सकोचन माहिँ ।  
 लोचन में लाली भली रोचन सी दरसाहिँ ॥१७१॥  
 लागे नैना नैन में कियो कहा धौं नैन ।  
 नहिँ लागे नैना रहैं लागे नैना नै न ॥१७२॥  
 चपति चंचला की चमक हीरा दमक हिराय ।  
 हांसी हिमकर जोति की होति हास तिय पाय ॥१७३॥  
 लाजनि बोलि सकी न ती लागे तीर अनंग ।  
 नीर नयन तें अयन तें पो निकसे इक संग ॥१७४॥  
 यह न लगी है कामिनी गरे सांवरे आइ ।  
 मनु दमकति है दामिनी घनस्यामै लपटाइ ॥१७५॥  
 अरुन मांग पटियां चितै सौति परैं चकि घूमि ।  
 सोहै सोंब सोहाग की रससिंगार की भूमि ॥१७६॥  
 सुमन - छरी सी बन गई इत तें जमुनातीर ।  
 तकि उत तें आवति दई छरा छरी सी घोर ॥१७७॥  
 जदपि जतन करि मन धरें तदपि न कन ठहराय ।  
 मिलत निसानन भान को घन समान उड़ि जाय ॥१७८॥  
 नारी बूढ़ि गई सुनत कुंजविहारी नाम ।  
 करि उपाय हारी अजौ सुवि न सँभारी बाम ॥१७९॥  
 यह अमकन नख-खतन की सैन जुदी अँग नैन ।  
 नील निचोल चितै भए तरुनि चोल रँग नैन ॥१८०॥

विधि वह दिन ऐहै कबों हाय मिलैगी धाय ।  
 चंदकला सी वाल वह सियरै है यह काय ॥१८१॥  
 हाइ गई हों आज जब भाइ कही बहु वार ।  
 धसत कुसुम के दार में छद छाए केदार ॥१८२॥  
 सुमन सुमन अरपन लिए उपवन ते धन ल्याइ ।  
 धरनी धरि हरि तकि कही हाइ भयौ श्रम जाइ ॥१८३॥  
 यों विभाति दसनावली ललना वदन मभार ।  
 पति को नातो मानि कै मनु आई उड़ भार ॥१८४॥  
 हों न दुनी में यह सुनी रीभत हो गुन पाय ।  
 मो निगुनी हूं पर कृपा करत रहे यदुराय ॥१८५॥  
 पीछे तें गहि लांक री भरी आंकरी हेरि ।  
 चढ़ै नांक री नां करी हरे हां करी फेरि ॥१८६॥  
 ठकुराइन-पाइन चितै नाइन चित चकवाइ ।  
 फिरि फिरि जावक देति है फिरि फिरि जाइ समाइ ॥१८७॥  
 स्वेद भरे बर गात री घरधरात बेहाल ।  
 को गोरी पर डारिगो रोरी मारि गुलाल ॥१८८॥  
 रुकति चलति चलिचलि रुकति झुकतिललित गति पाय ।  
 आवति सौरभ सों सनों सियरावति लागि काय ॥१८९॥  
 सीत असह विष चित चढ़ै सुख न मढ़ै परिजंक ।  
 बिन मोहन अगहन हनै बीछू कैसो डंक ॥१९०॥  
 मो चित लियौ सुचित दियौ उचित कियौ लागि काय ।  
 सो मित सोभित होइ कित पियौ सुधाधर हाय ॥१९१॥  
 जो तब सुखसीवां दई दई भई कह चेति ।  
 पिय बिन कोकिल-काकली भली अली दुख देति ॥१९२॥  
 चलि सुकेलि घर घन अभर कारी निसि सुखदानि ।  
 कामिनि सोभावानि तूं दामिनि दीपतिवानि ॥१९३॥

छीनी तार मुरार सी तिहिँ दीनी समुभाय ।  
 चोखी चितवनि यार की कटि न कहूँ कटि जाइ ॥१८४॥  
 अंगकंप स्वरभंग भो विवरन अति मनरंज ।  
 नंदनंद मुखचंद सो मूँदि गए दृगकंज ॥१८५॥  
 हरत न हिम हिमभानु ते करत मधुर वर वैन ।  
 वा ललना आनन नलिन दिवस मलिन निसि मैं ॥१८६॥  
 नहिँ है बेनु बजावने लेनु दही को दान ।  
 यह है लाल मिटावने राधार्जी को मान ॥१८७॥  
 करि उपचार थकी चहो चलि उताल नंदनंद ।  
 चंद्रक चंदन चंद तें ज्वाल जगी चौचंद ॥१८८॥  
 एरी सुख खनहुँ न लखे दुखदो दुखद दिखाइ ।  
 भीखन भीखन लगत है तीखन तैख बनाइ ॥१८९॥  
 जेवर बने लतान के ताप गने सविता न ।  
 ते बितान छबितान तनु निसि दिन रहत बितान ॥२००॥  
 नेहु भूलि सपनेहु मैं तकत न दूजी ओर ।  
 निसि दिन बदन सुचंद के लोचन चारु चकौर ॥२०१॥  
 मनरंजन तव नाम को कहत निरंजन लोम ।  
 जदपि अधर अंजन लगे तदपि न नींदन जोग ॥२०२॥  
 रंगभवन सखि संग मैं आए स्याम सुजान ।  
 दृग बिहँसै छवि लखि गयौ बिनहि मनाए मान ॥२०३॥  
 धीर लियौ हरि बीर री स्याम सरीर दिखाय ।  
 चित चलाय ही पीर री गयौ अहीर जगाय ॥२०४॥  
 सुकनक बन कदली भली कमर खरीही खीन ।  
 निरखि अमोल सिरी लली परिहो कदम यकीन ॥२०५॥  
 ललित बिसदता नखन यौ चरन अरुनता रंग ।  
 ज्यौँ बिमला सखि की कला लसति सुसंध्या संग ॥२०६॥

हार हेरानो हेरि दे टेरि कही बहु बार ।  
 ससीकार नहिँ सुनत है चकित लुनत है हार ॥२०७॥  
 मोही मोहि दिखाय कै मन मोही छबि अंग ।  
 सखि दुख दै सुख लै गयौ निरमोही निज संग ॥२०८॥  
 सेस छबीहि न कहि सकै अगम कबीहि सुधीर ।  
 स्याम सबीहि बिलोकि कै बाम भई तसबीर ॥२०९॥  
 तनक निहारी जबहिँ तें बनक तिहारी आय ।  
 छनक सँभारी सुधि नहीं कुंजबिहारी हाय ॥२१०॥  
 आज रही गृहकाज तजि अजब तमासे माहिँ ।  
 डारि तुला तोली तियै तुलो छमासे नाहिँ ॥२११॥  
 श्यामरंग के परस तें उपज्यौ पुलक सरीर ।  
 आली बनमाली मिले नहिँ जमुना को नीर ॥२१२॥  
 काम कमान तनीकि दृग दीपक काजर रेख ।  
 कै एतो भौहैं बनी सौहैं पाय सुबेख ॥२१३॥  
 हे हरि छोभित करि दर्ई मयन पयन सर मारि ।  
 हरिहि हरिन - नैनी लगी हेरनहार निहारि ॥२१४॥  
 सरसि जात तब बदन की दरसि जात निति लाल ।  
 बरसि जात सुखसात तब परसि जात जब बाल ॥२१५॥  
 कजरारी छबि पेखतहिँ मुरछि परे बृजराज ।  
 कहि कौने लौने नयन टोने कीने आज ॥२१६॥  
 गहत अरुन कत होत है पहिरत कनक अकार ।  
 लखत असित सित हँसत यह अहो कहो हरिहार ॥२१७॥  
 एतेहु ठिकठान पै देखति हैं उत सान ।  
 यह न सयानी देति हैं पानी मागत पान ॥२१८॥  
 कहुँ निसि मैं बसि मयन बस आए अयन उताल ।  
 लाल नयन भे बाल को लाल नयन लखि लाल ॥२१९॥



परि पा करि बिनती घनी नौमरजा हों कीन ।  
 अब न नारि अर करि सकै जटुबर परम प्रवीन ॥२२०॥  
 आप भलो तौ जग भलो यह मसलो जुअ गोई ।  
 जौ हरि-हित करि चित गहो कहो कहा दुख होइ ॥२२१॥  
 प्यारो घेरु निहारि कै चूम्यौ पाटल पान ।  
 प्यारी कर मुकुलित कियो द्वीमिथ जानन आन ॥२२२॥  
 सो, तिनके दृगदीपनहि जा समीप ठहराहि ।  
 नागललीही है अली रोमवली यह नाहि ॥२२३॥  
 कनक वरनि मोहन लसैं तरनि-तनूजा-तीर ।  
 लखे लखायै छवि कछू छति न छोम मन धीर ॥२२४॥  
 इक तौ मार भरोर तें मरति भरति है सांस ।  
 दूजे जारत मांस री यह सुचि लो सुचि मांस ॥२२५॥  
 दमकि दमकि दामिनि कहा दिपति दिखावति मोहि ।  
 वा कामिनि की कांति लो भूलि कहों नहि तोहि ॥२२६॥  
 ऐसे ही बेधक बने ये अनियारे नैन ।  
 फिरि अरुनारे करि कहा ही बेधै हरि चैन ॥२२७॥  
 बलि तेरी छवि भावरी चलि बिभावरी जाइ ।  
 जानति स्याम सुभावरी अब न भावरी ल्याइ ॥२२८॥  
 बेलि कमान प्रसून सर गहि कमनैत बसंत ।  
 मारि मारि विरहीन के प्राण करै री अंत ॥२२९॥  
 राति अनत बसि भोर पो भूमत आए ऐन ।  
 निरखि न सौहैं नैन ती करति न सौहैं नैन ॥२३०॥  
 चंपक केसरि आदि दै तुलहि न कौनो रंग ।  
 सोनो लोनो होत है लगि दुलहिन के अंग ॥२३१॥  
 बेत सबन मनिगन सजे बिलसित सुंदर बेलि ।  
 चहुँ दिसि मैं राकेस सी रही उँज्यारी फेलि ॥२३२॥

भसम करत तन असम सर बिषम सिसिर के तीर ।  
 यह निदाघ है भूलि कै माघ कहैं सब धीर ॥२३३॥  
 ईठिन में बैठी हुती नारि सु नार नवाय ।  
 दीठिन दीठि बचाय कै इत चितई ललचाय ॥२३४॥  
 धन तन पानिप को जऊ छकत रहैं दिन राति ।  
 तऊ ललन लोयननि की नेसुक प्यास न जाति ॥२३५॥  
 पसोपेस तजि आइए पहिने कुन ससपंज ।  
 कर मुकुताइ न जाइए मुकुता बरसत कंज ॥२३६॥  
 लंक गहै अंकन लगै परि परिजंक सकाय ।  
 जगत अतन तन ललन के ज्यौं ब्यौं चित ललचाय ॥२३७॥  
 कारी सारी सिर धरे गिरिधारी न लजात ।  
 सौहैं सौहैं खात सखि लखि सनखैहैं गात ॥२३८॥  
 राजिव नैन बिना लहे लहे छनो नहि चैन ।  
 प्रेमपरनि मन खग अहे उरभि रहो सुरभौ न ॥२३९॥  
 अली कहैं न इन्हैं भली लखि इनके कुसुभाय ।  
 सिख हित लगत न नैकु चित चहहि सुधा बिष खाय ॥२४०॥  
 अहे अहो कच सुमुखि के विधि बिरचे रुचि जोरि ।  
 छूटे बांधत हैं बँधे लेत ललन मन छोरि ॥२४१॥  
 विधि इन अनियारे नयन कत बिरचे सुनि बाल ।  
 जिनतें हेरि किए अरी हरि ही बेधि बिहाल ॥२४२॥  
 आय सकारे हिय सकुचि पाय पधारे ऐन ।  
 तिय नागरि तिय नैन तकि लगी बफारे दैन ॥२४३॥  
 घिरि आए चहुँ ओर घन तिहि तकि भोर ससोर ।  
 मोर सोर सुनि होत री तन मन मदन मरोर ॥२४४॥  
 वे नीके नीकी इहौ क्यौं फीकी परै चाह ।  
 दुहुँ दिसि नेह निबाह पै वाह वाह है वाह ॥२४५॥

कहा परेखै करि रही इत देखै चित हाल ।  
 गई ललाई दगनि तँ छुवत कलाई लाल ॥२४६॥  
 छैल छबोली की छटा लहि महावरी संग ।  
 जानि परै नाइन लगै जबहिँ निचोरन रंग ॥२४७॥  
 जा सँग जागे हो निसा जासों लागै नैन ।  
 जा पग गहि मति मैं भे मैं बिबस सो मैं न ॥२४८॥  
 लगिगो नैन लगे सुमन जगिगो मैं सरीर ।  
 अली गयौ छलि गैल मैं छैल छली बलबीर ॥२४९॥  
 दगनि खुभी खूठी खुभी निसराए निसरै न ।  
 चल चख चितवनि चित चुभी बिसराए बिसरै न ॥२५०॥  
 तिगुनी तें द्विगुनी भई एक गुनी घटि लाज ।  
 तब मधुवन किहि ज्ञान सों जान कहो बृजराज ॥२५१॥  
 सरकी सारी सीस तें सुनतहिँ आगम नाह ।  
 तरकी बलया कंचुकी दरकी फरकी बाह ॥२५२॥  
 रुखे रुख मुख प्रिय बयन नयन चुराई दीठि ।  
 दीठि तियहि पिय पीठि दी ईठि भई सुबसीठि ॥२५३॥  
 जहां दुपहरी मैं रही खरी अंधेरी छाइ ।  
 अहे नबेली ता गली चली अकेली न्हाइ ॥२५४॥  
 ना करु ना करु कहि थकी ना करु ना करु मान ।  
 कान लगैगो कान जब कान करैगी कान ॥२५५॥  
 धनि धनि है हे हार तो धनिधनि भाग अपार ।  
 या नवला के ही लगे निधरक करत बिहार ॥२५६॥  
 कत सकुचे नीचे चहो कहा कहो बस मैं ।  
 पोंछे लाली ना मिटै लाल तिलोछे नैन ॥२५७॥  
 रनित किंकिनी हैं न री नजर सु आवै हाल ।  
 मनसिज धरियारी अरी गजर बजावै बाल ॥२५८॥

तरकति सरकति ही रहैं रहैं न एको बार ।  
 चुरियां ये कर तार की जग न रची करतार ॥२५६॥  
 चंपक मैं नहिं चंद मैं नहिं चपला मैं लाल ।  
 नहिं कंचन मैं चारुता रही यही तन बाल ॥२६०॥  
 चहुं दिसि सों सहबासिनी बीजन करहिं प्रभात ।  
 चले पसीने जात हैं गात नहीं सियरात ॥२६१॥  
 यह स्यामा है कौन की छविधामा मुमुक्याय ।  
 सौंध चढ़ी चहि कौंध सी चौंध गई चख छांय ॥२६२॥  
 भटक न भटपट चटक कै भटक सुनट के संग ।  
 लटक पीतपट की निपट हटकति कटक अनंग ॥२६३॥  
 सगुन सरूप तुमैं कहैं बुध कत नंदकुमार ।  
 ह्यां लों गुन न गहो रहो बिन गुन पहिरे हार ॥२६४॥  
 ललित मेंहदी बूंद यों लसत हथेरिन साथ ।  
 पी अनुरागी मन मनो बसत तिहारे हाथ ॥२६५॥  
 यक तौ सरपंजर कियौ अतन तनै सर सूल ।  
 दूजे यह सिसिरौ भयौ खंजर संजर तूल ॥२६६॥  
 दैया पनिपरिया कहैं तरनि - तनैया - तीर ।  
 अधर बिदारैं कीर री कपि डारैं चिरि चीर ॥२६७॥  
 जानि परैगी जात हो रात कहूं करि सैन ।  
 लाल ललोहें नैन लखि सुनि अनखोहें बैन ॥२६८॥  
 खोंचि किनारा कल नदी दर्ई बदी हे लाल ।  
 बाह राक्षरी चाह मैं भई बावरी बाल ॥२६९॥  
 बलिहारी अश्र क्यौं कियौ सैन सांवरे संग ।  
 नहि कहूं गोरे अंग ये भए भांवरे रंग ॥२७०॥  
 गढ़े नोकीले लाल के नैन रहैं दिन रैन ।  
 तव नाजुक ठोढ़ीन क्यौं गाढ़ परै मृदु बैन ॥२७१॥

बनक मढ़े कोठे चढ़े छैल छवीले स्याम ।  
 खरी चौहटे में अरी चढ़ी रहचटे वाम ॥२७२॥  
 तिय पिय की बेनी गुही लखि उसास कसि लीन ।  
 लहरि न आई महि गिरी मनु नागिनि डसि लीन ॥२७३॥  
 त्रिविधि प्रभंजन चलि सुरभि करत प्रभंजन धीर ।  
 तन मन गंजन अलि प्रभृत बिन मनरंजन वीर ॥२७४॥  
 सकुचौहीं मुसुक्क्यानि सौ ललचौहीं अखियानि ।  
 मो तन तनक चितै गई दुखद भई सुखदानि ॥२७५॥  
 कीजे कह रस बस बसे प्रविसे आय प्रभात ।  
 आप कहीजे बलि कहा कहत पसीजे गात ॥२७६॥  
 चितवै चित आनंद भरि चारु चंद की ओर ।  
 प्रीति करन की रीति कों सिखवैं चतुर चकोर ॥२७७॥  
 सतरौहैं मुख रुख किए कहे रुषौहैं वैन ।  
 सैन जगे के नैन ये सने सनेह दुरै न ॥२७८॥  
 सी सी कै उभकै भुकै चलत रुकै जदुराय ।  
 नव मखमल के पावड़े हाय गड़े ये पाय ॥२७९॥  
 हा हा कर जेरे खरे बलि चितवै पिय ओर ।  
 कहँ यद्व मृदु तन रावरो कहँ हैं परम कठोर ॥२८०॥  
 बनमाली दिसि सैन कै ग्वाली चाली बात ।  
 आली जमुना जाउँगी काली पूजन प्रात ॥२८१॥  
 मलयज घसि घनसार में खौरि किए गयगैनि ।  
 सेत बसन सजि तजि गली चली चांदनी रैन ॥२८२॥  
 चतुर चितेरे पानि कों घूमन जोग बिचारि ।  
 रही निहारि सुमित्र को चित्र चित्र सी नारि ॥२८३॥  
 गई ललाई अधर तें कजरई अखियान ।  
 चंदन पंकन कुचन में आवति बात तियान ॥२८४॥

कनित बेनु मारुत परम ध्वनित बिहँग अलिगुंज ।  
 बलि चलि जहँ तम दरस सम पुंज तमाल निकुंज ॥२८५॥  
 बिरह बरहि भर सीतकर लखि लखि मरति कराहि ।  
 ये बैारी किहि धन मलै मलयज लावति काहि ॥२८६॥  
 क्यों जितिए कहिए भला तुम छल बल सुप्रबोन ।  
 करिए कौन कला लला हम अबला बलहीन ॥२८७॥  
 तब सीरी तकि तकि सिरी भई रही छल नीर ।  
 अब गरमी मन मैन की आय गई बलबीर ॥२८८॥  
 ऊधव माधव जू बिना सुखदाहू दुख देत ।  
 होत चेत हरि लेति चित चेत चांदनी चेत ॥२८९॥  
 जब तें पीछे छिपि लखी दरपन बिधुमुख छांह ।  
 तब तें तेरे दरस की भरी हरी चित चाह ॥२९०॥  
 जब तें न्हान गई तई ताप भई बेहाल ।  
 भली करी या नारि की नारी देखी लाल ॥२९१॥  
 खंजन कंज न सरि लहैं बलि अलि को न बखानि ।  
 एनी की अँखियानि तें ए नीकी अँखियानि ॥२९२॥  
 छैल छवीली छांह सी चैत चांदनी होति ।  
 दीपसिखा सी को कहै लखि खासी तन जोति ॥२९३॥  
 मन-खेलार तन-चंग नव उड़त रंगरस डोर ।  
 दूरिहि दोर बटोर जब जब पारै तब ठोर ॥२९४॥  
 बड़े बड़े कच छुटि पड़े उमड़े नैन बिसाल ।  
 कड़े भ्रमकड़ेही गड़े अड़े खड़े नँदलाल ॥२९५॥  
 इक दृग पिचकारी दर्ई इकहि लई ही लाय ।  
 सखी बिहारी दिसि लखी रसनहिँ दसन दबाय ॥२९६॥  
 हाहा करि हारी अहे जामिनि सरद न जान ।  
 लखत कलाधर देखबी कामिनि मान सयान ॥२९७॥

तन सुरंग सारी नयन अंजन , बेंदी भाल ।  
 सजे रही जगि जालिमा भामिनि देखहु लाल ॥२६८॥  
 सब जुरिकै दरसन करो परसन है सुख मोइ ।  
 या कामिनि के डर लसैं गुर ससिसेखर दोइ ॥२६९॥  
 गुर उतंग सुर सहित हैं वरनत मो मन थाक ।  
 बेसरि मुकुतनि पाय कै सरसति सोभा नाक ॥३००॥  
 चलनि भली बोलनि भली सुछवि कपोलनि आज ।  
 तकि सौं हैं चितवनि भली भले बने वृजराज ॥३०१॥  
 कहति ललन आए न क्यों ज्यों ज्यों राति सिराति ।  
 त्यों त्यों बदन सरोज पै परी पियरई जाति ॥३०२॥  
 जुवतिन सँग बर पूजि कै लगी भांवरी देन ।  
 परतिय मुख पिय रुख निरखि हरष भरी अनखेन ॥३०३॥  
 तबहु मजाकी आज लखि सकल सजाकी नारि ।  
 चखनि चलाकी सो अरी करी कजाकी मारि ॥३०४॥  
 अब निधरक सौ हैं चलो तरक भलो नहि कोइ ।  
 रहे रिसौ हैं नैन जो भए हसौ हैं सोइ ॥३०५॥  
 का केकी की काकली का काली निसि चैन ।  
 बन माली आए अली बनमाली आए न ॥३०६॥  
 जगमगात है होन को या आनन लों चंद ।  
 ताही ते पूरन भए मंद परै तम फंद ॥३०७॥  
 सुनि सुनि केकी कूक री हूक परी ही वीर ।  
 ता पर जी घातक अरी चातक करत अधीर ॥३०८॥  
 गगन लता ते बलित हैं जह तमाल तरु जाल ।  
 धेनु धावरी रावरी लखि आई गोपाल ॥३०९॥  
 दुरति, दुराए ते न रति बलि कुंकुम डर मैन ।  
 प्रगट कहैं पति रति जगे जगी जगीले नैन ॥३१०॥

सपन न दरप न सदनहुं लखी ललन अपराध ।  
 कहि अब कैसे पूजिहै मान करन की साध ॥३११॥  
 दुपहर भए कहर किए जहर लगाए नैन ।  
 मनरंजन न जगे अजो अब तकि अंजन दैन ॥३१२॥  
 यह अहनिसि बिकसित रहै वह निसि मैं कुँभिलाय ।  
 याते तो मुख कमल लो कहो कहो किमि जाय ॥३१३॥  
 संग अनंग - अनी लिए किए सिंगार सुअंग ।  
 रही पिया - छतिया लगी तिया पगी रतिरंग ॥३१४॥  
 काहि छला पहिराव री हो बरजी बहु बार ।  
 जाय सही नहिँ बावरी मिहदी रंग को भार ॥३१५॥  
 नियरे बैरिनि ननद लखि मो जियरे की घाय ।  
 पियरे पट की लटक सखि हियरे खटकति आय ॥३१६॥  
 चटक भई दुति दूनरी देखि तूनरी चाल ।  
 पहिरि करैगी खून री गहिरि चूनरी लाल ॥३१७॥  
 हेरि बिहारी की दसा बरनत नेकु बनै न ।  
 चिलक तिहारो चाहि कै सूधी तिलक लगै न ॥३१८॥  
 नैन उनीदे कच छुटे सुखहि लुटे अंगिराय ।  
 भोर खरी सारसमुखी आरस भरी जँभाय ॥३१९॥  
 कौतुक जोहौ रास को अरु मोहौ बृजराज ।  
 चलो भलो मसलो हलो एक पंथ द्वै काज ॥३२०॥  
 कनक बिंदु सुरकी रुकुम चंदन मिलत जमाल ।  
 बंदन तिलक दिए भई चिलक चौगुनी भाल ॥३२१॥  
 बानी बोलि कठेठिए रहति रुषानी जीय ।  
 इत आरो बर मानिनी बसु लालन के हीय ॥३२२॥  
 सखि सँग जाति हुती सु ती भटभेरो भो जानि ।  
 सतरौहीं भौंहनि करी बतरौहीं अखियानि ॥३२३॥



तेरी सरल चितैनि तें मोहे नंदकिसोर ।  
 कैसी गति है है तऊ कुटिल तरल चख छोर ॥३२४॥  
 पी - पाती पाते उठो ती छाती सियराइ ।  
 सुनि सँदेस रसभेद सों गई स्वेद सों न्हाइ ॥३२५॥  
 अरी बिलंब बरी भई कालिंदी के न्हान ।  
 इंदोबरनैनी निलै चलि चित थित करि ध्यान ॥३२६॥  
 थहरि उठै हरि - तन चितै नैनन बन भरि लेय ।  
 करन भारि बोलै हँसै गहन उरोज न देय ॥३२७॥  
 रची सची सी तोहि री निज कर करि करतार ।  
 ताते निसि बासर रहै तार भयौ भरतार ॥३२८॥  
 उसरि बैठि कुकि काग रे जौ बलबोर मिलाय ।  
 तौ कंचन के कागरे पालूं छीर पिलाय ॥३२९॥  
 तव पद पदवी नहिँ मिली पदुम हारि वर मानि ।  
 लजित होइ निसि मधुकरै भषत हराहर जानि ॥३३०॥  
 लाल उतारि दई अली मैं मेली उर बाल ।  
 गई पसीने न्हाइ सो भली चमेली माल ॥३३१॥  
 भूषन बसन सजे तिया सैन करै नहिँ सैन ।  
 छन निकसै दरसन पिया छन प्रबिसै रँग ऐन ॥३३२॥  
 आए स्याम बिदेस तें बाम मिली जब जोइ ।  
 रहे अलौने गात जो भए सलौने सोइ ॥३३३॥  
 भलकनि अधरनि अरुन मैं दसननि की यौं होति ।  
 हरि सुरंग घन बीच ज्यौं दमकति दामिनि जोति ॥३३४॥  
 समुझि एकु मो नेह कों नेकु लगे नहिँ नैन ।  
 याते अरुन भए किए सैनन ही पर सैन ॥३३५॥  
 यौं सुखमा सरसाय री ये तेरे नख पाय ।  
 मनहुँ कमलदल बिधुकला अमल विरोध विहाय ॥३३६॥

हेरति हैं सो तैं चकित हेरति पावति नाहिं ।  
 चोरि लिए चितचोर चित एकहि चितवनि माहिं ॥३३७॥  
 निसि दिन पूरन जगमगै आवै धोय कलंक ।  
 जौ तौ वा मुख की प्रभा पावै सरद मयंक ॥३३८॥  
 धीर मढ़त मन छन नहीं कढ़त बदन तैं वैन ।  
 तुरत सुरत की सुरत कै जुरत मुरत हँसि नैन ॥३३९॥  
 घनस्यामहि लहि काम बस दीनी वेंदी लाल ।  
 ताहि डारि दै पदिक की कचनि चोराई बाल ॥३४०॥  
 इकहि आंक सेां मोहि कै मोहि रहे हैं मोहि ।  
 हरिहर लों पी कों कहै यहै निहोरी तोहि ॥३४१॥  
 स्याम बिंदु नहिं चिबुक में मो मन यौ ठहराइ ।  
 अधमुख ठोढ़ी गाढ़ की अँधियारी दरसाइ ॥३४२॥  
 ललन चलन सुनि चित चहै लखन चखन समुहात ।  
 कहन लगै फिरि जाय है आय दहन लों वात ॥३४३॥  
 हरि बिधि बनई औरई काहू को न उबीठि ।  
 जाकों जा अँग में लगी दीठि परी नहिं नीठि ॥३४४॥  
 आली तो कुच सैल ते नाभि कुंड कों जाय ।  
 रोमाली न सिँगार की परनाली दरसाय ॥३४५॥  
 गुलुफनि लों ब्याँ ल्यों गयौ करि करि साहस जोर ।  
 फिरि न फिरौ मुरवान चपि चित अति खात मरोर ॥३४६॥  
 मोहन बान चलाय कै मोही मोहि अनंग ।  
 रही न कुल की कानि री अब परि परनि भुजंग ॥३४७॥  
 घर हरि धरि घर जाइए अब अर हरि किहि हेत ।  
 कालि प्रभात मिलायहो यहि अरहरि के खेत ॥३४८॥  
 गमन सुनत धन तन दई मदन जो लाइ लगाइ ।  
 ललन बदन लखि रहि गई सखि दिसि चखन चलाइ ॥३४९॥

दीठि निसेनी चढ़ि चल्थौ ललचि सुचित मुख गोर ।  
 चिबुक गढ़ारे खेत में निबुक गिरायौ चितचोर ॥३५०॥  
 आए लाल प्रभात लखि माल वदन की हाल ।  
 अति उताल सखि बाल उर मेलो मुकुतामाल ॥३५१॥  
 जुग जुग ये जोरी जियैं यों दिल काहु दिया न ।  
 ऐसी और तिया न हैं ऐसे और पिया न ॥३५२॥  
 जहँ जहँ डोल हरे हरे घरे छबीली पाय ।  
 तहँ तहँ चोल तें चांदनी चटकीली है जाय ॥३५३॥  
 मुख तें नजर अनत गई ती लौरहि रहि तानि ।  
 पीक हवह सरसिज निसा ससि यह सुनि मुसुक्यान ॥३५४॥  
 पावस मास अटे पटे अटल पटल घनघोर ।  
 भोर सांभ आहट मिलै चटकाहट वकसोर ॥३५५॥  
 इक तो मदन विसिख लगे मुरछि परी सुधि नाहि ।  
 दूजे वद बदरा अरी घिरि घिरि विष बरषाहि ॥३५६॥  
 कहे कहा न कहा कहे अहे अरंभहि माघ ।  
 मेरे हित तेरे भरे तन कन ओघ निदाघ ॥३५७॥  
 बलि हाँ की वा दिन बिहँसि जब हरि हाँकी गाइ ।  
 अब ना की मोसों कहा बांकी भौंह चढ़ाइ ॥३५८॥  
 पहिले कहि ले कहन जो तब गहि ले पी अंक ।  
 नत गहिली पछतायगी लखि खन माहि मयंक ॥३५९॥  
 कबि समता औरन लहँ लखि छवि बलय अलेश ।  
 इनहीं की परिवेष भो रबिहि ससिहि परिवेष ॥३६०॥  
 हे ही तूं दरकत न कत अजहुँ भयहु पाषाण ।  
 विरह दहन की दाह दहि लहि प्रवाह अँसुआन ॥३६१॥  
 नहि यह नाभी रावरी सुनि प्यारी बृजनाह ।  
 बिधि रचि बिमल खरी करी परी चिबुक की छांह ॥३६२॥

हैं बरजी. बहु बार जी पी पर-दार विहाय ।  
 अब से मरजादहि गहो रहो कृपा करि आय ॥३६३॥  
 जब तें तेरे कुच रुचिर हरि हरे भरि नैन ।  
 फनककलस कंबुक कुकुद नीके तनक लगै न ॥३६४॥  
 चंदन कीच चढ़ायहुं बोच परै नहिं रांच ।  
 भीच नगीच न आ सकै लहि विरहानल आंच ॥३६५॥  
 आज रहे बलबीर री बीर अबीर उड़ाय ।  
 सोभा भाषि न जाय जो आंखिन देखि न जाय ॥३६६॥  
 जब ते' हंसि वह सांवरो गयौ कनखियनि चाहि ।  
 मृग कैसे हग मैं भई अनमिष निरखनि याहि ॥३६७॥  
 मो मति थकित चकित भई नेसुक भेद न पाय ।  
 अलख तिहारी गति दर्ई कहो कही किमि जाय ॥३६८॥  
 और गयौ जरि लेप ते' तन चंदन स कपूर ।  
 अरु चितए चित है गयौ चंद्रप्रभा चकचूर ॥३६९॥  
 गुरु जन मैं मूंदे वदन रही चले घनस्याम ।  
 बात न आई नाक मैं वाती नाई बाम ॥३७०॥  
 वरु वरछी कै वर लगै खरग लगै सर पैन ।  
 कारी लगै कटारिहुं सखि पर नैन लगै न ॥३७१॥  
 रस बरसत है रावरो तन पुलकित घनस्याम ।  
 कहो अधर मैं कौन को रहो अवकहो नाम ॥३७२॥  
 आई सिर नीचे किए खीचे नैन निहारि ।  
 कहत रुखावट सों गई चित चिकनाहट नारि ॥३७३॥  
 ज्यों ज्यों चंदन को ललन लेपत हैं निज गात ।  
 त्यों त्यों ललना को नयन तकि तकि अति स्त्रियरात ॥३७४॥  
 नहिं अन-लगिवे दीठि कों ईठि दिठोना दीन ।  
 दोनो मन बसकरन कों ये कपोल मैं कीन ॥३७५॥

हिय लोचन मैं भरि रहे सुंदर नंदकिसोर ।  
 चलत सयान न बावरी मान धरों किहि ठोर ॥३७६॥  
 कहत थकी ये चरन की नई अरुनई बाल ।  
 जाके रँग रँगि स्याम सूं विदित कहावत लाल ॥३७७॥  
 पहिर नवेली नीलपट मृगमद तिलक लगाय ।  
 केलि-अयन आली लिए चलो अकेली जाय ॥३७८॥  
 सीस भरोखे डारि कै भांकी घूँघट टारि ।  
 कैबर सी कसकै हिये बांकी चितवनि नारि ॥३७९॥  
 बिचरि चहुँ दिसि लखत हैं वर पूजै बृजराज ।  
 चंदमुखी को लखि सखी सुरुजमुखी सी आज ॥३८०॥  
 चूक समै न विचारि तू बादि करै अपसोस ।  
 अपने करम फलद चितै हरि को देह न दोस ॥३८१॥  
 लाल ललाई ललितई कलित नई दरसाय ।  
 दरसो सारसरसभरे दृग आदरस मँगाय ॥३८२॥  
 ए जघननि पीने कि सौं हौं कीने अपराध ।  
 तेरे लौर तरेर की नित मेरे चित साध ॥३८३॥  
 खास ननद नाहिन सदन पिय मन करत बरात ।  
 लखि परोख नंदनंद को हिय न अनंद समात ॥३८४॥  
 अहे अरे आंगन खरे हास - भरे बृजराज ।  
 लखिबे को ललकत हियो खरी भरी दृग-लाज ॥३८५॥  
 अरुन स्याम बेंदी दिए मुकुर दरसि मुसुक्याय ।  
 मनहु विमल सर ससि गयौ कुज सनि संग लवाय ॥३८६॥  
 लाल चलत लखि बाल के भरि आए दृग लोल ।  
 आनन तें बात न कढ़ी पीरी चढ़ी कपोल ॥३८७॥  
 टरति न चौबारे खड़ी अरी भरी रस बाम ।  
 अरो खरो तँ सावरो प्रेमभरो बस-काम ॥३८८॥

नाभि भोर परि किमि कढ़ै मन करि साहस जोर ।

त्रिबली सरल तरंग दै डारि डारि ता ठोर ॥३८६॥

उत तें नेकु इतै चितै राति बितै तजि कोह ।

तेरो वदन सुहास सों ससिप्रकास सों सोह ॥३८७॥

कत इत ताकति ताकि उत करत तमासो मैन ।

दौरि रहे घरि दोह तें दुहु को नैन थकै न ॥३८८॥

लसत पीत पट हरि कटी ऊंचे करि दृग नीच ।

मनु चपला छवि सों पटी है लपटी घन बीच ॥३८९॥

भद्र लद्र सी है रही सनी सनेह बिसाल ।

बैठे पेखि रसाल को रोम उठे ततकाल ॥३९०॥

भरन गई जमुना जलै जोहि ललै ललचाइ ।

ईछन भरि छवि छैल की आई चेत गँवाइ ॥३९१॥

सुबरन पाय लगे लगै दुरित उदित जग माहिँ ।

परत रजत पायल अरी सुबरन की है नाहिँ ॥३९२॥

बिथुरे कच कुच पै परे सिथिल भए सब गात ।

वनदोहैं दृग में भई दुगुनी प्रभा प्रभात ॥३९३॥

मैं मोही मोहे नयन खेह भई यह देह ।

होत दुखै परिनाम करि निरमोही सो नेह ॥३९४॥

धाके खंजन भृंग मृग भूष लखि बाँके पैन ।

वा ललना के लसत हैं चपल चलाके नैन ॥३९५॥

उत तकि तकि ताकै ससी लखि सखि रोष न आइ ।

नँदनंदन दूहत गगन छुवत न हैं थन गाइ ॥३९६॥

चित्रभानु जे करत हैं दीपनि बीच प्रकास ।

तेती तेरे तेह तकि चकि थकि भरत उसास ॥४००॥

जिहि पहिरे छगुनी अरी छिगुनी छवि छहराहिँ ।

सोने के लोने भले छले छले किहि नाहिँ ॥४०१॥

आगे चलि पाछे चलै फिरि आगे समुहाइ ।  
 तरुनी तरल तुरंगिनी चली अली सँग जाइ ॥४०२॥  
 हैं हारी समुझाय कै चरचारीहि डरैं न ।  
 लगैं लगोहैं नैन ये नित चित करत अचैन ॥४०३॥  
 सूरज कर परचंड सो दिन अंगद है वीर ।  
 रीछराज हनुमान सै निसि धारों किमि धीर ॥४०४॥  
 पहिरन की हैसै रही मो जियरे जदुराय ।  
 पहिरे कंचनहार हैं हियरे जाय हिराय ॥४०५॥  
 जाय उतै बलि पेखिए छाया रही छवि स्याम ।  
 सोभति बेलि बिकास सो लसति हास सो बाम ॥४०६॥  
 सुप्रसंसा या बात की करि जातीगन पास ।  
 धनि जगती मैं चातकी इक स्वाती-घन आस ॥४०७॥  
 भीनी सारी सजि लगी न्हाय निरखि जदुराय ।  
 खरी सकोचन सो भरी लोचन रही नवाय ॥४०८॥  
 ल्याई लाल निहारिए यह सुकुमारि बिभाति ।  
 लचके कुच कच-भार तें लचकि लचकि कटि जाति ॥४०९॥  
 मैं न लखी ऐसी दसा जैसी कीनी मैं ।  
 तब ते लागे नैन नहि जब ते लागे नैन ॥४१०॥  
 जाहि जोहि भारद भई मरी परो दुख - फंद ।  
 ताहि सुधाधर क्यों कहैं दारद सारद चंद ॥४११॥  
 या खिन लो चित पै चढ़ी आखिन लागि लगाय ।  
 भुवन भरन आई गई मो ही आगि लगाय ॥४१२॥  
 तकि विकासता तरलई नई नारि हग नाह ।  
 कमल धँसे बन माह लजि कमल बसे बनमाह ॥४१३॥  
 घरहाइन चरचैं चलैं चातुर चाइन सैन ।  
 तदपि सनेह सने लगैं ललकि दूहैं के नैन ॥४१४॥

सजि सुबरन अबरन तिया तजि रसना मंजीर ।  
 सेज परी रति दूसरी चितवति मग बलबोर ॥४१५॥  
 हरिहि हेरि ही हरि गयौ बिसिख लगे भषकेत ।  
 थहरि सयन तें हेत करि डहरि रहरि के खेत ॥४१६॥  
 अति सूछम लखि लंक को जिय कलंक ठहराइ ।  
 नीबी कसत न ओढ़ की प्रौढ़ सखी डरि जाइ ॥४१७॥  
 लंक तलक छलकत चितै इक पल पलक परै न ।  
 अलक तिहारी खलक के करि करि खून डरै न ॥४१८॥  
 भूमि भूमि मुख चूमि लै झुलनी मुकुतनि साथ ।  
 मनहुं सुरासुर गुर ससिहि फिरि फिरि नावत माथ ॥४१९॥  
 डोलै नहिं खेलै नयन मौन भई मन मारि ।  
 गोरी गोरी पै अरी कौन ठगोरी डारि ॥४२०॥  
 तकति तिरीछे ईछननि पीछे भौंह चढ़ाय ।  
 सरन धँसति बिहँसति कसति अँगिया-वँद अँगिराय ॥४२१॥  
 काहि पुकारो को सुनो को न डगारो नैन ।  
 हरि कारो सुधि लै गयौ दै गारो इक सैन ॥४२२॥  
 चलत सदन तें सखि दई मदन ठगोरी डारि ।  
 पिय-सूरति लखि कै भई तिय मूरति अनुहारि ॥४२३॥  
 रोम उठे तन कंप स्रम अनमिष चखवन छाया ।  
 कर न चलै वैन न कढ़ै बदन गयौ मुरभाय ॥४२४॥  
 गलो सांकरी हेरि री दई कांकरी मारि ।  
 नहिं बिसरै बिसरायहुं हरे हां करी नारि ॥४२५॥  
 इष्टदेव कै वा कह्यो पिय आवैं निसि माहिं ।  
 कोई आए होहिंगे आप लखैं मैं नाहिं ॥४२६॥  
 जात सखी काहु न लखी रहे अथाइन गोप ।  
 लोप भई ती जोन्ह मैं निज अंगनि की ओप ॥४२७॥



पाती आई पीत पट छाती लई लगाय ।  
 दई लपट विरहागि की दुगुन गई लपटाय ॥४२८॥  
 नई चाह मैं डुवि रही दही विरह वर नारि ।  
 छला लला को लै लई मुदरी दई उतारि ॥४२९॥  
 ए कुच सुबित कठोर कल लखि यह श्रीफलहाल ।  
 चढ़े लगी भोरं विना तोरे बाल अवाल ॥४३०॥  
 विन चाहे नहिँ चैन चित चाहे तेहु न चैन ।  
 कौनि कला के विधि रचे चाहि लला के नैन ॥४३१॥  
 कहि यह कौनि दसा भई हरि हरि उठति वरनाय ।  
 मदन दई वैयास कै मद न गई यह खाय ॥४३२॥  
 जे तीपम ओषम रहे सुखप्रद सीरे कुंज ।  
 ते अगहन हिय गहन विन भए दहन के पुंज ॥४३३॥  
 हरितन हरितन कत तकै हरि-तन हरित निहारि ।  
 चरित न तो तन लखि परै कित चित हित न बिसारि ॥४३४॥  
 ललित नील कन चिबुक मैं लसत प्रभा लहि दून ।  
 मनु अरखी की पांखुरी लगी गुलाब प्रसून ॥४३५॥  
 गुरजन दुरजन मैं अली उरजन वनज छुवाय ।  
 सिरमनि चिक्कुर चुराय कै गली चली ललचाय ॥४३६॥  
 हौंहुं कहुं सिधारिए चित बिचारिए काहि ।  
 बलि बरषा अतु आइहै जियत पायहैं याहि ॥४३७॥  
 लखि सखि री इत आय खन स्वेद खेद भो दूर ।  
 बारिज अरु बनितावदन बिकसे निकसे सूर ॥४३८॥  
 चहुँ कित चितवै चित चकित सजल किए चल नैन ।  
 लखि सनवा मनवा परै मन वाके नहिँ चैन ॥४३९॥  
 हाहा री हारी हगै कै बा लाख सिखाय ।  
 आप भरैं आपै ढरैं बरबस परबस जाय ॥४४०॥

नार नवाए तकि हरी करी कांकरी चोट ।  
 चौंकि कँपी भूँकी चकी चपी हँसी गहि लोट ॥४४१॥  
 लगे हमारे गात में नख रद तिनकी छाह ।  
 लसहिँ बिमल ही रावरे लखहु छबीले नांह ॥४४२॥  
 काननचारी चपल हैं कजरारी छवि ऐन ।  
 तातें अमल कमलमुखी कमल सही ये नैन ॥४४३॥  
 बिन सेवे तस कुंज तकि तिय हिय लागी लाइ ।  
 नलिन बिना नलिनी बिपिन दरस गयौ सियराइ ॥४४४॥  
 तिय-हिय मान-मरोर सुनि पाय परे पिय आनि ।  
 मलिनाई मुख ते' गई आई सृष्टु मुसुक्यानि ॥४४५॥  
 नांक उचै चख भूष नचै नेह रचे कहि नाहिँ ।  
 चढ़ी छनछटा सी अटा अजहुँ चढ़ी चित माहिँ ॥४४६॥  
 खेदभरे तनसिज खरे जागे मनसिज गात ।  
 सजल भए दृग नहिँ कढ़ै मुख सरसिज ते' बात ॥४४७॥  
 दीप दीप के दीप की दिपति दुहिन दुहि लीन ।  
 समससि दामिनि भा मिलै वा भामिनि काँ कीन ॥४४८॥  
 जिनकी सरि दीप न लहैं तूलैं सीप न कोइ ।  
 स्यामकरन तकि बाम के काम उदीपन होइ ॥४४९॥  
 लखि सु उदर रोमावली अली चली यह बात ।  
 नागलली मुरली करै मनु त्रिबली के पात ॥४५०॥  
 तीछन ईछन बान ते' भौंह कमानहि तानि ।  
 हरिही हरिन हनै खरी तरुनि बधिक तजि कानि ॥४५१॥  
 वा दिन भाजे मुखनि की तुम नासों मुसुक्याइ ।  
 ते राजे यह सुनि उठी सुमना सी बिकसाय ॥४५२॥  
 बार बार बरजी अरी बार बगारनवार ।  
 डर डरभो वा यार को को सुरभावनहार ॥४५३॥

कुंज गई न विधा गई कुसुमित ताकि अतान ।  
 बहुरि दर्ई दूनी भई लगे अतन को वान ॥४५४॥  
 मारि छलंक रहे अहे पारि रहे हे चैन ।  
 ये न नैन हैं रावरे लसत मैन को ऐन ॥४५५॥  
 मेरो ही तो धाम है तो ही मेरो धाम ।  
 ये भेदन तें मोहि है नख-खत वेदन स्याम ॥४५६॥  
 ऐसे चंचल जगत गत देखे सोधि न कोइ ।  
 मनु विधि काढ़े दृग-तुरग सुखवि-पयोधि बिलोइ ॥४५७॥  
 सुरत निसानी गात तकि सकुचत नहिँ समुहात ।  
 चरवाही जानो करो वेपरवाही बात ॥४५८॥  
 मुरछि परी हाहा खरी यह जागी नहिँ नीठि ।  
 कहि आली काली दस्यौ नहिँ लागी हरि-दीठि ॥४५९॥  
 इतै चितै तूं कत खरी नहदी मिहदी नाहिँ ।  
 वे लोयन कोयन अरी प्रतिविंवित दरसाहिँ ॥४६०॥  
 यह सुनि जगपति पाय को अचरजवारी बात ।  
 मो मन भूलो मांग मैं सूधेहू मग तात ॥४६१॥  
 सौरभ सुमन बरन लगे जरन उसीर पटीर ।  
 जेठ मास जलजंत्र तें भरन दहन-कन वीर ॥४६२॥  
 घरहाइन की घेरु मैं रही गए धनस्याम ।  
 नैनन सैनन बैन कै बार बगारयौ वाम ॥४६३॥  
 गई दावरी वावरी आई आतुर न्हाइ ।  
 तपनि तरलनैनी सही मोहित हफनि मिटाइ ॥४६४॥  
 हरि-हिय भृगु-पगु-रेख री वादि विदित सब ओक ।  
 यह सुगरत परिगो अरी गढ़त गढ़त कुच-नोक ॥४६५॥  
 मान बिना सनमान नहिँ है यह लोक-प्रमान ।  
 तेरे जान सयान है मेरे जान अयान ॥४६६॥

काहू विधि हिमकर लहै या मुख समता नाहिँ ।  
 उहि लखि कमल सुकाहि री अरु यहि लखि बिकसाहिँ ॥४६७॥  
 अधरनि की लखि मधुरई पीय पियूष पराय ।  
 सरदे कों सरदी चढ़ै दाख दुरै दुख पाय ॥४६८॥  
 जग जोहन ही के लिये दृगनि दिए करतार ।  
 मनमोहन - छवि मोहनी सुनी सखिन सों बार ॥४६९॥  
 और गए कछु दिवस के हैहै लायक केलि ।  
 बनमाली बिकसन लगी रस मैं सुबरन बेलि ॥४७०॥  
 सासौ बात सुनी न ती सकल सखीन लखी न ।  
 नहि सपनेहुँ मलीनहीं तन मन प्रीत मलीन ॥४७१॥  
 आप करहिँ मनुहारि नहिँ वे न तजहिँ बलि रोस ।  
 इत उत दोसन नेकु दो एकु हमारे दोस ॥४७२॥  
 हौं तो हौं गोरी खरी तुम कारे जदुराय ।  
 नहिँ हिरके आवो कहूं या अँग रँग लागि जाय ॥४७३॥  
 मान किए अपमान पी हीन धरों री माष ।  
 लाख भरे अपराधहु लखि पूजै अभिलाष ॥४७४॥  
 सद रद छद रद छद लगे नटि न लजीले बैन ।  
 बसी रसीले सँग सही कहत नसीले नैन ॥४७५॥  
 एरी या ती के मुखै पूनो ससि सम जोइ ।  
 पर यामैं लखि मित्र कों सखि दूनी दुति होइ ॥४७६॥  
 बाल दरीचे बिच लसै नीचे लाल बिभाहिँ ।  
 अनमिष से दुहुँ के नयन लखि अनमिष दरसाहिँ ॥४७७॥  
 सगरब गरब खिचैं सदा चतुर चितेरे आय ।  
 पर वाकी बांकी अदा नेकु न खींची जाय ॥४७८॥  
 कौन कहै बलि अमल से छकित अमल से है न ।  
 ए न रावरे कमल से चकित कमल से नैन ॥४७९॥

सोक - पुंज सों भरि रही नारि निकुंज निहारि ।  
 बिलखि गगन लखि सखि कही तोहि दया न त मारि ॥४८०॥  
 चामीकर चौकी रुचिर जड़ित जवाहिर जाल ।  
 जगर मगर दुति जगि रही तड़ित छबोली वाल ॥४८१॥  
 लै चुभकी निकसै धसै विहँसै अँगनि दिखाय ।  
 तकि तकि चित चिहुँटै खरी ऐंड भरी अँगिराय ॥४८२॥  
 कलरव करि भुकि सुति लगै रसगाहक चितचोर ।  
 स्याम बरन सुंदर मुखद कुंजविहारी भोर ॥४८३॥  
 लोल नैन थारे लसै अमल अमोल कपोल ।  
 जिनमें तिल के छल बसै गोलक स्याम अडोल ॥४८४॥  
 यौ सोभति सिति कंचुकी सुछवि कुचनि की दून ।  
 ज्यों हलबी सीसानि के संपुट गेंद प्रसून ॥४८५॥  
 चंदहार चंपाकली काहि अली पहिराय ।  
 फूलनिहं के द्वार को भार सहो नहि जाय ॥४८६॥  
 अँखिया अनमिष लेहु लखि चलन चहत घनस्याम ।  
 निति रहिहो घनस्यामहीं रसवस आठो जाम ॥४८७॥  
 विरहदहन लागी दहन घर न घरीक थिराति ।  
 रहति घरी सी ती भई बूढ़ति और तिराति ॥४८८॥  
 बसन फटे उपटे सुबुक चिबुक ददोरे हाय ।  
 चिहुँटन सुमन गुलाब कों अब मम जाय बलाय ॥४८९॥  
 लाल जगहि बाडर करो देहु कहा डर साल ।  
 राडर सरल सुभाव है लखहु महाडर भाल ॥४९०॥  
 चलहु सिंगार कहा करो सहज हरो मन मैन ।  
 ऐसेही नीके लगैं बिन काजर के नैन ॥४९१॥  
 समुझि भली विधि लखि लली बेलि बली रसछाक ।  
 भूलि अली न रली करै कनक कली अरु आक ॥४९२॥

जब तें हरी लख्यौ अरी तब तें छरी दिखाय ।  
 घरी घरी घर तें निकरि खरी खरी अकुलाय ॥४८३॥  
 रुखे रुखे भौहैं सतर नहिँ सोहैं ठहरात ।  
 मान हितू हरि वात तें धूमजात लों जात ॥४८४॥  
 बलि चलि कै अब चाहिए चाह चढ़ी चित वाल ।  
 चिकनाई आई चखनि गई रुखाई लाल ॥४८५॥  
 अबस अरस उपचार करि करि अब सरस उपाय ।  
 बिन मनमोहन के दरस जी को लाइ न जाय ॥४८६॥  
 सखि लखि नंदकिसोर सिर मोर मोर पर है न ।  
 मनु सुमनसपति अकस सों सहल किए हैं नैन ॥४८७॥  
 चैत घसी जलधार मैं राघ लसी ससि संग ।  
 सीत बसी बलि जेठ मैं नवनारिन के अंग ॥४८८॥  
 भरे नेह सौहैं खरे निपट रहे मलिनाय ।  
 ल्याय पीत पट कों अहे अरुनारे लै जाय ॥४८९॥  
 निकसि परसि कल कूकि कै तनहिँ दिए करि खाक ।  
 गिले पिए न दरे मरे तम काकोदर काक ॥५००॥  
 पो पोछे यह सुनि लगे ही सर तीछे मैं न ।  
 हार डारि हेरन लगी तरुनि तिरीछे नैन ॥५०१॥  
 कुंद मघा की सखि सुभा दसन निवारी जाय ।  
 सांभ कि बेला रस पगी लगी मोगरे आय ॥५०२॥  
 को कहि गारे लेय री को पारे यह लिंग ।  
 अधर निकारे बिंदु नहिँ ये तारे प्रतिबिंब ॥५०३॥  
 हैं चलि देउँ दिखाय कत चकित चितै चहु ठोर ।  
 तेरे सँग वारी गई वा वारी की ओर ॥५०४॥  
 सुनि सखियनि तें आंगने खरे पीत पट आय ।  
 धाइ अनल की लपट सी रही हिए लपटाय ॥५०५॥

ठठि मिलि अति आदर कियौ नेह नहौ कहि बैन ।  
 मान तिरोहित नहिँ रह्यौ तकि गति रोहित नैन ॥५०६॥  
 जोय न लीजै आरसी गोयन हाली हाल ।  
 लोयन कोयन रावरे लोयन लाली लाल ॥५०७॥  
 मेरे चख चय सुख लहे ती तेरे तकि भाग ।  
 छल गुंजनि की माल के भलकत पी अनुराग ॥५०८॥  
 निरखि बिमल पानिप परगौ नाभी नद ललचाइ ।  
 अब किमि निकसि सकै अरी मीन भयौ मन जाइ ॥५०९॥  
 लखि हरि रुचि गुरु जन सकुचि भई पिछोड़ी नीठि ।  
 दर्ई निरदर्ई नहिँ दर्ई ईठि पीठि मैं दीठि ॥५१०॥  
 स्याम तिहारे सीस की सौंह कहों सति बानि ।  
 चित्रसदन मैं ती परे पलक परे पहिचानि ॥५११॥  
 पेखि चंदचूड़हि अली रही भली विधि सेइ ।  
 खन खन खोटति नखन छद न खनहुँ सूखन देइ ॥५१२॥  
 जो अतुलित गति कान्ह की सो भुलि तजत न नारि ।  
 कत दृग मुकुलित करति हो प्रफुलित गात निहारि ॥५१३॥  
 भए कठिन थे ठग नए नय न नयन के राज ।  
 रूप - उदधि मैं लागि कै मारत लाज - जहाज ॥५१४॥  
 निसि अंधियारी मैं कहो क्यौँ प्यारीहि मिलाइ ।  
 सुखमयंक की दिनहुँ मैं जाइ उँब्यारी छाइ ॥५१५॥  
 लंगर कों जीते जु करि रति-संगर जुग जाम ।  
 तातेँ अंग रहे भरे सुनि मुसुकानी बाम ॥५१६॥  
 बाहि चाहि चित रीझिहो सुनि नंदकिसोर ।  
 निसि दिन भीर लगी रहै आनन तीर चकोर ॥५१७॥  
 भँकि उभकै भाँकै उभकि लगी भरोखे ऐन ।  
 बाम भई छन जोति सी नहिँ छन ईछन चैन ॥५१८॥

जब लगि जाय बराय कै ल्यावै केतक फूल ।  
 तब लगि न्हाय दुकूल को सखि सुखाय या कूल ॥५१॥  
 सीतल मंद सुगंध चलि अनिल अखिल दुख देहि ।  
 चैत चैत को चंद अलि चित चेतहि हरि लेहि ॥५२०॥  
 नैन बाल मानै न री हारी कोरि सिखाइ ।  
 वा मुमुक्यानि सिता निमित्त दैरि जाहि ललचाइ ॥५२१॥  
 बरसाइत को बार है बर पूजन मिसु लाल ।  
 सुख बर बरसाने चहै बरसाने की बाल ॥५२२॥  
 चंचलता वे चखन सी भूषनहुँ माहि हरी न ।  
 ऐसे कोन हरीन हैं जासु छलंक हरी न ॥५२३॥  
 सपने में अपने निकट आए राति रसाल ।  
 लपटत हीं पट जगि उठी समुझि उठै नटसाल ॥५२४॥  
 केलि-भवन को गवन लखि चतुर सखी मुमुक्याय ।  
 पियहि उढ़ायै पीत पट सित पट तियहि उढ़ाय ॥५२५॥  
 पाय लगे छोरो न अब हायल नंदकुमार ।  
 छूटतहीं घायल करें छरकायल ये बार ॥५२६॥  
 छमा छमा सी छवि छनी बनी छमासी बाल ।  
 छपे छपाकर ल्यायहो छपा छबीले लाल ॥५२७॥  
 अली गली में कर धरे कही हरे हँसि नाहि ।  
 सो ही ते नहि उतरी चढ़ी पूतरी माहि ॥५२८॥  
 तपन-ताप तें चौगुनी बिरह - ताप सरसाइ ।  
 घन उसीर चंदन छुहे छनहुँ न तन सियराइ ॥५२९॥  
 यों बाजूबंद में भली भविष्यनि भुमका भोरि ।  
 कनकलता मानहुँ फली मरकत मनि की घोरि ॥५३०॥  
 चाह तिहारी भाह सो कुंजबिहारीलाल ।  
 हेम - माल सी होति है हेम - माल सी बाल ॥५३१॥



नैन तिहारे नैन मैं मैं न कहां कहै मैं ।  
 उत्तरत ह्यैराते भए इत आते समुहैं न ॥५३२॥  
 बनी सुबरनी उर बसी पहुँची है चलि लेहु ।  
 जब मोहन माला बनै मोहि सुबनिता देहु ॥५३३॥  
 अरुन नयन हैं रावरे अरुन कालि सी पाग ।  
 आज कहो कासो लरे खरे भरे नख-दाग ॥५३४॥  
 वाह वाह नीकी बनी परतहि नेकु निगाह ।  
 डारि दियौ चित चाह मैं तो ठोढ़ी की चाह ॥५३५॥  
 पीरी पाती पावते पीरी चढ़ी कपोल ।  
 कारे बदन बिलोकि रे सुदिता भई अबोल ॥५३६॥  
 अँधियारी जामिनि खरी दुति लहि जगि जगि जाय ।  
 लखि दामिनि घनस्याम के उर में लगि लगि जाय ॥५३७॥  
 निरखि कनखियनि चित कहति नित के आज पिया न ।  
 सीलभरी अँखियनि नमित सौहैं चहति तियान ॥५३८॥  
 लाज भरी अँखियानि मैं चाह भरी चित माँह ।  
 विबस परी है सुंदरी खरी सखीजन जाँह ॥५३९॥  
 सुखद सरद की कौमुदी भूषन भूषि जराइ ।  
 सुबरनबेली सी अली चली नबेली जाइ ॥५४०॥  
 ढिग हिरकी घर की बड़ी पी आए ससुरारि ।  
 नार नवाए लाज मैं जाति गढ़ी नव नारि ॥५४१॥  
 जीते चारु चकोर रुचि सुचि मनसिज सर पैन ।  
 धारे अनियारे लसैं रतनारे ये नैन ॥५४२॥  
 हों पुकारि कहि देति हों मान न मानें लोइ ।  
 हुकुम भवानी को भयौ ज्वारि न भानै कोइ ॥५४३॥  
 बंधुजीव लागैं मलिन भागैं बिंब प्रवाल ।  
 बाल अधर कों लाल लखि नलिन कृसित कृस लाल ॥५४४॥

छकी अछेह उछाह मद तनक तकी यहि घाह ।  
 दै छतिया छद छोभ हद गई छुवावति छांह ॥५४५॥  
 कोक-कला सी केलि कै सुरस-मई सरसाय ।  
 गई निसा न निसा भई बेलि रही लपटाय ॥५४६॥  
 जब तें सुनी अनंग सी मूरति नंदकुमार ।  
 तब तें रूप तरंग में पैरि न पावति पार ॥५४७॥  
 भलो कियौ तौ जौ पियौ चलो इहां ते नाह ।  
 हा सब सखियां पेखिहैं आसब अखिया माह ॥५४८॥  
 सजनी सज नीले बसन भूषन भूष न अंग ।  
 रजनी रज नीकी चली अली अली लै संग ॥५४९॥  
 पवन परस तें भूलते बर अंचरो फहराय ।  
 चाहि सकुच हिय तिय खरी सकुच भरी मुसुक्याय ॥५५०॥  
 न्हाय बसन पहिरन लगो बस न चल्थौ चित दोर ।  
 खाय मरोर खड़े गिरयौ गड़े कड़े कुच कोर ॥५५१॥  
 जऊ किए रुख रुखे कहति कपट के बैन ।  
 तऊ नेह घट नहिँ दुरै प्रगट कहैं मुख सैन ॥५५२॥  
 यौ स्तुतिभूषन भास मुख कलित मयूखन जोइ ।  
 मनहु पियूषन कां धिरे ससि कां पूषन दोइ ॥५५३॥  
 कहत जो सोति सोहाग है तो जावक रुचि चाहि ।  
 बजहिँ न ये बिछिया कहैं छिया छिया सुनि ताहि ॥५५४॥  
 कत मुकुरै मो तें दुरै नेह न नेसुक बोर ।  
 कहत तो मतन रोम ये खरे भरे हग नीर ॥५५५॥  
 उचके कुच उधरे चितै ढँपि आंचर सकुचाइ ।  
 मृगसावकनैनी निरखि जावक मृदु मुसुक्याइ ॥५५६॥  
 सो न कहो वृक्षति जु हों बात बढो बलि आन ।  
 कहो सैन की जो कहैं सो न नैन लागि कान ॥५५७॥

चंदकला कै चंचला कै चंपे की माल ।  
 कै चामीकर की छरी सुखवि भरी कै बाल ॥५५८॥  
 छनपरभा के छल रही चमकि मार-करवार ।  
 दीरवधू के व्याज री दहकत आज अँगार ॥५५९॥  
 वे नैनन से आसबी मैं न लखे घनस्याम ।  
 छकि छकि मतधारे रहैं तव छवि-मद बसु जाम ॥५६०॥  
 रोम तने तन मैं घने स्वेदकने घन माथ ।  
 नीके नारी देखिए थरथरात हैं हाथ ॥५६१॥  
 क्यों न अँगारे देत रे मो मन जानि ससोक ।  
 थांच तोहि नहिँ पांच की तू है सांच अखोक ॥५६२॥  
 मोहि मनावन कों कहो क्यों बलाय ल्यों लाल ।  
 दहिगो ती जी हेरि ही बीती मोतीमाल ॥५६३॥  
 धनगनबेली बनबदन सुमन सुरति मकरंद ।  
 सुंदर नायक श्रीरवन दच्छिन पवन सुखंद ॥५६४॥  
 रहति चढ़ी चित चाय सो लोचन बंक नचाय ।  
 अँगनि बँचाय अली गली चलौ जो लंक चलाय ॥५६५॥  
 कारी सारी जनि पहिरि हेरि पयोधर बोर ।  
 मग ही में ससि अगिहै चलत प्रभंजन जोर ॥५६६॥  
 पूस सकारहिँ कहि कोऊ सांच मानिहै नाहिँ ।  
 कहा कहीं मुख इंदु पै ये समबिंदु सोहाहिँ ॥५६७॥  
 सुबदधि निचलाई निसा विकलाई लखि लेइ ।  
 तजि मचलाई लाल कों गहन कलाई देइ ॥५६८॥  
 आनि इतै छन बारि दे सखि घनसार मसाल ।  
 कौन काज तहँ राज जहँ सुधन बदन दुति जाल ॥५६९॥  
 बैन करत हैं सैन सो चैन ऐन घनस्याम ।  
 बने पैन सर मैन के नैन जैन जग दाम ॥५७०॥

लगे सोम कर तोम सर भई हिए वर धाइ ।  
 कूक काकपालो दर्ई आली लाइ लगाइ ॥५७१॥  
 बिसद बसन मेहीन मैं ती - तन - नूर जहूर ।  
 मनु बिलूर फानूस मैं दीपै दीप कपूर ॥५७२॥  
 किहि विधि जाउँ बसंत मैं विकसित बेलि निकुंज ।  
 सो मुख लखि चहुँ ओर तें भुक्त भूपत अलिपुंज ॥५७३॥  
 गंधबांह सीरे करैं हीरे ताप अछेह ।  
 दर्ई ताहु पर निरदर्ई दाहत देह अदेह ॥५७४॥  
 बलि तिय हिय तें राग बढ़ि अधरनि रंग सरसाइ ।  
 बिद्रुम विंव वँधूक की आभहि रहेउ बढ़ाइ ॥५७५॥  
 बाल न चमकै चंचला है करबाल अनंग ।  
 जलद-जाल घाते नए माते काल मतंग ॥५७६॥  
 बनी-बदन तें भरत हैं ये सुमना के फूल ।  
 धनि सुसीलता मूल धन लगन धनी अनुकूल ॥५७७॥  
 दलन लगे हरि नारंगी गुरजन बीच निहारि ।  
 चख चलाय लै गागरी चली नागरा नारि ॥५७८॥  
 ससि सो गोने जात कत यह आनन - मलिनाइ ।  
 इत उत हेरति हो कहां हीरो गयौ हिराइ ॥५७९॥  
 स्वेद भरे तनसिज खरे करज लगे गन ठाम ।  
 सुथरे कच विशुरे अरी लरी ललन तें बाम ॥५८०॥  
 अरुन चुनीन जड़ित ललित छिगुनी छोर सभाग ।  
 लसत छला के छल लला यह ललना अनुराग ॥५८१॥  
 पट ना देरी लख न ऊ का समीर सुख देत ।  
 करनाटक नैपाल की चढ़ि चलि कंत - निकेत ॥५८२॥  
 भोर चले सुनि सोर मन बाल भई बेताब ।  
 मालिनि बनमाली गले मेली माल गुलाब ॥५८३॥

चुगि चितवनि चारा परचि गहे ढिठाई आय ।  
 हांसी फांसी परि सकै मन कुलंग न उड़ाय ॥५८४॥  
 पी चूमे परबाल लखि बालहि गुरजन साथ ।  
 कचनि परसि बाहूँ धरे कुचनि खरे पर हाथ ॥५८५॥  
 जब वाके रद की चिलक चमचमाति जिहि कोति ।  
 मंद होति दुति चंद की चपति चंचला - जोति ॥५८६॥  
 आज बनी औरै प्रभा उर कपोल पल भाल ।  
 औरै नयन पयन बयन मयन कियौ नँदलाल ॥५८७॥  
 गजराजनि के सीस चढ़ि निपट भुमाए बार ।  
 ते अज तेरे गर परे भूमत मुकुताहार ॥५८८॥  
 ईठिहु नीठि न लखि सकै ढीठि ढिठाई ल्याइ ।  
 गुरजन दीठिहिँ पीठि दै रही सु दीठि नचाइ ॥५८९॥  
 बिरह आंच नहिँ सहि सकी सखी भई बेताब ।  
 चनकि गई सीसी गयौ छिरकत छनकि गुलाब ॥५९०॥  
 त्रिभुवन सुखमा सार लै सोम सलिल सों सानि ।  
 रवि ससि सांचे ढारि बिधि रचे कपोल सुजानि ॥५९१॥  
 लखि कपास को नास री बिलखि न धर हरि धार ।  
 बिसनी अजहुँ पलास हैं सखि सूखे कासार ॥५९२॥  
 सीसी करि मुरि मुरि गई जिन पहिरत तूं बाल ।  
 चूर चूर चित है गयौ तिन चुरियनि मैं लाल ॥५९३॥  
 इक तो हायल रहत हों मायल है वा चाय ।  
 ता पर घायल कै गई पायल बाल बजाय ॥५९४॥  
 कच चिकने मेचक चटक चारु चिलक चितचोर ।  
 छहरि रहे छवि छाया छुटि छुए छवा के छोर ॥५९५॥  
 करत करी कर करम कों अरु कदलों सम तूल ।  
 जो कवि तेरे जानु सों सो अजानु मति भूल ॥५९६॥

पी पिक से निकसे बयन उर डकसे कुच दोइ ।  
 बलि बिकसे लोने नयन अब चिक से लगि जोइ ॥५८७॥  
 हरषित भई गई भयौ अधिक वधिक तें मार ।  
 नहि पायौ बनजा रतन लगे सिंगार अंगार ॥५८८॥  
 कहति सखी सों मुद भरी हेरि हरी की आस ।  
 या निसि बन में सदन तें दुगुन दिखात प्रकास ॥५८९॥  
 गरज भरे बिलसत सरस सुछन छटा छहराइ ।  
 आए हैं घनश्याम री चाहि अटा चढ़ि जाइ ॥६००॥  
 बलि सुनिए गुनिए कहा कहत कहत मृदु बैन ।  
 नेह रचैहैं अब भए तेह नचैहैं नैन ॥६०१॥  
 आधी निसि नव पाहरू जिन आवै या गैल ।  
 किमि बाचै दिन चारि तें नाचै एक चुरैल ॥६०२॥  
 अलि बेचन चलिहैं चलो सफल करहि रसनाहि ।  
 जो रस गोरस में भलो सो रस गोरस नाहि ॥६०३॥  
 बलि कुंजत हैं कोकिले गुंजत हैं अलि - पुंज ।  
 तने बितान लतान के घने बने बन - कुंज ॥६०४॥  
 मंजुल बंजुल मंजरी दरसाई जदुराय ।  
 पीर भई ही सुधि गई तई मरोरे खाय ॥६०५॥  
 केती हो बरजति रहो निचले नेकु रहैं न ।  
 हरि तन पानिप पी अरी भले पियासे नैन ॥६०६॥  
 दरसि निसा यह दरस की दरसहि लागि उताल ।  
 चलो जाति सुवरन बली लोने चंद मसाल ॥६०७॥  
 कामिनि कानन कान हे मार कला रस हास ।  
 दंग मतवारे हित कनक कुंभनि हारे पास ॥६०८॥  
 दरपभरो दरपन लिए ईठि खरी मुसुक्याय ।  
 दग-कोरन उरजन लखै गुरुजन दीठि बचाय ॥६०९॥

बलिहारी उत ही रहो हाथ गहो जनि नाथ ।  
 हाथ हमारे केत हैं देत तिहारे हाथ ॥६१०॥  
 अब भक्ति भाँकि भूमकि भुकी उभक्ति भरोखे ऐन ।  
 कसे कंचुकी जरकसी लसी बसी ही नैन ॥६११॥  
 गोए गोयन जाहिँ सो धोए तें न धोवाहिँ ।  
 भरी लाल लाली जु हैं लोयन कोयन माहिँ ॥६१२॥  
 तो अब लों सुरलीन की को कब लों सिख देइ ।  
 लखि मुरली मृदु बोल सों अधरनि के रस लेइ ॥६१३॥  
 पहुँचत द्वार गली अली पहुँचि कही बृजनाथ ।  
 कढ़त अँगनवाँ तें खसे कसे कँगनवाँ हाथ ॥६१४॥  
 बिधि बाजीगर निरभई तासों कुच ठहराहिँ ।  
 तो कटि हेरनहार री परसहु पावत नाहिँ ॥६१५॥  
 रंग-भवन प्रमुदित गई कौनि भई गति हाय ।  
 सेजहि जोहि तई दर्द कई असम सर घाय ॥६१६॥  
 रिजु वृषभानुसुता लता तेजमान वृष भान ।  
 तुमहि कहो कैसे सहो सुंदर स्याम सुजान ॥६१७॥  
 बलि सब भाति अलीक हो लीक कपोलन पीक ।  
 अरु अलीक पै रावरे जावक लीक अलीक ॥६१८॥  
 लै लोयन लोयन लगे चितवनि लोयन लाय ।  
 तरुनि सिकारी लै गई मन लोयनहिँ लगाय ॥६१९॥  
 ब्यों ब्यों रखी कढ़ति है बालबदन तें बात ।  
 त्यों त्यों प्रीति प्रतीति तें प्रीतम-चित चिकनात ॥६२०॥  
 करि सिँगार सजि आभरन तजि रसना अरु द्वार ।  
 रजनी-मुख सजनी चली अली लगे सर मार ॥६२१॥  
 मो दिसि हेरि न हेरि री तजि सतरौहैं बैन ।  
 रंच उचौहैं करि इतै चितै निचौहैं नैन ॥६२२॥

भाभी बरसाने गई गई मायके माइ ।  
 सजनी सूने सदन में रजनी नौद न आइ ॥६२३॥  
 स्याम इहाँ नीठि न रुकै ढोठि तिहारी दीठि ।  
 वाम मनावो सुचित है कहि मुसुक्यानी ईठि ॥६२४॥  
 कुटिलाई तजि जानती तूं न सुधार्ई काम ।  
 सुनि याही सों शुनि धरे नाम बिधातैं वाम ॥६२५॥  
 करन करत दिल कल न तिल सुमन समीरन चाल ।  
 सिथिल भई नारी चले कुंजविहारीलाल ॥६२६॥  
 परी परी कै बीजुरी अरी खरी जु निहारि ।  
 नरी हरी छबि की छरी मरी डरी यह नारि ॥६२७॥  
 मुखहि अलक को छूटिबो अवसि करै दुतिमान ।  
 बिन बिभावरी के नहीं जगमगात सित भान ॥६२८॥  
 चारु चांदनी चैत की चमचमाति तन भाति ।  
 कौनि अली उघरति दुरति चली गली में जाति ॥६२९॥  
 छनक दईमारी अरी कोइल ले इतराय ।  
 मृदुबैनी बोलन चहै अब मुसुक्यानि दिखाय ॥६३०॥  
 विकल परी बरि रहि खरी अरी जगावति काहि ।  
 न जर नजर यह स्याम की नजर करी अब याहि ॥६३१॥  
 बिबरन आनन अरि गनी निरखि भँवारे भोर ।  
 दरकि गई आंगी नई फरकि उठे कुच-कोर ॥६३२॥  
 घेरु सखी जन लखि ललै रोम उठे थहराय ।  
 तुरित लगी बीजन भल्लैं नागरि नीर भिजाय ॥६३३॥  
 बिरह-वरी सकुचनि भरी रहति खरी या गैल ।  
 पल न लहति कल है अरी छरी छबीले छैल ॥६३४॥  
 मान मुधा तजि बाल बलि बोलि खोलि मुख ऐन ।  
 अधर-मुधा लालच भरे लाल लालची नैन ॥६३५॥



आधी निसि लो सीतकर रह्यौ बगारे लाइ ।  
 अहह दर्ई आधी गई तारे गनत सिराइ ॥६३६॥  
 सखि नख-रेख असेष लखि बिलखि कियौ तिय तेह ।  
 परत पाय पिय लाय हिय विहँसि उठी स-सनेह ॥६३७॥  
 निसि जागे रागे नयन भूमत आए भोर ।  
 छिगुनी छोर छला लला लखि रहि खाय मरोर ॥६३८॥  
 पहिरे नगगन आभरन नेहनही नँदलाल ।  
 रंगमहल में बरि रही दीपमाल सी बाल ॥६३९॥  
 भौंह उचै अँखिया नचै चाहि कुचै सकुचाय ।  
 दरपन में मुख लखि खरी दरप भरी मुसुक्याय ॥६४०॥  
 ये चोखे कोयन लगै कोय न मनसिज बान ।  
 ये लोयन लखि नहिँ लगै लोयन लोयन आन ॥६४१॥  
 मनसिज दीरघ ताप री देत तपा लहि वीर ।  
 ता पर हार हरे हरे हरहिँ हरी बिन धीर ॥६४२॥  
 पूस बरुन दिसि कों अरुन ज्यों ज्यों अथवन जात ।  
 नवल बधू को मुख कमल त्यों त्यों बलि कुँभिलात ॥६४३॥  
 छवा छुए छहरत भली बलि बेनी छवि देइ ।  
 सुर गिरि तें चलि अलि अली कमल कली रस लेइ ॥६४४॥  
 माधव मैं माधव नहीं माते माधव पुंज ।  
 मनसिज निज डेरो कियौ मंजुल बंजुल-कुंज ॥६४५॥  
 हरिहिँ उपर सासी कसी मान मरोरन मारि ।  
 अधर-सुधा सी है बसी खासी हाँसी नारि ॥६४६॥  
 सुमन सिलीमुख धनुष लै कोपि हन्यौ भखकेत ।  
 धन अतूल छोमित भई तकि अतूल बन खेत ॥६४७॥  
 ढीले अरसीले किए अँगनि छवीले मैंन ।  
 प्रगट अली रस-रँग रली कहत रँगिले नैन ॥६४८॥

कौनि अंधेरी राति मैं जाति चली चहि आइ ।  
 पग पग पर जाके चले जगमग मग है जाइ ॥६४८॥  
 कहन हुतो सो कहि चुकी अब न दुरति रति बीर ।  
 रस की मसकी कंचुकी कहत मरगजे चोर ॥६५०॥  
 सहसा परि पछताय जनि हिय घरि ता विपरीत ।  
 ए री लालहि ल्याय दौं करि मेरी परतीति ॥६५१॥  
 हिय लगाय सिसु पिय रह्यौ मुदित खेलाय दुलारि ।  
 निरखि परोसी दिसि पुलकि मृदु मुसुक्यानी नारि ॥६५२॥  
 धकधकात ही गात मैं बन कन बाढ़ी स्वास ।  
 बापा धाय गई गई नहिँ पापी पी पास ॥६५३॥  
 खरी निदाघो दुपहरी तपनि भरी बन गेह ।  
 हहा अरी यह कहि कहा परी थरहरी देह ॥६५४॥  
 नई लगन बन सों नहिँ कुंज-भवन कों जाति ।  
 सखि लखि दुति दूनी भई यह पूनो की राति ॥६५५॥  
 भोरहि चखनि चकोर कों धनि धनि दियौ अनंद ।  
 चाहि कियौ नंदनंद मुख चंद अहो सुखकंद ॥६५६॥  
 कटी कटीली कांति पै लटी लटी अति जाय ।  
 जटी जटी अरि हरि घटी घटो सुदीपति जाय ॥६५७॥  
 केलि कलानि बिना भरी बेलि बिथानि सकेलि ।  
 बीर बली अबली करो दृगनि अंधेरी फेलि ॥६५८॥  
 दिनहिँ देखि इत है उतै अलप ननद को सैन ।  
 मेरी तलप रतौंधिहे राही भूलि परै न ॥६५९॥  
 कबरी तर स्रमकन भरी कामिनि ग्रीवां भाय ।  
 मनु कादंबिनि मेह-भर दामिनि दमक दिखाय ॥६६०॥  
 चतुराई लिक चपलाई धिक धिक कारे काग ।  
 तोहि अछत निघरक रहै कूकत पिक कुल वाग ॥६६१॥

मुकुतादिक गथ सों गथी मनमथ रथ सुविसेखि ।  
 मति न थकी कहि कौन की गति नथ की यह देखि ॥६६२॥  
 गोप-लली को लखि अली चली दली सी आय ।  
 छली रली करि लाल री भली गली मैं पाय ॥६६३॥  
 नीम कपास बिकास पै बिरमि करै कल गान ।  
 कत मधुकर मधु माधवी मधुर करत नहि पान ॥६६४॥  
 तकि तकि तन मुसुक्याति है सुनि बानी रति-केलि ।  
 कोने में चलि जाति है बलि सोने की बेलि ॥६६५॥  
 सुनि सजनी सुरभान है अति मलान मतिमंद ।  
 पूनो रजनी मैं जु गिलि देत उगिलि यह चंद ॥६६६॥  
 टीको कच ठग मांग मग मो मन राही पाय ।  
 इक दिन मैं इक रैनि मैं लूटत धीर मताय ॥६६७॥  
 ललचाने लखि भीर मैं लालहि नागरि बाल ।  
 बोरि सखी सारी दई देरि सु घोरि गुलाल ॥६६८॥  
 मनिमय भूषन छोरहुं दीप बुभायहुं स्याम ।  
 वा नव धनि के बदन सों रहत उँजैरो धाम ॥६६९॥  
 मुरझानी नव बेलि सी ती जमुना के तीर ।  
 निंदति बीर प्रवाह को खरी भरी हग नीर ॥६७०॥  
 बिन पर उड़त रहैं अहे कौन कहे पतियाय ।  
 उन नैनन खंजनि लिए मो मन उड़त बभाय ॥६७१॥  
 नखन मलिन रुचि होति री नखन नलिन दुति बाल ।  
 अनख होत लखि सौति जी सनख होत ही लाल ॥६७२॥  
 जो जसुदा को लाड़िलो नै सो री जानै न ।  
 बन मैं बरजोरी करै बरजो री मानै न ॥६७३॥  
 मसकी नीली कंचुकी कुचनि भली छवि जोइ ।  
 बिकसति कली गुलाब की अली मनो ये दोइ ॥६७४॥

आज अहेरी नैन ये भए अहैं री बीर ।  
 हरि मन करसायल किए धायल चितवनि तीर ॥६७५॥  
 ऐसी है सुकुमारता वा ती मैं जहुराय ।  
 मिहँदी-रंग के भार सों पाय सकै न उठाय ॥६७६॥  
 मृगमद तिलक सुभाल की भाई भाकि कपोल ।  
 बाल कियौ नँदलाल पै लाल लाल दृग लोल ॥६७७॥  
 छपे छपाकर चलि चहो वैंसी खानि तिया न ।  
 कान कुहू हू मैं बुहू बारन देय दिया न ॥६७८॥  
 अब तौ दिन रज के रही बिरह बरहि की गाथ ।  
 सुनि सजनी सुख तौ गयौ मनभावन के साथ ॥६७९॥  
 काहि खेलिए यह हरी कैसे खोली जाइ ।  
 नहि नीली चोली परी भलक अलक की आइ ॥६८०॥  
 तब लगि ललहि तचाय ले विधु मचाय ले दूँदि ।  
 जब लगि यह ललना रही घूँघट मैं मुँह मूँदि ॥६८१॥  
 बिरह-विकलता तें रह्यौ बालबदन पियराइ ।  
 सुनत अवाई लाल की गई ललाई धाइ ॥६८२॥  
 एक बली मैं बहु दली बिदित बिधार्त कीन ।  
 चकित अली इक पात मैं त्रिबली चाहि नवीन ॥६८३॥  
 कलित अली नभचर लखी लखहु भली हरसोग ।  
 बलित बली बर तें तली ललित रली के जोग ॥६८४॥  
 जौ रंग न मैली करो अंगन नेह लगाय ।  
 तौ बलि जाय उताल देँ लाल बसन को ल्याय ॥६८५॥  
 भलके पग बनजात से भलके मग बन जात ।  
 अहह दई जलजात से नैननि तें जल जात ॥६८६॥  
 भौहनि के बीचें न है यह मेचक तिल नारि ।  
 मनु दृग मृग पै मंद है खींचे द्वै तरवारि ॥६८७॥

कुंज खूब दल सुख री खरी खरीहु न पाइ ।  
 निरखि ऊखरी ऊखरी खरी खरी बिललाइ ॥६८८॥  
 इहां सुपास कहां अरे स्वेद भरे हैं बास ।  
 बात बगारे बास है वा नारे के पास ॥६८९॥  
 सुनि तो दीपति दीप लखि सिर धुनि धुनि जरि जाय ।  
 सुदुति निहारे चांदनी भूलि पछारे खाय ॥६९०॥  
 नीबी बँधनि लसनि भली तकनि निचोही राज ।  
 सब दिन सों नीकी बनी कसनि तनी की आज ॥६९१॥  
 यह अटपट कैसे पटै लटपटाति रस नारि ।  
 इत आए मनु हारि उत करिबे हित मनुहारि ॥६९२॥  
 चख खोंचे नीचे चहो भली भला कहि रीति ।  
 रंचक ऊंचे चाहि लो चंद चलाकहि जीति ॥६९३॥  
 दरसन सों परसन न हैं किमि पूजै मन काम ।  
 अब अरबिंद चढ़ाइए सुरधुनि धर पर श्याम ॥६९४॥  
 रंच न देरि करहु सुख अब हरि हेरि परै न ।  
 बिनय बयन मो सुनि भए सुख तरुनि को नैन ॥६९५॥  
 तनक चितै सजनी इतै बनक बनी बृजराज ।  
 इन कमलनि मो मुख किए दिन रजनी ससि आज ॥६९६॥  
 निरखि अटारी पर खरी तकत हरी टक लाइ ।  
 सखि लखि प्यारी कों दर्ई सिति सारी पहिराइ ॥६९७॥  
 कालि सकारे ही चलै सजनी तिनके पास ।  
 इक दिन इक रजनी करें जिनके नैन प्रकास ॥६९८॥  
 चहुँकित चकित चितै रही ताप-तई अकुलाइ ।  
 बर तरु मैं सजनी गई रजनी छाप लगाइ ॥६९९॥  
 ताको वा तरु के तरे सुचित नचत है मोर ।  
 उतरि अपर द्विजगन मुदित ललित मचावत सोर ॥७००॥

हैं दूभयो कबरीन सों क्यों कारी दरसाइ ।  
 कही जु रबि सनमुख रहै सो कारो है जाइ ॥७०१॥  
 दरस निसा दरसै नयौ ऊग्यौ राका चंद ।  
 ता सुचंद मैं जगि रहो चंद अहो जगबंद ॥७०२॥  
 लगन नई बनि ठनि दई हाय गई धन धाय ।  
 छरी अपछरी सी भई सुमन-छरी बन पाय ॥७०३॥  
 बदन गयौ कुँभिलाय तन मदन कियौ सर-घात ।  
 सदन चलो लिखिकै अली कूरम केतक पात ॥७०४॥  
 मोरी सौं जनि मान करि खोरी खोरी खोइ ।  
 सो हिय धरि जो पिय कहै तौ तेरे बस होइ ॥७०५॥  
 मेरे और कपोल नहिँ अरु मैं हूँ नहिँ और ।  
 ईठि आज पो दीठि को दीठि और यहि ठौर ॥७०६॥  
 मुख देखन को पुर-बधू जुरि आई नंदनंद ।  
 सबकी अँखियां हैं गई घूँघट खोलत बंद ॥७०७॥  
 बसन लगी चित चातुरो हसन लगी सहसान ।  
 लोचन लागे कान लो लोचन लागे कान ॥७०८॥  
 मैं प्यारी हों रावरी सो प्यारी नहिँ लाल ।  
 जो चित छोभित करि करै नट मरकट की हाल ॥७०९॥  
 यह अचरज की बात सुनि को न अली पतियाइ ।  
 दिनहिँ दरसि तम संग लै चलो चांदनी जाइ ॥७१०॥  
 हेरि हरी अचरज भरी कहति खरी करि सोर ।  
 दिनहिँ तरनिजा तीर रो कूजित मुदित चकोर ॥७११॥  
 इन भृकुटिन की वार को को न सकै सहि बाम ।  
 सहन खरग की धार को है हमरो ही काम ॥७१२॥

जात दिवस जलजात लौ आवत कुमुद समान ।  
 वा आनन भो फिरि नयौ कहियौ कान न जान ॥७१३॥  
 जोवन लहि विकसित सुमन साजे सुखद सुवास ।  
 केसरि सोभति पदुमिनी लिए अली गन पास ॥७१४॥  
 आज हियै चंदन कियौ अभिनंदन नंदनंद ।  
 सखि वंदै इत आनि कै यह जगबंदन चंद ॥७१५॥  
 सखि हरि राधा संग दिन चले विपिन की ओर ।  
 लखि अनंद सेां सोर करि दैरे मोर चकोर ॥७१६॥  
 जमुना - तीर बलीन पै वस अलीन मँडराइ ।  
 सुनि चातुर आतुर चली छल बल ईठि उठाइ ॥७१७॥  
 आगे पाछे मचि रही खिचाखिची की ठान ।  
 बाल जान पो पै भयौ भान जान मो जान ॥७१८॥  
 चढ़े पयोधर को चितै जात कितै मति खोइ ।  
 छन मै घन रस बरसिहै रहै बरोठे सोइ ॥७१९॥  
 चाखन की ता छनि कहा अधर-अँगूर सुबाल ।  
 धरी रहैगी ताक पै ताक तिहारी लाल ॥७२०॥  
 चले पिया न अटक सुनी रही जऊ जमुहाइ ।  
 तऊ तिया मुख पै गई चटक चौगुनी छाइ ॥७२१॥  
 पिय रुख लखि नागरि सखी कनक कसोटी आनि ।  
 तियहि दिखाई लोक लिकि आई मृदु मुसुक्यानि ॥७२२॥  
 अली गई अब गरबई इकताई मुकुताइ ।  
 भली भई ही अमलाई जौ पो दर्ई दिखाइ ॥७२३॥  
 ब्यौं ज्यौं फूकै नव बधू पगी रसोई लागि ।  
 त्यों त्यों धूमै दै अहो लगी तमासे आगि ॥७२४॥

तारे तरनि दुरे भए मुकुलित सरसिज दोइ ।  
 सखि प्रभात तम-तोम मैं सोम सुहावन जोइ ॥७२५॥  
 श्री राधा माधव हमैं निति राखो निज-छाँह ।  
 मेरो मन तुम मैं बसो तुम मेरे मन माँह ॥७२६॥  
 कलित ललितई सतसई रामसहाय बनाय ।  
 हरि राधाहि नजर दई अजर लई रति पाय ॥७२७॥





## ( ६ ) वृंद-सतसई

श्रीगुरुनाथ प्रभाव तैं होत मनोरथ सिद्ध ।  
 घन तैं ज्यों तरु बेलि दल फूल फलन की वृद्धि ॥ १ ॥  
 किए वृंद प्रस्ताव को दोहा सुगम बनाय ।  
 उक्ति अर्थ दृष्टांत करि दृढ़ कै दिए बताय ॥ २ ॥  
 भाव सरस समभक्त सबै भले लगैं यह भाय ।  
 जैसे अवसर की कही बानी सुनत सुहाय ॥ ३ ॥  
 नीकी पै फीकी लगै बिनु अवसर की बात ।  
 जैसे बरनत युद्ध में रस सिंगार न सुहात ॥ ४ ॥  
 फीकी पै नीकी लगै कहिए समय बिचारि ।  
 सब को मन हरषित करै ज्यों विवाह में गारि ॥ ५ ॥  
 रागी अवगुन ना गनै यहै जगत की चाल ।  
 देखौ सब ही श्याम को कहत बाल सब लाल ॥ ६ ॥  
 जो जाकौं प्यारौ लगै सो तिहिँ करत बखान ।  
 जैसे विष को विष-भखी मानत अमृत समान ॥ ७ ॥  
 जो जाकौं गुन जानहीं सो तिहिँ आदर देत ।  
 कोकिल अंबहि लेत है काग निबौरी लेत ॥ ८ ॥  
 अन-उद्यमही एक कौ यों हरि करत निबाह ।  
 ज्यों अजगर भख आनि कै निकसत वाही राह ॥ ९ ॥  
 हलन चलन की सकति है तौ लौं उद्यम ठानि ।  
 अजगर ज्यों मृगपति बदन मृगन परतु है आनि ॥ १० ॥  
 कहा होय उद्यम किए जौ प्रभु ही प्रतिकूल ।  
 जैसे निपजै खेत कौ करै सलभ निरमूल ॥ ११ ॥

जाही तैं कछु पाइयै करियै ताकी आस ।  
 रीते सरवर पै गएँ कैसैं बुझत पियास ॥ १२ ॥  
 जो जाही को हूँ रहै सो तिहिँ पूरै आस ।  
 स्वाति बूँद बिनु सघन मैं चातक मरत पियास ॥ १३ ॥  
 गुन ही तऊ मनाइयै जो जीवन सुख भौन ।  
 आग जरावत नगर तउ आग न आनत कौन ॥ १४ ॥  
 रस अनरस समझै न कछु पढ़ै प्रेम की गाथ ।  
 बीछू मंत्र न जानई सांप - पिटारे हाथ ॥ १५ ॥  
 कैसैं निबहै निबल जन कर सबलन सो गैर ।  
 जैसैं बसि सागर विषै करत मगर सो वैर ॥ १६ ॥  
 कीजै समझ न कीजियै विन विचारि बिबहार ।  
 आय रहत जानत नहीं सिर कौ पायन भार ॥ १७ ॥  
 दीवौ अवसर कौ भलौ जासौ सुधरै काम ।  
 खेती सूखे बरसिवो धन को कौनै काम ॥ १८ ॥  
 अपनी पहुँच विचारि कैँ करतब करियै दौर ।  
 तेते पाँव पसारियै जैती लाँधी सौर ॥ १९ ॥  
 पिसुन छल्यौ नर सुजन सो करत बिसास न चूकि ।  
 जैसे दाध्यौ दूध कौ पीवत छाछहि फूँकि ॥ २० ॥  
 प्रान वृषातुर के रहैं थोरे हूँ जलदान ।  
 पीछै जल भर सहस घट डारे मिलत न प्रान ॥ २१ ॥  
 बिद्या धन उद्यम बिना कहौ जु पावै कौन ।  
 बिना डुलाए ना मिले ज्यों पंखा की पौन ॥ २२ ॥  
 बनती देख बनाइयै परन न दीजै खोट ।  
 जैसी चलै बयार तब तैसी दीजै ओट ॥ २३ ॥  
 ओछे नर की प्रीति की दीनी रीति बताय ।  
 जैसे छीलर ताल जल घटत घटत घट जाय ॥ २४ ॥

अन - मिलती जोई करत ताही कौ . उपहास ।  
 जैसें जोगी जोग में करत भोग की आस ॥ २५ ॥  
 बुरे लगत सिख के बचन हिए विचारौ आप ।  
 करुवे भेखज बिन पियै मिटै न तन कौ ताप ॥ २६ ॥  
 बड़े बड़न को दुख हरत पै न नीच यह थाप ।  
 घन मेढत पै ना सरित गिरवर ओषम ताप ॥ २७ ॥  
 गुरुता लघुता पुरुष की आस्रय बसते होय ।  
 करी बृंद में बिंध्य सौं दर्पन में लघु सोय ॥ २८ ॥  
 रहे समीप बड़ेन के होत बड़ो हित मेल ।  
 सब ही जानत बढ़त है वृत्त बराबर बेल ॥ २९ ॥  
 उपकारी उपकार जग सबसों करत प्रकास ।  
 ज्यों कटु मधुरे तरु मलय मलयज करत सुवास ॥ ३० ॥  
 होय बड़ेरु न हूजिए कठिन मलिन मुख रंग ।  
 मरदन बंधन छति सहत कुच इन गुननि प्रसंग ॥ ३१ ॥  
 कहूं जाहु नाहिन मिटत जो बिधि लिख्यौ लिलार ।  
 अंकुस भय करि कुंभ कुच भए तहां नख मार ॥ ३२ ॥  
 बिधि रूठै तूठै कवन को करि सकै सहाय ।  
 वन दव भय जल गत नलिन तहँ हिम देत जराय ॥ ३३ ॥  
 प्रेम पगत बरजी न क्यों अव वरजत बेकाज ।  
 रोम रोम विष रमि रह्यौ नाहिन बनत इलाज ॥ ३४ ॥  
 फेर न हैहै कपट सों जो कीजै ब्यौपार ।  
 जैसें हांडी काठ की चढ़ै न दूजी बार ॥ ३५ ॥  
 करियै सुख कौं होत दुख यह कहु कौन सयान ।  
 वा सौनै कौं जारियै जासों दूटै कान ॥ ३६ ॥  
 नैना देत बताय सब हिय कौ हेत अहेत ।  
 जैसें निरमल आरसी भली बुरी कह देत ॥ ३७ ॥

अति परचै तैं होत है अरुचि अनादर भाय ।  
 मलयागिरि की भीलनी चंदन देत जराय ॥ ३८ ॥  
 सो ताके अवगुन कहै जो जिहिँ चाहै नाहिँ ।  
 तपत कलंकी बिष भर्यो बिरहिन ससिहि कहाहि ॥ ३९ ॥  
 सुखदाई ए देत दुख सो सब दिन कौ फेर ।  
 ससि सीतल संयोग में तपत बिरह की बेर ॥ ४० ॥  
 बिधि के बिरचे सुजन हूं दुर्जन सम ह्वै जात ।  
 दीपहि राखै पवन ते अंचल वहै बुझात ॥ ४१ ॥  
 जासों जैसौ भाव सो तैसौ ठानत ताहि ।  
 ससिहि सुधाकर कहत कोउ कहत कलंकी आहि ॥ ४२ ॥  
 आप बुरे जग है बुरौ भलौ भले जग जानि ।  
 तजत बहेरा छाह सब गहत आव की आनि ॥ ४३ ॥  
 सौ जु सयाने एक मति यहै कहावत सांच ।  
 कांचहि पांच कहै न कोउ पांचहि कहै न कांच ॥ ४४ ॥  
 भले बुरे सब एक से जौ लौ बोलत नाहिँ ।  
 जान परतु हैं काक पिक ऋतु बसंत के माहिँ ॥ ४५ ॥  
 भाव भाव की सिद्धि है भाव भाव में भेव ।  
 जो मानौ तो देव है नहीं भीत कौ लेव ॥ ४६ ॥  
 निरफल सोता मूढ़ पै कविता बचन बिलास ।  
 हाव भाव ज्यों तीय कै पति आंधे के पास ॥ ४७ ॥  
 भले बुरे जहँ एक से तहां न बसिए जाय ।  
 ज्यों अन्यायीपुर विकै खर गुर एकै भाय ॥ ४८ ॥  
 न करि नाम रँग देखि सम गुन बिन समझे बात ।  
 गात घात गो दूध तैं सेंहुड़ कोंते घात ॥ ४९ ॥  
 बिन गुन कुल जाने बिना मान न करि मनुहारि ।  
 ढगत फिरत सब जगत कौं भेष भक्त कौ धारि ॥ ५० ॥

दित हूं की कहियै न तिहिं जो नर होय अबोध ।  
 उर्यौ नकटे कौं धारसी होत दिखाए क्रोध ॥ ५१ ॥  
 अति अनीति लहियै न धन जो प्यारौ मन होय ।  
 पाए सोने की छुरी पेट न मारै कोय ॥ ५२ ॥  
 मूरख कौं पोथी दर्ई बांचन कौं गुन गाथ ।  
 जैसें निर्मल आरसी दर्ई अंध के हाथ ॥ ५३ ॥  
 मधुर बचन तैं जात मिट उत्तम जन अभिमान ।  
 तनकि सीत जल सों मिटै जैसें दूध उफान ॥ ५४ ॥  
 जासों रक्षा होत है द्वै ताही सों घात ।  
 कहा करै कोऊ जबै वारि ककरिया खात ॥ ५५ ॥  
 सबै सहायक सबल के कोउ न निबल सहाय ।  
 पवन जगावत आग कौं दीपहि देत बुझाय ॥ ५६ ॥  
 कछु बसाय नहिं सबल सों करै निबल पर जोर ।  
 चलै न अचल उखारि तरु डारति पवन भकोर ॥ ५७ ॥  
 सबै समझ कै कीजियै काम वहै अभिराम ।  
 सैंधव मांग्यौ जेवते घोरा कौ कहा काम ॥ ५८ ॥  
 जो जाही सों रमि रह्यौ तिहिं ताही सों काम ।  
 जैसे किरवा आक कौ कहा करै बस आम ॥ ५९ ॥  
 जिय चाहै सोई मिलै जियत भलौ हिय लागि ।  
 प्यासौ चाहत नीर कौं कहा करै लै आगि ॥ ६० ॥  
 जिय पिय चाहै तुम करौ घन चंदन उपचार ।  
 रोग कछू औषध कछू कैसें होत करार ॥ ६१ ॥  
 बिरह तपन पिय बात तैं उठत चौगनी जागि ।  
 जल के सींचे बढ़त है ज्यों सनेह की आगि ॥ ६२ ॥  
 रोस मिटै कैसें सहत रिस उपजावन बात ।  
 ईधन डारे आग में कैसें आग बुझात ॥ ६३ ॥

अति हठ मत कर हठ बढ़ै बात न करिहै कोय ।  
 ज्यों ज्यों भीजे कामरी त्यों त्यों भारी होय ॥ ६४ ॥  
 लालच हू ऐसौ भलौ जासों पूरे आस ।  
 चाटेहू कहूँ ओस के मिटै काहु की प्यास ॥ ६५ ॥  
 विष हू ते सरसी लगे रिस में रस की भाख ।  
 जैसे पित्तज्वरीन कौ करवी लागति दाख ॥ ६६ ॥  
 जो जेहिँ भावे सो भलौ गुन को कछु न विचार ।  
 तज गजमुक्ता भीलनी पहरति गुंजा - हार ॥ ६७ ॥  
 हरि-रस परिहरि विषय-रस संग्रह करत अयान ।  
 जैसेँ कोऊ करत है छाड़ि सुधा विषपान ॥ ६८ ॥  
 कुल मारग छोड़ै न कोउ होहि वृद्धि कै हानि ।  
 गज इक मारत दूसरो चढ़त महावत आनि ॥ ६९ ॥  
 जासों निबहै जीविका करिए सो अभ्यास ।  
 बेस्या पालै शील तौ कैसेँ पूरे आस ॥ ७० ॥  
 दुष्ट न छाड़ै दुष्टता कैसेँ हू सुख देत ।  
 धोएहू सौ बेर के काजर होय न सेत ॥ ७१ ॥  
 कहूँ अवगुन सोइ होत गुन कहूँ गुन अवगुन होत ।  
 कुच कठोर त्यों हैं भले कोमल बुरे उदोत ॥ ७२ ॥  
 असुभ करत सोइ होत सुभ सज्जन बचन अनूप ।  
 सवन पिता दिय दसरथहि स्त्राप भयो वर रूप ॥ ७३ ॥  
 एक भले सब कौ भलौ देखौ सबद विवेक ।  
 जैसेँ सत हरिचंद को उधरे जीव अनेक ॥ ७४ ॥  
 एक बुरे सब कौ बुरौ होत सबल को कोप ।  
 अवगुन अर्जुन के भयौ सब छत्रिन कौ लोप ॥ ७५ ॥  
 बड़ेन पै जांचे भलौ जदपि होत अपमान ।  
 गिरत दंत गिर दाह तें गज के तऊ बखान ॥ ७६ ॥

अवगुन करता और ही देत और कौ मार ।  
 जौ पहुँचै नहिँ रुद्र कौ जारत विरहनि मार ॥ ७७ ॥  
 मान होत है गुननि तें गुन बिन मान न होइ ।  
 सुक सारो राखैं सबै काग न राखै कोइ ॥ ७८ ॥  
 आडंबर तजि कीजियै गुन संग्रह चित चाय ।  
 छीर रहित न विकै गऊ आनो घंट बँधाय ॥ ७९ ॥  
 जैसौ गुन दीनौ दर्द तैसौ रूप निबंध ।  
 ए दोऊ कहँ पाइयै सोनौ और सुगंध ॥ ८० ॥  
 अभिलाषी इक बात के तिनमें होय विरोध ।  
 काज राज के राजसुत लरत भिरत करि क्रोध ॥ ८१ ॥  
 जो जाकौ चाहै भलौ सो ताही की भीर ।  
 नीर बुझावै आग कौ सोखै ताहि समीर ॥ ८२ ॥  
 अहित किए हू हित करै सज्जन परम सघोर ।  
 सोखे हूँ सीतल करै जैसेँ नीर समीर ॥ ८३ ॥  
 हूँ सहाय हित हूँ करै तऊ दुष्ट दुख देत ।  
 जैसेँ पावक पवन कौँ मिलै जरायै लेत ॥ ८४ ॥  
 अपनी अपनी ठौर पर सोभा लहत विसेष ।  
 चरन महावर ही भलौ नैनन अंजन - रेख ॥ ८५ ॥  
 जो चाहै सोई करौ मेरौ कछु न कहाव ।  
 जंत्रो के कर जंत्र है जो भावै सो वजाव ॥ ८६ ॥  
 जाकौ जैसो उचित तिहिँ करिए सोइ विचार ।  
 गीदर कैसे ल्याइहै गज-मुक्ता गज मार ॥ ८७ ॥  
 जुदे न जैसे लहत हैं मिले विरंगहु रंग ।  
 काथ संग चूना परत होत लाल मिल संग ॥ ८८ ॥  
 नहिँ इलाज देख्यौ सुन्यौ जासों मिटत सुभाव ।  
 मधुपुट कोटिक देत तऊ बिष न तजत विषभाव ॥ ८९ ॥



जाकौ जासों मन लग्यो सो तिहिँ आवै दाय ।  
 भाल भस्म बिष मुंड शिव तौऊ शिवा सहाय ॥ ८० ॥  
 होय कछू समझै कछू जाकी मति बिपरीत ।  
 कनक भखी जैसे लखै स्याम सेत कौ पीत ॥ ८१ ॥  
 प्रेम निबाहन कठिन है समझ कीजियौ कोय ।  
 भाँग भखन है सुगम पै लहर कठन ही होय ॥ ८२ ॥  
 कोड बिन देखे बिन सुनै कैसे कहै बिचार ।  
 कूप भेख जाने कहा सागर को विस्तार ॥ ८३ ॥  
 देव सेव फल देत है जाको जैसौ भाय ।  
 जैसेँ मुख करि आरसी देखौ सोइ दिखाय ॥ ८४ ॥  
 कुल बल जैसौ होय सो तैसी करिहै वात ।  
 बनिक पुत्र जाने कहा गढ़ लैबे की घात ॥ ८५ ॥  
 जाकी ओर न जाइयै कैसेँ मिलिहै सोइ ।  
 जैसेँ पच्छिम दिस गए पूरव काज न होइ ॥ ८६ ॥  
 जैसे वंधन प्रेम कौ तौ सौ वंध न और ।  
 काठहि भेदै कमल कौ छेद न निकरै और ॥ ८७ ॥  
 जे उदार ते देत हैं रीझत जिहि तिहिँ चाल ।  
 गाल बजाए हू करै गौरीकंत निहाल ॥ ८८ ॥  
 अपनी अपनी गरज सब बोलत करत निहोर ।  
 बिन गरजै बोलै नहीं गिरिवरहू कौ मोर ॥ ८९ ॥  
 जो सब ही कौ देत है दाता कहियै सोइ ।  
 जलधर बरषत सम बिषम थल न बिचारत कोइ ॥ ९० ॥  
 तिन सों बिमुख न हूजियै जे उपकार समेत ।  
 मोर ताल जल पान करि जैसेँ पीठ न देत ॥ ९१ ॥  
 जो समझे जा बात कौ सो तिहिँ कहै बिचार ।  
 रोग न जानै ज्योतिषी वैद्य ग्रहन कौ चार ॥ ९२ ॥

नवल नेह आनंद उमंग दुरै न मुख चख ओर ।  
 तव ही जान्यौ जात है ज्यों सुगंध कौ चोर ॥१०३॥  
 प्रकृत मिले मन मिलत है अनमिलते न मिलाय ।  
 दूध दही तैं जमत है कांजी तैं फटि जाय ॥१०४॥  
 बात कहन की रीति में है अंतर अधिकाय ।  
 एक वचन तैं रिस बढ़ै एक वचन तैं जाय ॥१०५॥  
 एक वस्तु गुन होत है भिन्न प्रकृत के भाय ।  
 भटा एक कौं पित करत करत एक कौं बाय ॥१०६॥  
 सुख में होत सरीक सौ दुख सरीक सो होय ।  
 जाकौ मीठौ खाइयै कटुक खाइयै सोय ॥१०७॥  
 स्वारथ के सब ही सगे बिन स्वारथ कोउ नाहि ।  
 जैसे पंछी सरस तरु निरस भए उड़ि जाहि ॥१०८॥  
 जो लायक जिहि भाति को तासों तैसी होय ।  
 सज्जन सो न बुरी करै दुरजन भली न कोय ॥१०९॥  
 सुख बीते दुख होत है दुख बीते सुख होत ।  
 दिवस गए ज्यों निसि उदित निसगत दिवस उदेत ॥११०॥  
 जो भाखै सोई सही बड़े पुरुष सुख वानि ।  
 है अनंग ताकौ कहैं महारूप की खानि ॥१११॥  
 दोष-भरी न उचारियै जदपि यथार्थ बात ।  
 कहै अंध कौं आंधरौ मान बुरौ सतरात ॥११२॥  
 पर घर कबहुँ न जाइयै गए घटत है जोति ।  
 रवि-मंडल में जाति ससि छीन कला छवि होति ॥११३॥  
 औरहि तैं कोमल प्रकृत सज्जन परम दयाल ।  
 कौन सिखावत है कहे राजहंस कौ चाल ॥११४॥  
 सज्जन अंगोक्त कियौ ताकौं लेत निवाहि ।  
 राखि कलंकी कुटिल ससि तउ शिव तजत न ताहि ॥११५॥

जिन पंडित बिद्या तजहु धन मूरख अवरेख ।  
 कुलजा सील न परिहरै कुलटा भूपित देख ॥११६॥  
 एक सदा निबहै नहीं जनि पछतावहु कोय ।  
 दुरजोधन अति मान तै भए निधन कुल खोय ॥११७॥  
 होय शुद्ध मिटि कलुषता सत संगति कौ पाय ।  
 जैसे पारस को परसि लौह कनक ह्वै जाय ॥११८॥  
 ब्रह्म बनाए बन रहे ते फिर और बनै न ।  
 कान कहत नहि बैन ज्यों जीभ सुनत नहि बैन ॥११९॥  
 जाहि परगौ जैसौ व्यसन ता विन रहत न सोय ।  
 सुरा सुरापी ना तजै जदपि विकल गति होय ॥१२०॥  
 जे चेतन ते क्यों तजै जाकौ जासों मोह ।  
 चुंबक के पीछै लग्यौ फिरत अचेतन लोह ॥१२१॥  
 घटति बढ़ति संपति सुमति गति अरहट की जोय ।  
 रीती घटिका भरति है भरी सु रीती होय ॥१२२॥  
 प्रापति तैसी होति है जिहिं जैसी लौ भाइ ।  
 भाजन मित भरि सरित में जल भरि भरि लै जाइ ॥१२३॥  
 उत्तम जन की होड़ करि नीच न होत रसाल ।  
 कौवा कैसे चल सकै राजहंस की चाल ॥१२४॥  
 उत्तम जन के संग में सहजै ही सुख भास ।  
 जैसे नृप लावै अतर लेत सभा जन बास ॥१२५॥  
 था जग की बिपरीति गति समझी देखि सुभाव ।  
 कहैं जनार्दन कृष्ण कौ हर कौ शंकर नांव ॥१२६॥  
 भले लगैं सब कौ कहै कोऊ हित के बैन ।  
 पिय आगम के काग बच बिरहनि कौ सुख दैन ॥१२७॥  
 जो जाके हित की कहै सो ताके अभिराम ।  
 पिय आगम भाषी भलौ वायस पिक किहि काम ॥१२८॥

कोऊ है हित की कहै है ताही सेो हेत ।  
 सबै उड़ावत काक को पै बिरहनि बलि देत ॥१२६॥  
 को चाहे अपनो तऊ जा सँग लहियै पीर ।  
 जैसे रोग सरीर तैं उपजत दहत सरीर ॥१३०॥  
 एक बिरानौ ही भलौ जिहिं सुख होत सरीर ।  
 जैसे वन की औषधी हरत रोग की पीर ॥१३१॥  
 जो पावै अति उच्च पद ताकौ पतन निदान ।  
 ज्यों तपि तपि मध्याह्न लों अस्त होतु है भान ॥१३२॥  
 अनुचित अतिबल आपनौं कहे अनादर होय ।  
 संग्रह कियौ न नृप दुहनि रुक्म गयौ पति खोय ॥१३३॥  
 कलुष भाव देखै जहां उत्तम जन न रहायँ ।  
 जैसे पावस तजि अनत राजहंस उड़ि जायँ ॥१३४॥  
 जो चाहै सोई लहै यौ सुख होइ सरीर ।  
 ज्यों प्यासे जिय कौं मिलै निरमल सीतल नीर ॥१३५॥  
 मन-भावन के मिलन बिन यों जिय होय उदास ।  
 ज्यों चकोर की दिन दसा चकवा चंद प्रकास ॥१३६॥  
 जिहिं प्रसंग दूषन लगै तजिए ताकौ साथ ।  
 मदिरा मानत है जगत दूध कलाली हाथ ॥१३७॥  
 जाके सँग दूषन दुरै करिए तिहिं पहिचानि ।  
 जैसे समझै दूध सब सुरा अहीरी पानि ॥१३८॥  
 जिहिं देखै लांछन लगै तासो दृष्टि न जोर ।  
 ज्यों कोऊ चितवै नहीं चौथ चंद की ओर ॥१३९॥  
 मूरख गुन समझै नहीं तौ न गुनी में चूक ।  
 कहा भयो दिन को बिभौ देखै जो न उलूक ॥१४०॥  
 खल जन सेो कहियै नहीं गूढ़ कबहुँ करि मेल ।  
 यौ फैलै जग माहिं ज्यों जल पर बूंद कि तेल ॥१४१॥

एकहि गुन ऐसौ भलौ जिहिँ अवगुन छिप जात ।  
 नीरद के ज्यों रंग बरसत ही मिट जात ॥१४२॥  
 मूढ़ तहां ही मानिए जहां न पंडित होइ ।  
 दीपक की रवि के उदै बात न पूछै कोय ॥१४३॥  
 बिन स्वारथ कैसेँ सहै कोऊ करुण बैन ।  
 लात खाय पुचकारियै होय दुधारू धैन ॥१४४॥  
 सज्जन तजत न सजनता कीन्हहु दोष अपार ।  
 ज्यों चंदन छेदे तऊ सुरमित करहि कुठार ॥१४५॥  
 दुष्ट न छाड़ै दुष्टता पोखै राखै ओट ।  
 सरपहि केतौ हित करौ चुपै चलावै चोट ॥१४६॥  
 धन संच्यौ किहिं काम कौ खाउ खरच हरि प्रीति ।  
 बँध्यो गँधीलौ कूप जल कढ़ै बढ़ै इहिं रीति ॥१४७॥  
 करै बुराई सुख चहै कैसेँ पावै कोइ ।  
 रोपै बिरवा आक को आम कहाँ ते होइ ॥१४८॥  
 होय बुराई ते' बुरी यह कीनौ निरधार ।  
 खांड खनैगौ और कौ ताकौं कूप तयार ॥१४९॥  
 दिए सहस्र गुन देत सो पावै यह सच बात ।  
 बीज देत तिहिं कर सिरौ और देत तिहिं दात ॥१५०॥  
 एक भेष के आसरे जाति बरन छिप जात ।  
 ज्यों हाथी के पांव में सबको पांव समात ॥१५१॥  
 जाको जहँ स्वारथ सधै सोई ताहि सुहात ।  
 चोर न प्यारी चांदनी जैसेँ कारी रात ॥१५२॥  
 जैसी ही भवतन्यता तैसी बुद्धि प्रकास ।  
 सीता हरिवे तै' भयौ रावन कुल को नास ॥१५३॥  
 निहचै भावी कौ कहौ प्रतीकार जौ होइ ।  
 तौ नल से हरचंद से विपत न भरते कोइ ॥१५४॥

कछू सहाय न चलि सकै होनहार के पास ।  
 भीष्म युधिष्ठिर से तहां भो कुरुवंस-विनास ॥१५५॥  
 अति ही सरल न हूजियै देखौ ज्यों वनराय ।  
 सीधे सीधे छेदियै बांकौ तरु बच जाय ॥१५६॥  
 बहुतन कौ न बिरोधियै निबल जानि बलवान ।  
 मिल भखि जाहिं पिपीलका नागहि नग के मान ॥१५७॥  
 बहुत निबल मिलि बल करें करें जु चाहे सोय ।  
 तिनकन की रसरी करी करी निबंधन होय ॥१५८॥  
 दुर्जन के संसर्ग तैं सज्जन लहत कलेस ।  
 ज्यों दसमुख अपराध तैं बंधन लह्यो जलेस ॥१५९॥  
 सुजन कुसंगति संग तैं सज्जनता न तजंत ।  
 ज्यों भुजंग गन संग तउ चंदन विष न धरंत ॥१६०॥  
 कष्ट परेहूं साधु जन नैक न होत मलान ।  
 ज्यों ज्यों कंचन ताइयै त्यों त्यों निरमल वान ॥१६१॥  
 जे उत्तम ते असम सौं धरत न रिस मन माहिं ।  
 धन गरजै हरि हुंकरै स्यार बोल सुनि नाहिं ॥१६२॥  
 खल वंचत नर सुजन कौं नहि न विसास करेहि ।  
 डहक्यो उड़ प्रतिविंब तैं मुकुता हंस न लेइ ॥१६३॥  
 मिथ्या-भाषी सांच हू कहै न मानै कोइ ।  
 भांड पुकारै पीर बस मिस समझै सब कोय ॥१६४॥  
 सदा समै बलवान पै नाहिं पुरुष बलवान ।  
 कावरि लरि गोपी लई विरथ भए पथवान ॥१६५॥  
 कन कन जोरै मन जुरै खाते निबरै सोय ।  
 वृंद वृंद ज्यों घट भरै टपकत बोटै तोय ॥१६६॥  
 घेरे ही गुन तैं कहूंक प्रगट होत जग माहिं ।  
 एकहि कर ते जय करी करी सहस कर नाहिं ॥१६७॥

ऊंचे बैठै ना लहै गुन बिन बड़पन कोइ ।  
 बैठो देवल सिखर पर बायस गरुड़ न होइ ॥१६८॥  
 दुख पाए बिनहुं कहूं गुन पावत है कोइ ।  
 सहै बेध बंधन सुमन तब गुन संजुत होइ ॥१६९॥  
 निपट अबुध समझै कहाँ बुध जन बचन बिलास ।  
 कबहुं भेक न जानई अमल कमल की बास ॥१७०॥  
 बिनसत सतगुन गुनिय के अगुन पुरुष के पास ।  
 व्यौं अंजन मिर चंद कर नैक न होत प्रकास ॥१७१॥  
 सांच भूँठ निरनै करै नीति-निपुन जो होय ।  
 राजहंस बिन को करै छीर नीर कौं दोय ॥१७२॥  
 इक समीप बसि अहित कर इक हितकर बसि दूर ।  
 हंस बिनासै कमल दल अमल प्रकासै सूर ॥१७३॥  
 दोषहि को समहै गहै गुन न गहै खल लोक ।  
 पियै रुधिर पय ना पियै लगी पयोधर जोंक ॥१७४॥  
 भलौ न होवै दुष्ट जन भलौ कहै जो कोय ।  
 विष मधुरौ मीठौ लवन कहै न मीठौ होय ॥१७५॥  
 कारज करत असाध के सब मैं साध कहाय ।  
 जैसे सीत हेमंत को बन जग देत जराय ॥१७६॥  
 एक उदर वाही समय उपज न इक से होय ।  
 जैसे काटे बेर के बांके सीधे जोय ॥१७७॥  
 हरत दैवहु निबल अरु दुरबल ही के प्रान ।  
 बाघ सिंह को छाड़ि कै देत छाग बलिदान ॥१७८॥  
 जिहि जासो मतलब नहीं ताकी ताहि न चाह ।  
 व्यौं निसप्रेही जीव के तृन समान सुरनाह ॥१७९॥  
 जे पर ते पर यह समझ अपनौ होय न कोय ।  
 पालै पोषै काग तब पिक-सुत काग न होय ॥१८०॥

दीजै सीख अजान कौ मानै सीख सुजान ।  
 टारहि ताजन मारियै ज्यों कांपे के कान ॥१८१॥  
 उद्यम कबहुँ न छाड़ियै पर आसा के मोद ।  
 गागरि कैसेँ फोरियै उनयौ देखि पयोद ॥१८२॥  
 कारज धीरै होतु है काहे होत अधीर ।  
 समय पाय तरुवर फरै केतक सींचै नीर ॥१८३॥  
 जो पहिलै कीजै जतन सो पीछै फलदाय ।  
 आग लगे खोदै कुँवा कैसेँ आग बुझाय ॥१८४॥  
 होत सिद्धि जैसे समय तैसौ ही अभिलाख ।  
 कौड़ी बिन जात न लियो करी लेत दै लाख ॥१८५॥  
 क्यों कीजै ऐसौ जतन जातैं काज न होय ।  
 परबत पै खोदै कुँआ कैसेँ निकसै तोय ॥१८६॥  
 सांची संपति और की और भोगवै आय ।  
 कन संग्रह चँटीन कौ ज्यों तीतर चुगि जाय ॥१८७॥  
 सेयौ छोटौ ही भलौ जासौँ गरज सराय ।  
 कीजै कहा पयौधि कौ जातैं प्यास न जाय ॥१८८॥  
 स्रम ही तैं सब मिलत है बिन स्रम मिलै न काहि ।  
 सीधी अँगुरी धी जम्हो क्यौँ हू निकरै नाहि ॥१८९॥  
 कहियै बात प्रमाण की जासौँ सुधरै काज ।  
 फीकौ थोरे लौन तैं अधिकै खारौ नाज ॥१९०॥  
 कहै रसीली बात सो बिगरी लेत सुवारि ।  
 सरस लौन की दाल में ज्यों नीबू रस डारि ॥१९१॥  
 जो चाहै सोई करै बड़े असंकित अंग ।  
 सबके देखत नगन हर धरत गौरि अरधंग ॥१९२॥  
 बड़े सहज ही बात तैं रीझि देत बकसीस ।  
 तुलसी दल तैं बिष्णु ज्यों आक धतूरे ईस ॥१९३॥



बड़े कहैं सो कीजियै करें सु करियै नाहिं ।  
 हर ज्यों पंचन में फिरैं और जो बिकल कहाहिं ॥१६४॥  
 काहु कियौ न कीजियै तिय जिय को विश्वास ।  
 गौर धरी अरधंग हर हरि घर घर में बास ॥१६५॥  
 सुधरी बिगरी बेग ही बिगरी फिर सुधरै न ।  
 दूध फटै कांजी परै सो फिर दूध बनै न ॥१६६॥  
 न कछु तऊ जाकी तलब ताही की मनुहार ।  
 तिलक समैं नृप लेत हैं तृन हू हाथ पसार ॥१६७॥  
 गुनी तऊ अवसर बिना आग्रह करै न कोइ ।  
 हिय ते द्वार उतारियै सयन समय जब होइ ॥१६८॥  
 जदपि आपनौ होय तउ दुख में करत न सीर ।  
 ज्यों दुखती अंगुरी निकट दुसरी ताहि न पोर ॥१६९॥  
 विद्या मिलै अभ्यास तैं सुजन सुभाव मिलै न ।  
 सौत विपुल काननि करै विपुल न हैहैं नैन ॥२००॥  
 काम समै पावै सु दुख जस निर्बल के अंग ।  
 मरदन खंडन सहत हैं ज्यों अबला के अंग ॥२०१॥  
 यह कहवत जैसौ करै तैसौ पावै लोय ।  
 औरन कौं आधे करै आधी कहियत सोय ॥२०२॥  
 छोटे नर तैं रहत है सोभायुत सिरताज ।  
 निर्मल राखै चांदनी जैसे पायंदाज ॥२०३॥  
 हित हू भलौ न नीच कौ नाहिन भलौ अहेत ।  
 चाटि अपावन तन करै काटि स्वान दुख देत ॥२०४॥  
 सहज रसीलौ होय सौं करै अहित पर हेत ।  
 जैसे पीड़ित कीजियै ऊख तऊ रस देत ॥२०५॥  
 कर बिगरी सुधरै बचहि जैसे बनिक बिसेख ।  
 होंग मिरच जीरौ कहै हग मर जर लिख लेख ॥२०६॥

अरि के संग कुटुंब लखि जिय उपजत है त्रास ।  
 वैसौ लगै कुठार कौं तब वनराइ विनास ॥२०७॥  
 कबहु संग न कीजियै किए प्रकृत की हानि ।  
 गूंगे कौं समझाइबो गूंगे की गति आनि ॥२०८॥  
 कोऊ काहू कौ बुरै करै परै तिहि धाम ।  
 काटे पर की नाक कौं नकटी रानी नाम ॥२०९॥  
 कहा करै कोऊ जतन प्रकृति न बदलै कोइ ।  
 सानै सदा सनेह में जीभ न चिकनी होइ ॥२१०॥  
 जदपि सहोदर होय तऊ प्रकृत और की और ।  
 विष मारै ज्यावै सुधा उपजै एकहि ठौर ॥२११॥  
 डरै न काहू दुष्ट सों जाहि प्रेम की बान ।  
 भौर न छाड़ै कैतकी तीखे कंटक जान ॥२१२॥  
 बहुत किए हू नीच कौ नीच सुभाव न जात ।  
 छाड़ि ताल-जल कुंभ में कौवा चोच भरात ॥२१३॥  
 चतुर कूर इक से गनै जाके नाहिं विवेक ।  
 जैसें अबुध गँवार कौं पांच कांच है एक ॥२१४॥  
 कूर न होवै चतुर नर कूर कहै जो कोइ ।  
 मानौ कांच गँवार तऊ पांच कांच नहिं होइ ॥२१५॥  
 कैसें हू छूटत नहीं जा मैं परी कुवानि ।  
 काग न कोइल है सकै जो विधि सिखवै आनि ॥२१६॥  
 भेष बनावै सूर कौ कायर सूर न होय ।  
 खाल उढ़ावै सिंह की स्यार सिंह नहिं होय ॥२१७॥  
 धन बाढ़ै मन बढ़ि गयो नाहिन मन घट होय ।  
 ज्यों जल संग बाढ़ै जलज जल घट घटै न सोय ॥२१८॥  
 सब तैं लघु है मांगिबौ जा मैं फेर न सार ।  
 बलि पै जांचत ही भए बावन तन करतार ॥२१९॥

बड़े न लोपैं लाज कुल लोपैं नीच अधीर ।  
 उदधि रहै मरयाद में बहै उलट नद नीर ॥२२०॥  
 नाम भलौ होत न भलौ भलौ भाग जिहिं भाल ।  
 लच्छि नाम मांगत फिरै भूखौ नाम भुवाल ॥२२१॥  
 उत्तम पर कारज करै अपनौ काज बिसार ।  
 पूरै अन्न जहान कौ तापर भिच्छा धार ॥२२२॥  
 देवन हू सौं देव प्रभु कहा सुरेस नरेस ।  
 कीनौ मीत धनेस तउ पहरैं चर्म महेस ॥२२३॥  
 सब इक से होत न कहूं होत सवन में फेर ।  
 कपरौ खादी बाफतौ लोह तवा समखेर ॥२२४॥  
 अपनौ समै विचारि कै अरि जीतिए अचूक ।  
 दिवस काग घूघहि हनै कागहिं निसि ज्यौ घूक ॥२२५॥  
 छल बल समय विचारिकै अरि हनिए अनयास ।  
 कियौ अकेलौ द्रोण-सुत निसि पांडव कुल नास ॥२२६॥  
 काम परै ही जानियै जो नर जैसौ होय ।  
 बिन तायै खोटौ खरौ गहनो लखै न कोय ॥२२७॥  
 जैसी संगति तैसियै ईजत मिलि है आय ।  
 सिर पर मखमल सेहरै पनही मखमल पाय ॥२२८॥  
 अनघर सुघर समाज में आय बिगारै रंग ।  
 जैसैं हैज गुलाब कौ विगरै खान प्रसंग ॥२२९॥  
 अनमिल सुमिल समाज सो होत गए छठि चैन ।  
 जैसैं तिन पर देत दुख निकसै बिकसै नैन ॥२३०॥  
 चतुर सभा में कूर नर सोभा पावत नाहिं ।  
 जैसैं बक्र सोमित नहीं हंस-मंडली माहिं ॥२३१॥  
 रसिक सभा में निरस नर होत होत रस हानि ।  
 जैसैं भैंसा ताल परि मलिन करत जल आनि ॥२३२॥

मिल्यौ दुष्ट नाहिन भलौ उपजत मिलै अहेत ।  
 ज्यों काँटौ गड़ि देह में अटकि खटकि दुख देत ॥२३३॥  
 दोख धरैं निरदोख कौं जे नर होयँ सदोष ।  
 घटि उदार दाता कहै जाहि न जिय संतोष ॥२३४॥  
 होत सुसंगति सहज सुख दुख कुसंग के थान ।  
 गंधी और लुहार की देखहु बैठि दुकान ॥२३५॥  
 भले वचन मुख नीच के नाहिन होत प्रकास ।  
 हींग लसुन में ना मिले घन कस्तूरी बास ॥२३६॥  
 सुधरौ विगारि कुसंग तैं सत संगति कौं पाय ।  
 वासहि सीकर हींग की जीरा सँग मिटि जाय ॥२३७॥  
 मिलै सुसंगति उच्च हू करत नीच सों प्यार ।  
 खर कौं गंग न्हावाइए तरु न छाड़ै छार ॥२३८॥  
 विगरौ होय कुसंग जिहिँ कौन सकै समभाय ।  
 लसुन वसाए बसन कौं कैसैं फूल वसाय ॥२३९॥  
 द्वैहै बड़े बड़ेन सों होय न छोटे काज ।  
 गहै विटप जु फनीन कौं गहि न सकै गजरज ॥२४०॥  
 अजुगत लखि नर नीच की काहू कौं न सुहात ।  
 दाख विरानी खात खर को न देखि अनखात ॥२४१॥  
 छाँड़ि सबल अरु निबल की कबहुँ न गहिए ओट ।  
 जैसैं दूटी डार सौं लगै बिलंबै चोट ॥२४२॥  
 प्रेम छके मन कौं हटकि रखि न सकै कुल लाज ।  
 कमल-नाल के तंतु सौं को बाँधै गजरज ॥२४३॥  
 बात प्रेम की राखिए अपने ही मन माहिँ ।  
 जैसे छाया कूप की बाहर निकसै नाहिँ ॥२४४॥  
 ताकौं त्यों समझाइए ज्यों समझे जिहि बानि ।  
 वैन कहत मन अंध कौं ज्यों बहिरे कौं पानि ॥२४५॥

बिपत परे सुख पाइए ता ढिँग करिए भौन ।  
 नैन सहाई बधिर के अंध सहाई सौन ॥२४६॥  
 हीन अकेलौ ही भलौ मिले भले नहिँ दोय ।  
 जैसेँ पावक पवन मिलि विफरै हाथ न होय ॥२४७॥  
 जैसौ थानक सेइए तैसौ पूरै काम ।  
 सिंह गुफा मुक्ता मिलै स्यार खुरो खुर चाम ॥२४८॥  
 बाँके सीधे को मिलन निवहै नाहिँ निदान ।  
 गुन-ग्राही तोऊ तजत जैसे वान कमान ॥२४९॥  
 क्यों करिए प्रापति अलप जामें सम अति होय ।  
 कौन जु गिरिवर खोद केँ चूहै काढ़ै जोय ॥२५०॥  
 होय पहुँच जाकी जिती तेतौ करत प्रकास ।  
 रवि ज्यों कैसे करि सकै दीपक तम को नास ॥२५१॥  
 जहाँ चतुर नाहिन तहाँ मूढ़नि सों व्यवहार ।  
 वर पीपर बिन हो रहै ज्यों एरँड अधिकार ॥२५२॥  
 होत न कारज मो बिना यह जु कहै सु अयान ।  
 जहाँ न कुक्कुट शब्द तहँ होत न कहा बिहान ॥२५३॥  
 उत्तम कौ अपमान अरु जहाँ नोच कौ मान ।  
 कहा भयौ जौ हंस की निंदा काग बखान ॥२५४॥  
 यथाजोग की ठौर बिनु नर छबि पावै नाहिँ ।  
 जैसेँ रत्न कथीर में काँच कनक के माहिँ ॥२५५॥  
 बिपति बड़ेई सहि सकै इतर बिपति तैं दूर ।  
 तारे न्यारे रहत हैं गहैं राहु ससि सूर ॥२५६॥  
 ठौर छुटे तैं मीत हू है अमीत सतरात ।  
 रवि जल उखरे कमल कौँ जारत गारत जात ॥२५७॥  
 होत बहुत धन होत तब गुन जुत भए उदात ।  
 नेह भरयो दीपक तऊ गुन बिनु जोति न होत ॥२५८॥

कहा भयौ जो धन भयौ गुन तैं आदर होइ ।  
 कोटि दोइ धारी धनुष गुन बिन गहत न कोइ ॥२५६॥  
 जात गुनी जात न तहां आडंबर युत सोय ।  
 पहुँचे चंग अकास लौं जौ गुन संयुत होय ॥२६०॥  
 गुनवारौ संपति लहै लहै न बिन गुन कोय ।  
 काढ़े नोर पताल तैं जो गुन युत घट होय ॥२६१॥  
 को करि सकै बड़ेन सौं कबहुं प्रति उपकार ।  
 गिरि सुर तरु न रख्यो उदधि मुनि अँचयो जिहिँ बार ॥२६२॥  
 विद्या गुरु की भक्ति सौं कै कीन्हे अभ्यास ।  
 भील द्रोण के बिन कहे सीख्यो वान - विलास ॥२६३॥  
 गुरु हु सिखावै ज्ञान गुन सिष्य सुबुद्धि जु होय ।  
 लिखै न खरदरि भीत पर चित्र चितेरौ कोय ॥२६४॥  
 पंडित पंडित सों मिलै संसै मिटत न बेर ।  
 मिलै दीप दुहुँ दुहुँन कौं होत अँधेर निबेर ॥२६५॥  
 उद्दिम बुधि-बल सौं मिलै तब पावत सुख-साज ।  
 अंध कंध चढ़ि पंगु ज्यों सबै सुधारत काज ॥२६६॥  
 जाको हृदय कठोर तिहिँ लगै न कोमल बैन ।  
 मैंन वान ज्यों पथर मैं क्यों हूं किए भिदै न ॥२६७॥  
 सबको रस में राखिए अंत लीजिए नाहिँ ।  
 विष निकस्यो अति मथन तैं रतनाकर हू माहिँ ॥२६८॥  
 फल बिचारि कारज करौ करहु न व्यर्थ अमेल ।  
 तिल ज्यों बारू पेरिए नाहिन निकसै तेल ॥२६९॥  
 पीछे-कारज कीजिए पहिले पहुँच बिचार ।  
 कैसे पावत उच्च फल वावन बांह पसार ॥२७०॥  
 दुष्ट निकट बसिए नहीं बस न कीजिए बात ।  
 कदली बेर प्रसंग तैं छिदै कंटकन पात ॥२७१॥

तिनके कारज होत हैं जिनके बड़े सहाय ।  
 कृष्ण पक्ष पांडव जयी कौरव गए विलाय ॥२७२॥  
 पुन्य विवेक प्रभाव तै' निहचल लच्छ निवास ।  
 जौ लौं तेल प्रदीप में तौ लौं जोति - प्रकास ॥२७३॥  
 नर कारज की सिद्धि लौं करै अनेक प्रकार ।  
 छूटै रोग सरीर तै' को दूढ़ै उपचार ॥२७४॥  
 अरि छोटी गनियै नहीं जाते होत विगार ।  
 तिन-समूह को छिनक में जारत तनक अंगार ॥२७५॥  
 छोटे अरि पर चढ़त हूं सजै सुभट तनत्रान ।  
 लीजै ससा अखेट पर नाहर कौ सामान ॥२७६॥  
 गुन तें संप्रह सब करें कुल न विचारै कोय ।  
 हरि हू मृगमद को तिलक करत लेत जग मोय ॥२७७॥  
 बुरौ होय तब सुकुल कौ तासों बुरी न होय ।  
 जदपि धुवां है अगर को करत सुगंधित सोय ॥२७८॥  
 ताकौ अरि कहा करि सकैं जाकौ जतन उपाय ।  
 जरै न ताती रेत सौं जाके पनही पाय ॥२७९॥  
 पंडित जन कौ स्रम मरम जानत जे मतिधीर ।  
 कबहुं बांझ न जानई तन प्रसूत की पीर ॥२८०॥  
 सूर बीर की संपदा कायर पै नहिं जाय ।  
 निहचै जानो सिंह बलि स्थार न कबहुं खाय ॥२८१॥  
 भूपति के सँग सुभट गन आपस में यह रीति ।  
 बन अभीत ब्यौ सिंह तै' बन तै' सिंह अभीत ॥२८२॥  
 जाय दरिद कवि जनन कौ सेवै राज-समाज ।  
 सिंह तृपित तब होतु है हाथ चढ़ै गजराज ॥२८३॥  
 वीर पराक्रम ना करै तासों डरत न कोइ ।  
 बालक हू कै' चित्र कौ वाघ खिलौना होइ ॥२८४॥

वीर पराक्रम तै' करै भुव-मंडल कौ राज ।  
 जोरावर यातैं करत बन अपनौ मृगराज ॥२८५॥  
 जोरावर अरि मारियै बुध बल कियै उपाय ।  
 कालयमन कौ ज्यों किसन पट मुचुकुंद उठाय ॥२८६॥  
 राजा के बल लोक सब फिरै घिरै चहुँ ओर ।  
 ज्यों वन में छूटै चरै बांधे हय के जोर ॥२८७॥  
 नृप प्रताप तैं देस में रहै दुष्ट नहिँ कांय ।  
 प्रगटत तेज दिनेस कौ तहां तिमिर नहिँ होय ॥२८८॥  
 यहै बात सब ही कहैं राजा करै सु न्याय ।  
 ज्यों चौपर के खेल में पांसौ परै सु दाव ॥२८९॥  
 कारज ताही को सरै करै जु समै निहारि ।  
 कबहुँ न हारै खेल जो खेलै दाव विचारि ॥२९०॥  
 सब देखै पै आपनौ दोष न देखै कोइ ।  
 करै उजेरौ दीप पै तरे अंधेरौ होइ ॥२९१॥  
 संत कष्ट सहि आपुही सुखि राखै जु समीप ।  
 आप जरे तउ और कौ करै उजेरौ दीप ॥२९२॥  
 मारै इक रच्छा करै एकहि कुल कौ होय ।  
 ज्यों कृपान अरु कवच ये एक लोह सों होय ॥२९३॥  
 अपनी अपनी ठौर पर सबकोँ लागै दाव ।  
 जल में गाढ़ी नाव पर थल गाढ़ी पर नाव ॥२९४॥  
 मुनि मन सुथिर कुबात तैं कैसै राखे कोइ ।  
 जल प्रतिबिंबित बात बस थिर हू चंचल होइ ॥२९५॥  
 जो हाजिर अवसान पर सोई शख प्रमान ।  
 दाभहि तै' बलदेव ज्यों हरे सूत के प्रान ॥२९६॥  
 बड़े अनीति करें तऊ बुरो कहै नहिँ कोय ।  
 वालि हयो अपराध बिनु ताहि भजे सब कोय ॥२९७॥



नीति-निपुन राजानि कौं अजगुत नाहिं सुहाय ।  
 करत तपस्या सूद्र कौं ज्यों मारगौ रघुराय ॥२८८॥  
 लघु मिलिए गरुवे जदपि बड़े कछू लै ताहि ।  
 गिरिवर आने कपिन के जौं मकरालय माहिं ॥२८९॥  
 भले बुरे छोटे बड़े रहैं वढ़ेनि पै आय ।  
 मकर असुर सुर गिर अनल दधि मधि सकल बसाय ॥३००॥  
 बड़े भार लै निरबहैं तजत न खेद विचारि ।  
 शेष धरा धरि धर धरै अब लौं देत न डारि ॥३०१॥  
 बुरी करैं पर जे बड़े भली करै हित धारि ।  
 जैसे दधि बांध्यो तऊ कपि दल दियौ उतारि ॥३०२॥  
 उत्तम जन सौं मिलत ही अवगुनहूं गुन होय ।  
 घन सँग खारो उदधि मिलि बरसै मीठी तोय ॥३०३॥  
 काहू सो नार्ही मिटै अपरापत के अंक ।  
 बसत ईस के सीस तउ भयो न पूर्ण मयंक ॥३०४॥  
 कोऊ दूर न करि सकै बिधि के बलटे अंक ।  
 उदधि पिता तउ चंद को धोय न सक्यो कलंक ॥३०५॥  
 गहिए ओट बड़ेन की जहाँ मिटै दुखदंड ।  
 उदधि सरन मैनाक को कछु करि सक्यो न इंद ॥३०६॥  
 छल बल धर्म अधर्म करि अरि साधिए अभीति ।  
 भारत में अर्जुन किसन कहा करी युध रीति ॥३०७॥  
 गाहक सबै सपूत के सारै काज सपूत ।  
 सब को ढंपन होत है जैसे बन को सूत ॥३०८॥  
 आप कष्ट सह और कौं सोभा करत सपूत ।  
 चरखी पौजन चरन खिच जग ढांकन ज्यों सूत ॥३०९॥  
 करत करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान ।  
 रसरी धावत जात तैं सिल पर परत निसान ॥३१०॥

सुख दिखाय दुख दीजियै खल सो लरियै नाहिं ।  
 जो गुर दीने ही मरै क्यों विष दीजै ताहि ॥३११॥  
 विन बूझे ही जानिए बुध मूरख मन माहिं ।  
 छलकै ओछे नीर घट पूरे छलकत नाहिं ॥३१२॥  
 सहज संतोष है साध कौ खल दुख देन प्रवीन ।  
 मछुवा मारत जल बसत कहा बिगारत मीन ॥३१३॥  
 सुंदर थान न छोड़ियै जौ लौं होय न और ।  
 पिछलो पांव उठाइए देखि धरन को ठौर ॥३१४॥  
 फिर पीछे पछताइए सो न करै मति सूध ।  
 बदन जीभ हिय जरत है पीवत तातो दूध ॥३१५॥  
 को सुख को दुख देत है देत करम भक्तभोर ।  
 डरभै सुरभै आप ही ध्वजा पवन के जोर ॥३१६॥  
 सब सुख है संतोष में धरियै मन संतोष ।  
 नेक न दुरवल होत है सर्प पवन के पोष ॥३१७॥  
 पांय परे हू पिसुन सो विससि न करिए बात ।  
 नमत कूप को डोल ज्यों जीवन हर लै जात ॥३१८॥  
 सबल न पुष्ट सरीर को सबल तेज युत होय ।  
 हृष्ट पुष्ट गज दुष्ट ज्यों अंकुस के बस होय ॥३१९॥  
 कायर नर को देख रन मुख फीको दरसाय ।  
 काँचो रँग ज्यों धूप में भटक चटक उड़ि जाय ॥३२०॥  
 दोष धरै गुनि को पिसुन इह डर गुन न विसारि ।  
 जूँ के भय ते बसन को देत कहा कोउ डारि ॥३२१॥  
 भली करत लागत बिलम बिलम न बुरे विचार ।  
 भवन बनावत दिन लगै ढाहत लगति न बार ॥३२२॥  
 सोई अपनो आपनो रहै निरंतर साथ ।  
 होत परायो आपनो सख पराए हाथ ॥३२३॥

बिनसत बार न लागई ओछे जन की प्रीति ।  
 अंबर डंबर सांभ के ज्यों बारु की भीति ॥३२४॥  
 करिए बात न तन परस खल ढिग जैए नाहिं ।  
 कटुक नीब तर जात ही मुख कहुँ औ है जाहि ॥३२५॥  
 निपट अमिलती बात कों कैसे करिहै कोइ ।  
 बसन नील के माट में कबहुं लाल न होइ ॥३२६॥  
 देखि ठिकानौ मांगिए मांगे मिलै जु होइ ।  
 मुनि घर भीतर कांगही दूँदै लहत न कोइ ॥३२७॥  
 कहे मूढ़ की बात के करिए जो चित होय ।  
 सौंह दिवाए और के परे अग्नि में कोय ॥३२८॥  
 झूठहु ऐसे बोलिए सांच बरोबर होय ।  
 ज्यों अंगुरी सों भीति पर चांद बतावै कोय ॥३२९॥  
 समझै अनसमझै कछुक कहिए मीठी बात ।  
 बालक के सुन सुन बचन जैसें खवन सुहात ॥३३०॥  
 सुबुध बीच परि दुहुँन कों हरत कलह रस पूर ।  
 करत देहरी-दीप ज्यों घर आंगन तम दूर ॥३३१॥  
 अधिक दुखी लखि आप तैं दीजै दुख बिसराय ।  
 धरमसुवन बन-दुख हरयो मुनि नल बिपत बताय ॥३३२॥  
 होत बुरे हूँ ते' भलो काहुँ समै प्रकास ।  
 अधिक मास ते' ज्यों मिथ्यौ पांडव फिर बनबास ॥३३३॥  
 एक अनीति करै लहै संगी दुख सुख नाहिं ।  
 भीम कीचकन कों दिए मारि चिता के माहिं ॥३३४॥  
 बड़े बिपत में हूँ करैं भले बिराने काम ।  
 किय बिराटतनु की बिजय अर्जुन करि संग्राम ॥३३५॥  
 बड़े बड़े हूँ काम करि आप सिहावत नाहिं ।  
 जय जस उत्तर कों दियो पथ बिराट के माहिं ॥३३६॥

बड़े बचन पलटें नहीं कहि निरबाहैं धीर ।  
 कियो विभीषन लंकपति पाय विजय रघुवीर ॥३३७॥  
 बुरी करें तेई बुरे नाहिँ बुरो कोउ और ।  
 बनिज करै सो बानिया चोरी करै सो चोर ॥३३८॥  
 भूठ बसे जा पुरुष मैं ताही की अप्रतीति ।  
 चोर जुआरी सों भले याते' करत न प्रीति ॥३३९॥  
 कुल सपूत जान्यो परै लखि सुभ लच्छन गात ।  
 होनहार विरवान के होत चोकने पात ॥३४०॥  
 नियमित जननी उदर में कुल को लेत सुभाव ।  
 उछलत सिंहनि को गरम सुनि गरजन घनराव ॥३४१॥  
 बिना सिखाए लेत है जिहिँ कुल जैसी रीति ।  
 जनमत सिंहनि को तनय गज पर चढ़त अभीति ॥३४२॥  
 सत्य बचन मुख जो कहत ताकी चाह सराह ।  
 गाहक आवत दूर ते सुनि इक शब्दी साह ॥३४३॥  
 प्रेम पगन जासों भई सुख दुख ताके संग ।  
 बसत कमल अलि वास बस स-कमल भवत मतंग ॥३४४॥  
 चहल पहल अवसर परे लोक रहत घर धेर ।  
 ते फिर दृष्टि न आवहीं जैसे फसल बटेर ॥३४५॥  
 बुद्धि बिना विद्या कहे कहा सिखावै कोइ ।  
 प्रथम गांव ही नाहिँ तौ सोंव कहां ते होइ ॥३४६॥  
 बहुत न बकिए कीजिए फारज अवसर पाय ।  
 मौन गहे बक दांव पर मछरी लेत उठाय ॥३४७॥  
 भजन निरंतर संत जन हरि पद चित्त लगाय ।  
 जैसे नट दृढ़ दृष्टि करि धरत बरत पर पाय ॥३४८॥  
 का रस में का रोष में अरि ते जिनि पतियाय ।  
 जैसे सीतल तप्त जल डारत आगि बुझाय ॥३४९॥

चप चप करती ना रहै नर लवार की जीह ।  
 चल-हल दल जैसे चपल चलत रहै निस दीह ॥३५०॥  
 जैसो प्रभु तैसो अनुग होय सुबात प्रमान ।  
 बामन कर की लटिका बढे चढ़ी असमान ॥३५१॥  
 बढे न ऐसो कौन है दान मान को पाय ।  
 पाय धरा बामन भए सीस स्वर्ग धर पाय ॥३५२॥  
 अपनी कीरति कान सुनि होत न कौन खुस्याल ।  
 नाग मंत्र के सुनत ही बिष छाड़त है व्याल ॥३५३॥  
 बिना याद किए बिना विसरत इहिँ उनमान ।  
 बिगर जात बिन खबर के ढोली कैसो पान ॥३५४॥  
 सबै धकावै निबल कौं सबल पुरातन पाठ ।  
 डारै जारि बहाय दे अनिल अनल जल काठ ॥३५५॥  
 अंतर अँगुरी चार कौ सांच भूठ में होय ।  
 सब मानै देखी कही सुनी न मानै कोय ॥३५६॥  
 निबहै सोई कीजिए पन अपने उनमान ।  
 कैसैं होत गरीब पै राजा कैसो दान ॥३५७॥  
 जोर न पहुँचै निबल कौं जो पै सबल सहाय ।  
 भोडर की फानूस कौ दीप न बात बुझाय ॥३५८॥  
 कारन बिन कारज नहीं निहचै मान बचन ।  
 करै रसोई जौ मिले आग ईधन जल अन्न ॥३५९॥  
 परी बिपत तैँ छूटियै करियै जोर उपाव ।  
 कैसैं निकसै जतन बिन परी भौर में नाव ॥३६०॥  
 दुख सुख दीवे कौं दर्ई है आनुर इहिँ ठाट ।  
 अहि करुंड मूसा परयो भखि निकस्यो उहि बाट ॥३६१॥  
 प्रेरक ही तैँ होत है कारज सिद्ध निदान ।  
 चढ़ै धनुष हू ना चलै बिना चलाए बान ॥३६२॥

होय भले कै सुत बुरो भलौ बुरे कै होय ।  
 दीपक कै काजर प्रगट कमल कीच तैं जोय ॥३६३॥  
 हार बड़े की जीत है निबल न मानै तास ।  
 बिमुख होय हरि ज्यों कियौ कालयमन कौ नास ॥३६४॥  
 होय भले चाकरन तैं भलौ धनी कौ काम ।  
 ज्यों अंगद हनुमान तैं सीता पाई राम ॥३६५॥  
 सबकी समै बिनास में उपजति मति विपरीति ।  
 रघुपति मारगौ लंकपति जो हरि लै गयो सीति ॥३६६॥  
 जो धनवंत सु देय कछु देय कहा धन-हीन ।  
 कहा निचोरै नम्र जन न्हान सरोवर कीन ॥३६७॥  
 सुख सज्जन के मिलन कौ दुर्जन मिलै जनाय ।  
 जाने ऊख मिठास कौ जब मुख नीम चवाय ॥३६८॥  
 होत चाह तब होतु है प्रेम सु सज्जन संग ।  
 पास दियै बिन बांस पर चढ़ै न गहरौ रंग ॥३६९॥  
 जाहि मिलै सुख होतु है ता बिछरै दुख होय ।  
 सूर उदै फूलै कमल ता बिन सकुचै सोय ॥३७०॥  
 भूठे ही करियै जतन कारज बिगरै नाहि ।  
 कपट पुरुष धन खेत पर देखत मृग भज जाहि ॥३७१॥  
 प्रेम नेम के पंथ कौ है कछु अद्भुत रूप ।  
 पिय हिय लागै लगत ज्यों सरद जौन सी धूप ॥३७२॥  
 दुखदाई सोइ देतु सुख सुखदाई संग जात ।  
 घट जल भीजे चीर कौ लागि लूअ सियरात ॥३७३॥  
 सम सहाय के बिन मिलैं सुखदाई दुख देख ।  
 भिंजे चीर बिन घट सलिल लागत तपत करेइ ॥३७४॥  
 कारज सोई सुधरिहै जौ करियै सम भाय ।  
 अति बरषै बरषै बिना जौ करिसन कुम्हलाय ॥३७५॥

सज्जनता न मिलै कियै जतन करौ किन कोइ ।  
 व्यौ करि फार निहारियै लोचन बढौ न होइ ॥३७६॥  
 विन बनाव बानिक बने ताही के कुबखान ।  
 दगले पर व्यौ अरगजो मीठे पर तनत्रान ॥३७७॥  
 तन बनाय उपजाय रुचि ठानत मान निदान ।  
 व्यौ पंचामृत छाँहि कै करत तपत जल पान ॥३७८॥  
 मन देत न तन देन कौ मन मिलयो तजि लाज ।  
 ज्यौं आंकुस कौं नटत कोउ दै गिरि सौं गजराज ॥३७९॥  
 छोटे मन में प्पाइहै कैसैं मोटी बात ।  
 छेरी के मुँह में दियौ ज्यौं पेठा न समात ॥३८०॥  
 होत निबाह न आपनी लीने फिरत समाज ।  
 चूहा बिल न समात है पूँछ बांधिए छाज ॥३८१॥  
 रहै प्रजा घन यत्र सौं जहँ बांकी तरवार ।  
 सो फल कोउ न लै सकै जहां कटीली डार ॥३८२॥  
 जासौं परिचै होय सो पावै तिहि उनमान ।  
 रुपिया कौं खोटौ खरौ कैसैं कहै अजान ॥३८३॥  
 बिना प्रयोजन भूलि हू ठठिए नाहीं ठाट ।  
 जैवो नहिँ जा गांव कौं ताकी पूछ न बाट ॥३८४॥  
 आपहि कहा बखानियै भलो बुरी को जोग ।  
 ऊढ़े घन की बान कौं कहैं बटाऊ लोग ॥३८५॥  
 इंगित तैं आकार तैं जान जात जो भेट ।  
 तासौं बात दुरै नहीं ज्यौं दाई सौं पेट ॥३८६॥  
 जानै सो बूझै कहा आदि अंत बिरंत ।  
 घर जन्मे पशु के कहा देखत कोऊ दंत ॥३८७॥  
 कहबौ कछु करिबौ कछू है जग की बिधि दोय ।  
 देखन के अरु खान के और दुरद रद होय ॥३८८॥

आप कहें नाहीं करै ताकौ है यह हेत ।  
 आप जाय नहिं सासुरै औरन कौं सिख देत ॥३८८॥  
 जो कहियै सो कीजियै पहिलै करि निर्धार ।  
 पानी पी घर पूछबौ नाहिन भलौ बिचार ॥३८९॥  
 पीछे कारज कीजियै पहिलै जतन बिचार ।  
 बड़े कहत हैं बांधियै पानी पहिले बार ॥३९०॥  
 अरि हू धूमै मंत्र कौं कहियै सांच सुनाय ।  
 ज्यों भीषम पांडवन कौं दीनौ मरन बताय ॥३९१॥  
 कहियै तासों जो हितू भली बुरी हू जायि ।  
 चोर करै चोरी तऊ सांच कहै घर जायि ॥३९२॥  
 संपत वीतै बिलसबौ सुख कौं चाहै कोइ ।  
 रुख उसारे फूल फल कह धौं कैसैं होइ ॥३९३॥  
 रन सनमुख पग सूर के बचन कहैं ते संत ।  
 निकसन पीछैं होत है ज्यों गयंद के दंत ॥३९४॥  
 आय बसैं जिहिँ दिन सुछिन जे सज्जन चित माहिँ ।  
 चित्र महावत दुरद पर ज्यों चढ़ि उतरै नाहिँ ॥३९५॥  
 बिन पूछे ही कहत हैं सज्जन हित के वैन ।  
 भले बुरे कौं कहत हैं ज्यों तमचर गत रैन ॥३९६॥  
 बिछुरे गए विदेस हू सज्जन बिछुरे नाहिँ ।  
 दूर भए ज्यों कुरज की सुरति सुतन के माहिँ ॥३९७॥  
 बसियै तहां बिचार कै जहां दुष्ट गति नाहिँ ।  
 होत न कबहुं भँवर छर ज्यों चंपक बन माहिँ ॥३९८॥  
 दान देत धन - हीनता होत तथापि बखान ।  
 दुरबल तऊ सराहियै दुरद भरत जज दान ॥४००॥  
 ठोक कियै बिन और की बात सांच मत थपे ।  
 होत अंधेरी रैन में परी जेवरी सर्प ॥४०१॥



झूठ बिना फीकी लगै अधिक झूठ दुख-भौन ।  
 झूठ तितौ ही बोलियै ज्यों आटे में लौन ॥४०२॥  
 ठौर देखि कै हूजियै कुटिल सरल गति आप ।  
 बाहर टेढ़ी फिरत है बांवी सूधौ सांप ॥४०३॥  
 एकतहू रह सजन खल तजत न अपनौ अंग ।  
 मनि विष-हर विष-कर सरप सदा रहत इक संग ॥४०४॥  
 भले बुरी जौ आदरैं कौन सकै निरबारि ।  
 सीत बिमल पावन करन चलत नीच गति वारि ॥४०५॥  
 दोऊ चाहैं मिलन कौं तौ मिलाप निरधार ।  
 कबहुं नाहिन बाजिहै एक हाथ सौं तार ॥४०६॥  
 हिए दुष्ट के बदन तैं मधुर न निकसै बात ।  
 जैसे करवी बेल के को मीठे फल खात ॥४०७॥  
 रुखे वचन मिलाप में कहत होत रस-भंग ।  
 बीन बजत ज्यों तार के टूटे रहत न रंग ॥४०८॥  
 आप अकारज आपनौ करतु कुबुध के साथ ।  
 पायँ कुल्हारी आपने मारतु मूरख हाथ ॥४०९॥  
 ताही कौ करियै जतन रहियै जिहि आधार ।  
 को काटै ता डार कौं बैठै जाही डार ॥४१०॥  
 न्याय चलत बिगै कछू तौ न करौ अपसोस ।  
 धार परत जो राजपथ तौ न देत कोउ दोस ॥४११॥  
 भले भली ही कहत हैं पै न कहत हैं दोष ।  
 सूरदास कहे अंध कौं उपजावत है तोष ॥४१२॥  
 सदा सुथान प्रधान है बल न प्रधान बताव ।  
 नाग डरावत गरुड़ कौं हर घर हार प्रभाव ॥४१३॥  
 जामें विद्या नारदी विगरन देत न लाग ।  
 पैस चोर भुँसि स्वान कौ कहत धनी सौं जाग ॥४१४॥

भाग-हीन कौं ना मिलै भली वस्तु कौ भोग ।  
 दाख पके मुख पाक कौ होत काग को रोग ॥४१५॥  
 सब कोऊ चाहत भलो मित्र मित्र की ओर ।  
 ज्यों चकई रवि कौ उदै ससि कौ उदै चकोर ॥४१६॥  
 भले वंस संतति भली कबहुं नीच न होय ।  
 ज्यों कंचन की खान में कांच न उपजै कोय ॥४१७॥  
 सूर बीर के वंस में सूर बीर सुत होय ।  
 ज्यों सिंहनि के गर्भ में हिरन न उपजै कोय ॥४१८॥  
 करै न कबहुं साहसी दीन हीन कौ काज ।  
 भूख सहै पर घास कौ नाहिँ भखै मृगराज ॥४१९॥  
 मान-धनी नर नीच पै जांचै नाहीं जाय ।  
 कबहुं न मांगै स्यार पै बलि भूख्यौ मृगराय ॥४२०॥  
 छोटे नर कौं बड़ेन सों कबहुं चुरै न होय ।  
 फूस आगि करि ना सकै तपत उदधि कौ तोय ॥४२१॥  
 नीचहु उत्तम संग मिलि उत्तम ही है जाय ।  
 गंग संग जल निंद्य हू गंगोदक के भाय ॥४२२॥  
 अधिक चतुर की चातुरी होत चतुर के संग ।  
 नग निरमल के डांक तैं बढ़त जोति छवि रंग ॥४२३॥  
 परतछ नीके देखिए कहा वरन कोउ ताहि ।  
 कर कंकन कौं आरसी को देखत है चाहि ॥४२४॥  
 सहज सील गुन सजन के खल बुधि होत न भंग ।  
 रतन दीप की ज्यों सिखा बुझत न बात प्रसंग ॥४२५॥  
 रति रस श्रुति रस राग रस पाय न चाहत और ।  
 चाखत मधु अरिबिंद कौ लै न ईख रस भौर ॥४२६॥  
 मोह महातम रहतु है जौ लौं ज्ञान न होत ।  
 कहा महातम रहि सकौ भए अदीत उदोत ॥४२७॥

सबुध अबुध की सेव कौ यह सारूप जिय थाप ।  
 थल में रोपित कमल ज्यों बधिर करन ज्यों जाप ॥४२८॥  
 यौं सेवा राजान की दीन्ही कठिन बताय ।  
 ज्यों चुंबन व्याली बदन सिंह मिलन को भाय ॥४२९॥  
 पंडित अरु बनिता लता सोभित आश्रय पाय ।  
 है मानिक बहु मोल कौ हेम जटित छवि छाया ॥४३०॥  
 इक गुन तैं सोभा लहैं इक अवगुन अवरोह ।  
 सोह उरोजन पीनता त्यों कटि कृसता सोह ॥४३१॥  
 सुजन सुजन के दरस ही पावत जिय संतोष ।  
 लहत फच्छ के वत्स ज्यों सोम दृष्टि तैं पोष ॥४३२॥  
 सब संपति फल करत है सुहृद जनन कौ हेत ।  
 दूरहिँ सूरज उदित ज्यों कमलन कौ सुख देत ॥४३३॥  
 ऊंचे पद कौं पाय लघु होय तुरत ही पात ।  
 घन तैं गिरि पर गिरत जल गिरिहू तैं ढरि जात ॥४३४॥  
 अपनी प्रभुता को सबै बोलत भूठ बताय ।  
 बेस्या बरस घटावही जोगी बरस बढ़ाय ॥४३५॥  
 अपने लालच के लियै दुख हू आवै दाय ।  
 कान बिधावैं खाय गुर पहिरै धीरबलाय ॥४३६॥  
 धनी गुनी कौं न्याय ही धन अरपै धरि हेत ।  
 सगुन पात्र कौं कूप हू मिलतहि जीवन देत ॥४३७॥  
 गुन सनेह जुत हेतु है ताही की छवि हेत ।  
 गुन सनेह के दीप की जैसैं जोति उदोत ॥४३८॥  
 सुनि सुनि मीठी बात कौं को चाहत कटु बात ।  
 चाखि दाख के स्वाद कौं कौन निबैरी खात ॥४३९॥  
 रख की कथा सुनी न तिहिँ कूर कथा की चाहि ।  
 जिन दाखै चाखी नहीं मिष्ट निबैरी ताहि ॥४४०॥

प्रेमी प्रीत न छाड़िहों होत न प्रन तैं हीन ।  
 मरै परे हू उदर में जल चाहत है मीन ॥४४१॥  
 अति उदारता बड़ेन की कहैं लौं बरनै कोय ।  
 चातक जाचै तनिक घन बरस भरै घन तोय ॥४४२॥  
 बड़े जु चाहैं सो करें करन मतौ उर धारि ।  
 हरि गिरि तारे जलधि पर करी सिला तैं नारि ॥४४३॥  
 औसर बीते जतन कौ करिबौ नहिँ अभिराम ।  
 जैसे पानी वह गए सेतबंध किहिँ काम ॥४४४॥  
 दुष्ट संग बसियै नहीं दुख उपजत इहिँ भाय ।  
 बसत बांस की अगिन तैं जरत सबै बनराय ॥४४५॥  
 करै अनादर गुननि कौ ताहि सभा छवि जाय ।  
 गज कपोल शोभा मिटत ज्यों अलि देत उड़ाय ॥४४६॥  
 कहूं कहूं गुन तैं अधिक उपजत दोष सरीर ।  
 मीठी बानी बोलि कै परत पींजरा कीर ॥४४७॥  
 भले बुरे निबहैं सबै महत पुरुष के संग ।  
 चंद सांप जल अगिन ए बसत शंभु के अंग ॥४४८॥  
 बिना कहे हू सत पुरुष पर की पूरै आस ।  
 कौन कहत है सूर कौ घर घर करत प्रकास ॥४४९॥  
 कछु कहि नीच न छेड़ियै भलो न बाकौ संग ।  
 पाथर डारे कीच में उछरि विगारै अंग ॥४५०॥  
 हीन जानि न विरोधियै वह तौ तन दुखदाय ।  
 रजहू ठोकर मारियै चढ़ै सीस पर आय ॥४५१॥  
 नाहिँ करत उपकरन तैं काज सिद्ध बलवान ।  
 मुनि वन बसिबौ संग मृग किय अगस्त दधि पान ॥४५२॥  
 बिना दिए न मिलै कछू यह समझौ सब कोय ।  
 होत सिसिर में पात तरु सुरभि सपल्लव होय ॥४५३॥

यह निश्चय करि जानियै जानहार सो जाय ।  
 गज के भुक्त कपित्थ के ज्यों गिर बीज बिलाय ॥४५४॥  
 दूर कहा नियरै कहा होनहार सो होय ।  
 धुर सीचै नालेर के फल में प्रगटै तोय ॥४५५॥  
 आए आदर ना करै पीछै लेत मनाय ।  
 आयौ नाग न पूजई बाबी पूजन जाय ॥४५६॥  
 कहूं अनादर पाय कै गुनी न करहु अँदेस ।  
 विद्या है तौ करहिँगे सब कोऊ आदेस ॥४५७॥  
 अपने अपने समय पर सब कौ आदर होय ।  
 भोजन प्यारौ भूख में तिस में प्यारौ तोय ॥४५८॥  
 होय सो होय हिसाब सौ बिन हिसाब नहिँ होय ।  
 भवै बदन तैं अन्न मन नाहिँ नाक तैं कोय ॥४५९॥  
 जिहिँ डर डरि करियै जतन उपजत सोइ अमेत ।  
 लगै दूखती चोट ज्यों होति कनौड़े भेट ॥४६०॥  
 मीठी कोऊ वस्तु नहिँ मीठी जाकी चाह ।  
 अमली मिसरी छाड़ि कै आफू खातु सराहि ॥४६१॥  
 बड़ी बढ़ाई नीच कौ दीजै अपने काम ।  
 खरहू कौ बोलत पथिक कहत बिनायक नाम ॥४६२॥  
 कहा भयौ जौ नीच कौ देत बढ़ाई कोय ।  
 कहत बिनायक नाम पै खर न बिनायक होय ॥४६३॥  
 भले बुरे कौ जानिबौ जान वचन के बंध ।  
 कहै अंध कौ सूर इक कहै अंध कौ अंध ॥४६४॥  
 जानि बृष्णि कै करत नर अपने हेत अहेत ।  
 झूठी साँची बात पर दोऊ मुचलका देत ॥४६५॥  
 चिरजीवी तन हूं तजै जाकौ जग जस बास ।  
 फूल गपहूं फूल की रहै तेल में बास ॥४६६॥

बहुत भए किहिँ काम के भार निबाहक एक ।  
 सेस धरे घर सीस पर मेंडक भखी अनेक ॥४६७॥  
 वृद्ध न हैहै पाप तैं वृद्ध धरम तैं धार ।  
 सुन्यौ न देख्यौ सिंह कै मृग कौ सौ परवार ॥४६८॥  
 देखत कौ पै कछु नहीं मुख पै खल की प्रीति ।  
 मृग-वृष्णा में होति है ज्यों जल की परतीति ॥४६९॥  
 ऊपर दरसै सुमिल सी अंतर अनमिल आंक ।  
 कपटी जन की प्रीति है खीरा की सी फांक ॥४७०॥  
 निबल सबल के परस तैं सबलन सौँ अनखात ।  
 देति हिमायत की गधी ऐराकी कै लात ॥४७१॥  
 दोष लगावत गुनिन कौं जाकौ हृदय मलीन ।  
 धरमी कौं दंभी कहैं छमियन कौं बलहीन ॥४७२॥  
 द्वै ही गति है वड़नि की कुसुम मालती भाय ।  
 केशव के सिर पर रहै कै बन माहिँ विलाय ॥४७३॥  
 सब विधि डरियै दुष्ट सौं रहियै जतन समेत ।  
 शंभु सुधाकर सिर धर्यो विष विषधर के हेत ॥४७४॥  
 खाय न खचैं सूम धन चोर सबै ले जाय ।  
 पीछै ज्यों मधु मच्छिका हाथ मलै पछिताय ॥४७५॥  
 जगत बहुत जन तदपि मन बिन सज्जन अति दीन ।  
 ससि तारा निस हैं तऊ रवि बिन नलिन मलीन ॥४७६॥  
 कोऊ कहै न जानियै जोतिवंत सुनि कोय ।  
 हाथ दिया लै देखियै ऐसी आग न होय ॥४७७॥  
 खल निज दोष न देखई पर के दोषहि लागि ।  
 लखै न पग तर सब लखै परबत बरती आग ॥४७८॥  
 जैसौ जैसौ अधिक गुन तैसौ होय मिलाय ।  
 अहि-उर विष गल अनल चख शिव ससि सीस बसाय ॥४७९॥

भागहीन कौ देवहू देत सु लेत बनै न ।  
 दीठ परै जहँ बस्तु तहँ चलै मूंद कै नैन ॥४८०॥  
 दिवस भले बिगरै न कछु रहै निचीतै सोय ।  
 आवै चोरी करन कौ चोर आंधरै होय ॥४८१॥  
 दान दीन कौ दीजियै मिटै दरिद की पीर ।  
 औषध ताकौ दीजियै जाके रोग शरीर ॥४८२॥  
 सबसौं आगे होय कै कबहुँ न करियै बात ।  
 सुधरै काज समाज फल बिगरै गारी खात ॥४८३॥  
 आवत समै विपत्ति के मित्र शत्रु है जाय ।  
 दुहत होत बछ बँधन कौ थंभ मातु कौ पाय ॥४८४॥  
 उत्तम विद्या लीजियै जदपि नीच पै होय ।  
 परयो अपावन ठौर कौ कंचन तजत न कोय ॥४८५॥  
 निहचै कारन विपत कौ किँ प्रीति अरि संग ।  
 मृग के सुख मृगराज को होत कबहुँ अँग-भंग ॥४८६॥  
 जौ घर आवत शत्रु हू सजन देत सुख चाहि ।  
 ब्यौ काटै तरु-मूल कोउ छाँह करत रह ताहि ॥४८७॥  
 ताकौ बुरौ न ताकियै जासौं जग ब्यौसाइ ।  
 छाँह फूल फल देत तरु क्यौं तिहि कटन कराइ ॥४८८॥  
 दुष्ट भाव हिय मुख मधुर तासौं करहु न प्रीति ।  
 भीतर विष पय घट भर्यौ ताहि न छुइ इहि रीति ॥४८९॥  
 दुष्ट न छाँड़ै दुष्टता बढो ठौर हू पाय ।  
 जैसैं तजत न श्यामता विष शिव कंठ बसाय ॥४९०॥  
 बिन उद्यम मसलत कियै कारज सिद्ध न ठाय ।  
 रोग न जानत औषधो जानै जाइ जो खाय ॥४९१॥  
 नृप अनीति के दोष तै चूकै मंत्र प्रयोग ।  
 करै कुपथ ता पुरुष कौ उपजै क्यौं नहि रोग ॥४९२॥

कहा करै आगम निगम जो मूरख समझै न ।  
 दरपन कौ नहिँ दोष कछु अंध वदन देखै न ॥४८३॥  
 दया दुष्ट कौ चित्त मैं कबहुँ उपजत नाहिँ ।  
 हिंसा छोड़ी सिंह यह क्यों आवै मन माहिँ ॥४८४॥  
 प्रीति टुटै हू सजन के मन तैं हेत छूटै न ।  
 कमलनाल कौं तोरियै तदपि सूत टूटै न ॥४८५॥  
 सज्जन के प्रिय बचन तैं तन संताप मिटाय ।  
 जैसेँ चंदन नीर तैं तापन तन कौ जाय ॥४८६॥  
 सजन बचन दुर्जन बचन अंतर बहुत लखाय ।  
 वे सबकौं नीके लगैं वे काहू न सुहाय ॥४८७॥  
 धन अरु गैद जु खेल कौ दोऊ एक सुभाय ।  
 कर में आवत छिनक में छिन में कर तैं जाय ॥४८८॥  
 प्रभु कौं चिंता सबन की आपु न करियै नाहिँ ।  
 जनम अगाऊ भरत है दूध मात थन माहिँ ॥४८९॥  
 धन अरु जोवन कौ गरब कबहुँ करिए नाहिँ ।  
 देखत ही मिट जात है ज्यों बादर की छाँह ॥५००॥  
 नृपति चोर जल अनल तैं धनि कौ भय उपजाय ।  
 जल थल नभ में मांस कौं भख केहरि खग खाय ॥५०१॥  
 बड़े बड़े कौं बिपति तैं निहचै लेत उबारि ।  
 व्योँ हाथी कौं कीच तैं हाथी लेत निकाारि ॥५०२॥  
 बड़े कष्ट हू जे बड़े करें उचित ही काज ।  
 स्थार निकट तजि खोज कै सिंह हनै गजराज ॥५०३॥  
 जिहिँ जेतौ उनमान तिहिँ तेतौ रिजक मिलाय ।  
 कन कीड़ी कूकर दुकर मन भर हाथी खाय ॥५०४॥  
 बहु गुन श्रम तैं उच्च पद तनक दोष तैं पात ।  
 नीठ चढ़ै गिरि पर सिला टारत ही दुरि जात ॥५०५॥



छोटे अरि कौं साधियै छोटी करि उपचार ।  
मरै न मूसा सिंह तैं मारै ताहि मँजार ॥५०६॥  
बड़े बड़े सौं रिस करै छोटे सौं न रिसाय ।  
तरु कठोर तोरै पवन कोमल तृन वच जाय ॥५०७॥  
सेवक सोई जानियै रहै बिपति में संग ।  
तन-छाया ज्यों धूप में रहै साथ इकरंग ॥५०८॥  
बुरौ तऊ लागत भलौ भली ठौर पै लीन ।  
तिय नैननि नीकौ लगै काजर जदपि मलीन ॥५०९॥  
जोरावर हू कौ कियौ विधि बस करन इलाज ।  
दोष तमहि अंकुस गजहि जलनिधि तरनि इलाज ॥५१०॥  
दुष्ट रहै जा ठौर पर ताकौ करै बिगार ।  
आगि जहाँ ही राखियै जारि करै तिहिँ छार ॥५११॥  
बिना तेज के पुरुष की अवसि अवज्ञा होय ।  
आगि बुझै ज्यों राख कौं आनि छुवै सब कोय ॥५१२॥  
पाय प्रकृति बस कीजियै करि बुधि बचन विवेक ।  
लष्ट पुष्ट सौं एक कौं जष्ट मुष्ट सौं एक ॥५१३॥  
नेह करति तिय नीच सौं धन किरपन घर माहिँ ।  
बरसै मेह पहार पै कै ऊसर बरसाहिँ ॥५१४॥  
जहाँ रहै गुनवंत नर ताकी सोभा होत ।  
जहाँ धरै दीपक तहाँ निहचै करै उदेत ॥५१५॥  
खाली तजि पूरन पुरुष जिहिँ सब आदर देत ।  
रीतौ कुवाँ उसारियै ऐंच भरगौ घट लेत ॥५१६॥  
सब आसान उपाय तैं तुरत फुरत फल देत ।  
मथि अरुनी अरु काठ ज्यों आगि प्रगटि करि लेत ॥५१७॥  
जाकी प्रापति होय सो मिलै आप तैं आय ।  
पाले पोषे खग बचन देहै कहा कमाय ॥५१८॥

खल सज्जन सूचीन के भाग दुहुँ सम भाय ।  
 निगुन प्रकासै छिद्र कौ सगुन सु ढांपत जाय ॥५१८॥  
 तुला सुई की तुल्यता रीति सज्जन की दोठि ।  
 गरुवे दिस नै जाति है हरुवे कौ दै पीठि ॥५२०॥  
 भले बुरे सौं एक सी मूढ़नि की परतीति ।  
 गुंजा सम तोलत कनक तुला पला की रीति ॥५२१॥  
 जिहिँ दिसि भय तिहिँ दिसि कबहुँ ना जैयै करि चोज ।  
 गज तिहिँ मग पग ना धरै जहां सिंह कौ खोज ॥५२२॥  
 सिद्धि होत कारज सवै जाके जिय बिस्वास ।  
 पूजत ऐपन कौ हथा तिय जिय पूरै आस ॥५२३॥  
 बहुत द्रव्य संचै जहां चोर राज भय होय ।  
 कांसे ऊपर बीजुरी परति कहैं सब कोय ॥५२४॥  
 जानि वृष्णि झजगुत करै तासौं कहा बसाय ।  
 जागत ही सोवत रहै तिहिँ को सकै जगाय ॥५२५॥  
 जहँ तहँ सज्जन मिलै नहिँ गुन गरुवे जग माहिँ ।  
 जोति भरे धानिप भरे प्रति गज मुक्ता नाहिँ ॥५२६॥  
 विद्या विन न विराजहीं जदपि सरूप कुलीन ।  
 ज्यौं सोभा पावै नहीं टेसू बास विहीन ॥५२७॥  
 एकहि भले सुपुत्र तैं सख कुल भलौ कहाय ।  
 सरस सुवासित वृत्त तैं ज्यौं बन सकल बसाय ॥५२८॥  
 गुरुमुख पढ़यो न कहतु है पोथी अर्थ विचारि ।  
 सो सोभा पावै नहीं जार गर्भजुत नारि ॥५२९॥  
 जाकौं बुधिवल होत है ताहि न रिपु कौ त्रासु ।  
 धन वूँदै कह करि सकैं सिर पर छतना जासु ॥५३०॥  
 क्षमा खड्ग लीने रहै खल कौ कहा बसाय ।  
 अग्नि परी तृन रहित थल आपहि तैं बुझि जाय ॥५३१॥

एकै थल विश्राम कौ ताकौ तजि कहँ जाय ।  
 ज्यों पंछी सुजहाज कौ उड़ि उड़ि तहां बसाय ॥५३२॥  
 जिहिँ जैसो अपराध तिहिँ तैसौ दंड बखानि ।  
 थाप ककरिया-चोर कौ धन-चोरहि जिय हानि ॥५३३॥  
 ओछे नर के पेट में रहै न मोटी बात ।  
 आध सेर के पात्र में कैसैं सेर समात ॥५३४॥  
 चलिए पैंडे सांव को साई सांव सुहाय ।  
 सांचौ जरै न आग तैं भूठी ही जरि जाय ॥५३५॥  
 गूढ़ मंत्र जौ लौं रहै कँ जु मिलि जन देय ।  
 भई छकानी बात तब जानि जात सब बोय ॥५३६॥  
 गूढ़ मंत्र गरुवे बिना कोऊ राखि सकै न ।  
 धातु पात्र विन और में बाधिन दूध रहै न ॥५३७॥  
 बहुत जु बीते तनक धन संचै सजन करै न ।  
 मनन हानि ऊपज तहां कन कन कबहुँ भरै न ॥५३८॥  
 भिरत भार सब तैं उतरि गिरही पर ठहरात ।  
 नीर निवानहि पाइयै ज्यों बीते बरसात ॥५३९॥  
 सील करम कुल श्रुत चतुर पुरुष परिच्छा जान ।  
 ताड़न छेदन कस तपन इन तैं कनक पिछान ॥५४०॥  
 जो पै जैसे होय तिहिँ हित सौ मिलिहै आय ।  
 गांठी चोरा चोर कौ साहै साह मिलाय ॥५४१॥  
 कबहुँ रन बिमुखी भयौ तउ फिर लरै सिपाह ।  
 कहा भयौ काहू समै भाग्यौ तऊ बराह ॥५४२॥  
 कबहुँ प्रीति न जोरियै जोरि तोरियै नाहिँ ।  
 ज्यों तोरै जोरै बहुरि गांठ परति गुन माहिँ ॥५४३॥  
 अंतर तनक न राखियै जहां प्रीति बिबहार ।  
 उर सौँ उर लागै न तहँ जहाँ रहतु है हार ॥५४४॥

निरेखत पलक न मारियै सज्जन मुख की ओर ।  
 उदय अस्त लौं एकटक चितवत चंद चकोर ॥५४५॥  
 सेवक साहिब को बढ़ै बढ़ै बढ़ाई ओज ।  
 जेतौ गहरौ जल बढ़ै तेतौ बढ़ै सरोज ॥५४६॥  
 ओछे नर को चित्त में प्रेम न पूर्यौ जाय ।  
 जैसे सागर को सलिल गागरि में न समाय ॥५४७॥  
 जे न होय दृढ़ चित्त के तहां न रहै सटेक ।  
 ज्यों काचे घट में सलिल नहिं ठहरतु छिन एक ॥५४८॥  
 रस पोषै बिनहीं रसिक रस उपजावत संत ।  
 बिन बरसै सरसै रहै जैसे बिटप बसंत ॥५४९॥  
 मन भावन के मिलन कौं सुख कौ नाहिन छोर ।  
 बोलि उठै नचि नचि उठै मोर सुनत घन घोर ॥५५०॥  
 बिरही जन के चित्त कौं नाहिं रहतु बुधि बोध ।  
 धिर चर कौं ब्रूत फिरै राघव सीता सोध ॥५५१॥  
 जहां सजन तहँ प्रीति है प्रीति तहां सुख ठौर ।  
 जहां पुष्प तहँ वास है जहां वास तहँ भौर ॥५५२॥  
 जो प्राणी परवंस पर्यौ सो दुख सहत अपार ।  
 जूथ बिछोही गज सहै बंधन अंकुस मार ॥५५३॥  
 गुनी होय श्रम कष्ट करि लहै राज-दरबार ।  
 बोध बंध मुक्ता सहै तब उर-हार बिहार ॥५५४॥  
 मन प्रसन्न तन चैन जहँ स्वेच्छाचार विचार ।  
 संग मृगी मृग सुख सबै बन बसि तन आहार ॥५५५॥  
 रहनहार जाइ न बसत तदपि जतन बिबहार ।  
 देखौ सब को देखियै काहे द्वार किवार ॥५५६॥  
 है पासे के दाव पर कहां जीत कहँ हारि ।  
 सारि उठै यों चौकसी छक पौ उठै न सारि ॥५५७॥

सबको व्याकुल करति है एक जठर की आगि ।  
 परै किलकिला जलधि मधि जल जलचर डर त्यागि ॥५५८॥  
 उदर भरन के कारनै प्राणी करत इलाज ।  
 नाचै बांचै रन भिरै रांचै काज अकाज ॥५५९॥  
 दुरभर उदर न दीन कौ होत न तन संताप ।  
 तौ जन जन कौ को सहत तरजन गरजन ताप ॥५६०॥  
 उदर धरन नर तैं भलौ राह उदर तैं हीन ।  
 कबहुं नाहिन होतु है जन जन कौ आधीन ॥५६१॥  
 करी उदर दुरभरन भय हर अरधंगी दार ।  
 जौ न होय तौ क्यों रहै अब लौ तनय कुमार ॥५६२॥  
 भरत पेट नट निरत कै डरत न करत उपाय ।  
 धरत बरत पर पायँ अरु परत वरत लपटाय ॥५६३॥  
 एक एक कौ शत्रु है जो जातैं बलवंत ।  
 जलहि अनल अनलहि पवन सरप जु पवन अखंत ॥५६४॥  
 एक एक तैं देखियै अधिक अधिक बलवंत ।  
 सेस धराधर गिर धरै गिरधर हरि भगवंत ॥५६५॥  
 देत न प्रभु कछु बिन दियै दियै देत यह बात ।  
 लै तंदुल धन दुजहि मुनि त्रिपत किए भखि पात ॥५६६॥  
 यथाशक्ति ही दै सकै जो कुछ जाके पास ।  
 ब्राह्मन कन चावर दिए श्रीपति धन आवास ॥५६७॥  
 जोरावर कौं होति है सबके सिर पर राह ।  
 हरि रुक्मनि हरि लै गयो देखत रहे सिपाह ॥५६८॥  
 अगम पंथ है प्रेम कौ जहां ठकुरई नाहिं ।  
 गोपिन के पीछें फिरे त्रिभुवनपति बन माहिं ॥५६९॥  
 बचन रचन कापुरुष के कहे न छिन ठहराय ।  
 ज्यों कर पद मुख कछप के निकसि निकसि दुर जाय ॥५७०॥

कबहुं भूठी बात कौ जो करिहै पछपात ।  
 भूठे सँग भूठौ परत फिर पाछै पछतात ॥५७१॥  
 कुल कुपुत्र किहिँ काम कौ तिहिँ सुख सोभा नाहिँ ।  
 ज्यों बकरी के कंठ थन दूध न जल तिहिँ माहिँ ॥५७२॥  
 बिगरनवारी वस्तु कौँ कहौ सुधारै कौन ।  
 डारै पय - औटाय कै मिसरी मोरै नौन ॥५७३॥  
 काहू कौँ हँसियै नहीं हँसी कलह कौ मूल ।  
 हाँसी ही तै' है गयौ कुल कौरव निरमूल ॥५७४॥  
 दुरजन गहत न सजनता जतन करौ किन कोय ।  
 जौ पै जौ कौँ रोपियै कबहुं सालि न होय ॥५७५॥  
 जग परतीति बढ़ाइयै रहियै सांचे होय ।  
 भूठे नर की सांचिहु साखि न मानै कोय ॥५७६॥  
 बड़े बड़ाई के जतन गहँ बिरद की लाज ।  
 भए चतुर्भुज चोर तै' नृप कन्या के काज ॥५७७॥  
 है अयुक्त पै युक्त है करिए वहै प्रमान ।  
 ब्राह्मन सौं गुरु जनन सौं हारे होत बखान ॥५७८॥  
 जाँमें हित सो कीजियै कोऊ कहौ हजार ।  
 छल बल साधि विजै करी पारथ भारथ वार ॥५७९॥  
 सुनियै सबही की कही करियै सहित बिचार ।  
 सर्व लोक राजी रहँ सो कीजै उपचार ॥५८०॥  
 प्रापति के दिन होति है प्रापति बारंबार ।  
 लाभ होतु व्यौपार में आमंत्रन अधिकार ॥५८१॥  
 अपरापति के दिनन में खरच होत अविचार ।  
 घर आवतु है पाहुनौ विन जन लाभ लगार ॥५८२॥  
 दीन धनी आधीन है सीस नवावत नाहिँ ।  
 मान - भंग की भूमि यह पेट दिखावत ताहि ॥५८३॥

रुखे सूखे उदर कौं भरे होतु संतुष्ट ।  
 ये मन लाख करोर के पायै' तुष्ट न दुष्ट ॥५८४॥  
 एक एक के काम कौ रचि राखै जगदीस ।  
 जैसे भरियै पेट कौं निहुरै सब कौं सीस ॥५८५॥  
 भली किए है है बुरी देखौ विधि विपरीत ।  
 भक्ति करी द्विज जमदगनि अर्जुन करी अनीति ॥५८६॥  
 कहे वचन पलटै' नहीं जे सत पुरुष सधीर ।  
 कहत सवै हरिचंद नृप भरो नीच घर नीर ॥५८७॥  
 मति फिर जाय विपत्ति में राव रंक इक रीत ।  
 हेम हिरन पाछै' गए राम गँवाई सीत ॥५८८॥  
 जानहार सो जाय अरु होनहार है आय ।  
 रावन तै' लंका गई बसे विभीषन पाय ॥५८९॥  
 अन उद्यम सुख पाइयै जौ पूरव कृत होय ।  
 दुख कौ उद्यम को करतु पावतु है नर सोय ॥५९०॥  
 प्यारी अन प्यारी लगै समै पाय सब बात ।  
 धूप सुहावै शीत में सो ओषम न सुहात ॥५९१॥  
 जन्मत ही पावै नहीं भली बुरी कोउ बात ।  
 बूझत बूझत पाइयै त्यों त्यों समुझत जात ॥५९२॥  
 भलौ ज्ञान अज्ञान नहिँ है अज्ञान न ज्ञान ।  
 भानु उयौ तौ तम नहीं है तम उयौ न भान ॥५९३॥  
 सत पुरुषनि तैं उतरि कै होत नीच अधिकार ।  
 यह खटकत रवि से असित तम कौ जगत प्रचार ॥५९४॥  
 हरबी गरुवे के हिए ठहरत नाहीं बात ।  
 तुंबी जल में दाबियै ज्यों ऊपर ही आत ॥५९५॥  
 पावत बहुत तलास तै' कर तै' छूटी बात ।  
 आधी में दूटी गुड़ो को जानै कित जात ॥५९६॥

पिय के बिछुरे विरह बस मन न कहूं ठहरात ।  
 धरनि गिरतु बीचहि फिरतु परगौ भँभूरे पात ॥५६७॥  
 होत अधिक गुन निबल पै उपजत बैर निदान ।  
 मृग मृगमद चमरी चमर लेत दुष्ट हत प्रान ॥५६८॥  
 आप तरै तारै अवर काठ नाव चित चाव ।  
 बूढ़ै बोरै अवर कौं ज्यौं पाथर की नाव ॥५६९॥  
 जूवा खेलै होतु है सुख संपति कौ नास ।  
 राज-काज नल तैं छुट्यौ पांडव किय बनवास ॥६००॥  
 सरसुति के भंडार की बड़ी अपूरब बात ।  
 ज्यौं खरचे त्यों त्यों बढ़ै बिन खरचै घटि जात ॥६०१॥  
 यह अनखोही बात पर को न देखि अनखात ।  
 नकटी बूची इक-नयनि पान खाति सुसकात ॥६०२॥  
 देखा देखी करत सब नाहिन तत्त्व विचार ।  
 याकौ यह अनुमान है भेड़ चाल संसार ॥६०३॥  
 काज विगारतु और को इक निज काज सुधारि ।  
 किय मंत्रिनि मिल राज नृप सुरथहि दियौ नकारि ॥६०४॥  
 काज विगारतु आपनौ एक और के काज ।  
 बलहि निवारत नैन की हानि सही कविराज ॥६०५॥  
 एक आपनौ और कौ साधत काज सतोला ।  
 अंगद अपने राम कौ कीनौ सभा सबोल ॥६०६॥  
 एक विगारतु आपनौ और परायौ काज ।  
 रावन कौ अरु आपनौ इंद्रजित कियौ अकाज ॥६०७॥  
 देखत कौ सुंदर लगै दर में कपट विषाद ।  
 इंद्रायन के फलन सम भीतर कटुक सवाद ॥६०८॥  
 विरह पीर व्याकुल भए आयौ प्रीतम गेह ।  
 जैसे आवतु भाग तैं आग लगे पर मेह ॥६०९॥



खरचत खाति न जातु धन औसर कियै अनेक ।  
 जातु पुण्य पूरन भए अरु उपजै अविवेक ॥६१०॥  
 चलै जु पंथ पिपीलिका समुद पार है जाय ।  
 जौ न चलै तौ गरुड़ हू पैंड़हु चलै न पाय ॥६११॥  
 एक एक अक्षर पढ़ै जानै ग्रंथ विचार ।  
 पैंड़ पैंड़ हू चलत जो पहुँचै कोस हजार ॥६१२॥  
 भले बुरे हू सौं करत उपकारी उपकार ।  
 तरवर छाया करत है नीच न ऊँच विचार ॥६१३॥  
 सजन करत उपकार कौ वित मांफिक जग माहिँ ।  
 गहरे गहरी छांह तरु विरले विरली छाहिँ ॥६१४॥  
 बिन देखे जाने परै देखै जहाँ निसान ।  
 दीप धरै धन लाख पर कोर ध्वजा फहिरान ॥६१५॥  
 भले बंस कौ पुरुष सो निहुरे बहु धन पाय ।  
 नवै धनुष सदबंस कौ जिहिँ द्वै कोटि दिखाय ॥६१६॥  
 एक एक सौं लगि रहै अनोदक संबंध ।  
 चेली दामन ज्यों रच्यौ जगत जँजीरा बंध ॥६१७॥  
 नेगी दूर न होतु है यह जानौं तहकीक ।  
 मितत न ज्यों क्यौं हूँ किए ज्यों हाथन की लीक ॥६१८॥  
 चिदानंद घट में बसै बूझत कहां निवास ।  
 ज्यों मृगमद मृगनाभि में द्रुंढत फिरत सुवास ॥६१९॥  
 कै सम सौं कै अधिक सों लरियै करियै वाद ।  
 हारे जीते होतु है दोऊ भाति सवाद ॥६२०॥  
 सज्जन सों रस पोखियै त्यों त्यों बढ़त हुलास ।  
 जेतौ मीठौ वस्तु मैं तेतौ अधिक मिठास ॥६२१॥  
 करियै सभा सुहावतौ मुख तैं बचन प्रकास ।  
 बिन समझे सिसुपाल के वचनन भयौ बिनास ॥६२२॥

जासौं पहुँचि न आइयै तासौं बहसि न ठान ।  
 गई प्रतिष्ठा करन की फिर न वसे पुर आन ॥६२३॥  
 सब काहू की कहत हैं भलो बुरी संसार ।  
 दुरजोधन की दुष्टता विक्रम कौ उपकार ॥६२४॥  
 जोति सरूपी हिय सबै सब शरीर में जोति ।  
 दीपक धरिए ताक में सब घर आभा होति ॥६२५॥  
 वय समान रुचि होति है रुचि प्रमान मन मोद ।  
 बालक खेल सुहावही जोवन विषै विनोद ॥६२६॥  
 दान मान सनमान अरु अपनी अपनी बान ।  
 छोटे छोटी गति कही मोटे मोटी मान ॥६२७॥  
 भले बुरे दोऊ रहै चिरंजीव संसार ।  
 जिनते गुन अरु दोष कौ जान्यौ परतु बिचार ॥६२८॥  
 सरस निरस नर होतु है समय पाय सब कोइ ।  
 दिन में परम प्रकास रवि चंद मंद दुति होइ ॥६२९॥  
 वांके रन तै होतु है बंदनीक सब लोय ।  
 नमत दुतीया चंद कौ पूरन चंद न कोय ॥६३०॥  
 करियै तहँ पैसार जहँ जो जानियै निखार ।  
 चक्रव्यूह अभिमन्यु कौ सुन्यौ सबनि संसार ॥६३१॥  
 अधिक अधिक बल फोरि कै कंस हत्यो ब्रजराज ।  
 चढ़तै चढ़तै मोल ज्यों दरसै बसन बजाज ॥६३२॥  
 परुष वचन तै रोष हित कोमल वचन समाज ।  
 रजक पछारयो कूबरी राखि लई ब्रजराज ॥६३३॥  
 सुदृढ़ सूर नाहिन चलै कायर लगि रन घात ।  
 देवल डिगै न प्रवन तै जैसे ध्वज फहरोत ॥६३४॥  
 मित्र मित्र के काम कौ देतु बिभव करि हेत ।  
 जैसे चंद प्रकास करि रवि-मंडल तै लेत ॥६३५॥

तन धन हूँ मैं लाज को जतन करत जे धीर ।  
 दूक दूक हूँ गिरत पै नहिँ मुख फेरत बीर ॥६३६॥  
 भले बुरे गुर जन बचन लोपत कबहुँ न धीर ।  
 राज-काज को छाड़ि कै चले विपिन रघुवीर ॥६३७॥  
 विपति समय हूँ देत हैं सत पुरुषन के काम ।  
 राज विभीषन को दियो वैसी बिरिया राम ॥६३८॥  
 लोकन के अपवाद को डर करियै दिन-रैन ।  
 रघुपति सीता परिहरी सुनत रजक के वैन ॥६३९॥  
 भले भले विधिना रचे पै सदोष सब कीन ।  
 कामधेनु पसु कठिन मनि दधि खारो ससि छीन ॥६४०॥  
 जैसौ कारन होतु है तैसौ कारज थाप ।  
 कर सर धनु प्राणी हनत कर माला हरि जाप ॥६४१॥  
 इन कौं मानुष जन्म है कहा कियौ भगवान ।  
 सुंदर मुख बोल न सकै है न सकैं धनवान ॥६४२॥  
 कहा कहौ विधि की अविधि भूले परम प्रवीन ।  
 मूरख कौं संपति दर्ई पंडित संपति - हीन ॥६४३॥  
 वह संपति कोहि काम की जन काहु पै होड ।  
 नीठ कमावै कष्ट करि बिलसै औरहि कोड ॥६४४॥  
 नर भूषन सब दिन क्षमा विक्रम अरि घन घेर ।  
 ज्यों तिय भूषन लाज है निलज सुरति की बेर ॥६४५॥  
 र्यो निबाह सब जगत कौ रस रिस हेत अहेत ।  
 एक एक पै लेत है एक एक कौ देत ॥६४६॥  
 एन हूँ तैं अरु तूल तैं हरवौ जाचक आहि ।  
 जानतु है कछु मांगिहै पवन उड़ावत नाहि ॥६४७॥  
 नृप गुरु तिय बनिह सेइयै मध्य भाग जग माहि ।  
 है बिनास अति निकट तैं दूर रहै फल नाहि ॥६४८॥

देखत है जग जातु है तउ ममता सौं मेल ।  
 जानतु हीं या जगत में देखत भूलो खेल ॥६४८॥  
 भले बुराई तैं डरैं राख्यौ चाहै सोय ।  
 जानत है पै दुष्ट के अवगुन कहत न कोय ॥६५०॥  
 गुन तैं अवगुन होतु हैं लिखे मिटत नहिँ अंक ।  
 बढ़ति जात ज्यों ज्यों कला त्यों त्यों ससि सकलंक ॥६५१॥  
 निस दिन खटकत तनक तन परै जु आंखनि माहिँ ।  
 तिनमें सजन राखिए सो छिन खटकतु नाहिँ ॥६५२॥  
 सजन बचावत कष्ट तैं रहैं निरंतर साथ ।  
 नैन सहाई ज्यों पलक देह सहाई हाथ ॥६५३॥  
 धनी होत निरधन बहुर निरधन तैं धनवान ।  
 बड़ी होति निस सीत ऋतु ज्यों प्रोषम दिन-मान ॥६५४॥  
 सबही कुल में होत है एक एक सरदार ।  
 गज ऐरावत सुर सुरिंद तरुवर में मंदार ॥६५५॥  
 जहां सनेही तहँ रहत भ्रमत भ्रमत मन आय ।  
 फिरत कटोरी मंत्र की चोरहि पै ठहराय ॥६५६॥  
 प्रान पियारे के दरस हिय तैं बढ़त हुलास ।  
 फैलत लगै बयार तैं ज्यों फूलन में बास ॥६५७॥  
 सुनत स्रवन पिय के वचन हिय विकसै हित पागि ।  
 ज्यों कदंब धरषा समय फूलति बृंदनि लागि ॥६५८॥  
 ज्यों ज्यों छुटै अयानपन त्यों त्यों प्रेम प्रकास ।  
 जैसे कैरी आंब की पकरत पकै मिठास ॥६५९॥  
 चोरा चोरी प्रीति के कीने बढ़त हुलास ।  
 अति खाए उपजै अरुचि थोरी बात मिठास ॥६६०॥  
 नीति अनीति बड़े सहैं रिस भरि देत न गारि ।  
 भृगु उर दीनी लात की कीनी हरि मनुहारि ॥६६१॥

रहै न कबहुँ दोय लखि एक सदन के माहिँ ।  
 एक म्यान में है छुरी जैसे मावैं नाहिँ ॥६६२॥  
 परधन लेत छिनाय इक इक धन देत हसंत ।  
 सिसर करतु पतभार तरु गहरे करत वसंत ॥६६३॥  
 जो न परत किहि बात मैं तिहिँ मनुहारि न गारि ।  
 ऐसो खेल न खेलिए जामैं जीति न हारि ॥६६४॥  
 गहत तत्त्व ज्ञानी पुरुष बात विचार विचार ।  
 मथनिहारि तजि छाछ कौं माखन लेत निकारि ॥६६५॥  
 मात पिता के पक्ष के पुरुषहि प्रगट प्रभाव ।  
 जामदग्नि में देखिए सम रस वीर सुभाव ॥६६६॥  
 गुरु बच जोग अजोगहू करिए भ्रम विसराय ।  
 राम राज सुख छाड़िकै बनवासी भए जाय ॥६६७॥  
 ओछी मति युवतीन की कहैं विवेक भुलाय ।  
 दशरथ रानी के बचन बन पठए रघुराय ॥६६८॥  
 पूजनीक गुन तैं पुरुष दरसन पूज न होय ।  
 यज्ञ तिलक किय कृष्ण कौं छांडि बड़े सब कोय ॥६६९॥  
 स्रवन करी ल्यौं कीजिए मात पिता की सेव ।  
 कांधे कांवरि लै फिर्यौ पूजे जैसें देव ॥६७०॥  
 बड़े जिती लघुता करें तिती बड़ाई पाय ।  
 काम करें सब जगत के तातैं त्रिभुवनराय ॥६७१॥  
 अरि को कर मैं दोजियै अवसर कौ अधिकार ।  
 ज्यौं ज्यौं द्रव्य लुटाइयै त्यों त्यों जस बिस्तार ॥६७२॥  
 जो लायक जिहि होय सो ताही ठौर मनोग्य ।  
 चंदेरीपति क्यों बरै रुक्मिनि श्री हरि जोग्य ॥६७३॥  
 घन घेरे को मिलन सुख होत भरोसौ नाहिँ ।  
 होय न होवै चांदनी जैसे पावस माहिँ ॥६७४॥

बड़े भले सब लच्छ तै नहिँ बिन लछ के जोग ।  
 राम लखन धनु धरि बिपिन कहव पारखी लोग ॥६७५॥  
 ता बिनु होय न काज सिधि जासौं लागी बात ।  
 गुंड बिनु होत न चौथ व्रत दूलह बिना वरात ॥६७६॥  
 प्रभु सौं बात दुरी न तउ करियै अरज मुखेन ।  
 रुक्मिनि आतुरता लिखी हरि कहा जानत हे न ॥६७७॥  
 कठिन कला हू आइहै करत करत अभ्यास ।  
 नट ज्यौं चालतु बरत पर साधै बरस छ मास ॥६७८॥  
 जहँ उपजै सोई करै जिहिँ कुल जो अभ्यास ।  
 छोटे मच्छहु जल तिरैं पंछी उड़ैं अकास ॥६७९॥  
 विद्या लक्ष्मी पुरुष पै होय नहीं इक ठाय ।  
 नाहिन दुख सुख सौति में पिय पै एकहि जाय ॥६८०॥  
 गुन प्रगटै अवगुन दुरै जाके कमला साथ ।  
 तिय मारी परिहरी तउ कृष्ण त्रिलोकी-नाथ ॥६८१॥  
 मिलै दियो पूरव जनम न दिए मिले न सोइ ।  
 कौन सयाने धन कियौ किहिँ अयान दियौ खोइ ॥६८२॥  
 जाको न्यौत जिमाइयै ताही की मनुहारि ।  
 परनै सोई गाइयै बचन सुधारि सुधारि ॥६८३॥  
 निरस बात सोई सरस जहां होय हिय हेत ।  
 गारी हू प्यारी लगै ज्यौं ज्यौं समधिन हेत ॥६८४॥  
 जो जिहिँ कारज में कुसल सो तिहिँ भेद प्रवीन ।  
 नद-प्रवाह मैं गज वहै चढ़ै उलट लघु मीन ॥६८५॥  
 जो जैसौ तिहँ तैसियै करियै नीति प्रकास ।  
 काठ कठिन भेदै भ्रमर मृदु अरविंद निवास ॥६८६॥  
 इन लच्छन तैं जानियै उर अज्ञान निवास ।  
 ऊँघै कथा पुरान सुनि बिकथा सुनै हुलास ॥६८७॥

उर उछाव हित धरम सौं असुभ करम की हानि ।  
 मन प्रसन्न रुचि अन्न सौं ज्यौं ज्वर छूटै जानि ॥६८८॥  
 जपत एक हरि नाम तैं पातक कोटि बिलाय ।  
 एकहि कनिका आगि तैं घास ढेर जरि जाय ॥६८९॥  
 जो समरथ सब बात में तिहि भजिए तजि संक ।  
 करै रंक तैं राव हरि करौ राव तैं रंक ॥६९०॥  
 गर्व-प्रहारी हरि सही या मैं नहिं संदेह ।  
 जरे लंक के लाख ब्यों लाख लाख के गेह ॥६९१॥  
 कहा बड़े छोटे कहा जहँ हित तहँ चित लागि ।  
 हरि भोजन किए बिदुर घर दुरजोधन कूं त्यागि ॥६९२॥  
 परजन सो मनसौ करै परहरि हरि सौं प्रीति ।  
 भूँठे सौं मानैं हरष अहो जगत विपरीति ॥६९३॥  
 अहै अवधि अविबेक की देखि कौन अनखाय ।  
 काग कनक के पांजरा हंस अनादर भाय ॥६९४॥  
 मूरख कौं हित के वचन सुनि उपजतु है कोप ।  
 सांपहि दूध पिवाइयै वाके मुख विष ओप ॥६९५॥  
 गुन गरुवा लघुता गहै तिहिं सनमानत धीर ।  
 मंद तऊ प्यारो लगै सीतल सुरभि समीर ॥६९६॥  
 बड़ी ठौर को लघु लहै आय आदर भाय ।  
 मलयाचल की ज्यौं पवन परसै मंद सुहाय ॥६९७॥  
 महिमा युत को देत ही लेत न तन सकुचाय ।  
 लेत भात जगनाथ को नृपहु सीस चढ़ाय ॥६९८॥  
 धन पूरन धनवान पै बिन दीने न लहात ।  
 ज्यौं बिन बरषै सघन जल लियौ पियौ नहिं जात ॥६९९॥  
 इक बिन मांगे ही लहै मांगे एक लहै न ।  
 धन जल सर सरिता भरै चातक चोच भरै न ॥७००॥

बड़ेन की संपत्ति सबै लघु विलसंत अनंत ।  
 दधि जल घन घन जल धरा धर जल जग विलसंत ॥७०१॥  
 जिहि जेतो निहचै तितौ देत दई पहुँचाय ।  
 सकर खोरे को मिलै जैसेँ सकर आय ॥७०२॥  
 जिय संतोष विचारियै होय जु लिख्यौ नसीब ।  
 खल गुर काच कधीर सौँ मानत रली गरीब ॥७०३॥  
 जथाजोग सब मिलत है जो बिधि लिख्यौ अँकूर ।  
 खल गुर भोग गवारनी रानी पान कपूर ॥७०४॥  
 समय सार दोहानि को सुनत होय मनमोद ।  
 प्रगट भई यह सतसई भाषा वृंद विनोद ॥७०५॥  
 संवत ससि रस बार ससि कातिक सुदि ससि चार ।  
 सातैं ढाका सहर में उपज्यौ इहै विचार ॥७०६॥





## (७) विक्रम-सतसई

कूल कलिंदी नीप तर सोहत अति अभिराम ।  
 यह छवि मेरे मन बसो निसि दिन स्यामा स्याम ॥ १ ॥  
 राधापति हिय मैं धरौ राधापति मुख बैन ।  
 राधापति नैनन लहौ राधापति सुख दैन ॥ २ ॥  
 मनमोहन मन मैं बसौ हृषीकेस हिय आहि ।  
 कमलनैन नैननि बसौ मुरलीधर मुख माहि ॥ ३ ॥  
 है प्रचंड अति पौन तैं रुकत नहीं मन मंद ।  
 जौ लौं नार्हीं कृपा कर बरजत हैं ब्रजचंद ॥ ४ ॥  
 आधि अगाधा व्याधि हरि हरि-राधा जप सोइ ।  
 साधि समाधा सिव कछौ बाधा-बाधक होइ ॥ ५ ॥  
 बृंदावन राजें दुवौ साजें सुख के साज ।  
 महरानी राधा उतै महाराज ब्रजराज ॥ ६ ॥  
 विहरत बृंदा - विपिन मैं गोपिन संग गोपाल ।  
 विक्रम हदै सदा बसौ इहि छवि सौं नंदलाल ॥ ७ ॥  
 सुरतरु तैं बुधि कृत बिनै हत दित तनै सजेर ।  
 करुनामय भव - भय - हरन जै जै जुगल - किसोर ॥ ८ ॥  
 मोहन लखि छवि परसपर चंचल चख चित चोर ।  
 मंजु मालती - कुंज मैं बिहरत नंदकिसोर ॥ ९ ॥  
 फिरि फिरि राधा-कृष्ण कहि फिरि फिरि ध्यान लगाइ ।  
 फिरिहौ कुंजन बे-फिकिर कब बृंदावन जाइ ॥ १० ॥  
 मेरी करुना की अरज दीनबंधु सुनि कान ।  
 ना तर करुनाकर तुम्हें कैहै कहा जहान ॥ ११ ॥

हैं चेरौ तेरौ भयौ तापर पेरौ कर्म ।  
 कहा हमारी दासता कह प्रभुता कौ धर्म ॥ १२ ॥  
 करुना उर मैं धारि प्रभु वेग सुधारहु काज ।  
 ना तर करुनाकर - बिरद छाँड़ि देहु ब्रजराज ॥ १३ ॥  
 चंद सूर जाके हुकुम निस दिन आवहिँ जाहिँ ।  
 सुति साके जाके कहत विक्रम ताके आहि ॥ १४ ॥  
 करुना - कोर किसोर की रोर - हरन बरजोर ।  
 अष्ट सिद्धि नव निद्धि जुत करत समृद्ध करोर ॥ १५ ॥  
 नाड जाजरी धार मैं अदफर भौर भुलान ।  
 जदुपति पार लगाइए मोहिँ अपनेो जन जान ॥ १६ ॥  
 व्रन समान बज्रहि करत व्रन कहँ वज्र समान ।  
 नंद - नंद जग-बंद प्रभु औठर - ठरन अमान ॥ १७ ॥  
 नदी - नीर तीछन बहै मेघ - बृष्टि अति घोर ।  
 हरि बिनु को पारहि करै लै नैया बरजोर ॥ १८ ॥  
 मेरी दीरघ दीनता दयासिंधु दिल देव ।  
 प्रभु गुन - आला जानि कै बालापन तै सेव ॥ १९ ॥  
 प्रनत - पाल - बिरदावली राखी आनि जहान ।  
 अब मम बार अबार कत कीजत कृपानिधान ॥ २० ॥  
 कै तुव कान परी नहीं दीनबंधु मम टेर ।  
 चार जुगन सुनि चारि भुज लगी न एती देर ॥ २१ ॥  
 दीनबंधु है दीन की जौ तुम नहिँ सुघ लेत ।  
 नाम कियो इमि प्रगट किमि दीनबंधु केहि हेत ॥ २२ ॥  
 निज सुभाय छोड़त नहीं कर देखौ हिय गौर ।  
 अधम - उधारन नाम तुव हैं अधमन - सिरमौर ॥ २३ ॥  
 तेरौ तेरौ हैं कहत दूजो नहीं सहाइ ।  
 कहिबी बिरद सम्हार अब विक्रम मेरो आहि ॥ २४ ॥

हैं। चेरौ ब्रजराज कौ जानत सकल जहान ।  
 मेरौ कहत न चूकबी अधम-उधारन-वान ॥ २५ ॥  
 दीनबंधु तुम दीन हैं यह नातो उर लेख ।  
 है कृपाल सुन लीजिए विक्रम विनय विशेष ॥ २६ ॥  
 भूलि तजत हैं भूल नहिँ यहै भूलि कौ देस ।  
 तुम जिन भूलौ नाथ मम राखहु सुरत हमेस ॥ २७ ॥  
 भू भारे तारे पतित गनि हारे छुति सेष ।  
 हिय द्वारै कत जात अब तिहि गिनती मुहि लेख ॥ २८ ॥  
 समुक्ति समुक्ति गुन आपुनै अपडर हिए सकाव ।  
 सुनि सुनि प्रभु तेरै गुननि तुव खातर कै जात ॥ २९ ॥  
 नभ तारे तारे जिते कहत निगम हरषात ।  
 अब प्रभु बिक्रम ओर कौ हिय हारे कत जात ॥ ३० ॥  
 जरतारी मुख पै सरस सारी सोहत सेत ।  
 सरद जलद भिद जलज पर सहज किरन छवि देत ॥ ३१ ॥  
 सोहत गोल कपोल पर हृद रद-छद-छवि बेस ।  
 जनु कंचन के नगन में मानिक जड़े सुदेस ॥ ३२ ॥  
 नूपुर के ऊपर बढ़ी कहत न बनत सिताव ।  
 छीन लई गुलफन मनौ गुल गुलाब की आव ॥ ३३ ॥  
 गोरी की रोरी लसत थोरी आड़ लिलार ।  
 मनौ चंद ऊपर लसत इंद्रबधू सुकुमार ॥ ३४ ॥  
 स्याम वसन पहिरत बढ़ी तिय-तन में अति आव ।  
 मनौ सघन घन घटा नै लई छटा छिन दाव ॥ ३५ ॥  
 सोहत सघन सिवार सैं निज कर बिब तरवार ।  
 मनौ कमल मुकलित ललित छयौ सघन तिमिधार ॥ ३६ ॥  
 तरल तरौना पर लसत बिथुरे सुथरे केस ।  
 मनौ सघन तमतौम नै लीनो दाव दिनेस ॥ ३७ ॥

सेत कंचुकी मैं लसत राते कुच गरकाव ।  
 मनौ काच सीसीनि मैं भलकत साफ सहाव ॥ ३८ ॥  
 लाल साल बिच बाल कौ भलकत बदन अमंद ।  
 मनौ सांभ बदरान तैं निकस्यो राका चंद ॥ ३९ ॥  
 मुख उधारि प्रासाद तैं चली सुघर गति मंद ।  
 जनु अकास तैं अवनि पै आवत राका चंद ॥ ४० ॥  
 आलस-जुत लखि अधखुले प्रात नयन अभिराम ।  
 मनहु अपूरब कमल जुग बिगसे पूरब जाम ॥ ४१ ॥  
 नील बसन दरसत दुरत गोरी गोरे गात ।  
 मनौ घटा छन रुचि छटा घन उधरत छपि जात ॥ ४२ ॥  
 मृगनैनी बेनी निरख छबि छहरत बरजोर ।  
 कनकलता जनु पन्नगी बिलसत कला करोर ॥ ४३ ॥  
 सोहत अलक कपोल पर बढ़ छबि-सिंधु अथाह ।  
 मनौ पारसी हरफ इक लसत आरसी माह ॥ ४४ ॥  
 तिरछैहिँ करि करि दृगनि चितई भौह चढ़ाइ ।  
 मनौ मैन जग विजय कौ खँच्यौ धनु हरषाइ ॥ ४५ ॥  
 अरुनाई एड़ोन की भलकत गहक गँभीर ।  
 मनहु काच सीसीनि मैं भलकत जावक-नीर ॥ ४६ ॥  
 मोतिन मांग भरी खरी सोहत छबि बरजोर ।  
 मनौ कलानिधि किरन इक घसी निविड़ तम घोर ॥ ४७ ॥  
 काजर - रेख अशेष दृग छबि दरसत पट भीन ।  
 नागफाँस बांधे मदन जनु चंचल जुग मीन ॥ ४८ ॥  
 पाटी लखि तरुनी जुगल लखियत आभा सोइ ।  
 ससि - मंडल ऊपर उमड़ उठो घटा जनु दोइ ॥ ४९ ॥  
 सोहत जड़ित जराय के तरल तरौना कान ।  
 मानहु परसत भानु जुग ससि मंडल कौ आन ॥ ५० ॥

हरुए कर छूवत बज्यौ विछिया छवि सरसात ।  
 बँध्यौ कोकनद कोस जनु गुंज उठ्यौ अलि प्रात ॥ ५१ ॥  
 कनक दंड जुग जंघ तुव लखियत आभा ऐन ।  
 धर जोवन खर सान पर मनौ खरादे मैन ॥ ५२ ॥  
 कनक तरौना तरुन के सोहत ऊपर पान ।  
 मनमथ के रथ पर लसत फहरत मनौ निसान ॥ ५३ ॥  
 कर परसत ससकत खरी रोवत दृग अकुलात ।  
 जनु खंजन धोखे चुने मोती उगलत जात ॥ ५४ ॥  
 तरुन तिहारो देखियतु यह तिल ललित कपोल ।  
 मनौ बदन-विधु गोद में रविसुत करत कलोल ॥ ५५ ॥  
 राते पट विच कुच-कलस लसत मनोहर आव ।  
 भरे गुलाब सराब सौ मनौ मनोज नवाब ॥ ५६ ॥  
 नूपुर राजत रजत के वजत मधुर धुनि लाल ।  
 जनु पग पिंजर चहचहे चहचर करत मराल ॥ ५७ ॥  
 आनन हैं स्रम-स्वेद-कन परसत उदित डरोज ।  
 मानौ मोतिन संभु जुग पूजत सुदित सरोज ॥ ५८ ॥  
 गोरे मुख चूनर हरी अति छवि बढ़ी बिसाल ।  
 हरित भूमि बगरी मनौ इंदुबधूटी लाल ॥ ५९ ॥  
 मृगनैनी की पीठ पर बेनी लसत सुदेस ।  
 कनकलता पर जनु चढ़ी स्याम भुजंगिनि बेस ॥ ६० ॥  
 कहा कलानिधि कमल कह अमल लसत मुख बेस ।  
 खौर भौर अहि-सुतन से सोहत कुंचित केस ॥ ६१ ॥  
 पिय प्रानन की प्रान तूं तुव प्रिय प्रानन प्रान ।  
 जान परत गुनवान अब हित चित के अनुमान ॥ ६२ ॥  
 तुव तन निरखत पिय प्रिया क्यों कहि सकै सिताब ।  
 आफताब की ताब कहँ कहँ गुलाब महताब ॥ ६३ ॥

हार दयौ पिय पहिर कै हार दयौ निसि चंद ।  
 हुलसत बिलसत सपनि मैं बिलसत लसत अमंद ॥ ६४ ॥  
 दर्ई पिया जो सतलरी सो सतलरी समान ।  
 सौत देखि अति हिय जरी मुदित नई सुखदान ॥ ६५ ॥  
 गति गयंद कटि केहरी श्रीफल उरज उत्तंग ।  
 बदन चंद दृग भख जितौ भौहैं धनुष अनंग ॥ ६६ ॥  
 कै रंभा कै उरबसी कै तिलोत्तमा नाम ।  
 किधौ काम की कामिनी किधौ बाम अभिराम ॥ ६७ ॥  
 क्यों नख - छत छबि ढाकियत सुंदर सुखद सुनैन ।  
 ज्यों ससि - सेखर ससिकला है पिय मंगल दैन ॥ ६८ ॥  
 चंदमुखी अति चंद सै अकस बढी सबिसेख ।  
 चंद चांदनी क्यों जुरै रूप चांदनी पेख ॥ ६९ ॥  
 कहँ मिसरी कहँ ऊख रस नहीं पियूष समान ।  
 कलाकंद - कतरा कहा तुव अधरा - रस - पान ॥ ७० ॥  
 रंघ्र-जाल है देखियतु तिय तन प्रभा बिसाल ।  
 चामीकर चपला लखौ कै मसाल मनिमाल ॥ ७१ ॥  
 रूप - सिंधु तेरो भरौ अति घनि अधिक अथाह ।  
 जे बूझत हैं बिन कसर ते पावत मन चाह ॥ ७२ ॥  
 मिही अगौछनि पोछ लै फैल्यो काजर नैन ।  
 सरद चंद अति मंद यह चाहत समता ऐन ॥ ७३ ॥  
 है मुख अति छबि - आगरौ कहा सरद कौ चंद ।  
 पै हित मान समान किय तुव ठोढ़ी को बुंद ॥ ७४ ॥  
 जानि परत अब परसपर यह इक वस्तु अनूप ।  
 तुव नैननि पिय-रूप है पिय - नैननि तुव रूप ॥ ७५ ॥  
 कह रंभा कह उरबसी कितिक मैनिका सान ।  
 जिहि देखैं तैं होत है ग्यानी ग्यान अग्यान ॥ ७६ ॥

भोगवती भोजन रचत मृगलोचनि सुखदानि ।  
 धूँघटपट की ओट करि पिय को आगम जानि ॥ ७७ ॥  
 लगन दसा आबाल तन उजियारी किमि होति ।  
 बिना नेह नहिँ बढ़त है तिय-तन-दीपति-जोति ॥ ७८ ॥  
 गौने आई नवल तिय बैठी तियन समाज ।  
 आस पास प्रफुलित कमल बीच कली छवि साज ॥ ७९ ॥  
 जलचर थलचर गगनचर मोहि रहत सब जीव ।  
 चढ़ी रहत मोहन दृगन तेरी छवि सब जीव ॥ ८० ॥  
 नहिँ नजरत हियरौ जरत चकित चितै चहुँ ओर ।  
 तिय तेरे मुखचंद के मेरे नैन चकोर ॥ ८१ ॥  
 ठोढ़ी धर अँगुरी कहत दर्ई निरदर्ई लोग ।  
 करत बियोग सँजोग मैं करत सँजोग बियोग ॥ ८२ ॥  
 ऊधौ कछु कहत न बनत कहत सु आवत लाज ।  
 कै जानत मेरौ हियौ कै जानै ब्रजराज ॥ ८३ ॥  
 यह तोमै नोखो नई भई अटपटो बीर ।  
 जाहि चाह तुव दृगन की ताहि करत कत पीर ॥ ८४ ॥  
 बिन बूझै सूझै न कछु होत हिए अति संक ।  
 उर परजंक उतारि कै कति पारत परजंक ॥ ८५ ॥  
 करि सिँगार सखि लै चली बनी बनिन सिरताज ।  
 ज्यौं मतंग गाठे करी लिए जात सजि साज ॥ ८६ ॥  
 मदन महावत लै चलयौ यह तन तिय गजराज ।  
 रुकि रुकि त्यों फिर फिर चलत पगनि सु आधू लाज ॥ ८७ ॥  
 वन तज चलिए कुंज कौ परत सघन सखि बुंद ।  
 नहिँ जानत इहि गाँड के क्यौरे है मुख मुंद ॥ ८८ ॥  
 दै महदी पग पर रही कहै चाहियत बात ।  
 नहिँ राखे रँग जात है राखे सब रँग जात ॥ ८९ ॥



यौ प्यारी परजंक मैं नैकु न ठिक ठहराव ।  
 रजत थार मुकता बिमल ब्यौ चलदल कौ पात ॥ ८० ॥  
 पहिलौ दिन पहिलौ मिलन ऐसौ बढ़त न मोह ।  
 यौ चित चुभकै दुहुन के ज्यौ चुंबक कौ लोह ॥ ८१ ॥  
 मानि सु यह सांची कहत मोहि रावरी आन ।  
 लगी रहत उनके दगनि तो मुख की मुसक्यान ॥ ८२ ॥  
 हौं बोलौ लसि चुप रही जानि गाँव को तोत ।  
 सिर डुलाइ नाहीं करत नाहीं नाहीं होत ॥ ८३ ॥  
 सोच मोच मृग-लोचनी मिलि लोजै भर अंक ।  
 ब्रज मैं पूरन चंद मैं है इक स्याम कलंक ॥ ८४ ॥  
 बढ़रे गुन बढ़रे दगन बढ़रे बोल न बोल ।  
 कहत कहा समुझत कहा लए स्याम कहँ मोल ॥ ८५ ॥  
 यह देखन कौ रैन दिन राखत मो दग लोच ।  
 मृगलोचन खोलौ हँसौ मेरी कौन सँकोच ॥ ८६ ॥  
 आली बनमाली कहा कहँ सूनौ संकेत ।  
 बिधि बिधि करि बिधि निसि रची तो बिलास के हेत ॥ ८७ ॥  
 यौ कहि डेरत प्रानपति भामा अति अभिराम ।  
 पै मेरे मन रुचि बढ़त कहत कामिनी नाम ॥ ८८ ॥  
 दुहुँ कर सौं तारी बजत है प्यारी यह रीति ।  
 प्रीति बढ़ावत बनत तब जब लिखियत उत प्रीति ॥ ८९ ॥  
 डरत नहीं भय लाज ते काम करत अति घोर ।  
 तेरे री दग जो रहैं मेरे री दग जोर ॥ ९० ॥  
 चटकि चटकि चहुँ दिसि उठे चक्रवाक मिलि जात ।  
 प्रफुलित भए सरोज सर भामिनि भयौ प्रभात ॥ ९१ ॥  
 मनि मंदिर सुंदर खरी बिलसत लसत अमंद ।  
 लेखौ हिय बिष सूल सौं देखौ उदित मयंक ॥ ९२ ॥

जहां जहां नागरि नवल गई निकुंज मभाइ ।  
 तहां तहां लखियत अजौ रही वही छवि छाइ ॥१०३॥  
 तुव तन सरस सुगंध तैं अति सुगंध अधिकात ।  
 तहँ तहँ अतर गुलाब सौं छिरक्यो जान्यौ जात ॥१०४॥  
 पद पंकज मन मैं धरत जहां नबेली बाल ।  
 तहां तहां लखियत दगनि बगरत मनहु गुलाल ॥१०५॥  
 तनक नजर फेरै कहूं मिलत सु हेरे नाहिं ।  
 सरद-मयंकमुखी दुरी सरद जुन्हाई माहिं ॥१०६॥  
 जटित जवाहिर तन भलक मिलि मसाल के जाल ।  
 नैकु नहीं जानी परत यह मसाल यह बाल ॥१०७॥  
 देखहु बलि चलि औचकनि नवल बधू सुकुमार ।  
 भौंह कसति हुलसति हँसति रीझ भरी रिझवार ॥१०८॥  
 लखौ लाल कैसी लसत लखत छबीली छांह ।  
 ठोढ़ी कर अँगुरी दिए ठाढ़ी आंगन मांह ॥१०९॥  
 देखहु बलि चलि औचका यह औसर फिरि नाहिं ।  
 खेलत कर कंदुक लिए रंग रावरी माहिं ॥११०॥  
 गात गुराई मिलत पट अरुन पीत है जात ।  
 नित नित देत उराहनो रँगरेजहि उठि प्रात ॥१११॥  
 चंदन की चौकी चढ़ी पटतर दीजै काहि ।  
 वहै चांदनी चौक मैं रहो चांदनी चाहि ॥११२॥  
 तिरछौहैं करि करि दगनि भौहैं कसत सुभाइ ।  
 तकति छकति उभकति जकति हरषि हरै हँसि जाइ ॥११३॥  
 रस उलही दुलही वही अंगनि दुति अधिकात ।  
 सौहैं कर भौहैं कसत हँस बिहँसत बतरात ॥११४॥  
 निकसि निकसि सखि साथ तैं बिहँसि बिहँसि हँसि देत ।  
 लंक चलनि लचकनि लचनि कसकनि हिय हरि लेत ॥११५॥

फूल गेंदना इक नवल मेलत मृदु मुसुकाइ ।  
 बिहँसि बिहँसि करि ओट तन नागरि लेत बचाइ ॥११६॥  
 मनि मंदिर आंगनि खरी फैल रही छवि वृंद ।  
 गात गुराई लखि भई सरद जुन्हाई मंद ॥११७॥  
 रंग रंगीली सेज पर जवै सहज हँसि देत ।  
 सुमुखि सबै सुख-सिंधु कौ सुधा सकेले लेत ॥११८॥  
 जगत जवाहिर जेव-जुत मनि मय साज-समाज ।  
 नवल बधू दुति पै अरी न जुरी विजुरी आज ॥११९॥  
 बिनु देखे समुझ न परत तुव कटि कौ अनुमान ।  
 उरज बिलोक बिरंचि कौ कछु प्रपंच परवान ॥१२०॥  
 काम-कामिनी तैं ललित केलि कला कमनीय ।  
 रंगभरी राजत रवन बहर बनी रवनीय ॥१२१॥  
 ँड़िन पिँडुरिन जंघ कटि त्रिवली उरजन जाइ ।  
 कंठ कपोलन मुख सुमन अधरन रह्यौ लुभाइ ॥१२२॥  
 ललकि रूप लालच लग्यौ पल न कहूं ठहरात ।  
 भयौ रहै मुखचंद कौ चित चकोर दिन-रात ॥१२३॥  
 जहँ जहँ सहज सुभावही चलत अजिर सुखदान ।  
 तहँ तहँ लाली पगन की चुई परत सी जानि ॥१२४॥  
 गोरे गोल कपोल पर सोहत अति छवि सोइ ।  
 तरुनी तिल तेरो लखे वनत न उपमा कोइ ॥१२५॥  
 छन बितवत जुग कोटि सम दृग चितवत इहि ओर ।  
 भग परबत प्यारौ पिया जिमि ससि उदय चकोर ॥१२६॥  
 भुज मृनाल लोचन कमल पानिप रूप प्रथाह ।  
 तिय सरिता मन मीन पर तिहि पायो तिहि माह ॥१२७॥  
 नयन मीन भुज तट दुवौ कुच चक कुंतल ग्राह ।  
 नागरि सरित सुहावनी पूरित प्रेम-प्रवाह ॥१२८॥

मोर मुकुट कटि पीत पट उर बनमाल रसाल ।  
 आवत गावत सखिन भग लखे आज नंदलाल ॥१२६॥  
 अहे अहेरी लखत नहिँ मृगमाला ब्रज-बाम ।  
 नैन-सरन घनश्याम नै बेधे हिए तमाम ॥१३०॥  
 रूप सिंधु मुख रावरो लसै अनूप अपार ।  
 पैरवार दृग ललन के पैर न पावत पार ॥१३१॥  
 कसे कंचुकी मैं दुवौ उच कुच करत बिहार ।  
 गुंमज के गजकुंभ के गरभ गिरावनहार ॥१३२॥  
 कुंद कुंद-कलिका करौ कनिकी हीर कहौ न ।  
 देखे दसनन की दमक दामिनि की दर कौन ॥१३३॥  
 गरै परत गहत न बनत गुन सौं गुंफित गास ।  
 यह नथ पथ दृग पथिक कौ ठग मनमथ की फांस ॥१३४॥  
 जगमगात पग धरत लूं जहँ जहँ पग जलजात ।  
 तहँ तहँ आली अवनि पर लाली परसत जात ॥१३५॥  
 तिय तेरे यह देखियतु उपजावत रतिभाड ।  
 करत चित्त तापस रली त्रिबली तीरथराड ॥१३६॥  
 लगन लगी सो हिय लगी पगी प्रेम रस रंग ।  
 लाज खगी मोहन ठगी देखि जगमगी अंग ॥१३७॥  
 दुवौ हुलास बिलास सौं आसव धरो गिलास ।  
 पीवत भुकि भूमति भूपति बिलसति विमल बिलास ॥१३८॥  
 भलक कपोलन की लखे अटक्यो मन सुख पाइ ।  
 हार हिए कुच-भार क्यूँ रह्यौ तहाँ ठहराइ ॥१३९॥  
 नैन चोट आसी लगी गासी व्यौ भरपूर ।  
 मचत चलत क्योंहू नहीं खँचत काम अमूर ॥१४०॥  
 चित्र लिखी मूरत लखी पति हिए सिहात ।  
 खँचत नीबो कुच सकुच आपुन जात लजात ॥१४१॥

उठ जैवै कैसे अली लगत न ऐसो सोइ ।  
 जौ लौ पल बैठी रहो तौ लौ कल हिय होइ ॥१४२॥  
 हार निहार उतार धर बिधि तन रचे सिंगार ।  
 धरनि चलत लचकत तरुन बार भार सुकुमार ॥१४३॥  
 उतरत कहूँ परजंक तै पग द्वै धरत ससंक ।  
 कुम्हलान्यौ अति ही परत आतप बदन मयंक ॥१४४॥  
 कहत सु आवत लाज मुहिँ चलि देखौ नंदनंद ।  
 रंघ-गलिन लखि नलिनपति होत मलिन मुखचंद ॥१४५॥  
 पगन मंद आवत अजिर लखियतु निपट ससंक ।  
 उरज-भार लचक्यौ परत ललित लचीलौ लंक ॥१४६॥  
 देखत रूप अनूप वह बढ़त दृगन दृग जोत ।  
 फिर कैसे वह सांवरो आखिन ओलक होत ॥१४७॥  
 बिसरि जात सुधि बुधि सबै देत जबै हँसि हेरि ।  
 रोमन तन मन सदन में हेरे मिलत न फेरि ॥१४८॥  
 हटके हठ पैंडे परत डरत न नैकु कलंक ।  
 बिन बिचार भेंटे बनत भुज पसारि धरि अंक ॥१४९॥  
 मिलत नहीं हेरे कहूँ तू कत होत अजान ।  
 जाको मन मोहन ठगौ ठग्यौ सु ठग्यौ निदान ॥१५०॥  
 चौज चबाइन के रचत हँसत सबै ब्रज लोग ।  
 तैही कहि सखि सांवरो है नहिँ देखन जोग ॥१५१॥  
 रंगी सांवरे रंग जे पगी प्रेम दिन-रात ।  
 जे ब्रज में कुलकान तैं नैकु न सुनी सकात ॥१५२॥  
 कहा कहाँ कहत न बनत परी कठिन अब आनि ।  
 नेह निबाहे हू बनै किए बनै कुलकानि ॥१५३॥  
 मोहि सिखावत तू कहा मैं हूँ जानत बात ।  
 उर उरभयो चितचोर सौँ सो फिर सुरभयो जात ॥१५४॥

नैदनंदन पैँडे परयो नित निकसत इत आन ।  
 भई बहुत कलकान अब राखन को कुलकान ॥१५५॥  
 सुनत सबै समुझत सबै तऊ न छोड़त छोह ।  
 परवस हठ मोही करत निरमोही सौं मोह ॥१५६॥  
 वरजे नैकु न मानई कैहू लाख कहौ जु ।  
 कपट भरी चूचतौ खरी चरच चवाइन चौजु ॥१५७॥  
 विन वातन रचतौ खरी वृथा सखों परिहास ।  
 मिलतौ जो मन-भावतौ तौ नीकौ परिहास ॥१५८॥  
 नित पनघट अनघट फिरत तजत न बाही वान ।  
 भरवस करि हँसि हँसि करत वरवस हरि पहिचान ॥१५९॥  
 सखी सांवरो रूप वह देखत ह्य न अवात ।  
 लोच भरे लालच लगे नित उत ही चलि जात ॥१६०॥  
 नित नित जाइ उराहनो का कहि दीजै काहि ।  
 गो-रस कौ चसकौ नहीं रस कौ चसकौ वाहि ॥१६१॥  
 हौ जानत हिय की दसा तू नहिँ जानत वीर ।  
 ए री कठिन अहीर कौ पोर रहित बे-पोर ॥१६२॥  
 उर औरै आनत नहीं पहिचानत नहिँ पीर ।  
 जरद भई जाके दरद निपट वेदरद वीर ॥१६३॥  
 ब्रज-वीथिनि नोखे रचत नित ही नित चहू ख्याल ।  
 दोऊ चाहत फिरत हैं गोरस गोरस लाल ॥१६४॥  
 सोवत जागत में वही सही सबेरे सांझ ।  
 सूरत वह सखि सांवरी बसी रहत उर मांझ ॥१६५॥  
 गोकुल में कुल की कहौ क्यौं निवहै कुसलात ।  
 बलिहारी तुम सौं लला हौ हारी हर भांत ॥१६६॥  
 केलि-कुंज मग पाइ कै मैन मसूसन मेदि ।  
 छैल छली कव भेंटिहौ भरि भरि भुजन समेदि ॥१६७॥

लोक-लाज कुल-कानि अब रहै सबै किन जाइ ।  
 वह निसंक उर संक तजि लैहौ अंक लगाइ ॥१६८॥  
 लोक-लाज गुरुजन-सकुच ताको नहीं डराउ ।  
 विनवति या देखत दृगनि छतिया सों लग जाउ ॥१६९॥  
 अनत दृगनि फेरत बहुत डेरत हिए हिरात ।  
 जान परत नहिँ कौन सी लला कला करि जात ॥१७०॥  
 चल न सकत उत ही रहत पल न कहूँ ठहरात ।  
 उर उरभक्त सुरभक्त न फिरि फिरि फिरि उरभक्त जात ॥१७१॥  
 लगन लगावत निपट हठि सबै बचावत डीठ ।  
 लखि ललचावत मो हियौ बरबस नैन बसीठ ॥१७२॥  
 कानन लागे हो रहत कानि न लागत ऐन ।  
 हिए कसाले दै कठिन होत निराले नैन ॥१७३॥  
 मिलत अगाऊ विन कहे यहै दोष इन माहिँ ।  
 उर उरभावत हठ नयन सुरभावत फिर नाहिँ ॥१७४॥  
 रही भरोसे हैं सदा दिनहू के दिन राति ।  
 हंग बसीठ पारत हियो परबस हठ हर भांति ॥१७५॥  
 जुरत नैन पर जरत हिय अरी कौन यह रीति ।  
 यह न कहूँ देखी नई नेह नगर की रीति ॥१७६॥  
 हित अनहित समुभक्त नहीं इत उत करत अचेत ।  
 रंग रचाइ लचाइ चित फिर फँसाइ दृग देत ॥१७७॥  
 कल न परत कहूँ कहूँ पल न लगत दिन रैन ।  
 वही सांवरी छवि छके भरत भांवरी नैन ॥१७८॥  
 या ब्रज मैं सखि सांवरो जिन देखौ अँखियान ।  
 लोकलाज नाखी न किन किन राखी कुलकान ॥१७९॥  
 जिन अँखियन सखि सांवरो लख्यो कहूँ इक बार ।  
 ते किमि घूँघट राखतीं करि कुल-कानि-विचार ॥१८०॥

ये अखियां कैहूं कहूं आनन आन लगैं न ।  
 थकी पल न उभकी न छवि छकी रहैं दिन रैन ॥१८१॥  
 उभकि भरोखन है कहूं दग सों दग जुरि जात ।  
 चाह भरे चित दुहुन के फिरि आवत फिरि जात ॥१८२॥  
 इत चितयो नागर नयौ उत चितई हँसि ईठ ।  
 लगी अचानक मूठ सी दुहुनि दुहुनि की दीठ ॥१८३॥  
 कहैं कहा कहत न बनत अहे लखत ब्रजनाथ ।  
 दग दलाल बेचत हियो डर बस मनमथ हाथ ॥१८४॥  
 वा मुख की छवि-माधुरी पियत न नैकु अघात ।  
 अनिमिष चख चंचल चितै चाह भरे चलि जात ॥१८५॥  
 खंजन सरि करि क्यों सकै मीनौ मन हिल जाहि ।  
 मनरंजन अंजन बलित कंज लखत सकुचाहि ॥१८६॥  
 तरुन तिहारे दगनि की भए नहीं छवि लीन ।  
 याते बनचारी भए अलि खंजन मृग मीन ॥१८७॥  
 हित चित लेत चुराइ कै लेत न देखे जात ।  
 जुरत सुरत बिष दग लगत तुरत फुरत करि जात ॥१८८॥  
 नेह फौज दुहुँ दिशि बढ़ी अपनी अपनी जोट ।  
 दग हरौल कटि कटि लरत करत परसपर चोट ॥१८९॥  
 कोऊ बन कोऊ बिपिन उपमा रही न ठौर ।  
 देख्यो बलि तुव दगन कौ अजब अनोखो त्योर ॥१९०॥  
 खंजन कंजन मीन से कहत सबै कवि मैन ।  
 तेरेई जुग मैन से तेरेई जुग नैन ॥१९१॥  
 क्यों हूं काटे कटत नहीं एरी मेरी बीर ।  
 अनियारे दग यों लगे ज्यों कनियारे तीर ॥१९२॥  
 खंजन छवि गंजन सु ए कंज लखत सकुचाहिं ।  
 अली मैन तुव सर लगे मतिवारे मत जाहिं ॥१९३॥



चंचल चोखे चपल अति नहीं देत पल चैन ।  
 कमनैती सीखी नई अमनैकी इन नैन ॥१८४॥  
 कमल-दलन की छवि-दलन ललन तरुन के नैन ।  
 कजरारे कानन लगे भरे खरे रस मैं ॥१८५॥  
 तुव हग उपमा कमल की सब कवि कहैं सु मैं न ।  
 ए पिय दिय सुख-दैन हैं वे सब जन सुख-दैन ॥१८६॥  
 चपल चलाकन सौ चलत गनत न लाज लगाम ।  
 रोके नहिं क्यों हू रुकत हग-तुरंग गति बाम ॥१८७॥  
 तोरत कानि जँजीर हठ पल अंकुस न डरात ।  
 लाज अगड़ कैहु न रुकत हग मतंग चल जात ॥१८८॥  
 हटके हठ मानत नहीं हग-तुरंग तजि नेहु ।  
 समुझ सयानी अब इन्हें लाज लगाम न देहु ॥१८९॥  
 कै हरौल अगमन जुरत मरत न देखे सोइ ।  
 मन महीप के निकट ए विकट सुभट हग दोइ ॥२००॥  
 लोभ लोह मुख मेलि फिरि पाइ प्रेम चौगान ।  
 मन बाहन फेरे फिरत हग तुरंग गति आन ॥२०१॥  
 मीन मृगन कौ हीन करि मैं सरन दै ऐन ।  
 अब न सजब करि है गजब अजब अजूबे नैन ॥२०२॥  
 अंजन जुत लखि कै सदा खंजन मीन लजाहिं ।  
 तेरे अलि हग देखियतु ऐन मैं सर आहिं ॥२०३॥  
 चंचल समद तुरंग हैं देखि कुरंग लजात ।  
 आली नैन तुरंग लौं चमक चहूं दिसि जात ॥२०४॥  
 तिय तड़ाग मंजन करत मकर सऊ मनमान ।  
 सी सी यह जल सीत की मीत सुधा सी जान ॥२०५॥  
 बूढ़ि कहूं उछलत कहूं यौं सखि अति छवि देत ।  
 अलक नाग खँचत ससी मनौ सुधा के हेत ॥२०६॥

अलक भूमि दुहुँ ओर तैं तिय मुख रही प्रकास ।  
 मनौ मदन राख्यौ ससी नागफांस सौं फांस ॥२०७॥  
 सखिन संग नागरि नवल मनहि बढ़ावत मोद ।  
 करत केलि जल में खरी बिलसति भरी विनोद ॥२०८॥  
 जहां जहां सरसिजमुखी मंजन करत प्रभात ।  
 तहां तहां प्रफुलित सबै कमल कला है जात ॥२०९॥  
 फौजदार कचनार किय दिय पलास भट साज ।  
 किय जुवराज रसाल कौ इहि बसंत महाराज ॥२१०॥  
 मौर धरे सब द्रुम लता अपने अपने तौर ।  
 इहि ऋतुराज समाज में है रसाल सिरमौर ॥२११॥  
 सुभट समीर हरौल करि मधुप मतंग समाज ।  
 आयौ ढाहन मान गढ़ मै न हुकुम ऋतुराज ॥२१२॥  
 लगे पवन झुकि झुकि लता डोलै मृदुल समाज ।  
 घने मान मानिन मनै मने करत ऋतुराज ॥२१३॥  
 कुंज कुंज विहरत बिपिनि गुंजत मधुप मदंध ।  
 ललित लता लपटी तरुनि प्रफुलित बलित सुगंध ॥२१४॥  
 दिसि विदिसिनि सरितन सरनि अवनि अकास अपार ।  
 वन उपवन बेलिन बलित ललित बसंत वहार ॥२१५॥  
 वन वन वनक बसंत की बेलिन बलित सुदेस ।  
 बलि वहार बगरी वही बाग वंगलन बेस ॥२१६॥  
 सुमन सेत प्रफुलित ललित सोहत कुंज लतान ।  
 मनौ मै न मुक्तानि के तानै मंजु बितान ॥२१७॥  
 भरत मंद मकरंद मद गुंजत मंजुल शृंग ।  
 मनु वसंत महाराज कौ मारुत मत्त मतंग ॥२१८॥  
 बरवै—ब्रहत समीर सु-सीतल मंद सुगंध ।  
 ठौर ठौर सखि गुंजत मधुप मदंध ॥२१९॥

सीतल मंद सुगंधित बहत ...समीर ।  
 चलि बलि मिलि बलबीरहि जमुना तीर ॥२२०॥  
 लखि जमुना-तट सूनौ अति अनमोल ।  
 लिय प्यारी प्यारी के चूमि कपोल ॥२२१॥  
 पाइनि परि हैं हारी अब नहिं सोर ।  
 मिलत नहीं ब्रजचंदहि का मति तोर ॥२२२॥  
 दूंदे बन सब उपवन सो बन चाहि ।  
 जो बन मिलै बिहारी जोबन जाहि ॥२२३॥  
 रति रंभा छवि निदरत मंदिर माहि ।  
 सोवत दिए उसिसवां पिय की बाहि ॥२२४॥  
 जब कब पाइ अँगनवां धरति सुभाइ ।  
 कसकनि वही करिजवां कसकति आइ ॥२२५॥  
 नहिं सुहाइ घर बाहिर जहर जहान ।  
 मोहन मोहि मिलावे वे प्रिय प्रान ॥२२६॥  
 अंजन अंजत अखियन कै मनुहार ।  
 लालहि नाच नचावत मोखी नार ॥२२७॥

देहा—भिर पिचकारी की मची आंधी उड़त गुलाल ।

यह धूंधरि धंसि लीजिए पकरि छवीले लाल ॥२२८॥  
 मुख मीड़त अनखाति कति कर कर टेढ़ो भौंह ।  
 होरी मैं यों होत है मेरी तेरी सौंह ॥२२९॥  
 लै लै मूठ गुलाल की घालत सबै समाज ।  
 वह घालन औरै कछू ज्यों घालत ब्रजराज ॥२३०॥  
 मिल लीजै अब अंक भर है निसंक सब गात ।  
 सुनि गोरी होरी दिवस कहँ चोरी की बात ॥२३१॥  
 नीचे मुख मुसक्यात कत यहै फागु बड़ भाग ।  
 फगुवा मांग सुलाल सौं दिन दिन बढ़ै सुहाग ॥२३२॥

होरी मिस भोरी तिया लिय लगाय सब गात ।  
 धुप करिए थोरी न यह बरजोरी की बात ॥२३३॥  
 लाज मान गुरु-जनन की वनत न और उपाय ।  
 छाया सौं लागी फिरै होरी औसर पाय ॥२३४॥  
 लखियतु लाल गुलाल की धूधरि अवनि अकास ।  
 खेलै खुलि दंपति खरे विलसति विमल विलास ॥२३५॥  
 चोरी कर होरी धरत भोरी हिय न सकात ।  
 मुनि गोरी यह दिवस मैं है चोरी की बात ॥२३६॥  
 धूम धमारिन की मची अंगन अतन उमंग ।  
 अरी आज बरसत घनो ब्रज-व्रीथिन रस रंग ॥२३७॥  
 पिय पिचकारिन रंग भरि भिजवत करि करि प्यार ।  
 सब विधि सब भातिन भलै भोजति वह सुकुमार ॥२३८॥  
 होरी मैं जोरी करत भोरी करि ब्रजबाल ।  
 कहूं तक्त घालत कहूं भरि भरि मूठ गुलाल ॥२३९॥  
 उभकि अलिन की ओट है नवल नारि हग जोड़ ।  
 घालत मूठ गुलाल की छुटत अरगजा होइ ॥२४०॥  
 साजि साजि भूषन सकल अंग अंग छवि दैर ।  
 पूजि पूजि गुन गौर कौ मांगत वर गुन गौर ॥२४१॥  
 लिए लचोली लोद कर उजवति भौंहनि तान ।  
 करि सतून जन तून तै लै प्रसून धनु धान ॥२४२॥  
 लौद लचोली लौ लचति घालत नहिं सकुचात ।  
 लगि जैहै वोदर लला वहै कसोदर गात ॥२४३॥  
 तीज तमासौ रस भरी नवल वधू छवि लौन ।  
 लियै लौद हरि करि रहे कौल मुखिन पै कौल ॥२४४॥  
 गरक गुलाब उसीर बहु सीरे कर उपचार ।  
 तऊ निपट ग्रीषम लपट निकटहु भपटनिवार ॥२४५॥  
 ४६

घसि चंदन चंद्रक चहल महलनि नहल फिराइ ।  
 बिषम गरम ग्रीषम तऊ नैकु न नरम लखाइ ॥२४६॥  
 अति भीषन सीखन तपन पिय सीखत लिखि लेख ।  
 ग्रीषमऊ से तै उपन बिषम बिषन दृग देख ॥२४७॥  
 चंद्रक चंदन बरफ मिलि हिले विजन चहुँ पास ।  
 ग्रीषम गाल गरम लगै गै गुलाब के त्रास ॥२४८॥  
 बर साइति है मिलन की बरसाइत है लेखि ।  
 पूजन बर साइत भली बरसाइत चलि देखि ॥२४९॥  
 पगनि धरत कसकत खरी भरी सनेह निसोत ।  
 नागरि बर भाँडर भरत लाल निछावर होत ॥२५०॥  
 दिन प्रति बारह मास भर करि सनेह रस रीति ।  
 दियौ जीति मनमथ मनौ गड़ा सुबारह जीति ॥२५१॥  
 हरित पीत अंकुर वसन नव लतानि कै हार ।  
 जनु अषाढ़ कीनी मही दुलही नयो सिंगार ॥२५२॥  
 चढ़ी अटा छन छटा सी वह लचकीले लंक ।  
 अंक भरै पिय मोद सौं देखत घटा निसंक ॥२५३॥  
 उमड़ि घुमड़ि बरसै घटा मोर सोर सरसात ।  
 धनि दंपति सोवत सुखनि रस मोवत सब गात ॥२५४॥  
 चात्रक मुख मूंदत नहीं दादुर दूदैं देइ ।  
 विरहिन हिय खूंदैं खरी खूदैं रूंधैं लेइ ॥२५५॥  
 पावस निसि कारी घटा दामिनि दमकत जोर ।  
 मोर सोर घन घोर सुनि चित चाहत चितचोर ॥२५६॥  
 दामिनि दमक दिसानि मैं देखि दृगन दुख देति ।  
 उमड़ि घुमड़ि हठि करि हियौ जलद जलद हरि लेति ॥२५७॥  
 भोने भर भुकि भुकि भ्रमकि भ्रलनि भाँपि भकभोर ।  
 भुमड़ि घुमड़ि बरसत सघन उमड़ि घुमड़ि घन घोर ॥२५८॥

लहराती लतिकांत नित छहराती छित छोर ।  
 छहराती कारी घटा रंगराती बन मोर ॥२५६॥  
 रहे भुमडि घन गगन घन भौ तन तोम बिसेख ।  
 निसि बासर समुझ न परत प्रफुलित पंकज पेख ॥२६०॥  
 अरुन बसन तन मैं पहिरि पीत सु दौना हाथ ।  
 साउन मैं भाउन लगत सखी सुहावन साथ ॥२६१॥  
 हरित भूमि गिरि तरु हरित हरी लता लपटात ।  
 बीर-बधूटो सी बधू लखि लालन ललचात ॥२६२॥  
 तरुन तमालन सौं लता लपट रहीं चहुँ कोद ।  
 मनभावन दावन लगौ सावन सरस बिनोद ॥२६३॥  
 हठ तरसावन चित लग्यौ मनभावन बिन बीर ।  
 लाग्यौ बरसावन सलिल सावन दावनगीर ॥२६४॥  
 मनभावन आवन भवन सुख सरसावन काज ।  
 सावन बरसावन सुखनि समय सुहावन आज ॥२६५॥  
 रंग हिँडोरे नवल तिय भूलत दुति दरसात ।  
 जनु अकास तैं दामिनी छिति छुँ आवत जात ॥२६६॥  
 प्यारी भूलत प्यार सौं पीय भुलावत जात ।  
 मनौ सितारे भूमि नभ फिरि आवत फिरि जात ॥२६७॥  
 रेसम डोरे कर गहे रंग हिँडोरे हेत ।  
 भूलत पिय कोरै लगी मोह अरोरै लेत ॥२६८॥  
 हरष हिँडोरै डोर गहि भूलत अति छवि देत ।  
 गोरे मुख छवि सौं छहरि लहरि लहरिया लेत ॥२६९॥  
 पाइन लखि लाली ललित नाइन अति सकुचात ।  
 चितै चितै मृदु आंगुरिन फिरि फिरि मीड़त जात ॥२७०॥  
 सहज अरुन ऐँडोनि की लाली लखै बिसेखि ।  
 जावक दीवै जकि रही नाइन पायन पेखि ॥२७१॥

भादौं भयकारी लगत पिय बिन कारी रैन ।  
 धाराधर धारी लखै प्यारी मन नहिँ चैन ॥२७२॥  
 सोभित अवनि अकास अति अनुपम अमल अमंद ।  
 अब बिधु बदन विलोकितै सरद सरद कौ चंद ॥२७३॥  
 सुखद सरद ऋतु पाइ कर कुंजित सरनि सरोज ।  
 चलि चलि दृगनि विलोकि यह प्रमुदित उदित मनोज ॥२७४॥  
 बैठी जसन जलूस करि फरस फबी सुखदान ।  
 पानदान तैं लै दयै पान पान प्रति पान ॥२७५॥  
 जै दसमी जानी जगत महरानी सुख पाइ ।  
 पीराहर सब सखिन कौ बोरा बगसे आइ ॥२७६॥  
 जुवा खेल खेलन गई जोषित जोबन जोर ।  
 क्यों न गई तैं मति गई सुन सुरही के सोर ॥२७७॥  
 अगहन में गौने चली संग साजि अधिकात ।  
 पन्नग नग भूषन बसन ससक्त रोवत जात ॥२७८॥  
 सेज सुपेती तरुन तिय सुरा सुराही प्रीति ।  
 देखि रीति भयभीत हूँ भजत सिसिर कौ सीति ॥२७९॥  
 घटत नहीं कैहू कहूँ अधिक अधिक अधिकात ।  
 हनत हियौ अति निरदई सिसिर सीत दिन-रात ॥२८०॥  
 सुखद सँजोगिनि कौ निशा सुखमय पल सम जात ।  
 सम सम बिरहिन कौ लगत वही पूस की रात ॥२८१॥  
 कल न परत परजंक पर दृग न नौंद नियरात ।  
 अब ग्रीष्म दिन तै बिषम लखी माघ की रात ॥२८२॥  
 तबै न मान्यौ मो कह्यौ सूधौ अलि जुग कंज ।  
 देखि अधर छत झुकत अलि अब पिय कौ मन रंज ॥२८३॥  
 नियति तो पिय पहुँ रमै आवन चाहत आज ।  
 साजि आरती पाँउड़े अब अलि तज वह काज ॥२८४॥

नव रसाल के पौन लागि डोलत डारन मौर ।  
 जनु बसंत रतिकंत पर झुकि झुकि डारत चौर ॥२८५॥  
 नख फौकै मनि गन कलित ललित आंगुरी तीर ।  
 तो कर सोभा के सदन मानौ मदन तुनीर ॥२८६॥  
 हियै और मुख और कछु अब ब्रज की यह चाल ।  
 उत्तिम मारग एक तुम निरबाहौ नंदलाल ॥२८७॥  
 दुसह बिरह बृष सूर सम चलन कहत अब आप ।  
 तिय कौ कोमल प्रेम-तरु क्यों सहिहै संताप ॥२८८॥  
 बिधु सम सोभा सार लै रच्यौ बाल मुख इंदु ।  
 दियौ इंदु मैं अंक मिस राहु हेत मसि बिंदु ॥२८९॥  
 ऐसौ और न जानिबो जग अनीत कर नार ।  
 जामैं उपज्यौ सरन सौ ताकौ बेंधत मार ॥२९०॥  
 लखि पुरैनि के पात मैं लसत बकी चल नाहिँ ।  
 मनौ संख सूती धरी मरकत भाजन माहिँ ॥२९१॥  
 चारु चाहि गोपाल के गरै मालती माल ।  
 अरुन तरुन अँखियान तैं अँसुवा चलत बिसाल ॥२९२॥  
 जाको मुख ससि सौ सुखद सजल जलद सी बेह ।  
 बसन बीजुरी सी धरै लख्यौ सु वह बन गेह ॥२९३॥  
 तोसी मोरै को हितू आई काम बनाइ ।  
 धनि धनि तैं मेरे लियै सहे रदन नख घाइ ॥२९४॥  
 स्वास स्वेद कर ताड़िबौ लचि लचि मुरनि अनेक ।  
 तो सँग यौ खेलत तरुन धनि कंदुक तैं एक ॥२९५॥  
 ज्यों ज्यों दुहू दुहून के रस सौं भिँजवत गात ।  
 त्यों त्यों चित्त दुहूनि के रस सौं भोजत जात ॥२९६॥  
 सकल ससिन तैं सकल सुख मो दग चहत निहार ।  
 चंदमुखी मुख चंद तैं हरै हरै पट डार ॥२९७॥



दोज द्रोही तात के दया दुहुन कै नाहिँ ।

हर जारौ हग मदन क्यों ससि धारौ सिर माहिँ ॥२८८॥

बरनहीन इव रन बिना अनिल बाहि तुव आन ।

हरि वृषभानुकुमारि कौ ससी भयौ वृष-भान ॥२८९॥

तो मन वास हगंत सर भौहैं चाप समान ।

सुतन अतन चाहत भयौ तुव सुन कान पयान ॥३००॥

हरि राधा राधा भई हरि निसि दिन के ध्यान ।

राधा मुख राधा लगी रट कान्हर मुख कान ॥३०१॥

हर जारौ लोचन-अनल भौ अलि मदन पिसाच ।

भीडे डारत मो हियो रति सहाइ लहि साच ॥३०२॥

द्रग सु जरायौ सिव मदन तौ वह भूतल दंभु ।

फिरि फिरि मोजत मो हियौ समुझि उरोजन संभु ॥३०३॥

तरुनी मुख छवि पान कौ नैनन बांध्यौ नेत ।

सुमन सुमन पै बैठि जनु रस खोरा रस खेत ॥३०४॥

वा मुख की छवि पै परत जब मग लोल अमोल ।

हरत बिरह अहि विषम विष तुव लोचनन कलोल ॥३०५॥

गुललाची के फूल की क्यों न लखत छवि बाल ।

उलटी कूकत है मनौ मधुप काम कर माल ॥३०६॥

गसे परसपर कुच घने लसे बसे हिय माहिँ ।

कसे कंचुकी मैं फँसे मुनि मन निकसे नाहिँ ॥३०७॥

सेत कंचुकी कुचन पै लसत मिही चित चोर ।

सोहत मुरसरि धार जनु गिरि सुमेर जुग और ॥३०८॥

उठी केलि करि ससिमुखी नैन मूँदि अँगिराइ ।

जल-कन-छवि झलकन लगी अलकन पलकन छाई ॥३०९॥

कहा मैनका उरबसी कहा काम की बाम ।

रहे चित्र कोसे लिखे लखि राधा घनस्याम ॥३१०॥

लिखे चितेरे चित्र मैं पिय बिचित्र तसबीर ।  
 दरसत दृग परसत हियै पसरत तिय धर धीर ॥३११॥  
 तो घनस्याम बिसेस छवि चित्र पूतरी चाहि ।  
 जानत परसन पूतरी जनु पखान की आहि ॥३१२॥  
 है बिदेस तो प्रानपति कीजै बचन प्रमान ।  
 स्याम धूम तैं कीजियतु बिरह - अनिल अनुमान ॥३१३॥  
 लखि ससंक सूनौ सदन मंद हास गति मंद ।  
 चंदमुखी कौ अंक भर लूटौ सुख ब्रजचंद ॥३१४॥  
 कुंभकरन कौ देखि कपि नासा - करन - बिहीन ।  
 अट्टहास करि भू झुके मन भौ मोद अधीन ॥३१५॥  
 मारतंड परचंड महुँ फरकत जुग भुजदंड ।  
 रघुनंदन दसकंध लखि टंकोरयो कोदंड ॥३१६॥  
 घाटौ अवनि अकास सर डोटौ दुग्जन जाल ।  
 काटौ दस दसकंध के मुंड आज विकराल ॥३१७॥  
 हनूमान बहु गिरि लिए गरजत प्रभु कौ घेर ।  
 लगी दृगन मैं टकटकी रहे रिच्छ कपि हेर ॥३१८॥  
 भूमि भूधराकार लखि उद्धत जुद्ध कराल ।  
 कँपे रिच्छ लखि लच्छ कपि कुंभकरन जनु काल ॥३१९॥  
 रघुनंदन दसकंध के काटे मुंड कराल ।  
 छलक्यौ छतज कबंध तैं करयो भूमि नभ लाल ॥३२०॥  
 रोदन करत सुलोचना पिय कौ मरन सुनाय ।  
 रघुनंदन के दृग कमल रहे आंसु उतराय ॥३२१॥  
 भावत कुंज करील की जातिन माह अहीर ।  
 जानौ जात बड़ेन कौ मन नहिँ मेरी बोर ॥३२२॥  
 कुबजा मन टेढ़ी कियौ वह टेढ़ेई गात ।  
 कौन चलावत बोर अब ब्रज की सीधी बात ॥३२३॥

सत्र न मारगौ रोस करि रीझ पची मन माहिँ ।  
 तहाँ न जैए सुधर नर वा दर की दर नाहिँ ॥३२४॥  
 लै कै दै राख्यौ तऊ गए पतालै स्यात ।  
 बलि बावन लौं देखिए सब तैं सब छल जात ॥३२५॥  
 मघा मेघ बरसत विविध उमड़ि भरहि दरियाड ।  
 चातक पातक आपनै कहत पियाड पियाड ॥३२६॥  
 धरपत हर हरषित जगत पूरित अवनि अकास ।  
 सांची प्रीति पपीहरै स्वात बुंद की आस ॥३२७॥  
 बिटप रसाल रसाल ए वड़े किए जगदीस ।  
 फिरि बसंत आए मधुप मौर धरैंगे सीस ॥३२८॥  
 कहा भयौ जौ लखि परत दिन दस कुसुमित नाहिँ ।  
 समुझि देखि मन में मधुप ए गुलाब वे आहिँ ॥३२९॥  
 जो पराग मकरंद मधु कमल फूल में होइ ।  
 मधुकर तू चाहत लह्यौ कनक कली में सोइ ॥३३०॥  
 कत गुमान गुड़हल करत समुझि देखि मतिमंद ।  
 छोड़ि नलिनि पीवत कहूं अलिन मलिन मकरंद ॥३३१॥  
 बहकायै बहकत फिरत अहे कहा मति भूल ।  
 सुख स्वादहि चाहत लह्यौ सेकै सेमर फूल ॥३३२॥  
 नहिँ जानत गुन जासु कौ सो तिहि निंदत जाइ ।  
 गजमुक्ता तजि कै अधम गुंजा लेत उठाइ ॥३३३॥  
 सघन घनै उडुगनि गगनि अगनित करत उदेत ।  
 परम प्रकासक पै निसा निसानाथ तैं होत ॥३३४॥  
 पंकज को धोखै मधुप कियौ केतकी संग ।  
 अंध भयौ कंटक बिघौ भयौ मनोरथ भंग ॥३३५॥  
 परमारथ साधत सदा अवराधत गुन एक ।  
 ते बिरले जग देखिए कहूं हजार में एक ॥३३६॥

तो ढिग आवत कल परत गुन पूरन तौ होइ ।  
 गुन बिहीन लघु कीर की पीर सुनावै कोइ ॥३३७॥  
 बिटप तिहारे पुहुप हम सोभा देत बढ़ाइ ।  
 और ठौर सीसन चढ़त पै रावरे कहाइ ॥३३८॥  
 ओफल दाख अँगूर अति नूत तूत फल भूर ।  
 तजिकै सुक सेमर गयौ भई आस चकचूर ॥३३९॥  
 देखि सुधाकर लसतु है सिव के सीस समोइ ।  
 समय पाइ तम परसि कै दरस फेर नहिँ होइ ॥३४०॥  
 केसर पूर कपूर सौ अगर धूर करपूर ।  
 अति रस मोइ समोइ कै तजै ज्याज नहिँ नूर ॥३४१॥  
 कहँ तड़िता सुबरन लता कहँ मनिमाल बिसाल ।  
 दीप-सिखा फीकी लगै देखत बाल रसाल ॥३४२॥  
 पिय प्रानन की प्रान तूं तुव प्रिय प्रानन-प्रान ।  
 जान परत गुनखानि अब चित हित के अनुमान ॥३४३॥  
 हित उत ही चितवत नयौ नाह नेह सरसात ।  
 लिखत चित्र पिय आनकौ फिरिकी लौं फिरि जात ॥३४४॥  
 जानत रिस ठानत नहीं नहिँ आनत मन आन ।  
 मनहु मैं छतिया लगी बतिया कहत सुआन ॥३४५॥  
 छमा छमा सी अनुहरत पिय प्रानन की प्रान ।  
 कै कमला बिमला कला कै कुल की कुल-कान ॥३४६॥  
 गवन करत रत तौलनौ मान मौन लौं पेखि ।  
 बचन रचन सखि सवन लौं छमा अवनि लौं लेखि ॥३४७॥  
 पतिव्रत लौं व्रत करत है भाषत अनृत न लेस ।  
 सील छमा छिति लौं करै हित लौं रहै हमेस ॥३४८॥  
 सदा सत्यमय सत्यव्रत सत्य एक-पति इष्ट ।  
 विगत असूया सील सै ज्यों अनसूया सृष्ट ॥३४९॥

ज्यों ज्यों पिय परतिय मिलन त्यों त्यों तिय दिनरात ।  
 हसत लसत हुलसत हियै विलसत नहिँ अनखात ॥३५०॥  
 अरुन उदै लौं तरुनई अँग अँग भलकी आइ ।  
 छिन छिन तिय तन औस सी मिटत लरकई जाइ ॥३५१॥  
 मंद भई गति मति बिमल मुख छबि छई अमंद ।  
 परी सैति दुख फंद सी मुदित होत नँदनंद ॥३५२॥  
 छुटत लरकई तरुनई नित नूतन अधिकात ।  
 करक निसा मकरादि दिन घटत बढ़त जिमि जात ॥३५३॥  
 अभिरामा स्यामा सरस यह लचकीले लंक ।  
 है निसंक उर संक तजि गहि लीजे भरि अंक ॥३५४॥  
 छुटत लाज भय अतन तन बाढ़त जात सहूर ।  
 सौति हिए बिषमूर सी पिय हिय जीवन-मूर ॥३५५॥  
 लोचन बढ़ि कानन लगे पगे मधुर रस बोल ।  
 मनौ मदन मौजै मुकर भलकत गोल कपोल ॥३५६॥  
 तिय तन मैं पानिप भरे उलहे तनक उरोज ।  
 रूप खरोवर जनु जुगल सुबरन कली खरोज ॥३५७॥  
 मधुराई बैनन बसी लसी पगन गति मंद ।  
 चपलाई चमकी चखनि चखन लखौ नँदनंद ॥३५८॥  
 नई तरुनई नित नई चिलक चिकनई चोप ।  
 नजर नई नैनन नई नई नई अँग ओप ॥३५९॥  
 नवल बधू अंगन बस्यौ अतन जतन सौं आइ ।  
 छिन छिन जोवन छनछटा दिन दिन अति अधिकाइ ॥३६०॥  
 तन तैं निकसि गई नई सिसुता सिसिर समाज ।  
 अँग अँग प्रति जगमग्यौ नव जोवन रितुराज ॥३६१॥  
 कहा करत देखत कहा लालन इत चित देहु ।  
 ललित अंकुरित कुचन की बनी बनी लखि लेहु ॥३६२॥

जगत जगौही जेब जुत जोवन जगमग जोर ।  
ललित लगौही लखि परत उकसौही कुच-कोर ॥३६३॥  
बस्यौ मदन तन सदन मैं बदन मंद मुसक्यान ।  
पग्यौ प्रेमरस सौ बचन लग्यौ लाल ललचान ॥३६४॥  
नैननि कौ प्रतिबिंब लखि जल मैं चितै अयान ।  
गहिवे कौ मेलै भुजा खेलत सफरी जान ॥३६५॥  
कान्ह कौन है कौन के कहि गोरी मुसक्यान ।  
कछु प्रतीत कछु भीत उर कछुक नैन ललचान ॥३६६॥  
थाकी मत लखत न बनत जाकी सखी बिचित्र ।  
बनत न मन औरै उकत चुकत चितेरे चित्र ॥३६७॥  
सिसुता मैं जोवन भलक जगमगात प्रति अंग ।  
ईशुर अरुनाई लसै न्यौ मिलि केसर रंग ॥३६८॥  
भय भीनी दुलही नई दर्ई सकुचि विधि भूर ।  
गई समिति पिय कर परस भई लजावन मूर ॥३६९॥  
नार्हीं नार्हीं कहत ही नार्हीं सौं लागि जाइ ।  
छुटी मुठी तैं भय भरी लगी धाइ उर धाइ ॥३७०॥  
भवन नाह आवत सखी तज भज चली निहार ।  
लाज पगी अति डगमगी रही ठगी सी नार ॥३७१॥  
भरी अंक परजंक पर गर मेलै भुजमाल ।  
जाल परी सफरी मनौ उछल परी तिहि काल ॥३७२॥  
जदपि सखी के संग रहत तदपि न थिर मन माहँ ।  
जल सफरी लौं तरफरत छरकत छुअत न छाहँ ॥३७३॥  
घरी धाइ पिय रस भरी सूनौ भवन बिलोकि ।  
गई पाइ ससकत सकत सकत न हिलकी रोकि ॥३७४॥  
लखि परछाहीं लाल की जानत नहिँ रस रीत ।  
नसत मृगी लौं जकि रही इत उत चितै समीत ॥ ३७५ ॥

कर परसत ससकत खरी संकत न अंग सम्हार ।  
 इंद्र-बधूटी लौ दुरत नवल - बधूटी नार ॥३७६॥  
 नेह नीर बंसी नयन बतरस गारौ लाइ ।  
 कछु प्रतीत कछु भीत तिय भ्रमकि भ्रमकि मुकि जाइ ॥३७७॥  
 चाहि चाहि चित नाह के लोचन लखि ललचात ।  
 आइ आइ कर नाह की नहिं छाती लागि जात ॥३७८॥  
 छयौ अतन अति सकल तन लाज सु अति हिय माहिं ।  
 बैननि मैं नाहीं करत नैननि नाहीं नाहिं ॥३७९॥  
 नहीं करत इतही रहत नहीं लगत उर आइ ।  
 मदन जगाइ जगाइ उर रहत लजाइ लजाइ ॥३८०॥  
 रद-छद अधर न कीजिए नागर नंद-किसोर ।  
 सास ननद सौजोर मुख कहा कहौंगी भोर ॥३८१॥  
 सास ननद ये कूर हैं मेरो दुरनय जान ।  
 करिहैं भोर अनर्थ जे प्रतिभा संका मान ॥३८२॥  
 आजु राति इहि भाति मैं देख्यौ सपन प्रसंग ।  
 काम लाज के जुद्ध मैं लिय फतूह जुर जंग ॥३८३॥  
 सास ननद जागत अबै भोजन दै रजनीय ।  
 कर सौ पाइ छियौ नहीं है घुंघरु बजनीय ॥३८४॥  
 रहत चाह चित नित नई बढ़त सनेह उदात ।  
 करत बिमुख हठ लाज हिय पिय मुख सनमुख होत ॥३८५॥  
 मुख सौहैं नहिं मुख करत भूठै मूंदत नैन ।  
 पग लागत लागत लपट जागत लगत हियै न ॥३८६॥  
 सखिन ओट कै पिय बदन सुमुखि सुलोचनि हेर ।  
 हरषि हँसति बिहँसत रहत सकुचि सकुचि मुख फेर ॥३८७॥  
 लाज गहौ धीरज धरौ ए पिय चतुर सुजान ।  
 खवन सुखद नूपुर निनद ननद न सुनिहै कान ॥३८८॥

सरस सलौनी सखिन सँग लखि लालन सकुचात ।  
 उभकि उभकि भाँकति भुक्कति भिभकि भिभकि दुरजात ॥३८८॥  
 छिन विहँसति छिन छिन हँसति छिन छिन कहति सिताब ।  
 इत उत चितै गिलास गहि पीवति गुले गुलाब ॥३८९॥  
 मुरि मुरि मुख नाहीं करत पलकाही लागि जात ।  
 हँसि हँसि पिय बाँही गहत मन माही मुसकात ॥३९०॥  
 तरफरात तलफत खरे नैन ऐन पट भीन ।  
 रूपसिंधु पर जुगल जुनु उछलत मनसिज मीन ॥३९१॥  
 रस रंगनि संगनि करत अंगन छुवन न देत ।  
 काम उमंगन में भरी अंगनि लौं चित चेत ॥३९२॥  
 प्रथम नगरि नूपुर रही जुरत सुरत रन गोल ।  
 घाइल है सोभा बढ़त कुच भर अधर कपोल ॥३९३॥  
 मोर मोर मुख लेत है जोर जोर दृग देत ।  
 तोर तोर तर लाज कौ चोर चोर चित लेत ॥३९४॥  
 रति विपरीत समै दुवौ भलकै मुख कन स्वेद ।  
 निकसे मानौ अमृत कन ससि मंडल कौ भेद ॥३९५॥  
 दंपति रति विपरीत में करत किंकिनी सोर ।  
 मनौ मदन महिपाल की नौबत होत टकोर ॥३९६॥  
 जटित जवाहिर आभरन छवि के उठत तरंग ।  
 लपट गहत कर लपट सी लपट लगी सब संग ॥३९७॥  
 लपटानी घन-श्याम सौं ज्यों तमाल सौं बेल ।  
 रही हार सी नारि गल-बाँह मृनालिनि मेल ॥३९८॥  
 सुरति समै स्रम स्वेद कन तिय मुख आइ सिताब ।  
 जुनु प्रोतम निज करन सौं छिरके आव गुलाब ॥४००॥  
 मिलत खिलत वतरस पगन मिल मिल विहँसत जात ।  
 भौंह भूर भाइन भरत सौंह परसपर खात ॥४०१॥



बिहँसि बिहँसि लागत हियै लपटि लपटि लपटात ।  
 गुह्यौ तरौनन तामरस बसन छपावत जात ॥४०२॥  
 रस ही रस वतरस पगत नेहै बर सरसात ।  
 देखि देखि दोऊ दुनी रीझ रीझ मुसकात ॥४०३॥  
 उठ न जाइ चाहत उठौ अति अलसात जम्हात ।  
 ललकि ललकि लालन गरै ललकि ललकि लपटात ॥४०४॥  
 दोऊ काम कलानि कर लूटे सुख अनमोल ।  
 नौद भरे भूमत भुक्त चूमत चारु कपोल ॥४०५॥  
 सुरति प्रेम-मद सौ छकी रंग-महल छवि लेत ।  
 लपटि लगति लालन गरै हरै हरै हँसि देत ॥४०६॥  
 बिगसत सुमन गुलाब को सुरमित परसत पात ।  
 ज्यों ज्यों पिय भेटति भुजनि त्यों त्यों तिय अकुलात ॥४०७॥  
 परखि परखि अति प्रेम रस करषि करषि चित लेत ।  
 परखि परखि पिय हित हियै हरषि हरषि हँसि देत ॥४०८॥  
 हिय हुलसत बिहँसत बदन बिलसत विमल बिलास ।  
 सुखनि समोइ रही खही रसिक रसीले पास ॥४०९॥  
 भरत अंक परजंक पर दोऊ रसनि समोइ ।  
 कंचन चित हित सौं कसत बुद्धि कसौटी दोइ ॥४१०॥  
 सवन सरोजन की कली मली भोर बहु बार ।  
 मुक्तहार परिहार कर किय तिय पिय हिय हार ॥४११॥  
 पाइन परि बूझत तुम्हें रसिक रसीले सोइ ।  
 कहिए छाती छाप कौ कितिक महातम होइ ॥४१२॥  
 सुचि सुगंध सोभा सरस राजत अमल अमंद ।  
 सखि गुलाब के फूल तैं भरत मधुर मकरंद ॥४१३॥  
 तुमही मैं देखी बई ललन रीति जग जोइ ।  
 सिसिर निसा मैं स्वेद-कन अंगन लखियतु सोइ ॥४१४॥

तुरत स्वेद सात्त्विक भयौ मोहि लखत बड़ भाग ।  
 जान परत दुर दुर परत उमगि उमगि अनुराग ॥४१५॥  
 पगनि चलत अति स्रम भयौ इत आवत उत जात ।  
 पलक पैढिए पलंग पर प्यारे प्रीतम प्रात ॥४१६॥  
 अरुन नील पियरे लसत अंकन सुमन समाज ।  
 अरी आज रितुराज की बनक बनै ब्रजराज ॥४१७॥  
 आए पिय प्यारे प्रिया पेखे प्रगट प्रभात ।  
 रँग सौ जाती राति रति मुसकानी बिन बात ॥४१८॥  
 भूपकि भूपकि लागत पलक नैकु न उघरत स्याम ।  
 मूँदि मूँदि राखत बही बलकन प्यारी बाम ॥४१९॥  
 बाद करत बकवाद बे-सवाद रस बाद ।  
 नीकै उनही कै रहौ पीके प्रेम प्रमाद ॥४२०॥  
 मन भावन आवन कियौ हियौ जुड़ावन लेखि ।  
 उत प्यारी दावन लगे छल बावन लौ पेखि ॥४२१॥  
 निसि बीते आए इतै हिय तैं कहत सुबात ।  
 नित नीतै रीतै करत जीतै जौ न सुहात ॥४२२॥  
 कीनै रँग रति राति में आए प्रात सखेद ।  
 नेह नवीनै स्रम कहत सीनौ स्रवन सुस्वेद ॥४२३॥  
 नहिँ जम्हाति अलसात नहिँ नौदौ नहिँ नियरात ।  
 वह विभावरी भवन की भरत भावरी जात ॥४२४॥  
 आंसू लखि पिय हँसि कछौ बोली बचन सभाग ।  
 लखै रूप छुटि छुटि परत मो हिय कौ अनुराग ॥४२५॥  
 इत आवत अति स्रम भयौ प्रीतम प्रान अधार ।  
 आए मंजुल कुंज तैं नई बिलोकि बहार ॥४२६॥  
 घर आवत पिय सुघर तिय नहिँ बोली अनखाइ ।  
 ज्यौं ज्यौं अति आदर करै त्यों त्यों हियौ सकाइ ॥४२७॥

कलाकंद बतरान मैं मधुराई मुसकानि ।  
 है पियूष मुखचंद मैं क्यों दृग बान समान ॥४२८॥  
 देखिस चिह्न गुपाल कौ बाधिमान कौ सेत ।  
 नहिँ हिरकी भिरकी नहीं रखैही रुख देत ॥४२९॥  
 नोंद भरे आलस भरे भरे खरे रस मैंन ।  
 लखि लालन लागी गरै करै निचौहैं नैन ॥४३०॥  
 पिय सौहैं भौहैं कसै करि तिरछौहैं नैन ।  
 कहत जाहु मन भावते जितै करत नित सैन ॥४३१॥  
 कह्यौ एक सौ लखि भए तुव मुख मुकुलित कंज ।  
 तौ लगि प्यारी के लिए चूमि कपोल सु मंजु ॥४३२॥  
 लाल लखावत एक कौ सांभ गुड़िन कौ खयाल ।  
 परसि उरोज मनोज बस मुदित भई तिय बाल ॥४३३॥  
 इक कौ रति विपरीत कौ चित्र दिखायौ लाल ।  
 रही मूँदि लोचन सु वह भुज भेंटी पिय बाल ॥४३४॥  
 दीठि गई सिरपैँच पै फिर हारी मैं पैँच ।  
 जो उरभी सुरभी न फिर परी पैँचि कै पैँच ॥४३५॥  
 डारौ डर गुरु जनन कौ कहूँ इकंत ग्रह पाइ ।  
 अति रुचि दोउन उर बढ़ी अघरन अधर लगाइ ॥४३६॥  
 भरत भावरै जिय रहत नैन तावरे जोइ ।  
 गाढ नाउ रे किन धरौ मिलन सांवरे होइ ॥४३७॥  
 कल न परत देखे बिना देखे लगत कलंक ।  
 कब भुज भेंटन पाइए भरि भरि अंक निसंक ॥४३८॥  
 बिन बूझे अपसोस यह बूझे होत सकोच ।  
 मिलन अनमिलन एक कौ करि मेरे मन सोच ॥४३९॥  
 हौं कब आवत ती इतै सखी लियाई घेरि ।  
 फिरि मद मयौ न मन कियौ गडुवा गढ़त न भेरि ॥४४०॥

हिलकी लै दिल कहत सुन सखी सवन संदेस ।  
 मिलकी मोहन मोह के ये दृग रहत हमेस ॥४४१॥  
 खटकी चित भटकी फिरत हटकी रहत हियै न ।  
 अटकी वह नटसाल सी नागर नट की सैन ॥४४२॥  
 थाकी करि करि जतन अति अतन तपन अति ताप ।  
 गजब हियै समझ्यौ न तब अजब इसक संताप ॥४४३॥  
 छुँ छिगुनी छल सौ कहूँ छली छैल छक पाइ ।  
 लखि रखौ रख करि रही अँगुरी अधर लगाइ ॥४४४॥  
 छल सौ छपि छतिया छुई कहूँ अचानक स्याम ।  
 गोसै गहि रसना दसन बसन कँपायौ बाम ॥४४५॥  
 धूँघट पट की ओट में रहे थके से नैन ।  
 नृह छके पिय छवि छके छके रहे दिन रैन ॥४४६॥  
 नेह दुरावत दुहुन कौ द्वेस देत सुख भूरि ।  
 राति मिलत है रति हँसत होत रुखाई दूरि ॥४४७॥  
 फिरि कै चितई प्रेम बस चली जात सतसंग ।  
 चाह मित्र के चित बढ़्यौ सुख-अनुराग अनंग ॥४४८॥  
 जानि भीत संकेत में मिलिबे कौ अकुलात ।  
 देखि अँधेरो बैठे सखि ढिगहू न सुहात ॥४४९॥  
 उन हँसकै बीरा दई हरषि लई सुखदान ।  
 होन लगी अब दुहुन की मग मधुरी सुसक्यान ॥४५०॥  
 सबै कौन परमान सम रख्यो बिरंच अचूक ।  
 सोच मैन-सरजाल भिद भयो हजारक टुक ॥४५१॥  
 कुंजन प्रति गुंजत मधुप कूजत कीर कपोत ।  
 इत कछु करिबे कौं सखी पर अधीन मन होत ॥४५२॥  
 और हाथ मन होत है देखौ याही ठौर ।  
 कारन कौन सखी कहौ तू प्यारी सिरमौर ॥४५३॥

यह मग देख भयावनी अहे सघन बन कुंज ।  
 बढी सीक उर धकधकी भयौ स्वेद कन पुंज ॥४५४॥  
 वंशीवट की गैल मैं हौं सखि गई भुलाइ ।  
 तब बरपाइ जदुराज नैं दीन्हों राह बताइ ॥४५५॥  
 आजु चतुर्थी व्रत कियौ गई लैन हौं फूल ।  
 पापिन पाप लगावती इहा पाप नहिँ मूल ॥४५६॥  
 मनचाही सब कहत है नहिँ मेरे मन मैल ।  
 आवत है नित फैल कर वही छैल नित गैल ॥४५७॥  
 सांचे कौ भूठो करत लिखत चित्र बिनु भीति ।  
 देखी हौं अतिही अजब गजब गाड़ की रीति ॥४५८॥  
 भूली बन भटकी फिरत गली अंधेरी माहिँ ।  
 विलखी लखि सखि सांवरे पहुँचाई गहि बाहिँ ॥४५९॥  
 कालिंदी जल - केलि मैं आली घाले हाल ।  
 लखि अलि ये डरधर लगे कंटक कमल सनाल ॥४६०॥  
 सरिता मैं मेरो सदन बसौ पथिक इत आइ ।  
 चित तै ओषम गरभ कौ दीजै भरम भगाइ ॥४६१॥  
 बसौ बरोठै पथिक ह्वां बसन न पावत और ।  
 यह मेरो यह सास कौ यह ननदी कौ ठौर ॥४६२॥  
 यह निकुंज सीतल सुखद सुखद मंद गत बात ।  
 बितै दुपहरी फिरि गवन करौ सांवरे गात ॥४६३॥  
 पिय विदेस घर सास नहिँ ननद न रहत घरीक ।  
 सूनौ घर कैसै बनत पथिक बसेरो ठीक ॥४६४॥  
 सुभग सरित सीतल सलिल पथिक न अति सुख देत ।  
 भीषन तीखन जेठ की तुरत ताप हरि लेत ॥४६५॥  
 लखि लोलन प्रफुलित बदन पुलकित सुरस सरीर ।  
 गहि गाधर आलिन अरति भरत न गागर नीर ॥४६६॥

यह ग्रीष्म तीखन तपन भीषण अति दरसाइ ।  
 मंजुल कुंज-लतान मैं बसौ बिहारी जाइ ॥४६७॥  
 मुख छपाइ सकुचाइ कछु अरु कँपाय भुज-मूल ।  
 इंदीवर नैननि लखति कान्ह कलिंदी कूल ॥४६८॥  
 बैठी गुर जन साथ मैं लखी अचानक लाल ।  
 नैन इसारन सौं कही सैन निसारत बाल ॥४६९॥  
 छवि सागर सागर गुननि नट नागर तकसीर ।  
 गुन आगर नागर नवल भरत न गागर नीर ॥४७०॥  
 सरित तीर मीतहि निरखि हरषि हरषि हँसि देत ।  
 नीर तरफ तकि तकि रहत फेर फुरहरू लेत ॥४७१॥  
 न्हात सरोवर सखिन सँग बिहँस बेस बर बाम ।  
 जोरि जुगल कर मित्र मिस मित्रहि करत प्रनाम ॥४७२॥  
 साजि जतन तन अति अतन तनक न बनत न जात ।  
 नई सुघर बैठी सुघर उघर परैगी बात ॥४७३॥  
 चढ़ी अटा देखति घटा कितिक करत छल-छंद ।  
 नेह निसोनै पैठती तेरी नजर बिलंद ॥४७४॥  
 हठक हठीली हठ करत बरजौ बार कितेक ।  
 चोट अचूक न चुकत ये तेरे दृग अमनैक ॥४७५॥  
 हरित बसन तन मैं पहिरि तिय न रँगै कर हेत ।  
 धूँघट पट की तार की दृग फँसिया फँस लेत ॥४७६॥  
 कान्ह कान्ह मुख आन नहिँ कौन परी यह बान ।  
 तू जानत है जान है सब जग जान-अजान ॥४७७॥  
 नाम सु मोहनलाल कौ सबै कहत चितचोर ।  
 चोरन की चोरी करत री तेरे दृग - जोर ॥४७८॥  
 बेसर है सुंदर सुखद तैसी लसत सुहार ।  
 मित्र लखत प्रमुदित हिथौ अमल कमल सी नार ॥४७९॥

लोक लाज खाई खुदी घूंघट पट की ओट ।  
 हरदफ बेधत हेर हिय ब्यौ हरदफ की चोट ॥४८०॥  
 घरहु तै' निरसंक तै' भरहु तै' न डरात ।  
 पहिर चूनरी तैं नितै हर पूजन कौ जात ॥४८१॥  
 यह पूजन कौ वेष नहिं हरहि पुजावन जात ।  
 हर पूजन कौ जात नहिं पहिरि चूनरी रात ॥४८२॥  
 कहा छपैयतु लखि परत प्रगट हियै कौ हेत ।  
 सारी गत अनुराग की सारी कहि कहि देत ॥४८३॥  
 नागर नट नागर निरखि बिहँसि बिहँसि हँस देत ।  
 नितै नितै हरि कौ चितै चितै चितै हरि लेत ॥४८४॥  
 बाँके बिरुदैती भरै भौह धनुष सर नैन ।  
 कहाँ करत है कौन पै कमनैती तुव नैन ॥४८५॥  
 अनियारे अंजन सहित अति अमनैक सुमान ।  
 सरफ सरफ रस होख कौ तेरे दगन समान ॥४८६॥  
 हँसि हेरत फेरत दगन लगन लगावन ईठ ।  
 छनक छबीले छल छकत तकत तिरीछी दीठ ॥४८७॥  
 मंजु करन मांजे मदन धरि सुहाग खर सान ।  
 तीछन लग बेधत हियौ तेरे ईछन बान ॥४८८॥  
 भेद तेरिष उर कढ़े ये उरोज जुग बाम ।  
 औरन उर बेधत इन्हें दया होइ किहि काम ॥४८९॥  
 आनन तै' सम स्वेद कन छुटि छुटि परत उरोज ।  
 मानौ मोतिन संभु जुग पूजत मनहु मनोज ॥४९०॥  
 मिलन सबै रस लै सकत लख लख मन न सकात ।  
 इक गुलाब के फूल पै बहु मधुकर मँडरात ॥४९१॥  
 कामल तन धन मालती सहत भार धन कोति ।  
 देत अलिन मधुकर गलिन पै न मलिन दुति होति ॥४९२॥

जीवन छाक छकी रहत मद के मद उमहात ।  
 कहति नटति रीभत खिभत हँसति भुक्तति भरहात ॥४६३॥  
 लखत छांह छन छवि छकति छलनि छवीली छैल ।  
 अरधीली ऐंढति अड़ति गरवीली गहि गैल ॥४६४॥  
 नैकु न उत टारे टरति नित निदरति सखियान ।  
 मन ललच्यावत जगत कौ अनियारी अँखियान ॥४६५॥  
 जुन्हरी राखन जात नित पहिरे चुनरी लाल ।  
 वह लुमरी हुमरी कुचनि गरे गुंज की माल ॥४६६॥  
 ढीमर वह छीमर पहिरि लूमर मदन अरेर ।  
 चितहि चुरावत चाहिकै वेंचत वेर सुरेर ॥४६७॥  
 फिर फिर कुच कसकत कसत लसत गुंज उर हार ।  
 तीछन ईछन सरन सौ वेधत हियै गँवार ॥४६८॥  
 अंग मोर आंचर उचै वार वार अँगिरात ।  
 ऐंड़ भरी ऐंठति खरी पैंड़ पैंड़ इठलात ॥४६९॥  
 गुंज-हार उर मैं पहिर दीन्है आड़ लिलार ।  
 मदमाती भूमति भुक्तति विहँसति हँसति गँवार ॥५००॥  
 आवत लखि रितुराज कौ समुझि सुखन कौ मूल ।  
 फूलि भई मालिन हियै लखि गुलाब कौ फूल ॥५०१॥  
 निकट परोसिन कलह वस रहि न सकी तिहि ठाम ।  
 सुख सौतन दूनौ भयौ सूनौ ग्रह लखि वाम ॥५०२॥  
 ज्यों ज्यों पति परनारि सौं करत सनेह निहार ।  
 त्यों त्यों प्यारी के दिए बाढ़त मोह अपार ॥५०३॥  
 ननद सासुरै पिय अनत सासु सौत के धाम ।  
 विहँसि उठे दृग वाम के सूनै सदन सकाम ॥५०४॥  
 सारठा—अरहर आई जानि भाई नहिँ तन थरहरी ।  
 यहै सोच उर आनि विरह ज्वाल जालन जरी ॥५०५॥



दोहा-अपत करी बन की लता जपत करी द्रुम साज ।

बुध बसंत कौ कहत हैं कहा जानि रितुराज ॥५०६॥

परिहरि सुख थरिहरि परी करि करि सुरत बिसेखि ।

तरिहरि आनन करि रही अरिहरि याकी पेखि ॥५०७॥

लखि आगम रितुराज कौ घर बाहिर न सुहात ।

पिय हियरै लागी रहत तऊ हियै अकुलात ॥५०८॥

हरि दृग समता कवि कहै करि कविता मिस सोइ ।

नाहक तोरत कंज बन मूरख कहत न कोइ ॥५०९॥

बंसी धुन स्रवनन सुनत अंग अनंग मरोर ।

चित्र लिखी सी है रही चकित चितै चहुँ ओर ॥५१०॥

मृगलोचनि सोचति कहा कह मोचत जल नैन ।

बन उपवन बहु नाटिका सुनियतु पिय पुर ऐन ॥५११॥

नाह महल आगै बनौ सुंदर बाग तड़ाग ।

सोच मोच मृगलोचनी चलौ भलौ तौ भाग ॥५१२॥

सुंदर हारसिंगार कौ हरि घर हार निहारि ।

हारि परी हिय हहरि कै यह सुकुमारि कुमारि ॥५१३॥

आवत केलि-निकुंज कर लिए मंजरी लाल ।

देखि मंजरी मंजरी रूप मंजरी बाल ॥५१४॥

लखी कंज कर आम की मंजु मंजरी ऐन ।

पीरी सब अंगन परी बीरी लेत बनै न ॥५१५॥

गहत चहत नहिँ पंचसर जान याहि जय मूल ।

एकै रौदा पर धरौ मदन करौंदा फूल ॥५१६॥

छवि-सागर नागर निरखि नट नागर बर बेस ।

कदलि पत्र सम थरहरी कदलि पत्र कर देखि ॥५१७॥

सुन सखि हौ बैरी भई मोहि चढ़ो यह गारि ।

हा हा जाहुँ जु नंदघर तन मन आऊं वारि ॥५१८॥

करत उछाहै मिलन की सुनि चाहै चित चाहि ।  
 बिन ब्याहै ब्रजचंद की छाँहैं छुवत लजाहि ॥५१६॥  
 चटक चटकतानन फटिक लटकि लटकि फिर जाति ।  
 खटक खटक पिय हिय अटकि गहति सु पर मुसक्याति ॥५२०॥  
 गाइन अति भाइत भरति अर्प तर्प की तान ।  
 अर्प दर्प कंदर्प जनु कीनौ सर संधान ॥५२१॥  
 सबज पोस जरपोस करि लीनौ लाल लुभाइ ।  
 भाइ भाइ फिर भाइ करि करति घाइ पर घाइ ॥५२२॥  
 मो दृग बांधे तुव दृगनि बिना दाम बे-दाम ।  
 मन महीप के हुकुम तैं फौजदार कौ काम ॥५२३॥  
 तन तैं मन तैं मिलन तैं भई कबहुँ न्यारी न ।  
 रही लालसा री हियै दई लाल सारी न ॥५२४॥  
 हित ही कौ नौकौ कियौ जी कौ जीवन जंत्र ।  
 सी कर रति आरंभ कौ महाबसीकर मंत्र ॥५२५॥  
 कर परसत सिसकीन कौ खोर सुनावत बाम ।  
 चहति अदा मैं कौनही चहति अदामै दाम ॥५२६॥  
 अंग अंग आभा दृगनि निरखति तजति न भौन ।  
 नित पलकन दूषित रहत पिय सुभाय, यह कौन ॥५२७॥  
 अलि आए परदेस तैं कालि सांवरे गात ।  
 आज संग के सखन सौं पूछत मग की बात ॥५२८॥  
 तेरो पति सब काम तजि आवत सांभ सहेत ।  
 मेरे देखन कौ ललन फिर फिर फेरी देत ॥५२९॥  
 सांभ समै कुंजन गई देखत चकित चकोर ।  
 ससि तैं नैन निवार कै चितवत मो मुख ओर ॥५३०॥  
 अंग अंग छवि बनक लखि कनक तनक छवि देत ।  
 भूषन दूषन से लसत पहिरावत किहि हेत ॥५३१॥

यह समता क्यों करि बनत मो कर मुख मृदु गात ।  
 कमल कलाधर कनक लखि कवि कुल कहत लजात ॥५३२॥  
 मो दुति देखे दामिनी दमयंती रँग फीक ।  
 रंभा मैं रंचक नहीं रति मैं नहीं रतीक ॥५३३॥  
 गात गुराई हेम की दुति सु दुराई देत ।  
 कंज बदन छवि जान अलि भूलि भाउरै लेत ॥५३४॥  
 नाह और के हाथ यह सुनी सखिन मुख बात ।  
 समुक्त रूप गुन चतुरई चतुर न हिए सकात ॥५३५॥  
 मो हित तू अति स्रम कियौ यहै स्वेद कन साख ।  
 भली गई आई भली भली लाल रुख राख ॥५३६॥  
 भाग नगर काबिल दिनी निपट कुमाऊं लेखि ।  
 मो रँग रह्यो बिहार मैं आई सूरति देखि ॥५३७॥  
 अरी बदी सी लखि परी अवधि बदी सी जाइ ।  
 गई नदी सी तामु ढिग रही नदी सी न्हाइ ॥५३८॥  
 कलित स्वेद-विगलित बचन लखियतु कंपित गात ।  
 भली भाति समझी अली कहत चली क्यों जात ॥५३९॥  
 तू न लखति कसि तून कटि सजि प्रसून धनु बान ।  
 आन आनि फेरी मदन करी मान तजि मान ॥५४०॥  
 होत सुजान प्रजान कत बैठी भौंहन तान ।  
 ल्यायो मदन महीप कौ ना फुरमा फुरमान ॥५४१॥  
 यह बसंत आयौ लखौ रह्यौ मदन सर तान ।  
 अब न मार नैहै कहूं मानिन मानि न मान ॥५४२॥  
 देखि घटा छन छवि छटा छुटत मुनिन के ध्यान ।  
 बैठी भौहैं तान सखि क्यों रैहै मन मान ॥५४३॥  
 मोरि मोरि मुख लेत है नहिं हेरत इहि ओर ।  
 कुच कठोर डर पर बसत तातै हियो कठोर ॥५४४॥

गही गुसा चितवत मही कही बहुत समुझाइ ।  
 यही पकर पारी रही रही मनाइ मनाइ ॥५४५॥  
 कही मान ऐंठति कहा दै दै बैठति पीठ ।  
 पिय मुख किन हेरत हरष फिर फिर फेरत दीठ ॥५४६॥  
 नए मान देखे न ये उनए घन अमनैक ।  
 लालन ये पाइन नए नए मानती नैक ॥५४७॥  
 तोहि रसत तो तन वसत निकसत मन अकुलात ।  
 मंजु मालती तजि अली कनक कली पर जात ॥५४८॥  
 मनहि मान मेरी कही नव दुलही सुखदान ।  
 इतनौ तन सोहत न ये एरी इतनौ मान ॥५४९॥  
 कहियतु सो करियतु नहीं धरियतु रिस मन आन ।  
 अनख अंग छीजत खरौ कत कीजतु मन मान ॥५५०॥  
 पर सौहैं चितवत कहा घर सौहैं चित लेखि ।  
 वर सौहैं दृग कर अहै वरसौहैं घन देखि ॥५५१॥  
 अभिरामिनि जामिनि सरद दामिनि दुति सरसाव ।  
 गज-गामिनि तज मान अब कामिनि सुख सरसाव ॥५५२॥  
 यह तोमैं नोखी नई परी अरी कह बान ।  
 गई वीत जुग जामिनी कहाँ भामिनी मान ॥५५३॥  
 कोटि जतन करि करि थके तजत न कैहू मान ।  
 हरष हँसी नागर सुघर दो हा कहत सुजान ॥५५४॥  
 सौहैं लेखि सौहैं करत अब त्योंरी न तरेरि ।  
 नेह भरे निजु नाथ सौं नेह नजर भर हेरि ॥५५५॥  
 दंपति एकै सेज पर काम-कला रस लेव ।  
 मान करै मानै दुवै मान मनावन हेत ॥५५६॥  
 ताकी यौ ताकी दसा थाकी कर उपचार ।  
 मार सुमार करी खरी वह सुकुमार कुमार ॥५५७॥

पानिपहीन लखौ परत कहा छपैयतु आप ।  
 नथ-मोती तैं जानियतु अली बिरह कौ ताप ॥५५८॥  
 फूल-माल अति प्यार कर कर सौ दिय पहिराइ ।  
 तुरत उतार लई सुघर पिय की दीठ बचाइ ॥५५९॥  
 चंदन चूर कपूर घसि अरु कपूर लपटाइ ।  
 आब गुलाब सुलाब किय तऊ न ताप बुझाइ ॥५६०॥  
 मोर सौर घन घोर तैं डर उपजावत मार ।  
 लपटो लता तमाल सौं बिरहिन करत सुमार ॥५६१॥  
 कल न परत तलफत तलप अलप बचन मुख नाहि ।  
 जतन जतन की जाचना करत अतन तन माहि ॥५६२॥  
 प्रनत रसत मिलत न बनत रहत न बनत बिहाल ।  
 घरी घरी तलफत खरी परी परी सी बाल ॥५६३॥  
 अलप सलिल सफरी भई नए बिरह सुकुमार ।  
 तलप परी तलफत खरी करी सुमार सुमार ॥५६४॥  
 बिरह जरनि गुरजन दुरनि छुवत न पंकज-पात ।  
 जोवति मग सोवति नहीं रोवत रैन बिहात ॥५६५॥  
 नहिँ बोलत डोलत नहीं खोलत नहीं कपाट ।  
 लेखत दिन बेषत गहै पेखत पिय की बाट ॥५६६॥  
 लै प्रसून पूजत सिवा मेटन बिरह कलेश ।  
 खोल मुठो चित चकित हूँ देत चढ़ाइ महेस ॥५६७॥  
 यह निसि दिन माथे बसत वह सिव कियौ अंग ।  
 बंधु हेतु हिय समुझि ससि करत ताप अति अंग ॥५६८॥  
 अधरन पर बेसर सरस लुरकत लुरक बिसाल ।  
 राखन हेतु मराल जनु मुकति चुगावति बाल ॥५६९॥  
 तन भुरसी तरसी हियै परसी बिरह जरुर ।  
 दगनि वारि भर सी लगी दरसी अरसी नूर ॥५७०॥

कहत आन की आन मुख सुनत आन की आन ।  
 पिय प्यारे चल चाहियै तिय प्रानन की प्रान ॥५७१॥  
 कोइन की छवि कहि सकै को इनकी छवि लाल ।  
 रोचन तैं रोचन कहा जावक जपा गुलाल ॥५७२॥  
 लसत हिए छवि देत यह बिन गुन मन की माल ।  
 रोचन रँग रोए मनौ सोहत लोचन लाल ॥५७३॥  
 लाल लाल लोइन निरखि लालन के नव बाम ।  
 हाथ आरसी लै लखति निज लोचन अभिराम ॥५७४॥  
 उसनीधे बीधे विधे सुखन लखि लोचन भर पाथ ।  
 बोली नहिँ सुंदर सुघर सुकर सुकर दै हाथ ॥५७५॥  
 सुनियत गुनगन रावरे गुनियत मन दै ठीक ।  
 वहै लीक जाहिर करत यहै पीक की लीक ॥५७६॥  
 ओंठनि अंजन दृग अरुन बनी घनी छवि आज ।  
 भोरहि आए भोर बन मोहि भोरवन काज ॥५७७॥  
 वाके उर लागे निसा पागे परम सनेह ।  
 लागे नख रागे रँगन अनुरागे अवगेह ॥५७८॥  
 सब गुन आगर देखिए नागर परम प्रवीन ।  
 रस-सागर जा उर लगे रूप उजागर कीन ॥५७९॥  
 निसि जागे रागे नयन पागे परम सनेह ।  
 भाल लाल इहि हाल सौ आए मेरे गेह ॥५८०॥  
 भपकौहिँ पल देखियतु कहत हँसौहिँ बैन ।  
 अलसौहिँ सौ गात कत करत मिचौहिँ नैन ॥५८१॥  
 रोस सोस फिरि होस करि फेर पठावति मोहि ।  
 मोह सुमोहन सौ लग्यौ कहा सिखाजं तोहि ॥५८२॥  
 कलह करत नेहै करत तेरी बान सनाम ।  
 कहा चूक है स्याम की तूही बाम सुबाम ॥५८३॥

कल न परति हहरति हियै नए विरह ब्रजनाथ ।  
 खिन खिन छवि छीजति खरी खिन खिन मोजति हाथ ॥५८४॥  
 बिन गुनाह निज नाथ सौ नाहक भई सरोस ।  
 अनख हिए कत कीजियतु काहि दीजियतु दोस ॥५८५॥  
 हौं रस मैं अनरस कियौ तूं न लगी रस राह ।  
 तब कस ना बस ना कहाँ अब रसना लगि नाह ॥५८६॥  
 साजि साज कुंजन गई लख्यौ न नंदकुमार ।  
 रही ठौर ठाढ़ी ठगी जुवा जुवा सौ हार ॥५८७॥  
 पिय बिन सूनी सेज लखि सूनी सी हिय बाल ।  
 भौहैं चढ़ी कमान सी उतर परी तिहि काल ॥५८८॥  
 सजि सिंगार कुंजन गई लख्यौ नहीं बलबीर ।  
 ठीढ़ी ठाढ़ी सी तरुन बाढ़ी गाढ़ी पीर ॥५८९॥  
 दिनकर कर दरसे सुखद गई निसा सब बीति ।  
 मोसौं प्रीति प्रतीत दै कहूं रची रस-रीति ॥५९०॥  
 यही अवधि पर ल्याइहैं तेरी सपथ सुजान ।  
 उडगन गन विरले परे भामिनि भयो बिहान ॥५९१॥  
 अधरतिया की कर अवधि कीनी फिर न सम्हार ।  
 भए कौन धौं तिया के छक छतिया के हार ॥५९२॥  
 दीप-सिखा फीकी भई गई छपा की छाह ।  
 जानत पिय पागे अनत अनुरागे छवि मांह ॥५९३॥  
 उडुगन गगन मलीन छवि छनदा गई सिराइ ।  
 रसिया रस लूटौ कहूं बन तैं अनतै जाइ ॥५९४॥  
 नहि डोलति खोलति दगनि सकुच न बोलत बोल ।  
 अमल कमल दल से दुवौ पीरे परे कपोल ॥५९५॥  
 कुंजन अलि गुंजन लगे किय कलक्खकन सोर ।  
 सजनी गत रजनी भई नीरजनी छवि ओर ॥५९६॥

इतै उतै चितवत रहै वितै रहै निसि जाम ।  
 हितै हितै तन कौ अली कितै रहै घनस्याम ॥५८७॥  
 जटित जवाहिर आभरन करि बैठी इक तैर ।  
 पिय कौ आउन जानि कै दिया दिया कहि दैर ॥५८८॥  
 करि मजेज सज सेज पर बैठी साज सिँगार ।  
 खेलि किवारन कौ रही इकटक नैन निहार ॥५८९॥  
 महल महमही महक मग मनघर मै न मजेज ।  
 सौति सुहागहि रेज करि साजी सुंदर सेज ॥६००॥  
 सजि सिँगार आनँद मढ़ी बढ़ी सरसज छाह ।  
 रंगमहल फूली फिरति चितवत मग चित चाह ॥६०१॥  
 उदित उमंग अनंग बर उर उमग्यौ अनुराग ।  
 सजत सेज भूपन वसन अंग अंग अँगाराग ॥६०२॥  
 सज सिँगार सुख सेज पर बैठी बाल रसाल ।  
 लाल लाल मनि लालमनि जनु जगमगत रसाल ॥६०३॥  
 तन सिँगार कुच-भार तैं हार हियै पहिरै न ।  
 ल्याई प्यारी प्यार कर प्यारे हिय हहरै न ॥६०४॥  
 भौहिँ तान कमान बर नैन सरन कर साधि ।  
 गहि राख्यौ मन लाल कौ अलक जँजीरन बांधि ॥६०५॥  
 प्यारी पेखत पेखनौ उभक्त भुकोरन वंक ।  
 भौ प्यारे कौ पेखनौ प्यारी बदन मयंक ॥६०६॥  
 घन घेरे नेरे रहत हरे खरी लजात ।  
 मो मुख देखे विन उन्हँ कल न परत दिन-रात ॥६०७॥  
 चलौ छबीली हित चितै छोड़ सहेली साथ ।  
 अति इतरात बतात कह परखत गोपीनाथ ॥६०८॥  
 चंदमुखी मुखचंद की दर्ई छटा छुटकाइ ।  
 रही चांदनी चौक में चारु चांदनी छाइ ॥६०९॥



बड़ अँखियां बड़रे दृगन बड़े रूप यह बाल ।  
 वह चित चाहति चाह सौं चलौ छबीले लाल ॥६१०॥  
 चलौ लाल वह बाल सौं कीजै सरस बिलास ।  
 मंजु कुंज में करि रही अति छवि पुंज प्रकास ॥६११॥  
 लाई मान मिटाइ सखि पाइन पारी आइ ।  
 रहे लाल उर लाइकै मनौ रंक निधि पाइ ॥६१२॥  
 लता लचत बरही नचत रचत सरस रसरंग ।  
 घन बरसत दरसत दृगन सरसत हियै अनंग ॥६१३॥  
 सुंदरि मनि-मंदिर खरी छिति छलकत छवि जाल ।  
 लसत मंजु महुँदी नखनि चखनि बिलोकहु लाल ॥६१४॥  
 तैसी जरतारी सुही सारी जगमग जोति ।  
 चलि प्यारी पिय पै बिहरि बलिहारी रति होति ॥६१५॥  
 सजि सिंगार अनुराग कर देखौ वाग बहार ।  
 चलि बस मैं प्रीतम करहु रसमय समय निहार ॥६१६॥  
 चलन कहत नार्हीं कहत कौने सिखई तोहि ।  
 बहिरावत बातन कहा बहकावति नित मोहि ॥६१७॥  
 चलि बल अब न बिलंब कर लखि इत रात सिरात ।  
 समुझ सयानी बात अब कत बैठी इतराति ॥६१८॥  
 सटकारे कारे सरल लसत सुहाए बार ।  
 देखहु बलि चलि औचका नवल बधू सुकुमार ॥६१९॥  
 जुवति कन्हवाई रस पगी पगन डगमगी ऐन ।  
 सुचि सौंघे से सगबगी करी जगमगी रैन ॥६२०॥  
 चीर चुरैलन भीर मग नीर गभीर मभाइ ।  
 करि पन्नग के पाँउड़े पिय पै पहुँची जाइ ॥६२१॥  
 तन-दुति लखि लाजति तड़ित भाजत घन छपि जात ।  
 छवि छाजत राजत खरी नए नेह सरसात ॥६२२॥

सरद कलानिधि कमल की नारद करत विसेखि ।  
 छवि छलकत भलकत बदन मन ललकत दुति देखि ॥६२३॥  
 खरी दुपहरी जेठ की लखि न परी तिहि माहिँ ।  
 लपट अरुन पट लपट सी भपट चली छपि छाहिँ ॥६२४॥  
 चलि देखौ दुति दामिनी दिपति मनौ दुति रूप ।  
 मंजु मंजुघोषा भई जोषा जगत अनूप ॥६२५॥  
 कुंजन लौं नव नलिन की कली रही फब फैल ।  
 कीनी गरक गुलाब सौं तिन कुंजन की गैल ॥६२६॥  
 पंकज से पसरे लखे कंटक बिकट अपार ।  
 दिखि अपंथ सौ पंथ लौ चली भली अभिसार ॥६२७॥  
 अली जात मग देखिए दीप सिखा सी नार ।  
 चली भली निज गेह तैं स्याम सनेह निहार ॥६२८॥  
 काम-केलि सुंदर कला निसि दिन करति अलेखि ।  
 पिय-अनुराग सुभाग कर चलौ सुहागिल देखि ॥६२९॥  
 फैले बृंद फनिंद के गैल छैल नहिँ भूल ।  
 मेघपुंज तमकुंज कौ चली अली अनुकूल ॥६३०॥  
 भूर भाइ हिय दूर लगि लखियतु सदा सहूर ।  
 नेह नूर दरसत दगन प्रेम पूर भरपूर ॥६३१॥  
 पहिरि सेव सारी सरस चंदन चरचित देह ।  
 चंद्र उदै लखि चंद्रमुख बिहँसि चली पिय-गेह ॥६३२॥  
 लखि निकुंज सूनौ दगनि रही सुघर मुख मोर ।  
 पिय लखि फूलन मिस चली कलित कुंज की ओर ॥६३३॥  
 वह न कहत हौं हूं कहत तन कौ बिरह कलेस ।  
 घरी एक मैं होइगो दुर्लभ वचन सदेख ॥६३४॥  
 ललन चलन सुनि पलन मैं आह गयो बहु नीर ।  
 अधखंडित बीरी रही पीरी परी सरीर ॥६३५॥

तिय हिय अंकुर प्राति के होन लगे द्वै पात ।  
 यह हांसी छोड़ी चलन ललन चलन की बात ॥६३६॥  
 रवन गवन सुनि भवन मैं चटपट निपट उदास ।  
 हियै दहत कहत न कछू दीरघ लेत उसास ॥६३७॥  
 ललन चलन कौ चलन सुनि मलिन हिए अकुलात ।  
 फिलकी बूमति सासु के हिलकी उर न समात ॥६३८॥  
 मांगी बिदा विदेस कौ दै जराइ अनमोल ।  
 बोली बोलन सुघर तिय दिय अलाप हिंडोल ॥६३९॥  
 पीरी पीरी तन भई वीरी लेत लजात ।  
 सुनि खवनन प्रीतम गमन सोसन हियौ हिरात ॥६४०॥  
 कल न परत जब तैं कही ललन चलन की बात ।  
 लगी पिया छतिया तिया छतिया नहीं सिरात ॥६४१॥  
 चितवत धूंधट ओट है गुर जन दीठ बचाइ ।  
 खवन सुनत प्रीतम गमन अगमन गई ससाइ ॥६४२॥  
 कहा कहौ कहत न बनत प्रीतम करत पयान ।  
 बरबस आप समान मुहि करिहै अतन अमान ॥६४३॥  
 गमन तिहारौ सुनि रवन पठवत सब सुख साथ ।  
 निज प्रानन प्यारी वहै सौंपति मेरे हाथ ॥६४४॥  
 मिलि बिछुरत मिलि मिलि चलत फिरि फिरि मिलि अकुलात ।  
 दिन दिन चलन कहै ललन दिन दिन रहि रहि जात ॥६४५॥  
 तुरत गमन सुनि ललन कौ सुन सखि परम प्रवीन ।  
 छिन उछलत छिन छिन बिकल जल बिछुरत जनु मीन ॥६४६॥  
 ललन चलन सुनिकै वही रही हिए मैं हार ।  
 मुख बोलत खोलत न दग नवल बधू सुकुमार ॥६४७॥  
 मनभावन आवन सुनौ सुख सरसावन बोल ।  
 पुलकत तनु हुलसत हियौ बिहँसत ललित कपोल ॥६४८॥

बहु बासर बिछुरे मिले दंपति परि परजंक ।  
 हियरे लगि मेटति बिरह मेटति भरि भरि अंक ॥६४६॥  
 सवन सुनत पिय आगमन हरषि हरषि सुखदानि ।  
 भुज फरकत हुलसत हियौ दग्गसत मुख मुसक्यानि ॥६५०॥  
 तन की गति औरे भई नहि जानत सखि सोइ ।  
 वाम आंख फरकत चुरी कर की करकी दोइ ॥६५१॥  
 आवत पति परदेस तैं लखि हरषी दिय वाम ।  
 ललकि लगाइ लगाइ उर सुख पावत अभिराम ॥६५२॥  
 सखिन संग सोहत खरी आए सुनि नंदनंद ।  
 लोचन लालन के लखे भयौ मोद-सुख-वृंद ॥६५३॥  
 मनि मंदिर डोलत खरी हँसि हँसि बोलत वैन ।  
 लखि नंदनंद अनंद की उघरी सुघरी ऐन ॥६५४॥  
 नौद भरे आलस भरे लखि पिय अंकित गात ।  
 उऊ ललकि लागी गरै हरै हरै मुसक्यात ॥६५५॥  
 गहौ मौन धीरज धरौ रति अंकित पिय पेखि ।  
 हरै बात कहि अलि अहे वे हिय बसे विसेखि ॥६५६॥  
 आवत अंक न अंक लखि रति के तिया ससंक ।  
 करौ मान पिय पगन पर तजौ मान तिहि बंक ॥६५७॥  
 पगनि परो पेखत न पिय हिय न लगत अनखात ।  
 दृगन अलुभर सी लगी झुकि झुकि झुकि झहरात ॥६५८॥  
 डरत नहीं कुलकानि तैं जदपि कठिन ब्रज तौर ।  
 तदपि तरुनि तरुनी भई नेह नदी की भौर ॥६५९॥  
 उन नैननि चितवत न अब चितवत चित कौ हेत ।  
 नई नई रीतैं करत नई नई चित देत ॥६६०॥  
 कहत और औरै करत निसिदिन आठौ जाम ।  
 नीकै नेह निवाहिवो है सबही को काम ॥६६१॥

सोच मोच मृगलोचनी कितिक सौति छलछंद ।  
 मंद करत ससि सरद कौ तो मुख राका चंद ॥६६२॥  
 चरचि चबाइन कहति है सो नार्हीं चित देहु ।  
 नैन कलस कर सांवरी रूप-सुधा-रस लेहु ॥६६३॥  
 सीख मान मेरी हियै तजि सब चार विचार ।  
 सो तन देखत है रहै निज प्रीतम डर हार ॥६६४॥  
 कहत रात कौ पेखनौ क्यों सब सखिन सुहात ।  
 मो डर गांसी सी लगत मो हाँसी की बात ॥६६५॥  
 तुव तन लगि सुरभित पवन गवन करत गति मंद ।  
 ताकौ अति आदर सहित परिरंभत नंदनंद ॥६६६॥  
 रस ही मैं रस पाइयतु यह सुरीत जग जोइ ।  
 वा मुख की बतियान सौं अनरस मैं रस होइ ॥६६७॥  
 यह समयो पैहै न फिर अजौ समुझ चित चेत ।  
 बनत न फिरि कौनो जतन अतन अतन कर देत ॥६६८॥  
 स्रम बिलोकि दोरत पवन कहत न गवन प्रसंग ।  
 राखत पिय करि प्यार जिमि हरि गिरिजै अरधंग ॥६६९॥  
 दरसै तै दुख दूर है परसै होत अनंद ।  
 तुव तन सोभासिंधु है तुव मुख राकाचंद ॥६७०॥  
 नेह भरी अँखियान सौं चितवत तो तन ओर ।  
 भयो रहै नंदनंद अलि मो मुख-चंद चकोर ॥६७१॥  
 मुख नांही बांही गहत नाही नार्हीं ठीक ।  
 प्यारी तौ प्यारी लगत ही तै नार्हीं नीक ॥६७२॥  
 करी बहुत मनुहार पै अनख भई अनखैल ।  
 गांठी कस दीबी मिसन नीबी छोरत छैल ॥६७३॥  
 वचनन मैं दरसावती अनखाहट की रौस ।  
 बनी रहत डर मैं ललक रुखे रुख की हौस ॥६७४॥

लियै आरसी लाल कर मांगी एक लुभाइ ।  
 राखि उकर सबकौ गए मंदिर मुकर लिवाइ ॥६७५॥  
 तोर कंज दीजे हमैं सबन कहाँ पिय आइ ।  
 तोरि कंज मंजुल विहँसि दीन्हें स्याम चलाइ ॥६७६॥  
 तोरि फूल दीजै हमैं सबनै कहाँ सुनाइ ।  
 चंपक तरुनी स्याम हँसि दीन्ही डार नवाइ ॥६७७॥  
 धरत न चित सीखे कहा दुरत न लोक कलंक ।  
 रहत सदा परदार हित परदा रहित निसंक ॥६७८॥  
 विहँसि विहँसि सखि साथ तैं मुरकि चितै इहि ओर ।  
 मो मन माँझ गड़ी रहै वह कजरारी कोर ॥६७९॥  
 वदन मोरि हँसि हेरि इत नैन नैन सौँ जोर ।  
 गोरी थोरी बैस की लै जु गई चित चोर ॥६८०॥  
 मिली साँकरी खोर में गोरी मुख मुसकाय ।  
 नैन जोरि ढिग है कढ़ी नैसुक नेह जनाय ॥६८१॥  
 रूप सरस पानिप भरौ पावत नेकु न थाह ।  
 घूम घूम मन धिरतु है भूम भूमकन माह ॥६८२॥  
 मन मनमथ फंदन परौ क्यों हूँ निकसतु नाह ।  
 तिहि पर लुरकन लुरक की गड़ी रहत हिय माह ॥६८३॥  
 हावनि बहु भावनि करति मनसिज मन उपजाइ ।  
 दाइल वह थाइल करत पाइल पाइ बजाइ ॥६८४॥  
 धनुष वेद के भेद बहु मनौ पढ़ाए सैन ।  
 चुकत न चोट अचूक ये मृगनैनी के नैन ॥६८५॥  
 धूँधट पट की ओट है चोट अचूक चलाइ ।  
 चंचल चखन चितै गई चितै गई ललच्याइ ॥६८६॥  
 सरसत सुख दरसत दृगन परसत रस की खानि ।  
 गांसति चित चितवनि ललित फांसति मुख मुसक्यानि ॥६८७॥

बदन फेरि हँसि हेरि इत करि ललचौहँ नैन ।  
 उर उरकी दुरकी लुरक जुर मुरकी कर सैन ॥६८८॥  
 दृगन जोरि चित चोर बिधु बदन मोरि मुसक्याइ ।  
 गई अली की ओट है चितवन चोट चलाइ ॥६८९॥  
 ऐन मैनमय सैन करि बदन मोरि दृग जोरि ।  
 नागर नेह निसा करी वहां सांकरी खोरि ॥६९०॥  
 ललचौहीं कछु बात कहि तिरछौहीं अखियान ।  
 खटकी उर अटकी रहत वा मुख की मुसक्यान ॥६९१॥  
 सखिन संग कर गहि अटति नटति दिवावति सौंह ।  
 नैकु नहीं हिय तै' टरति वह तिरछौहों भौंह ॥६९२॥  
 कछुक मोरि मुख जोरि दृग तिरछी भौंह चढ़ाइ ।  
 गई अलो की ओट उठि मंद मंद मुसक्याइ ॥६९३॥  
 कहु ऐसी रति बर कला अनत न लखियतु चारु ।  
 या तै' मो मन पुरबधू भई हिए को हारु ॥६९४॥  
 झिलमिलात भूषन बसन अंग अंग सुकुमार ।  
 मनमथ की बूटी मनौ नगर-बधूटी नार ॥६९५॥  
 और तौर आभा अमल भूषन औरै तौर ।  
 रची बिधाता पै न कहु बार-बधू सी और ॥६९६॥  
 तौन कौन दिन भौन मैं सोनजुही सी बाल ।  
 भ्रमकि लागिहै मो गरे ज्यों बनमाल रसाल ॥६९७॥  
 बिरह लपट की भ्रपट की तबै तपन यह जात ।  
 लपटि लपटि पिव भेटिए गोरो गोरे गात ॥६९८॥  
 नैन सुने जे नेह को गड़े हिए निकसै न ।  
 वह इठलानि बतानि वह बिसराए बिसरै न ॥६९९॥  
 सालै नित नटसाल सी निकसि सकै किहि भांति ।  
 बड़ी बड़ी अखियां हियै गड़ी रहै दिन राति ॥७००॥

मुख बिलोक दृग करि सकल गरै मेलि भुजमाल ।  
 सुख समेटि कब भेंटबी सोनजुही सी बाल ॥७०१॥  
 हँसि हँसि इठि हियरा हरति करति बहुरि मनुहारि ।  
 सुखद प्रीति परनारि की रची बिरंचि बिचारि ॥७०२॥  
 सौँहैं करि लोचन जुगल करि करि भौहैं बंक ।  
 कब लगिहै गुन आगरी नगर नागरी अंक ॥७०३॥  
 अंग अंग आभा अमित अमल कमल सी बाल ।  
 तासौं रुख रूखो करत कौन चाल यह लाल ॥७०४॥  
 बार बार याते कहत यह मेरे जिय सोस ।  
 क्यों सैहै सुकुमार वह तुमरौ आतप रोस ॥७०५॥  
 जब ते रुख रूखो कियो तब तैं अति अकुलात ।  
 लालन लखि वाकी दसा मो पर कही न जात ॥७०६॥  
 लाल तिहारे रूप कौ नयो जाल दरसात ।  
 जामै खंजन दृगन के दृग गंजन फँसि जात ॥७०७॥  
 लगी अंक परजंक पर मुख मयंक सुसकात ।  
 जान परी नहि ललन कौ वह जिय तैं रिस जात ॥७०८॥  
 ठठे सघन घन लखि गगन अधिक अँधेरी रात ।  
 कहो अकेलो जावगी बरसाने किहि भात ॥७०९॥  
 हम सबके दृग मूँदिहैं जान आपनो मेल ।  
 आवो जुर मिल खेलिए चार-मिहावन खल ॥७१०॥  
 हँसकै हरि सब सौं कह्यौ देखहु बाग बहार ।  
 हम गूँदत निज करन सौं सुमन सुमन कौ हार ॥७११॥  
 लखी लाल कर नागरी सुघर मंद सुसक्याइ ।  
 मुख मिलाय गवरी रहो अँगुरी हियै लगाइ ॥७१२॥  
 खेलन के मिसि संग की दई सबै बहराइ ।  
 मनभाई प्यारी ललन लोन्ही कंठ लगाइ ॥७१३॥



ससकत मुख सीवी करत वहै छबीली बाल ।  
 फिर फिर चित्र भुजंग कौ दृगन दिखावत लाल ॥७१४॥  
 दोऊ प्रेम भरे खरे करि करि स्वांग अनूप ।  
 लालन ललना रूप धरि ललना लालन रूप ॥७१५॥  
 अंगराग अंगनि चरचि भूषन साज सिंगार ।  
 बिहँसति रति-मंदिर चली सुंदर अति सुकुमार ॥७१६॥  
 अंग अंग छवि जगमगत पहिरत भूषन अंग ।  
 वही हरी सारी हरी सारी सौति उमंग ॥७१७॥  
 बंसी धुनि सवनन सुनत तन मन अति अकुलाइ ।  
 दौरी जावक दै दृगनि अंजन पगनि लगाइ ॥७१८॥  
 उभकि भरोखनि भांकि भुकि लखि लालन मन मोद ।  
 हिय हुलसति सरसति सुखनि बिलसति विविध विनोद ॥७१९॥  
 रस मैं है अनरस कियौ प्रीतम दियौ उठाइ ।  
 अब कासौं कहिए कहा ल्यावै कौन मनाइ ॥७२०॥  
 भरत अंक परजंक पर दैसि बिहँसति बतरात ।  
 ज्यौं ज्यौं तिय नाहीं करत त्यों त्यों सुख सरसात ॥७२१॥  
 कह्यौ न मानत हैं कहूं सीखे कौन सुभाय ।  
 सकुचत नैकु न आपने कत सकुचावत आय ॥७२२॥  
 सजि सिंगार भूषन बसन सुंदर सरस सभाग ।  
 चली भली नंदलाल कौ मिली सहित अनुराग ॥७२३॥  
 हैं तो सौ सांची कहत तू भूठी मति मान ।  
 मन भावन देखे घरी लाज लजावत आन ॥७२४॥  
 दुरि दरसति दामिनि दमक वरसत घन घनघोर ।  
 चाहत चित चित-चोर कौ डारी मदन मरोर ॥७२५॥  
 जितै बसै प्रीतम वहै करि करि उर अभिलाष ।  
 राखत सूरजमुखी लौं मुख वाही रुख राख ॥७२६॥

रहत बिसुर बिसुर नित तातै बिनजं तोहि ।  
 दै रे लिखि सूरत वहै चतुर चितेरे मोहि ॥७२७॥  
 यह रँग है घनश्याम कौ काहू दीनौ तूल ।  
 तिहि रँग सौं रँग सी गई देखत अरसी फूल ॥७२८॥  
 मान करन नार्हीं करन फिर हिय सौं लगि जान ।  
 निसि दिन चतुर सुजान की नहि बिसरति वह बान ॥७२९॥  
 लागत अगर अँगार सौं कहा कहाँ सखि तोहि ।  
 गर सौं बर लागत सबै नगर नाग सौ मोहि ॥७३०॥  
 औरै मन औरै बिपिन औरै पौन बिसेखि ।  
 औरै ना औरै कछ औरै औरै देखि ॥७३१॥  
 हारो हरि करि करि जतन करो अतन तनवी न ।  
 सेज परी तलफत खरो बिना बारि ज्यों मीन ॥७३२॥  
 घटत नहीं कैहूँ कहूँ अनुदिन बढ़त अछेह ।  
 वही कूबरी के विरह भई दूबरी देह ॥७३३॥  
 सपनै मैं प्रीतम मिले हिले खेल रस ऐन ।  
 कहा कहाँ तौ लगि गई नींद निगोड़ी नैन ॥७३४॥  
 वह चितवन बिहँसन वहै आए प्रीतम भौन ।  
 बोरी लेत न देत कर कहा रहे गहि मौन ॥७३५॥  
 मोर मुकुट कटि पीतपट मुरली अधर बिराज ।  
 पाइ दरस पायौ अलो नैनन को फल आज ॥७३६॥  
 जब जान्यौ या जीव कौ कहूँ नहीं बिस्राम ।  
 सुन साके जुग चार के तातै ताके राम ॥७३७॥  
 सचर अचर जग जीव ते सब बिधि होत सनाथ ।  
 देत काम सब काम के तकत कामतानाथ ॥७३८॥  
 मन बच कर्म सुनाइ कर रघुपति पद अनुराग ।  
 सो जानत सिय राम हैं धन्य भरथ कौ भाग ॥७३९॥

जो कविता मैं आदरत साहित रोति विचार ।  
 सो निहार लघु करि कह्यौ निज मति के अनुसार ॥७४०॥  
 जो कछु पूरब कविन तै बरनी काव्य सुवानि ।  
 से विचार करु चारु मैं देहा कहे बखानि ॥७४१॥  
 रस धुनि गुनि अरु लच्छना बिग्य मवद अभिराम ।  
 सप्त सही यामैं सही धरौ सतसई नाम ॥७४२॥

# दीपिका

[ अंक दोहों की संख्या के सूचक हैं ]

## (१) तुलसी-सतसई

१. परधाम—सबसे परे है धाम जिसका अर्थात् सर्वोपरि ।
२. सुर-तरु—कल्पवृक्ष जो इच्छानुकूल फल देता है ।
३. जापर—जिसके ऊपर; अपर न आन—और दूसरा कोई नहीं । निरवान—निर्वाण, मोक्ष ।
७. घरतर—श्रेष्ठ घर ।
८. अनत—अन्यत्र, और जगह । अटन—दौड़ना, भटकना ।
१०. रुख—(फारसी) सम्मुख ।
११. वदहि—(संस्कृत वदति) कहता है ।
१२. न अथवत—अस्त नहीं होता । कुतसित—कुत्सित, तुच्छ, नीच । तम—अंधकार, पाप, अज्ञान ।
१८. वरन-विपरजय—वर्ण-विपर्यय, अच्छे की उलट पुलट । 'राम' शब्द सब मंत्रों का और ज्ञान का मूल समझा जाता है । रेफ और अनुस्वार से ही व्याकरण के सूत्रों के अनुसार प्रणव मंत्र 'ॐ' और 'सोऽहम्' तथा हों, श्रीं, छुं आदि सब बीज मंत्र सिद्ध किए जाते हैं ।

२१. इस दोहे से तुलसी-सतसई का रचना-काल निकलता है । अहि-रसना—२, धन-धेनु—४, रस—६, गनपति द्विज—१ । अंक उलटी तरफ से गिने जाते हैं—अंकानां वामतो गतिः । इस प्रकार १६४२ संवत् निकलता है । माघ—वैशाख मास । सित—शुद्ध पक्ष । सिय-जनम-तिथि—सीताजी का जन्म नवमी को हुआ था ।

२४. म-न-भ-य-ज-र-स-त—पिंगल के नियमानुसार विभिन्न गणों के नाम । एक गण में तीन वर्ण होते हैं । म गण में तीनों गुरु, न गण में तीनों लघु, भ गण में केवल आदि का वर्ण गुरु, य गण में केवल आदि का वर्ण लघु । ज गण में केवल मध्य का गुरु, र गण में केवल मध्य का लघु, स गण में केवल अंत का गुरु और त गण में केवल अंत का वर्ण लघु होता है । प्रथम चार गण मंगलकारक माने जाते हैं और शेष चार अमंगलकारक । मंगलकारक गणों से ही छंदों को आरंभ करने का विधान है, अमंगलकारक गणों से नहीं । ला—लघु; ग—गुरु । घटना—योजना ।

२५. समान—अ-इ-उ-ऋ-लृ ये पंच स्वर समान कहे जाते हैं । अपर वेद गुरु मान—और गुरु चार प्रकार के होते हैं ( वेद ४ ); दीर्घाक्षर, संयुक्ताक्षर के पहले का अक्षर, अनुस्वार-युक्त और विसर्गयुक्त अक्षर । विकल्प—जहाँ दोनों रूप हो सकते हैं यथा पद के अंत का लघु अक्षर भी कभी कभी सुबीते के अनुसार गुरु पढ़ा जाता है ।

२८. मुनियों के कहे हुए उनके सहस्रों नामों में से 'तुलसी-बल्लभ' नाम को सुनकर धर्म-परायण राम को हँसकर देखती हुई सीताजी हृदय में सकुचा जाती हैं । हँसी इसलिये कि अब आप दूसरों के भी बल्लभ होने लगे और संकोच इस बात का कि हमने राम से ऐसी दिल्लगी की ।

२९. रस—कान्यास्वाद । परिजन—सेवक । बरन—राम नाम के अक्षर ।

३०. पुरट—सुवर्ण ।

३१. करतब—कृत्य, यहाँ पर कविता ।

३५. मोर चाहे ( वर्षा ऋतु में ) मदमत्त होना छोड़ दे ।

३६. जोय—खी ।

३८. रस आठ—चौदह (६ + ८) विद्या । जुग—भक्ति और ज्ञान ।

४०. केवल—एकमात्र । आराम—उद्यान । कलि-कर—कलि रूपी हाथी । निहत—गिराया हुआ । मोहि—मोह में पड़कर ।

१०३. चरग—बाज ।

१०४. तुख—छुकला, भूसी ।

१०५. जीवन-दानि—जल देनेवाला, बादल । जीवन जल का एक नाम है ।

११३. परिहेलु—त्याग दे ।

११७. घुर-विनियाँ—घूर पर जाकर मुर्गी की तरह एक एक दाना बितनेवाला अर्थात् हर किसी की सेवा करनेवाला ।

१२१. कुतरुक—बुरे वृक्षोंवाला, दंडकारण्य जो रामचंद्रजी के पदार्पण से नंदन वन के समान हरा-भरा हो गया ।

१४८. सतर—सत्वर, शीघ्र । लोगों ने इसका अर्थ त्रिगुण अर्थात् स से सत्त्व त से तम और र से रजगुण भी माना है, पर यह खींचा-तानी मात्र है ।

१५१. हलंत—व्यंजन, र् और म् । रेफ और अनुस्वार अक्षरों के ऊपर ही दिए जाते हैं । रामचरितमानस में यही भाव तुलसी-दासजी ने और खूबी के साथ प्रकट किया है—

एक छत्र, एक मुकुटमनि, सब वरननि पर जोड ।

तुलसी रघुवर नाम के, वरन बिराजत दोड ॥

१५३. बिहरत—हरता है । आसु-कर—शीघ्रता से ।

१७३. निरय—नरक, नरक, नरय ।

१८७. तामरस—( देशज शब्द ) कमल ।

१८८. बिड़ार—दुःख देती है । बढ़ियार—बढ़ती हुई, बाढ़ में ।

२०४. बिलसत—भोगता है ।

२१४. दस-जान—दशरथ । उरग-ईस—शेषावतार लक्ष्मण ।  
अ—भरत । म—शत्रुघ्न । दस पद—पाँच व्यक्तियों के दस पैर ।

२१५. राग-धर—शार्ङ्गधर (शार्ङ्ग एक राग का भी नाम है) विष्णु ।

२१६. तरक-विसेख-निखेध-पति—उमापति, शिव । (विशेष तर्क में  
उ अक्षर का प्रयोग होता है और निषेध के लिये मा का ); मराल  
ल-रहित पलटि—राम ।

२१७. शुक्ल का पर्याय सित होता है । इसके आदि और अंत  
में एक मात्रा बढ़ाने से सीता हो जायगा । इसी प्रकार कमला का  
पर्याय रमा है । रमा के अंत से मा की मात्रा को मध्य में रख देने  
से राम हो जायगा ।

२१८. धनंजय ( अग्नि ) का बीज र, सूर्य का अ और मयंक  
(चंद्रमा) का म हुआ । इन बीजाक्षरों के योग से राम हुआ ।  
यहाँ यह भी ध्वनित होता है कि अग्नि आदि का मूल राम में है ।  
तम—अज्ञान । तमी—रात ।

२१९. कोकनद कानन रंजन वंस अवतंस—सूर्यवंश के भूषण ।  
पुरहित-अरि—पुरहूत इंद्र का शत्रु रावण ।

२२०. छत्तोस है—पीठ फेरकर, जैसे ३६ में ३ और ६ के  
अंक, विमुख होकर । छव तीन—सम्मुख जैसे ६ और ३ ।

२२१. कं—सिर । दिग—दस, दशशोश, रावण । दून—इसके  
दुगुने २० । नक्षत्र—हाथ ( हस्त एक नक्षत्र का नाम है ) ।

२२२. सिला—अहल्या ।

२२४. बिहँग—( शकुनि ), उसका बीच कु । रैयत—( प्रजा ),  
उसका तृतीय अक्षर जा इस प्रकार कुजा बना जिसका अर्थ है  
पृथ्वी की पुत्री सीता । भोर—असावधान ।

२२५. कोल ( वराह ) का दूसरा ( रा ) और राजिव ( महो-  
त्पल ) का पहला अक्षर ( म ) मिलकर राम । वाहन के पर्याय

ज्ञान और निहचय के पर्याय किल के आदि कि में एक मात्रा बढ़ाकर ( की ) योग करने से जानकी हुआ ।

२२६. जलज—मच्छ । राघव—मत्स्य-विशेष; मिति—मर्यादा । रावण के निकट रहने से सागर की मर्यादा भंग हुई, उस पर पुल बंधा ।

२२७. तरनि ( सूर्य ) के अरि राहु का आदि रा तथा आत्मज ( काम ) का अंत्य म—राम । पंचानन—शिव । पदुम—कमल, वेद ।

२२८. सैल (हिमालय)-सुत मैनाक के आस (निवास) समुद्र की वनिता (स्त्री) गंगा के जन्म का स्थान, विष्णु के चरण । प्रनत—भक्त ।

२२९. पतंग ( सूर्य ) के सुत राधेय ( कर्ण ) का आदि रा और मृत्युंजय ( शिव ) के शत्रु काम का अंत्य म—राम । पुष्कर (तीर्थ) में यज्ञ करनेवाले, ब्रह्मा । पांसु—धूलि ।

२३०. उलटे तासी—तासी का उलटा, सीता । सौ हजार (लाख) मन—लक्ष्मण; एक (१) सून (०) रथ—दशरथ ।

२३१. हर के आसन वाराणसी का द्वितीय और चर्म का तृतीय अक्षर—राम । सास न लहे—प्राणायाम अथवा योग से । उपास—उपवास, लंघन ।

२३२. द्वितीय अवतार कूर्म का आदि कु, नृ ( राजा ) का अंत्य जा—कुजा, सीता । कमल ( राजीव ) का प्रथम रा और कमल का द्वितीय म—राम ।

२३३. सुर-पति-अरि—इंद्र का शत्रु रावण । सुचिता-अवधि—गंगा ।

२३४. नैन करन-गुन-धरन-वर—आँखों से कानों के गुण को धारण करनेवाले सर्पों में श्रेष्ठ शेषनाग, जिनके लक्ष्मण अवतार माने जाते हैं । यह प्रसिद्ध है कि सर्प के कान नहीं होते, वह नयनों ही से सुनता है । इसी लिये उसे चक्षुःश्रवा कहते हैं । तावर—उनसे भी श्रेष्ठ राम ।



२३५. वाटिका ( आराम ) के आदि के अक्षर आ को दूर करके राम रहता है और राजिव ( ससी ) के अंत्य अक्षर के साथ ता जोड़ देने से सीता बनता है ।

२३६. जड़ ( मृग ) मोहनेवाले ( राग ) और चंचल चित्त ( मन ) दोनों के आदि—राम ।

२३७. अमर-अधिप-बारन—( ऐरावत ) का दूसरा वर्ण, रा और अगार ( धाम ) का अंतिम वर्ण स । इखु—इपु, बाण । सारंग-धनुष ।

२३८. उरविज-उर्विज, भूमि का पुत्र मंगल । सुमनस-देवता ।

२३९. पयोधर ( धाराधर वादल ) का द्वितीय वर्ण रा और बाग ( आराम ) का अंतिम स—राम ।

२४०. पति ( भर्ता ) क्षीर-सागर पावन पयोधि और पवन ( मरुत ) के क्रमशः पहले, दूसरे और अंत्य अक्षर के योग से भरत बना । ता मत—भरत का मत, राम-भक्ति ।

२४१. हंस ( मराल ) का अंतिम, कपट ( छल ) का पहला, रस ( मकरंद ) का पहला और गुन का अंतिम अक्षर मिलाकर लक्ष्मण बनता है ।

२४२. कना ( मकरा ) का क निकालकर मरा हुआ । इसमें अंत का अक्षर आदि में रख देने से राम हो जायगा ।

२४३. ( दश ) अंक दसा में, रस का आदि र और पार्थ ( पांडु-सूनु ) का अंतिम वर्ण—दशरथ ।

२४४. ( आशु ) भटिति का आदि अक्षर निकालकर उसमें सखा ( मित्र ) जोड़ने और अंत में प्रथम स्वर अ को लगाने से सुमित्रा हुआ ।

२४५. चंद्र ( राकेश ) और चंचल ( मन ) का आदि—राम

२४६. विगत देह तनुजा—विदेह जनक की पुत्री, सीता ।

२४७. करता—ब्रह्मा । सुर-सर-मुता—मानसरोवर की पुत्री, सरयू; शशि ( राकेश ) का आदि और सारंग (विहंगम—पपीहा) का अंत—राम ।

२४८. गिरिजापति ( शिव ) के आदि अक्षर में एक मात्रा बढ़ाकर, तारा ( नक्षत्र ) का आदि हरि (तारा) का अंत और संग्राम का अंत्य अक्षर जोड़ो —सीताराम ।

२४९. ऋतुपति ( वसंत ) पद में से आदि अर्थात् व निकाल लो और पड़िक (रजत—चाँदी में) के अंतिम अक्षर अर्थात् त को निकालकर जोड़ दो, संत-पद-रज हुआ ।

२५०. शेष का वाहन कूर्म का आदि कु ।

२५१. उडुगण (तारा) के अन्त्य अक्षर तथा वनज (चंद्रमा, समुद्र से उत्पन्न ) के अंतिम अक्षर रा और मा को जोड़कर एक कला रहित करने से राम होगा ।

२५२. वारिज ( राजीव—कमल ) और वारिज ( मत्स्य ) के आदि अक्षरों को मिलाने से राम बनता है ।

२५३. कुलिस (हीरा) का अंत्य रा और धाम का अंत्य म दोनों को मिलाकर राम । अली—सखी, सखी फारसी में उदार के लिये कहते हैं इसलिये अलि का अर्थ उदार ।

२५४. चंचल ( पारा ) और चंचला ( वाम—छो ) के अंतिम अक्षरों को मिलाने से राम हुआ ।

२५५. वसंत के आदि में इकार देने से विसंत हुआ जिसका अर्थ हुआ विशेष संत ।

२५६. धरा और महीध ( धराधर ) के दो चुने हुए वर्ण रा और म ।

२५७. धनंजय-सुनु-पति—वायु के पुत्र हनुमान् और उनके पति रामचंद्र ।

२५८. पूर्णिमा की रात्रि ( राका ) का आदि और हार (दाम) का अंत्य ।

२५९. भानु ( सूर्य ) का बीज अक्षर अ, गोत्र ( अग्नि ) का बीज अक्षर र और तमी ( रात्रि ) के पति चंद्रमा का बीज अक्षर म को उचित क्रम से मिलाने से राम होता है ।

२६०. ओघ ( समूह, राशि ) का आदि और व्योम ( एक तत्व का नाम ) का अंत्य ।

२६१. प्रसन्न होने पर राजा ( पान का ) बीरा देता है और अप्रसन्न होने पर मर्यादा छीन लेता है । बीरा का अंत और मर्यादा का आदि मिलाने से राम हुआ ।

२६२. अनुराधा ( एक नक्षत्र, नक्षत्र चंद्रमा की स्त्रियाँ मानी जाती हैं ) शब्द का तीसरा ( गुण तीन होते हैं ) रा और अनुराग ( प्रेम ) का अंतिम अक्षर म—राम ।

२६३. हरिवाहन—गरुड़, संकेत से गरुआपन या गंभीरता; दधि-सुत-सुत—उदधि का पुत्र चंद्रमा, उसका पुत्र बुध, अतएव बुद्धि ।

२६४. चंचल रवि—लोलार्क । ब्रह्मद्रव—गंगा । काशी में अस्सी पर लोलार्क और गंगाजी के बीच तुलसीदासजी की कुटी थी ।

२६५. वन ( नारा—जल ) का अंत्य और स्त्रियों की आँखों की उपमा मछली का आदि—राम ।

२६६. उरबी ( धरा—पृथ्वी ) का अंत्य और उरबी ( मही ) का आदि—राम । सील ( कुल की शोभा, शील ) का आदि और कमल ( तामरस ) का आदि ता ।

२६७. तामरस ( बारिज, कमल ) का तृतीय वर्ण र हटा देने से तामस ( तमोगुण ) रह जाता है । तमोगुण के कारण ही इंद्रियाँ बलवती होती हैं ।

२६८. सुभ-आसु-अरि—शुभ आशा ( मोक्ष ) के बाधक काम क्रोध इत्यादिक । सुमनस-अरि-काल—देवताओं के शत्रु रावण के काल, रामचंद्र । ईस-अवंतिका—उज्जयिनी के देवता महादेव । उनका मत—राम-भक्ति ।

२६९. एत-वंस वर—सूर्य-वंश में श्रेष्ठ राम ।

२७०. य का मित्र वर्ण रकार, उसमें एक और खर अ जोड़ देने से रा हुआ, उसके साथ पवर्ग का पंचम वर्ण म जोड़ो ।

२७१. हल—ह य व र ल में र, व म—व से ण ङ न म में से म लेकर इनके बीच में समान (अ इ उ ऋ ल को समान कहते हैं ) अ जोड़ देने से राम होता है ।

२७२. इसमें प्रश्नोत्तर साथ है । सीता की कौन जाति ? सती; दुख देनेवाली कौन ? कर्कशा स्त्री; चंद्रमा की किरणें किसके लिये दुःखद हैं ? कोक (चकवा) के हृदय को; सुखदायक कौन है ? राम ।

२७३. संकर—कल्याणकारी । वाग—वाणी । सिव—मंगल । अज—ब्रह्मा ।

२७४. तामरस ( राजीव, कमल ) का अक्षर से ३ ( गुण ) र में श्रेयस् ( कल्याणकारी क्योंकि अ विष्णु स्वरूप माना जाता है ) खर अ मिलाकर फिर पवर्ग का पंचम वर्ण मिलाने से राम होता है ।

२७७. कं—जल । खं—आकाश ।

२७८. आस—निवास; सरदेव—मानसरोवर । हरि-वाम—सरस्वती । हंस मानसरोवर में रहते हैं और सरस्वती के वाहन माने जाते हैं ।

२७९. वा विकल्प-सूचक वर्ण है इसमें चप ( च ट त प ) का तीसरा आकार मिलाने से वात हुआ ।

२८०. चंचल ( पारा ) और तिय ( वाम ) का पहला अक्षर निकालकर ( हरि ) रा और म शेष रहते हैं ।

२८१. कुलिस ( हीरा ) और धरम दोनों के अंत्याक्षर मिलाने से राम होता है ।

२८२. दो हा—दोनों प्रेम और वैर का नाश कर अर्थात् उदासीन होकर ।

२८४. प्राग—पहला स्थान पाने योग्य, बड़ा ।

२८५. निरय ( नरक ) का नाश करनेवाले नारायण का द्वितीय वर्ण रा और रसाल ( आम ) का अंतिम वर्ण म—राम ।

२८६. चप—च ट त क प में के क में श्रेयस स्वर अ मिलाकर यम—व ण ङ न म में से म मिला देने से काम हुआ जो दुखदायी है । 'हल' प्रत्याहार में से ल के स्थान पर र कर देने से 'हर' हुआ । इसके अंत में इकार कर देने से 'हरि' ( विष्णु—राम ) हुआ जो कुशल-चोम के कर्त्ता हैं ।

२८७. यम और गुन शब्दों के म और न अक्षर मिलाने से मन हुआ । मन को जब तक ज्ञान न होगा तब तक संसार-जनित दुःख मिट नहीं सकता, क्योंकि जगत् का भ्रम-ज्ञान मन ही का प्रपंच है ।

२८८. भगन—भादि गुरुः-तामस इसी प्रकार जगन—जो गुरुमध्यः, विरोध । किससे तामस (क्रोध) करते हो किससे विरोध, सब तो राम ही हैं ।

२८९. तगन—( ५५ ) संतोष । नगन—( ॥ ) जगत । (आवा-गमन ) । यगन—( १५५ ) सुखाशा । सगन—( ॥५ ) जड़ता ।

२९०. इंद्रवैनि—इंद्रायी, मगण । सुर—अमर, न-गण । देव-अधि—नारद, भ-गण, रुक्मिणी-पति-कन्हैया, य-गण । ये चार पिंगल में शुभ गण माने जाते हैं और कवित्त के आदि में बरते जाते हैं । भोजन—आहार, ज-गण । काक-दुहिता—कोकिला, र-गण । अलि—सजनी, स-गण । सुख—आनंद, त-गण । ये चार कविता के आदि में अशुभ माने जाते हैं ।

२६१. प्रश्नोत्तर साथ साथ हैं ।

२६२. नगन, (१) शिव । (२) ॥, भरत । जगन—(१) संसार में । (२) ।।, विचार, विज्ञान ।

२६३. भगन—भक्ति । ।। माधव की भक्ति । तगन—।।, संतोष । सगन—।।, शुचिता । विधि—यह आज्ञा है, इनको धारण करो । सगन—।।, जड़ता, ( अज्ञान ) ।

२६४. शृंगज ( धनुष ) के असन ( आहार अथवा फेंकने की चीज ) सर ( बाण ) के साथ जू जोड़ देने से सरजू होता है । यज्ञ ( मख ) और ( मय ) पाप ( मल ) का है पाद-त्राण ( जूता ) जिसका ।

२६५. बाण (सर) युक्त जू—सरजू ।

२६६. मृदु-मेचक-सिर-रुह—कोमल काले बाल ।

२६७. हंस ( मराल ) और कमल बीच के वर्ण मिलाने से राम हुआ ।

२६८. आदि...तेहि जान—मरम, मर्म, भेद, रहस्य ।

२६९. आदि...बात—दरद, दुःख ।

३००. भरन—(१) किसी अच्छर को भरना या जोड़ना, (२) अलंकार, रस आदि काव्य-गुणों से पुष्ट करना । हरन—(१) अच्छरों को निकालना, (२) कर्ण-कटुता तथा अश्लोलता आदि दोषों को निकालना गोसाईंजी ने अपने ही सांकेतिक ( कूट ) दोहों को लक्ष्य करके यह दोहा कहा है ।

३०२. विशिष्ट—विलक्षण, कूट । कूटों को समझने के अधिकारी अथवा सुलक्षण कवि का वर्णन ।

३०६—अधिकारी लोग ओसरी ( अवसर ) के वश भले और बुरे होते हैं, चंद्रमा अमृत का घर है किंतु चौथे, आठवें और बारहवें स्थान पर वह भी बुरा फल देता है ।

३०७. नरश्रेष्ठ कवि स्वर्ग के तालाब ( नभ-सर ) हैं जिनके जल में विनय और विज्ञान ( संसार की असारता का ज्ञान )-रूप कमल खिल रहे हैं। उनकी सुमति उसमें सीप है जिसमें से सरस्वती ( कविता )-रूप मोती ( स्वाती की वूँद ) निकलता है।

३०८. सम—इंद्रिय, मत, अहंकार आदि का शमन। दम—नेत्र, रसना, नासा, कान तथा त्वचा को उनके बाह्य विषय रूप, रस, गंध, शब्द और स्पर्श से हटाकर वश में रखना। दोख-दुरत-हर—दोषों और पापों (दुरित) को हरनेवाली। दरद-दर—दुःख को दलनेवाली।

३०९. धरा—पृथ्वी। धराधर—पर्वत।

३१०. चौतिस के प्रस्तार में—क से लेकर च तक ३४ अक्षर हैं। इन्हीं के सहारे क्रम के उलट-पुलट, संयोग और भेद से, सार्थक शब्द बनते हैं। प्रस्तार—पिंगल का पारिभाषिक शब्द है। नियत मात्रा के छंद कितने प्रकार के हो सकते हैं यह इसके द्वारा जाना जा सकता है।

३११. क वर्ण से वेद ( चौथा ) और विषम ( बीसवाँ ) अक्षर मिलाकर घन हुआ। घन से भी अच्छी ( सु-तर ) और शीघ्र फल देनेवाली ( सतर ) रीति रामचंद्रजी की है। मेघ के समान दया (जल) से भरते हैं, परंतु फिर उसे हरते ( सोखते ) नहीं। मेघ से अधिकता यह कि मेघ तो समय ही पर बरसता है परंतु रामचंद्र भक्ति-पूर्वक माँगते ही शीघ्र अपनी दया की वर्षा करते हैं। श्लेष से वेद, विषम क-वर्ण के माने घन वर्ण, श्याम रंग भी यहाँ पर लगेंगे।

३१२. ब से तीसरा (गुन) वर्ण म, न से तीसरा वर्ण र और कानन (वन) से तीसरा वर्ण न लेकर मिलाने से मरन। दिशा दिशा में और तीनों लोकों में मरन ( मृत्यु ) व्याप्त है; कहीं जाकर उससे बच नहीं सकते।

३१३. चंद्र अनल—शीतोष्ण; ठंड गरम के भेद से सब प्रकार के भेद की ओर संकेत है ।

३१४. पर पद—परमपद । तुल—तुल्य । सम—सब दशाओं में एक सा बरतनेवाला ।

३१५. चौदह विद्या—चार वेद, शिखा, कल्प, व्याकरण, छंद, निरुक्त और ज्योतिष छः वेदांग, मीमांसा, न्यायशास्त्र, धर्मशास्त्र और पुराण । चार उपवेद—आयुर्वेद, धनुर्वेद, गंधर्ववेद और स्थापत्य-वेद । अठारहों उप-पुराण—आदि. नरसिंह, स्कंद, शिव, धर्म, नारद, कपिल, वामन, वरुण, शांभु, सौर, पराशर, भार्गव, मारीच, कालिका, देवी, महेश्वर और पद्म ।

३१६. इस दोहे का आध्यात्मिक अर्थ भी है । ( आध्यात्मिक पक्ष में ) गृह—शरीर । सुंदरि—भक्ति । कवि—जीवात्मा ।

३२०. सुचैन—आनंदपूर्ण ।

३२१. रसना-सुत—जीभ से उत्पन्न शब्द अर्थात् शब्द-ब्रह्म ।

३२२. त्रिविध—दोहा ३३५ देखिए । बिघट न लट परमान—बाल बराबर भी नहीं घटते । कारण—शब्द ही सारे संसार का बीज रूप है । अविरल—अखंड । अल—समर्थ । अपि तु—और । अविद—मूर्ख ।

३२४. वर्णात्मक श्रेष्ठ शब्द भुलावे में डाल लेता है । यह चार कारणों से—१ जाति ( हम ब्राह्मण हैं अथवा क्षत्रिय हैं इस गर्व में पड़कर धर्म-कार्य की अवहेलना करना ), २ यदिच्छा ( हम तो राजा हैं, हरिभजन करना तो प्रजाजन का काम है, यह विचार ), ३ गुण ( हम सुंदर हैं यह गर्व ), ४ क्रिया ( हमने अमुक कार्य किया है जिसके कारण हमारा यश हो रहा है, यह गर्व ) । इनके अतिरिक्त और कोई नहीं । ये गुण दोष-युक्त हैं । यही सदुपयोग से गुणमय हो जायेंगे । दिगभ्रम—जीव का भटकना ।



३२८. रचत जगत—वेदांत का मत है कि संसार वास्तविक नहीं भ्रम मात्र है। जो कुछ भ्रम में पड़ा हुआ जीव विचार करता है उसे ही वह देखता है, यही संसार है। मनुष्य इस भ्रम से माया का बंधान रचता है कि उसे उससे सुख मिलेगा।

३२९. मनुष्य चाहे तो अपने विभव को सुखप्रद अथवा दुःखप्रद बना सकता है।

३३०. रसना-सुत—शब्द-ब्रह्म, वेद इत्यादि धर्म-ग्रंथ।

३३१. माया के संसर्गजात जो ईश्वर, ब्रह्मा, विष्णु और महेश हैं वे भी शब्द-ब्रह्म का उपदेश करते हैं और सरस्वती से लेकर ब्रह्म तक इसी का उपदेश करते हैं। अथवा शब्द-ब्रह्म से ही इनका उपदेश अथवा परिचय मिलता है।

३३२. बरन—अक्षर।

३३३. सु-बेल—सुंदर किनारा, भक्ति।

३३४. कानों से जो सुनते हैं वह आँखों से जो देखते हैं उसके साथ मेल नहीं खाता, उनमें स्पष्ट विरोध है। सुनते तो हैं कि ब्रह्म एक है किंतु देखते हैं अनेक।

३३५. अव्यात्मक—सदा व्याप्त मूल रूप। ध्वन्यात्मक—जो मृदंग आदि के शब्द के समान अस्पष्ट हो। वर्णात्मक—जो अकारादि अक्षरों से बना हो और स्पष्ट सार्थक सुन पड़े।

३३६. कहने-सुनने में तो ब्रह्म वर्णमय है कुछ अक्षरों से वह व्यक्त किया जाता है, किंतु तात्त्विक दृष्टि से देखने में वह अक्षरों से रहित है। चर अक्षर जो दिखाई देते हैं उनमें भी विरोध दीखता है।

३३७. स्वेदज—पसीने से पैदा होनेवाले, जैसे खटमल।

३३८. अस्थावर—स्थावर, अक्षर सृष्टि।

३४१. सरखप—सरसों । सुमेरु—परमात्मा का विराट् रूप ।

३४२. वाचक ज्ञानी का वर्णन ।

३४३. जल कहूँ परम पियास—जल ही को बड़ी प्यास लगी रहती है । अर्थात् परमात्मा के अपने में ही होते हुए भी जीवात्मा, अज्ञान के कारण, उसके अभाव का दुःख उठा रहा है ।

३४४. प्रति वर्ष सेमल से धोखा खाते हुए भी मोह में पड़ा हुआ सूआ चेतता नहीं है । वसंत होते ही फिर सेमल के धूआ पर चांच मारता है और धोखा खाता है ।

३४५. समन—यमराज के समान अटल ।

३४६. बस हा भौ अरि—शत्रु ( काम क्रोधादिक ) के वश होकर ।

३४७. वाचक ज्ञानी का वर्णन ।

३४८. जो—माया । सो—माया-रहित सुख ।

३४९. इष्ट—(१) व्यावहारिक दृष्टि से, जिससे आजीविका चले । विधाता भी जिस उपदेश से अब तक कष्ट उठा रहे हैं । विधाता के पिता विष्णु ने उनसे कहा कि सृष्टि करिए । अब तक उस भ्रमर से छूटे नहीं । तब और पुत्रों की क्या दशा होगी ?

इष्ट—(२) कल्पित इष्ट देवता । झूठा धर्म ( वाम मार्ग ) जिसे मानकर उन्हें क्लेश उठाना पड़ता है ।

३५०. मिथ्या विश्वासी सब देवताओं से मनौती मानकर आकाश का गेढुआ बना रहा है, अर्थात् असंभव की आशा कर रहा है ।

३५१. बलि के बहाने हिंसा-वृत्ति की तुष्टि की इच्छा से जो देवता को देखते हैं, उसे पूजते हैं, और मरे पशु को मारते हैं वे मूर्ख स्वार्थी हैं । जैसी उनकी करनी है वैसे ही उनके देवता भी ।

३५२. बिना बीज तरु—परब्रह्म राम का विराट् रूप ।  
शाखा—ब्रह्मा, विष्णु, महेश । पत्र—और देवता । फल—  
त्रिलोकादि सृष्टि ।

३५३. मुनि इत्यादि उस वृक्ष पर बसनेवाले पक्षी हैं जो उसके  
फलों की आशा रखते हैं । तासु—परमात्मा के ।

३५४. इस वृक्ष से फलों की आशा तो लोग बहुत करते हैं, परंतु  
प्रमाणरूप से किसी ने उस पर से एक भी फल नहीं पाया । प्रतिष्ठा—  
फल मिलने का महत्त्व ।

३५७. नभ-तरु-मूल—आकाश-वृक्ष की जड़ जिसका अस्तित्व  
ही नहीं ।

३५८. गाढर ढरनि—भेंड़िया घसान ।

३५९. ससि-कर-स्रग—चंद्रमा की किरणों की माला जिसका  
बनना असंभव है । स्वरग-सुमन-अवतंस—आकाश के फूलों  
का गहना ।

३६६. गगन-बाटिका—आकाश का बगीचा, असंभव ।

३६७. दखत—दषत्, पत्थर । बिहरि—फोड़कर । तूल—  
समान । तूल—क्रोध ।

३६८. तेरी इच्छा अपने आपसे पूर्ण हो जायगी । दूसरों का  
मुँह मत ताक, केवल अपने स्वामी राम को पहचान, उससे अधिक  
और किसी को मत मान ।

३७०. तोख—तोष, संतोष ।

३७२. कुथि—कूथता हुआ । अटत—भटकता है । उदबटत  
न—खुलता नहीं ।

३७३. भू-भुजंग-गत-दाम-भव—पृथ्वी पर पड़ी रस्सी में सर्प  
का भ्रम जिस प्रकार होता है वैसे ही अपनी सब कामनाओं  
को समझ ।

३७४. भोडर—अभ्रक । पड़िक—रूपा, चाँदी ।

३७७. मालाकार न जान—माली को नहीं जानते । बिद—ज्ञान ।

३७८. करतब—करनी । करम—भाग्य ।

३७९. लट पद—व्याकरण में वर्तमान के लिये लट लकार प्रयुक्त होता है, आज कल, संसार में ।

३८१. बारत—त्यागते हैं । स्वऽपि पदारथ—अपना सार पदार्थ, आत्म-तत्त्व ।

३८२. सुनहा—आन, कुत्ता ।

३८३. मुट्ठी में आकाश भरना—असंभव काम की आशा करना ।

३८४. बसन बारि बाँधत—कपड़े में पानी बाँधता है । बिधि-विधान, रीति ।

३८६. अधवर—अधर, अंतरिक्ष । बधूर ( भँवर ) में पड़ा पत्ता अधवर ही में घूमता रह जाता है, न ऊपर को उड़ता है, न नीचे ही गिरता है ।

३८७. कीर सरिस—बिना अर्थ समझे हुए ।

३८८. बरन-बिंदु-कारन...—जैसे अक्षर बिंदु से बनते हैं, वैसे ही शरीर भी मन की कृति है ।

३८९. नाम—संसार में नाम पाना । जगत सम—भ्रम मात्र । वस्तु न चित चैन कर—सांसारिक वस्तुओं में चित्त को सुखी न समझ । गैन ( ऐ ) फारसी में अशुभ अक्षर समझा जाता है और ऐन ( ए ) शुभ । बिंदु रूप सांसारिक वासनाओं के चले जाने से जीवात्मा शुद्ध चेतन आत्म-तत्त्व रह जाता है ।

३९३. ऐन—शुद्ध आत्म-तत्त्व । सिद्धि—पूर्णता ।

३९५. हिम मूर्ति को सूर्य की किरणों से पानी की प्राप्ति होती है उसी प्रकार गुरु के उपदेश से संसार की आशाएँ छूटकर मुक्ति मिलती है ।

३६६. जिस किसी श्रेष्ठ हृदय साधु पुरुष को हृदय में भगवद्-पासना के अतिरिक्त कोई और सांसारिक वासना उदय हो जाय तो उसके भ्रम का प्रमाण देना अत्यंत कठिन होता है ।

३६८. वचन-अल-बल—सामर्थ्यवान् को वचनों के बल से ।  
कुचाह—विविध वासनाएँ ।

३६९. त्रिजिनि—पाप, संसार-जन्य दुःख ।

४०२—०३. विधि—कर्तव्य । उलटो—विधि का उलटा, निषेध, अकर्तव्य । गतिराम की—कर्मों को रामाभिमुख करके शुभाशुभ फल का त्याग । बर मेघा—श्रेष्ठ धारणा-शक्ति जिसे गुप्त सरस्वती नदी माना है । न्यग्रोध—(अक्षय) घट ।

४०५. विसेसर—विश्वनाथ, महादेव ।

४०६. नय-क्रिय—न्याय ।

४०७. सित—पवित्र, शुद्ध पक्ष । असित—कृष्ण पक्ष, अप-वित्र । वसु जाम—आठों पहर ।

४०८. बीते दिन तो आवेंगे नहीं, जो वर्तमान है उसका पहि-चान कर उपयोग कर । आज और कल मत कर । भविष्य के लिये कुछ मत छोड़ क्योंकि जैसा आज वैसा कल । कल भी तुम आज की तरह टाल-मटोल करोगे । भ्रम में मत पड़ ।

४०९. निरुवार—निर्वाह कर ।

४१०. पंडितों अर्थात् सज्जनों की नीति सुस्थिर हो जाती है ।

४१३. राम बरा पुरि—राम की श्रेष्ठ नगरी ।

४१५. सुरसर-सुता—मानसरोवर की पुत्री, सरयू ।

४१६. बिखयि—विषयी ।

४१८. जतन—( संसार-सागर को तरने का ) उपाय । सकल-कला-गुन-धाम यह तनु ( मनुष्य शरीर ) धरि अविनासी अव्यय अमल राम भेंट ।

४२०. अप्रमेय—जिसका कोई परिमाण या माप नहीं। यार्ते—  
इस शरीर के होने मात्र से ही ज्ञान छिपता नहीं। इस शरीर के  
होते हुए भी वल्कि इसी मनुष्य शरीर से ज्ञान प्राप्त होता है।

४२१. हंस-रसाल—जैसे सूर्य ( हंस ) की किरणें ही जल  
( रसाल ) को वरसाती हैं और फिर ऊपर खींच लेती हैं, उसी प्रकार  
जीव ईश्वर की माया से संसार में आता है और उसी की दया से  
मोक्ष पाता है। यही भाव ४२२वें दोहे में भी है।

४२३. आहन—लोहा। रिच्छ-रसम—नक्षत्र की रीति अथवा  
गति। आर्द्रा नक्षत्र में मछली अंडे देती है।

४२४. जल वरसते सब कोई देखते हैं किंतु सूर्य कैसे जल को  
सोखते हैं ( हरत ) यह किसी को नहीं दिखाता। इसी प्रकार  
जन्मते समय सब देखते हैं परंतु मरकर कौन कहाँ गया यह  
किसी को नहीं दिखाई देता। ( परंतु यह निश्चय है कि )  
सुगुरु इत्यादि।

४२५. असमंजस—कठिनता।

४२६. अप—आप, पानी।

४२७. कोस—आवरण। विलसै—भोगता है। परै कहाँ पहि-  
चान—आत्म-स्वरूप पहचान नहीं पड़ता।

४२८. हेतु—कारण. बीज।

४२९. आदरस—आदर्श, दर्पण।

४३१. इन दोउन ते—शुभाशुभ कर्म से।

४३३. अभि-सदन—अमृत के घर में अर्थात् भक्ति में। करम-  
विपरजय—कर्म की विपरीतता, प्रभु से विपरीत दिशा में ले जाने-  
वाले कर्म।

४३४. सदा एक-रस निसिकर—चंद्रमा जो सदा एक सा पूर्ण  
रहे, घटे-बढ़े नहीं।

४३५. उरविजा—पृथ्वी की पुत्री, सीता । रसमय—रस-पूर्ण राम ।

४३६. जात-रूप—सोना । सीत-कर—ठंडी किरणोंवाला चंद्रमा ।

४३७. सुख-दायक—रामचंद्र अथवा सत्संग ।

४३८. अधम—नीचे । उरध—ऊपर । तंतु—तार ।

४३९. बानि—स्वभाव । सुधरै—बानि इसका कर्ता है ।

४४०. सूर्य और चंद्रमा जिस प्रकार पृथ्वी तथा उसमें रहनेवाले जीवों का पालन करते हैं, उसी प्रकार राम और सीता स्थूल शरीर के कारणभूत जीवात्मा का सद्गुणों द्वारा पालन करते हैं ।

४४३. प्रगटत—पैदा होते हुए । दुरत—छिपते या मरते हुए ।

४४४. सुख-दुख का मार्ग मनुष्य स्वयं पकड़ता है, वे किसी को राह चलते नहीं लग जाते । तात्पर्य यह कि सुख-दुःख अपने कर्मों के फल हैं ।

४४५. ससि-मग—चंद्रमा का मार्ग, सीता की भक्ति ।

४४६. सीतकर—चंद्रमा, सीता ।

४४७. ससि—चंद्रमा, सीता । अमिय तजत—अमृत की वर्षा करता है, मुक्ति देती है । गहत नहीं—ग्रहण नहीं करते, भजते नहीं ।

४४८. कोक—चकवा । चकवा चकई के और कमल सूर्य के विरह में दुःखी रहता है, चंद्रमा उन्हें वास्तव में दुःख नहीं देता फिर भी वह उन्हें दुःखप्रद ही मालूम होता है । इसी प्रकार दुष्ट जनों को सीताजी वास्तव में दुःख नहीं देती परंतु वे उनसे विमुख रहते हैं । इसी से उनका निस्तार नहीं होता ।

४५०. जवास घास बरसात में पानी पड़ने से जल जाती है । ज्ञान और भक्ति से यदि किसी दुष्ट को दुःख पहुँचे तो उनका क्या दोष, वे तो स्वभाव से सुखद ही हैं ।

४५१, चंद्रमा संसार के ताप-रूप विष को हरकर अमृत की वर्षा करता है, ऐसी ही अपार महिमा सीताजी की भी है ।

४५२, सूर्य चंद्रमा दोनों के जोड़े का यश संसार कहता है क्योंकि रात को चंद्रमा और दिन को सूर्य उसे अपने किरणों से पालता है इसलिए दोनों समान हैं । संकेत से राम-सीता समान हैं ।

४५३, पृथ्वी से अपनी किरणों के द्वारा लिए हुए जल का सार अमृत के रूप में सूर्य चंद्रमा के द्वारा पृथ्वी को देते हैं । सूक्ष्म—  
( १ ) जीवन । ( २ ) जीव । रवि-रजनीस—राम-जानकी ।

४५४, स्थूल शरीर ( भूमि ) में सूक्ष्म जल है जिसे सूर्य पृथ्वी को देता है । सारी चराचर सृष्टि का यही रूप है । वह राम-चंद्र सूर्य रूप पर जीवन रूप जल के लिये अवलंबित है ।

४५५, निसिकर—( १ ) चंद्रमा । ( २ ) सीता । ( ३ ) भक्ति । रवि—( १ ) सूर्य । ( २ ) रामचंद्र । ( ३ ) ज्ञान । भक्ति सरल है, ज्ञान कठिन ।

४५७, विभीषण ने सेवक पद ग्रहण किया, राम ने अपनी शरण लिया । रावण ने सेव्य स्वामी पद ग्रहण किया तो निर्वश हुआ ।

४५८, सूर्य और चंद्रमा शीत और उष्ण के रूप मात्र हैं, उनमें से करतार एक भी नहीं । वास्तव में रात-दिन का कर्ता तो परमात्मा है ।

४५९, जो चीज नहीं है उसका नाम नहीं पड़ता । परमात्मा को देखा किसी ने नहीं है पर परमात्मा नाम लोगों ने रख ही दिया है ।

४६०, उदाहरण, अमृत को किसी ने देखा तो नहीं परंतु उसके रोगनाशक गुणों को सब कहते हैं ।

४६१, गंध, शीत और उष्णता गुणों को सब जानते हैं । ये देखे नहीं जा सकते परंतु पृथ्वी, जल, वायु और अग्नि में फिर भी



लोग इन गुणों में से कुछ या संपूर्ण को मानते ही हैं। अर्थात् आँखों से देखना ही एक मात्र प्रमाण नहीं है।

४६२. बिलखत—देखते हैं।

४६४. काक-सुता—कोयल, उसका सुत या सुता, कोकिल या कोकिला। कोयल कौवे के अंडे फोड़कर खा जाती है और उनके स्थान पर अपने अंडे रख आती है। कौवी अपने ही अंडे समझकर उन्हें सेती है। परंतु उनमें से निकले हुए बच्चों के पंखों में जब बल आ जाता है तब वे उड़कर कोयलों से मिल जाते हैं। माया में भी मनुष्य तभी तक पड़ा रहता है जब तक उसके ज्ञान रूप पंख नहीं उगते। ज्ञान हो जाने पर वह आत्म-स्वरूप में मिल जाता है।

४६५. जिनहिं अनेक न एक—जिन्हें एक ही का भरोसा है, अनेक का नहीं।

४६६. घटत न—नहीं घटता, पूरा होता।

४६८. मनवा—रुई। कार्य—कारण का फल-रूप आनंद। आनंद की तो सबको इच्छा है। परंतु जिस कारण का आनंद कार्य है, उसे कोई नहीं देखता। अच्छे कपड़े पहनना चाहते हैं, मिठाई खाना चाहते हैं, पर कपास और ऊख नहीं बोवेंगे।

४६९. कारन कार्य—कारण से कार्य होता है। कारन-कार—कारण का भी करता है, तू ही है।

४७०. कर्ता लोपत—कर्ता को लोप कर देता है और अहंकार-वश आप कर्ता बन बैठता है और बंधन में पड़ जाता है।

४७१. वायु और जल के योग से तरंगें उठती हैं परंतु तरंगों का करना, करवाना इनके बूते का काम नहीं, उनका कर्ता और कारण परमात्मा है। क्योंकि उसके बनाए नियम से यह सब अपने आप होता रहता है।

४७४. कार्य तो घटते-बढ़ते रहते हैं परंतु कर्ता और कारण सार-पद, अविनाशी निर्मल और भेद-रहित अर्थात् एक हैं ।

४७६. पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश तेरे व्यक्त रूप हैं ।

४८०. अकस्मात् भगवान् की दया से ।

४८२. चंद्र, सूर्य, प्रकाश से जगत् ( महि ) में शारीरिक असु-विधा दूर होकर सुख मिलता है । ज्ञान से मोह दूर होकर आत्मा-नंद मिलता है ।

४८३. चेतन समुक्त अचेत—हे अचेत अपनी आत्मा को समझो ।

४८४. जिनमें यश-लिप्ता का दूषण न हो, ऐसे कर्मों की घटना समझकर कोई बात कहनी ( अथवा करनी ) चाहिए ।

४८५. सूर्य और चंद्रमा जब मिलते हैं तो चंद्रमा की कला चीख होने लगती है । अमावस को पूरा मेल होता है । फिर वे अलग होने लगते हैं और चंद्रमा की भी कला बढ़ने लगती है ।

४८६. जैसे तेरे माता-पिता उत्पन्न हुए वैसे ही तू भी । माता-पिता की उसमें कोई विशेषता नहीं । वास्तव में न माता है न पिता । जो ( परमात्मा ) है उसे जानो ।

४८७. विसर्लसित—विश्लेषित, अलग, सब ठौर व्यापक ।

४८८. अलंकार घटना कनक—मूल तो सोना है, गढ़ने से भिन्न भिन्न गहने हो जाते हैं । यही बात नाम, रूप और सत्, रज, तम गुणों की भी है । उनके मूल में एक ही तत्त्व है ।

४८९. संज्ञा—नाम ।

४९०. गंधन—स्वर्ण । मूल—ब्रह्म तत्त्व ।

४९१. प्रभास—मालूम देता है ।

४९२. असथिर—स्थिर ।

४९४. परखे—पहचाने ।

४६५. एक उपाधि—धर्म, सगुण भक्ति में एक ही उपाधि धर्म है। उपाधि—विघ्न, परंतु निर्गुण ज्ञान की प्राप्ति के लिये अनेक विघ्न होते हैं।

४६६. वेद गुण—चार गुण; शक्ति, सत्य, शील और सौंदर्य। इन एक एक को अंतर्गत कई भेद हैं।

४६८. पराय—पलाय, भागा ( नहीं जाता )।

५०४. मृण्मय—मिट्टी का। कुलाल—कुम्हार।

५०६. बिना साक्षी के अनुमान प्रमाणित नहीं होता, इसलिये जो प्रत्यक्ष है उसी का कथन करो। दूसरा है ही कौन ?

५०७. मृद—मिट्टी।

५०८. चामीकर—सोना। करतब—करनी, कर्म। ताहि रमित—गहनों में ( नाम रूपों में ) रम रहते हैं।

५१०. सोई परमान—वैसा ही बरतने लगा।

५१२. मृत—मिट्टी।

५१३. बरतन—पात्र, शरीर। नित्य-स्वरूप—मिट्टी, निर्विकारी आत्मा।

५१५. श्वास की हवा में जो जल है वह साफ आँदने पर प्रत्यक्ष दिखाई देता है।

५१६. तुल—कुछ, कहीं तिल पाठ भी है। जुग-तन—सूक्ष्म और स्थूल शरीर।

५१७. कर्ता समय के योग से शुभ-अशुभ कर्म करता है, फिर काल के परिवर्तन से कर्ता में भी परिवर्तन हो जाता है परंतु कारण ज्यों का त्यों रह जाता है।

५१८. समन—काल।

५२१. सबद—शब्द-ब्रह्म। सुर-गुरु—बृहस्पति अर्थात् जीव जो ब्रह्म का अंश माना जाता है।

५२२. बिभावरि—पृथ्वी; पृथ्वी में गंध का गुण माना जाता है। इसी लिये उसे गंधवती भी कहते हैं।

५२३. तासु रहित—अनुस्वार रहित, क्योंकि एक एक करके कई बिंदुओं से ही अक्षरों की आकृति बनती है।

५२७. अनिल...रज—वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी तत्त्व। तन गत—शरीर में एकत्र होते हैं।

५२८. संग्या—संज्ञा, नाम। कहतब—कहना (संज्ञा का गुण)।

५३१. वर्णों के संयोग से ही संज्ञा बनती है। परंतु जब तक वर्णों का वियोग रहता है तब तक संज्ञा नहीं हो सकती। इसी तरह माया के संयोग से ही ब्रह्म की जीव संज्ञा होती है।

५३३. सुत-पद—जीवात्मा पद। पिता-पद—ब्रह्मत्व। चोप—बुद्धि।

५३५. सुअन—माया अथवा कर्म जो माया के बंधन हैं और जीवात्मा-पद के कारणभूत हैं। अगरज—अम्रज। पहले माया-जनित कर्म होता है तब संसार का बंधन होता है।

५३६. मन करत मलीन—मन को मैला करता है अर्थात् वैर-भाव रखता है।

५३८. जाहि—परमात्मा को। कहतब—कहने भर का, यह सृष्टि कहने भर की है; सृष्टि, माया। ऐन—घर। चैन—शांति।

५३९. विडंबना—धोखा।

५४४. पूत—पुत्र, माया के बंधन कर्म। बाप—परब्रह्म।

५४५. वरन-भव—अक्षर से उत्पन्न।

५४७. मृगा गगन-चर—पशु-पक्षी।

५४८. तेहि को—शिष्य को। तोहि को—गुरु को। तुलसी कहत...बात—तुम्हारी कही हुई हित-रहित बात को सुनकर वह (माया के बंधन में पड़कर) दुःख सहता है, सोचो तो।

५४६. निहसंसय—निःसंदेह, शंका-रहित ।

५५१. सुरुति—सुति, श्रुति, वेद । पथ-रति—सन्मार्ग में प्रीति रखनेवाला । अनय-अतीत—अन्याय के पथ से बाहर रहनेवाला ।

५५५. रस निरास—रस छः होते हैं । यहाँ छः कहने से काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर इन छः का भाव है । इनमें मनुष्य को अपनी आशा न रखनी चाहिए । इनसे निराश रहे अर्थात् विरत रहे । चाह न—इच्छा रहित हो । काम-सुरा न रम—काम-लोलुपता की मदिरा में रमण न करे ।

५५८. करत...सदा—जिसका कार्य सदा तर्क में लगा रहना है । सो मन दुख-दातार—वह मन दुःख को देनेवाला है, क्योंकि वह अनुमान तर्क के द्वारा कई दुःखों की सृष्टि कर लेता है, जब कि वास्तव में सुख-दुःख कुछ है ही नहीं । तुलसी जौ...विचार—जिस तर्क के द्वारा मन समझे नहीं उसे विचार करके सर्वथा त्याग देना चाहिए, क्योंकि ऐसा तर्क कुतर्क है । वह उलझन ही में डालेगा, जीवन की गुत्थियों को सुलझाने में समर्थ न हो सकेगा ।

५६०. सुनत कोटि...न हाथ—केवल करोड़ों की संख्या को कहने या सुनने से तो यह नहीं संभव है कि एक भी कौड़ी हाथ आ जाय ।

५६३. गुन—त्रिगुण, सत, रज और तम ।

५६६. अपनो करसु...काल—जिस समय अपने कर्म का अपने लिये भला-बुरा फल न चाहे, अर्थात् जब मनुष्य निर्लिप्त होकर कर्म करने लगता है ।

५६८. तू तो सच्चा है किंतु तू भूठी रचना (कर्म) करते थकता नहीं ।

५७१. समय-रूपी ज्योतिषी, कर्म-रूप खड़िया से मोह-रूपी थल (पटिया) पर चराचर जीव रूप अंकों को लिखता और मिटाता हुआ गणित कर रहा है ।

५७४. कहना-करना सब के मूल में उसी एक परमात्मा को जान ( जिसके विधान से 'फूलि परत रितु अनुहरत' आदि और ) जिसके बिना कोई नहीं है, अभिमान और अनुमान से दूसरी रीति से नहीं समझना चाहिए अर्थात् अपने आपको कहने अथवा करने-वाला नहीं अनुमान करना चाहिए । यह दंभ मात्र होगा ।

५७५. विधान—पहले ही से नियत रीति ।

५७६. सालक—दुःख देनेवाला । पालक—पालन करनेवाला । सम—समभाव रखनेवाला, सज्जन । बिखम—विषम अथवा असमानता का भाव रखनेवाला, कठोर व्यक्ति । अट—अटन, भ्रमण ( नाना योनियों में ) । घट—छोटा होना । लटन—किसी बात में बेतरह पड़ना । नटनादि—नाचना आदि । जीव समय समय पर नाना अवस्थाओं में रहता है, परंतु वह चाहे जिस अवस्था में रहे उसे परमात्मा से रहित न जान अथवा परमात्मा के विधान से रहित न जान ।

५७७. कर्म की करनी का वर्णन करना कठिन है । करनेवाला और करानेवाला दोनों काम ही हैं । कर्म ही शरीर-रूपी क्लेश का कारण है (अर्थात् कर्मों के ही कारण आवागमन के फेर में पड़ता है) और समय पाकर कर्म ही शांति अथवा मोक्ष को देनेवाला हो जाता है । निष्काम कर्म से मोक्ष की प्राप्ति कही जाती है ।

५७८. चित्त धन, रीति-भाँतियों, कठिन और सहल कामों, जय और मृत्यु, धैर्य और धर्म के धारण में तथा इनके हरण में समय समय पर पड़ा रहता है परंतु ( वास्तविक आत्मा में ) इन सब अवस्था-भेदों के कारण कोई भेद ( बीच ) नहीं पड़ता । ( वह नित्य और बोधमय है । )

५७९. ( इस चित्त का ) खर्व ( नाश ) बिना प्रचंड आत्म-ज्ञान के कभी नहीं हो सकता । और जो लोग गुरु अथवा परमात्मा की

भक्ति से हीन हैं वे वस्तुतः नित्य और बोधमय आत्मा ( सोइ ) होने पर भी प्रचंड आत्म-ज्ञान को प्राप्त नहीं हो सकते ।

५८०. शब्द ब्रह्म के रूप का विस्तार विशेषकर अक्षरों से होता है । अक्षरों को जोड़ने से नाम बनता है । इसी नाम ( संज्ञा ) से नर अपने को आत्म-सत्ता से भिन्न समझता हुआ त्रिगुणों का धाम होकर ( कर्म का ) कर्त्ता बनता है और भिन्न भिन्न योनियों ( जातियों ) में भ्रमण करता है ।

५८१. करता—वास्तविक कर्त्ता, परमात्मा ।

५८४. वर्तमान-विपरीत—जगत की परस्पर विरोधी बातें जिसका उत्तरार्द्ध में उदाहरण दिया गया है ।

५८६. विधि—कर्तव्य । निखेध—अकर्तव्य ।

५८८. अक—( अ—नहीं + क—सुख ) दुःख ।

५८९. आक—दुःखी ।

५९०. जुग करम—शास्त्र से विहित और निषिद्ध कर्म, कर्तव्य और अकर्तव्य ।

५९१. निज कर करि करिहै बहुरि—जो कर्म किया है उसी को फिर करना पड़ेगा । अर्थात् अपने कर्म को भोगना पड़ेगा ।

५९२. भौ भान—आभास मिला ।

५९३. भौ लघु सुरति भुलानि—छुद्र संसार के मोह में डूबा हुआ है ।

५९७. सून—शून्य । सार—हीन । बचन-गाय—बात की गौ ।

५९८. बात ही से ( भली बात जैसे सत्संग ) बात बन जाती है और बात ही ( बुरी बात जैसे बुरी संगति ) से बात बिगड़ती है । जैसे वायु ही में दीपक जलता है ( जहाँ वायु न होगी वहाँ दीपक न जलेगा ) और वायु ( के भोंके ) से ही वह बुझता भी है ।

५९९. बर बर—श्रेष्ठ वरदान ।

६००. ( प्रथम दो ) बात—वायु या वार्तालाप । ( तीसरा ) बात—काम । ( चौथा और पाँचवाँ ) बात—वचन, बोली ।

६०३. बिहित—चिह्नित, माने हुए । नरक-निसेनी—नरक के चिह्न ।

६०४. सरग—स्वर्ग ।

६०६. विधि और निषेध दोनों कार्य अज्ञान ( तम ) के हैं, पर समय पाकर वे बड़े शक्तिशाली और अचूक हो जाते हैं । ( दोनों प्रकार के कर्म बंधन में डालते हैं । उनका फल भोगना ही पड़ता है । ) तीन प्रकार के विशेष बल ( सत, रज और तम, त्रिगुण ) से उत्पन्न हठ इसका कारण है, यह प्रमाण की बात है ।

६११. सुखधाम जितने काम हैं, वे सब प्रधान हैं । यह बात वेद में कही गई है । परंतु उसमें गुण और नाम से दो भेद हैं जिनको समझना कठिन है । शुभ कर्म सभी करने चाहिएँ परंतु यदि नाम और गुण के प्रभाव से अर्थात् कामना के वशीभूत होकर वे किए जायँगे तो बंधन के कारण होंगे और यदि निष्काम होकर किए जायँगे तो मोक्ष के कारण होंगे ।

६१२. नाम—भगवान् का नाम । खात—कुंड ।

६१३. नाम—भगवान् का नाम । नाम—माया ।

६१६. पाछे करी—त्याग दी । निरास—संसार से नैराश्य ।

६२१. चाड़—चाह, प्रयोजन ।

६२२. नाग-नग—गज-मुक्ता । गुंजा—रत्ती, घुँघची ।

६२३. करि बास—सुवासित कर, सुगंधित कर ।

६२४. निरास—मारवाड़ के कुओरों में जल न मिलने के कारण । वंचे—घोखा दिया, ठगा ।

६२५. मित्र—( १ ) सखा । ( २ ) सूर्य ।



६२६. बर-तर—अधिक श्रेष्ठ । अनहित मृदुल—वैरी का कोमल भाव । सिसिर जब कि ठंड भी कम हो जाती है और गरमी भी कड़ाके की नहीं पड़ती । निदाघ—ग्रीष्म ऋतु जब कि कड़ाके की गर्मी पड़ती है । अति-लाल—नई पत्तियाँ लाल होती हैं ।

६२७. दाता-श्रोत—दाता की कांति, उसका प्रताप ।

६२८. करखत—खींचते हुए, सोखते हुए । पृथ्वी ही से सूर्य जल को भाप के द्वारा सोखता है जिससे बादल बनकर वर्षा होती है । वर्षा होते हुए सब लोग देखते हैं और प्रसन्न होते हैं, परंतु कैसे सूर्य ने पृथ्वी से इस जल को ऊपर खींचा इसे कोई नहीं देखता । इसी प्रकार राजा को भी चाहिए कि प्रजा से ऐसे रूप में कर ले जिससे उसको वह खटके नहीं । और फिर उसे प्रजा को ही लाभ में व्यय करे जिसे देखकर वह प्रसन्न हो । ऐसा राजा प्रजा के भाग्य से ही मिलता है ।

६२९. समय परे—विपत्ति में पड़े होने पर भी ।

६३०. प्रेम-वैज—भक्ति की प्रतिज्ञा या टेक । चाहि—अपेक्षा ।

६३१. माली—उद्यान में वृक्ष लगाता है, उन्हें सोंचता है और आवश्यकता पड़ने पर उन्हें काटने छांटने में भी नहीं हिचकता । सूर्य—देखो टिप्पणी ६२८ । अग्नि—तेजस्विता अग्नि का गुण है । जल जाने के डर से कोई उससे छेड़छाड़ नहीं करता । ये सब गुण राजा में भी होने चाहिए ।

६३३. दत्त न होइ—नहीं दी जाती, नहीं मिलती ।

६३५. सकहिं न काढ़ि—दूर नहीं कर सकते ।

६४२. सुकृती—पुण्यवान् ।

६४३. पर-मन-रंजन—दूसरे के मन को अत्यंत प्रसन्न करनेवाले ।

६४५. सरस परिहरे रंग रस—जब तक पूर्वोक्त बातों में आनंद है उसी बीच उन्हें त्याग देना चाहिए । इससे आनंद बढ़ जाता है;

नहीं तो कुछ आनंद नहीं रह जाता। अधिक सहवास से रस फीका पड़ जाता है।

६४७. घाव लगने पर जल्दी से लोहा खींच लेनेवाला, नीच के साथ लाग करनेवाला तथा बलिष्ठ पापी के साथ बैर करनेवाला, इन तीनों ने जानकर मौत मोल ली, यह समझना चाहिए।

६४८. अंध...ढोठि—ऐसे को अंधा कह दो तो उसे दुःख मालूम होगा क्योंकि ऐसे किस दृष्टिवाले को भी दिखाई पड़ता है ? अर्थात् ऐसे लोग आँख होने पर भी अंधे हैं।

६४९. अन-समुझे अनु-सोचनो—विना समझे (काम करने से) पीछे सोच करना पड़ता है।

६५१. गयो—नष्ट हुआ। भयो—हुआ, पनपा।

६५३. कि (की)—क्या। कातिवो नान्ह—बहुत बारीक सूत कातना है जो कठिन काम है।

६५४. पाप प्रतिष्ठा—प्रतिष्ठा को भी ज्ञानी लोग अवांछनीय समझते हैं, इसी लिये उसे पाप कहा है।

६५५. बहराइच जाय—बहराइच में मुहम्मद गोरी के साले सैयद सालार (गाजी मियाँ) का रौजा है। हिंदू मुसलमान सभी वहाँ जाकर मनौती मनाया करते हैं।

६५६. जल जल गौ—जल तो बह गया, माया तो हाथ न आई। भख—मछली, जीवात्मा जो बड़े हुए जल में की मछली की तरह माया के साथ चलता बहता है। माया तो हाथ नहीं लगती पर वह स्वयं संसार रूपी जाल में फँस जाता है।

६५८. अनट—अन्याय।

६६१. माहुर (गरल)—विष। पराइ—भाग जाता है, उड़ जाता है।

६६२. विमल—देखने में निर्मल, चिकनी-चुपड़ी।

६६३. दान—दया-रूप युद्ध को ही वीर सच्चे धीर वीर हैं, अन्य नहीं ।

६६४. सुकरित—सुकृत, पुण्य ।

६६५. रिजु—सीधा, सरल, कोमल ।

६६७. वामनावतार धर, विष्णु ने राजा वलि से तीन पग पृथ्वी माँगी और सारी पृथ्वी नाप ली । परंतु इसके लिये उन्हें वलि राजा का द्वारपाल होना पड़ा ।

६६८. वस—अधीन । देखो ऊपर ६६७ ।

६६९. तुलसी स्त्री पति-सिर लसै—जालंधर दैत्य की स्त्री विंदा बड़ी पतिव्रता थी । इस कारण महादेव उस दैत्य को परास्त न कर सकते थे । विष्णु ने जलंधर का रूप धारण कर विंदा का धर्म नष्ट किया तब महादेव की जय हुई । इसी के फल रूप में वे उसे अब तुलसी की पत्ती के रूप में अपने सिर पर रखे रहते हैं ।

६७०. मेंढक—पंचतंत्र का गंगदत्त जिसने अपने शत्रु अन्य सर्पों के नाश के अभिप्राय से प्रियदर्शन सर्प को बुलाया था । सर्प ने सब सर्पों को खा डाला, इसके परिवार को भी न छोड़ा । यदि गंगदत्त ठीक समय पर न भागता तो स्वयं भी उस सर्प का आहार बनता ।

मर्कट—एक बंदर ने एक नदी के किनारे पेड़ पर से फल गिरा-गिराकर एक भूखे मगर को प्राण बचाए । अंत में मगर ने उस बंदर को ही खाने का उपाय सोचा । वह किसी तरह भाग निकला ।

बनिक—एक बनिए ने दया कर किसी मंत्र की सिद्धि के लिये अपनी स्त्री एक राजकुमार के पास भेज दी । राजकुमार ने स्त्री का धर्म ही नष्ट कर दिया ।

बक—एक बगुले ने भूख से मरते हुए एक नेबले को साँप बतला दिया । परंतु नेबले ने बगुले पर भी हाथ साफ कर दिया ।

६७३. कपि—बालि को उसकी छो तारा ने बहुत समझाया कि सुग्रीव से वैर न करो। राम उसके सहायक हैं। पर बालि ने न माना और अंत में मारा गया।

काक—जयंत ने सीताजी के चरणों पर चोंच मारकर चंचलता दिखलाई थी। इस अपराध से उसकी एक आँख फूट गई।

६७६. सोइ—सोए हुए।

६८२. तुपक—तोप। दारु—बारूद। पलीता—चाँप।

६८३. मित्र—सूर्य ( अविवेक )। मनोज—चंद्रमा ( विवेक )।

६८४. वैर सनेह सयानपहि—वैर, स्नेह और चतुरता कहाँ करनी चाहिए और कहाँ नहीं। बिखान—विषाण, सींग।

६८६. राजा प्रजा को सुधार सकता है। परंतु उसका एक ही अवगुण प्रजा में तिगुना होकर प्रकट होता है।

६८६. नय—न्याय। नेम—नियम, कानून। नियोग—आज्ञा। भय—हो गए हैं। नेवारित—छिपाया जाता है।

६८९. बिटप—दृष्ट ( प्रजा )।

६९२. गोठ की गाय—जो स्वच्छंदता से घास चर नहीं सकती, थोड़ी सी घास-भूसी पर ही रहती है।

६९३. कंट कंट—टुकड़ा टुकड़ा।

६९५. प्रभुहि—राजा को।

६९८. राख—रखते हैं। चपरि—बलपूर्वक। जब कोई चीज डूबने लगती है तो चारों ओर का पानी वेग से उधर ही को आता है।

६९९. जो राजा अपनी सब वस्तुओं को धर्म-रूप सुंदर भुजाओं और सत्य-रूप मंत्री को सौंप देता है वह निश्चित होकर सुख भोग सकता है।

७००. रसना मंत्रो—जिह्वा के समान मंत्रो जो सब रसों को चखकर खट्टे मीठे आदि का ठीक ठीक ज्ञान कराती है। अर्थात्

मंत्री वस्तु-स्थिति का यथार्थ ज्ञान करानेवाला होना चाहिए। दसन जन—सेवक दाँतों के समान हैं। दाँत भोजन को चबाकर उसे पचने योग्य बनाते हैं परंतु स्वयं उसमें से कुछ नहीं लेते। इसी प्रकार सेवक भी राजा की आवश्यकताओं को जानकर उसके कर्तव्य को सुगम करनेवाले और त्यागी होने चाहिए जिससे (मुख के समान राजा) उनके प्रयत्न के फल द्वारा सेना पदाति और प्रजा (बालक) आदि अपने राज-समाज के सब अंगों को पुष्ट कर सके।

७०१. डौवा—चिमचा। सरस—रस सहित, सुख देनेवाले। काज अनुहारि—कार्य के अनुसार।

७०३. मूलहिं अनुकूल—मूल के अनुसार अर्थात् जड़ को अच्छा पानी-खाद मिलेगी तो पेड़ के अन्य अंग भी अच्छी वृद्धि पाएँगे, नहीं तो नहीं।

७०५. साधन समय—किसी कार्य की साधना करते समय ही; अर्थात् कार्य आरंभ हुआ कि सिद्धि मिली। उभय मूल—इस लोक और परलोक दोनों के मूल अर्थात् दोनों को सुधारनेवाले।

७०६. रामायन...रीति—रामायण की शिष्टा का अनुसरण करते हुए संसार भारत की रीति पर चलने लगा। दूसरे प्रकार से भी इसका अर्थ हो सकता है यद्यपि उसमें दूरान्वय दोष आ सकता है। (को) रामायन सिख अनुहरत—रामायण की शिष्टा का कौन अनुसरण करता है? सत्यप्रतिज्ञा, पितृ-आज्ञापालन, भ्रातृ-प्रेम, स्वार्थ-त्याग, आदि शक्तिमय गुणों की कौन परवा करता है? क्योंकि (जग भौ भारत रीति) संसार में तो अब महाभारत की रीति का चलन हो गया है अर्थात् भाई भाई छोटी सी बात के लिये लड़ मरते हैं।

७०७. हितकारी, सुखद और गुण-युक्त बातें भी समय पाकर दुःख देती ही हैं। परंतु केवल इसी लिये उन्हें त्याग नहीं देना

चाहिए । आग जब घर में लग जाती है तब सब धन-माया को जला डालती है, पर आग को लोग घर में रखते ही हैं । क्योंकि उसे त्याग देने से सुख नहीं मिलता ।

७०८. खंभ—खोदकर बनाए हुए तालाबों के बीच में वहुधा एक खंभा गड़ा रहता है । चेतन—आत्मा । तपनहुँ—धाम से भी ( नहीं सूखता ) ।

७१०. अरथ आदि हन—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का नाश करनेवाली बातें । अंत गहन सब कहें—अंत ( मृत्यु ) सभी को ग्रहण करना पड़ेगा ।

७११. उ-कार—ऊँकार, ह्रीं, विधि, कर्तव्य अथवा तर्क के सहित । विविचार—विशेष विचार-पूर्वक ।

७१२. निरावहिं निरस तरु—नीरस तरु अफीम इत्यादि को मूर्ख लोग निराते हैं, उसके आस-पास की घास को उखाड़कर फेंक देते हैं अर्थात् नीरस वृत्तों को परिश्रम से पालते हैं या विषय के जाल में पड़े रहते हैं जिसमें वास्तव में कोई रस नहीं है, केवल नशा है । ऊख—प्रेम-रस-पूर्ण भक्ति । पोखत...रुख—यद्यपि बादल परमात्मा का विधान विषय ( अफीम आदि ) के वृत्तों और ऊख को समान रूप से जल-दान कर पुष्ट करता है । विषय-वासना बुरी और भक्ति भली, यद्यपि हैं दोनों मायासंभूत और इस कारण तात्त्विक दृष्टि से एक समान ।

७१३. दगौ—दग गया है, प्रसिद्ध है ( कि भले को लोग बुरा नाम दे ही देते हैं ) धर्मराज को लोग यम और ( पवि ) इंद्रायुध को गाज कहने में न तो कुछ हिचकते ही हैं और न विचार ही करते हैं अर्थात् चट कह डालते हैं ।

७१५. गाँवर—गँवार, अज्ञान ।

७१६. तन, धन, सहत्त्व और धर्म जिसे प्राप्त हैं परंतु जिसके पास इनके साथ साथ अभिमान भी है, उसका जीना धोखा ही है और परिणाम में भी उसे धोखा ही मिलेगा ।

७१७. जप करनेवाले और पूजा करनेवाले राजाओं से अपमानित किए जाते हैं, क्योंकि वे समझते हैं कि हम लोग देवताओं से बढ़कर हैं, ये हमारी पूजा छोड़ देवताओं की पूजा करके भारी अपराध करते हैं ।

७१८. बालि ने सुग्रीव से वैर किया और रावण ने विभीषण का निरादर, दोनों ने राम से मिलकर अपने अपने भाइयों का नाश किया ।

७२२. चंग—गुड़ी, पतंग । ढिलाई देना—( नीच पक्ष में ) कड़ाई न करना ।

७२३. खग मृग-मीन—पक्षी, पशु और मछली को साथी, अर्थात् क्रमशः बाज, सिंह और बड़ो मछली इत्यादि, कच्चा ही खा जाते हैं और लोग पकाकर खाते हैं । कैसे बेचारे अपना समय व्यतीत करें ?

७२४. इतना पापी कि बड़े पापों को करने में प्रशंसा समझता है और छोटे पापों के करने में लज्जित होता है ( पापत्व के कारण नहीं बल्कि छोटाई के कारण ) ।

७२५. सद्बुद्धि का निवारण कर और उसे त्यागकर चाहे आयुधों के स्थान पर फूलों और पत्तों हो से क्यों न संग्राम कीजिए परिणाम बुरा हो होगा । यदुवंशी और कामदेव इसके साक्षी हैं । यदुवंशी एक घास लेकर लड़े थे जिससे उनका नाश हो गया । कामदेव फूलों के बाण लेकर शंकर पर प्रहार करने चले थे सो शरीर खो बैठे ।

७२७. डहके तें डहकाइवो—ठगने से ठगा जाना अच्छा ।

७२८. परे मामला—मामला पड़ने पर, टीकाकारों ने इसका अर्थ 'न्यायालय में मामला चलने' पर किया है ।

७२९. सनाह—कवच ।

७३३. कालकूट—विष ।

७३४. पाही खेती—पराई खेती जोतना; पाही काशत ।

७३६. बधूर—बवंडर, घात्याचक्र ।

७३८. रुचिं अनुहरत अचार—खच्छंद आचार, जिसके मन में जैसा आता है वैसा ही करता है ।

७४५. महि...सरूप—पृथ्वी पर से जैसे पहाड़ पर का आदमी छोटा ( खर्ब ) दीखता है और पहाड़ पर से पृथ्वी बड़ी ।

७४७. सुकृत...मरजाद—यह सतसई पुण्य, स्वार्थ और परमार्थ सब की सीमा है; इसके अनुसार चलने से तीनों सिद्ध होते हैं ।

## ( २ ) बिहारी-सतसई

१. स्यामु—(१) कृष्ण, (२) काला, (३) पाप । हरित-दुति—(१) निष्प्रभ, (२) हरा रंग, (३) प्रभाव-रहित ।

२. अंग के—राज्य के कई अंग माने जाते हैं जिनमें राजा प्रधान है और उसके कर्मचारी तथा प्रजावर्ग सहायक । इजाफा—(अरबी) वृद्धि, बढ़ती ।

३. अर—हठ । बर-परे—बरजोर, बलिष्ठ, जबर्दस्त । मरक—बढ़ावा ।

४. गनी—गिनी गई, समझी गई । घनी-सिरताज—बहुतों ( सौते ) में श्रेष्ठ । मनी—मणि; भिन्न प्रकार की मणियों के भिन्न भिन्न प्रभाव माने जाते हैं ।

५. सनि...लगन—ज्योतिष के अनुसार वह व्यक्ति जिसके जन्म के समय मीन का शनैश्चर हो, राजा होता है ।

६. नटसाल—बर्छी की टूटी हुई नोक जो घाव में रह जाती है । ( नष्ट शल्य ) ।

७. सौधे—सुगंधि ।



८. बहके—बे-वश ।

१३. काननु—( १ ) कानों का, ( २ ) वन का अर्थात् कान-रूपी वन ।

१४. पातरी कान की—कानकी पतली अर्थात् कच्ची । बहाऊ—बहा देनेवाली, काम बिगाड़नेवाली ।

१५. दुरजोधन लीं—दुर्योधन को शाप था कि जब उसे हर्ष और शोक एक साथ होगा उसी समय उसकी मृत्यु हो जायगी ।

१६. सुमनु—(१) अच्छा मन, (२) फूल; फूल लगने पर फल होता है । बारी—(१) बालिका, (२) माली । बारी—(१) पारी ( नायक को आने की ), (२) वाटिका, उद्यान ।

२०. तरयौना—(१) कान का एक गहना, (२) नहीं तरा हुआ, माया में फँसा हुआ । स्मृति—(१) कान, (२) वेद । नाक—(१) नासिका, (२) स्वर्ग । मुक्तनु—(१) मणियों के, (२) जो मुक्त हो चुके हैं उनके ।

२१. तरहरि—नीचे । धरहरि—निश्चयपूर्वक ।

२५. उरबसी—एक अप्सरा का नाम । उर-बसी—उर में बसी हुई । उर-बसी—छाती पर पहनने का एक गहना ।

२६. चाँड—लालच, इच्छा । ईठि—इष्ट, मित्र ।

३०. किबलनवी—किबलःनुमा, वह यंत्र जिससे दिशा का ज्ञान होता है ।

३१. गीधे—ललचाए हुए, परचे हुए । गीधहिं—जटायु को ।

३४. कमल—चरणों की उपमा होने के कारण इससे चरणों का संकेत होता है । कमल को सिर से छुवाकर नायक ने पाँव पड़कर मिलने की प्रार्थना की । हरि—सूर्य । सूर्य की ओर दर्पण करके हृदय ( कुच ) पर लगाने से यह भाव सूचित किया कि जब पर्वतों के उस ओर जाकर सूर्य अस्त हो जायँगे तब मिलूँगी ।

३६. भर—वर्षा की झड़ी । भार—ज्वाला ।

४१. हरि—परमात्मा ।

४२. बिदु सुरंग—लाल बेंदी । केसरि-आड़—केसर का तिलक । नारी—(१) स्त्री, (२) ज्योतिष में नाड़ी । जब चंद्रमा, मंगल और बृहस्पति एक ही नाड़ी के चारों नक्षत्रों में से किसी पर होते हैं तो सारे संसार में वर्षा होती है । रस—(१) शृंगार रस, प्रेम, (२) जल ( वर्षा से ) ।

४८. पजरै—प्रज्वलित होती है, जलती है । बात—बातरूपी हवा ।

४९. अटपटी—बेढंगी । कर बर—चितकबरा, चीते का रंग चितकबरा होता है, इसलिये चीता ।

५३. रोज परै—दिन पड़ने पर, विपत्ति पड़ने पर ।

५४. होमति—हवन करती है ।

५५. सायक—संस्कृत शायक का अपभ्रंश रूप । सुलानेवाला समय, सायंकाल । संध्या समय की लाली से आँखों की लाली की उपमा दी भी जाती है । लाला भगवानदीनजी ने सायंक पाठ ग्रहण किया है ।

६५. खिसौं हैं—अपराध से संकुचित ।

६६. कै बा—कै बार, बहुत समय ।

६८. दिया बढ़ाएँ—दिया बुझाने को उसे बढ़ाना कहा जाता है ।

७२. सतरौं हैं—रोष भरे । रचौं हैं—रचने पर आया हुआ, अनुराग की ओर ढला हुआ । नचौं हैं—प्रेम से चंचल ।

७४. सोधति—शोधती है, शुद्ध करती है, तपाती है ।

७७. छवि-गुर-डरी—छवि-रूपी गुड़ की डली । वशीकरण के एक प्रयोग में गुड़ की डली अभिमंत्रित करके उस मनुष्य से छुवाई अथवा उसे खिलाई जाती है जिसे वश में करना होता है ।

७६. मुकुरु—मुकरनेवाले । मुकुरु—दर्पण ।

८०. मौज—आनंद, ऐश्वर्य ।

८२. बिकान—बिक गया, लोप हो गया । चौका—आगे के चार दाँत । चीन्ह—चिह्न ।

८६. चौसर—चौलड़ हार ।

८७. मैना—राजपूताने की एक जाति जो पहाड़ों और जंगलों में रहती है और लूट-खसोट से अपनी आजीविका चलाती है । इस जातिवालों को मीना भी कहते हैं । मवासु—दड़ निवास-स्थान ।

८८. त्रिवली—नाभि से ऊपर वालों की एक लकीर सी होती है इसी को त्रिवली कहते हैं । समाहि—सामना करके । चाहि—देखकर ।

८९. बुरै—उड़ै, उड़ जाता है अथवा डरा जाती है या व्यय हो जाती है । कहीं कहीं दुरै पाठ भी मिलता है ।

९०. चुहुटिनी—(१) घुँघुची, (२) चिमटकर पकड़ रखनेवाली ।

९२. सुधा दीधिति—चंद्रमा । अगस्तिया—अगस्त्य का वृक्ष ।

९३. गदराने—पकने पर आए हुए अर्थात् यौवन में प्रवेश करती हुई । गोरटी—गौर वर्णवाली । ऐपन—चावल और हल्दी को पीसकर बनाया हुआ एक प्रकार का लेप । हूठ्यौ दै—मुठियाँ बाँधकर कमर पर रखना हूठा देना कहलाता है । गँवारू बियाँ जब इठलाती अथवा किसी को बिराती हैं तो ऐसा करती हैं । बार—आक्रमण ।

९४. तंत्रोनाद—वीणा इत्यादि का मधुर स्वर ।

९५. सहज सचिकन—स्वाभाविक ही ( बिना तेल लगाए ) चिकने ।

९६. छुटै पीक—प्रिय के चुंबन करने के कारण पीक के छूट जाने पर ।

६७. गाड़ें—गड़हे । उपस्थौ—कोमल वस्तुओं पर किसी कठोर वस्तु से दबने से चिह्न पड़ जाने को उपटना कहते हैं । गुरेरु—छोटी छोटी गोखियों से जो गुञ्जेल के द्वारा निशाने पर चलाई जाती हैं ।

१००. नीठि—कठिनता से ।

१०१. केसव—कृष्ण । केसवराइ—बिहारी के पिता केशव-राय । द्विजराज-कुल ( १ ) चंद्रवंश, ( २ ) ब्राह्मण कुल ।

१०२. सरि—सादृश्य, समानता, बराबरी । जातरूप—स्वर्ण ।

१०३. मकराकृति—मछली के आकार के । हिय-धर—हृदय-रूप धरा ( स्थान ) । समरु—स्मर, कामदेव । निसान—निशान, ध्वजा ।

१०४. खौरि—बीच में से खुरचा हुआ आड़ा तिलक । सुरक—तिलक का नाक तक आया हुआ भाले के आकार का भाग ।

१०६. तरल—चंचल, हिलता हुआ ।

१०६. लोइन लगै—लोचनों में लग सकती है, अर्थात् सुंदर लग सकती है ।

१११. सूमति—सूमता, कृपणता ।

११२. जेठ में दिन बड़े होते हैं और राते छोटी । उसी प्रकार युवावस्था में कुच बढ़ते हैं और कमर घटती है ।

११३. तेह तरेरे—क्रोध से तिरछे ।

११४. छाम—चाम, चोण, दुर्वल । उठति नाँदि—दीए की ज्योति का एकाएक भभक जाना नाँद उठना कहाता है । यह बहुधा तेल चुक जाने पर होता है ।

११५. चटकाली—गौरियों की पंक्ति । चाली—चाल डाली या चलनी चलनी कर दी ।

११६. नाँदनु जोग—निंदा करने के योग्य ।

११७. नवत—( १ ) बाल नीचे की ओर जाते हैं, ( २ ) नर नम्र होते हैं । सतर—( १ ) बिड़चिड़े, ( २ ) ऐंठे हुए, उठे हुए । नरम—( १ ) ढोले, ( २ ) नम्र ।

११८. विय—द्वै, दोनो ।

११९. रस—( १ ) प्रेम, रति । ( २ ) वैद्यक में धातु औषधों को रस कहते हैं ।

१२०. नग—रत्न, खो-रत्न । जाइयै—ज्याइयै, जिलाने के उद्देश्य से । सुदरसन—( १ ) सुंदर दर्शन, ( २ ) सुदर्शन चूर्ण जो ब्वर में दिया जाता है ।

१२२. विय—द्वितीय, दूसरी, अन्य । डहडही—हरी भरी, प्रफुल्लित । मरगजी—मुरझाई हुई ।

१२४. संसौ—संशय, प्राण बचते हैं या नहीं नित्य यह संशय बना रहता है । हंसौ—( १ ) आत्मा, प्राण; ( २ ) हंस पक्षी; प्राण रूप हंस । मीचु-सचानु—मृत्यु रूप घाज ।

१२५. गैल—रास्ता ।

१२६. गोरस—इंद्रियों का स्वाद । गोरसु—गव्य, दूध, दही, मक्खन इत्यादि ।

१२८. हरकी—हटकी, बरजी, रोकी ।

१२९. पर्यौ जोरु—जोड़ा पड़ा ( अखाड़े की भाषा ), प्रतिद्वंद्वी नीचे आ दवा । यहाँ पर नायिका का पक्ष लेकर कहा जा रहा है, इसलिये जोड़ से अभिप्राय नायक से है । किंकिनी—कमर पर पहनने का एक आभूषण जिसे उस पर बँधी हुई छोटी छोटी घंटियों के कारण लुद्रघंटिका भी कहते हैं । मंजीर—नूपुर ।

१३०. दियौ बताइ—दीया, बुझाकर ।

१३३. सौनजाइ—सोनजुही, पीली चमेली ।

१३४. चाले—गैने ।

१३५. बनौ—ऊख । धरहरि—धैर्य ।

१३६. छिगुनिया—छोटी उँगली, कनिष्ठिका ।

१३८. डगकु—एक डग या पग । चोरटी—चोरी ( चित्त की ) करनेवाली ।

१४२. अचका—सहसा, अचानक, एकाएक ।

१४४. जावनु—जामन, दही आदि कोई खट्टी चीज जो दूध जमाने के लिये उसमें डाली जाती है । नेह—स्नेह को ।

१४५. रौहाल—पारसी 'रहवार' का विकृत रूप जिसका अर्थ होता है चलनेवाला । रुढ़ि से अब रौहाल घोड़े के लिये प्रयोग में लाया जाता है । गँढ़ौ—घर के चारों ओर की भूमि जो उसकी सीमा में सम्मिलित समझी जाती है । पँढ़ौ—मार्ग ।

१४६. सवारु—सवेरे, जल्दी, प्रिय को अभी परदेश से आए बहुत दिन नहीं हुए कि उसने जल्दी ही फिर परदेश जाने की तैयारी कर दी, यह भाव है ।

१४७. चँपु—लासा, जिससे बहेलिए पक्षियों को पकड़ते हैं ।

१४८. अमिलु—जो अपने मेल को न हो । धर्यौ सीस हियै' धरि हाथु—हृदय पर हाथ धरकर फिर उसे सिर पर रखता । हृदय पर हाथ रखने से अभिप्राय कि मैं तुम्हें हृदय में रखता हूँ । सिर पर हाथ रखने से यह तात्पर्य है कि तुम्हारी सब प्रेमपूर्ण आज्ञाएँ शिरोधार्य होंगी ।

१५०. नैननु लगै—आँखों के लड़ने से ।

१५२. चुमकी—डुबकी । केसरि नीर—( उसके शरीर की कांति से ) जल ऐसा मालूम पड़ता है मानों उसमें केसर घुला हो । सरि-नीर—नदी का जल ।

१५३. नवोढ़—नवोढ़ा, नई ( नव ) व्याही ( ऊढ़ा ) दुलहन । पिचकी—पिचकारी ।

१५५. सुरत—रति ।

१५६. मनि-मुत्तिय-माल—मणि और मुक्ताओं की माला ।

१५८. छिगुनी—छोटो उँगली; कनिष्ठिका । गिलत—निगल डालते हो । छै छिगुनी पहुँचै गिलत—उँगली पकड़के पहुँचा पकड़ना मुहावरा है । ब्याँत—ढंग, ढौल ।

१६२. डटतु—शोभित होते हैं । छाँह—भलक । अटक-भटक-बट—बट का वह वृत्त जो भूलभुलैया बन रहा हो । 'व्रजभूमि के 'भाँडोर वन' में अभी तक कुछ ऐसे वट के पुराने वृत्त हैं जिनकी बरोहें लटक-लटककर इस प्रकार जम गई हैं कि उनके नीचे भूल-भुलैयाँ सी बन गई हैं ।'—रत्नाकर ।

१६३. ओप—द्युति, शोभा, चमक ।

१६४. रातें हिदैँ—अनुरक्त हृदय से । काती—काटनेवाली, छुरी अथवा कैची ।

१६५. सिहाँति—सिहाती हैं । किसी को देखकर मुग्ध होते हुए स्वयं भी वैसी ही होने की इच्छा करना । एकसौंही भाँति—उभरने पर आई हुई ( छाती ) ।

१६६. डभकौहैं—आँसू भरे । बराइ—टालकर, बचाकर । गह-वरि आएं गरैं—गला भर आने से, कंठ के रुँध जाने से । गढ़वाली भाषा में इसे गभर भर आना कहते हैं । राखी—रक्षा की ।

१६७. दरपन-धाम—काच-मंदिर, शोशमहल । काय-व्यूह—शरीर का मोरचा । व्यूह सेना की उस रचना को कहते हैं जिसमें घुसकर बाहर निकल आना कठिन हो जाता है ।

१७०. अठान—ठानने के अयोग्य ।

१७२. गरमी के दिन और शिशिर की रातें बड़ी लंबी और दुःखप्रद होती हैं ।

१७४. बटपरा—रास्ते में छापा डालनेवाले ठग या डाकू ।

१७६. अथाइनु—चौपालों, द्वार पर की ऊँची उठी हुई बैठकें ।  
अभिसार—नायिका का नायक से मिलने के लिये संकेत-स्थान पर  
जाना । सँभौखें—सौंभ की, संध्याकाल की ।

१७७. रोकि...नाहिं—सबका यहाँ पर अशुद्ध प्रयोग हुआ  
है । सब नहीं रोक सकते हैं कुछ रोक सकते हैं । होना चाहिए  
था रोकि सकें कोउ नाहिं ।

१७८. सरस—(१) रसीले, (२) पुष्ट और सधे हुए । सुमिल  
—(१) अनुरागो, (२) गोल में मिलकर चलनेवाले । उठान—  
(१) उमंगें, (२) कावे । गोइ निबाहैं—(१) छिपाकर निर्वाह करने  
से, (२) गेद को निश्चित स्थान तक पहुँचाने से । चौगान—  
आधुनिक पोलो की तरह का एक खेल ।

१७९. उमदाति—उन्मत्त सी होती हुई । बलकि बलकि—बहक  
बहककर । ललकि ललकि—बढ़ बढ़कर ।

१८३. ऐंड—गर्व । ऐंडाति—गर्व से ऐंठती है ।

१८४. सौंह—सौगंद । पनिहा (प्रणिधाः)—गुप्तचर ।

१८५. कनौड़ो—लजीली (अपराध के कारण) ।

१८६. मरकत—नीलम ।

१८७. वारै—बारी ( पारी ) में ।

१८८. चुपरी—चोवा चर्चित ।

१८९. कनकु—(१) सोना, (२) धतूरा ।

१९३. डीठि-बरत—दृष्टि रूपी ( वर्त ) रस्सी ।

१९५. लोइन—लोचन ।

१९६. लफति—लचकती हुई । सटक—पतली लचीलो छड़ा ।

१९८. हरौल—हरावल की सेना, सेना का वह छोटा सा भाग  
जो सेना के प्रधान अंश के कुछ आगे आगे चलता है जिससे प्रधान



सेना पर बिना खटका पाए शत्रु का आक्रमण न हो सके। गोल-समूह, सेना का प्रधान अंश।

१६६. अनखुलो—बिना अपने हृदय की बात को प्रकट किए।

२००. बाथ—अंक—‘रत्नाकर’; अंकवार।

२०१. प्रयाग—प्रयागराज में गंगा (गौर वर्ण), यमुना (श्याम) और सरस्वती का मेल होता है। ब्रज को विहार-कुंजों में राधा के गौर वर्ण; कृष्ण के साँवले रंग और भक्त के हृदय के अनुराग—जिसका रंग लाल समझा जाता है—के मिलने से प्रयाग बनता है।

२०४. नौल सिरी—नवल श्री, नई शोभा। बौलसिरी—मौल-सिरी।

२०६. अनवटु—पैर के अँगूठे में पहनने का एक गहना।

२१०. केलि-तरुनु—केले के पेड़ों से जिनकी जंघाओं की उपमा दी जाती है। केलि-तरुन—क्रीड़ा में तरुणों को।

२१३. लोइन—लोचन। लोइन-सिंधु—लावण्य के सागर।

२१४. ढिग—किनारी। हद—अत्यंत, परम। रद-छत्त (रद-छद) रद का आच्छादन करनेवाले, ओंठ। सद—ताजा। रद-छद—दाँतों से किया हुआ घाव।

२१५. यह दोहा रुक्मिणी-हरण के अवसर का है।

२१७. औघाई—औंधी कर दी, उलट दी।

२१८. छिनदा (चणदा)—रात्रि। छाक—एक प्रकार का पकवान जिससे नशा होता है, यहाँ पर नशा।

२२०. जोवन-आमिर (अर०)-जौर (फा०)—यौवन-रूप शासक का अत्याचार।

२२३. बरोठे—प्रकोष्ठ, दीवाल से घिरा हुआ आँगन। विधि की घरी—ब्रह्मा की घड़ी।

२२४. चीर-हरण का प्रसंग । कर-जोरि—हाथ जोड़कर । जिससे कुर्चों पर से, जिन्हें गोपियाँ लज्जा के मारे हाथ से ढाँपे हुई हैं, हाथ उठ जायें ।

२३०. मलिंग—मलंग, एक प्रकार के मुसलमान फकीर जो बहुत कम कपड़े पहनते हैं और शरीर को लोहे की साँकलों में जकड़ कर भगवद्भजन में मस्त रहते हैं ।

२३१. छाँहगीरु—छाँह देनेवाला, छत्र ।

२३४. ससहरि—डरकर ।

२३५. मोषु—मोक्ष ।

२३७. चिरम—धुँगुची ।

२४०. सौहैं—सामने । सौहैं—सौगंद ।

२४२. मौरि—मौलि, शिर ।

२४३. चूढ़—बीर-बहूटी जिसका रंग लाल होता है ।

२४४. निदाघ—ग्रीष्म । उसीर—खस । रावटी—टट्टी की ओट । आवटी—उबली ।

२४६. ददोरनु—पित्तों के फूले जिनमें बड़ी खुजली होती है ।

२४७. फरी—ढाल । पाइक—पैदल । घाइ—घात, धार, चोट ।

२५०. गुनही—( फा० ) गुनाही, अपराधी । अगोटि—कैद करके ।

२५२. भावकु—थोड़ा । भरु—भारीपन । सीपहार—सीप का हार ।

२५३. भटभेरा—मुठभेड़ ।

२५५. अपत—अपत्र, बिना पत्ते की ।

२५७. कुही—बाज की छोटी जाति । नीचौ दयौ—ऊपर से जोर से शिकार पर दूट पड़ा । कुलिंग—एक छोटा पक्षी । भूपि—छोपकर ।

२५६. हथलेयै—हाथ लेने में, पाणिग्रहण करने में ।

२६०. बाषारि—घर में । एक ही घर में रहने पर भी वपों तक नायक और स्त्रियों के पास नहीं जाता ।

२६३. जालरंध्र—भरोखे की जाली के छेद । जगत्पौ रह्यौ—जागता ही रहा ।

२६८. प्रसंग—गणेश-चतुर्थी, जिस दिन चंद्रमा के उदय होने पर अर्घ्य देकर व्रत समाप्त किया जाता है ।

२६९. प्रसंग—वही । सुचिती—स्थिर चित्त होकर, क्योंकि नायिका के अटारी पर रहने से उसका मुख-चंद्र दूसरे चंद्रमा का भ्रम उत्पन्न करता है ।

२७४. पुण्यकाल सम दोनु—पुण्यकाल में दोनों समान रहते हैं । जिस रेखा पर किशोरावस्था और युवावस्था मिलती हैं वही यहाँ पर पुण्यकाल माना जायगा । ज्योतिष शास्त्र में सूर्य का मार्ग १२ राशियों में बाँटा गया है । सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि में जाना संक्रमण ( दोहे में का संक्रान्तु ) या संक्रांति कहलाता है । सूर्य-पिंड के मध्य बिंदु को दो राशियों की संधि-रेखा में आने और उसे छोड़ने में जो समय लगता है वह पुण्यकाल कहलाता है ।

२७५. छत ( सत ) हूँ—होते हुए भी । अछत समान—न होने के समान । तिथि और अवम तिथि जो होती तो है पर उसके नाम से किसी दिन की गिनती नहीं होती । यह बात तब होती है जब कोई तिथि सूर्योदय के बाद से आरंभ होकर दूसरे दिन के सूर्योदय के पहले ही बीत जाती है । सूर्योदय के समय जो तिथि रहती है उस दिन भर वही तिथि मानी जाती है । इससे इस तिथि की गिनती नहीं होने पाती ।

२७६. करतार—हाथ की ताली ।

२७७. सफरी—मछलियों की एक जाति ।

२८१. त्रयताप—शारीरिक, दैविक और आत्मिक । हमाम—हम्माम ( अरबी ) नहाने का कमरा जो ऊपर, नीचे और दीवारों से गरम किया जाता है । हम्माम में स्नान करने से रोम रोम खुलकर खूब पसीना आता है ।

२८५. माह—माघ का महीना ।

२८७. लाइ—ज्वाला, लपट ।

२८८. लगौहैं—जिन्हें आसक्त हो जाने की आदत ही है ।

२८९. लहाछहे—नृत्य में पद-लाघव ।

२९१. तरौंस—तटवर्ती, कूल के पास का । खिनकु—क्षण भर । खरौहैं—खारा ।

२९३. नै—नदी । बगर बगर कै बार—घर घर के दरवाज़े पर ।

२९५. कन—अन्न ( भीख ) । शुरहथी—छोटे हाथवाली । रहचटैं—लालच में ।

२९८. निय—निज । खरौट—हलका घाव । सरसई—गीला-पन । खोटि—खुरचकर ।

३०४. परिवेखु—मंडल, घेरा ।

३०७. घरी—समय-दर्शक जल-यंत्र की बड़ी ।

३०८. सहवात—मेल की बात-चीत । भेद-उपाइ—भेदनीति से अपनी तरफ मिलाने का उपाय । सुरँग—(१) सुंदर रंग, प्रेम । (२) सुरंग—वह छेद जिसमें बारूद भरकर आग लगाने से बड़े बड़े चट्टान या किले गिरा दिए जाते हैं ।

३११. आटैं परि—दांव पड़ने पर ।

३१४. तिलौछे—तेल से पोछे हुए । सुरमा छुड़ाने के लिये आंखें तेल से भोगे कपड़े से पोछी जाती हैं । तिलौछे नेत्र रोग के व्यंजक हैं ।

३१५. मरगजे मुँह—मलिन मुँह, फोके चेहरे । मरगजें चीर—मरगजी साड़ी, वह साड़ी जिसमें क्रोड़ा के कारण सलवटे पड़ गई हैं ।

३१६. आघु—अर्घ्य, मूल्य ।

३१८. काल-विपाकु—अवधि । उछकै न—उतरता नहीं ।

३२०. लगनिया—लगन, अभिलाष, अनुराग ।

३२२. धर—पृथ्वी ।

३२३. सकाइ—शंकित होता है ।

३२४. हाँसी—हँसी । हाँसीयै—हाँ के समान ही ।

३२५. खुत्याल—खुशहाल ( फा० ) प्रसन्न, सुखी ।

३२८. भरसी—भुलसी हुई । गरी—गली हुई ।

३३०. बनौटो रंग—हलका पीला कपासी रंग । बन कपास की एक विशेष जाति है ।

३३७. सांठे—पोंडे ।

३३६. उरबसी—एक आभूषण । दागु—दग्ध, दाह ।

३४०. पँचतोरिया—इतनी भीनी साड़ी कि उसका तोल केवल पाँच तोला हो । जल-चादर—जलकणों का विसृत और भीना प्रवाह । इस दोहे से जान पड़ता है कि जल चादर के पीछे किसी उपाय से दीए भी जलाकर रख दिए जाते थे जो निस्संदेह अत्यंत शोभा देते होंगे ।

३४४. गढ़वै—गढ़वर्तिनी, किले में रहनेवाली ।

३४७. सबी—( अरबी शबीह ) चित्र । कूर—कूड़ा, निकम्मा, मूर्ख ।

३४८. दुनहाई—टोना करनेवाली । टोल—टोला, मुहल्ला । त्यों—तरफ । अदोखिल—निर्दोष ।

३४६. ईछन—ईक्षण, दृष्टि ।

३५०. मूठि—मूठी भारना एक तांत्रिक प्रयोग है जो कई उद्देश्यों से किया जाता है। इसमें उद्देश्य के अनुसार भिन्न भिन्न सामग्री अभिमंत्रित करके मुट्टो में भर ली जाती है और जिस पर प्रयोग करना होता है उसकी ओर फेंक दी जाती है।

३५१. अरक—आक का पेड़। अरक—सूर्य। उदोत—प्रकाश।

३५५. आहु—ललकार।

३५६. कमनैती—घाण चलाने की विद्या।

३५७. मावस—अमावास्या।

३५८. घन—घन्या, खो।

३६०. सोठ-मिठासु—सोठ की कुछ गाँठें विषैली हो जाती हैं। विषैली गाँठों में सोठ की स्वाभाविक चरपराहट न होकर एक प्रकार की मिठास होती है।

३६१. खुटै—खुनते।

३६२. कपूर मनि—कुछ पीले रंग का मृत्युवान् पत्थर जो तिनके को आकर्षित करता है, इसी लिये यह तृण मणि भी कहलाता है। फारसी में इसे कहुवा कहते हैं।

३६४. चिकनाई—चिकण अथवा स्निग्ध होता है, प्रेममय होता है।

३६६. मरुघर—मरुभूमि, मारवाड़। मतीरु—बड़ा तरबूज। मारु—मारवाड़ी।

३६७. वृषादित—वृषादित्य, वृष राशि का सूर्य।

३६८. ढोळ्यौ—ढिठाई।

३७१. भजन—भजन करना। भज्यौ—भागा। भजन—भागा। भज्यौ—भजन किया।

३७२. सैक—सैकड़ों।

३७३. अँगना—अंगना, खो। अँगना—आँगन।

३७५. दुसाल—आर पार छेदा हुआ ।

३७६. आधु—आदर, मूल्य । गर पर्यौ—गले पड़ा हुआ, निराहत ।

३८०. हरहार—हर का हार, सर्प ।

३८२. उमदाहु—उमंगित होकर झुक पड़ा ।

३८३. ईठि—मित्र ।

३८६. लंगरु—ढीठ ।

३८७. पोढ़—प्रौढ़ा के उपयुक्त । अपोढ़—जो प्रौढ़ा नहीं है । छकए छकी—मद्य के नशे में चूर ।

३८८. रनित—बजते हुए । दान—हाथी का मद ।

३८३. सूरन—एक प्रकार का कंद होता है जिसकी तरकारी बनाई जाती है । यदि यह जरा भी कच्चा रह जाता है तो मुँह में कनकनाहट मालूम होने लगती है ।

३८६. राजसु—राजसिक वृत्तियाँ, क्रोध, गर्व इत्यादि ।

३८८. कालबूत—मिट्टी अथवा लकड़ी का साँचा जिलके सहारे जूते का ऊपर का हिस्सा बनाया जाता है या मकान की छत अथवा द्वार का कड़ा जोड़ा जाता है । लदाइ—छत अथवा द्वार के कड़े की जुड़ाई, लदाव ।

४०४. बूढ़नु—( १ ) वृद्धों को । ( २ ) बीरबहूदी ।

४०५. जक—असंतोष । भजत—भागते हैं ।

४०६. ति—वे । कँटीली—कंटकित हुई, नायिका की ।

४१०. उयै—उदय ( सूर्य के ) के समय । साँझ—रात भर रति में जागते रहने के कारण आँखों की लालिमा । लालिमा संध्या की विशेषता है ।

४११. औथरौ—उथला, छिछला ।

४१४. जलधंभ विधि—वह क्रिया जिसको द्वारा जल में बैठा हुआ होने पर भी जल में बैठे हुए मनुष्य पर किसी प्रकार का प्रभाव न पड़े। दुर्योधन को यह क्रिया मालूम थी।

४१५. पति के अवगुण और ऋतु के गुण क्रमशः मान (रोष) और माघ महीने की ठंडक बढ़ती है और उनसे भी क्रमशः खो का मन और मन्त्रन अत्यंत कठोर हो जाता है।

४१८. सुरंगु रंगु—लाल रंग। कवियों ने प्रेम का रंग लाल माना है। इसी से वह सुरंग भी माना गया है।

४१९. ससिसेखर—शशिशेखर, महादेव। अक्स—(अरबी) अक्स, स्पर्धा, किसी से बढ़ जाने की आकांक्षा।

४२४. उभरत—ऊपर सरकने पर। गुभरौट—घाँचल का सिमटन पड़ा हुआ वह भाग जो हाथ को ढके रहता है। लौट—लौट जाना। शरीर के अंगों के खुल जाने की आशंका से वह लौट पड़ती है।

४२५. कुबत—बुरी बात। सरल—(१) सीधा, (२) कपटहीन। त्रिभंगी—तीन जगह से टेढ़े।

४२८. गुन-विस्तारन काल—(१) जब रस्सी बढ़ाई जाती है। (२) त्रिगुणात्मक माया का प्रसार होने पर। निर्गुन—(१) बिना रस्सी का, जिसकी रस्सी समेट ली गई है। (२) भगवान् का निर्गुण रूप। चंग-रंग—पतंग की तरह।

४३३. छाया-ग्राहिनी—लिहिका नाम की एक राक्षसी जो राहु की माता मानी जाती है। यह समुद्र में रहती थी। इसे यह शक्ति प्राप्त थी कि आकाश में उड़ते हुए जिस किसी की छाया जल में पड़ जाती उसको उसी छाया के द्वारा खींच ले आकर खा डालती। हनुमान् को भी उसने इसी प्रकार पकड़ना चाहा था, परंतु उन्होंने उसे मार डाला।



४३४. सराध पखु—श्राद्धपक्ष या पितृपक्ष । पितृपक्ष में जब पितरों का श्राद्ध किया जाता है तब कौवों को भी अन्न खिलाया जाता है ।

४३६. ब्यौरनि—बाल सँवारने का ढंग विशेष । ब्यौरौ—भेद ।

४३८. जिन—जिनके । आव—पानी, यहाँ पर काँति । गँवई गाँव—गँवारों की बस्ती ।

४४१. भासिहै—चमकेगी, सुंदर लगेगी । भोडर—अभ्रक ।

४४२. बकारी—रुपया सूचित करने के लिये जो एक टेढ़ो-लकीर खोंची जाती है उसको बकारी कहते हैं ।

४४३. कसु करि—कैसे ही करके, या बलपूर्वक । दुसार—आरपार छिदा हुआ । भेदै—पीड़ा देता है । सार—साल, शल्य ।

४४५. अछेह—अक्षेप, निरंतर । बरत—बलते ।

४४६. निर्गुन—डोरी रहित; प्रिय के आलिंगन से उरस्थल में उपटो हुई माला का चिह्न जिसमें डोरी का चिह्न नहीं आता ।

४४७. काक-गोलकु—यह प्रसिद्ध है कि कौए की दोनो आँखों में एक ही गोला फिरता है । जिस आँख से वह देखना चाहता है, उसी आँख में गोलक चला आता है ।

४४८. नह-दी—नखाँ पर दी हुई या लगाई हुई ( मेंहदी ) ।

४५२. कटनि—काट, ( १ ) प्रेम का घाव, ( २ ) नदी का कूल को काटना । हौंस—हवस, अभिलाषा ।

४५४. कौतुक लग्यो—खेल में लगा हुआ ।

४५७. टाँकु—जरा भी, टंक तैल का एक बहुत छोटा परिमाण माना जाता है ।

४५८. सटपट परी—सिटपिटई हुई, घबड़ाई हुई ।

४६०. घैरु—निंदा । उहीं—उसी निंदा की बात को । उहीं घर—उसी घर को ।

४६१. चहलें पड़ें—कीचड़ में फँस जाते हैं। बै नै—( वय नय ) नई उमर।

४६२. गाढ़ें—कठोर, सघन। ठाढ़ें—ऊँचे उठ आए हुए। उकसाहैं—उभरने पर आए हुए। सबै—सब सौतियाँ। उकसाइ—उखाड़।

४६४. वासु—( १ ) वसन, वस्त्र। ( २ ) वास-स्थान। गुढ़ौ—छिपने का स्थान।

४६७. देह लग्यौ—अत्यंत निकट। गेहपति—गृहपति, घर का स्वामी, अपना पति।

४६८. मनुहार—मन हरने की रीति।

४७१. व्यौसाई—उद्योग करनेवाला।

४७२. बतरस-लालच—बातचीत के आनंद के लालच से।

४७५. बटपरा—डाकू। मत मैं न—चेत में नहीं हैं। कुहौ—( १ ) कोकिल की कूक, ( २ ) मारो मारो।

४७६. सर-पंजर—शर-पिंजर, बाणों का पिंजड़ा।

४७७. टटकी—ताज़ो, अभी की। धोवती—धोती। बगर—घर।

४७८. सारद-बारद—शरद्-ऋतु के बादल, जो सफेद होते हैं। रद—व्यर्थ, बेकाम।

४८०. त्यौनार—ढंग, रीति।

४८१. गलीत है—दुर्दशा में पड़कर।

४८२. निघरघट्यौ—निघरघट होने से भी। जो बिना घूँटे हुए एक बार सब पानी निगल जाय वह निघरघट कहलाता है। यहाँ वह निर्लज्ज होकर खुले आम अपराध करके साफ मुकर जाने-वाले को अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

४८४. घर परसौहै—पृथ्वी को छूनेवाले।

४८५. लखि चकई चक्रवानु—चकई चक्रवा को अलग अलग देखकर रात का अनुमान होता है और एक साथ देखकर दिन का ।

४८६. कहलाने—किस लिये । दाघ—दाह, ताप । निदाघ—ग्रोष्म ऋतु ।

४८७. अगमन—आगे ।

४८८. पोत—प्रकृति, स्वभाव ।

४८९. विभावरो—रात्रि ।

४९०. अगहनु—अगहन का महीना ।

४९१. जुराफा—जिराफ । अफरीका का एक जंतु जिसके जोड़े के विषय में प्रसिद्ध है कि वे एक दूसरे से बिछुड़ने पर मर जाते हैं ।

४९२. सौहैं—सम्मुख, सामने ।

४९३. ही—थी । गुलाला-रंग—गुलाब के रंग के ।

५०२. हई—विस्मय । जोइ—देखकर ।

५०३. भुक्तकावत—डर जाता है ।

५०४. महुख—महौच, मधु ।

५०५. उलमि—भुक्तकर । अंगरुनि उचि—पाँव की उँगलियों पर ऊँचे उठकर ।

५०६. हठ्यौ दै—देखो दीपिका, दोहा ८३ ।

५०७. बिथुग्यौ—फैला हुआ, किसी अनजान का सा लगाया हुआ । गौंस—गुप्त भावना ।

५०८. भानति भेउ—भेद भंग नहीं करती, प्रकट नहीं करती ।

५०९. गवैठी—टेढ़ी ।

५१०. ही—हृदय ।

५११. रति जगै—रति के कारण जागरण, या रात का जागरण ।

५१५. कै वा—कै बार । थरथरी—कँपकँपी, कंप (सात्त्विक) ।

५१६. मीढ़े—मसके हुए ।

५२२. ठोरी—धुन, आदत ।

५२३. ठिक ठैन—ठाट बाट । चुगल—छिपे भेद को खेल देनेवाले ।

५२५. डाढ़ी सी—जली हुई सी ।

५२६. अरें—अड़ में, हठ में । मलै—मलय, चंदन । घन-सार—कपूर ।

५३०. चोर-मिहीचनी—आँखमिचौनी का खेल ।

५३२. लोइन भरी—(१) लावण्य भरी, (२) लालसायुक्त । लोइन—(१) नेत्र, (२) लवा पत्थो । लाँक—कमर ।

५३४. जकि—स्तंभित । रितयौ—खाली किया ।

५३६. लोच—लचीलापन, नमी, सौंदर्य ।

५४०. सद—बुरी आदत । बिहरत—घूमते । बिदरत—विदीर्ण करते ।

५४२. चुटकि कै—चावुक से बिना प्रहार किए डराने भर के लिये केवल आवाज करना जिससे डरकर घोड़ा उड़ान लेने लगता है । खूँद—चलने का प्रयत्न करने पर भी लगामे के खिंची रहने से एक ही स्थान पर घोड़े के पाँव पड़ने को खूँद कहते हैं ।

५४३. उताल—उतावली । रहचटें—रस की चाह अथवा लालच में ।

५४६. कननु—दानों से । दारयौ—दाढ़िम । कपट-कुचाल—(१) छिपाने की बुरी आदत, (२) अच्छी तरह पकने के लिये कपड़े से दाढ़िम का छिपाया जाना ।

५४६. धुरवा—बादल । चहुँ कोद—चारों तरफ से ।

५८

५५०. नख-रुचि-चूरनु—नखों की शोभा रूप चूर्ण । चूर्ण से ठगों की एक तांत्रिक क्रिया का तात्पर्य है जिसमें अभिमंत्रित राख जिसके ऊपर डाल दी जाती है वह उनके वश में हो जाता है, जिससे वे लोग आसानी से उसके पास का द्रव्य हरण कर सकते हैं । रुचि का अन्वय नख और चूरन दोनों के साथ लागेगा । नख के साथ इसका अर्थ शोभा होगा और चूरन के साथ यथेच्छ प्रभा करनेवाला । हथाहथी—हाथों हाथ ।

५५४. चढ़ें हिडौरें सैं हियैं—हिंडोलों पर चढ़े हुए से हृदय से । भोंके खाते हुए विचलित हृदय से ।

५५५. नागवेलि—पान ।

५५७. नारी-ज्ञानु—(१) नाड़ी-ज्ञान, (२) खो-चरित्र का ज्ञान ।

५५८. झुकावति—खिभाती है ।

५५९. अधिकाई—अपने आपको बड़ा समझना, महत्त्व । गौं—अभिप्राय (कि देखना चाहिए कौन अपनी आन पर अड़ा रहता है) ।

५६०. हुलसी—हूल, सूल, भाले की अनी सी ।

५६१. रुचित—अच्छा लगना । सुचितई—चित्त की शुद्धता ।

५६२. आन—सूत, सन इत्यादि पर पड़ी हुई ।

५६५. पाहुने—पहुनाई के बहाने किसी परकीया के पास जाने-वाले । है गुड़हर कौ फूल—गुड़हर का फूल लाल होता है । नायक भी बहानेबाजी की पहुनाई से लाल रंग से रँगकर आए । आँखों में जागरण की लाली, कपोलों पर पीक की लोक और माथे पर मद्धावर क्री रेखा थी । गुड़हर के फूल के विषय में यह भी प्रसिद्ध है कि जिस घर में वह आ जाता है उस घर में कलह ही कलह होती रहती है ।

५६८. निसुके—निःस्व, कंगाल । कोसने के अर्थ में इसका प्रयोग किया गया है ।

५६६. नाइ—नाई, नाम ।

५७०. नावक-सर—वे बाण जो नलो को द्वारा चलाए जाते हैं । लोहे की नलो में छोटे छोटे तीक्ष्ण बाण भर दिए जाते हैं और पोछे से बारूद भी उसमें डाल दिया जाता है । इसी उद्देश्य से छोड़े हुए एक छिद्र से अग्नि लगाकर ये बाण चलाए जाते हैं । छरों की तरह ये बाण चारों ओर फैल जाते हैं और निशाने को चलनी चलनी कर देते हैं ।

५७१. मूका—भीत, पर का वह छेद जो प्रकाश और वायु-संचरण के लिये बनाया जाता है ।

५७५. पितमारक—पितृ-मारक, पिता को मारनेवाले ( नचत्रों का योग ) ।

५७७. हित समुहौ चितु—प्रेम की ओर ढला हुआ चित्त ।

५८२. दिठादिठी की ईठि—जिससे देखने ही से अभी जान-पहचान हुई थी, इससे आगे नहीं बढ़ी थी । नाहों करति—उसका 'नहीं' कहना ।

५८४. निकलंकु मयंकु के—ज्योतिष के अनुसार जब चंद्रमा निष्कलंक दिखाई दे तब अवश्य कोई बड़ा भारी उत्पात होगा, यह समझना चाहिए ।

५८६. भृंगी—एक प्रकार का उड़नेवाला कीड़ा जो और कीड़ों को पकड़कर अपनी बाँबी में रख लेता है और उनके चारों ओर भनभनाकर उनको इतना भयभीत करता है कि उनको हर घड़ी उसी का ध्यान बना रहता है जिससे अंत में तल्लीन होकर वे भृंगी का ही रूप धारण कर लेते हैं ।

५८७. सैन न भजै—( चारपाई पर किसी दूसरी स्त्री की बेगी का दाग देखकर ) विस्तर पर सोने नहीं जाती ।

५८८. जुरि—अँगड़ाई लेकर । बींदि—जानकर ।

५६०. सतर है—खूब तनकर । गैन—गगन, गऊन, गयन, गैन ।

५६१. बसीठी—दृती ।

५६२. दुख-हाइनि—दुःख की मरी, एक प्रकार की गाली ।  
दूका—परखी ।

५६६. डहि—जलकर ।

५६६. चढ़ाएँ—चढ़ाने से ।

६०३. अरगट—अलंग । पानूस—फानूस, काँच का वह घेरा जिसमें मोमबत्ती या दीपक जलाया जाता है । लक्षणा से फानूस के अंदर की दीप-शिखा अर्थ होता है ।

६०७. नटि न—मुकर मत, नाहीं न कर । सीस...मोट—मेरे सुखों की जो गठरी लूटी गई है, वह तेरे सिर पर है (तूने ही लूटी है), यह बात साबित हो चुकी है । चारी—चुगली । सलोट—सलवटें ।

६०६. गाढ़ी गड़नि—गहरा धँसाव ।

६१३. कोन—कोना ।

६१५. इक आँक—एकदम । दगै—दागती हैं, पोड़ा देती हैं ।

६१६. जुदी—अलग । जु दी—जो दी थी । वासु—स्थान ।  
वास—सुगंधि ।

६१६. पडु पाँखै—पंख ही तेरे वख हैं । स पर—पर (पंख) सहित ।

६२०. परेखौ—बीती बात का दुःख । परिपारि—परिपालि, मर्यादा ।

६२६. चीर चिनौटिया—चुन्नट देकर रंगी हुई चूनरी ।

६३६. कहूँ डोठि लागी—किसी से प्रेम हो गया है क्या ?  
लगी...डोठि—या किसी की नज़र लग गई है ।

६३७. भावरि अनुभावरि भरे—पसंद हो चाहे नापसंद हो ।

६३८. बतरसु—वार्तालाप का स्वाद ।  
 ६४२. मिसहा—बहाना करनेवाले को ।  
 ६४४. जाइ—नहीं घटती ।  
 ६४७. चिक्कुटी—चुटकी । नारि—गरदन । गति...चलति—  
 नाचने-गाने में गत भी गाती है ।  
 ६४८. अनुमान—तर्कशास्त्र का एक प्रमाण ।  
 ६४८. चलि गै, एक दूसरे की तरफ ।  
 ६५०. आसव—मदिरा ।  
 ६५१. धरधरा—धड़कन ।  
 ६५३. खलित—अर्थ से स्खलित, निरर्थक ।  
 ६५४. सबील—तरीका, उपाय ।  
 ६६०. नई-नमित—नई हुई । नई—नवीन । दइ—देव, दर्ई,  
 दी । उसासि—उभार । उसास—उच्छ्वास ।  
 ६६२. उनदौहों—उनींदी ।  
 ६६४. लगी अनलगी—है या नहीं ।  
 ६६६. मुड़हर—साड़ी का वह भाग जो सिर पर रहता है ।  
 मौरु—मौलि, सिर । घूटेनुतें—घुटनों के बल ।  
 ६७०. निचले—निश्चल । कजाकी—तुर्की कज्जाक से, डाकेजनी ।  
 ६७२. केम—कदंब ।  
 ६७३. मुरासा—कान का एक जड़ाऊ गहना ।  
 ६७७. वृषभानु—(१) वृषभानु की लड़की, (२) वृषभ ( बैल )  
 की अनुजा ( बहिन ), (३) वृषराशि के सूर्य की पुत्री । हलधर  
 के बीर—(१) बलदेव के भाई, (२) बैल के भाई, (३) शेषनाग  
 के अवतार के भाई ।  
 ६७८. सिलसिले—भींगे ।  
 ६८३. त्रासति—डराती है । ऐंचि—खेंचकर । ईंची—खिंचो हुई ।



६८४. करत भाँझि—अड़ता हुआ । भकुरातु—भकौरे लेता हुआ । खँदतु—देखो दीपिका दोहा ५४२ ।

६८५. साँक—शंका ।

६८६. दुमची-मचक—भूला भूलते हुए पैंग लंने में जो वदन दुहरा सा तोड़ देना पड़ता है ।

६८७. खएँ—भुज-मूलों पर ।

६८८. सगिबगि—सराबोर । कँठ्यानी—कंटकित, पुलकित ।

६८९. आतपु—घाम ।

६९०. आखत—अक्षत के चावल । कुज—मंगल जो पृथ्वी ( कु ) का पुत्र माना जाता है । ज्योतिष के अनुसार मंगल पर राहु की छाया नहीं पड़ सकती ।

६९६. गोधन—गोवर्धन । अनगवति—विलंब करती है ।

६९८. कुच-कोर-रुचि—स्तनों के किनारों की शोभा । लोटनु—त्रिवलियों पर । चौटत—नोचते हुए ।

७०२. पाटल—गुलाबी ।

७०३. बामा—कुटिला । भामा—क्रोध करनेवाली । कामिनी—कामयुक्त ।

७०४. ठकु ठकु—बखेड़ा ।

७०७. बुधु...गोद—पौराणिक आख्यान के अनुसार बुध तारा से चंद्रमा का पुत्र है । इससे ज्योतिष के अनुसार सुख-वर्धक सुयोग भी गृहीत होता है ।

७०८. गदकारी—गुदगुदी, मोटे या दोहरे शरीरवाली ।

### ( ३ ) सतिराम सतसई

३. मन-कुमार—मन का पुत्र, कामदेव ।

७. मुसिक्यानी—इसलिये कि तुम्हारी कथा सुनने से लड़का होता तो यह उपाय पहले तुम पर ही क्यों न सफल होता ।

८. सीमंत—गर्भस्थिति के तीसरे मास में एक संस्कार होता है ।  
मुसिक्याइ—इसलिये कि गर्भ उस पड़ोसी से है ।

६. पति—स्वामी । पति—प्रतिष्ठा ।

११. पानिप—पानी, आब, चमक ।

२६. किंसुक—पलास ।

३०. बिसारे—विषवाले ।

३३. नैन मृगनि सेां—मृग के से नयनों से । नैन-मृगनि—  
नयन रूप मृगों को ।

३४. मृगपति—सिंह जिसकी कमर पतली होती है । लंक—  
कमर । मृग-लच्छन—मृग-लांछन—चंद्रमा । मृग-मद—मृगों का  
गर्व । मृगमद—कातूरी ।

४२. लाल—माणिक्य । लाल—लाल रंग की ।

४३. हर...कपार—इसी लिये शिव को कपर्दी कहते हैं ।

४४. लोनी—लावण्यमयी ।

४५. सुबरन—सोने ऐसे । रूपौ—रूपा, चाँदी । सुबरन—  
सुंदर वर्ण का ।

५३. डाढ़े ठाढ़े ढूँठ—पेड़ों के ( विरह ज्वाला से ) जले  
ढूँठ खड़े हैं ।

६५. जो—पाठांतर-त्रज ।

६६. नीप-माल—कदंब की माला, सात्त्विक भाव के कारण  
रोमांचों के हो उठने से ।

६७. पटेल—गाँव का प्रधान । ऊख और अरहर के खेत  
गुप्त मिलन के लिये अच्छे स्थान माने गए हैं ।

६८. चंचल चित्त को बेव देनेवाले नेत्र-बाणों के डर से लज्जा  
लुकी फिरती है ।

६६. घायल करनेवाले नेत्रों से प्रेम करना, यही मन की सज्जनता है ।

७०. नेह—(१) स्नेह । (२) चिकनाई (घो) ।

७१. गिलि—निगल ।

७४. भौरा चंपे की कली पर नहीं बैठता ।

८०. नेह-रहचटौ—प्रेम का लालच ।

८४. अगमन—आगे या पहले ही ।

८५. अनमिख—अनिमेष, एकटक । गई—भाग गई । मीच—मृत्यु । पजरि—प्रजरि, जलकर ।

८७. मौर—मुकुट । तुनीर—तूणोर, तरकस ।

८८. अंचल...तऊ—अपने शरीर की कांति के कारण प्रकाश हो रहा है, जिससे नायिका को दीपक का बुझना मालूम नहीं होता ।

९०. पाट—रेशम ।

९२. छट्क—छः टुकड़े ।

९७. बंदनि—भाटनी ।

९९. और—अधिक ।

१०६. जैतवार—जीतनेवाली । अकस—स्पर्धा । गोसा—किनारा ।

१११. जँबीर—जँभीरी नीबू । चूक—बहुत खट्टा पदार्थ ।

११३. कंद खाकर अरुसे के फूल को चूसने से कोई स्वाद नहीं मिलता ।

११९. बरुनी—पलकों के बाल । जलचादर—देखो दीपिका बिहारी दो० ३४० ।

१२०. मेरु—पर्वत का नाम (कुच) । सित—गंगा (पसीना) । असित—काले रंग की यमुना (रोमावली) ।

१३३. अच्छिनि—अचत, आँखों । अच्छ—अच्छी । स-पच्छ—पंख सहित ।

१३७. मखतूल—काला रेशम ।

१३८. हिलकी—सिसकना ।

१४४. गाज—वज्र ।

१४७. इंदु-उपल—चंद्रकांत मणि जिसके विषय में प्रसिद्ध है कि चंद्रमा की किरणों के पड़ने से वह पसीजने लगती है ।

१५५. दीप सिखा लौं—डरते डरते कि अब बुझी और तब बुझी ।

१६६. रेह—रेखा ।

१६७. कोकनद—कमल ।

१७४. ऊख-पियूष-रसाल—गन्ने और अमृत की भाँति मीठे ।

१८४. तन को बंधु—शरीर को विरादरी अथवा बराबरी का ।

१८७. घट—स्तन । गरुए—भारी । हरऐं—धीरे धीरे ।

१८५. गूंदी गूंदति—गुथी माला को फिर गूथती हुई ।

२०१. चाहि—देखकर ।

२०३. इक बारि—एकबारगी, सहसा । मूँदी—गुप्त ।

२१२. तीछन—तीक्ष्ण, तेज़ । ईछन—ईक्ष्ण, आँख ।

२१४. सौन—श्रवण, कान ।

२१८. सौरियत—स्मरण करती हूँ ।

२२२. बिभूति—राख । अवदात—सुंदर । रवेत वस्त्र पहने हुए स्त्री की तुलना राख से ढके जलते अंगारे से दी गई है ।

२३४. छला—अँगूठी । छजाइ—छल करके ।

२३५. कुआर के वादलों में पानी कम रहता है ।

२३८. दग-साँवत-सर—आँख रूपी अधीन राजाओं के बाण ।

कुवलय—( १ ) कमल, ( २ ) एक हाथी का नाम था ।

२४०. कौल—कमल, कैवल, कौल ।

२५४. पैँडे कौ खेद—मार्ग की थकावट ( रति के कारण ) ।

२६३. तेह—क्रोध ।

२६४. सहेट—संकेत-स्थान ।

२७३. द्रौपदी कौ बसन—जिसका कभी अंत न हो, बढ़ता ही जाय ।

२७६. अँड़दार—अड़नेवाले । गँड़दार—महावत जिसके हाथ में अंकुश रहता है ।

२७७. आँदू—डोरी ।

२८५. मित्र—( १ ) प्रिय, ( २ ) सूर्य ।

२८६. बौंडर—बवंडर ।

२८६. सौतुक—सम्मुख, प्रत्यक्ष बात ।

३०१. आपुनयौ—अपनी ही ।

३०२. माह—माघ । करि...कीच—जिससे विरह की तपन न लगे ।

३०३. सौहैं—सामने । सौह—सौगंध ।

३०५. सियराई—ठंडक ।

३०८. दंपति चौसर खेल रहे हैं ।

३१०. रँग पीत—पीतावर का रंग जिसे कृष्ण पहने रहते हैं ।

३१३. प्रसेद—प्रस्वेद, पसीना । मनोभव चाप—कामदेव का बाण ।

३१५. उलट्यौ...पर—छाती उभर आने के कारण ।

३२४. साहसुत—शाहजी भोंसला का पुत्र, शिवाजी (सिवा) ।

३४२. करार—कूल । करार—इकरार, प्रतिज्ञा ।

३४७. कुंद न—चमेली नहीं । कुंदन—सोना ।

३५६. नेह—( श्लेष से ) प्रेम रूप चिकनाई ( घी तेल आदि ) ।

३६४. नव-द्वै—अठारह ।

३७०. इंदीबर—कमल ।

३७१. पियूष-मरीच—अमृत है किरणों में जिसके, चंद्रमा । मरिच—मिर्चा । मरीचि—किरण ।

३७८. विष-तीर—विष में बुझे हुए बाण ।

३८१. गणेश की वंदना ।

३८३. हंसवाहिनी—हंस जिसका वाहन है, सरस्वती । हंस—  
आत्मा, प्राण ।

३८४. राजाओं की आँखें मत ताका करो, लक्ष्मी की आराधना  
करो, धन मिलेगा ।

३८६. मारु—मार, थप्पड़ । मिरचि-किरच—मिर्ची की  
चरपराहट ।

३८७. मारु—आघात । मारु—कामदेव ।

४००. विकच—खिले हुए ।

४०८. त्रिभंगी—कृष्ण, तीन जगह टेढ़े होकर जो खड़े होते हैं ।

४१३. प्रवाल—मूँगा ।

४२६. अँगरानी—अँगड़ाई ।

४२७. मुख की छवि से चंद्रमा तो हारकर कलंकी हो गया  
और कमलों को दुःख हो गया, दोनों में से कोई भी बराबरी  
न कर सका ।

४२८. स्यामनि—काले लोग, जो शरीर और दिल के भी काले  
हैं । जाति—कृष्ण भी काले थे और भौरा भी काला होता है, इस-  
लिये दोनों एक ही जाति के हुए ।

४४६. कमल के बहुत से दल होते हैं, इसलिये कभी उसे शत-पत्र  
( सौ दलवाला ) और कभी सहस्रपत्र ( हजार दलवाला ) कहते हैं ।

४४७. कोकनद—कमल ( नायक के हाथ ) । रजनिकर—पराग  
का समूह । रजनिकर—चंद्रमा ( नायिका का मुख ) ।

४४८. सरस्वती का रंग लाल माना जाता है ।

४५६. साँकरें—गाढ़े समय में, विपत्ति काल में ।

४६०. मदरसे—पाठशाला में । मदरि से—मदारी के समान ।

४८१. कान्ह करज छत—कृष्ण का हाथों से मर्दन करना ।

४८४. इंदिरा-रूप—लक्ष्मी-स्वरूपा, नायिका ।

४८७. इंद्र...लाल—नीलम के रंगवाला कृष्ण ।

४८९. द्विजराजनि—( १ ) ब्राह्मणों, ( २ ) दाँतों की पंक्ति ।

दुजराज—चंद्रमा ।

५००. पुत्राग—सफेद कमल । मुकुलनि—अधखिले फूल ।

५०१. खात कुंभ—आनंद राशि ।

५०७. पीठ में कड़े का चिह्न, भुजाओं पर तराईना के और छाती पर स्तनों पर के कुसुंभी रंग के छाप अन्य स्त्री के साथ रति के चिह्न हैं ।

५०८. अधर-अंजन-प्रभा—किसी दूसरी स्त्री की आँखों को चूमने से नायक के ओठों पर काजल का रंग लग गया है ।

५१२. निसेनी—पताका ।

५१६. अतनु-सुतनु—शरीर रहित कामदेव की प्रखरता से वह सुंदर शरीरवाली तड़प रही है ।

५२२. पुरैनि—पुरइनि, कमल । चंदन पंकिल—चंदन के गाढ़े लेप से युक्त ।

५२४. गुरज—गुंबज ।

५२६. भक्तिया कौ सो घट—फूटी कौड़ियों से भरा हुआ घड़ा ।

५३०. कृष्ण नंगी नहाती हुई गोपिकाओं के वस्त्र हरण करके ले गए थे ।

५३५. मया—माया, दया । दया-दरिद्राड—दया के सागर ।

५३६. किंजल्क—पराग ।

५३८. मोर-पखानि—मोरपंखों । पखान-समान—जड़ीभूत हो गई ।

५४०. कुंभ निकुंभ और शुंभ निशुंभ का, जो बड़े बली राक्षस थे, चंडिका दुर्गा ने संहार किया था ।

५४६. नायक ने नायिका के कपोलों को चूमा है जिससे उन पर पीक की रेखा लग गई है ।

५४८. अनिल—हवा । अनल—अग्नि ।

५५०. तरुणी की आँड़ियाँ इतनी लाल हैं कि उनकी भलक से बेणी पर के मणि भी लाल हो रहे हैं ।

५५२. भावति—मलती है ।

५५५. राग—( १ ) अंगराग, ( २ ) अ राग, प्रेम ।

५५८. तारेस—तारेश, चंद्रमा ।

५७१. सुमना—मालती ।

५७३. प्रभात होने पर जब मुर्गा बोला तो नायिका ने समझा कि सिंह गरज रहा है । चरनायुध—मुर्गा । नखायुध—सिंह ।

५७४. मधूक—महुआ ।

५७६. आलोकनि—आँखों में ।

५७८. चपला—विजली ( की रेखा के समान नायिका ) । चंद—चंद्रमा ( के समान मुख ) । नायिका एकटक निश्चेष्ट होकर नायक को देख रही है ।

५८३. सुकृत-हेतु—प्रेम-रूप पुण्य ।

५८६. ओज-अनल—तेज-रूप अग्नि ।

५८७. कालकूट-जुत बान—विष में बुझे हुए बाण ।

५८९. मुकुर—दर्पण । नरलोक—मर्त्यलोक ।

५८३. गुन-गौरि—उज्ज्वल गुणोंवाली । गुन गौरि हैं अनूप—पार्वती से भी बढ़कर गुणोंवाली ।

५८५. डाम—दर्भ, कुश के काँटे ।

६०३. चंचरीक—भैरि ।

६०४. प्रात-रवि-राग—प्रभातकालीन सूर्य की लालिमा ।

६०६. कंकलि—अशोक का वृक्ष ।



६०७. जल...आइ—आँखें जल-भरे बादलों की तरह बरसने लगीं। रही...छाड़—अंग कदंब की तरह कंटकित (रोमांच से) हो गए।

६०८. तोट—तोड़ा।

६१६. गंधरब गाम—रात में पथिक चलते चलते कहीं प्रकाश देखकर समझता है कि पास ही गाँव है, वहाँ जाकर विश्राम करें, किंतु ज्यों ज्यों आगे बढ़ते जाता है त्यों त्यों वह प्रकाश भी आगे बढ़ता दीखता है और फिर अंतर्धान हो जाता है। इसी को गंधर्वों का गाँव कहते हैं। अँगरेजी में इसे विलो-द-विस्प कहते हैं।

६२२. रंग-बाति—पं० कृष्णविहारी मिश्र ने इसका अर्थ 'सुगंधित द्रव्य की बनी बत्ती जिससे गात्रानुलोपन किया जाता है' किया है। परंतु इससे अर्थ ठीक नहीं बैठता। अर्थ की संगति तब बैठेगी जब इसका अर्थ नकली रत्न किया जा सके।

६४५. संधि—वयःसंधि, जब कि बाल्यावस्था से युवावस्था में प्रवेश होता है। उदै शैल—मेरु पर्वत जहाँ से सूर्योदय का होना पाया जाता है। उदय-शैल पर दिन और रात्रि दोनों की संधि होती है।

६५३. कुरबक तरु—कटसरैया का पेड़।

६५६. परिहार—रोकनेवाले।

६५८. चुटकी की सैन—गुलाब की कली का चटकना मानों भौरो को इशारे से बुलाने के लिये चुटकी बजाना है।

६५९. बकिनव—वृत्त विशेष।

६६४. अरध छोटी—आधी से भी छोटी (संयोगावस्था में)।  
बिसाल—वियोगावस्था में रात बहुत लंबी मालूम पड़ती है।

६६६. तारे दूटते से तो दिखाई देते हैं, पर पृथ्वी पर पड़े हुए नहीं दिखाई देते।

६७५. संकु—बछी ।

६७६. सायुज्य—समीपता, समता ।

६७७. जीवन—पानी, ओप ।

६७८. पून्यौ—प्रभात में नायक पास था इससे उसका मुख पूर्णिमा के समान खिल रहा था । संध्या के समय वह दूसरी नायिका के यहाँ चला गया है, इसलिये उसका मुख अमावास्या के चंद्रमा की तरह पूर्णतया निस्तेज है ।

७००. बकी—बकासुर की बहन पूतना का एक नाम, जिसे कृष्ण ने स्तन-पान करके मार डाला ।

७०३. आराम—उद्यान । आ राम—हे राम, आओ ।

### ( ४ ) रसनिधि-सतसई

१. लसत—शोभा देता है । सिंधुरबदन—हाथी के मुँहवाले गणेश । नखतेस—चंद्रमा । गणेशजी के सिर पर भी चंद्रमा का वास माना जाता है ।

८. साँवरो—श्याम, कृष्ण ।

९. विवर्द्धि गयौ—उलभ गया ।

११. भागवत—भगवान् के भक्त, भक्तों का एक संप्रदाय । साखि—साची ।

१२. दरद कौ—दर्द को लिये, यातना को नाश करने के लिये ।

१४. जिनके...परमानंद—कृष्ण-प्रेम के कारण ।

१५. स्वयं प्रकास—जिसको प्रत्यक्ष दिखाने के लिये और प्रकाशों की आवश्यकता नहीं पड़ती ।

१६. काल पक्षी से शरीर-खेत की रक्षा के लिये हरि का भजन कर । हरिया—(१) खेत की रखवाली करते समय किसान 'हरिया हरिया' करके पक्षियों को बड़ाते हैं, (२) 'हरि' 'हरि' ।

२० लै—लय, लीन । लै लै—लेकर । लैलै—लैला के ।

२२, करनी—कर्म । कर नीके कर—हार्यो को अच्छी तरह ( पकड़ो ) ।

२३, करतार—कर्ता, परमात्मा । कर तार—जैसे पुतलियों का तार सूत्रधार के हाथ में रहता है, उसी प्रकार ।

३३, वारे—न्योछावर किए । वारे—लाभ ।

३४, जाही—जिसी के । हरवर—जल्दी ।

३७, कपटौ—काटो । बिगुरदाधार—( सत्यरूप ) बिगुरदे ( एक हथियार ) की धार से ।

४६, घटन में—घड़ों में । घट घट में—प्रत्येक हृदय में ।

४७, आसिक—प्रेमी । महवृब—प्रेमिका । अलगरजी—बे परवाह ।

४८, बसाइ—सुगंधित किया ।

५०, फटिक—श्वेत मणि । स्फटिक पर जिस रंग की भाँई पड़ती है, वह उसी रंग की झलकने लगती है ।

५१, बास्यौ—सुगंधित किया । फुल्लेल—इत्र ।

५२, आद—आदि, आरंभ ।

५४, अनल—अग्नि । अनिल—वायु, बिना वायु के अग्नि जल नहीं सकती ।

५५, मोहनवारौ—गूँथनेवाला । जोहनिहारौ—देखनेवाला, द्रष्टा ।

५६, सप्त सुर—गाने के सात स्वर, सा रे ग म प ध नी ।

५७, जर—जड़ ।

५८, पंचन—पाँचों इंद्रियों को । पंच में—पाँचों तत्त्वों में ।

६०, जाग—जगह, स्थान ।

६२, बासनवारौ—सुगंधित करनेवाला । पेरनेवारौ—पेरकर खेल निकालनेवाला ।

६५. थावर—स्थावर, अचर सृष्टि । जंगम—चर सृष्टि ।

६६. अंगेजत—सहता है, स्वीकार करता है ।

८३. चिल्ला—प्रत्यंचा ।

८७. वेदाना—जो दाना ( समझदार ) नहीं है । दाना—समझदार । वेदाना...अनार—समझदार आदमी वेदाना के नाम केवल अनार ( वेदाना ) का ओदर करता है ।

८०. सिद्धाई—प्रसन्न होता है ।

८४. मौन—मक्खन, घी ।

८६. नेहनि—स्नेहियों को ।

१०१. सु—त्रे । मार—कामदेव । सुमार—गिनती । सुमार—खासी मार ।

१०३. विधए—फँसाए ।

१०४. मैन—मक्खन । मैन—कामदेव ।

१०७. तावन—भट्टी चढ़ाना ।

११२. सतन—शरीरधारी । सतन—कामदेव ।

११५. बहल—रथ । चका—चक्र । जुवा—जो घोड़े या बैल के कंधे पर रखा जाता है । बहलवान—गाड़ीवान ।

११७. डरौई जाइ—डरा जाते हैं । डुरौई जाइ—छिप जाते हैं ।

१२१. चिबुके—ठोड़ी में ।

१२५. कजाक—कज्जाक, डाकू ।

१२८. फरास—फराश, भाडू देनेवाले । बहारु—बुहारी, भाडू ।

१३४. निकाइन तै—अच्छाइयों से । निकाइ—समूह ।

१४१. अरगाइ—अलगाइ, चुप ।

१४३. कहर—क्रोध ।

६०

१४७. जामिन—जमानत देनेवाला ।

१४८. और बार—पारावार, समुद्र । अहोर—जिनसे कोई होड़ नहीं बाँध सकता ।

१५२. सबी—चित्र । कैफ—साक्षात्कार । गजकि—वह चीज जो शराब पीने के बाद स्वाद बदलने के लिये खाई जाती है । चटनी, पकौड़ी इत्यादि । वेहैफ—शोक-रहित ।

१५७. खोर—खोल, टोला । खोर—दोप ।

१५८. काँध—कंधा देना ।

१६१. बारि—बाड़, बाड़ा जिससे वृक्षों की पशुओं से रक्षा होती है ।

१६२. रेहाइ—रहता है ।

१७४. दृग तारनि—आँख के तारों में । मुख तारन चंद—चंद्रमा को तारनेवाला मुख ।

१७६. मदन—(१) कामदेव, (२) नहीं है मद जिसमें ।

१८३. बगर-तन—घर की तरफ ।

१८६. बँसुरी—बाँसुरी । बसुरी—पृथ्वी । हे सखि बसुरी—हे सखि बस ( नहीं चलता ) ।

१८७. कानन—कानों में । कानन—वन ।

१८०. सुर-रसरी—स्वर रूपी रस्सी ।

१८१. वंसी—जिससे मछलियाँ पकड़ी जाती हैं ।

१८४. धैर—बदनामी ।

२००. रंग चुचैहैं—जिनसे रंग चूता है, प्रेम चू पड़ता है । सुरंग—सुंदर रंग-युक्त, प्रेम-युक्त ।

२०१. उनवै—भुकती है ।

२०३. ओढ़ना—बचाना ।

२०६. हरबली—हराबल, नासीर फौज, आगे आगे चलनेवाली सेना । मवास—निवास-स्थान ।

२११. मंहुकमं—मजबूत, दृढ़ ।

२१५. नातवान—तैरनेवाले ।

२१६. मैन अमल—कामदेव का अधिकार, यौवन । पयानौ—  
प्रयाण, प्रस्थान ।

२२१. वरत—वह रस्सी जिस पर नट चलता हुआ अपना  
कौशल दिखाता है ।

२२८. तगा—तागा, डोरी ।

२२९. त्रपत न मानत—तृप्ति नहीं मानते । पान—पाणि, हाथ ।

२३०. बील—मंत्र ।

२३४. बटपरा—बटपार, बटोहियों को लूटनेवाले ठग ।

२३६. किलकिला—मछली पकड़नेवाला एक बड़ा पत्थर ।

२४१. बैरा रहीं—बिगड़ रही हैं ।

२४६. भात—भाता है, शोभा देता है ।

२४८. आड़ि छुटावति—अड़कर छुड़ा भागने का प्रयत्न करने-  
वाले ।

२५१. नेह...लगाइ—इसी कारण आँखों में आँसू भर आते हैं ।

२५२. बैकु—बहक ।

२५६. मुहिसल—तहसील वसूल करनेवाला ।

२५८. सतरँज-बाज—शतरंज-बाज, शतरंज खेलनेवाला ।

२६०. आँदू—रस्सी ।

२६३. ईठ—इष्ट ।

२६५. कितेब—छल । मकराज—मिकराज, कैची ।

२६६. नेजा—भाला ।

२६७. लोइ—लावण्य ।

२७७. सुनेह—(१) सुंदर स्नेह, प्रेम (२) अच्छी चिकनाई,  
तेल । मभयावत—माभी का काम करते हैं ।

२८०. गैना—नाटा बैल। नहे—नथे हुए। घुरला—पगडंडी। नाह—नहीं।

२८३. भिलमैं—लोहे का बना हुआ एक प्रकार का भँभरीदार पहनावा जो लड़ाई में पहना जाता है। एक प्रकार का कवच।

२८६. घरिया—वह पात्र जिसमें रखकर सोना आँच में गलाया जाता है।

२८८. हलवी सीसा—हलवी (वेल्लियन) शोशा मोटा होता है और उसमें प्रतिबिंब सुंदर झलकता है।

२८९. अहटाइ—कष्ट देती है।

२९८. वामन अवतार में भगवान् ने बलि से तीन पग भूमि दान में माँगकर दो ही पग में त्रिभुवन नाप लिए और तीसरे पग के लिये स्थान ही न रहा।

३००. पैरे—सीढ़ियाँ।

३०२. सैफी—मंत्र-प्रयोग। कैफी—साक्षात्कार।

३०३. पलवो—अंजलि, चुल्लू।

३०६. वाइ—वहाँ।

३११. सूरती—( १ ) सुरती तमाखू। ( २ ) सुरति, प्रेम।

३३७. अमोर—न मुड़नेवाले।

३३६. मेव—राजपूताने में बसनेवाली एक लुटेरी जाति। इसी से संभवतः राजपूताने के एक खंड का नाम मेवात पड़ा है। छेव—काटकर।

३४०. खुरी—खुदी, एक ही जगह जल्दी जल्दी खुर पटकना।

३४४. छाँखें देत—कह देते हैं।

३४७. बया—तैलनेवाला। मन—( १ ) चित्त, तैल का मन जो चालीस सेर का होता है।

३५५. नाखन बाज—बाज के नाखून।

३५७. श्रवत—बरसाते रहते हैं, देते रहते हैं । श्रवन—कान ।

३६४. हरये—हलका । मन—( १ ) चित्त, ( २ ) चालीस सेर वजन का मन ।

३६८. छबी-दान—छबिवाला ।

३६९. मट की—मिट्टी की । मटकी—छोटा घड़ा ।

३७०. वनवारी—वन में रहनेवाली । वारी—न्योछावर । वनवारी—वनमालो, कृष्ण । मन-वारी—मनवाली स्त्री ।

३७१. घैर मथन—चवाव की बेतरह चर्चा, बदनामी ।

३७३. छबि-चहले—शोभा की भीड़ ।

३७५. तबीब—वैद्य ।

३७६. मरजी—इच्छा । मरजिया—मरने-जीने की परवा न करके डुबकी लगानेवाले ।

३७७. वारन कौ—न्योछावर करने को । परेखौ—पछताव ।

३७८. छिगुरी—छोटी उँगली, कनिष्ठिका । याते...और—प्रेम के कारण अलसाए हुए अधमुँदे नेत्रों से ।

३७९. निरधारी होइ—निर्णय किया हो ।

३८९. पगरै—पगली की सी चेष्टा करती है । रगरै—भगड़ती है ।

३९२. ही—थी ।

४०४. वार कै—कै बार, कितने समय । वारन—दरवाजों तक ।

४११. हरिआए हैं—हरे हो गए हैं ।

४१२. रुजू—उनकी ओर मुँह किए हुए, ढले हुए ।

४१५. नैम—नियम ।

४२७. आँखें जुड़ती हैं, कुटुंब टूटते हैं और दुर्जनों के हृदय में गाँठ पड़ती है ।



४३२. कनकनै—टूटनेवाले ।

४४२. सुमन—( १ ) सुंदर मन । ( २ ) फूल ।

४५०. मक्खियाँ तेल में पड़ते ही मर जाती हैं ।

४७०. असनेही—जिनमें प्रेम का भाव नहीं है । लादे—  
स्नेहहीन लोगों के मन भार-रूप ही हैं, इसलिये 'लादे' कहा ।

४७१. बिछलै जाइ—फिसल जायँ, कुचल जायँ ।

४८४. कलानिधि—कला का खजाना ( खोला ) है । कला-  
निधि—चंद्रमा ।

५०७. बिथर—भगाना, अलग करना ।

५०८. तरवन—कर्ण-भूषण ।

५२१. टिहुनी—कोहनी ।

५२६. तरिन—तरणि, सूर्य ।

५३०. करार—इकरार, प्रतिज्ञा । करार—किनारा, इकरार-  
रूपी किनारा ।

५३८. बिसाहनी—सौदा । जगाती—चुंगी वसूल करनेवाला ।

५४०. मुनि—अगस्त्य मुनि ।

५४२. प्या—पिला ।

५४३. का गद—क्या शक्ति ।

५४६. आरकस—आरा चलानेवाले ।

५५५. बरुनिका—वरुणी, पलकों पर के बाल ।

५५७. मयान—म्यान ।

५६१. लिख जोग—योग्य लिखी (यह पहले पत्र में लिखने  
का महावरा था ), पत्र के द्वारा ।

५६३. सेखला—योगी का वस्त्र जिसमें रंग बिरंगे कपड़ों के  
टुकड़े या रंग बिरंगे तागे लगे रहते हैं ।

५६४. सासन—शासन, आज्ञा ।

५७१. गरुआ—गले तक गहरा । गरुआ—गले ( लग ) ।

५७२. जखोरा—ज़खोरा ( अ० ) संग्रह, ढेर, कोष ।

५८६. घट—घटकर, कम ।

५८२. विहित—जिसके लिये आज्ञा है ।

५८७. गज—कपड़ा नापने का गज ।

६००. अफरत—तृप्त होते हैं । सुरत—स्मृति से, स्मरण करके ।

६०६. इतराजी—विरोध । इत राजी—यहाँ राजी ।

६०८. अरात—बैरिन ।

६१३. इसक—इश्क, प्रेम । मुसक—मुश्क, कस्तूरी । बोइ—सुगंध ।

६१८. गाँठ गठोले—जिनमें गाँठें पड़ी हों ।

६२१. गार—लेप । गार—गाली ।

६२४. मौसर—मयस्सर ।

६२५. व्योरौ—भेद, फर्क ।

६२६. अमर-पख—पितृ-पक्ष (श्राद्ध), दुज—ब्राह्मण । काग—श्राद्ध में कौश्यों को बुलाकर ग्रास खिलाया जाता है ।

६३४. करबो—एक घास, तुच्छ वस्तु ।

६४३. कूबरो—टेढ़ा, वक्र ।

६५२. हैफ—शोक ।

६६१. विजयादशमी को नीलकंठ का दर्शन शुभ माना जाता है, इसलिये लोग ढूँढ़ ढूँढ़कर उसका दर्शन करते हैं ।

६६२. चंदहि—चंद्रमा ही ।

६६६. लगर सतूना—कोयल का बच्चा जिसे कौवा अपना बच्चा समझकर पालता है किंतु जो अंत में उलटे कौवे से वैर करता है ।

६७२. मीत—(१) मित्र, (२) सूर्य ।

६७३. अमृत सराबी—अमृतसावी, अमृत का खवण करनेवाला;  
चंद्रमा ।

६७४. आम का बौर और फल अंबिया कहलाता है ।

६७६. बेकसक कसाब—बेदर्द ( निठुर ) कसाई ।

६७७. जबड़—जिबड़, हत्या । कसकाई—दुखी होता है ।

६८०. आजजि—आजिजी, गरीबी, दीनता, विनय ।

६८५. मधुसूदन—मधु नामक राक्षस को मारनेवाले । बिरह—  
यश ।

६८०. गीधौ—गर्वित हुआ । गीध गति—जटायु की गति  
जिसे रामचंद्र ने मुक्ति दी थी । गीधे पतित—गर्वित पापी, हठ-  
पूर्वक पाप करनेवाला ।

### ( ५ ) राम-सतसई

१. अहिपतिधर—शेषनाग को धारण करनेवाला, चौरसागर ।

२. नगधर—गिरिधारी, कृष्ण । विपुंगवासन—गरुड़ है वाहन  
जिनका, विष्णु, कृष्ण । आसु—शीघ्र ।

६. खेहै कै मोल—मिटो के मोल ।

१०. महताबी—आतिशबाजी ।

१२. पटीर—चंदन ।

१४. दगे—जलाते हैं । धन-गात—स्त्री के शरीर को ।

१५. विसूलै—शूल की तरह धाव करते हैं । रंध—रंध्र, छेद ।

१६. बिहसिन—हँसनेवाली ।

१७. तरलाई—चंचलता । पारा, बिजली और युवतियों की  
आँखें चंचल होती हैं ।

१८. बकुल—मौलसिरी ।

१८. बे-हुनरी—बिना हुनर की, कला-हीन । सौसन—एक प्रकार का रंग ।

२३. अनारपन—अनाड़ोपन ।

२७. गुनहीं—गुण । गुनहीन—गुनाहियों को (आसक्तों को) ।

३०. चारी—गुप्त बात को प्रकट कर देना । कँटारी—कंट-कित, पुलकित ।

३४. करि थारी—मित्रता करके । करियारी—काली ।

३५. सोख धनी—गर्विष्ठा रमणों । गौनो—गमन । गौनो—द्विरागमन ।

४४. तलवेली—किसी वस्तु की प्राप्ति की घोर उत्कंठा, बेचैनी । नटसाल—बरछी की नोक जो टूटकर घाव में पड़ी रह जाती है ।

४५. उल्लहै—उत्साहित होता है ।

५०. अनी—सेना ।

५१. लाइ—( १ ) लगन, ( २ ) अग्नि ।

५५. लवलासीहु—प्रेम की लगावट ।

५६. कसऽब—किसी प्रकार ।

५७. बंधुर—सुंदर ।

६४. दगादगो—दगाबाजी, धोखा ।

६५. तूस—पशमीना । तुराई—गद्दा ।

६६. ठोढ़ी और आम के निचले भाग का आकार बहुत समान होता है । बौराय—( १ ) बौर लगने पर, ( २ ) बावला होकर ।

७४. निगुनी—गुणहीना । निगुनी—बिना चागे की, अर्थात् छाती पर उपटो हुई ।

७५. निदाघ—ग्रीष्म ।

७७. बिबि ( द्वि द्वि )—दो दो ।

८१. लोटन—त्रिबली । चोट न—चोटों को ।

८३. लहरि—नशा । दसी—डसी हुई ।

८८. करहाट—कमल । हाटक—सेना ।

८३. अँगिराय—अँगड़ाती है । सतराय कै—क्रोध प्रकट करके ।

१०६. माधव—कृष्ण ।

१०८. कलाधर की कला—चंद्रमा की कला, यहाँ पर नाखून का घाव । नाथ-नाथ—शिव ।

११२. भौम बालहि—मंगल नक्षत्र जो पृथ्वी का पुत्र माना जाता है, यहाँ पर लाल बेंदी से अभिप्राय है । मंगल का भी रंग लाल होता है ।

११५. निहारु—देख । निहारु—नीहार, ओस, पाला ।

१२६. सुकवाय—सुकवाना, अचंभे में आना ।

१३३. थरहरे—काँपते हुए ।

१३४. सौँहैं—सम्मुख, सामने । सौँहैं—सौगंध ।

१३८. परिरंभन—आलिंगन ।

१४०. सनखौहैं—नख-चत-युक्त । अनखौहैं—रुष्ट ।

१४२. सब बिधि...नाइ—काम शास्त्र के सिद्धांत और प्रयोग दोनों में प्रवीण ।

१४८. पनस-फल—कटहल का फल जिस पर काँटे काँटे से छठे रहते हैं ।

१५८. कजाकी ( कड़जाकी )—डाकेजनी ।

१६८. कोति—दिशा, तरफ । सूरदास ने इसे 'कोद' लिखा है ।

१७८. कन—जरा, तनिक ।

१८०. निचोल—कपड़ा । चोल रँग—लाल रंग ।

१८२. कुसुम—यहाँ पर जंगली कुसुम जिसकी पत्तियाँ काँटे-दार होती हैं । केदार—खेत । केदार—शिव अर्थात् कुच ।

१८६. लांक—कमर । भरी आंकरी—अँकवार भरी, आलि-  
गन किया ।

१८६. हिम-भानु—चंद्रमा । नलिन—कमल ।

१८६. भीखन—भीषण । तैख—तेज ।

२००. वितान—चंदोवा । बितान—तना हुआ ।

२०५. सिरी—श्री, शोभा ।

२०८. सवीहि—सबी को, चित्र को ।

२१०. बनक—बनाव, शृंगार, सजधज ।

२११. छ मासे—छः मासे । उमंग के कारण उड़ी सी जा  
रही है, इसलिये तराजू पर उसका भार नहीं पड़ता ।

२२०. नीम रजा—आधा राजी ।

२२२. बेरु—( लोगों से ) घिरा हुआ । पाटल—हाथ पर  
का गुलाब चूमकर नायक ने रति की इच्छा प्रकट की । गुलाब  
के दल की उपमा बहुधा अधरों से दी जाती है । नायिका ने हाथ  
बंद करके यह सूचित किया कि जब कमल बंद होने लगेंगे तब  
( संध्या समय ) मिलूंगी । हाथों की उपमा कमल से दी जाती  
है । द्वैमिथ—दोनों, नायक और नायिका ।

२३४. नार—गर्दन ।

२३५. लोयननि—लोचनों, आँखों ।

२३६. पसोपेस—आगा पीछा सोचना । कुन ससपंज—किं-  
कर्तव्य-विमूढ़ता । मुकुताइ—छुड़ाकर । मुकुता—मुक्ता, मोती  
( आँसू ) । कंज—कमल ( नेत्र ) ।

२४३. सकारे—प्रातःकाल । बफारे—दवाओं की गरम भाप ।

२५०. खुभी—बुभी हुई । खूठी—कान में पहनने का एक  
गहना । खुभी—लौंग के आकार का कान में पहनने का एक गहना ।  
निसराए...न—निकाले नहीं निकलती ।

२५३. सुबसीठि—चतुर दूती ।

२५८. घरियारी—घड़ियाल, जो गजर बजाता है । गजर—  
समय की सूचना देने के लिये घंटे बजाना ।

२६२. सौध—सौध, महल ।

२७४. प्रभंजन—आँधी । यहाँ पर वायु से तात्पर्य है । करत  
प्रभंजन—तौड़ते हैं । प्रभृत—फोयल । यदि प्रभृति का विगड़ा  
रूप मानें तो 'इत्यादि' ।

२७८. सतरौंहीं—रुष्ट ।

२८२. मलयज—चंदन । घनसार—कपूर । गजगैनि—गज-  
गामिनी ।

२८२. एनी—मृग ।

२८५. कड़े भमकड़े—कड़ों की भनभनाहट ।

२८८. जालिमा—जुलम करनेवाली ।

२८६. गुर—बड़े । ससिसेखर—महादेव, यहाँ पर शिवलिंग ।

३००. गुरु—(१) बृहस्पति, (२) बड़ी । सुर—(१) देवता ।  
(२) नासिका-रंध्रों से निकलनेवाली साँस ।

३०६. बनमाली—वन से माली ( आ गए ) । बनमाली—  
कृष्ण ।

३१८. चिलक—चमक ।

३१६. सारसमुखी—चंद्रमुखी । आरस—आलस्य ।

३२५. भेद—रहस्य ।

३२६. निलै—निलय, घर ।

३२७. बन—जल ।

३४४. उबीठि—अधिक व्यवहार के कारण अरुचिकर लग  
जाना ।

३४५. परनाली—प्रणाली, नहर ।

३४८. अर—हठ, आग्रह ।

३५०. गड़ारे—जिसमें गड़हे बहुत हों । निबुक—छुटकारा ।

३५३. चोल—( पीतांबरी ) चोला ।

३५४. सरसिज-निखा—कमल ( नायक के मुख ) के लिये रात्रि ( दुःखद ) है । ससि—नायिका का चंद्रमुख ।

३६४. कंबुक—शंख ।

३८२. सारस—कमल ।

३८४. पिय मम करत बरात—स्वामी का मन बरात को ( जाने को ) करता है अर्थात् बरात में जानेवाले हैं ।

३८६. सर—तालाब ( दर्पण ) । ससि—मुख । कुज—मंगल ( लाल बेंदी ) । सनि—शनैश्चर ( काली बेंदी ) । मंगल का रंग लाल और शनैश्चर का नीला माना जाता है ।

३८८. चौवारे—चतुर्द्वारि, वह छत जिसपर खंभों से चार दरवाजे से बने हों । अरी—अड़ी हुई । अरो—अड़ा हुआ ।

३८४. ईछन—आँखें ।

३८५. सुवरन—सुंदर वर्णवाले । रजत—चाँदी । सुवरन—सेना ।

३८६. उनदोहें—उनींदे ।

४००. तेह—क्रोध ।

४०१. गुनी—छःगुना । छिगुनी—कनिष्ठिका ।

४०३. चरचारीहि—दोष ढूँढ़नेवालों ( चर ) और बदनामी ( चारी ) से ।

४१०. लागे नैन नहिं—नींद न आई । लागे नैन—प्रेम में आँखें जुड़ीं ।

४११. भारद—भार रूप । दारद—दर्द देनेवाला ।



४१४. घरहाइन—बदनामी । चाइन—चुगलखोर स्त्रियों में ।

४१६. बिसिख—बाण । ऋषकेत—कामदेव जिसकी पताका पर मछली का चिह्न है ।

४१७. नवोढ़—नवोढ़ा, नई व्याही हुई ।

४३३. हिय गहन—हृदय को ग्रहण किया है जिस प्रेमी ने ।

४३४. हरितन हरित—हरी हरी वस्तुओं को । हरि-तन हरित—कृष्ण का हरा ( श्याम ) शरीर ।

४३६. सनवा—सन । मनवा—कृपास । परे—गिरे हुए ।

४४८. भा—आभा, शोभा, चमक ।

४५५. छलंक—छलाँग ।

४५८. चरवाही—बेहयाई ।

४६४. दावरी—दौड़ी ।

४६५. सु-गरत—गर्त, गढ़ा ।

४६७. सुकाहि—सूखता है ।

४६८. सरदा—सरधा एक मीठा फल होता है ।

४७०. मै—मय ।

४७५. सद-रद-छद—दाँतों के ताजे धाव ।

४८१. चामीकर—सोना ।

४८२. चुभकी—डुबकी ।

४८४. थारे ( राजस्थानी )—तेरे ।

४८५. गेंद—गेंदे का फूल ।

४८८. विरह-दहन—विरहाम्नि ।

४८६. सुबुक—हलके । चिहुँटन—चुनने का ।

४८३. छरी—छड़ी की तरह पतली ।

४८४. धूमजात—बादल

४८७. सुमनसपति—देवताओं के स्वामी इंद्र ।

५०२. कुंद मघा—बरसाती कुंद । कुंद जुही की तरह एक प्रकार का फूलों का वृक्ष होता है जिसकी कलियों से बहुधा दाँतों की उपमा दी जाती है । सुभा—शोभा । मोगरा—बड़े बेले का फूल ।

५०३. लिंब—नीबू ।

५०४. बारी—बालिका । बारी—बाटिका ।

५१२. चंदचूड़हिं—शिव । नखन छद—नाखून के घाव । न खनहुँ—क्षण भर भी नहीं ।

५२२. बरसाइत—जेठ की अमावस । इस दिन स्त्रियाँ बट-सावित्री की पूजा करती हैं । शुभ मुहूर्त । बरसाना—व्रज के निकट एक गाँव है ।

५२६. हायल—मूर्छित । छरकायल—खुले हुए, बिखरे हुए ।

५२८. पूतरी—आँख की पुतली ।

५३०. भवियनि—चाँदी या सोने की बहुत छोटी-छोटी कटोरियाँ जो बाजूबंद, जोशन, हुमेल आदि गहनों में रेशम या सूत में पिरोकर गँथी जाती हैं । घोरि—गुच्छा ।

५३२. उत रत है—उधर प्रेम-मग्न होकर ।

५४१. हिरकी—पास भेजी ।

५४३. भानै—तोड़े ।

५४४. बंधुजीव—वीरबहूटी ।

५६३. बीती—दूसरी स्त्री की ।

५६७. सकारहिं—प्रातःकाल ही ।

५६८. निचलाई—समाप्त हुई ।

५७१. तोम सर—बाणों का समूह ।

५७२. जहूर—प्रकट । बिलूर फानूस—बिलौरी काँच का भाड़ ।

५७४. गंधबाह—सुगंधि का वहन करनेवाला, पवन ।

५७७. बनी—सजी हुई ।

५७८. नारंगी—कुच का प्रतीक । नायक ने नारंगी दलने से कुचमर्दन की इच्छा जनाई ।

५८४. कुलंग—बाज की जाति का एक छोटा पक्षी ।

५८५. परवाल—अधर का प्रतीक । नायक ने अधर-रस-पान की इच्छा प्रकट की । कच—बाल, संध्या की सूचना । कुच—घट । नायिका ने वालों को छूकर कुचों पर हाथ रखकर उत्तर दिया कि संध्या समय बड़ा लेकर ( पनघट पर ) आऊँगी ।

६०३. गोरस—इंद्रियों का रस । गोरस—गन्ध रस, दुग्ध इत्यादि का स्वाद ।

६०५. बंजुल—अशोक ।

६०६. निचले—निश्चल । पानिप—आभा, आब ।

६१५. परसहु—छूकर भी ।

६१६. असम—कामदेव ।

६१७. रिजु—ऋजु, सरल ।

६१८. लोयन—लोने, लावण्यमय । लोयन—लोचन ।

६२३. बरसाना—व्रज-मंडल का एक गाँव ।

६२४. ईठि—इष्ट, मित्र, सजनी, सखी ।

६२७. छरी—छली हुई ।

६४५. माधव—वसंत । माधव—कृष्ण । माधव-पुंज—

महुए के पेड़ों का समूह ।

६४७. सिलीमुख—भ्रमर, बाण ।

६५१. दौं—धौं, तो ।

६७१. वभाय—फँसाकर ।

६७३. नै—नय, न्याय, नीति ।

६७८. छपे—छिपने पर, अस्त होने पर । छपाकर—चपाकर, चंद्रमा । कुहू—अमावस की रात ।

६७९. बरहि—जलने ही की । अब तो रात-दिन जलने ही की बात रह गई ।

६८४. नभचर लली—देव-कन्या । हरसोग—शोक को हरने-वाली । रली—क्रीड़ा ।

६८६. वनजात—कमल । वन जात—वन जाते हुए । जल-जात—कमल । जल जात—जल ( आँसू ) बहता है ।

६८७. मंद—शनि । शनि का रंग श्याम माना जाता है ।

६८९. निचोही—नीची । राज—शोभा देती है ।

६८९. मनु हारि—मन हारकर । मनुहारि—मनाना ।

७०३. छरी—छली हुई । अपछरी—अपसरा ।

७०४. कूरम केतक पात—कछुआ और केतकी के पत्ते अर्थात् नायिका ने अभिसार-स्थान का संकेत किया कि जहाँ जल के किनारे केतकी के पेड़ हैं ।

७०५. मोरी—मोर है जिसका शिरोभूषण ।

७०६. ईठि आज...ठौर—प्रिय की दृष्टि को यहाँ आज एक और प्रिया ( ईठि ) दिखाई दी ।

७०८. लोचन...कान लों—कान तक पहुँचे हुए विशाल नेत्र । कान—कृष्ण । सहसान—मोर । मोर बादल को देख उतना सुख नहीं पाते जितना कृष्ण को देखकर पाते हैं ।

७०९. नट मरकट—मदारी का वंदर ।

७१०. तम—अंधकार ( कृष्ण ) चाँदनी—( राधा ) ।

७२४. लगी...आगि—अग्नि इसलिये नहीं जलती है कि न जलने से वह नववधू फिर फिर फूँकेगी तो मुझे उसके दर्शनों का लाभ होगा और यदि जल जाऊँगी तो वह अपना मुख हटा लेगी ।

७२५. तरनि—तरणि, सूर्य । जोइ—देख ।

### ( ६ ) वृंद-सतसई

६. रागी—प्रेमी ।

८. निवैरी—नीम का फल ।

११. निपजै—जिसमें खूब फसल उगी हो । सलभ—टिड्डो ।

२०. पिसुन—दुर्जन, चुगलखोर ।

४३. बहेड़ा के पेड़ पर भूत का निवास माना जाता है, उसका एक नाम ही भूतवास है । कर्षफले भूतवासे कलिद्रुमे बहेड़के ।

४८. गुर—गुड़ ।

४६. धात—धातु । शरीर में सात धातुएँ मानी जाती हैं जो दूध पीने से वृद्धि पाती हैं । सेंहुड़ का चोप भी देखने में दूध के समान होता है, किंतु उसको खाने से मनुष्य मर जाता है ।

५३. आरसी—दर्पण ।

६१. करार—चैन, शांति ।

८८. काथ—कत्था, खैर ।

८१. कनक भखी—धतूरा पीनेवाले ।

८२. लहर—नशा, खुमार ।

१०२. चार—चाल, गति ।

११६. कुलजा—कुलवती स्त्री । कुलटा—दुराचारिणी ।

१२२. अरहट—रहँट ।

१२३. भाजन—वर्तन ।

१२६. जनार्दन—भक्त ( जन ) को पीड़ा देनेवाला । हर—

नाशक । शंकर—मंगल करनेवाला ।

१३३. नृप दुहनि—राजकुमारियों को, नृप-दुहिताओं को रुक्म एक राजा था, जिसने सोलह सौ राजकुमारियाँ बंदी कर रखी थीं। कृष्ण ने उसको मारकर इनको मुक्त किया और सब कुमारियों ने कृष्ण को ही स्वामी रूप से वरण किया।

१४०. विभौ—वैभव, ऐश्वर्य।

१४१. वूद किं तेल—तेल की वूद से अभिप्राय है। अशुद्ध व्याकरण प्रयोग।

१४२. वद—बुरा।

१४७. वँध्यो—जिसमें पानी नहीं खँचा जाता। गँधीलौ—गंदा।

१४८. खाँड—खाड़, खड़, गढ़ा।

१५४. प्रतीकार—रोक। शब्दार्थ इसका बदला होता है।

१५६. वनराइ—वृक्ष।

१५७. नग—पर्वत।

१५८. रसरी—रस्ती। करी—हाथी।

१५९. जलेस—सागर। कलेस—क्लेश, दुःख।

१६२. हरि—सिंह। असम—जो अपनी घराबरी का न हो।

१६४. भाँड—हँसी मजाक के लिये प्रसिद्ध हैं।

१६५. काबरि—भील। गोपी—कृष्ण की ब्रियाँ। पथवान—पार्थ। रथवान भी पाठ मिलता है।

१६६. तोय—पानी।

१६७. हाथो के हजारों कर नहीं है एक ही सूँड़ (कर) के कारण वह करी कहाया।

१६८. देवल—देवालय, मंदिर।

१७१. अंजनगिर—सुरमे का पहाड़।

१७४. उमहै—उत्साहपूर्वक। पयोधर—स्तन।

१७६. वनजन—कमलों को ।

१७६. निसप्रेही—निःस्पृह, जिसे कुछ चाह न हो ।

१८२. उनयौ—भुका हुआ । पयोद—बादल ।

१८७. साँची—संचित की हुई । कन—अन्न ।

१८८. सेयो—सेवित किया हुआ । सराय—सरे, बने । पयौधि—सागर ।

१८९. सरस—अधिक ।

२०१. काम—पहली पंक्ति में कार्य, दूसरी पंक्ति में काम-क्रीड़ा ।

२०६. मुंडे की लिखावट में मात्राएँ नहीं लिखी जातों, अभ्यास और अनुमान से पढ़ ली जाती है ।

२०७. वैसौ—बेट ।

२११. विष और अमृत एक ही समुद्र से निकले हैं ।

२१४. पाँच—पंच-रत्न; लाल, नीलम, हीरा, मोती और पुखराज ।

२१६. कुबानि—बुरी आदत ।

२२२. अन्नपूर्णा जगत् को अन्न देती है परंतु पति की माँगी भिक्षा पर आधार रखती है ।

२२४. बाफतौ—धूप-छाँह कपड़ा ।

२२५. घूघा, घूक—उल्लू ।

२३६. घन—घनसार, कपूर ।

२४०. फनीन कौं—सर्पों को ।

२४५. अंधे को बोलकर और बहरे को हाथ के इशारे से रास्ता बताया जाता है ।

२४७. बिफरै—फैलने पर ।

२५८. गुन—बत्ती ( रस्सी ) ।

२५६. कोटि—धनुष के किनारे । इसी कारण धनुष दो करोड़ का भागी बना ।

२६२. गिरि सुर तरु न रख्यो उदधि मुनि अँचयो जिहिँ बार—  
जब कुंभज ऋषि ने समुद्र का जल पी लिया तब पहाड़ और कल्प-  
वृक्ष उसकी रक्षा न कर सके, यद्यपि समुद्र ने उनकी रक्षा की थी ।

२७५. तिन-समूह—तृण ( घास ) का ढेर ।

२७६. ससा—खरगोश । अखेट—आखेट, शिकार ।

२८६. कालयमन...मुचुकुंद उठाय—कालयमन कृष्ण का पोछा  
कर रहा था । कृष्ण उस गुफा में चले गए जहाँ मुचुकुंद चादर ओढ़े  
सो रहे थे । कालयमन ने समझा कृष्ण ही सो रहा है । इसलिये  
उसने चादर उठाई । मुचुकुंद ने उसे शाप देकर भस्म कर दिया ।

२८६. पौराणिक मुनि सूत ने बलराम को प्रणाम नहीं किया,  
इसलिये बलदेवजी ने उनको कुश के आघात से मार डाला ।

२८८. सूद्र—शंबुक नामक शूद्र ।

३००. दधि—उदधि, समुद्र ।

३०४. अपरापत—अप्राप्त, भविष्य, भाग्य ।

३०६. मैनाक—पर्वतों के पहले पंख होते थे, यह पुराणों में  
लिखा है । इंद्र ने क्रोध करके सब पर्वतों के पंख काट डाले । परंतु  
मैनाक पर्वत समुद्र की शरण गया और पंख काटे जाने से बच गया ।

३०८. ढंपन—अच्छादन, ढकना । बन—कपास, रुई ।

३०९. पौंजन—धुनना ।

३१८. विससि—विश्वास करके । जीवन—पानी ।

३२७. काँगही—कंधो ।

३५८. भोडर—अभ्रक ।

३६१. अहि करंड—वह डलिया या पिटारी जिसमें साँप  
रखा जाता है ।

३७१. कपट पुरुष—खेतों में काली और सफेद रंग की हाँड़ी  
उलट करके रखी जाती है जो दूर से आदमी सी जान पड़ती है ।



३७५. करिसन—कृषि ।

३७७. कुबखान—निंदा, विगर्हणा । दगला—रुईदार अंगरखा ।  
अरगजो—कोसर, चंदन, कपूर आदि के मेल से बना हुआ एक  
सुगंधित द्रव्य जो शरीर में लगाया जाता है ।

३८२. घन—घने, बहुत ।

३८५. ऊढ़े—उनए हुए ।

३८७. धिरतंत—वृत्तांत ।

३८८. दुरद—द्विरद, हाथी ।

३८८. कुरज—एक प्रकार का पत्तो जो हजारों कोस दूर उड़  
जाता है, परंतु अपने अंडों को नहीं भूलता और अंत में उन्हीं के  
पास लौट आता है ।

४११. धार—धाड़, डाका ।

४१४. नारदी विद्या—लोक-रक्षण की दृष्टि से इधर की बातें उधर  
पहुँचाना जैसा नारद मुनि किया करते थे ।

४१५. जिस ऋतु में अंगूर पकता है उसमें कौवे का मुँह फर  
जाता है ।

४२२. गंगोदक—गंगा-जल ।

४२३. नग—नगीना । कहते हैं, अँगूठी पर डाँक देने से नगीने  
की सुंदरता और भी बढ़ जाती है ।

४२५. रतन दीप—जिस दिए में रत्नों से प्रकाश होता है ।

४२७. महातम—माहात्म्य । महा तम—महा अधिकार ।  
अदीत—आदित्य, सूर्य ।

४३०. मानिक या लाल ( रत्न ) की चटक सोने पर जड़े जाकर  
ही खुलती है ।

४३२. लहत...पोष—कल्लुए के अंडे चंद्रमा के प्रकाश में ही  
परिपक्व होते हैं ।

४३६. बीर—बाली ।

४३७. जीवन—जल ।

४३८. गुन सनेह—स्नेह ( प्रेम ) का गुण । गुन सनेह—वत्तो और तेल ।

४४१. मछली खाने से प्यास लगती है ।

४४२. घन—बादल । घन—घना, बहुत ।

४४३. गिरि तारे—लंका जाने के लिये सिंधु-बंधन के अवसर पर । सिला—अहल्या ।

४४४. सेतबंध—पुल बाँधना ।

४५२. उपकरन—उपकरण, सामग्री ।

४५३. सुरभि—वसंत ऋतु ।

४५४. भुक्त—खाए हुए । कपित्थ—कैथ ।

४५५. नालेर—नारियल ।

४५७. आदेस—नमस्कार, प्रणाम ।

४६१. आफू—अफीम ।

४६२. विनायक—विघ्ननाशक । मार्ग में गदहे का मिलना शुभ शकुन माना जाता है ।

४६५. मुचलका—एक प्रकार की जमानत ।

४६६. बास—निवास । बास—सुगंधि ।

४७१. ऐराकी—ऐरावत, इंद्र का हाथी । परस—स्पर्श, संबंध ।

४८०. कथा है कि एक गरीब पर पार्वतीजी को बहुत दया आई । महादेवजी से उन्होंने प्रार्थना की कि इसे धनी बना दो । महादेवजी ने कहा कि इसके भाग्य ही में नहीं है । हमारे देने से क्या होगा ? पार्वतीजी ने कहा—आप जब उसे धन दे देंगे तो वह धनी कैसे न होगा । महादेवजी ने कहा—स्वयं देख लो । यह कहकर उन्होंने जिस मार्ग से वह जाता था उसी मार्ग पर बहुतों सा धन डाल दिया

जिसमें वह उठा ले जाय । परंतु ज्योंही वह अभागा मनुष्य धन के निकट आया, त्योंही उसके मन में विचार आया कि हम कभी आँखें मूँदकर नहीं चले । देखें इसमें कैसा मालूम होता है । यह सोचकर वह आँख मूँदकर चलने लगा और धन उसकी दृष्टि में न पड़ा ।

४६१. मसलत—परिश्रम ।

५०४. रिजक—भोजन ।

५१३. लट पुट—मिल-जुलकर । जट मुट—(यष्टि) लाठी और (मुष्टि) मुक्का ।

५३०. छतना—छाता ।

५३३. थाप—थप्पड़ । जिय हानि—प्राणदंड ।

५३६. छकानी—छः कानों में गई हुई । तीन आदमियों के बीच की ।

५३७. धातु—स्वर्ण, सोना । लोगों का विश्वास है कि बाघिन का दूध सोने के पात्र के अतिरिक्त और किसी में नहीं ठहरता ।

५५१. थिर—स्थिर, स्थावर । चर—जंगम सृष्टि । सोध—खोज ।

५५३. जूथ बिछोही—अपने दल से बिछुड़ा हुआ ।

५५८. किलकिला—एक पक्षी जो समुद्र के जोवों का शिकार करता है ।

५५८. इलाज—उपाय ।

५६०. दुरभर—कठिनता से भरा जानेवाला ।

५६२. अरधंगी—अर्द्धांगी होने से आधे ही अन्न की आवश्यकता पड़ेगी । दार—छो, पत्नी प्रभृति । कुमार—स्वामी कार्तिकेय का विवाह ही नहीं हुआ । इसलिये वे कुमार कहलाते हैं ।

५६६. तंदुल—सुदामा चावल भेंट करने ले गया था । मुनि—दुर्वासा और उनके साथी ऋषिगण जिन्हें श्रीकृष्ण ने, पात्रस्थ चावल का एक कण खाकर, पूर्णतया वृत्त किया था ।

५६७. ब्राह्मण—सुदामा । श्रोपति—लक्ष्मीनाथ, विष्णु के अवतार कृष्ण ।

५७५. सालि—धान ।

५७७. नृप कन्या—रुक्मिणी ।

५७८. पारथ—पार्थ, अर्जुन । भारथ—भारत, महाभारत का युद्ध । छल—अर्जुन ने शिखंडो के पीछे से भीष्म पितामह पर बाण चलाए थे ।

५८५. निहुरै—नम्र होता है ।

५८६. अर्जुन—सहस्रार्जुन, सहस्रबाहु, हैहय कार्तवीर्य । जमदग्नि मुनि ने सहस्रबाहु का राजसी ठाट से अतिथि-सत्कार किया । उसे बड़ा आश्चर्य हुआ । जब उसे ज्ञात हुआ कि मुनि के पास कामधेनु है तो वह जमदग्नि को मारकर उसे ले चला । परशुराम ने उसे मार डाला और तपोवत् से अपने पिता को जोवित किया ।

५८५. हरवी—हल्की ( बात ) । गरुवे—भारी ( व्यक्ति ) ।

५८७. भँभूरे—बवंडर ।

६०५. कविराज—शुकाचार्य ।

६११. पिपीलिका—व्यूँटी ।

६२१. हुलास—उल्लास, प्रसन्नता ।

६२४. विक्रमादित्य बहुत प्रजावत्सल और विद्या-व्यसनी राजा प्रसिद्ध है ।

६३१. पैसार—प्रवेश । निसार—बाहर निकलना ।

६३७. लोपत—उल्लंघन करते ।

६३८. वैसी विरियाँ—वैसे समय में, विपत्ति-काल में ।

६५५. सुरिंद—सुरेंद्र, इंद्र ।

६६१. मनुहारि—मान ।

६६६. जामदग्नि—जामदग्न्य, परशुराम ।

६३

६७०. स्रवन—श्रवण कुमार जो अपने अंधे माता पिता को काँवरी के दोनों पलड़ों में रखकर इधर उधर ले जाया करता था ।

६७३. चंदेरीपति—शिशुपाल ।

६७५. लच्छ, लछ—लक्षण, चिह्न ।

६७७. हे—थे ।

६८१. तिय—पूतना । परिहरी—त्याग दिया ।

६८३. परनै—व्याह में ।

६८७. विकथा—सामान्य कहानी ।

६८५. ओप—काति ।

७०६. संवत ससि ( १ ), रस ( ६ ), वार ( ७ ), ससि ( १ )  
अर्थात् १७६१, अंक उलटे गिने जाते हैं ।

### ( ७ ) विक्रम-सतसई

१. श्यामा—राधिका । राधा गोरी थीं । श्यामा कहने से उनके वर्ण की ओर संकेत नहीं है । रुढ़ि से श्यामा का अर्थ केवल सुंदरी लिया गया है ।

१२. घेरौ—पेला हुआ, पीसा हुआ ।

१४. साके—वश ।

१५. रोर—झोलाहल, रौला, यहाँ पर धार्त्त की कराह ।

१६. जाजरी—जर्जर, पानी खाई हुई ।

१७. त्रन—तृण ।

२६. सकात—डरता हूँ ।

३१. जरतारी—जिस पर जरी का काम हो ।

३३. सिताब—चमक या जल्दी । गुलफ—गुल्फ, एड़ी के ऊपर की गाँठ ।

३७. तरल—चंचल । तरौना—कर्ण-भूषण । विशुरे—फैले हुए । सुथरे—स्वच्छ ।

३८. गरकाब—जलमग्न, डूबे हुए अर्थात् अंतरस्थ । सहाब—  
शहाब, गहरा लाल रंग ।
४६. जावक—मेंहदी ।
४६. पाटी—माँग के द्वारा बालों के दो हिस्से ।
५५. रबिसुत—यम ।
६१. खौर भौर—चंदन-चर्चित ।
६३. आफताब—सूर्य । ताब—चमक । महताब—आतिशबाजी ।
६५. सतलरी—सात लड़वाली माला ।
७३. मिही—महीन, बारीक ।
७६. सान—शान ।
७७. भोगवती—ऐश्वर्यशालिनी ।
८४. नोखी—अनोखी । अटपटी—बेतुकी, बेमेल ।
८६. बनिन—बनी हुई स्त्रियों की ।
८०. रजत—चाँदो । चलदल कौ पात—पीपल का पत्ता जो  
सदा हिलता ही रहता है ।
८७. विधि बिधि करि—नाना प्रकार से ।
१०५. गुलाल—रोरी, पाँवों की लाली के कारण रास्ता लाल  
दिखाई देता है ।
११०. कंदुक—गेंद जिसमें रंग भरा रहता है और फेंकने में  
पिचकारी का सा काम देता है । रावरो ( सं० राय + पुराई, प्रा०  
राय + उर + ई ) छोटा महल ।
११८. सकेले लेत—इकट्ठा करती है ।
११६. न जुरी—न जुड़ सकी, न टिक सकी ।
१२४. अजिर—आँगन ।
१२८. चक—चक्रवाक, चकवा ।
१३०. मृगमाला—मृगों का समूह । अहेरी—शिकारी ।

१३२. गुंमज—गुंमज ।

१३३. कुंद—मंद । कुंदकली—चंपा की कली । कनिकी—  
छोटा टुकड़ा ।

१३४. गाँस—रोक टोक, बंधन, प्रतिरोध ।

१३७. खँगी—गड़ी, चुभी, धँसी ।

१३८. आसव—मदिरा ।

१४२. कल—चैन ।

१४५. रंघ गलिन—गलियों की खुली जगहों से ।

१४७. ओलक—ओम्फल ।

१५१. चौज—चोख, चमत्कारपूर्ण उक्ति ।

१५६. अर बस—हठ वश ।

१७४. अगाऊ—पहले ही ।

१७६. नाखी—नष्ट की ।

१८३. मूठ—जादू की मूठ ।

१६२. कनियारे—तेज कनीवाले ।

१६४. अमनैकी—आम्नायक, वंशगत अधिकार से युक्त ।

१६८. अगड़—अकड़, ऐंठ, दर्प ।

२०५. मकर सऊ—मकर संक्रांति ।

२१०. रसाल—आम का पेड़ ।

२१२. मैन—( मदन, मअन, मयन ) कामदेव ।

२२३. जाहि—चला जा रहा है ।

२२४. उसिसवाँ—तकिया ।

२३३. धुप करिए—चुप करिए ।

२३७. धमारिन—होली । अतन—कामदेव ।

२४२. लोद—लोघ, यहाँ पर लोघ की छड़ी । सतून—स्थूण,  
खंभा । उजवति—फँकती है ।

२४३. क्रसोदर—पतली कमरवाली ।  
 २४५. गरक—गर्क, डूबो हुई । भपटनिवार—भपटनेवाली ।  
 २४६. नहल—नहर ।  
 २४७. उषन—उष्ण ।  
 २४८. वर साइति—शुभ मुहूर्त । वरसाइत—जेठ की अमा-  
 वास्या । वर—पति । साइत—मुहूर्त । वरसाइत—बट-सावित्री का पूजन ।  
 २५५. खँदै—कूटती है । रूँधै लेइ—घेरे लेती है ।  
 २६१. भाउन—भावन, सुंदर ।  
 २६३. दावन—जलाने ।  
 २६४. दावनगीर—दामनगीर, साथी, सखा ।  
 २६८. मरोरें—ऐंठ । इतराहट ।  
 २७५. जसन—जश्न, आनंदोत्सव । पान पान—नागबेल  
 के पत्ते । पान—हाथ, पाणि ।  
 २७७. सुरही—एक प्रकार की सोलह चित्ती कौड़ियाँ ।  
 २८६. फौकै—डोंग मारता है ।  
 २८८. वृष—वृष, दूसरी राशि । जब सूर्य वृष राशि में जाता है  
 तब गरमी बहुत जोर से पड़ती है ।  
 २८८. वृषभानु-कुमारि—राधा । वृषभानु राधा के पिता थे ।  
 ३०४. नेत—ठहराव, निश्चय, व्यवस्था ।  
 ३११. पसरत—पसरते हैं, फैलते हैं, पिघलते हैं ।  
 ३१६. मारतंड—मार्तंड, सूर्य ।  
 ३१७. घाटौ—पाट दो, घटा सी उमड़ा दो ।  
 ३२०. छतज—रक्त जो छत से निकलता है ।  
 ३२४. दर की—दरवाजे की, उस घर की रहनेवाली ।  
 ३४१. नूर—प्रकाश ( यहाँ पर अपना गुण, दुर्गंध और चर-  
 पराहट ) ।



३४३. चित-हित—हार्दिक प्रेम ।

३४५. आन—औरों को । सु—सो, वह । आन—आकर ।

३५१. औस—आस ।

३५५. सहूर—शऊर, अक्रु ।

३६३. जेब—शोभा ।

३६७. उकत—उक्ति ।

३७०. नाहीं—नाह, स्वामी ।

३७४. सकत—डरते हुए, शंका करते हुए । सकत—सकती ।

३७५. जकि—डरी ।

३७७. बंसी—मछली पकड़ने की बल्ली । गारौ—चारा ।

३८१. सौ जोर मुख—मुँहजोर ।

३८३. फतूह—फतेह, विजय ।

३८८. निनद—निनाद, शब्द ।

३९०. गुले गुलाब—गुलाब का फूल । यहाँ पर गुलाब का शरवत ।

४०२. गुह्यौ—गुथा हुआ । तामरस—कमल ।

४१०. समोइ—मग्न होकर ।

४३६. ग्रह—गृह, घर ।

४४१. हिलकी—हिचकी । मिलकी—मिलनेवाले या मिलने के

इच्छुक ।

४४२. छटकी—मना की हुई ।

४४६. नेह—प्रेम ।

४५४. सीक—सीत्कार अर्थात् सी-सी शब्द करना ।

४५५. बरगइ—बलपूर्वक; पर यहाँ, बड़ी कठिनाई से ।

४६०. उर-घर—वक्षस्थल ।

४६२. बरोठै—बैठक में ।

४६६. आगर—आगा ।

४६६. निसारत—निशा-रति; रात्रि में रति होगी, यह बात कही।

४७१. फुरहरू—जाड़ा सूचित करने के लिए कँपकँपी लेना।

४७२. मित्र—सूर्य। मित्रहि—यार को, प्रेमिक को।

४७४. अमनैक—रोक-टोक न माननेवाले।

४७६. मित्र—(१) स्नेही, प्रेमी। (२) सूर्य।

४८०. हरदब—प्रत्येक बल से। अरदब—आड़ में से।

४८३. गत—गति, दशा। सारी—साढ़ो।

४८८. ईछन—ईच्छा, आँखें।

४८३. उमहात—प्रसन्न होती है।

४८६. लुमरी—युवती। हुमरी—उभरे हुए।

४८७. लुमर—युवा, जवान। सुरेर—ऊँचे स्वर से।

५०६. अपत—अपत्र, पत्तों से रहित। जपत—जब्त।

५१६. रौदा—प्रत्यंचा, धनुष की डोरी।

५३७. भाग नगर—(१) भाग्य-रूपी नगर। (२) भागलपुर।

काबिल—(१) योग्य। (२) काबुल। दिनी—(१) हार्दिक।

(२) दिल्ली। निपट कुमाऊँ—(१) बहुत दूर, अप्राप्य। (२)

कुमाऊँ प्रदेश। मोरंग—(१) मोरँग, मेरा रंग। (२) नेपाल का

पूर्वी प्रांत। रह्यो—(१) रह गया, उत्तर गया। (२) रहा, वास

किया। बिहार—रति-क्रीड़ा। (२) बिहार प्रांत। सूरति (१)

सुरत, सम्मिलन। (२) सुरत नगर।

५३८. बदी—भाग्य में लिखी हुई। बदी—खराब होती हुई,

टलती। नदी सी—नदी की तरह बड़े वेग से चमड़ती हुई। नदी

सी—मानो नदी में नहाई हो, इस प्रकार पसीने से तर हो गई।

५३६. बिगलित—टूटे फूटे।

५४०. आन—मुनादी। आनि—आकर।

५४१. ना फुरमा—आज्ञा न माननेवाला। फुरमान—आज्ञा।

५५२. अभिरामिनि—सुंदर ।

५५५. सौहैं—सम्मुखै । सोहैं—सौगंध ।

५५६. वह माला सौत के हाथ की गुही हुई समझकर उसने उतार डाली ।

५७०. जरूर—जोरावर या अवश्य । अरसी—दर्पण ।

५७२. कोइन—( १ ) आँखों की कोएँ, ( २ ) कोई, कुमुदिनी । रोचन—गोरोचन । रोचन—सुंदर लगनेवाला ।

५७३. बिन गुन मन—बिना डोरी और मणियों (की माला) ।

५७६. लीक—रास्ता, मार्ग (पुरानी पर-खी-गमन की आदत) । लीक—लकीर ।

५८१. मिचौहैं—अधमुँदे ।

५८६. कलक्किन—मुर्गे । नीरजनी—कमलिनी ।

६१३. बरही—मोर ।

६१८. सिरात—समाप्त होती है । इतराति—गर्व करती है ।

६१९. सटकारे—लंबे । कारे—काले । सरल—सीधे, जो घुंघराले न हों ।

६२०. सगबगी—सराबोर । सौधे—सुगंधि ।

६२३. भा रद—कांति को हीन कर देती है ।

६२५. जोषा—योषा, खो ।

६२६. गरक गुल्लान सों—गुल्लान से ( मार्ग ) भरमा दिया । नायक-नायिका के चलने से उनके पाँवों की अरुण आभा मार्ग पर पड़ी है, उसी से ऐसा मालूम पड़ता है ।

६३१. सहर—शहर, सलीका ।

६३६. दिय अलाप—गाया । हिंडोल—हिंडाला राग ।

६५१. चुरी—चूड़ी । कर की—हाथ की । करकी—दूटी ।

## प्रतीपानुक्रमणिका

[ पहला अंक सतसई का, दूसरा दोहे का और तीसरा पृष्ठ का है । ]

अ	अंजन-जुत अँसुवानि की	३	१३७	१२७
अंक अगुन आखर	१	१३६	१२	अंजन-जुत लखि कै सदा ७ २०३ ३५८
अंक दसा रस-आदि	,,	२४३	२०	अंजन होइ न लसत तौ ४ २४३ १६१
अंकुर किसलय दंल	,,	५७३	४६	अंड फोरि किय चेहुआ १ १०४ ६
अँखियनि उमँग अनंग	३	३५५	१४४	अंतर अँगुरी चार कौ ६ ३५६ ३१४
अँखियनि की गति लखि	५	७३	२३४	अंतर तनक न राखियै , ५४४ ३२८
अँखिया अनमिप लेहु	,,	४८७	२६६	अँधियारी जामिनि खरी ५ ५३७ २७०
अंग अंग आभा अमित	७	७०४	३६७	अँधियारी निस कौ जनम ४ ४६६ २११
अंग अंग आभा हगनि	,,	५२७	३८३	अँधियारी निस विच नदी , ६५१ २२३
अंग अंग छवि की लपट	२	६६१	११४	अंबुज चरन पराग हर , १३ १७४
अंग अंग छवि जगमगत	७	७१७	३६८	अँसुअन पथिक निरास १ ६२४ ५०
अंग अंग छवि बनक	,,	५३१	३८३	अँसुवनि के परबाह में ३ ६४८ १६६
अंग अंग नग जगमगत	२	६६	६६	अँसुवनि सौं छाए रहैं , ६८१ १६६
अंग अंग प्रतिविंब परि	,,	६८०	११३	अँसुवा बरुनी हूँ चलत , ११६ १२६
अंग कंप स्वर भंग भो	५	१६५	२४४	अकथ कथा यह प्रेम की ४ ४०७ २०४
अंग करत परि रंग में	३	६४७	१६६	अगम पंथ है प्रेम कौ ६ ५६६ ३३०
अंग मोर आचर उचै	७	४६६	३८१	अगहन में गौने चली ७ २७८ ३६४
अंगराग अंगनि चरचि	,,	७१६	३६८	अगुन अनूपम सगुन १ १५० १२
अंग ललित सित रंग पट	३	३६३	१४७	अगुन ब्रह्म तुलसी सोई , १६६ १४
अँगिरानी आंगी चितै	५	१५०	२४०	अग्नि होत री नैन थे ४ ५६८ २१६
अँगुरिनु उचि मरु	२	५०५	६६	अजब बनक औरै बनी ५ २० २३०
अंजन आँजत आँखियन	७	२२७	३६०	अजब साँवलौ रूप लखि ४ ११७ १८२
अंजन आँदू सौं भरे	४	२६०	१६३	अजहूँ प्रगटित होत है ३ ४५४ १५२
अंजन-जुत अँसुवा ढरत	३	६८४	१६६	अजुगत लखि नर नीच की ६ २४१ ३०५

अजौ तरथौना हीं रहौ २ २० ६२	अधरन की लखि मधुरई ५ ४६८ २६५
अजौ न आए सहज रंग ॥ २०३ ७६	अधर मधुरता लेन को ॥ ८१ २३५
अजौ उड़ावत हौ नहीं ३ ५१३ १५६	अधर-रंग बेसरि मुकत ३ ५३८ १६८
अटा ओर नँदलाल उत ॥ ५७८ १६१	अधिक अधिक बल ६ ६३२ ३३५
अतनु तेज तलफै सुतनु ॥ ५१६ १५६	अधिक चतुर की ॥ ४२३ ३१६
अति अगाधु अति औधरौ २ ४११ ६२	अधिक दुखी लखि ॥ ३३२ ३१२
अति अनीति लहियै ६ ५२ २६१	अधिकारी बस ओसरी १ ३०६ २५
अति अवदात महामिही ३ ५८४ १६२	अन-उद्यम सुख पाइयै ६ ५६० ३३२
अति उतंग उरजनिलसत ॥ ६३१ १६५	अन-उद्यम ही एक कौ ॥ ६ २८७
अति उदारता बढ़ेन की ६ ४४२ ३२१	अनधर सुधर समाज ॥ २२६ ३०४
अति परचै तैं होत है ॥ ३८ २६०	अनत दगनि फेरत बहूत ७ १७० ३५६
अति बिरोध तिन महुँ १ ३३८ २७	अनत बसे निसि की २ २८६ ८३
अति भीषन सीखन तपन ७ २४७ ३६२	अनमिल लोचन बाल ३ ८५ १२३
अति सुधार अति ही बढ़े ३ ३३१ १४२	अन-मिलती जोई करत ६ २५ २८६
अति सूझम लखि ५ ४१७ २६१	अनमिल सुमिल समाज ॥ २३० ३०४
अति हठ मत कर हठ ६ ६४ २६२	अनमिप नैन कहै न ३ ५३६ १५८
अति ही सरल न ॥ १५६ २६६	अनरस हूँ रसु पाइयतु २ ३३७ ८७
अद्भुत गत यह प्रेम की ४ ४०६ २०४	अनल ज्वाल सी लगति ३ ६४६ १६७
अद्भुत गत यह प्रेम की ॥ ४२७ २०५	अनल दिवैया आपु ही ४ ५४ १७७
अद्भुत गति यह रसिक ॥ ८ १७३	अनल रकार अकार १ १४६ १२
अद्भुत गावत जगत सब ३ ६२४ १६५	अन-समुझे अनु-सोचनो ॥ ६४६ ५२
अद्भुत बात सनेह की ४ ४७४ २०६	अनहित ज्यों परहित ॥ ६६० ५२
अद्भुत या धन कौ ३ ६४ १२२	अनियारे अंजन सहित ७ ४८६ ३८०
अद्भुत रचना बिधि ४ ३४८ १६६	अनियारे दीरघ दगनु २ ५८८ १०६
अधम अजामिल आदि ३ ५३५ १५८	अनिल अनल पुनि १ ५२७ ४२
अधम उधारन प्रभु ४ ६६८ २२६	अनिल सलिल विधि ॥ ४७२ ३८
अधम उधारन बिरद ॥ ६६४ २२६	अनी बढ़ी उमड़ी लखै २ २२६ ७८
अधम उधारन बिरद ॥ ६६५ २२६	अनुचित अति बल ६ १३३ २६७
अधरतिया की कर ७ ५६२ ३८८	अनुभव अमल अनूप १ ६०७ ४८
अधर धरत हरि कै २ ४२० ६३	अनुस्वार अच्छर रहित ॥ ५२३ ४२
अधरन पर बेसर सरस ७ ५६६ ३८६	अनुस्वार कारन जगत ॥ १६ २

अनुस्वार सूक्ष्म जथा	१ ५२६ ४२	अब फिर आवत है	३ ५२८ १५७
अनुमान साछी रहित	॥ ५०६ ४०	अबलख नैन तुरंग ये	४ ६८ १८०
अपगत खे सोई अवनि	॥ १६० १५	अब लग बेधत मन	॥ १६२ १८७
अपजस जोग कि	॥ ६५३ ५२	अबलि अली लै वृज	५ ३ २२६
अपत करी बन की	७ ५०६ ३८२	अब लौं यह तन	४ ५६२ २१६
अपन करम बर मानि	१ ५८२ ४६	अबस अस उपचार	५ ४६६ २६७
अपनी अपनी गरज	६ ६६ २६४	अब हीं तौ मिलि	३ २८४ १३८
अपनी अपनी ठौर पर	॥ २६४ ३०६	अब हीं सब तुम हेरतीं	॥ १६ ११८
अपनी अपनी ठौर पर	॥ ८५ २६३	अबैं इसक के दरद	४ १५६ २१६
अपनी कीरति कान	॥ ३५३ ३१४	अमिनव जोबन ज्योति	३ १८८ १३१
अपनी गरजनु बोलियतु	२ ४०६ ६२	अभिरामा स्यामा सरस	७ ३५४ ३७०
अपनी पहुँच बिचारि	६ १६ २८८	अभिरामिनि जामिनि	॥ ५५२ ३८५
अपनी प्रभुता को सबै	॥ ४३५ ३२०	अभिलाषी इक बात के	६ ८१ २६३
अपने अँग कै जानि कै	२ २ ६१	अमर-अधिष-वारन-	१ २३७ १६
अपने अपने समय पर	६ ४५८ ३२२	अमरैया कूकत फिरै	४ ६१० २२०
अपने खोदे कूप महुँ	१ ३२८ २६	अमल कपोलनि में	३ १२५ १२६
अपने नैनन देखि जे	॥ ५४६ ४४	अमित अथाहै हौ	४ ६६३ २२४
अपने लालच के लियै	६ ४३६ ३२०	अर तैं टरत न बर-परे	२ ३ ६१
अपनैं अपनैं मत लगे	२ ५८१ १०५	अरथ आदि हन परि-	१ ७१० ५६
अपनै कर गहि आपु	॥ २०४ ७६	अरहर आई जानि	६ ५०५ ६८१
अपनै से दग लागनै	४ ३१२ १६७	अरि के कर मैं दीजिए	॥ ६७२ ३३८
अपनो करतब आपु	१ ५५० ४४	अरि के संग कुटुंब	॥ २०७ ३०३
अपनो करम न आपु	॥ ५६६ ४५	अरि छोटै गनियै नहीं	॥ २७५ ३०८
अपनो समय बिचारि	६ २२५ ३०४	अरि हूँ बूझै मंत्र कौं	॥ ३६२ ३१७
अपरापति के दिनन में	॥ ५८२ ३३१	अरी करेजै नैन तुव	४ ३२२ १६७
अब भुकि माँकि	५ ६११ २७६	अरी खरी सटपट परी	२ ४५६ ६६
अब तजि नाउँ उपाव	२ ६७२ ११२	अरी जात है अजहि	४ ६१३ २२०
अब तेरौ बसिबौ इहाँ	३ १६१ १२६	अरी नौंद आवै चहै	॥ ५५७ २१५
अब तौ दिन रजनी	५ ६७६ २८१	अरी बदी सी लखि	७ ५३८ ३८४
अब तौ प्रभु तारै बनै	४ ५ १७३	अरी बिलंब बरी भई	५ ३२६ २५४
अब निधरक सौहैं	५ ३०५ २५२	अरी मधुर अधरान तैं	४ ६१२ २२०

अरी होन दै अब हूँसी ५ ८३ २३५  
 अरुन अयन संगीत तन ५ २ २२६  
 अरुन उदै लौं तरुनई ७ ३५१ ३७०  
 अरुन चुनीन जड़ित ५ ५८१ २७३  
 अरुन तगा कै नैन जनु ४ २८८ १६०  
 अरुन नयन हैं रावरे ५ ५३४ २७०  
 अरुन नील पियरे लसत ७ ४१७ ३७५  
 अरुन-वरन-तरुनी-चरन-२ ४१८ ६३  
 अरुन बसन तन में ७ २६१ ३६३  
 अरुन बसन निकरी ३ ३३० १४२  
 अरुन माँग पटियाँ चितै ५ १७६ २४२  
 अरुन सरोरुह कर २ ४८७ ६८  
 अरुन स्याम बैदी दिपु ५ ३८६ २५८  
 अरुनाई एड़ीन की ७ ४६ ३४६  
 अरे कलानिधि निरदई ४ ५४१ २१४  
 अरे जरे की पीर कौ ॥ ६६ १८०  
 अरे निरदई मालिया ॥ ६४७ २२२  
 अरे निरदई मालिया ॥ ६६७ २२४  
 अरे परेखौ को करै २ ६२० १०८  
 अरे बजावत कौन ढिग ४ ६३२ २२१  
 अरे बैद चहिए दवा ॥ १६८ १८६  
 अरे मीत या बात कौ ॥ ११६ १८२  
 अरै परै न करै हियौ २ ५२६ १०१  
 अलंकार कवि-रीति-जुत १ ४११ ३३  
 अलंकार घटना कनक ॥ ४८८ ३६  
 अलक झूमि दुहुँ ओर ७ २०७ ३५६  
 अलख कहहि देखन १ ३६३ २६  
 अलख जात इन दगनि ४ ७१ १७८  
 अलख सबै लखत वह ॥ ६१ १७७  
 अलख सबै जापै कहै ॥ ७७ १७६  
 अलगरजी घन सौं नहीं ॥ ६३६ २२२

अलप सलिल सफरी ७ ५६४ ३८६  
 अलि आए परदेस तैं ॥ ५२८ ३८३  
 अलि इन लोइन-सरनु २ ४५० ६५  
 अलि बेचन चलिहैं ५ ६०३ २७५  
 अलि यह अनल अनंग ३ ६०० १६३  
 अली कहैं न इन्हैं भली ५ २४० २४७  
 अली गई अब गरबई ॥ ७२३ २८४  
 अली गली में कर धरै ॥ ५२८ २६६  
 अली चली कहु कौन ३ ३१५ १४१  
 अली चली नवलाहि ॥ २७६ १३८  
 अली जात मग देखिए ७ ६२८ ३६१  
 अली तिहारे अधर में ३ ४६० १५४  
 अवगाहे इन रूप-निधि ४ २४५ १६१  
 अवगुन करता और ही ६ ७७ २६३  
 असन वरन वरनि न ३ ३४३ १४३  
 असन बसन सुत नारि १ १२४ १०  
 असनेही जानै कहा ४ ४३६ २०६  
 असुभ करत सोइ होत ६ ७३ २६२  
 अहनिशि नहिं ढिग ते ५ १४६ २४०  
 अहित किए हू हित करै ६ ८३ २६३  
 अहि-रसना-थन-धेनु- १ २१ २  
 अहे अरे आंगन खरे ५ ३८५ २५८  
 अहे अहेरी लखत ७ १३० ३५३  
 अहे अहो कच सुमुखि ५ २४१ २४७  
 अहे कहै न कहा २ २७६ ८२  
 अहे दहेंडी जनि धरै ॥ ६६६ ११४  
 अहे दीनता सों रहै ५ १०१ २३६  
 अहै अवधि अबिवेक ६ ६६४ ३४०

### आ

आखिन के जब पल ४ १२१ १८२  
 आसु छपाए हरष के ३ ५६२ १६०

आसू लखि पिय हँसि ७	४२५	३७५	आदि दुत्तिय अवतार	१	२३२	१६
आई गौनें काल्हि हीं ३	२६२	१३७	आदि बसंत इकार है	॥	२५५	२१
आई फूलनि लैन कौं ॥	४४०	१५०	आदि मध्य अवसान	॥	१८७	१५
आई सर नीचे किए ५	३७३	२५७	आदि म है अंतहु म !	॥	२६८	२४
आए आदर ना करै ६	४५६	३२२	आदिहु अंतहु है सोई ॥	५२४	४२	
आए आपु भली करी २	१३६	७१	आधि अगाधा व्याधि ७	५	३४३	
आए पिय प्यारे प्रिया ७	४१८	३७५	आधी निसि नव	५	६०२	२७५
आए लाल प्रभात लखि ५	३५१	२५६	आधी निसि लों सीत	५	६३६	२७८
आए श्याम बिदेस ते ॥	३३३	२५४	आधे नख कर आंगुरी ॥	१०२	२३६	
आए हैं मनुहारि हित ॥	६७	२३६	आनंद आसुनि सौं	३	५८०	१६१
आक करम भेखज १	५८६	४७	आनन तैं स्रम-स्वेद-	७	४६०	३८०
आगे चलि पाछे चलै ५	४०२	२६०	आनन तैं स्रम-स्वेद-	॥	५८	३४७
आगे पाछे मचि रही ॥	७१८	२८४	आनि इतै छन बारि	५	५६६	२७२
आज अचानक गैल मैं ॥	१६१	२४१	आप अकारज आपनौ	६	४०६	३१८
आज अचानक मिलि ॥	११६	२३८	आप करहि मनुहारि ॥	४७२	२६५	
आज अहेरी नैन ये ॥	६७५	२८१	आप कष्ट सह और	॥	३०६	३१०
आज कलू औरै भए २	५२३	१०१	आप कहें नार्ही करै	॥	३८६	३१७
आज बनी औरै प्रभा ५	५८७	२७४	आप तरै तारै अवर	॥	५६६	३३३
आज रही गृहकाज ॥	२११	२४५	आप बधिक बर बेस	१	११०	६
आज रहे बलबीर री ॥	३६६	२५७	आप बसातै बहुत सौं	४	२२३	१६०
आज हिउँ चंदन कियौ ॥	७१५	२८४	आप बसातै सजना	॥	४८४	२१०
आजु चतुर्थी व्रत कियौ ७	४५६	३७८	आप बुरे जग है बुरौ	६	४३	२६०
आजु राति इहि भाति ॥	३८६	३७२	आप भलौ तो जग	५	२२१	२४६
आजुहि चलयौ बिदेस ३	२२८	१३४	आपहि कहा बखानियै	६	३८५	३१६
आहुंवर तजि कीजिए ६	७६	२६३	आपहि यह इनसाफ	४	५६७	२१६
आहुं दै आले बसन २	२८३	८३	आपु दियौ मनु फेरि	२	२६०	८३
आतम-बोध बिचार १	३६६	३०	आपुन तौ ह्वै भावते	४	५२०	२१३
आतम-बोध बिबेक ॥	३४	३	आपु फूल आपुहि ॥	४६	१७६	
आदि अंत अस मध्य ४	१५	१७४	आपु भँवर आपुहि ॥	४१	१७६	
आदि चंद्र चंचल १	२४५	२०	आपुहि पेन बिचार १	३६३	३१	
आदि द है मध्य र है ॥	२६६	२४	आपुहि बाधित आपु ॥	४३७	३५	



आपुहिं मद को पान	१	२०६	१७	इक कौ रति धिपरीत	७	४३४	३७६
आपुहिं वा महबूब मैं	४	६६	१७८	इक गुन तैं सोभा लहैं	६	४३१	३२०
आभा तरिवन लाल	३	१८३	१३१	इक तो मदन बिसिख	५	३५६	२५६
आय बसे जिहि दिन	६	३६६	३१७	इक तो हायल रहत	॥	५६४	२७४
आय सकारे हिय	५	२४३	२४७	इक तौ मार मरोर ते	॥	२२५	२४६
आयौ दुसह बसंत री	॥	१६६	२४१	इक दरसावै आरसी	॥	४७	२३२
आयौ मीतु बिदेस तैं	२	६५७	१११	इक दग पिचकारी दर्द	॥	२६६	२५१
आलबाल मुकुता	१	१०८	६	इक बिन मार्गो ही लहैं	६	७००	३४०
आलस-जुत लखि	७	४१	३४६	इक भीजैं चहलैं परैं	२	४६१	६६
आली तो कुच सैल तैं	५	३४५	२५५	इक समीप बसि	६	१७६	३००
आली बनमाली कहा	७	६७	३५०	इकहि आँक सों मोहि	५	३४१	२५५
आवत अंक न अंक	॥	६५७	३६३	इत आवत अति स्रम	७	४२६	३७५
आवत अप रबि ते	१	४४१	३५	इत आवति चलि जाति	२	३१७	८५
आवत बठि आदर	३	२४४	१३५	इत चितयो नागर	७	१८३	३५७
आवत केलि निकुंज	७	५१४	३८२	इत तैं उत उत तैं इतै	२	२०६	७६
आवत जात न	२	१७१	७४	इतनौई कहनौ हतौ	४	६२	१८०
आवत पति परदेस तैं	७	६५२	३६३	इती भीर हूँ भेदि कै	२	६१२	१०८
आवत लखि रितुराज	॥	५०१	३८१	इतै उतै चितवत रहै	७	५६७	३८६
आवत समय विपत्ति	६	४८४	३२४	इतै उतै सचकित चितै	३	१०२	१२४
आसन दढ़ आहार दढ़	१	३६	३	इतै चितै तू कत खरी	५	४६०	२६४
आस पपीहा पयद की	॥	६६	८	इनकौ मानुष जन्म दै	६	६४२	३३६
आसिक अरु महबूब	४	४७	१७६	इन झूठी सौंहनि कियैं	३	५०८	१५६
आसिक बिधुरन दरद	॥	५२३	२१३	इन दुखिया अँखियानु	२	६६३	११२
आसिक हूँ पुनि आपु	॥	५६	१७७	इन दोखन्ह ते' रहित	१	४३२	३५
इ				इन भृकुटिन की वार	५	७१२	२८३
इंगित तैं आकार तैं	६	३८६	३१६	इन महँ चेतन अमल	१	४६२	३७
इंदु उपल उर बाल कौ	३	१४७	१२८	इनमैं ह्वै दरसात है	४	२६७	१६३
इंदुमुखी तो गुन	५	२७	२३१	इन लच्छन तैं जानियै	६	६८६	३३६
इंद्र गरब हर सहज मैं	४	५०५	२११	इनसों घट भर लीजिए	४	४६५	२११
इंद्र-जाल कंदर्प कौ	३	२१६	१३३	इष्ट देव कै बा कहाँ	५	४२६	२६१
इंद्र-रवैनि सुर देव	१	२६०	२३	इहाँ दुरावत कत लला	॥	१२७	२६८

इहाँ सुपास कहाँ अरे	५	६८१	२८२	उत तकि तकि ताकै	५	३६६	२५६
इहिँ काँटें मो पाइ	२	६०५	१०७	उत तैं नेकु इतै चितै	,,	३६०	२५६
इहिँ द्वैहीं मोती	,,	३०६	८४	उतरत कहूँ परजंक तैं	७	१४४	३५४
इहिँ बसंत न खरी	,,	५७४	१०५	उतै रुखाई है घनी	४	४५८	२०८
इहीं आस अटक्यो	,,	४३७	६४	उत्तम कौ अपमान	६	२५४	३०६
इहीँ मतौ ठहराइए	४	३८१	२०२	उत्तम जन की होइ	,,	१२४	२६६
ई				उत्तम जन के संग में	,,	१२५	२६६
ईठिन में बैठी हुती	५	२३४	२४७	उत्तम जन सों मिलत	,,	३०३	३१०
ईठिहु नीठि न लखि	,,	५८६	२७४	उत्तम पर कारज करै	,,	२२२	३०४
उ				उत्तम विद्या लीजिए	,,	४८५	३२४
बँजियारी मैं जो कहै	,,	४८	२३२	उदर धरन नर तैं	,,	५६१	३३०
उचके कुच उघरे चितै	,,	५५६	२७१	उदर भरन के कारनै	,,	५५६	३३०
उजियारी मुख इंदु की	३	१७१	१३०	उदित उमंग अनंग बर	७	६०२	३६६
उझकि अलिन की ओट	७	२४०	३६१	उदै भयौ है जलद तू	३	४१६	१४६
उझकि झरोखनि झाँकि,	,,	७१६	३६८	उदै करत जब प्रेम	४	४०१	२०३
उझकि झरोखनि ह्वै	,,	१८२	३५७	उहिम बुधि-बल सैं	६	२६६	३०७
उठि जैबौ कैसौ अली	,,	१४२	३५४	उद्यम रुवहुँ न छाँड़ियै	,,	१८२	३०१
उठि न जाई चाहत	,,	४०४	३७४	उनका हितु उनहीं	२	४४७	६५
उठि ठकु ठकु एतौ कहा	२	७०४	११५	उन नैननि चितवत	७	६६०	३६३
उठि मिलि अलि	५	५०६	२६८	उन हँसकै बीरा दर्ई	,,	४५०	३७७
उठी केलि करि ससि	७	३०६	३६६	उन हरकी हँसि कै	२	१२८	७०
उठे जगत दुख दैन कौ	३	५४०	१५८	उपकारी उपकार जग	६	३०	२८६
उठे सघन घन लखि	७	७०६	३६७	उपजत जीवन-मूर	४	३४६	१६६
उड़त भौर ऊपर लसैं	३	५८६	१६२	उपमा मौहन जो दर्ई	,,	३१५	२००
उड़ति गुड़ी लखि	२	३७३	८६	उपल बरखि गरजत	१	६०	८
उड़ि गुलाल पिय	३	४४७	१५१	उमगी बर आनंद की	३	३६८	१४५
उहुगन गगन मलीन	७	५६४	३८८	उमड़ि घुमड़ि बरसै	२	२५४	३६२
उड़ौ गुड़ी लौं मन	४	३८७	२०२	उयै सोख जल लेत है	४	६७२	२२४
उड़ी फिरत जो तूल	,,	३६४	२०१	उयौ सरद राका-ससी	२	२३१	७८
उत अलगरजी चाहि	,,	२६६	१६३	उर अकास जहँ आइ	४	४२०	२०५
उत कुल की करनी	१	३८६	३१	उर उछाव हित धरम	६	६८८	३४०

उर औरै आनत नहीं	७	१६३	३५५	एक एक के काम कौ	६	५८५	३३२
उरग तुरग नारी	१	६३६	५१	एक एक कौ शत्रु है	११	५६४	३३०
उरभूत दग वैधि जात	४	४१०	२०४	एक एक तै देखियै	११	५६५	३३०
उर डर अति लघु	१	५६३	४७	एक एक सौं लगी रहै	११	६१७	३३४
उर-तम मैं आवत	४	१६३	१८५	एक किए है दूसरे	१	४३१	३५
उर दियला राख्यौ जु	११	१२३	१८२	एकतह रह सजन	६	४०४	३१८
उरबी अंतहु आदि	१	२६६	२१	एक दिना मैं एक पल	४	५६०	२१६
उर मानिक की कर	२	३३६	८७	एक छौस की औधि	३	६२५	१६५
उर लीने अति चटपटी	११	५६०	१०४	एक नजरिया कै लखै	४	२६१	१६५
उर उरभूथो चितचोर	११	५५४	१०२	एक पदारथ विविध	१	४८६	३६
उलटे तात्नी तासु	१	२३०	१६	एक बली मैं बहु	३	६८३	२८१
उलनीधे बाँधे बिधे	७	५७५	३८७	एक वस्तु गुन होत	६	१०६	२६५
उसरि बैठि कुक कागरे	५	३२६	२५४	एक बिगारतु आपनौ	११	६०७	३३३

## ऊ

ऊँचहि आपद बिभव	१	६३३	५०	एक विरानौ ही भलौ	११	१३१	२६७
ऊँची जाति पपीहरा	११	८१	७	एक बुरे सब को बुरौ	११	७५	२६२
ऊँची खासनि सौं	३	५०२	१५५	एक भए मन दुहुनि के	३	६३४	१६५
ऊँचे नीचे कहूँ मिलै	१	५२	५	एक भरोसो एक बल	१	१०७	६
ऊँचे पद कौं पाय लघु	६	४३४	३२०	एक भलौ सघकौ भलौ	६	७४	२६२
ऊँचे बैठै ना लहैं	११	१६८	३००	एक भेप के आसरे	११	१५१	२६८
ऊँचे चितै सराहियतु	२	३७४	८६	एक सदा निवहै नहीं	११	११७	२६६
ऊधव माधव जू बिना	५	२८६	२५१	एक सृष्टि में जाहि	१	१४४	१२
ऊधो कलु कहत न	७	८३	३४६	एकहि गुन ऐसौ भलौ	६	१४२	२६८
ऊपर दरसै सुमिल	६	४७०	३२३	एकहि भले सुपुत्र तै	११	५२८	३२७

## ए

एँडुनि पिँडुरिन जंघ	७	१२२	३५२	ए कुच सुचित कठोर	५	४३०	२६२
एई सुद्ध उपासना	१	१८८	१५	एकै धल विश्राम कौ	६	५३२	३२८
एक अनीति करै लहै	६	३३४	३१२	एकै रूप कुलाल को	१	५१३	४१
एक आपनौ और कौ	११	६०६	३३३	ए जघननि पीने	५	३८३	२५८
एक उदर वाही समय	११	१७७	३००	ए जीगन न उड़ाहि	११	६२	२३३
एक एक अक्षर के पढ़ै	११	६१२	३३४	एडिन चढ़ि गुलफन	११	१२१	२३८
				एत-बंस घर वरन	१	२६६	२२
				एतेहू ठिकठान पै	५	२१८	२४२

पूरी यह तेरी दर्द	२	६०४	१०७
पूरी या ती के सुलै	५	४७६	२६५
पूरी सुख खनहुँ न	,,	१६६	२४४
ऐंचति सी चितवनि	२	३२०	८५
ऐन मैन मय सैन	७	६६०	३६६
ऐसहि गति अवसान	१	२०६	१७
ऐसी है सुकुमारता	५	६७६	२८१
ऐसे चंचल जगत गत	,,	४५७	२६४
ऐसे जो नित बाँसुरी	४	१८८	१८७
ऐसे बड़े बिहारों	५	३३	२३१
ऐसे बोलौ बोल बलि	३	८६	१२३
ऐसे ही बेधक घने	५	२२७	२४६
ऐसो तौ कीन्हों हतो	४	२१७	१८६
ऐसौ और न जानिबो	७	२६०	३६५

### ओ

ओठनि अंजन दग	,,	५७७	३८७
ओछी मति युवतीन	६	६६८	३३८
ओछे नर की प्रीति	,,	२४१	२८८
ओछे नर के चित्त में	,,	५४७	३२६
ओछे नर के पेट में	,,	५३४	३२८
ओछे बड़े न हूँ सकैं	२	५६०	१०६
ओठ खंढिबे कौं अरथौ	३	४०२	१४८
ओठु डँचै हाँसी भरी	२	६१४	१०८
ओर-चार दग जे परै	४	१४८	१८४

### औ

औगुन बरनि उराहनौ	३	१४	११८
औघट घाट पखेरुवा	४	६५०	२२३
औंधाई सीसी सुलखि	२	२१७	७७
और कहा देखत नहीं	४	६४०	२२२
और गए कछु दिवस	५	४७०	२६५
और गयौ जरि लेप तें	,,	३६६	२५७

और चोट बच जात	४	४३०	२०६
और जवाहिर की प्रभा	,,	४७६	२०६
और तौर आभा अमल	७	६६६	३६६
औरनि कै पाइनि दियौ	३	२५७	१३६
औरनि हूँ के लसति	,,	६१०	१६४
और बात कहियै कहा	,,	६४	१२४
और लतन सौ हित-	४	४४२	२०७
और सबै हरषो हँसति	२	६०२	१०७
और सवादन पै लखौ	४	१३८	१८२
और हाथ मन होत है	७	४५३	३७७
औरहि तैं कोमल	६	११४	२६५
औरे मन औरे बिपिन	७	७३१	३६६
औरै ओप कनीनिकनु	२	४	६१
औरै कछु चितवनि	३	४०४	१४८
औरै गति औरै बचन	२	६७८	११३
औरै भाँति भएउव ए	,,	८६	६७
औरो भेद सिधात यह	१	५२८	४२
औसर बीते जतन कौ	६	४४४	३२१

### क

कंचन-तन-धन-बरन	२	३५६	८८
कंचन से तन में इहाँ	४	५३६	२१४
कंज-नयनि मंजु	२	७८	६७
कंट कंट हूँ परत गिरि	१	६६३	५५
कंटक काढ़त लाल	३	७३	१२२
कंट कहा सौंहनि	,,	२६१	१३७
कंट चौक सीमंत की	,,	८	११७
कंट बाट लखि गोह	,,	२७०	१३७
कं दिग दून नछत्र	१	२२१	१८
कंप प्रसेद बढ़ै चढ़ै	३	३१३	१४१
कच चिकने मेचक	५	५६५	२७४
कलुक मोरि मुख	७	६६३	३६६

कल्लु कहि नीच न	६	४१०	३२१	कन दैवौ सौंप्पो	२	२१५	८३
कल्लु न गनति दुरंजन	३	६५७	१६७	कना समुक्ति क वरन	१	२४२	२०
कल्लु बसाय नहिं	६	५७	२६१	कपट बचन अपराध	३	६७५	१६६
कल्लु सहाय न चलि	,,	१५५	२६६	कपट सतर भौहैं करी	२	४१२	६२
कल्लु सुलोच न नखन	४	३१५	१६७	कपटौ जब लौं कपट	४	३७	१७५
कजरारी छवि पेखतहिं	५	२१६	२४५	कव की इकटक	२	६३४	१०६
कजरारे दग की घटा	४	२०१	१८८	कव की ध्यान लगी	,,	५८६	१०६
कटी कटीली कानि पै	५	६५७	२७६	कव कौ टेरतु दीन	,,	८७१	६६
कठिन करम करनी	१	५७७	४६	कवरी तर सम-कन	५	६६०	२७६
कठिन कलाहू आइहै	६	६७८	३३६	कवहुँ न ये आवत	४	१६४	१८५
कठिन दुहुँ बिधि	४	८२	१७६	कवहुँ झूठी बात कौ	६	५७१	३३१
कंदत पियूषहुँ तै	३	६४४	१६६	कवहुँ रन बिसुखी	,,	५४२	३२८
कत इत ताकति ताकि	५	३६१	२५६	कवहुँ प्रीति न	,,	५४३	३२८
कत कहियत दुखु देन	२	५२०	१०१	कवहुँ संग न कीजियै	,,	२०८	३०३
कत गुमान गुड़इल	७	३३१	३६८	कवि समता औरन	५	३६०	२५६
कत न कंत आयौ	३	२६८	१३७	कमल दलन की छवि	७	१६५	३५८
कत बेकाज चलाइयति	२	४४६	६५	कमल मुखनि कुचलय	३	६७१	१६८
कत मुकुरै मो तें दुरै	५	५५५	२७१	कमला बर कर कमल	५	३६	२३१
कत मुकुरौ लाज न	,,	७	२२६	कमला लै कै कमल	४	५६८	२१६
कत लपटइयतु मो	२	४६६	६६	कर के कर मन के	१	६६६	५५
कत सकुचत निधरक	,,	२८६	८३	कर के मीड़े कुसुम	२	५१६	१००
कत सकुचे नीचे चहौ	५	२५७	२४८	कर गहि ध्यान मलाह	४	५७५	२१७
कत सजनी है अन-	३	१३	११८	करत उछाहै मिलन	७	५१६	३८३
कत सौहैं करि हेठ	५	३०	२३१	करत करत अभ्यास	६	३१०	३१०
कनक तरौना तरुन	७	५३	३४७	करत करी कर करम	५	५६६	२७४
कनक दंड जुग जंघ	,,	५३	३४७	करत चातुरी मोह	१	५६५	४७
कन कन जोरै मन	६	१६६	२६६	करत जतन बल	४	३७३	२०१
कनक बरनि मोहन	५	२२४	२४६	करत तरक जेहि की	१	५५८	४४
कनक बिंदु सुरकी	,,	३२१	२५३	करत त्रिभंगी मोह	४	१६५	१८८
कनक बेलि मै कोक-	३	४२४	१४६	करत न जब तक	,,	१०६	१८१
कनकु कनक तै सौ	२	१६२	७५	करत फिरत मन	,,	७८	१७६

करतब ही सों करम	१	३७८	३०	करि उपचार थकी	५	१६८	२४४
करता कारन करम	,,	५८५	४७	करि उपाय बहुतौ	४	३५४	२००
करता कारन कारजहु	,,	४७१	३८	करिउ बात न तन	६	३२५	३१२
करता कारन काल के	,,	५१७	४१	करि चख-चारु	३	६५४	१६७
करता कारन को लखै	,,	५८३	४३	करि मजेज सज सेज	७	५६६	३८६
करता कारन सार-पद	,,	४७४	३८	करियै तहँ पैसार जहँ	६	६३१	३३५
करता जानि न परत	,,	५०३	४०	करियै संग सखीनि	१	५३२	१५८
करता खुचि-सुर-सर	,,	२४७	२०	करियै सभा सुहावतौ	६	६२२	३३४
करता ही ते' करम	,,	५६०	४७	करियै सुख कौं होत	,,	३६	२८६
करति केलि अति प्रेम	३	३६८	१४७	करि सिंगार सखि लै	७	८६	३४६
करति मनोरथ बहु	,,	१५४	१२८	करि सिंगार सजि	५	६२१	२७६
करति रसोई बाल	,,	६६३	१६८	करी उदर दुर भरन	६	५६३	३३०
करतु जातु जेती	२	४५२	६५	करी बहुत अनुहार पै	७	६७३	३६४
करतु मजिन आछी	,,	३३४	८६	करी बिरह ऐसी तऊ	२	१४०	७१
कर धरि काँधै' कंत	३	४८	१२०	करु उठाइ धूँधडु	,,	४२४	६३
करन करत दिल	५	६२६	२७७	करुना उर मैं धारि	७	१३	३४४
कर परसत ससकत	७	५४	३४७	करुना कोर किसोर	,,	१५	३४४
कर परसत ससकत	,,	३७६	३७२	करै अनादर गुननि	६	४४६	३२१
कर परसत सिसकीन	,,	५२६	३८३	करै चाह सौ' चुटकि	२	५४२	१०२
कर बर पर गिरिबर धरे	३	३८५	१४६	करै न कबहूँ साहसी	,,	४१६	३१६
कर बिगरी सुधरै	६	२०६	३०२	करै बुराई सुख चाहै	,,	१४८	२६८
करबी मैं जौ ऊख	४	६३४	२२१	करौ कुवत जगु	,,	४२५	६३
करम कोस सँग लै	१	४२७	३४	करौ कोटि अपराध	३	६६५	१६८
करम खरी कर मोह	,,	५७१	४५	कलकंठी तो नाम	,,	५६८	१६०
करम मिटाए मिटत	,,	४३०	३४	कल-कल कलिका	,,	६०६	१६३
करम सुभासुभ मित्र	,,	६१६	४६	कल न परत कैहूँ	७	१७८	३५६
कर-मुँदरी की आरसी	२	६११	१०८	कल न परत जब तै	,,	६४१	३६२
कर लै चूमि चढ़ाइ	,,	६३५	१०६	कल न परत तलफत	,,	५६२	३८६
कर लै सूँधि सराहि	,,	६२४	१०६	कल न परत देखै	,,	४३८	३७६
कर समेटि कच भुज	,,	६८७	११३	कल न परत परजंक	,,	२८२	३६४
कर सरोज सौं गहि	३	४६३	१५५	कल न परति हहरति	,,	५८४	३८८

कलपद्रुम पल्लव भयौ ३ ६१३ १६४	कहत सुनत आदि १ ३३६ २७
कलप विरिछ को १ ३१७ २६	कहत सुनत समुक्त ,, ५५६ ४५
कलरव करि भुकि ५ ४८३ २६६	कहति आपुही बैन है ३ १७४ १३०
कलह करत नैहै करत ७ ५८३ ३८७	कहति न देवर की २ ८५ ६७
कलह न जानब छोट १ ७२६ ५८	कहति जलन आए न ५ ३०२ २५२
कलाकंद वतरान में ७ ४२८ ३७६	कहति सखी सों मुद ,, ५६६ २७५
कलित अली नभचर ५ ६८४ २८१	कहति साँच तू ३ १६८ १३२
कलित ललितई ,, ७२७ २८५	कहन सुनन चितवन ४ १०० १८०
कलित स्वेद-बिगलित ७ ५३६ ३८४	कहन हुतो सो कहि ५ ६५० २७६
कलुष भाव देखै जहाँ ६ १३४ २६७	कहनावत यह मैं ४ ४७५ २०६
कष्ट परे हूँ साधु जन ,, १६१ २६६	कहब सुनय समुक्तव १ ४१८ ३३
कसर न मुक्तमें कुछ ४ ५७६ २१७	कहवौ कलु करिवौ ६ ३८८ ३१६
कसै कंचुकी मैं दुवौ ७ १३२ ३५३	कह रंभा कह बरवसी ७ ७६ ३४८
कहँ तड़िता सुवरन ,, ३४२ ३६६	कहलाने एकत बसत २ ४८६ ६८
कहँ मिसरी कहँ जख ,, ७० ३४८	कहा करत देखत ७ ३६२ ३७०
कहत अवर समुक्त १ ३४२ २७	कहा करै आगम ६ ४६३ ३२५
कहत आन की आन ७ ५७१ ३८७	कहा करै कोऊ जतन ,, २१० ३०३
कहत और औरे करत ,, ६६१ ३६३	कहा कहै रखे बचन ३ ६७६ १६६
कहत काल किल १ ५७२ ४६	कहा करौं करत न ७ १५३ ३५४
कहत जो सौति ५ ५५४ २७१	कहा करौं परवस ३ ४७२ १५३
कहत तिहारो रूप ३ २५४ १३६	कहा कलानिधि ७ ६१ ३४७
कहत थकी ये चरन ५ ३७७ २५८	कहा कहैं कहत न ,, ६४३ ३६२
कहत नटत रीकत २ ३२ ६३	कहा कहैं तेहि तोहि १ ५४८ ४४
कहतव करतव सकल १ ५७ ४६	कहा कहैं विधि की ६ ६७३ ३३६
कहत बिबिध देखे ,, ३८२ ३१	कहा कहैं वाकी दसा ३ २३२ १३४
कहत बिबिध फल ,, ३५५ २८	कहा कहैं वाकी दसा २ ११० ६६
कहत रात कौ पेखनौ ७ ६६५ ३६४	कहा कहैं वाकी दसा ३ ५१७ १५६
कहत सकल घट १ ३६२ २६	कहा कुसुम कह २ ५१२ १००
कहत सबै कवि २ ११८ ७०	कहा छपावति सुगंध ३ १५१ १२८
कहत सबै बँदी दियै ,, ३२७ ८६	कहा छपैयतु लखि ७ ४८३ ३८०
कहत सु आवत लाज ७ १४५ ३५४	कहा जनावति चानुरी ३ ३०३ १४०

कहा दवागिनि कै	३	६५	१२२	कहुँ गावै नाचै कहुँ	४	६४	१७८
कहा परेखै करि रही	५	२४६	२४८	कहुँ नाचत गावत कहुँ	॥	६८	१७८
कहा बड़े छोटे कहा	६	६६८	३४०	कहुँ निसि मैं बसि	५	२१६	२४५
कहा भयो जग में	३	४१३	१४८	कहुँ ऐसी रतिवर	७	६६४	३६६
कहा भयौ जो वन भयौ	६	२५६	३०७	कहुँ अनादर पाय कै	६	४५७	३२२
कहा भयौ जौ तूँ भट्ट	३	४७४	१५३	कहुँ कहुँ गुन तैं	॥	४४७	३२१
कहा भयौ जौ नीच कौँ	४	४६३	३२२	कहुँ जाहु नाहिन	॥	३२	२८६
कहा भयौ जौ बीछुरे	२	५७	६५	कहुँ हाकिमी करत	४	४४	१७६
कहा भयौ जौ लखि	७	३२६	३६८	कहे कहा न कहा	५	३५७	२५६
कहा भयौ जौ सिर	४	६४१	२२२	कहे जु बचन बियोगिनी	२	५३७	१०२
कहा भयौ जौ सु ऋतु	३	५६७	१६०	कहे बचन पलटै नहीं	६	५८७	३३२
कहा भयौ तजि जात	॥	४३५	१५०	कहे मूढ़ की बात के	॥	३२८	३१२
कहा भयौ मतिराम	॥	४२	१२०	कहै अलप मति कौन	४	७०१	२२७
कहा भयौ मेरी हित	॥	३१२	१४१	कहै चीर के चोर सौँ	३	५३०	१५७
कहा सैनका उरबसी	७	३१०	३६६	कहै यहै स्तुति सुन्नित्यौ	२	४२६	६२
कहा रहै निहचिंत हूँ	३	५४८	१५६	कहौ कहा कहत न	७	१८४	३५७
कहा लड़ैते दग करे	२	१५४	७२	कहौ नैक समुझाइ	४	५१४	२१२
कहा लाज कुल कानि	३	३१६	१४१	कहौ एक सौ लखि	७	४३२	३७६
कहा लियौ गुरु मान	॥	६०१	१६३	कहौ न मानत हैं	॥	७२२	३६८
कहा लेहुगे खेल पै	२	४६	६४	काक सुता गृह ना	१	१६०	१३
कहा होय उद्यम किए	६	११	२८७	काक सुता सुत वा	॥	४६४	३७
कहा होत देखे सुने	१	५६२	४५	का केकी की काकली	५	३०६	२५२
कहा होति अति ही	३	५६१	१६२	काके पा गहि भा	॥	७४	२३४
कहि पठई जिय भावती	२	२५४	८०	काग आपनी चतुरई	४	६६६	२२४
कहियतु सो करियतु	७	५५०	३८५	का गद कागद में अरे	॥	५४३	२१४
कहि यह कौन दसा	५	४३२	२६२	कागद पर लिखत न	२	६०	६५
कहियै तासैं जो हित	६	३६३	३१७	काज बिगारतु आपनौ	६	६०५	३३३
कहियै पथिक सँदेस	४	५५३	२१५	काज बिगारतु और	॥	६०४	३३३
कहि लहि कौनु सकै	२	१३३	७१	काजर-रेख अशेष दग	७	४८	३४६
कही मान एँठति कहा	७	५४६	३८५	काननचारी चपल	५	४४३	२६३
कहुँ अवगुन सोइ	६	७२	२६२	कानन लग कै तैं हमैं	४	१८७	१८७



कानन लागे ही रहत ७	१७३	३५६	कारी सारी जिन पहिरि ५	५६६	२७२
कान्ह काज छत देत ३	४८१	१५४	कारी सारी सिर धरे ,,	२३८	२४७
कान्ह कान्ह दुख ७	४७७	३७६	कारे बरन डरावने २	५१५	१००
कान्ह कौन है कौन ,,	३६६	३७१	काल तोपची तुपक महि १	६८२	५४
का भाखा का संसकृत १	७४३	५६	काल पखेरु तैं सही ४	१६	१७४
काम कमान तनीकि ५	२१३	२४५	कालवूत दूती बिना २	३६६	६१
काम कामिनी तैं ७	१२१	३५२	काल बिबोकत ईस- १	६८७	५५
काम केलि सुंदर ,,	६२६	३६१	कालिंदी जल केलि में ७	४६०	३७८
काम क्रोध मद लोभ १	३८५	३१	कालि सकारे ही चलै ५	६६८	२८२
काम परै ही जानियै ६	२२७	३०४	कालि ससुर पुर कों ,,	१२०	२३८
काम समै पावै सु ,,	२०१	३०२	कासैं जात बखानि है ३	५७०	१६०
कामिनि कानन कान ५	६०८	२७५	काह भए बन बन फिरे १	३८६	३१
कामिनि दामिनि ३	२०५	१३२	काहि खोलि ए यह हरी ५	६८०	२८१
कामुक अंधियारी ५	१४५	२४०	काहि छला पहिराव री ,,	३१५	२५३
कायर नर को देख ६	३२०	३११	काहि पुकारो को सुनो ,,	४२२	२६१
कारज करत असाध ,,	१७६	३००	काहू कौ हँसियै नहीं ६	५७४	३३१
कारज जुग जानहु १	४८१	३८	काहू कियौ न कीजियै ,,	१६५	३०२
कारज जुग के जुगल ,,	६०६	४८	काहू बिधि हिमकर ५	४६७	२६५
कारज ताही को सरै ६	२६०	३०६	काहू सों नाहीं मिटै ६	२०४	३१०
कारज धीरै होतु है ,,	१८३	३०१	किए वृंद प्रस्ताव के ,,	२	२८७
कारज रत करता १	५२०	४२	कित चित गोरी जौ ५	६०	२३६
कारज सोई सुधरिहै ६	३७५	३१५	कितिक मदन को रूप ,,	१२४	२३८
कारज स्वारथ हित १	४६८	३७	किती न गोकुल कुल- २	६५२	१११
कारन करता है ,,	५०२	४०	किग हाइलु चित चाहू ,,	२१२	७७
कारन कारज जान ,,	४६६	३७	कियौ और को सब ३	३३२	१४२
कारन को कं जीव को ,,	२७७	२२	कियौ कंत चित चलन ,,	५७३	१६१
कारन चार बिचार ,,	३२४	२६	कियौ चिबुक उठाइ कै २	५१८	१००
कारन बिन कारज ६	३५६	३१४	कियौ प्यार मो पर ३	६१८	१६४
कारन बिन कारज नहीं ,,	३५६	३१४	कियौ भोग सपनै रमन ,,	६३६	१६६
कारन सबद सरूप है १	५२१	४२	कियौ मीत ने है उदौ ४	५८०	२१७
का रस में का रोष में ६	३४६	३१३	कियौ सबै जग काम २	४६५	६६

कियौ समुद मुनि यान ४ ५४० २१४	कुबजा मन टेढ़ी कियो ७ ३२३ ३६७
कियौ सयानी सखिनु २ ६५६ १११	कुल कुपुत्र किहिं काम ६ ५७२ ३३१
किसलै दल के बान जे ४ ३६३ २०३	कुल बल जैसो होय ,, ६५ २६४
किहि विधि जाऊँ बसत ५ ५७३ २७३	कुल मारग छोड़ै न ,, ६६ २६२
कीजे कह रस वस बसे ,, २७६ २५०	कुल सपूत जान्यो परै ,, ३४० ३१३
कीजै चित सोई तरे २ २२१ ७८	कुलिस धरम जुग अंत- १ २८१ २३
कीजै समझ न कीजिए ६ १७ २८८	कुसुम खेत कौ खेद ३ १५७ १२६
कीन्हें विदित सु मार ४ १०१ १८०	कुहू निसा तिथि पत्र ४ १७३ १८६
कीनै रँग रति राति मैं ७ ४२३ ३७५	कूकत अवघ लवा ,, ६३८ २२२
कीनै हूँ कोरिक जतन २ १८ ६२	कूप खनहि मंदिर १ ६५० ५२
कीनौ अति अनुराग ३ ५६३ १६२	कूर न होवै चतुर नर ६ २१५ ३०३
कीर सरिस बानी पढ़त १ ३८७ ३१	कूल कलिंदी नीप तर २ १ ३४३
कुंज कुंज विहरत ७ २१४ ३५६	कवनित बेनु मारुत ५ २८५ २५१
कुंज गई न बिथा गई ५ ४५४ २६४	केती हैं बरजति रहैं ,, ६०६ २७५
कुंजन अलि गुंजन लगे ७ ५६६ ३८८	केलिकुंज मग पाइ कै ७ १६७ ३५५
कुंजन प्रति गुंजत मधुप ,, ४५२ ३७७	केलि कलानि विना ५ ६५८ २७६
कुंजन लौं नव नलिन ,, ६२६ ३६१	केलि भवन को गवन ,, ५२५ २६६
कुंज भवनु तजि भवन २ ८४ ६७	केलि भौन की देहरी ३ २४० १३५
कुंज रूख दल सूख री ५ ६८८ २८२	केसर केसरि कुसुम के २ १६६ ७६
कुंद कुंद कलिका करौ ७ १३३ ३५३	केसर पूर कपूर सौ ७ ३४१ ३६६
कुंद न पावत रदन ३ ३४७ १४३	केसरि कै सरि क्यौं २ १०२ ६८
कुंद मघा की सखि ५ ५०२ २६७	केसी कंस सको नहीं ४ ४१८ २०५
कुंभ-करन कौ देखि ७ ३१५ ३६७	कैइक स्वांग बनाइ कै ,, १० १७३
कुच कठोर पाषाण तैं ३ ३७८ १४६	कै जुम्बिबो कै बूम्बिबो १ ६५७ ५२
कुच गिरि चढ़ि अति १ २६ ६३	कै तुव कान परी नहीं ७ २१ ३४४
कुच तैं श्रम-जल धार ३ १२० १२६	कै तोहि लागहि राम १ ११४ १०
कुचि रटि अटत बिमूढ़ १ ३७२ ३०	कै बरसै घन समय ,, ८२ ७
कुटिल अलक छुटि २ ४४२ ६५	कै ममता करु राम ,, ११३ १०
कुटिलाई तजि जानती ५ ६२५ २७७	कै रंभा कै उरबसी ७ ६७ ३४८
कुडँग कोपु तजि रँग २ ४०४ ६२	कै राखौ कर मैं छला ४ ४६६ २११
कुदरत चाकी भर रही ४ ६० १७७	कै बा आवत इहि २ ७०५ ११५

कै सम सों कै अधिक	६	६२०	३३४	कोटि विघ्न संकट	७	७०	६
कैसे मन धन लूटते	४	२०२	१८८	कोटि भानु-दुति दिपत	४	३७८	२०२
कैसे दयाऊँ हों इहाँ	३	२५६	१३६	कोटिन साधन के	१	५६३	४५
कैसे छोटे नरनु तैं	२	१३१	७१	को न जिआए जगत	११	८७	७
कैसे निवहै निबल जन	६	१६	२८८	को नहिँ सेवत आइ	११	३५४	२८
कैसे हू छूटत नहीं	११	२१६	३०३	कोमल कमलनि से	३	४०१	१४७
कै हरौल अगमन	७	२००	३५८	कोमल किसलय दलनि	४	११२	१८१
को अवराधे जोग तुव	४	३६२	२०१	कोमल तन धन मालती	७	४६२	३८०
को इनकी छवि कहि	७	५७२	३८७	कोरि जतन करि करि	५	२६	२३१
कोउ बिन देखे बिन	६	६३	२६४	कोरि जतन कीजै तज	२	३६७	६१
कोपनि तैं किसलय	३	२०४	१३२	कोरि जतन कोऊ करौ	११	६६७	११२
कोऊ करौ अनेक यह	११	२६०	१३७	कोलत काठ कठोर	४	६५४	२२३
कोऊ कहै न जानियै	६	४७७	३२३	को संकर गुरु बाग घर	१	२७३	२२
कोऊ काहूँ कौ बुरौ	११	२०६	३०३	कोस अलंकृत संधि	११	३०३	२४
कोऊ कोरिक खोरि	५	१४१	२३६	को सुख को दुख देत	६	३१६	३११
कोऊ कोरिक संग्रहौ	२	६१	६८	कोह द्रोह अब मूल है	१	२१२	१७
कोऊ दूरि न करि सकै	६	३०५	३१०	को हरि बाहन जलधि	३	४४३	१५१
कोऊ बन कोऊ बिपिन	७	१६०	३५७	को हित संत अहित	१	२६१	२३
कोऊ है हित की कहै	६	१२६	२६७	कौंहर सी एड़ीनु की	२	४४	६४
कोऊ कला सी केलि	५	५४६	२७१	कौड़ा आसूँ बूँद कसि	७	२३०	७८
को कब लों सिख देय	११	२३	२३०	कौतुक जो है राम को	५	३२०	२५३
को करि सकै बड़न	६	२६२	३०७	कौन कहै बलि अमल	११	४७६	२६५
को कहि जारे लेय री	५	५०३	२६७	कौन जाति सीता सती	१	२७२	२२
को कहि सकै बड़नु	२	४३१	६४	कौन वसत हैं कौन मैं	३	२११	१३३
को चाहे अपनेो तज	६	१३०	२६७	कौन भाँति कै बरनियै	११	५८६	१७०
को छूट्यो इहिँ जाल	२	६७१	११२	कौन भाँति रहिहै	२	३१	६३
को जानै ह्वै है कहा	११	१५०	७२	कौन रीकवायै सकै	४	७३	१७८
कोटि कोटि मतिराम	३	७०	१२२	कौन सुनै कासों कहैं	२	६३	६५
कोटि घटन मैं बिदित	४	४६	१७६	कौनि अंधेरी राति मैं	५	६४६	२७६
कोटि जतन कोऊ करै	२	३४१	८७	कौरव पांडव जानिबो	१	७३०	५८
कोटि जतन करि करि	७	५५४	३८५	क्यों करिए प्रापति अलप	२५०	३०६	

क्यों कीजै ऐसो जतन	६ १८६ ३०१	खल नर गुन मानै	१ ६२७ ५०
क्यों न अँगारे देत रे	५ ५६२ २७२	खल निज दोष न	६ ४७८ ३२३
क्यों न एक मन होत	॥ १०५ २३७	खल बंचत नर सुजन	॥ १६३ २६६
क्यों नख छत छवि	७ ६८ ३४८	खल वचननि की मधुरई	३ ४३० १५०
क्यों न फिरै सब जगत	३ २३८ १३५	खल बढ़ई बल करि	२ ४४४ ६५
क्यों बसियै क्यों निबहियै	४०७ ६२	खल सज्जन सूचीन के	६ ५१६ ३२७
क्यों हूँ काटे कटत	७ १६२ ३५७	खलित वचन अध-	२ ६५३ १११
क्यों जितिए कहिए	५ २८७ २५१	खाटे फल आवैं धरे	३ ३०७ १४०
क्यों न रसीले होहि	४ ३२५ १६८	खाय न खचै सूम धन	६ ४७५ ३२३
क्यों न लहै सुख भोग	३ ४६२ १५४	खाली तजि पूरन पुरुष	॥ ५१६ ३२६
क्यों सहिहै सुकुमारि	॥ २८३ १३८	खिंचै मान अपराध हूँ	२ ६४६ १११
क्यों हूँ सहबात न	२ ३०६ ८४	खिन खिन मैं खटकति	॥ २८२ ७६
चमा खड़ग लीने रहै	६ ५३१ ३२७	खिन मैं प्रफुलित होत	३ २२५ १३४
<b>ख</b>		खींचि किनारा कल	५ २६६ २४६
खंजन कंजन मीन से	७ १६१ ३५७	खेत तिहारौ धान कौ	३ ३२७ १४२
खंजन कंजन सरि लहैं	५ २६२ २५१	खेलत खेल सखीनि मैं	॥ ५७ १२१
खंजन कमल चकोर	३ ११८ १२६	खेलत चोर मिहीचिनी	३ ५६ १२१
खंजन छवि गंजन सु ए	७ १६३ ३५७	खेलत बालक व्याल	१ १११ ६
खंजन सरि करि क्यों	॥ १८६ ३५७	खेलत मार सिकार है	३ ३३ ११६
खग मृग मीन पुनीत	१ ७१८ ५७	खेलन के मिसि संग की	७ ७१३ ३६७
खटकी चित भटकी	७ ४४२ ३७७	खेलन सिखए अलि	२ ४५ ६४
खरचत खाति न जातु	६ ६१० ३३४	खैचे अंकुस लाज के	४ २६१ १६३
खरब आतमा बोध बर	१ ५७६ ४६	खोर खोर सब देत हैं	॥ १५७ १८५
खरी दुपहरी जेठ की	७ ६२४ ३६१	खौरि पनिच भृकुटी	२ १०४ ६६
खरी दूबरी सेज मैं	३ २२६ १३४	ख्यात सुअन तिहुँ	१ ५३४ ४३
खरी निदाघी दुपहरी	५ ६५४ २७६	<b>ग</b>	
खरी पातरी कान की	२ १४ ६२	गंग नीर बिधु रुचि	३ ४२६ १५०
खरी लसति गोरैं गरैं	॥ ४४० ६४	गंग प्रगट जिहि चरन	४ ६८४ २२५
खरैं अदब इठलाहटी	॥ ३६० ८८	गंगा जमुना सुरसती	१ ६३ ८
खल उपकार बिकार	१ ६७० ५३	गंधन मूल उपाधि बहु	॥ ४६० ३६
खल जन सों कहियै	६ १४१ २६७	गंधबाह सीरे करैं	५ ५७४ २७३

गंध विभावरी नीर रस १	६२२	४२	गहत चहत नहि	७	५१६	३८२
गंध सीत अपि उष्णता,	४६१	३७	गहत तत्त्व ज्ञानी	६	६६५	३३८
गई छबीली छूटि वह ३	२३४	१३५	गहति हाथ लखि	५	६८	२३६
गई दावरी बावरी ५	४६४	२६४	गहिणु ओट दड़ैन की	६	३०६	३१०
गई ललाई अधर तें ,,	२८४	२५०	गहि कोमलता सरसता	३	१८४	१३१
गण पलट आवे नहीं १	४०८	३३	गहि बरुनी घरछी	५	१५६	२४१
गमन घाटिका सौंचहीं ,,	३६६	२६	गहिली गरबु न	२	३१३	८५
गगन लता तें बलित ,,	३०६	२५२	गहि सु-बेल बिरलह	१	३३३	२७
गजगत मैं घर प्रथम ४	५६७	२१६	गही गुसा चितवत	७	५४५	३८५
गजराजनि के सीस ५	५८८	२७४	गहु उफार बिबिचार	१	७११	५६
गड़ी कुटुम की भीर २	५६८	१०७	गहै न नेकौ गुन गरबु	२	३७७	६०
गढ़े नुकीले लाल के ५	२७१	२४६	गहौ मौन धीरज धरौ	७	६५६	३६२
गढ़ रचना बरुनी २	३१६	८५	गह्यौ श्रवोक्षौ बोलि	२	५६१	१०६
गढ़ि गढ़ि जो छबि के ४	३१८	१६७	गह्यौ ग्राह गज जिहि	४	६६२	२२६
गति गयंद कटि केहरी ७	६६	३४८	गाइन अति भाइत	७	५२१	३८३
गदराने तन गोरदी २	६३	६८	गाढ़ैं ठाढ़ैं कुचनु ठिलि	२	४६२	६६
गनती गनबे तैं रहै ,,	२७५	८२	गात गुराई मिलत पट	७	१११	३५१
गमन सिहारौ सुनि ७	६४४	३६२	गात गुराई हेम की ,,	५३४	३८४	
गमन सुनत धन तन ५	३४६	२५५	गाहक सबै सपूत के	६	३०८	३१०
गयौ महावर छूटि यह ३	५५२	१५६	गिनति न मेरे अघन	४	६८८	२२६
गरक गुलाब बसीर ७	२४५	३६१	गिरत अंड संपुट	१	१५८	१३
गरजन मैं पुनि आयु ४	६३	१७७	गिरघर लियौ छिपाइ	४	५०२	१२१
गरज भरे बिलसत ५	६००	२७५	गिरिजा-पति कल	१	२४८	२०
गहै परत गहत न ७	१३४	३५३	गिरि तैं ऊँचे रसिक	२	२५१	८०
गर्व अहारी हरि सही ६	६६१	३४०	गिरै कंपि कछु कछु ,,	६३३	१०६	
गली अंधेरी सांकरी ७	२५३	८०	गुंजहार वर मैं पहिरि	७	५००	३८१
गली सांकरी हेरि री ५	४२५	२६१	गुन औगुन कौतन	३	४३	१२०
गवन करत रत तौलनौ ७	३४७	३६६	गुन खोवत ह्यौ	४	५२८	२१३
गसे परसपर कुच घने ,,	३०७	३६६	गुन गत नाना भाति	१	१६३	१६
गहकि गौसु औरे गहे २	६५	६६	गुन गरुतो लघुता	६	६६६	३४०
गहत अरुन कत होत ५	२१७	२४५	गुन ते संग्रह सब ,,	२७७	३०८	

गुन तैं अवगुन होतु	६	६५१	३३७	गोधन गज-धन बाजि-	१	३७१	३०
गुन प्रगतै अवगुन दुरै	,,	६८१	३३६	गोधन तूँ हरख्यौ हियैं	२	६६६	११४
गुनवारौ संपति लहै	,,	२६१	३०७	गोप अथाहुतु तैं उठै	,,	१७६	७४
गुन सनेह जुत होतु	,,	४३८	३२०	गोप लली को लखि	५	६६३	२८०
गुन ही तऊ मनाइयै	,,	१४	२८८	गोपिन कैँ अँसुवनु	२	२६३	८३
गुनी गुनी सबकैँ कहैं	२	३५१	८८	गोपिन सँग निसि	,,	२६१	८३
गुनी तऊ अवसर	६	१६८	३०२	गोपो जो तुहिँ प्रेम	४	५०६	२१२
गुनी होय अम कष्ट	,,	५५४	३२३	गोवरधन नख घर	,,	५१५	२१२
गुर वतंग सुर सहित	५	३००	२५२	गोरी की रोरी लसत	७	३४	३४५
गुरजन दुरजन में	,,	४३६	२६२	गोरी गदकारी परै	२	७०८	११५
गुरु करिवो सिद्धांत	१	५४०	४३	गोरी द्विगुनी नखु	,,	३३८	८७
गुरु कहतब समुझै	,,	१८३	१५	गोरे गोल कपोल पर	७	१२५	३५२
गुरुजन डर सौं चतुरई	४	२८३	१६४	गोरे मुख चूनर हरी	,,	५६	३४७
गुरु जन दूजै व्याह	३	६	११७	गोली बरन सु-मंत्र	१	६६७	५५
गुरुजन नैन बिजातियन	४	२२६	१६०	गौन आई नवल तिय	७	७६	३४६
गुरु जन में मूँदे बदन	५	३७०	२५७	गौने की चरचा चलै	३	१६५	१३२
गुरुता लघुता पुरुष की	६	२८	२८६	ग्यान गरीबी गुरु	१	१२३	१०
गुरु ते आवत ग्यान	१	१६६	१६	ग्यान बिरागऽह भगति,	,,	१७	२
गुरु बच जोग अजोग	६	६६७	३३८	आसत चित्त-गयंद	४	५३१	२१३
गुरुमुख पढ़्यौ न	,,	५२६	३२७	ओषम बासर बिरह	,,	५२५	२१३
गुरु हूँ सिखवै ज्ञान	,,	२६४	३०७	ओषम रितु में देखि	३	२५०	१३५
गुल गुलाब अरु कमल	४	६६८	२२४	ओषम हूँ रबि तपत	,,	२२६	१३४
गुल लाची के फूल की	७	३०६	३६५	ओषम हूँ रितु में	,,	६१	१२१
गुलफनि लो ज्यों ल्यों	५	३४६	२५५	ग़ालिनि देव बताइ	,,	४४१	१५१
गूढ़ मंत्र गरुवे बिना	६	५३७	३२८				
गूढ़ मंत्र जौ लौ रहै	,,	५३६	३२८				
गृह सुंदरि पुनि	१	३१६	२६				
गैना नैना लाल के	४	२८०	१६४				
गोंड गवार् नृपाल	१	६८१	५४				
गोए गोयन जाहि सौं	५	६१२	२७६				
गोकुल में कुल की	७	१६६	३५५				

घ

घट जाती संयोग में	४	५३३	२१४
घटत नहीं कैहूँ कहूँ	७	२८०	३६४
घटत नहीं कैहूँ कहूँ	२	७३३	३६६
घट बढ़ इन में कौन	४	४६१	२१०
घटति बढ़ति संपति	६	१२२	२६६
घट भीतर जो बसत	४	७६	१७८

घट ल्याई डटि पीत ५	५६	२३३	चंचल समुद तुरंग हैं ७	२०४	३५८
घट घहराय घरी घरी ,,	२२	२३०	चंचल सहितऽरु चंचला १	२५४	२१
घन घेरा छुटि गौ २	४८५	६८	चंदकला कै चंचला ५	५५८	२७२
घन घेरे को मिलन ६	६७४	३३८	चंद-किरनि लागि ३	५२	१२१
घन घेरे नेरे रहत ७	६०७	३८६	चंदन कीच चढ़ायहुँ ५	३६५	२५७
घन सुंदर तो छुबि ३	५२३	१५७	चंदन की चौकी चढ़ी ७	११२	३५१
घनस्यामहि लहि ५	३४०	२५५	चंदन चूर कपूर घसि ,,	५६०	३८६
घर आवत पिय सुघर ७	४२७	३७५	चंद मरीची सी अरी ५	११६	२३८
घर कीन्हे घर होत है १	११८	१०	चंद-मुखी अति चंद ७	६६	३४८
घर घर तुरकिनि २	७१२	११५	चंद-मुखी मुखचंद ,,	६०६	३८६
घर हरि धरि घर ५	३४८	२५५	चंद सूर जाके हुकुम ,,	१४	३४४
घरहाइन की घेरु मैं ,,	४६३	२६३	चंदहार चंपाकली ५	४८६	२६६
घरहाइन की घेरहुँ ,,	२६५	२४१	चंद्र अनल नहिँ है १	३१३	२५
घरहाइन चरचै चलै ,,	४१४	२६०	चंद्रक चंदन घरफ ७	२४८	३६२
घर हू तैं निरसक ७	४८१	३८०	चंद्र देत अमि लेत १	४५१	३६
घरी बजी घरियार सुन ४	३१	१७५	चंद्र रमनि भञ्ज गुन- ,,	२६२	२१
घरु घरु डोलत दीन २	१५१	७२	चंपक केसरि आदि दै ५	२३१	२४६
घसि चंदन चंद्रक ७	२४६	३६२	चंपक मैं नहिँ चंद ,,	२६०	२४६
घाटौ अवनि अकास ,,	३१७	३६७	चकी जकी सी हैं रही २	६३६	११०
घाम घरीक निवारियै २	१२७	७०	चख खींचे नीचे चहो ५	६६३	२८२
घिरि आए चहुँ ओर ५	२४४	२४७	चटक चटकतानन ७	५२०	३८३
घूँघट पट की ओट दै ७	६८६	३६५	चटक न छुँड़तु घटत २	६६८	११२
घूँघट पट की ओट ,,	४४६	३७७	चटक भई दुति दूनरी ५	३१७	२५३
घेरु सखी जन लखि ५	६३३	२७७	चटकि चटकि चहुँ ७	१०१	३५०
घैर मथन सुनियत रहै ४	३७१	२०१	चढ़त न चातक चित १	८३	७
<b>च</b>			चढ़त सुन्यौ नहिँ ३	६३३	१६५
चंचल चोखे चपल ७	१६४	३५८	चढ़ी अटा छन छटा ७	२५३	३६२
चंचलता तो चखन ३	२०१	१३२	चढ़ी अटा देखति घटा ,,	४७४	३७६
चंचलता वे चखन ५	५२३	२६६	चढ़ी अटारी बाम वह ३	६४३	१६६
चंचल तिय भञ्ज प्रथम १	२८०	२३	चढ़ी रहै प्रति दिन ,,	१५०	१२८
चंचल निसि उदवसि ३	३५८	१४४	चढ़े उरोज पहार ए ,,	३७७	१४६

चढ़े पयोधर कों चितै	५ ७१६ २८४	चलनि भली बोलनि	५ ३०१ २५२
चढ़े बधूरहि चंग ज्यों	१ ७३६ ५८	चलव नीति-भग राम-	१ ५४ ५
चतुर कूर इक से गनै	६ २१४ ३०३	चलहु सिंगार कहा	५ ४६१ २६६
चतुर चितेरे तुव सबी	४ ३५१ २००	चलिए पैंडे साँच के	६ ५३५ ३२८
चतुर चितेरे पानि को	५ २८३ २५०	चलिगो कुंकुम गात तैं	१०४ २३७
चतुर सभा में कूर नर	६ २३१ ३०४	चलित ललित स्रम-	२ ४०३ ६२
चतुराई चूल्हे परे	१ ४८ ४	चलि देखौ दुति	७ ६२५ ३६१
चतुराई लिंक चपलाई	५ ६६१ २७६	चलि बल अब न	,, ६१८ ३६०
चप चप करती ना रहै	६ ३५० ३१४	चलि सुकेलि घर घन	५ १६३ २४३
चपति चंपला की चमक	५ १७३ २४२	चली कामिनी जामिनी,,	४३ २३२
चपल चलाकन सों	७ १६७ ३५८	चली सहेट निकुंज कौं	३ ४६७ १५३
चपल चित बेध्यो निरलि	३ ६८ १२२	चले पिया न अटक	५ ७२१ २८४
चप स्नेयस-स्वर-सहित	१ २८६ २३	चलै जु पंथ पिपीलिका	६ ११ ३३४
चमक तमक हाँसी	२ ७६ ६६	चलौ चलै छुटि जाइगोर	५३६ १०२
चमचमात चंचल नयन	,, ५७६ १०५	चलौ छबीली हित	७ ६०८ ३८६
चरन चंगु-गत चातकहि	१ १०३ ६	चलौ लाल उहि बाग	३ २३१ १३४
चरचि चवाइन कहति	७ ६६३ ३६४	चलौ लाल वह बाल	७ ६११ ३६०
चल आयौ जैहै चलौ	४ ६२३ २२१	चल्यौ जाइ ह्यौ को	२ ४३६ ६४
चलत देत आभार सुनि	७ ५५१ १०३	चसमन चसमा प्रेम	४ ४०३ २०४
चलत चलत लौं लै	,, १७२ ७४	चहल पहल औरे परे	६ ३४५ ३१३
चलत पाइ निगुनी	,, १५६ ७३	चहुँकित चकित चितै	५ ६६६ २८२
चलत पीय परदेस कौं	३ २८७ १३६	चहुँकित चितवै चित	,, ४३६ २६२
चलत लाल कै मैं	,, १४६ १२८	चहुँ दिसि सौं सह-	,, २६१ २४६
चलत सदन तैं सखि	५ ४२३ २६१	चाखन की ता छनि	,, ७२० २८४
चलत सुन्यौ परदेस	३ १६१ १३१	चातक घन तजि	१ ६७ ८
चलतु घैर घर घर तक	२ ४६० ६६	चातक जीवन जलद	,, ७४ ६
चलन कहत नाहीं	७ ६१७ ३६०	चातक सुतहि सिखाव	,, १०० ८
चलन न पावत निगम	२ ८७ ६७	चात्रक मुख मूँदत	७ २५५-३६२
चलन लगी अँखिर्या	३ २०७ १३३	चामीकर चौकी रुचिर	५ ४८१ २६६
चल न सकत उतही	७ १७१ ३५६	चामीकर भूपन अमित	१ ५०६ ४१
चल न सकै निज ठौर	४ ६८१ २२५	चार जाम दिन के	४ ६५८ २२३



चार चांदनी चैत की	५ ६२६ २७७
चार चाहि गोपाल के	७ २६२ ३६५
चार भए भरि भार कुच	५ १५१ २४०
चारो चौदह अष्ट-दस	१ ६१४ ४६
चाले की बातें चलों	२ १३४ ७१
चाह किए दुखिया	१ ५६५ ४५
चाहत फल तेरी	३ ५४६ १५६
चाह तिहारी आप तें	१ ३६८ २६
चाह तिहारी आह सों	५ ५३१ २६६
चाह बनी जौ लागि	१ ५६४ ४५
चाह भरीं अति रस	२ ६२२ १०८
चाहसि सुख जेहि मारि	१ २११ १७
चाहि चाहि चित नाह	७ ३७८ ३७२
चित इक हित बहु	४ ४६५ २०८
चितई ललचौहैं चखनु	२ १२ ६२
चित चंचल जग कहत	५ ६१ २३३
चित चाहन जिहि मुख	४ ६५६ २२३
चित चिहुँटे मग पायगो	५ ८५ २३५
चित दै दियौ बिसार	४ १२ १७४
चित पित-मारक जोगु	२ ५७५ १०५
चित बित नेहिन के जहाँ	४ ४७० २०६
चित रत बित व्यवहार	१ ५७८ ४६
चितवत घूँघट ओट हैं	७ ६४२ ३६२
चितवत जितवत हित	२ ५१७ १००
चितवनि कुच परिंभ	३ ६५५ १६७
चितवनि भोरे आह की	२ ३०५ ८४
चितवनि रुखे दगनि	॥ २६ ३३
चितवै चित आनंद मरि	५ २७७ २५०
चित तरसतु मिलत न	२ २६२ ८१
चितु दै देखि चकोर	॥ ५४७ १०२
चितु बितु वचतु न	॥ १७४ ७४

चित्रन इत उत चटपटे	३ ५१० १५६
चित्रमानु जे करत हैं	५ ४०० २५६
चित्र लिखी मूरत लखी	७ १४१ ३५३
चित्रहु में सखि जाहि	३ २६७ १३६
चिदानंद घट में बसै	६ ६१६ ३३४
चिरजीवी तनहुँ तजै	॥ ४६६ ३२२
चिरजीवी जोरी जुँरै	२ ६७७ ११३
चिलक चितकई चटक	, १६६ ७६
चीर सुरैलन भीर मग	७ ६२१ ३६०
चुंयक आहन रीति	१ ४२३ ३४
चुनि चितवनि चारा	५ ५८४ २७४
चुनरी स्याम सतार	२ ३२६ ८६
चुवति स्वेद मकरंद	॥ ३६० ६१
चूक समै न विचारि तूँ	५ ३८१ २५८
चेतन होइ न एक सुर	४ ६३७ २२२
चैत घँसी जलधार में	५ ४६८ २६७
चोर चतुर बटपार नट	१ ६८० ५४
चोरा चोरी प्रीति के	६ ६६० ३३७
चोरी कर होरी धरत	७ २३६ ३६१
चैतिस के प्रस्तार में	१ ३१० २५
चैसठि कला विलास-	३ ३६ ११६
चौज चवाहन के रचत	७ १५१ ३५४
चौथी संख्या जीव की	१ १७२ १४
चौदह चारि अठारहो	॥ ३१५ २५

छ

छकि रसाल सौरभ सने	२ ४६६ ६६
छकी अछेह उछाह मद	५ ५४५ २७१
छके रूप-मद-पान के	४ १३२ १८३
छतौ नेहु कागर हियै	२ ४५७ ६६
छत्र मुकुट सब बिधि	१ १५१ १२
छतक दर्ई मारी अरी	५ ६३० २७७

छन परभा के छलरही ५ ५५६ २७२  
 छन बिछुरन चित चैन ,, ६७ २३४  
 छन वितवत जुग कोटि ७ १२६ ३५२  
 छपे छपाकर चलि चहौ ५ ६७८ २८१  
 छपै छपाएँ अब नहीं ३ ३५ ११६  
 छवि तावन यह तिल ४ १०७ १८१  
 छवि धन है नँदलाल ,, ३६७ २०१  
 छवि धन पैयत अमित ,, १७७ १८३  
 छवि बन में दौरन ,, ३३६ १६६  
 छवि-मुकता लूटन लगे ४ ६१६ २२०  
 छवि सागर नागर ७ ५१७ ३८२  
 छवि सागर सागर गुननि, ४७७ ३७६  
 छमा छमा सी अनुहरत ,, ३४६ ३६६  
 छमा छमा सी छवि छनी ५ ५२७ २६६  
 छमा बिमल बारानसी १ ४०५ ३२  
 छयौ अतन अति सकल ७ ३७६ ३७२  
 छरी सपल्लव लाल-कर ३ २५२ १३६  
 छल बल धर्म अधर्म ६ ३०७ ३१०  
 छल बल समय बिचारि ,, २२६ ३०४  
 छल सौं छपि छतिया ७ ४४५ ३७७  
 छला छवीले लाल कौ २ १२३ ७०  
 छला परोसिन हाथ तैं ,, ३७६ ६०  
 छवा छुवे छहरत भली ५ ६४४ २७८  
 छाँड़ि सबल अरु निबल ६ २४२ ३०५  
 छाँह बिना ज्यों जेठ रवि ३ ६६८ १६८  
 छाती कुच कुंकुमनि की ,, ३८७ १४६  
 छाप तरौना नगनि की ,, १४२ १२८  
 छाया रही सखि विरह ५ १० २२६  
 छार अँगारनि परत हैं ,, ११८ २३८  
 छाले परिवे कैँ डरनु २ ४८३ ६८  
 छिनकु उधारति छिनु ,, ६६५ ११२

छिनकु चलति ठठुकति २ ३८४ ६०  
 छिनकु छवीले लाल ,, ५०४ ६६  
 छिन बिहँसति छिन ७ ३६० ३७३  
 छिन भर बिन प्रीतम् ४ ५१८ २१२  
 छिपै छिपाकर छिति २ ५८० १०५  
 छिप्यौ छवीलौ मुँहु लसै ,, ५३८ १०२  
 छिरके नाह नवोढ़ दग ,, १५३ ७२  
 छीनी तार मुरार सी ५ १६४ २४४  
 छुटत मुठिन सँग ही २ ३५२ ८८  
 छुटत लरकई तरुनई ७ ३५३ ३७०  
 छुटत लाज भय अतन ,, ३५५ ३७०  
 छुटन न पैयतु छिनकु २ ३२५ ८६  
 छुटी न सिधुता की ,, ७० ६६  
 छूटे छुटावत जगत तैं ,, ५७३ १०५  
 छुटै न लाज न लालचौ ,, ५२४ १०१  
 छुवत परस्पर हेरि कैँ ३ ११७ १२६  
 छूटे दग गज मीत के ४ २११ १८१  
 छेम धरन करतार कर १ ४७३ ३८  
 छैल छवीली की छटा ५ २४७ २४८  
 छैल छवीली छाँह सी ,, २६३ २५१  
 छोटे अरि कौं साधियै ६ ५०६ ३२६  
 छोटे अरि पर चढ़त हूँ ,, २७६ ३०८  
 छोटे नर कौं बड़ेन सौं ,, ४२१ ३१६  
 छोटे नर तैं रहत है ,, २०३ ३०२  
 छोटे मन में आइहै ,, ३८० ३१६  
 छोड़ि नेह नँदलाल कौ ३ ६२२ १६४  
 छ्वै छिगुनी छल सो ७ ४४४ ३७६  
 छ्वै छिगुनी पहुँची २ १५६ ७३

ज

जंघ जुगल लोहन निरे ,, २१० ७७  
 जक किए रुख रुखो ५ ५५२ २७१

जऊ सौंह नखखत भरे ५ ५६ २३३	जदपि चवाहनु चीकनीर ३३६ ८६
जग जोहन ही के लिये ,, ४६६ २६५	जदपि जतन करि मन ५ १७८ २४२
जगत जगौही जेब जुत ७ ३६३ ३७१	जदपि तेज रौहाल २ १४५ ७२
जगत जननि श्रीजानकी १ ६ १	जदपि नाहि नाहीं ,, ३२४ ८६
जगत जवाहिर जेब-जुत ७ ११६ ३५२	जदपि भयौ है ससि ४ ५०७ २१२
जगत बहुत जन तदपि ६ ४७३ ३२३	जदपि रहौ है भावतौ ,, ७२ १७८
जग तरबर तैं फल लगौ ४ ६२० २२०	जदपि लौंग ललितौ २ ६८५ १११
जगति जगति दोऊ ३ ६६६ १७०	जदपि सखी के संग ७ ३७३ ३७३
जगतु जनायौ जिहि २ ४१ ६४	जदपि सहोदर होय ६ २११ ३०३
जग ते' रहु छतीस हूँ १ २२० १८	जदपि सु कोल्हू में ४ ६३५ २२१
जग परतीति बढ़ाह्यै ६ ५७६ ३३१	जदपि सु गहिरी ,, ५७६ २१७
जगमगात पग धरत तूँ ७ १३५ ३५३	जद्यपि अवनि अनेक १ १६७ १६
जगमगात है होन को ५ ३०७ २५२	जद्यपि सुंदर सुघर २ ६५८ १११
जगौ जेन्ह की जोति ३ १८७ १३१	जनक-सुता दस-जान १ २१४ १७
जज्यौँ उम्ककि क्कापति २ ५०३ ६६	जनमु जलधि पानिपु २ ३६६ ६०
जटित जवाहिर आभरन ७ ३६८ ३७३	जन्मत ही पावै नहीं ६ ५६२ ३३२
जटित जवाहिर आभरन,, ५६८ ३८६	जपत एक हरि नाम ,, ६८६ ३४०
जटित जवाहिर तन ,, १०७ ३५१	जप माला छाप २ १४१ ७१
जटिल नीलमनि जग- २ १४३ ७२	जब कब पाइ अंगनवाँ ७ २२५ ३६०
जड़ मोहन-बरनाहि १ २३६ १६	जब जब चढ़ति अटान ३ ११६ १२६
जतन अनूपम जानु ,, ४१६ ३४	जब जब तेरी बालकैं ,, ६७३ १६८
जत समान-तत जान ,, २५ ३	जब जब निकसत ४ २५१ १६२
जथा अमल पावन ,, ६८८ ५५	जब जब वह ससि ,, १७२ १८६
जथा एक कहँ बेद गुन ,, ४६६ ४०	जब जब वै सुधि २ ६२ ६५
जथा जोग सब मिलत ६ ७०४ ३४१	जब जान्यौ या जीव ७ ७३७ ३६६
जथा धरनि सब बीज १ १६७ १४	जब तन दीप्यौ दीप ५ १५५ २४१
जथा प्रतच्छु सरूप ,, ४२५ ३४	जब तें तेरे कुच रुचिर ,, ३६४ २५७
जथा लाभ संतोख- ,, ५५६ ४४	जब तें पीछे छिपि ,, २६० २५१
जथा सकल अप जात ,, ४७६ ३४	जब तें मिलि बरुनीनि ३ १३३ १२७
जदपि अकरनी है ४ ७०० २२७	जब तें सुनी अंग सी ५ ५४७ २७१
जदपि आपनौ होय ६ १६६ ३०२	जब तें हँसि वह साँवरो,, ३६७ २५७

जब तैं न्हान गई तई ५	२६१	२५१	जसु अपजसु देखत २	१५७	७३
जब तैं दीन्हों है इन्हें ४	१०८	१८१	जसुमति या ब्रज मैं ४	३४२	२०३
जब तैं नागर मन ॥	२१८	१८६	जहँ उपजै सोई करै ६	६७६	३३६
जब तैं रुख रुखो कियो ७	७०६	३६७	जहँ जहँ डोल हरे हरे ५	३५३	२५६
जब तैं वह सिर पढ़ि ४	२३०	१६०	जहँ जहँ सहज सुभाव ७	१२४	३५२
जब तैं हरी लख्यो ५	४६३	२६७	जहँ तहँ सजन मिलै ६	५२६	३२७
जब देखौ चाहियै तुम्हें ४	६६१	२२३	जहँ ते जो आएव सो १	१८६	१५
जब देखौ तब भलन ॥	८६	१७६	जहँ देखौ सुत-पद ॥	५३३	४३
जब मन महुँ ठहराहु १	५८७	४७	जहँ लागि जन देखव ॥	६१७	४६
जब लग काँचे घट ४	५३२	२१४	जहँ लागि संज्ञा बरन- ॥	५४५	४३
जब लग हिय दरपन ॥	१८१	१८७	जहाँ चतुर नाहिन ६	२५२	३०६
जब लगि जाय बराय ५	५१६	२६६	जहाँ जहाँ ठाढ़ी लख्यौ २	१८५	७५
जब वाके रद की ॥	५८६	२७४	जहाँ जहाँ नागरि ७	१०३	३५१
जब ही जड़ हुह जात ४	५०२	२१२	जहाँ जहाँ सरसिज ॥	२०६	३५६
जम-करि मुँह तरहरि २	२१	६२	जहाँ तहाँ रितुराज मैं ३	६६	१२४
जमुना तट घट भरि ५	७६	२३५	जहाँ तोख तहँ राम १	३७०	३०
जमुना तट नट नागरै ॥	२१	२३०	जहाँ दुपहरी मैं रही ५	२५४	२४८
जमुना तट वा कुंज ३	४६६	१५३	जहाँ रहत तहँ सह १	४३६	३५
जमुना तीर बलीन पै ५	७१७	२८४	जहाँ रहत बरनत ॥	५१४	४१
जरतारी मुख पै सरस ७	३१	३४५	जहाँ रहै गुनवंत नर ६	५१५	३२६
जरतारी सारी ढके ३	४८०	१५४	जहाँ राम तहँ काम १	४४	४
जरद भई तिय हरद- ॥	२५१	१३६	जहाँ सजन तहँ प्रीति ६	५५२	३२६
जरी कोर गोर बदन २	३०४	८४	जहाँ सनेही तहँ रहत ॥	६५६	३३७
जलकन तिलकन ४	६०७	२१६	जा काहु कौ देत प्रभु ४	४२४	२०५
जलचर थलचर ७	८०	३४६	जाकी ओर न जाइयै ६	६६	२६४
जल थल तन गत है १	५१८	४१	जाकी प्रापति होय सो ॥	५१८	३२६
जलद स्याम निज ३	१७६	१३०	जाके उर बर वासना १	३६६	३२
जलदि निकासी रैनि ॥	८६	१२३	जाके रोम रोम प्रति ॥	५	१
जल-पूरित घनस्याम ॥	६०७	१६३	जाके सँग दूषन दुरै ६	१३८	२६७
जल समान माया ५	६६	१७८	जाकेँ एकाएक हूँ २	४७१	६७
जलहुँ में पुनि आपही ४	५३	१७७	जाकेँ बर बरजोर यइ ३	६८६	१६६

जाको जहँ स्वारथ	६	१५२	२६८	जानति हैं वा खेत	३	१५६	१२६
जाको न्यौत जिमाइयै	,,	६८३	३३६	जानहार सो जाय	६	१८६	३३२
जाको हृदय कठोर	,,	२६७	३०७	जानहिँ हंस रसाल	१	४२१	३४
जाकौं बुधिबल होत	,,	५३०	३२७	जानि परत सब	७	७५	३४८
जाकौ गति चाहत	४	११	१७३	जानि परैगी जात हो	५	२६८	२४६
जाकौ जासों मन	६	६०	२६४	जानि बूझ अजगुत	६	५२५	३२७
जाकौ जैसो उचित	,,	८७	२६३	जानि बूझि कै करत	,,	४६५	३२२
जाकौ मुख ससि सौं	७	२६३	३६५	जानि भीत संकेत में	७	४४६	३७७
जागत ओज मनोज	३	५२२	१५७	जानु वस्तु असथिर	१	४६२	३६
जा गुलाब के फूल	४	६७०	२२४	जानै राम-सरूप जब	१	२०७	१७
जात गुनी जात न	६	२६०	३०७	जानै सो बूझे कहा	६	३८७	३१६
जात जात बितु होतु	२	२३५	७६	जा पद पाए पाइयै	१	१८५	१५
जात दिवस जलजात	५	७१३	२८४	जा बिर्याग-ब्रह्मवाणि	,,	६२७	१६५
जातरूप जिमि अनल	१	४३६	३५	जामें बिद्या नारदी	६	४१४	३१८
जातरूप परिजंक की	५	१६७	२४१	जामैं हित सो कीजियै	,,	५७६	३३१
जातरूप रूपहिं	३	४०	१२०	जामैं ये छवि पावतीं	४	२४६	१६२
जात सखी काहु न	५	४२७	२६१	जाय वतै बलि पेखिए	५	४०६	२६०
जात सयान अयान	२	६२६	१०६	जाय कहव करतूति	१	६०	५
जाति मरी बिछरी	,,	२७७	८२	जाय दरिद कबि जनन	६	२८३	३०८
जातैं ससि तव मुख	४	१८२	१८७	जारत दीप पतंग कौं	४	४३६	२०६
जा दिन तैं गौनौ	३	२८६	१३६	जाल-रंघ्र मग अँगनु	२	२६३	८१
जा दिन तैं पिय	४	५६५	२१६	जालिम नैनन के जुलुम	४	२८६	१६५
जा दुकान कौ रूप	,,	१६२	१८५	जावक दीयौ पगनि में	३	५११	५१६
जादूगर तुव दगन	,,	३१०	१६६	जावक सी रागी पगनि	,,	२३	११८
जान अजान न होत	,,	४६२	२१०	जा सँग जागे हो निसा	५	२४८	२४८
जान कहाँ तौ जाइए	५	५३	२३३	जासु आसु सर देव को	१	२७८	२२
जान जान कीनै जु तैं	४	३३०	१६८	जासों करसि बिरोध	,,	२१०	१७
जानत रिस ठानत	७	३४५	३६६	जासों जैसौ भाव सो	६	४२	२६०
जानत सही चकोर	४	६७३	२२४	जासों निबहै जीविका	,,	७०	२६२
जानति खेत कुसुंभ	३	१६०	१२६	जासों रचा होत है	,,	५५	२६१
जानति सौति अनीति	,,	६०२	१६३	जासों परिचै होय सो	,,	३८३	३१६

जासौं पहुँचि न आइयै	६ ६२३ ३३५	जिहिँ देखैं लाँछन	६ १३६ २६७
जाहि कहत हैं सकल	१ ५३८ ४३	जिहिँ निदाघ-दुपहर	२ २४४ ७६
जाहि चाहि रहिम कियौ	३ ५६५ १६२	जिहिँ प्रसंग दूषन लागै	६ १३७ २६७
जाहि जोहि भारद भई	५ ४११ २६०	जिहिँ भामिनि भूषनु	२ ६०८ १०७
जाहि परथौ जैसौ	६ १२० २६६	जिहि जेतो निहचै तितौ	६ ७०२ ३४१
जाहि मिलै सुख होतु	,, ३७० ३१५	जिहिँ दिसि भय तिहिँ	,, ५२२ ३२७
जाही तैं कछु पाइए	,, १२ २८८	जिहि पहिरे छगुनी श्री	५ ४०१ २५६
जिते नखत विधि दग	४ ५८३ २१७	जिहि ब्राह्मन पिय	४ ५५६ २१५
जितैं वसै प्रीतम वहै	७ ७२६ ३६८	जिहि मग दैरत निरदई	,, २२२ १६०
जिन अखियन सखि	,, १८० ३५६	जिहि लालच मन-धन	,, २१२ १८६
जिन काढ़ौ ब्रजनाथ जू	४ २२ १७४	जीते चारु चकोर रुचि	५ ५४२ २७०
जिनकी सरि दीप न	५ ४४६ २६३	जीव चराचर जहँ लागे	१ ७५ ६
जिनके हरि बाहन नहीं	१ २६३ २१	जीवै लैवा जोत कौ	४ ५६६ २१६
जिनकैं सील समान है	३ २२४ १३४	जुग जुग ये जोरी जियैं	५ ३५२ २५६
जिनकौं अतुल बिलोकियै	,, ४२१ १४६	जुदे न जैसे लहत हैं	६ ८८ २६३
जिनते चलाइयै चलन	,, ४७० १५३	जुदे रहन मन मिलन	४ ५६६ २१६
जिनते उदभव बर	१ ११ २	जुन्हरी राखन जात	७ ४६६ ३८१
जिन दिन देखे वे	२ २५५ ८०	जु पै द्वार में बसत	३ २४६ १३६
जिन नैनन में बसत है	४ ६२८ २२१	जु पै सखी ब्रजगाँव में	,, ४२३ १४६
जिन पंडित विद्या तजहु	६ ११६ २६६	जुरत दगन सौं दगन	४ २६६ १६३
जिन घारे नँदलाल पै	४ ३३ १७५	जुरत नैन परजरत हिय	७ १७६ ३५६
जिन में निसि दिन	३ १७५ १३०	जुरे दुहुन के दग	२ १६७ ७६
जिन मोहन ने सहज में	४ ५०१ २११	जुलुफ निसैनी पै चढ़े	४ १६६ १८५
जिय चाहे सोई मिलै	६ ६० २६१	जुवति कन्हाई रस पगी	७ ६२० ३६०
जिय पिय चाहै तुम	,, ६१ २६१	जुवति जोन्ह में मिलि	२ ७ ६१
जिय संतोष विचारियै	,, ७०३ ३४१	जुवतिन सँग बर पूजि	५ ३०३ २५२
जिहिँ डर डरि करियै	६ ४६० ३२२	जुवा खेल खेलन गई	७ २७७ ३६४
जिहिँ कनैल के फूल	४ ६३३ २२१	जूके तें मल बूमिबो	१ ७२७ ५८
जिहिँ जासौ मतलब	६ १७६ ३००	जूवा खेलै हेतु है	६ ६०० ३३३
जिहिँ जेतौ वनमान	,, ५०४ ३२५	जे अखियाँ बैराइहीं	४ ५५० २१५
जिहिँ जैसो अपराध	,, ५३३ ३२८	जे अखियाँ बैरा रहीं	,, २४१ १६१

जे अंगनि पिय संग मैं	३ ५६४ १६२	जो कछु पूरव कविन तैं	७ ७४१ ४००
जे उत्तम ते असम सौं	६ १६२ २६६	जो करता है करम को	१ २०० १६
जे उदार ते देत हैं	„ ५८ २६४	जो कविता में आदरत	७ ७४० ४००
जे चेतन ते क्यों, तजैं	„ १२१ २६८	जो कहियै तौ साँच	४ ३६१ २००
जेठ मास की दुपहरी	३ २८१ १३८	जो कहियै सो कीजियै	६ ३६० ३१७
जे तब होत दिखा दिखीर	६१५ १०८	जोग जुगति सिखए	२ १३ ६२
जे तीषम ग्रीषम रहे	५ ४३३ २६२	जो गति जानै धरन	१ ३६० ३१
जेती संपति कृपन कै	२ १११ ६६	जो चकोर सम आवतौ	४ ४६७ २११
जे न होयँ दड़ चित्त के	६ ५४८ ३२६	जो चाहत तोहि विनु	१ ३४८ २८
जे पर ते पर यह समक	„ १८० ३००	जो चाहै तिहि चाहिए	४ ३० १७५
जेवर बने लतान के	५ २०० २४४	जो चाहै सोई करै	६ १६२ ३०१
जे सर जग गुन दोख	१ ६०५ ४८	जो चाहै सोई लहै	६ १३५ २६७
जे हरि मोहन रूप सों	५ ७६ २३४	जो चाहै सोई करै	„ ८६ २६३
जेहि न गनेव कछु	१ २३३ १६	जो जल जीवन जगत	१ १६६ १६
जेहि बिधि तैं सब	„ १४० १२	जो जसुदा को लाड़िलो	५७३ २८०
जेतवार इहि मार सों	३ १०६ १२५	जो जाके हित की कहै	६ १२८ २६६
जे दसमी जानी जगत	७ २७६ ३६४	जो जाकौ प्यारो लगी	„ ७ २८७
जेसी संगति तैसियै	६ २२८ ३०४	जो जाकौ गुन जानहीं	„ ८ २८७
जेसी हो भवतव्यता	„ १५३ २६८	जो जाकौ चाहै भलौ	„ ८२ २६३
जैसे कुछी की दसा	१ १७५ १४	जो जाही को है रहै	„ १३ २८८
जैसे दुवि अच्छर मिलै	४ ४४० २०६	जो जाही सों रमि रह्यौ	„ ५६ २६१
जैसो जहाँ उपाधि तहँ	१ ४६१ ३६	जो जिहि कारज में	„ ६८५ ३३६
जैसो प्रभु तैसो अनुग	६ ३५१ ३१४	जो जेहिँ भावे सो भलौ	„ ६७ २६२
जैसे बंधन प्रेम को	„ ६७ २६४	जो जैसो तिहँ तैसियै	„ ६८६ ३३६
जैसौ कारन होतु है	„ ६४१ ३३६	जो तब सुख।सौंवाँ दर्ई	५ १६२ २४३
जैसौ गुन दीनौ दर्ई	„ ८० २६३	जो तब छनहुँ न सहि	„ ११७ २३८
जैसौ जैसौ अधिक गुन	„ ४७६ ३२३	जो तिय तुम मन	२ ५५८ १०४
जैसौ धानक सेइए	„ २४८ ३०६	जोति सरूपी हिय सबै	६ ६२५ ३३५
जो अतुलित गति	५ ५१३ २६८	जो धनवंत सु देय कछु	„ ३६७ ३१५
जोह प्रान सो देह है	१ ५६८ ४५	जो न परत किहि बात	„ ६६४ ३३८
जो कछु चाहत सो	„ १४२ १२	जो न सुने तेहि का	„ ३६१ २६

जो निसि दिन सेवन	३ ४०५ १४८	जो सिर धरि महिमा	२ ४३० ६४
जोन्ह नहीं यह तमु	२ २३४ ७६	जो हाजिर अवसान पर	६ २६६ ३०६
जो पराग मकरंद मधु	७ ३३० ३६८	जों चाहत चटक न घटै	२ ३६६ ६१
जो पल तकिया छोड़	४ ५६४ २१८	जों भावी कछु है नहीं	१ ५४३ ४३
जो पहिलै कीजै जतन	६ १८४ ३०१	जों मरिबो पद सबनि	१ ५४२ ४३
जो पावै अति उच्च पद	१ १३२ २६७	जों लौं लखि नाहीं	१ ५४४ ४३
जो पै आकसमात ते	१ ४८० ३८	जो बरबिज चाहसि	१ २३८ १६
जो पै जैसे होय तिहि	६ ५४१ ३२८	जो कछु उपजत आइ	४ ३४४ १६६
जो प्राणी परबस परथौ	१ ५५३ ३२६	जो कहनामय हेरिहौ	१ ६६१ २२६
जोबन छाक छकी रहत	७ ४६३ ३८१	जो कहूँ प्रीति बिसाहनी	१ ५३८ २१४
जोबन-मद गज मंद	३ २७७ १३८	जो घर आवत शत्रु हू	६ ४८७ ३२४
जोवन में अखिर्या सखी	१ २१८ १३३	जो जगदीस तौ अति	१ ७४२ ५६
जोवन लहि बिकसित	५ ७१४ २८४	जो तैं पहिरै सुंदरी	३ ४५ १२०
जो भाखै सोई सही	६ १११ २६५	जो न जुगति पिय	२ ७५ ६६
जो भावै सो कर लला	४ १४४ १८४	जो न तार ते अघम गति	१ ४३८ ३५
जो मधु दीन्हें ते मरे	१ ७३१ ५८	जो न मिलेंगे स्यामघन	४ ५१७ २१२
जो मूरख उपदेस के	१ ६७१ ५३	जो नहिं करतौ भावतो	१ १५१ १८४
जोय न लीजै आरसी	५ ५०७ २६८	जो नहिं देतौ अतन	१ २०६ १८६
जोरत हूँ सजनी विपति	३ २६३ १३७	जो रंगन मैलो करो	५ ६८५ २८१
जोरति है मन जतनि कै	४ ३६० २००	जो लौं लखौं न कुल-	२ ७०६ ११५
जोर न पहुँचै निबल	६ ३५८ ३१४	जो वाके सिर पै परै	५ १६६ २४२
जोरावर अरि मारियै	१ २८६ ३०६	ज्यों जग बैरी मीन को	१ ६४ ६
जोरावर कौं होति है	१ ५६८ ३३०	ज्यों घरनी महँ हेतु	१ ४२८ ३४
जोरावर हूँ कौ कियौ	१ ५१० ३२६	ज्यों बरधा बनिजार के	१ ३८० ३०
जो लायक जिहँ भाँति	१ १०६ २६५	ज्यों उत रूप अपार है	४ १३६ १८३
जो लायक जिहि होय	१ ६७३ ३३८	ज्यों कर स्यों चिटुकी	२ ६४७ ११०
जो वाके तन की दसा	२ १४२ ७२	ज्यों ज्यों आवति निकट	१ ५४३ १०२
जो सजनी गुन गननि	३ ५६८ १६३	ज्यों ज्यों ऊँचे होत हैं	३ ११५ १२५
जो सबही कौ देत है	६ १०० २६४	ज्यों ज्यों चंदन को	५ ३७४ २५७
जो समझे जो बात कौं	१ १०२ २६४	ज्यों ज्यों छवि अधिकाति	३ १३६ १२७
जो समरथ सब बात	१ ६६० ३४०	ज्यों ज्यों छुटै अयानपन	६ ६५६ ३३७



ज्यों ज्यों जोवन-जेठ	२	११२	६६	मीनै मगा बिलोकि-	३	२१४	१२६
ज्यों ज्यों दुहू दुहून के	७	२६६	३६५	मुकि मुकि मपकौहैं	२	२८६	१०६
ज्यों ज्यों पटु मटकति	२	३५३	८८	मूठ बसे जा-पुरुष में	६	३३६	३१३
ज्यों ज्यों पति पर-नारि	७	५०३	३८१	मूठ बिना फीकी लगै	॥	४०८	३१८
ज्यों ज्यों परसै लाल	३	२६	११६	मूठहु ऐसे बोलिए	॥	३२६	३१२
ज्यों ज्यों पावक लपट	२	३५४	८८	मूठी रचना सांच है	१	५७०	४५
ज्यों ज्यों पिय पर-तिय	७	३५०	३७०	मूठे जानि न संगहे	२	३४५	८७
ज्यों ज्यों फूकै नव बधू	५	७२४	२८४	मूठे ही करियै जतन	६	३७१	३१५
ज्यों ज्यों बढ़ति बिभा-	२	४६२	६८	मूठे ही जर जात है	४	६२७	२२१
ज्यों ज्यों बिषम बियोग	३	६२८	१६५	मूठै ही ब्रज में लग्यौ	३	५१	१२१
ज्यों ज्यों रूखी बढ़ति	५	६३०	२७६	मूमहिं मुमके स्याम	५	४	२२६
ज्यों हूँहैं त्यों	२	७०१	११५	मूमि मूमि मुख चूमि	॥	४१६	२६१
ज्वलित ज्वाल सी	३	३७१	१४५				
ज्वाल-जाल बिजुलि	॥	५०६	१५६				

ट

झ				टटकी धोई धोवती	२	४७७	६७
झंकि उमकै झाँकै	५	५१८	२६८	टरति न चौबारे खड़ी	५	३८८	२५८
झटकि चढ़ति उतरति	२	१६४	७६	टुनहाई सब टोल में	२	३४८	८७
झटिति सखाहि बिचार	१	२४४	२०	टीको कच ठग माँग	५	६६७	२८०
झपकि झपकि लागत	७	४१६	३७५	टौना आँखि बस करन	४	२८५	१६५

झपकौहैं पल देखियतु	॥	५८१	३८७	ठ			
झरत मंद मकरंद मद	॥	२१८	३५६	ठकुराइन-पाइन चितै	५	१८७	२४३
झलक कपोलन की	॥	१३६	३५३	ठगिया तेरे नैन ये	४	२६५	१६१
झलकनि अधरनि	५	३३४	२५४	ठठकि चलनि कटि की	५	१०३	२३७
झलके पग बनजात	॥	६८६	२८१	ठाढ़ो द्वार न दै	१	७२०	५७
झाँकि झरोखे जनि	॥	१५३	२४०	ठीक कियै बिन और	६	४०१	३१७
झिर पिचकारी की	७	२८८	३६०	ठोढ़ी घर अँगुरी कहत	७	८२	३४६
झिलमिलात भूषन	॥	६६५	३६६	ठौर छुटे तें मीत हू	६	२५७	३०६
झीनी सादी कंचुकी	५	७७	२३५	ठौर देखि कै हूजियै	॥	४०३	३१८
झीनी सारी सजि	॥	४०८	२६०	ठ			
झीने झर मुकि मुकि	७	२५८	३६२	डगकु डगति सी	२	३६	७१
झीनै पट में झुलझुली	२	१६	६२	डरत न हिम	५	१६६	२४४

डरत नहीं कुल-कानि ७ ६५६ ३६३

डरत नहीं भय लाज ,, १०० ३५०

डर न टरै नौद न परै २ ३१८ ८५

डरै न काहू दुष्ट सों ६ २१२ ३०३

डाबर सागर कूप गत १ १६२ १६

डारि तिहारे नेह में ३ २१० १३३

डारी सारी नील की २ ५० ६४

डारे ठोड़ी-गाढ़ गहि ,, १७ ६२

डारौ डर गुरु जनन ७ ४३६ ३७६

डिगत पानि डिगुलात २ ६०१ १०७

डीठ डोरं नैना दही ४ ४२१ २०५

डीठ बरत पर नैन ,, २२१ १६०

डीठ लगत डर ईठ ,, २६३ १६३

डीठि न परतु समान- २ ३३३ ८६

डीठि परस्पर दुहुन ३ ६८७ १६६

डीठि बचाइ सखीनि ,, २७२ १३८

डीठि बरत बांधी २ १६३ ७५

डोठि रूप श्रुति वचन ३ ५६५ १६०

डोलत विपिन बिहंग १ ७६ ७

डोलै नहिं खोलै ५ ४२० २६१

ढ

ढरे ढार तेहीँ ढात २ २३२ ७८

ढिग हिरकी घर की ५ ५४१ २७०

ढोठि परोसिनि ईठि २ ३८३ ६०

ढीठ्यौ दै बोलति ,, ३८७ ६०

ढीमर वह छीमर ७ ४६७ ३८१

ढीली बाहनि सों ३ २४३ १३५

ढीले अरसीले किण् ५ ६४८ २७८

हूँ दे बन सब उपवन ७ २२३ ३६०

ढोरी लाई सुनन की २ ५२२ १०१

त

तंत्री-नाद कबित्त-रस २ ६४ ६८

तकति तिरीछे ईछननि ५ ४२१ २६१

तकि तकि जिनहि ,, १२८ २३८

तकि तकि तन ,, ६६५ २८०

तकि बिकासता ,, ४१३ २६०

तची न तौ औगुननि ३ ४६४ १५२

तजत अमिय उपदेस १ ६७८ ५४

तजत अमिय ससि ,, ४४७ ३६

तजत सखिल अपि १ ४२२ ३४

तजतु अठान न हठ २ १७० ७४

तजहु सदा सुभ-आसु ,, २६८ २२

तजि तीरथ हरि ,, २०१ ७६

तजी संक सकुचति न ,, २१८ ७७

तज्यौ आंच अब ,, ३७८ ६०

तनक चितै सजनी ५ ६६६ २८२

तनक झूठ न सवादिली २ ६४४ ११०

तनक नजर फेरै कहूँ ७ १०६ ३५१

तनक निहारी जबहिँ ५ २१० २४५

तन की गति औरै भई ७ ६५१ ३६३

तन मुरसी तरसी ,, ५७० ३८६

तन तैं निकसि गई ,, ३६१ ३७०

तन तैं मन तैं मिलन ,, ५२४ ३८३

तन-दुति लखि ,, ६२२ ३६०

तन दुरबल मनमथ ३ ६०८ १६३

तन-धन महिमा धरम १ ७१६ ५७

तन धन हूँ दै लाज ६ ६३६ ३३६

तन निमित्त जहँ जो १ ५१० ४१

तन बनाय उपजाय ६ ३७८ ३१६

तन भूषन अंजन २ २३६ ७६

तन मन तो पै ४ ६३६ २२२

तन मन बेधक हैं	५	५०	२३२	तरुन तिहारे देखियतु	७	५५	३४७
तन मन रीझे मार	,,	१२६	२३६	तरुनि अरुन पड़ीनि	३	५५०	१५६
तन रोचित रोचन	३	६	११७	तरुनी मुख छवि	७	३०४	३६६
तन सिंगार कुच	२	६०४	३८६	तरु हँ रह्यौ करार	३	३४२	१४३
तन सुखाइ पंजर करै	१	३१६	२५	तलफल घाड़नि जीव	,,	३६०	१४४
तन सुरंग सारी नयन	५	२६८	२५२	तव पद पदवी नहि	५	३३०	२५४
तनिक किरकिरी कै	४	२६२	१६५	ताकी या ताकी दसा	७	५५७	३८५
तनि मुख तौ चाहियत	,,	४८७	२१०	ताको वा तरु के तरे	५	७००	२८२
तनु आगैं कौ चलतु	३	३६२	१४४	ताकौं त्यों समझा-	६	२४५	३०५
तपन-ताप ते चौगुनी	५	५२६	२६६	ताकौं अरि कहा करि	,,	२७६	३०८
तपन-तेज तपु-ताप	२	३४३	८७	ताकौं बुरौ न ताकियै	,,	४८८	३२४
तब अली न तोसों	५	१३	२३०	ताजी ताजी गतनि ये	४	२७४	११४
तब जानैं ससि और	४	२०८	१८६	तात मातु पर जासु के	१	७	१
तब लागि जोगी जगत	१	६२०	४६	ताते करता ग्यान	,,	५०५	४०
तब लागि ललहि	५	६८१	२८१	ताते संग दयाल बर	,,	१७८	१५
तब लौं नहि जानति	३	६७२	१६८	ता दिन ते जकि सी	५	११३	२३७
तब लौं सजनी	,,	६६७	१७०	ता बिधि ते अपना	१	३२६	२६
तब सीरी तकि तकि	५	२८८	२५१	ता बिधि रघुवर नाम	,,	१४५	१२
तबहुँ मजाकी आज	,,	३०४	२५२	ता बिनु होय न काज	६	६७६	३३६
तबै न मान्यौ मो	७	२८३	३६४	तारे तरनि दुरे भए	५	७२५	२८५
तरकति सरकति ही	५	२५६	२४६	ताही कौ करियै	६	४१०	३१८
तरक-बिसेख-बिखेध	१	२१६	१८	तिगुनी ते द्विगुनी	५	२५१	२४८
तर भरसी ऊपर गरी	२	३२८	८६	तिनके कारज होत हैं	६	२७२	३०८
तरनि किरनि मलम-	३	५४	१२१	तिनसो बिमुख न	,,	१०१	२६४
तरफरात तरफत खरे	७	३६२	३७३	तिनसौ चाहत दाद	४	६७६	२२५
तरल तरंग सुछंद नर	१	४१४	३३	तिनहि पढ़े तिनहीं	१	६१६	४६
तरल तरौना पर	७	३७	३४५	तिमि बरनहि ते	,,	५३१	४२
तरिवन-कनकु कपोल	२	८२	६७	तिय कित कमनैती	२	३५६	८८
तरुन कोकनद वरन	,,	१६६	७४	तिय कौं मिल्यौ न	३	२६५	१३७
तरुन तमालन सौं	७	२६३	३६३	तिय तड़ाग मंजन	७	२०५	३५८
तरुन तिहारे दगनि	,,	१८७	३५७	तिय तन मैं पानिप	,,	३५७	३७०

तिय तरसौं हैं मुनि	२	४८४	६८	तुम लाइकं हम हैं	३	५२५	५१७
तिय तव ये नैना	५	१४६	२४०	तुम सौं कीजै मान	,,	२४२	१३५
तिय तिथि तरुन	२	२७४	८२	तुमहि सुधासानी कहो	५	३४	२३१
तिय तेरे यह देखियत	७	१३६	३५३	तुमही मैं देखी नई	७	४१४	३७४
तिय निय हिय जु	२	२६८	८४	तुरग अरव पुराक के	३	६६८	१७०
तिय पग पिय-अंगुरी	३	१६२	१२६	तुरत गमन सुनि	७	६४६	३६२
तिय पिय की बेनी	५	२७३	२५०	तुरत दीठि लगि जायगी	३	३३८	१४३
तिय मुख जखि हीरा	२	७०७	११५	तुरत सुरत कैसै दुरत	२	१८५	७५
तिय हिय अंकुर प्रीति	७	६३६	३६२	तुरत स्वेद सात्विक	७	४१५	३७५
तिय हिय आनंद बढ़त	३	३६६	१४५	तुरतहि गयौ बिलाइ	३	६१६	१६४
तिय हिय मैं पिय-इंदु	,,	३८३	१४६	तुलसी अपने दुखद वे	१	१४६	१४
तिय हिय मान-मरोर	५	४४५	२६३	तुलसी अपने राम	,,	१३५	११
तिय-हिय लौं पहुँचै	३	२१४	१३३	तुलसी असमय के	,,	६६५	५३
तिरछी चितवनि स्याम	,,	७०२	१७१	तुलसी बडुगन को	,,	२५१	२०
तिरछौं हैं करि करि	७	११३	३५१	तुलसी कवनहुँ जोग	,,	४५६	३६
तिरछौं हैं करि करि	,,	४५	३४६	तुलसी कहत बिचारि	,,	१३	२
तिल चुन लालच	४	३१६	१६७	तुलसी के मत चातकहि	,,	१०६	६
तिल ताबे है भावते	,,	४३७	२०६	तुलसी केवल कामतरु	,,	४०	४
तिलन माँफ पुनि	,,	६२	१७७	तुलसी केवल रामपद	,,	११२	६
तिल न होइ मुख भीत	,,	१८५	१८७	तुलसी कोसल-राज	,,	५१०	५
तिल पर राखेव	१	४३	४	तुलसी खल बानी	,,	६६२	५३
तिहि पुरान नव द्वै	३	३६४	१४५	तुलसी खोटे दास कर	,,	६३	६
तीछन ईछन बान ते	५	४५१	२६३	तुलसी चातक के मते	,,	६४	८
तीछन बान जो बिरह	४	५४४	२१४	तुलसी चातक देत	,,	१०२	६
तीज तमासौ रस भरी	७	२४४	३६१	तुलसी चातक मार्गिनी	,,	८४	७
तीज-परब सौतिनु सजे	२	३१५	८५	तुलसी चातक ही	,,	८६	८
तीन पैँड़ जाके लखौ	४	२६८	१६६	तुलसी जानत साधु-	,,	४६७	४०
तीन पैर जाके लखौ	,,	५०४	२११	तुलसी जानत है	,,	१६२	१३
तीरथ-पति सतसंग	१	४०२	३२	तुलसी जाने बात	,,	६०१	४८
तुम गिरि लै नख पै	४	४८६	२१०	तुलसी जे नय-लीन	,,	४५५	३६
तुम जगदीस दयाल	,,	६६३	२२६	तुलसी जो है सो	,,	५३६	४३

तुलसी जौ लौं लखि	१	५६७	४५	तुलसी राम समान	१	२०	२
तुलसी मगड़ा बड़न के	॥	७०६	५६	तुलसी रामहि परिहरै	॥	६१	५
तुलसी तरुन बिहीन	॥	२८६	२३	तुलसी लट पद ते	॥	३७६	३०
तुलसी तरु फूलत	॥	१६४	१६	तुलसी संतन ते सुने	॥	६३२	५०
तुलसी तीनि प्रकार	॥	७२८	५८	तुलसी संत-सुअंव तरु	॥	१७६	१५
तुलसी तीनों लोक	॥	७६	७	तुलसी सकल प्रधान	॥	६११	४६
तुलसी तीरहि के बसे	॥	१२५	१०	तुलसी सब छल	॥	६७	६
तुलसी तुल रहि जात	॥	५१६	४१	तुलसी सर-बर खंभ	॥	७०८	५६
तुलसी तेरो राग-घर	॥	२१५	१८	तुलसी साँचो साँप	॥	४६६	४०
तुलसी तै भूठो भयो	॥	५६६	४५	तुलसी साथी विपति	॥	६६४	५३
तुलसी तोरत तीर	॥	१६८	१६	तुलसी सी अति	॥	४७	४
तुलसी देखहु सकल	॥	५३२	४२	तुलसी सुभ-कारन	॥	१६	२
तुलसी देवल देव के	॥	७१४	५७	तुलसी सो समरथ	॥	६४८	५१
तुलसी निज कीरति	॥	७२१	५७	तुलसी सोहत नखत	॥	३३	३
तुलसी निज मन	॥	५६७	४७	तुलसी स्वारथ सामुहो	॥	६४८	५२
तुलसी-पति दरबार में	॥	११६	१०	तुलसी होत नहीं	॥	५३५	४३
तुलसी-पति-रति-अंक	॥	१३४	११	तुलसी होत सिखै	॥	१५७	१३
तुलसी धरन बिकल्प	॥	२७६	२२	तुलसी हम सों राम	॥	६६	६
तुलसी विनु गुरु को	॥	५८४	४६	तुलसी हरि अपमान	॥	१२७	११
तुलसी बिलंब न	॥	१२०	१०	तुलसी सुई की तुल्यता	६	५२०	३२७
तुलसी बोल न बूझई	॥	३६०	२६	तुल अनियारे दगन	४	१६८	१८८
तुलसी भल बर तरु	॥	७०३	५६	तुल छवि सौहनि सौं	॥	३६६	२०१
तुलसी मिटइ न कलपना	॥	५८	५	तुल तन निरखत पिय	७	६४	३४७
तुलसी मित्र महा सुखद	॥	६२५	५०	तुल तन लगि सुरमित	॥	६६६	३६४
तुलसी मीठी अभिय	॥	७३३	५८	तुल तन सरस सुगंध	॥	१०४	३५१
तुलसी मीठे बचन ते	॥	१२८	११	तुल दग उपमा कमल	॥	१६६	३५८
तुलसी यम गुन बोध	॥	२८७	२३	तुल दग नागर सुघर	४	३२६	१६८
तुलसी रजनी पुरनिमा	॥	२५८	२१	तुल दग सतरंग बाज	॥	२५८	१६२
तुलसी राम कृपालु	॥	५५	५	तुल जन में खोयौ	॥	१४५	१८४
तुलसी राम भरोस	॥	६५	६	तुल कहति हैं आपु	२	५४८	१०३
तुलसी राम सनेह	॥	१३८	११	तुल इन सौं नित व्याज	४	४८२	२१०

तू न करति मनभावती ३	११७	१३२	तेरौ तेरौ हैं कहत	७	२४	३४४
तू मति मानै मुकतई २	२५०	८०	तेरौ सखी सुहाग बर	३	६५१	१६७
तू मोहन मन गढ़ि ॥	६०६	१०७	तेह-तेरौ ल्यारु करि	२	११३	६६
तू रहि हैं हीं सखि ॥	२६८	८१	तैं तुलसी करता सदा	१	५१६	४१
तू सजन या घात कौं ४	७६	१७६	तैसी जरतारी सुही	७	६१५	३६०
तूहिं निज रुचि १	६४४	५१	तो अब लों सुरलीन	५	६१३	२७६
तू न लखति कसि ७	५४०	३८४	तो घनस्याम बिसेस	७	३१२	३६७
तू राखी करि लाल है ३	१८६	१३१	तो दिग आवत कल	॥	३३७	३६६
तू स तुराई में दुरे ५	६५	२३४	तो तन अवधि-अनूप	२	५६७	१०४
तू सोने की सटक है ३	६६	१२४	तो तन सुबरन बरन	३	३८२	१४६
तू न हूँ तैं अरु तूल तैं ६	६४७	३३६	तो पर चारों चरबसी	२	२५	६३
तूषित दगनि की तूपति ४	३०८	१६६	तो मन बास दिगंतसर	७	३००	३६६
तेऽपि तिनहिं जांचहि १	३५८	२६	तो मुख छबि सौं हारि ३	४२७	१४६	
तेज चिरजीवी अमर २	५६३	१०४	तो मुख मंजुल-हास ॥	४८५	१५४	
तेरी औरै भाति की ३	१६	११८	तोय मोल में देत है ४	६४५	२२२	
तेरी गति नँदलाढ़ले ४	२४	१७४	तो रत काबि जँजीर हठ ७	१६८	३५८	
तेरी चेरी चंचला ५	६२	२३६	तो रस रांच्यौ आन २	१६७	७६	
तेरी मुख-छबि लखि ३	११३	१२५	तो रस रांच्यौ रैन ३	१६६	१३०	
तेरी मुख समता करी ॥	३२	११६	तो रि कंज दीजै हमैं ७	६७६	३६५	
तेरी मूरति-श्रुत लिखी ॥	४६३	१५२	तो रि फूल दीजै हमैं ॥	६७७	३६५	
तेरी मृदु सुसन्धानि ॥	६८०	१६६	तो लखि मो मन जो २	५५६	१०३	
तेरी यह अद्भुत कथा ४	३२८	१६८	तो सी मोरै को हिंदू ७	२६४	३६५	
तेरी सरल चितौनि तैं ५	३२४	२५४	तोहि बजै बिष जाइ ४	१६४	१८८	
तेरी है या साहिबी ४	६८२	२२५	तोहि रसत तो तन ७	५४८	३८५	
तेरे आनन चंद कौ ३	४८६	१५४	तोहीं निरमोही लग्यौ २	३६	६३	
तेरे घर विधि कौं द्यौ ४	४६०	२१०	तोही को छुटि मान गो ॥	३१०	८४	
तेरे नट पट नैन ये ॥	४३८	२०६	तो अनेक औगुन ॥	४२१	६३	
तेरे नैन मसालची ॥	२३८	१६१	तो कैसे तन पालते ४	१२६	१८३	
तेरे मुख की मधुरई ३	११२	१२५	तो तुम मेरे पलन तैं ॥	४२३	२०५	
तेरै अंगनि लाल छबि ॥	२०२	१३२	तो तोहि कहूँ सब १	२६७	२२	
तेरो पति सब काम ७	५२६	३८३	तो न कौन दिन भौन ७	६६७	३६६	

तौ बलियै भलियै	२	६२१	१०८	दंभ सहित कलि	१	७३६	२६
तौ मैं अनमिष नैनता	३	३८	१२०	दर्द पिया जो सतजरी	७	६५	३४८
तौ लगी हम तें सब	१	५०१	४०	दर्द बाम-तन छाम मैं	५	७५	२३४
तौ लगु या मन-सदन	२	३६१	८८	दच्छिन नायक एक	३	२६१	१३६
त्यों ल्यों प्यासेई रहत	॥	४१७	६३	दच्छिन पिय ह्वै बाम	२	२६०	८१
त्रन समान बज्रहिं	७	१७	३४४	दधि छिनार मोहन	३	४३४	१५०
त्रपत न मानत नैन	४	२२६	१६०	दमकि दमकि दामिनि	५	२२६	२४६
त्रिधा देह गति एक	१	१७६	१४	दया दुष्ट कै चित्त मैं	६	४६४	३२५
त्रिन तनयाहि लुवन न	५	३८	२३२	दरकत नहीं बियोग	३	५४३	१५८
त्रिबलि-निसेनी चढ़ि	॥	११	२२६	दरद दवा दोनों रहै	४	४७२	२०६
त्रिबली नाभि दिखाइ	२	८८	६७	दरदहिं दै जानत	॥	४७३	२०६
त्रिविध-ताप-हर ससि	१	१४८	१२	दरपन अमल कपोल	३	६०५	१६३
त्रिविध भांति को	॥	३२२	२६	दरपन मैं निज रूप	॥	३८०	१४६
त्रिविध एक-विधि-प्रभु	॥	६८६	५४	दरपभरी दरपन लिप	५	६०६	२७५
त्रिविधि प्रभंजन चलि	५	२७४	२५०	दरसति जष बाढ़ी	४	३२७	१६८
त्रिभुवन सुखमा सार	॥	५६१	२७४	दरस दान तो पै चहै	॥	२०७	१८६
<b>थ</b>				दरसन कौ चलतौ	॥	५७८	२१७
थकी सुरत बिपरीत	३	४६५	१५५	दरसन भिच्छा के	॥	५८६	२१८
थहरि वडै हरि-तन	५	३२७	२५४	दरसन सों परसन न	५	६६४	२८२
थाकी करि करि जतन	७	४४३	३७७	दरस निसा दरसै नयौ	॥	७०२	२८३
थाकी जतन अनेक	२	१२५	७०	दरस परस बिनु आन	१	१०१	८
थाकी मत लखत न	७	३६७	३७१	दरस मूर देतौ नहीं	४	५३४	२१४
थाके खंजन भृंग मृग	५	३६८	२५६	दरसि निसा यह दरस	५	६०७	२७५
थिरकत सहज सुभाव	४	२५३	१६२	दरसै तै दुख दूर है	७	६७०	३६४
थोरै ही गुन तैं कहुँक	६	१६७	२६६	दलन लगै हरि नारंगी	५	५७८	२७३
थोरै ही गुन रीकत	२	६८	६६	दसा सुनै निज बाग	३	५३	१२१
<b>द</b>				दसा हीन राधा भई	॥	१५५	१२६
दंपति एकै सेज पर	७	५५६	३८५	दान दयादिक जुद्ध के	१	६६३	५३
दंपति चरन सरोज पै	४	२६	१७५	दान दीन कौं दीजियै	६	४८२	३२४
दंपति रति बिपरीत	७	३६७	३७३	दान देत धन-हीनता	॥	४००	३१७
दंपति रस रसना	१	२६	३	दान-बीर-रस के सखी	३	१६६	१३२

दान मान सनमान	६	६२७	३३५	दीन धनी आधीन हूँ	६	५८३	३३१
दामिनि दमक दिसानि	७	२५७	३६२	दीनबंधु तुम दीन हैं	७	२६	३४५
दामिनि निज-दुति	५	१६८	२४२	दीन बंधु हैं दीन की	,,	२२	३४४
दिए सहस गुन देत	६	१५०	२६८	दीन्हैं नेह न कौ अमी	४	३२०	१६७
दिग अम कारन चारि	१	३२६	२६	दीप-ज्जेरै हूँ पतिहि	२	४६३	६६
दिग अम जा बिधि	,,	३२३	२६	दीप ज्योति के जाल	३	४७६	१५३
दिनकर कर दरसे	७	५६०	३८८	दीप दीप के दीप की	५	४४८	२६३
दिनकर-तनया-स्याम-	३	१६०	१३१	दीप सिखा फीकी भई	७	५६३	३८८
दिन दस आदर पाइकै	२	४३४	६४	दीरघ रोगी दारिदी	१	६४६	५१
दिन दिन दुगुन बढ़ै	३	३५६	१४४	दीरघ लघु करि तहँ	,,	२६	३
दिन प्रति बारह मास	७	२५१	३६२	दीरघ साँस न लेहि	२	५१	६५
दिन बिहाय गृह काज	५	१०७	२३७	दीबौ औसर को भलो	६	१८	२८८
दिन मैं सुभग सरोज	३	६६०	१७०	दुइ गुरु सीता सार	१	२७	३
दिनहि देखि हत हैं	५	६५६	२७६	दुइ मन तौल मिलाइ	४	६४८	२२२
दिनहुँ मैं अति जग-	३	६४५	१६६	दुखदाई सोइ देतु	६	३७३	३१५
दियै देह-दीपति गयौ	,,	८८	१२३	दुख-दायक जाने भले	१	२०८	१७
दियो हिये सौं	,,	६२०	१२१	दुख दीनै हूँ सुजन	३	१८५	१३१
दियौ अरघु नीचै	२	२६६	८१	दुख पाए बिनहुँ कहूँ	६	१६६	३००
दियौ कान्ह निज कान	३	६४०	१६६	दुख सुख दीबे कौं दई	,,	३६१	३१४
दियौ जु पिय लखि	२	२८०	८२	दुख-हाइनु चरचा	२	५६२	१०६
दियौ दरस कीनी	३	६६१	१७०	दुखिया सकल प्रकार	१	५६६	४७
दियौ सुसीस चढ़ाइ	२	८१	६७	दुगुने तिगुने चौगुने	,,	१३६	११
दिवस बितावत ब्रज	४	३८५	२०२	दुचितैं चित हलति न	२	२६४	८३
दिवस भले बिगारै न	६	४८१	३२४	दुतिय कोल राजिव	१	२२५	१८
दिसि दिसि कुसुमित	२	४७६	६७	दुतिय वृत्तिय हर	,,	२३१	१६
दिसि दिसि तुम्हैं	३	५६२	१४२	दुतिय पयोधर परम	,,	२३६	१६
दिसि दिसि बिगसति	,,	१७७	१३०	दुपहर भए कहर किए	५	३१२	२५३
दिसि बिदिसिनि	७	२१५	३५६	दुवराई गिरि जातु है	३	१७२	१३०
दीजै सीख अज्ञान कौं	६	१८१	३०१	दुरजन आपु समान	१	६३७	५१
दीठ गई सिर-पैच पै	७	४३५	३७६	दुरजन गहत न	६	५७५	३३१
दीठि निसैनी चढ़ि	५	३५०	२५६	दुरजन दरपन सम	१	६४०	५१



दुरजन बदन कमान	१	७२६	५८	दग थिरकौहैं अघखुलैं	२	६६२	११४
दुरजन वे निंदत रहैं	३	८२	१२३	दग दरजी बरुनी सुई	४	२४६	१६२
दुरत न कुच बिच	२	१८८	७५	दग-दुस्सासन जाल के	,,	२४७	१६२
दुरति दुराप तें न रति	५	३१०	२५२	दग द्विज ये उठि	,,	२२७	१६०
दुरभर उदरन दीन कौ	६	५६०	३३०	दग-नकीब ठाढ़े रहत	,,	२७५	१६४
दुरि दरसति दामिनि	७	७२५	३६८	दगन जोरि चित चोर	७	६८६	३६६
दुरी दुरापहु हिप	५	१२३	२३८	दगनि खुभी खूठी खुभी	५	२५०	२४८
दुरै न निघट घब्यो	२	४८२	६८	दगनि दगन सौं मिलि	४	२५६	१६२
दुर्जन के संसर्ग तैं	६	१५६	२६६	दगनु लगत ब्रधत	२	३४६	८७
दुवौ हुलास बिलास	७	१३८	३५३	दग माली ये छीठ कर	४	२६७	१६५
दुष्ट न छाँदै दुष्टता	६	१४६	२६८	दग मिहचत मृग	२	२००	७६
दुष्ट न छाँदै दुष्टता	,,	४६०	३२४	दग मृग नेहनि के	४	१७५	१८६
दुष्ट न छोदै दुष्टता	,,	७१	२६२	दग-मृग-नैननि के कहूँ	,,	२३१	१६०
दुष्ट निकट बसिपु नहीं	,,	२७१	३०७	दग रचना जानत	,,	१४२	१८४
दुष्ट भाव हिय मुख	,,	४८६	३२४	दग रिक्तवारन हिय	,,	३७७	२०२
दुष्ट रहैं जा ठौर पर	,,	५११	३२६	दग सेवक नृप रूप में	,,	३६६	२०३
दुष्ट संग बसियै नहीं	,,	४४५	३२१	देह कुसुम करि बास	१	६२३	५०
दुसह दुराज प्रजानु	२	३५७	८८	देखत कौ पै कछु नहीं	६	४६६	३२३
दुसह बिरह दारुन	,,	६६६	११२	देखत कौ सुंदर लगै	,,	६०८	३३३
दुसह बिरह वृष सूर	७	२८८	३६५	देखत दीपति दीप की	३	४११	१४८
दुसह सौति-सालैं सु	२	६००	१०७	देखत नैन न देखती	४	२३५	१६१
दुहूँ अटारिनि मैं सखी	३	२१७	१३३	देखत खुरै कपूर उयौ	२	८६	६७
दुहूँ ओर मुख दुहुँनि	,,	६८८	१७०	देखत रूप अनूप वह	७	१४७	३५४
दुहूँ कर सौं तारी बजत	७	६६	३५०	देखत है जग जातु है	६	६४६	३३७
दुहुँदिसि सघन नितंब	३	४६१	१५४	देखहु बलि चलि	७	१०८	३५१
दूनी मुख मैं छबि भई	,,	१३२	१२७	देखहु बलि चलि	,,	११०	३५१
दूर कहा नियरै कहा	६	४५५	३२२	देखा देखी करत सब	६	६०३	३३३
दूरि भजन प्रभु पीठि	२	४२८	६३	देखि घटा छन छबि	७	५४३	३८४
दूरयो खरे समीप	,,	६३८	११०	देखि ठिकानौ माँगिए	६	३२७	३१२
दखत करत रचना	१	३६७	२६	देखि परै नहिँ दूबरी	३	५८६	१६२
दग उरकत दूटत	२	३६३	८६	देखिस चिह्न गुपाल कौ	७	४२६	३७६

देखि सुधाकर लसतु	७	३४०	३६६	देखहुँ गुन की रीति	१	१६५	१६
देखी सोनशुही फिरति	२	३३०	८६	दोष धरै गुनि को	६	३२१	३११
देखेव करइ अदेख	१	३४३	२८	दोष-भरी न उचारियै	॥	११२	२६५
देखैं बानिक आशु की	३	१८	११८	दोष लगावत गुनिन	॥	४७२	३२३
देखैं हूँ बिन देखि हूँ	॥	७५	१२२	दोषहि को समहै गहै	॥	१७४	३००
देखौं जागत वैसियै	२	४२३	६३	दोहा चारु बिचारु	१	७४७	५६
देख्यौ अनदेख्यौ कियै	॥	६१८	१०८	दग सु जरायो सिव	७	३०३	३३६
देत कहा नृप काज	१	२६१	२१	द्वैज सुधा दीधिति-	२	६२	६८
देत न प्रभु कछु बिन	६	५६६	३३०	द्वैही गति है बढ़नि	६	४७३	३२३
देतौ जौ नहि भेद	४	२१०	१८६	ध			
देवन हू सौं देव प्रभु	६	२२३	३०४				
देवर-फूल-हने जु सु	२	२४६	८०	धकधकात ही गात मैं	५	६५३	२७६
देव सेव फल देत है	६	६४	२६४	धन अरु गैद जु खेल	६	४६८	३२५
देस काल करता	१	३०४	२४	धन अरु जोवन कौ	॥	५००	३२५
देस काल गति हीन	॥	३०५	२४	धन इत तकि कित	५	१३६	२३६
देह-दीप-दीपति दियै	३	४३६	१५०	धन कै हेत विलासिनी	३	२५६	१३७
देह दुलहिया की बढ़ै	२	४०	६३	धन गन बेली धन	५	५६४	२७२
देह लग्यौ दिग गोह	॥	४६७	६७	धन जोवन चय	॥	६	२२६
दै अनुरागी दगन कौ	४	५६०	२१८	धन तन पानिप कौ	॥	२३५	२४७
दै न लगत है पास	॥	२५६	१६३	धन धन कहे न होत	१	३६४	३१
दै न लगे मन मृगहि	॥	५७०	२१६	धन पूरन धनवान् पै	६	६६६	३४०
दै सहदी पग पर रही	७	८६	३४६	धन बाढ़ै मन बढ़ि	॥	२१८	३०३
दैया पनिभरिया कहै	५	२६७	२४६	धन संज्यौ किहि काम	॥	१४७	२६८
दोऊ अधिकाई भरे	२	५५६	१०४	धनि गोपी धनि ग्वाल	४	१४	१७४
दोऊ काम कलानि कर	७	४०५	३७४	धनि दग तारन के जु	॥	४६४	२०८
दोऊ चाह भरे कछु	२	५४५	१०३	धनि धनि है धन के	५	१५४	२४०
दोऊ चाहैं मिलन कौ	६	४०६	३१८	धनि धनि है हे हार	॥	२५६	२४८
दोऊ चार-मिहीचनी	२	५३०	१०१	धनि यह द्वैज जहाँ	२	३८५	५६०
दोऊ द्रोही तात के	७	२६८	३३६	धनी गुनी कौ न्याय	६	४३७	३२०
दोऊ प्रेम भरे खरे	॥	७१५	३६८	धनी होत निरधन	॥	६५४	३३७
दोख धरै निरदोख	६	२३४	३०५	धनुष वेद के भेद	७	६८५	३६५
				धरत न धित सीखे	॥	३७८	३६५

धरनि-धेनु चरि धरम	१	६६२	५५	नए बिरह अँसुवानि	३	११	११७
धरम-धुरीन सु-धीर	॥	३०६	२५	न ए धिससियहि	२	३११	८५
धरषत हर हरपित	७	३२७	२६८	नए मान देखे न ए	७	५४७	३८५
धरा धराधर धरन-जुग	१	२५६	२१	न कुछ तऊ जाकी	६	१६७	३०२
धरि सौनै कै पीजरा	४	६५३	२२३	न करि नाम रँग देखि	॥	४१	२६०
धरी धाय पिय रस	७	३७४	३७१	न करु न डरु सखु	२	३६४	६१
धरे यदपि बहु मोल	४	६५५	२२३	नख गाँसी सर	३	५०५	१५५
धरे हते मुहरा घनै	॥	२६४	१६५	नखतावलि नख हँदु	॥	१०१	१२४
धरै कौन बिधि धीर	३	५१८	१५६	नखन मलिन रुचि	५	६७२	२८०
धवल अटारी लखि	५	६८	२३४	नख फौके मनिगन	७	२८६	३६५
धातु-वाद निरुपाधि	१	७४०	५६	नख-रुचि चूरु डारि	२	५५०	१०३
धाय लगे लोहा	॥	६४७	५१	नख-रेखा सोहैं नइ	॥	२४०	७६
धीर अभय भट भेदि	५	१४७	२४०	नख रेखैं देखैं नए	५	१५६	२४१
धीर धरो सोच न करो	॥	६	२२६	नख सिख रूप भरे	२	१५८	७३
धीर महुत मन छुन	॥	३३६	२५५	नगर नारि भोजन	१	६४५	५१
धीर जियौ हरि बीर	॥	२०४	२४४	नगर बसै न गरै लगै	४	३८६	२०३
धुरंवा होहि न अलि	२	५४६	१०३	न जक धरत हरि	२	४०५	६२
धूम धमारिन की मची	७	२३७	३६१	नजरैई सब रहत हैं	४	१६६	१८८
ध्यान आनि डिग	२	५६४	१०६	नटि न सीस साबित	२	६०७	१०७
ध्यान करत नंदलाल	३	३१०	१४०	नदी नीर तीछन बहै	७	१८	३३४
न				ननद सासुरै पिय	॥	५०४	३८१
नंदनंदन पैड़े परथौ	७	१५५	३५५	नभ तारे तारे जिते	॥	३०	३४५
नंदनंदन मन लै गए	५	१०६	२३७	नभ लाली चाली	२	११५	६६
नंद महर के बगर-तन	४	१८३	१८७	नमो नमो श्रीराम	१	१	१
नंदलाल कहियै कहाँ	३	२६	११६	नमो प्रेम जिहि नै	४	३	१७३
नंदलाल के रूप पर	॥	२०३	१३२	नमो प्रेम-परमारथी	॥	२	१७३
नंदलाल सँग लग गए	४	४६३	२११	नयन दोख निज	१	५६४	४७
नई चाह मैं डुबि रही	५	४२६	२६२	नयन मीन भुज तट	७	१२८	३५२
नई तरुनई चित नई	७	३५६	३७०	नयै बिरह बढ़ती	२	४५६	६६
नई लगन बन सौं	५	६५५	२७६	नर कारज की सिद्धि	६	२७४	३०८
नई लगनि कुल की	२	२०५	७६	नर की अरु नख-नीर	२	३२१	८५

नर नारी सब जपत	३	१४४	१२८	नाँउ जाजरी धार में	७	१६	३४४
नर पसु कीट पतंग	४	६५	१७८	नाउँ सुनत ही ह्वै गयो	२	५६६	१०७
नर घर नभ-सर बर	१	३०७	२५	नाँक उचै चख-मप नचै	५	४४६	२६३
नर भूपन सब दिन	६	६४५	३३६	नाँक चढ़ै स्तीवी करै	२	६०६	१०७
नव के नव रहि जात	१	१३७	११	नाक मोर नाहीं ककै	२	६३२	१०६
नव नागरि-तन	२	२२०	७८	ना करु ना करु कहि	५	२५५	२४८
नव रसाल के पौन	७	२८५	३६५	नागर नट-नागर	७	४८४	३८०
नवल नेह आनंद	६	१०३	२६५	नागर सागर रूप कौ	४	११६	१८२
नवल नेह मैं दुहुनि	३	१२	११८	नागरि-नैन कमान सर	३	५	११७
नवल बधू अंगन बसै	७	३६०	३७०	नागरि बिविध बिलासर	५०६	१००	
नवल बधू के संग मैं	३	२७	११६	नागरि सकंज सिंगार	३	२८२	१३८
नहिँ अन-लागिबे दीठ	५	३७५	२५७	नाचि अचानक ही	२	४६६	६७
नहिँ अन्हाइ नहिँ	२	६४५	११०	नातवान तन पै सुनो	४	२१५	१८६
नहिँ आपु निसि	५	१३७	२३६	नाना बिधि की	१	१७४	१४
नहिँ इलाज देख्यो	६	८६	२६३	नामि भौर परि किमि	५	३८६	२५६
नहिँ जम्हाति अलसाति	७	४२४	३७५	नाम कहत बैकुंठ सुख	१	६१३	४६
नहिँ जानत गुन जासु	३	३३३	३६८	नाम कहत सुख होत	३	६१२	४६
नहिँ डोलति खोलति	३	५६५	३८८	नामकार दूखन नहीं	३	४८४	३६
नहिँ नचाइ चितवति	२	३६४	८६	नाम जगत सम	३	३६२	३१
नहिँ नजरत हियरौ	७	८१	३४६	नाम जाति गुन देखि	३	५८१	४६
नहिँ नयनन्ह काहूँ	१	४५६	३७	नाम भलौ होत न	६	२२१	३०४
नहिँ परागु नहिँ मधुर	३	३८	६४	नाम मनोहर जानि	१	१८	२
नहिँ पावसु ऋतुराज	३	४७४	६७	नाम महातम साखि	३	१२२	१०
नहिँ बोलत डोलत	७	५६६	३८६	नाम सु मोहनलाल	७	४७८	३७६
नहिँ यह नाभी रावरी	५	३६२	२५६	नार नवाए तकि हरी	५	४४१	२६२
नहिँ राती है प्रीति	४	६०८	२१६	नारि नैन के नीर कौ	३	३६	१२०
नहिँ सुहाइ घर	७	२२६	३६०	नारि नैन को नीर अरु	३	१७८	१३०
नहिँ सुहाइ परगोत	३	६०	१२१	नारी बृद्धि गई सुनत	५	१७६	२४२
नहिँ हरि लौं हियरा	२	४६४	६६	नावक-सर से लाइकै	२	५७०	१०४
नहिँ है बेनु बजावना	५	१६७	२४४	नासा मोरि नचाइ जे	३	४०६	६२
नहीं करत इतही	७	३८०	३७२	नास्ती दामिनि की	५	५५	२३३

नाह और के हाथ	७	५३५	३८४	निति उठि ऐसे रूप	३	२४१	१३५
नाह गरजि नाहर-	२	२१५	७७	निघरक छवि छाकैं	५	६६	२३४
नाह महल आगे	७	५१२	३८२	निपट अबुध समुझैं	६	१७०	३००
नाहिँ करत उपकरण	६	४५२	३२१	निपट अमिलती बात	,,	३२६	३१२
नाहिँ न प पावक	२	४८८	६८	निपट कसनि कटि-	५	४०	२३२
नाहीं नाहीं कहत ही	७	३७०	३७१	निपट लजीली नवल	२	३६८	६८
निंदत अति अभिराम	३	४७७	१५३	निबल सबल के	६	४७१	३२३
निकट परोसिन कलह	७	५०२	३८१	निबहै सोई कीजिए	,,	३५७	३१४
निकसत नाहीं जतन	४	५५१	२१५	निय तिय तो पिय	७	२८४	३६४
निकसि निकसि सखि	७	११५	३५१	निषमित जननी उदर	६	३४१	३१३
निकसि परसि कल	५	५००	२६७	नियर बैरिनि ननद	५	३१६	२५३
निज करनी लखि	४	१४१	१८३	निरख छबीले लाल	४	३६८	२०१
निज करनी सकुचेहिँ	२	४२६	६३	निरखत पलक न	६	५४५	३२६
निज कृत बिलसत	१	२०४	१७	निरखि अटारी पर	५	६६७	२८२
निज गुन घटत न	,,	६२२	५०	निरखि कनखियनि	,,	५३८	२७०
निज घट उठवाती	५	६१	२३६	निरखि कलाधर की	,,	१०८	२३७
निज नीचे कौं निरखि	३	११४	१२५	निरखि तरनि-कर-	३	५७५	१६१
निज नैनन देखत नहीं	१	३६५	२६	निरखि नवोढ़ा नारि	२	२६६	८३
निज पग सेवक	३	३४०	१४३	चिरखि बिमल पानिप	५	५०६	२६८
निज पाइनि बलि	,,	३८१	१४६	निरदय नेहु नयै	२	३७०	८६
निज बल कौं परिमान	,,	४७	१२०	निरफल स्रोता मुढ़ पै	६	४७	२६०
निज सुभाय छोड़त	७	२३	३४४	निरस बात सोई	,,	६८४	३३६
निज स्वरूप प्रभु देत	३	६३७	१६६	निलज नैन कुलटानि	३	२६२	१३६
निहुर गई नहिँ	,,	४७३	१५३	निस दिन खटकत	६	६५२	३३७
निडर अनय करि	१	६५१	५२	निस वासर घनस्याम	४	३८८	२०२
निडर बटोही बाट मैं	३	५८	१२१	निसा समैं अरबिंद	३	४६६	१५२
नित नित जाइ	७	१६१	३५५	निसि अंधियारी नील	२	२०७	७७
नित पनघट अनघट	,,	१५६	३५५	निसि अंधियारी में	५	५१५	२६८
नित प्रति एकत हीं	२	२३८	७६	निसि जागे रागे नयन	२	५८०	३८७
नित संसौ हंसौ बचतु	,,	१२४	७०	निसि जागे रागे नयन	५	६३८	२७८
नित हित सौं पालत	४	१६६	१८६	निसि दिन गुंजत	४	४	१७३

निसि दिन निंदति	३	१५६	१२६	नील-नखिन-दल सेज	३	१६६	१२६
निसि दिन पूरन	५	३३८	२५५	नील बसन दरसत	७	४२	३४६
निसि नियराति	३	१७०	१३०	नूपुर के ऊपर बड़ी	,,	३३	३४५
निसि बीते आपु इतै	७	४२२	३७५	नूपुर राजत रजत के	,,	५७	३४७
निहचै कारन विपत	६	४८६	३२४	नृप अनीति के दोष	६	४६२	३२४
निहचै नखत	३	३२६	१४२	नृप गुरु-तिय बन्धि	,,	६४६	३३६
निहचै भावी कौ कहौ	६	१५४	२६८	नृपति-चोर जल अनल	,,	५०१	३२५
नींद दुहुन के दगन	४	३६६	२०३	नृपति-नैन-कमलनि	३	३६४	१४७
नींद निरादर देत है	,,	२५४	१६२	नृप प्रताप तै देस में	६	२८८	३०६
नींद भरे आलस भरे	७	४३०	३७६	नेगी दूर न होतु है	,,	६१८	३३४
नींद भरे आलस भरे	२	६५५	३६३	नेति नेति कहि निगम	४	३८	१७८
नींद भार दावे दगनि	३	६०४	१६३	नेह अतर छबि	,,	६२६	२२१
नींद भूख अरु प्यास	,,	२२	११८	नेह करति तिय नीच	६	५१४	३२६
नीकी दई अनाकनी	२	११	६१	नेह छुटै हूँ रावरो	३	२३६	१३५
नीकी पै फीकी लगै	६	४	२८७	नेह दुरावत दुहुन कौ	७	४७४	३७७
नीकौ लसतु लिखार	२	१०५	६६	नेह नगर में कहि	४	१११	१८१
नीठि नीठि आगँ परै	३	१२७	१२६	नेह नगर में कहु तुहीं	,,	२३४	१६१
नीठि नीठि उठि बैठि	२	६४३	११०	नेह नगर में रीत यह	,,	४६८	२०६
नीच चंग-सम	१	७२२	५७	नेह न नैननु कौं कछु	२	३७	६३
नीच निचाई नहि	,,	६३६	५१	नेह नीर बंसी नयन	७	३७७	३७२
नीच निरावहि निरस	,,	७१२	५६	नेह फौज दुहुँ दिसि	,,	१८६	३५७
नीच हियै हुलसे रहैं	२	४६१	६८	नेह भरी अँखियान	,,	६७१	३६४
नीचहु उत्तम संग	६	४२२	३१६	नेह भरे हूँ पै जिन्हें	४	४४८	२०७
नीचीयै नीची निपट	२	२५७	८०	नेह भूलि सपनेहु में	५	२०१	२४४
नीचे मुख सुसक्यात	७	२३२	३६०	नेह मौन छबि मधुरता	४	६४	१८०
नीति अनीति बड़े सहैं	६	६६१	३३७	नेह लगे से ये बदन	,,	४३४	२०६
नीति-निपुन राजानि	,,	२६८	३१०	नेह ललक वन सौ भयै	,,	४८३	२१०
नीति प्रीति जस	१	१६५	१४	नेहिन उर आवत	,,	३०२	१६६
नीबी खोलनि कौं	३	५६१	१६०	नेहिन के मन काँच	,,	४३२	२०६
नीबी बँधनि लसनि	५	६६१	२८२	नेहिन के मन भावते	,,	४४७	२०७
नीम कपास निकास	,,	६६४	२८०	नेहिन पै मन भावते	,,	४८१	२१०

नेही तिल रसनिधि	४	१८४	१८७	नैन वाल मानै न री	५	५२१	२६६
नेही दग जोगी भए	,,	५८८	२१८	नैन बिसारे वान सौं	३	३०	११६
नेही-दग-दीवान नै	,,	११०	१८	नैन मिली मन हूँ	,,	८०	१२३
नेही मन कटि जात	,,	३५८	२००	नैन मीन उहिँ वाल	,,	३८८	१४६
नेही यामैं पलत है	,,	५८१	२१७	नैन लगार घूँ घट	४	३१६	१६७
नेही लोहा नूर लखि	,,	४४६	२०७	नैन लगै तिहि लगनि	२	३७२	८६
नैक उते उठि बैठियै	२	५००	६६	नैन सनेहन के मनौं	४	२८८	१६५
नैक नजरिया के लखै	४	३५२	२००	नैन सुने जे नेह के	७	६६६	३६६
नैक न जानी परति	२	११४	६६	नैना देत घताय सब	६	३७	२८६
नैक न मुरसी बिरह	,,	६८	६८	नैना नैक न मानहीं	२	१६०	७३
नैक हँसैहीं बानि	,,	१००	६८	नैना मोहन रूप सौं	४	२६३	१६५
नैकु ओट करि गिरि	३	३८४	१४६	नैम न हूँ दे पाइयै	,,	४१५	२०५
नैकु न उत टारै टरति	७	४६५	३८१	न्याय चलत बिगरै	६	४११	३१८
नैकु न घाकत पंथ में	३	४६	१२०	न्यारौ पैदौ प्रेम कौ	४	४१४	२०४
नैकौ उहिँ न जुदी	२	६१६	१०८	न्हाइ पहिरि पटु डटि	२	७००	११४
नैन अनी जब जब	४	३०५	१६६	न्हात सरोवर सखिन्ह	७	४७२	२७६
नैन उनीदे कच लुटे	५	३१६	२५३	न्हाय वसन पहिरन	५	५५१	२७१
नैन कमल ह्यौ लगत	४	३०६	१६६	ण			
नैन करन-गुन-धरन	१	२३४	१६	पंकज के धोखै मधुप	७	३३५	३६८
नैन किलकिला मीत	४	३४५	१६६	पंकज से पसरे लखे	,,	६२७	३६१
नैन चकोरन ह्यौ लखौ	,,	३८३	२०२	पंच तत्व की देह में	४	७४	१७८
नैन चोट आसी लगी	७	१४०	३५३	पंचन पंच मिलाइ कै	,,	५८	१७७
नैन जोरि मुख मोरि	३	१२८	१२६	पंडित अरु बनिता	६	४३०	३२०
नैन तिहारे नैन में	५	५३२	२७०	पंडित जन कौ स्म	,,	२८०	३०८
नैनन की अरु करन	४	३७६	२०२	पंडित पंडित सों	,,	२६५	३०७
नैननि कौ आनंद है	३	४७१	१५३	पग अंतर मग अगम	१	१२६	११
नैननि कौ प्रतिबिंब	७	३६५	३७१	पग जराइ की गूजरौ	३	१०८	१२५
नैन निवासी सौं	३	२२७	१३४	पगन मंद आवत	७	१४६	३५४
नैननि मढ़ि चित चढ़ि	५	८२	२३५	पगनि चलत अति	,,	४१६	३७५
नैन-बान जिहि वर	४	३४३	१६६	पगनि धरत कसकत	,,	२५०	३६२
नैन बान जेहि वर	,,	२६८	१६३	पगनि परे पिय पीठि	३	१४५	१२८

पगनि परथो पेखत	७	६५८	३६३	परम-पुरुख पर धाम	१	३	१
पगनि परथौ लखि	३	१४६	१२८	परमात्म पद राम	,,	१७१	१४
पग पग मग अगमन	२	४६०	६८	परमारथ-पथ-मत	,,	६७७	५४
पग परिवौ सुरि	३	१६४	१२६	परमारथ साधत सदा	७	३३६	३६८
पगी प्रेम नँदलाल कै	,,	२०	११८	परसत तिय के करनि	३	५६६	१६०
पगी प्रेम नँदलाल कै	,,	४०७	१४८	परसत पोंझत लखि	२	७०२	११५
पगी प्रेम नँदलाल कै	,,	६२१	१६४	परसत हीं याकौं भई	३	१६५	१२६
पचरँग रँग बँदी खरी	२	६२६	१०६	पर सौँहीं चितवत कहा	७	५५१	३८५
पजरथौ आगि बियोग	,,	५५३	१०३	परिकर पंकज के किए	३	१८०	१३०
पट की ढिग कत	,,	२१४	७७	परि पा करि बिनती	५	२२०	२४६
पट ना-देरी लख न ऊ	५	५८२	२७३	परिहरि सुख थरिहरि	७	५०७	३८२
पट सौं पोछि परी	२	५५५	१०३	परी परी कै बीजुरी	५	६२७	२७७
पट्टु पाँखै भखु-काँकरै	,,	६१६	१०८	परी बाल मुख-चंद	३	५८३	१६१
पतवारी माला पकरि	,,	३६१	६१	परी बिपत तैँ छूटियै	६	३६०	३१४
पति आयौ परदेस तैँ	३	६१	१२४	परुष बचन तैँ रोष	,,	६३३	३३५
पति पयोधि पावन	१	२४०	१६	परै न धुनि सुनि	३	४६७	१५५
पति-बिलास सुक	३	५८२	१६१	परो फेर निज करम	१	४८३	३६
पतिव्रत लौं व्रत करत	७	३४८	३६६	परथो जोरु बिपरीत	२	१२६	७१
पति रति की बतियाँ	२	२४	६२	पल अँजुरिन सौं	४	५५४	२१५
पति-रितु औगुन-गुन	,,	४१६	६३	पल अँजुल जोरै कहै	,,	३२६	१६८
पन्ना हीं तिथि पाइयै	,,	७३	६६	पलक परौ नहिँ होइ	,,	१४०	१८३
पद-पंकज मन में	७	१०५	३५१	पलक पलक लागै	३	६५०	१६७
पवि पाहन दामिनि	१	८६	७	पलक पानि कुस	४	५५५	२१५
परखि परखि अति	७	४०८	३७४	पल जौरन कै दग	,,	३०६	१६६
पर घर कबहुँ न	६	११३	२६५	पल न चलै जकि सी	२	५३४	१०२
परजन सो मनसौ करै	,,	६६३	३४०	पलनु पीक अँजनु	,,	२२	६२
परतछ नीके देखिए	,,	४२४	३१६	पलनु प्रगटि बरुनीनु	,,	६५६	१११
परतिय-दोष पुरान	२	२६४	८१	पल-पिँजरन में दग	४	१५४	१८४
परदे बाला बर लसै	५	१२६	२३८	पल सोहैं पगि पीक	२	४६८	६६
परधन लेत छिनाय	६	६६३	३३८	पल्लव पग कर अधर	३	५०४	१५५
परम दया करि दास	४	३६	१७६	पवन तुहीं पानी तुहीं	४	४२	१७६



पवन परस ते' झूलते	५	५५०	२७१	पाय पुन्य अरु जोति	४	४०	१७६
पसु पच्छी हू जानहीं	४	६१	१८०	पाय प्रकृति बस	६	५१३	३२६
पसोपेस तजि आइए	५	२३६	२४७	पाय लगो छेरो न	५	५२६	२६६
पहिरत हीं गोरे गौर	२	५१३	१००	पायै बिहित अहार कौं	४	५६२	२१८
पहिरन की हैसै रही	५	४०५	२६०	पारचौ सोरु सुहाग कौं	२	६६२	११२
पहिर नवेली नीलपट	,,	३७८	२५८	पावक-कर तै मेह-कर	,,	४०२	६२
पहिरा री बे-हूनरी	,,	१६	२३०	पावक सो नयनजु लगे	,,	७६	६७
पहिरि न भूषन कनक	२	३३५	८६	पावत बहुत तलास तै	६	५६६	३३२
पहिरि सेत सारी	७	६३२	३६१	पावस-घन अंधियार	२	४८६	६८
पहिरि नगगन आभरन	५	६३६	२७८	पावस निसि कारी	७	२५६	३६२
पहिले कहिले कहन	,,	३५६	२५६	पावस मास अटे पटे	५	३५५	२५६
पहिलौ दिन पहिलौ	७	६१	३५०	पावै ऐपन ओप नहि	३	३७	११६
पहुँचत द्वार गली अली	५	६१४	२७६	पासे गर्भवती तिया	,,	३०६	१४०
पहुँचति डटि रनसुभट	२	१७७	७४	पाही खेती लगन बटि	१	७३४	५८
पहुला हारु हियँ लसै	,,	२४८	८०	पिता विबेक-निधान	,,	८	१
पाँच भेद चर गन	१	३३७	२७	पिय अपराध अनेक	३	१६८	१३०
पाँय परेहु पिसुन सों	६	३१८	३११	पिय आगम सुनि	,,	१४०	१२७
पाइ तरुनि-कुच उच्च	२	२३७	७६	पिय आयौ परदेस तै	,,	३०८	१४०
पाइन परि बूमत	७	४१२	३७४	पिय आयौ परदेस तै	,,	३११	१४१
पाइनि परि हैं हारी	,,	२२२	३६०	पिय के दरपन मैं	,,	६३	१२४
पाइन प्रेम जनाइ जिन	३	३५२	१४४	पिय के बिकुरे बिरह	६	५६७	३३३
पाइन लखि लाली	७	२७०	३६३	पिय कै ध्यान गही	२	५८३	१०५
पाइ महावर दैन कौ	२	३५	६३	पिय कै मन मन-	३	६५३	१६७
पाइल पाइ लगी रहै	,,	४४१	६५	पियत अघर तूँ देति	,,	३६७	१४७
पाके पकए बिटप दल	१	६६१	५५	पियत अघर मैं देति है	,,	३६६	१४७
पाटी लखि तरुनी	७	४६	३४६	पियत रहत पिय नैन	,,	४१७	१४६
पाती आई पीत पट	५	४२८	२६२	पियत रहैं अघरानि	,,	२६३	१३६
पानिप-पूर-पयेधि मैं	३	७२	१२२	पिय तिय सों हँसि कै	२	४३	६४
पानिप मैं धरमीन कौ	,,	१७	११८	पिय-नैननि के राग कौ	३	४१८	१४६
पानिप हीन लखौ	७	५५८	३८६	पिय पिचकारिन रंग	७	२३८	३६१
पानि पियूप-पयोधि मैं	३	७१	१२२	पिय प्रानन की प्रान तूँ	,,	६२	३४७

पिय प्रानन की प्रान तूँ	७	३४३	३६६	पी पेखे ती-बदन	५	१३६	२३६
पिय-प्राननु की पाहरू	२	२७८	८२	पीरी पाती पावते	,,	५३६	२७०
पिय-बिछुरन कौ दुसहु	,,	१५	६२	पीरी पीरी तन भई	७	६४०	३६२
पिय बिदेस घर सास	७	४६४	३७८	पीवत नहीं अघात	४	३०३	१६६
पिय बिन सूनी सेज	,,	५८८	३८८	पीवत पीवत रूप-रस	,,	३३४	१६८
पिय-वियोग तिय-दंग-	३	२५८	१३६	पुन्य विवेक प्रभाव तै	६	२७३	३०८
पिय-मन रुचि ह्वै	२	६४०	११०	पुरजा पुरजा करत है	४	३३६	१६८
पिय मिलाप कै हेत	३	२७५	१३८	पुहमी पानी पावकहु	१	१६८	१४
पिय मिलाप कौ सुख	,,	२६६	१३६	पुहुपित पेखि पलास-	५	१३०	२३६
पिय-सुख पंकज में परे	,,	५७४	१६१	पूछ क्यों रूखी परत	२	६८८	११४
पिय मुख रुचि चारो	,,	४६०	१५२	पूजनीक गुन तै पुरुष	६	६६६	३३८
पियराई तन में परी	,,	२३५	१३५	पूरत मन की लालसा	३	६१२	१६४
पिय रुख लखि	५	७२२	२८४	पूरन परमारथ दरस	१	५००	४०
पिय समीप कौ सुख	३	३०६	१४०	पूस बरुन दिसि कों	५	६४३	२७८
पिय सौहैं भौहैं कसै	७	४३१	३७६	पूस मास सुनि	२	१४६	७२
पियहि उठावति पगनि	३	५६७	१६३	पूस सकारहि कहि	५	५६७	२७२
पिसुन छल्यौ नर	६	२०	२८८	पेखि चंदचूड़हि अली	,,	५१२	२६८
पिसुन बचन सज्जन	३	३२५	१४२	पेखि रूप संग्या कहब	१	४६३	३६
पी आवन की को बहै	५	८४	२३८	पेट न फूटत बिन कहे	,,	७३७	५८
पी बढिगे सुठि हठ	,,	५४	२३३	पोर-पोर तन आपनौ	४	४८६	२१०
पीड न आयौ नीद	३	२६६	१३७	पोर पोर परत तनहि	,,	५४२	२१४
पी चूमे परबाल लखि	५	५८५	२७४	प्यारी अन प्यारी	६	५६१	३३२
पीछे कारंज कीजिए	६	२७०	३०७	प्यारी की मुसुक्यानि	३	३१४	१४१
पीछे कारंज कीजियै	,,	३६१	३१७	प्यारी झूलत प्यार	७	२६७	३६३
पीछे ते गहि लौंक री	५	१८६	२४३	प्यारी पेखत पेखनौ	,,	६०६	३८६
पीठि दियै हीं नेक	२	३५०	८८	प्यारो घेरु निहारि कै	५	२२२	२४६
पीत रँगुलिया पहिरि	३	७०१	१७१	प्यास सहत पी सकत	४	६४६	२२३
पीन पयोधर-भार यह	,,	१११	१२५	प्यासे दुपहर जेठ के	२	३६६	८६
पी-पाती पाते उठो	५	३२५	२५४	प्यौ राख्यौ परदेस तै	३	१६२	१३१
पी पिक्क से निकसे	,,	५६७	२७५	प्रकृति मिले मन	६	१०४	२६५
पी पीछे यह सुनि	,,	५०१	२६७	प्रगट कुटिलता जौ	३	४१४	१४८

प्रगटत अंजन लीक	४	३२४	१६८	प्रान पियारौ पग	३	२४	११८
प्रगट दरप कंदरप कौ	३	३४५	१४३	प्रान प्रिया हिय में	२	२६७	८३
प्रगट भए देखत	१	४४२	३५	प्रापति के दिन होति	६	५८१	३३१
प्रगट भए द्विजराज-	२	१०१	६८	प्रापति तैसी होति है	११	१२३	२६६
प्रगट मिले विन	४	६००	२१६	प्रिय आलोकनि में	३	५७६	१६१
प्रतिपालक सेवक	३	४५६	१५२	प्रीत तार अरु तार में	४	४२८	२०६
प्रतिविंबित जयसाहि	२	५६७	७३	प्रीतम अपनी चाह	११	५२१	२१३
प्रतिविंबित तो विंब	३	३६३	१४५	प्रीतम इतनी बात कौ	११	८८	१७६
प्रतिविंबित निज रूप	११	५४१	१५८	प्रीतम कहि यह बात	११	३६५	२०३
प्रथम अरध छोटी	११	६६४	१६८	प्रीतम दग मिहचत	२	४२२	६३
प्रथम कामि-जन	११	५८८	१६२	प्रीतम पैरि खरे रहे	५	७०	२३४
प्रथम ग्यान समुझै	१	५८६	४७	प्रीतम प्रिया पियाइ	३	६५२	१६७
प्रथम नगरि नूपुर	७	३६४	३७३	प्रीतम मरजी के भए	४	३७६	२०२
प्रथम सुमिर तत्र दगन	४	२१४	१८६	प्रीतम रूप कजाक के	११	१२५	१८२
प्रथमहि दारु खाइ कै	११	२८२	१६४	प्रीतम ही तैं नेह कौ	११	४५३	२०७
प्रथमहि नैन-मलाह	११	२७७	१६४	प्रीति डुटै हू सजन के	६	४६५	३२५
प्रथमहि पारद में रही	५	१७	२३०	प्रीति द्वैज द्विजराज	३	३५४	१४४
प्रनतपाल बिरदावली	२	२०	३४४	प्रीति पपीहा पयद	१	८०	७
प्रनत रसत मिलत न	७	५६३	३८६	प्रीति प्रतीति लिये	५	१३४	२३६
प्रफुली सुमन रसाल	३	६३६	१६६	प्रीति राम-पद नीति-	१	६६५	५५
प्रभु कौं चिंता सबन	६	४६६	३२५	प्रीति सगाई सकल	११	७३८	५८
प्रभु-गुन-गन भूखन	१	३१	३	प्रेम अडोलु डुलै नहीं	२	६३१	१०६
प्रभु प्रभुता जाकहँ	११	७२	६	प्रेम उमगि कविता-	१	४१३	३३
प्रभु समीप छोटे बड़े	११	७०२	५६	प्रेम छुके मन कौं	६	२४३	३०५
प्रभु सों बात दुरी न	६	६७७	३३६	प्रेम नगर की रीत	४	४१२	२०४
प्रलय-करन वरसन	२	५४१	१०२	प्रेम नगर के कान दे	११	४१३	२०४
प्राग कवन, गुरु-लघु	१	२८४	२३	प्रेम नगर दग जोगिया	११	२०६	१८८
प्रान नृपातुर के रहैं	६	२१	२८८	प्रेम नगर में दग-वया	११	३४७	१६६
प्राननाथ परदेस कौं	३	३६६	१४७	प्रेम निवाहन कठिन	६	६२	२६४
प्रान निवासी तोहि	११	३३७	१४३	प्रेम नेम के पंथ कौ	११	३७२	३१५
प्रान पियारे के दरस	६	६५७	३३७	प्रेम पगत वरजी न	११	३४	२८६

प्रेम पगन जासों भई	६	३४४	३१३	फूले नहीं पलास ए	३	५८५	१६२
प्रेम पियाला पी छुके	४	४०८	२०४	फूले फड़कत लै फरी	२	२४७	८०
प्रेमी प्रीत न छुड़िहीं	६	४४१	३२१	फेर न ह्वै है कपट सों	६	३५	२८६
प्रेम बैर अरु पुन्य अघ	१	६०२	४८	फेरु कछुक करि पोरि	२	१४४	७२
प्रेम लग्यो अंगार है	३	४५१	१५१	फैले वृंद फनिंद के	७	६३०	३६१
प्रेम सरीर प्रपंच रुज	१	४६	४	फोरत बानै ढाल कै	४	३२१	१६७
प्रेरक ही तैं होत है	६	३६२	३१४	फोरहिं सिल लोढ़ा	१	७४१	५६
				फौजदार कचनार किय	७	२१०	३५६

## फ

फल विचारि कारज	,,	२६६	३०७
फिरतु जु अटकत	२	५२८	१०१
फिर पीछे पड़ताइए	६	३१५	३११
फिरि कै चितई प्रेम बस	७	४४८	३७७
फिरि घर कौ नूतन	२	५६७	१०७
फिरि फिरि आवति	३	४२६	१४६
फिरि फिरि आवति	,,	१२४	१२६
फिरि फिरि कुच	७	४६८	३८१
फिरि फिरि चितु रतहीं	२	१०	६१
फिरि फिरि दौरत	,,	६७०	११२
फिरि फिरि बिलखी	,,	१३८	७१
फिरि फिरि वृक्षति	,,	२१६	७७
फिरि फिरि राधाकृष्ण	७	१०	३४३
फिरि सुधि दै सुधि	२	६६०	१११
फीकी पै नीकी लगै	६	५	२८७
फीकौ थोरे लौन तैं	,,	१६०	३०१
फूल कपोल मधूक के	३	५७४	१६१
फूल गेंदना इक नवल	७	११६	३५२
फूलति कली गुलाब	३	६५८	१६७
फूल बिसूलै देहि री	५	१५	२३०
फूलमाल अति प्यार	७	५५६	३८६
फूली नागरि कमलिनी	३	२८५	१३६
फूली फाली फूल सो	२	४५८	६६

## ब

बंचक-बिधि रत नय	१	६०३	४८
बंदन तिलक लिलार	३	१०६	१२५
बंधुजीव लागै भलिन	५	५४४	२७०
बंधु भए का दीन के	२	६१	६५
बंसीबट की गैल मैं	७	४५५	३७८
बंसी धुन जवनन	,,	५१०	३८२
बंसी धुनि जवनन	,,	७१८	३६८
बंसी हूँ मैं आपु ही	४	५६	१७७
बँहकाए तैं और के	,,	२५२	१६२
बकुल चिकुंज मिले	५	१८	२३०
बचन कहत आवत न	३	५२०	१५७
बचनन मैं दरसावती	७	६७४	३६४
बचन रचन कापुरुष	६	५७०	३३०
बचो रहौ चित चोट	४	४६८	२११
बजनी पँजनी पायलौ	५	१११	२३७
बड़ अँखियाँ बड़रे	७	६१०	३६०
बड़रे गुन बड़रे दगन	,,	६५	३५०
बड़वानल पर बड़त	३	६२६	१६५
बड़वानल से जो लगे	,,	२३३	१३५
बड़ी ठौर को लघु लहै	६	६६७	३४०
बड़ी बड़ाई नीच कौ	,,	४६२	३२२
बड़ी विरह की रैन यह	४	५१३	२१२

बड़े अनीति करें तऊ	६	२६७	३०६	बढ़त बढ़त बढ़ि जाहू	३	३५६	१४४
बड़े कष्ट हू जे बड़े	,,	५०३	३२५	बढ़त बढ़त संपति	२	३३१	८६
बड़े कहावत आप सौं	२	२२६	७८	बढ़ि बढ़ि मुख समता	५	२६	२३१
बड़े कहैं सो कीजियै	६	१६४	३०२	बढ़े न ऐसो कौन है	६	३५२	३१४
बड़े जिती लघुता करें	,,	६७१	३३८	घतरस लालच लाल	२	४७२	६७
बड़े जु चाहैं सो करें	,,	४४३	३२१	घदन इंद्रु अरविंदु	३	४६१	१५२
बढ़ेन की संपति सबै	,,	७०१	३४१	घदन इंद्रु तैरा अली	,,	४८४	१५४
बढ़ेन पै जांचे भलौ	,,	७६	२६२	घदन-कूप तैं रूप-रस	४	२७१	१६३
बढ़े न लोपैं लाज	,,	२२०	३०४	घदन गयौ कुंभिलाय	५	७०४	२८३
बढ़े न हूजै गुननु	२	१६१	७५	घदन चंद की चादिनी	३	४३८	१५०
बड़े पाप वाढ़े किए	१	७२४	५७	घदन फेरि हँसि हेरि	७	६८८	३६६
बड़े घचन पलटैं नहीं	६	३३७	३१३	घदन-बहल कुंडल-	४	११५	१८१
बड़े बड़न को दुख	,,	२७	२८६	घदन मोरि हँसि हेरि	७	६८०	३६५
बड़े बढ़ाई के जतन	,,	५७७	३३१	घदन-सरोवर तैं भरे	४	१०५	१८१
बड़े बड़े कच छुटि	५	२६५	२५१	घधिक बधे परि पुन्य	१	६६	८
बड़े बड़े कौं बिपति	६	५०२	३२५	घन अग्र्यान कहूँ	,,	१४७	१२
बड़े बड़े छबि-छाक	२	४४८	६५	घनक मढ़े कोठे चढ़े	५	२७२	२५०
बड़े बड़े तैं छल करहि	१	६६६	५३	घन तज चलिए कुंज	७	८८	३४६
बड़े बड़े सौं रिस करै	६	५०७	३२६	घन तन कौं निकसत	२	१४७	७२
बड़े बड़े हू काम करि	,,	३३६	३१२	घनती देख बनाइयै	६	२३	५८८
बड़े बिपत में हूँ करै	,,	३३५	३१२	घनते' गुन कहि	१	३१२	२५
बड़े बिबुध दरबार तैं	१	७१७	५७	घन घन घनक वसंत	७	२१६	३५६
बड़े भले सब लच्छ	६	६७५	३३६	घन घनिता दगकोपमा	१	२६५	२१
बड़े भार लै निरबहै	,,	३०१	३१०	घन वाटनु पिक	२	४७५	६७
बड़े रतहि लघु के	१	६३४	५०	घनमाली दिसि सैन	५	२८१	२५०
बड़े राम-रत जगत में	,,	६३०	५०	घनवारी वारी गई	४	३७०	२०१
बड़े सहज ही बात तैं	६	१६३	३०१	घनिता सैल-सुतास	१	२२८	१६
बड़े हमारे दग कहौ	३	१८२	१३१	घनी बदन ते' फरत	५	५७७	२७३
बढ़ौ मीत तुव मिलन	४	६०६	२१६	घनी सुवरनी वरवसी	,,	५३३	२७०
बढ़त आपनौ गोत कौ	,,	६०	१८०	घनै जहाँ के तहाँ रहै	४	२८१	१६४
बढ़त निकसि कुच-	२	६६८	११४	घनेा बनायो है सदा	१	२१३	१७

बय समान रुचि होति	६	६२६	३३५	बलि कुंजत हैं	५	६०४	२७५
बरखत हरखत लोग	१	६२८	५०	बलि चलि कै अब	,,	४६५	२६७
बरखि परख पाहन	,,	६१	८	बलि तिय हिय ते	,,	५७५	२७३
बरखि बिस्व हरखित	,,	४५०	३६	बलि मिसु देखत	१	३५१	२८
बरजि राख वटपार ये	४	३३३	१६८	बलि सब भाँति	५	६१८	२७६
बर जीते सर मैन के	२	६७	६६	बलि सुनि ए गनि ए	,,	६०१	२७५
बरजे नेकु न मानई	७	१५७	३५५	बलि हाँकी वा दिन	,,	३५८	२५६
बरजै दूनी हठ चढ़ै	२	६८६	११३	बलिहारी अब क्यों	,,	२७०	२४६
बरतमान आधीन दोउ	१	४०६	३३	बलिहारी उतही रहो	,,	६१०	२७६
बरन जेग भौ नाम	,,	३६१	३१	बस की इन अँखियानि	,,	३१	२३१
बरनत भौंह कमान	३	४६२	१५२	बसत छमा गृह जासु	१	४०६	३२
बरनत साँच असंग	,,	३७६	१४६	बसत जहाँ राखव	,,	२२६	१८
बरन दुतिय नासक	१	२८५	२३	बसत रहत मतिराम	३	३७०	१४५
बरन धनंजय-सून-पति	,,	२५७	२१	बसन फटे उपटे सुबुक	५	४८६	२६६
बरन धार बारिधि	,,	३३२	२७	बसन बारि बाँधत	१	३८४	३१
बरन वास सुकुमारता	२	६६४	११४	बसन लगी चित	५	७०८	२८३
बरन विसद मुकता	१	७४४	५६	बसन हरत बस नहि	,,	६६	२३६
बरन हीन इव रन	७	२६६	३६६	बसन हरथौ पिय	३	५७७	१६१
बरबस करत बिरोध	१	५८८	४७	बस हा भौ अरि हित	१	३४६	२८
बरमाला बाला सुमति	,,	७४६	५६	बसिबे कौ निज	३	६३	१२१
बरमेधा मानहु गिरा	,,	४०३	३२	बसियै तहाँ बिचार	६	३६६	३१७
बरसाहत कौ बार है	५	५२२	२६६	बसि सकोच दस	२	७४	६६
बरसाहत है मिलन	७	२४६	३६२	बसै बुराई जासु तन	,,	३८१	६०
बरसाहति बर कौ चहुँ	३	१५२	१२८	बसौ बरौठे पथिक	७	४६२	३७८
बरसाहति मैं सखिनि	,,	२०६	१३३	बस्यौ मदन तन-सदन	,,	३६४	३७१
बरसा रितु बीतन	,,	१०	११७	बहकाए बहकत फिरत	,,	३३२	३६८
बरुनी जोती पल पला	४	१४६	१५०	बहकि न इहि	२	६५४	१११
बरुनी-बंधनवार रुचि	,,	२६५	१६५	बहकि बढ़ाई आपनी	,,	२८२	८२
बरु बरछी कै बर लरै	५	३७१	२५७	बहके सब जिय की	,,	६	६१
बरु मराल मानस तजै	१	३५	३	बहत समीर सुसीतल	७	२१६	३५६
बलम-पीठि तरिवन	३	५०७	१५६	बहु गुन अम तै	६	५०५	३२५

बहुत किए हू नीच	६	२१३	३०३	वानि तजै नहि	५	१६०	२४१
बहुत जु बीते तनक	,,	५३८	३२८	वानी बोलि कठेठिए	,,	३२२	२५३
बहुत द्रव्य संचय	,,	५२४	३२७	बाम बांह फरकति	२	५७२	१०५
बहुतन कौं न विरोधिए	,,	१५७	२६६	बामा भामा कामिनी	,,	७०३	११५
बहुत न बकिए	,,	३४७	३१३	बारक तुम गिर कर	४	४८८	२१०
बहुत निकाइन तै	४	१३४	१८३	बार दिवस निसि	१	६१५	४६
बहुत निबल मिलि	६	१५८	२६६	बार बार नहि होत	४	६२४	२२१
बहुत भए किहि काम	,,	४६७	३२३	बार बार बरजी अरी	५	४५३	२६३
बहु धनु लै अहसानु	२	४७६	६७	बार बार ब्रज वाल कौं	४	४५६	२०८
बहु नाइक सौं बावरी	३	५७२	१६१	बार बार यातै कहत	७	७०५	३६७
बहु वासर बिछुरे	७	६४६	३६३	बार बार वा गेह सौं	३	१२६	१२६
बहु सुत बहु रुचि बहु	१	६५२	५२	बारानसी विराग नहि	१	४१७	३३
बहै सबै अनुनय	३	६३०	१६५	बारिज बारिज धरन	,,	२५२	२०
बाँके बिरुदैंती भरै	७	४८५	३८०	बारों बलि तौ दगनु	२	६२८	१०६
बाँके सीधे को मिलन	६	२४६	३०६	बाल अलय जीवन	३	६७७	१६६
बाँचत कुसुम कुसुंभ	३	१५८	१२६	बाल कहा लाली भई	२	१६८	७४
बाँध अरे हित थार	४	४७६	२०६	बाल गहत दसननि	३	६८२	१६६
बाँधी दग-डोरानि सौं	३	२३६	१३५	बाल गुलाब प्रसून	५	१५२	२४०
बाँधे जे मन चित्त दै	४	४०२	२०४	बाल छुबीली पियनु	२	६०३	१०३
बाके रन तै होतु है	६	६३०	३३५	बाल दरीचे बिच	५	४७७	२६५
बाढ़तु तो डर-डरज-	२	४४६	६५	बाल न चमकै चंचला	,,	५७६	२७३
बाढ़ी सुंदरता अधिक	४	३७२	२०१	बाल निहाल भई	३	२१३	१३३
बात कहन की रीति	६	१०५	२६५	बाल-बदन को मदन-	४	१०२	१८०
बात चलत जाकी करै	४	३३५	१६८	बाल बदन प्रतिबिंब	३	३४४	१४३
बात प्रेम की राखिए	६	२४४	३०५	बाल बेलि-सूखी	२	२१६	७७
बात बात मो दरद	४	५४६	२१५	बालमु बारै सौति	,,	१८७	७५
बात बिना अतिसय	१	६००	४८	बाल रही इकटक	३	३०५	१४०
बातहि ते बनि	,,	५६६	४८	बाल लाल-मुख	,,	५४७	१५६
बातहि बातहि बनि	,,	५६८	४८	बाल सखिनि कौ नीर	,,	१७६	१३०
बाद करत बकबाद	७	४२०	३७५	बाल सुरत-रस-रीति	,,	४६८	१५५
बान-जुक्त जू तट	१	२६५	२४	बासन कौ पानिप	,,	१८६	१३१

वासर मैं रवि हा	३	६७४	१६८	विधि बाजीगर निरमर्द	५	६१५	२७६
वास्यौ सुमन-सुवास	४	२६४	१६३	विधि विधि कौन करै	२	६७५	११३
वाहक दग नँदलाल	,,	२४८	१६२	विधि रुठै तूठै कवन	६	३३	२८६
वाहन सेख सु-मधुप	१	२५०	२०	विधिवत छवि के फंद	४	२५७	१६२
विंदु लसत अँसुवानि	३	१३८	१२७	विधि वह दिन ऐहै	५	१८१	२४३
विकच अरुन मेचक	,,	५८७	१६२	विधि हूँ ते जे अधिक	४	४५५	२०८
विकल परी बरि रहि	५	६३१	२७७	बिधु बंधुर मुख भा	५	५७	२३३
विकल लाल कौं हाल	३	३२३	१४१	बिधु सम सोभा सार	७	२८६	३६५
विकसित नवमल्ली-	२	१७५	७४	बिन आदर जौं रूप	४	८४	१७६
विगत देह-तनुजा-सु-	१	२४६	२०	बिन उद्यम मसलत	६	४६१	३२४
विगरनवारी वस्तु	६	५७३	३३१	बिन औसर न सुहाइ	४	६२१	२२०
विगरौ होय कुसंग	,,	२३६	३०५	बिन करता कारज	१	४७०	३८
विगसत सुमन गुलाब	७	४०७	३७४	बिन गुन कुल जाने	६	५०	२६०
विचरि चहुँ दिसि	५	३८०	२५८	बिन गुनाह निज	७	५८५	३८८
बिछुरत रोवत दुहुँनि	३	१६३	१२६	बिन चाहे नहिँ चैन	५	४३१	२६२
बिछुरत खुँदर अधर	४	१६३	१८७	बिनती रति विपरीत	२	१३०	७१
बिछुरे जिए सकोच	२	५७८	१०५	बिन दरसन सरसन	४	५२६	२१३
बिछुरे गए बिदेस हूँ	६	३६८	३१७	बिन दामन सौं दाम	,,	४५७	२०८
बिटप बेखिगन बाग	१	३७७	३०	बिन देखे जाने परै	६	६१५	३३४
बित चोर न चितचोर	४	६२५	२२१	बिन देखे तुम भावते	४	५८७	२१८
बितैँ सिसिर रितु-	३	६७	१२४	बिन देखे समुझै सुने	१	४४६	३६
बिथुरे कच कुच पै	५	३६६	२५६	बिन पर उड़त रहैं	५	६७१	२८०
बिथरथौ जावकु सौति-२	५०७	१००		बिन पूछे ही कहत हैं	६	३६७	३१७
बिथ सौतिनु देखत	,,	१२२	७०	बिन बनाव बानिक	,,	३७७	३१६
बिदित न सनमुख	४	२४४	१६१	बिन बातन रचती	७	१५८	३५५
बिद्या धन उद्यम बिना	६	२२	२८८	बिन बूझै अपसोस	,,	४३६	३७६
बिद्या याद किए बिना	,,	३५४	३१४	बिन बूझै ही जानिए	६	३१२	३११
बिधए सैन खिलार	४	१०३	१८१	बिन बूझै सूझै न कुछ	७	८५	३४६
बिधि इन अनियारे	५	२४२	२४७	बिनय छत्र सिर जासु	१	५५२	४४
बिधि के बिरचे सुजन	६	४१	२६०	बिनय बिचार सुहृदता	,,	४१२	३३
बिधि ने जग मैं तै	४	१२६	१८२	बिनसत बार न	६	३२४	३१२



बिनसत सतगुन	६	१७१	३००	बिरह जरी लखि	२	५६६	१०६
बिन सेवे तस कुंज	५	४४४	२६३	बिरह क्कार तन भसम	४	५६१	२१६
बिन स्वारथ कैसे सहैं	६	१४४	२६८	बिरह तचे तिय	३	६६६	१६८
बिन हूँ बाग लगाम	४	६७	१८०	बिरह तपन तन अति	४	५६६	२१६
बिना कहे हूँ सत	६	४४६	३२१	बिरह तपन पिय बात	६	६२	२६१
बिना तमाखू सूरती	४	३११	१६७	बिरह दहन लागी	५	४८८	२६६
बिना तेज के पुरुष	६	५१२	३२६	बिरह पीर कौ नैन ये	४	१५८	१८५
बिना दिए न मिलै	,,	४५३	३२१	बिरह पीर व्याकुल	६	६०६	३३३
बिना प्रयोजन भूलि	,,	३८४	३१६	बिरह बरहि भर सीत-	५	२८६	२५१
बिना बीज तरु एक	१	३५२	२८	बिरह बरी सकुचनि	,,	६३४	२७७
बिना सिखाए लेत है	६	३४२	३१३	बिरह बाँह कह सकत	४	२७०	१६३
बिनु काटे तरु-बर जथा	१	५४६	४४	बिरह विकलता ते	५	६८२	२८१
बिनु देखे समुझ न	७	१२०	३५२	बिरह विकल बिनु हीं	२	५२६	१०१
बिनु देखै दुख के	३	२०८	१३३	बिरह-बिथा जल	,,	४१४	६२
बिनु पाए परतीत	१	३८३	३१	बिरह-विपति-दिनु	,,	४५५	६६
बिनु प्रपंच बर भीख	,,	६६७	५३	बिरह बैर आसा	४	५७३	२१७
बिपत परे सुख पाइए	६	२४६	३०६	बिरह लपट की कपट	७	६६८	३६६
बिपति बड़ेई सहि सकै	,,	२५६	३०६	बिरह समुद बाढ़ी	४	५७१	२१७
बिपति समय हूँ देत	,,	६३८	३३६	बिरह-सिंधु अवगाहि	,,	५३०	२१३
बिबरन आनन अरि	५	६३२	२७७	बिरह सुकाई देह	२	३२६	८६
बिविध चित्र जल-पात्र	१	१५६	१३	बिरहा ग्रीष्म दुपहरी	४	५६५	२१८
बिविध प्रकार कथन	,,	५६२	४७	बिरही जन के चित्त कौं	६	५५१	३२६
बिबुध-काज बावन	,,	६६८	५३	बिरी अधर अंजन	३	३१८	१४१
बिमल बाम के बदन	३	४८८	१५४	बिलखी डभकौहै चखनु	१	६६	७३
बिमल बोध कारन	१	२३	२	बिलखी लखै खरी	,,	५८७	१०६
बिरह-अग्नि सुन सुन	४	५१६	२१३	बिलग बिलग सुख	१	५६	५
बिरह अनल कुमुदिन	३	५८१	१६१	बिबद्धि गयौ मन	४	६	१७३
बिरह आंच नहि सहि	५	५६०	२७४	बिषधर स्वास सरिस	५	१४	२३०
बिरह आंच मन उड़ि	३	४२०	१४६	बिषम वृषादित की	२	३६७	८६
बिरह घाम इन पै	४	७	१७३	बिषयनि तैं निरवेद	३	४१०	१४८
बिरह जरनि गुरुजन	७	५६५	३८६	बिसद वसन मेहीन मैं	५	५७२	२७३

विसरि जात सब दुख ३ ५३१ १५७	वेंदी ललित मसूर की ३ १२३ १२६
विसरि जात सुध बुध ७ १४८ ३५४	बेग आइकै मीत अत्र ४ ५३७ २१४
बिहंग बीच रैयत १ २२४ १८	बेत सबन मनियन ५ २३२ २४६
बिहंसति सकुचति ली २ ६६३ ११४	बेद कहत जहँ लगि १ ३४० २७
बिहंसतु नील दुक्कल ३ ४७६ १५३	बेद कहत सबको १ ४६० ३७
बिहंसि केलि मंदिर १ २६६ १३७	बेद पुराणहु साख १ ५६१ ४१
बिहंसि बढायौ लाल १ ४६५ १५२	बेद बिखम क बरन १ ३११ २५
बिहंसि बिहंसि लागत ७ ४०२ ३७४	बेदब्यास सब खोजहों ४ २७ १७५
बिहंसि बिहंसि सखि १ ६७६ ३६५	बेदाना सै होत है १ ८७ १७६
बिहंसि बुलाइ बिलोकिर ६१७ १०८	बेधक अनियारे नयन २ २७ ६३
बिहरत बृंदा-बिपिन ७ ७ ३४३	बेनी गूँदत एक की ३ २४५ १३५
बिहसिन आई नीर ५ १६ २३०	बेपरवाही बाँध बाँध ४ १३३ १८३
बीज आयु जर आयु ४ ५७ १७७	बेलि कमान प्रसून ५ २२६ २४६
बीज धनंजय रवि १ २१८ १८	बलि तेरी छवि भाव १ २२८ ३४६
बीर कवन सह मदन- १ २७६ २२	बेंसर है सुंदर सुखद ७ ४७६ ३७६
बीर बधू ही पापिनी ५ ७२ २३४	बेसरि-मोती-दुति २ १७३ ७४
बुद्धि-बिनय-गत-हीन १ ६ १	बेसरि-मोती धनि तुहीं १ ७०६ ११५
बुद्धि बिना विद्या ६ ३४६ ३१३	बैठत इक पग ध्यान ४ ६६० २२३
बुद्धिहिं धारत अनय १ ३८१ ३०	बैठि निसागम निलय १ ३१८ २६
बुध किसान सर बेद १ ६५८ ५२	बैठि रही अति सघन २ ५२ ६५
बुधि अनुमान प्रमान २ ६४८ ११०	बैठि रहै रोवै हँसै ३ ४६४ १५५
बुरी करै तेइ बुरे ६ ३३८ ३१३	बैठी गुरुजन साथ मैं ७ ४६६ ३७६
बुरी करै पर जे बड़े १ ३०२ ३१०	बैठी जसन जलूस करि १ २७५ ३६४
बुरे लागत सिल के १ २६ २८६	बैठ्यौ आनन कमल के ३ ५०६ १५६
बुरौ तऊ लागत भलौ १ ५०६ ३२६	बैठ्यौ ओज जगाइ कै १ ५५६ १५६
बुरौ बुराई जौ तजै २ ५८४ १०६	बैन कहत हैं सैन सों ५ ५७० २७२
बुरौ होय तब सकुल ६ २७८ ३०८	बैपारी दग मीत के ४ ३१४ १६७
ब्रूकत आजजि हाल ४ ६८० २२५	बैर-मूल-हर हित- १ २८३ २३
बूढ़ि कहूँ उल्लत कहूँ ७ २०६ ३५८	बैर सनेह सयानपहिं १ ६८४ ५४
बृंदावन राजें दुवौ १ ६ ३४३	बैस्य बिनय मगु पगु १ ५५३ ४४
बेंदी भाल तबोल २ ६७६ ११३	बोलन चितवन चलन ४ ४७८ २०६

बैरी मोहि बिचारि कै	५	१६२	२४१	भरत श्रंक परजंक पर	७	४१०	३७४
ब्याधा बधेव पपीहरा	१	६८	८	भरत श्रंक परजंक पर	७	७२१	३६८
ब्यापी होती जो तुमैं	४	६०३	२१६	भरत पेट नट निरत कै	६	५६३	३३०
ब्रज ठकुराहुनि शधिका	३	३६५	१४७	भरत भाँवरे जिय रहत	७	४३७	३७६
ब्रजबासिन कौ उचित	२	५६१	१०४	भरत साँस लै हर घरी	४	३०७	१६६
ब्रज वीथिन नोखौरचत	७	१६४	३५५	भरत हरत दरसत	१	४२४	३४
ब्रह्म फटिक मन सम	४	५०	१७६	भरन गई जमुना जलै	५	३६४	२५६
ब्रह्म बनाए बन रहे	६	११६	२६६	भरन हरन अति	१	२२	२
ब्राह्मन बर बिद्या	१	५५१	४४	भरन हरन अव्यय	,,	३०१	२४
भ				भरि आए हैं सुमन	४	४११	२०४
भई जु छुबि तन	२	१८६	७५	भरी श्रंक परजंक पर	७	३७२	३७१
भई देवता भाव सब	३	५२६	१५७	भरी भाँवरे साँवरे	३	२८६	१३६
भई बिखसता करम	१	४७६	३८	भरे नेह सौँ है खरे	५	४१६	२६७
भए कठिन ये ठग नए	५	५१४	२६८	भलव चलत पथ पोच	१	६८६	५५
भए बटाऊ नेहु तजि	२	२७२	८२	भली करत लागत	६	३२२	३११
भगतन तौ तुम तारि	४	६८७	२२६	भली किए हूँ है बुरी	,,	५८६	३३२
भगन जगन का सों	१	२८८	२३	भली लगै मन भाँवते	३	५१२	१५४
भगन भगति करु भरम	,,	२६३	२४	भले छुकाए नैन ये	४	१५२	१८४
भजन कछौ तातैं भज्यौ	२	३७१	८६	भले बंस कौ पुरुष सो	६	६१६	३३४
भजन निरंतर संत ज	६	३४८	३१३	भले बंस संतति भली	,,	४१७	३१६
भजहु तरनि-अरि-	१	२२७	१८	भले वचन मुख नीच	,,	२३६	३०५
भजु तुलसी आघादि	,,	२६०	२१	भले बुराई तैं डरै	,,	६५०	३३७
भजु तुलसी कुलिसांत	,,	२५३	२०	भले बुरे कौँ जानियौ	,,	६६४	३२२
भजु पतंग-सुत-आदि	,,	२२६	१६	भले बुरे गुर जन	,,	६३७	३३६
भजु हरि आदिहि	,,	२३५	१६	भले बुरे छोटे बड़े	,,	३००	३१०
भजे आँधारी रैन में	३	४६	१२०	भले बुरे जहँ एक से	,,	४८	२६०
भटकत पद अद्वैतता	१	३४७	२८	भले बुरे दोऊ रहौ	,,	६२८	३३५
भटकन फटपट चटक	५	२६३	२४६	भले बुरे निवहैं सबै	,,	४४८	३२१
भट्ट लट्ट सी हूँ रही	,,	३६३	२५६	भले बुरे सब एक से	,,	४५	२६०
भय भीनी दुलही नई	७	३६६	३७१	भले बुरे सौँ एक सी	,,	५२१	३२७
भयौ सिंधु तैं बिधु	३	४१६	१४६	भले बुरे हूँ सौँ करत	,,	६१३	३३४

भले छुरी जौ आदरै	६	४०५	३१८	भीजे तन औसुवन	४	५६१	२१८
भले भली ही कहत हैं	,,	४१२	३१८	भुज फुलेल लावत	३	२१५	१३३
भले भले विधिना रचे	,,	६४०	३३६	भुज मृनाल लोचन	७	१२७	३५२
भले लगै सब कौं	,,	१२७	२६६	भूप कहहि लघु	१	७४५	५६
भलो कहहि जाने	१	७१५	५७	भूपति के संग सुभट	६	२८२	३०८
भलो कियौ तौ जौ	५	५४८	२७१	भूमारे तारे पतित	७	२८	३४५
भलौ एक मन हीं गहौ	३	६६	१२२	भू भुजंग गत दाम	१	३७३	३०
भलौ ज्ञान अज्ञान नहिं	५	५६३	३३२	भूमि भानु असथूल	,,	४५४	३६
भलौ न केतिक रूप	३	२४८	१३६	भूमि भूधराकार लखि	७	३१६	३६७
भलौ न होवै दुष्ट जन	६	१७५	३००	भूमि रुचिर रावन-	१	६६४	५५
भवन नाह आवत	७	३७१	३७१	भूर भाइ हिय हूर	७	६३१	३६१
भसम करत तन असम	५	२३३	२४७	भूलि तजत हैं भूल	,,	२७	३४५
भाग नगर काबिल	७	५३७	३८४	भूलि रहे बलबीर घर	५	६०	२३३
भागहीन कौं देवहू	६	४८०	३२४	भूली जन भटकी	७	४५६	३७८
भाग-हीन कौं ना मिलै	,,	४१५	३१६	भूले लोभी नैन सौं	४	२७३	१६४
भादों गरु मरु गयौ	५	२८	२३१	भुलैं तैं करतार के	,,	१८	१७४
भादों भयकारी लगत	७	२७२	३६४	भूलै हूँ मत दरद कहु	,,	६१६	२२०
भानु कृसानु मयंक को	१	१४६	१२	भूषन बसन सजे तिया	५	३३२	२५४
भानु गोत्र तमि तासु	,,	२५६	२१	भूषन-भारु सँभारिहै	२	३२२	८५
भाभी बरसाने गई	५	६२३	२७७	भृकुटी-भटकनि	,,	३०२	८४
भाल-लालबेंदी-छप	२	३५५	८८	भेजौ सुमन सनेह में	४	३८४	२०२
भाल लाल बेंदी दिप	३	४४	१२०	भेटत बनै न भावतौ	२	५६४	१०४
भाल लाल बेंदी ललन	२	६६०	११४	भेद तोरि ए डर कड़े	७	४८६	३८०
भावंता मुख स्वच्छ पै	४	१७८	१८६	भेद याहि विधि नाम	१	६१८	४६
भावंता लखि लगत	,,	२५०	१६२	भेष बनावै सूर कौ	६	२१७	३०३
भावकु डभरौंहीं भयौं	२	२५२	८०	भोगनाथ नरनाथ की	३	६६६	१७०
भावत कुंज करील की	७	३२२	३६७	भोगनाथ नरनाथ के	,,	६२३	१६५
भाव भाव की सिद्धि	६	४६	२६०	भोगनाथ नरनाथ के	,,	६६५	१७०
भावरि अनभावरि भरे	२	६३७	११०	भोगनाथ नरनाथ कौं	,,	६७०	१६८
भाव सरस समस्त	६	३	२८७	भोगनाथ मुखे-चंद की	,,	६४६	१६६
भिरत भार सब तैं	,,	५३६	३२८	भोगवती भोजन रचत	७	७७	३४६

भो जीवन तू कहतु है	३	३३६	१४२	मजनु लख लै है गए	४	२०	१७४
भोडर सुक्ति बिभव	१	३७४	३०	मटकी मटकी सीसधर	॥	३६६	२०१
भोर चले सुनि सोर	५	५८३	२७३	मत चलाव मो सासुहै	॥	२३२	१६०
भोर भएँ आए भवन	३	४४४	१५१	मत बनाय इत आइकै	॥	१८६	१८७
भोरहि उठि आए	५	८६	२३५	मतवारे दग-गज कहूँ	॥	२०३	१८८
भोरहि चखनि चकोर	॥	६५६	२७६	मति फिर जाय विगति	६	५८८	३३२
भोर होत पिय कौं	३	४६६	१५५	मदन कहन जब सौं	४	१७६	१८६
भोर होत पीरी लगी	४	३६०	२०३	मदन कहावत लै	७	८७	३४६
भौर भावरै भरत हैं	३	५६६	१६०	मदन गवन जब करत	४	६३	१८०
भौह उचै अँखिया नचै	५	६४०	२७८	मदन जुआ के खेल में	॥	१४६	१८४
भौह उचै आँचरु	२	२४२	७६	मदन भूप राजै जहाँ	॥	६५	१८०
भौह कमान कटाछ	३	३२६	१४२	मदनातुर चातुर पियै	५	१३२	२३६
भौह कुटिल बरुनी	४	३४२	१६६	मद-रस-मत्त मिलिंद	३	३६२	१४७
भौहनि के बीच न है	५	६८७	२८१	मधुप त्रिभंगी हम	॥	४०८	१४८
भौहनि संग चढ़ाइयौ	३	७८	१२३	मधुप-मोह मोहन	॥	४२८	१५०
भौहनु त्रासति मुँह	२	६८३	११३	मधुर बचन तैं जात	६	५४	२६१
भौह बीच तिल तनक	३	१४८	१२८	मधुराई बैनन बसी	७	३५८	३७०
भौहैं तान कमान बर	७	६०५	३८६	मधुसूदन यह बिरह	४	६८५	२२५
भौ यह ऐलोई समौ	२	५१६	१०१	मन उलहै दुलहै	५	४५	२३३
अमत रहत निस चौस	३	६५६	१६७	मन कन पलटै मिलत	४	१२७	१८२
				मन के संग जो नैन	॥	५५८	२१६
मंगलु बिंदु सुरंग	२	४२	६४	मन-खेलार तन-चंग	५	२६४	२५१
मंजु करन माँजे मदन	७	४८८	३८०	मन-गज मद-मौकल	४	३६३	२०१
मंजु गुंज के हार उर	३	२	११७	मन गयंद छवि मद	॥	३५६	२००
मंजुल बंजुल मंजरी	५	६०५	२७५	मन गरुवौ कुच गिरिन	॥	३००	१६६
मंडित मृदु सुसिक्यानि	३	५५८	१६०	मन चाही सब कहत	७	४५७	३७८
मंत्र तंत्र तंत्री त्रिया	१	६३८	५१	मन तू मोहन सौं हमें	४	२८	१७५
मंत्रिनि के बस जो	३	४३३	१५०	मन तैं नैननि कौं भली	३	११०	१२५
मंद भई गति मति	७	३५२	३७०	मन देत न तन देन	६	३७६	३१६
मकराकृति गोपाल कै	२	१०३	६६	मन दै सुनियै लाल	३	१७३	१३०
मघा मेघ बरसत	७	३२६	३६८	मन धन तो पै भावते	४	३०१	१६६

मन धन तौ राख्यौ	४	२०५	१८८	मनहूँ की गति करत	४	३४०	१६६
मन धन हतौ बिसात	॥	५२७	२१३	मनि मंदिर आंगनि	७	११७	३५२
मन न धरति मेरौ कछौ	२	२३६	७६	मनि मंदिर डोलत	॥	६५४	३६३
मन नितंब पर गामरू	५	६६	२३६	मनि मंदिर सुंदर खरी	॥	१०२	३५०
मन प्रसन्न तन चैन	६	५५५	३२६	मनिमय भुषन छोरहूँ	५	६६६	२८०
मन बच कर्म सुनाह	७	७३६	३६६	मनि समान जाके मनी	४	२१	१७४
मन बिकगो हित हाट	४	४६६	२०६	मनु न मनावत कौं	७	४५४	६६
मन-भ-य-ज-र-स-त-	१	२४	३	मनौ मैत के निधि-	३	५०३	१५५
मन भावन आवन	७	४२१	३७५	मरकत-भाजन-सलिल	२	१८६	७५
मनभावन आवन	॥	२६५	३६३	मरजादा दूरहि रहे	१	१३१	११
मनभावन आवन	॥	६४८	३६२	मरत प्यास पिंजरा	२	४३५	६४
मनभावन के मिलन	३	२७४	१३८	मरन-बिपति-हर धुर-	१	२२३	१८
मन-भावन के मिलन	६	५५०	३२६	मरनु भलौ घर बिरह	२	१४८	७२
मन-भावन के मिलन	॥	१३६	२६७	मरिबे को साहसु ककै	॥	५८५	१०६
मन-भावन कौं भावती	३	३१७	१४१	मरी डरी कि हरी बिथा	॥	५६	६५
मन भावन सौं व्याह	॥	२४६	१३६	मलयज घसि घनसार	५	२८२	२५०
मन मनमथ-फंदन परथौ	७	६८३	३६५	मलयागिरि-चंदन	४	१३५	१८३
मन-मलिनाई परिहरै	५	८	२२६	मलिन करी छवि जेन्ह	३	२८०	१३८
मन माली हिय भूमि	४	४५६	२०८	मलिन देह वेई बसन	२	१६३	७३
मन में आन न आनही	॥	२७८	१६४	मसकी नीली कंचुकी	५	६७४	२८०
मत में बस कर भावते	॥	४१७	२०५	महल महमही महक	७	६००	३८६
मन मैला मन निरमला	॥	३६२	२००	महि जल अनल सो	॥	४७६	३८
मन मोहन तौ सकत	३	५६६	१६२	महि तैं रबि रबि तैं	॥	४४५	३६
मनमोहन मन में बसौ	७	३	३४३	महि मयंक अह-नाथ	॥	४८२	३८
मनमोहन सौं मोहु	२	६४१	११०	महिमा युत को देत ही	६	६६८	३४०
मन यद्यपि अनुरूप है	३	४२२	१४६	मार्गत डोलत है नहीं	१	७८	७
मनरंजन तब नाम को	५	२०२	२४४	मार्गत बिधि सौं ब्रज-	४	४६३	२०८
मनसिज दीरघ ताप	॥	६४२	२७८	मार्गि मधुकरी खांत जे	१	६५४	५२
मन सुबरन घरिया	४	२८६	१६५	मार्गी बिदा बिदेस कौ	७	६३६	३६२
मन हरिबे की ज्यों पढ़े	॥	५७७	२१७	मात तात सिय राम	१	१०	१
मनहि मान मेरी कही	७	५४६	३८५	मात पिता के पक्ष के	६	६६६	३३८

मातु पिता निज बाल-	१	३४६	२८	माली भानु-कसानु-	१	६३१	५०
माधव मैं माधव नहीं	५	६४५	२७८	मित्र क अवगुन मित्र	,,	६४१	५१
मान करन नाहीं करन	७	७२६	३६६	मित्र कोप घरतर	,,	६२६	५०
मान कही मेरौ अरी	४	६१४	२२०	मित्र मित्र के काम कौ	६	६३५	३३५
मान किए अपमान पी	५	४७४	२६५	मिथ्या-भापी साँच हूँ	,,	१६४	२६६
मान जनावति सबनि	३	१००	१२४	मिथ्या माहुर सु-जन	१	६६१	५३
मानत लाज लगाम	,,	३७३	१४५	मिलत अगाऊ विन	७	१७४	३५६
मानत सो साचों हिण	१	५३७	४३	मिलत खिलत बतरस	,,	४०१	३७३
मान-धनी नर नीच पै	६	४२०	३१६	मिलत नहीं हरे कहूँ	,,	१५०	३५४
मान बिना सनमान	५	४६६	२६४	मिलन सबै रस लै	,,	४६१	३८०
मान मनायौ माननी	४	६०२	२१६	मिल लीजै सब अंक	,,	२३१	३६०
मान राखिबो माँगिबो	१	८८	७	मिलि कर तव सुख	४	५४६	२१५
मानस व्याध कुचाह	,,	३६८	३२	मिलि चंदन-बेंदी रही	२	१८०	७४
मान-सरोवर मन-मधुर	,,	४१०	३३	मिलि चलि चलि	,,	६२५	१०६
मान सुधा तजि बाल	५	६३५	२७७	मिलि परछाँही जोन्ह]	,,	६७४	११२
मानहुँ मैं बिनु	३	१३५	१२७	मिलि बिछुरत मिलि	७	६४५	३६२
मानहु बिधि तन-अच्छ	२	४१३	६२	मिलि बिसरैहौ आपु	३	५३७	१५८
मानहु मुँह-दिखरावनी	,,	२८८	८३	मिलि बिहरत बिछुरत	२	४६७	६६
मान होत है गुननि	६	७८	२६३	मिली साँकरी खोर मैं	७	६८१	३६५
मानि सु यह साँची	७	६२	३५०	मिले मोहिँ अति	३	६६०	१६७
मानु करत बरजति न	२	२७३	८२	मिलै दियो पूरव जनम	६	६८२	३३६
मानु तमासौ करि रही	,,	५३६	१०२	मिलै सुसंगति उच्च हूँ	,,	२३८	३०५
मातु-तात-भव-रीति	१	४८६	३६	मिथ्यौ दुष्ट नाहिन	,,	२३३	३०५
माफी की तौ कर दर्ई	४	१६७	१८५	मिसि हाँ मिसि	२	५३१	१०१
माया मन तँ ईस भनि	१	३३१	२७	मिही अगौंछनि पोछ	७	७३	३४८
मारतंड परचंड महुँ	७	३१६	३६७	मीठी कोऊ वस्तु नहिँ	६	४६१	३२२
मार-सुमार-करी डरी	२	३०८	८४	मीत न नीति गलीत	२	४८१	६८
मारि छलंक रहे अहे	५	४५५	२६४	मीत नीत की चाल	४	२१६	१८६
मारि सौंह करि खोज	१	६७४	५४	मीत बधिक जे निरदर्ई	,,	६७७	२२५
मारै इक रच्छा करै	६	२६३	३०६	मीत बिदित ये बात	,,	२२०	१६०
मारयौ मनुहारिनु भरी	२	४६८	६७	मीत बिरह की पीर	५	२७६	१६४

मीत सुमुख की जोत ४ १७० १८६	सुरि सुरि मुख नाहीं ७ ३६१ ३७३
मीता कसक कसात्र कौ,, ६७८ २२५	सुह माहीं नाहीं रही ५ १३१ २३६
मीता तूँ चाहत कियौ ,, ४८० २१०	सुहुँ घोवति एड़ो घसतिर ६६७ ११४
मीता तूँ या बात कौँ ,, ८१ १७६	मूढ़ चढ़ाएँक रहै ,, ४५१ ६५
मीता मोतैँ लेत क्यों ,, ५८२ २१७	मूढ़ इंदु अरविंद मैं ३ ४०३ १४८
मीन मृगन कौ हीन ७ २०२ ३५८	मूढ़ तहाँ ही मानिए ६ १४३ २६८
मुँह मिठासु दग चीकनेर ३२३ ८५	मूरख कौँ पोथी दर्द ,, ५३ २६१
मुँहु पखारि मुड़हरु ,, ६६६ ११२	मूरख कौँ हित के वचन ,, ६६५ ३४०
मुक्त भाल मंडित ३ ४७५ १५३	मूरख गुन समुझै नहीं ,, १४० २६७
मुक्त सुमुच्छु बर १ ४१६ ३३	मृग-जल घट भरि १ ३५६ २६
मुक्त स्वेदकन चिबुक ४ १५० १८४	मृगनैनी की पीठ पर ७ ६० ३४७
मुक्त हार हरि कै ३ ४३७ १५०	मृगनैनी दग की फरक २ २२२ ७८
मुकुतादिक गय सों ५ ६६२ २८०	मृगनैनी बेनी निरख ७ ४३ ३४६
मुख उचारि प्रासाद तैं ७ ४० ३४६	मृगपति जित्यौ सुलंक ३ ३४ ११६
मुख छपाइ सकुचाइ ,, ४६८ ३७६	मृगमद तिलक सुभाल ५ ६७७ २८१
मुख ते नजर अनत ५ ३५४ २५६	मृगलोचनि सोचति ७ ५११ ३८२
मुख देखन को पुर- ,, ७०७ २८३	मृगा गगन-चर ग्यान १ ५४७ ४४
मुख नाहीं बाहीं ७ ६७२ ३६४	मृद कारन करता ,, ५०७ ४०
मुख नीचैँ जँचैँ जसैं ३ १६७ १२६	मृदु धुनि करि मुरली ५ ५ २२६
मुख-बिधु छिनु छिनु ,, ६७८ १६६	मृदु बिहँसन सुसक्यान ४५४ २०८
मुख बिलोक दग ७ ७०१ ३६७	मृदु मेचक सिर-रह १ २६६ २४
मुख मीठे मानस १ ७७ ७	मृनमय घर जानत ,, ५०४ ४०
मुख मीढ़त अनखाति ७ २२६ ३६०	मृनमय भाजन बिबिध ,, ५११ ४१
मुख मीढ़त आँजत ४ ६३० २२१	मेघा सीता सम ,, १८६ १५
मुख सौँहैं नहिँ मुख ७ ३८६ ३७२	मेरी करुना की अरज ७ ११ ३४३
मुखहि अलक कौ ५ ६२८ २७७	मेरी दीरघ दीनता ,, १६ ३४४
मुख उचारि पिठ २ ६३६ ११०	मेरी भव-बाधा हरौ २ १ ६१
मुनि मन सुथिर ६ २६५ ३०६	मेरी मति मैं राम मैं ३ ७०३ १७१
मुरछि परी हाहा खरी ५ ४५६ २६४	मेरी सिख सीखै न ,, ४३१ १५०
मुरझानी नव बेलि सी,, ६७० २८०	मेरे और कपोल नहिँ ५ ७०६ २८३
मुरलीधर गिरिधरन ३ ७०० १७०	मेरेई अनुराग मैं ४ ४३१ २०६



मेरेई दग मीत कर	४	२६६	१६५	मैन चैंपु हित साट	४	१६६	१८७
मेरे खल चय सुख	५	५०८	२६८	मैन-महावत दग-गजन ,,	२०४	१८८	
मेरे जान सुजान तुच	४	२३६	१६१	मोकौं तुम क्यों कहति ३	१४३	१२८	
मेरे तन के रोम ए	३	८४	१२३	मोतिन मांग भरी खरी७	४७	३४६	
मेरे दग को दोस री	५	५१	२३३	मोती झालर झलझलै ५	८६	२३५	
मेरे दग-बारिद बृथा	३	३८६	१४७	मो दिसि हेरि न हेरि ,,	६२२	२७६	
मेरे नैननि हूँ लखौ	४	२६६	१६६	मो दुति देखे दामिनी ७	५३३	३८४	
मेरे बृम्भत बात तू	२	१३७	७१	मो दग कंजनि कौ	३	६६६	१६८
मेरे मन के बध दए	४	३५६	२००	मो दग बांधे तो दगनि ७	५२३	३८३	
मेरे मन तो बसति है	३	४६८	१५३	मो नैननि नीकी लगै	३	६१६	१६४
मेरे सिर कैसी लगै	,,	५६	१२१	मो मति थकित चकित ५	३६८	२५७	
मेरो ही तो धाम है	५	४५६	२६४	मो मन-तम तोमहि ३	१	११७	
मैं गीघौ लखि गीघगति ४	६६०	२२६		मो मन मेरी बुद्धि लै	,,	४२५	१४६
मैं धन ये उनए लखै	,,	६११	२२०	मो मन सुक लौं उड़ि	,,	१२२	१२६
मैं जानी रसनिधि सही	,,	६०५	२१६	मोर-चंद्रिका स्याम	२	६७६	११३
मैं जानी-ही मिलन त	३	३५०	१४४	मोर मुकुट कटि पीत ७	१२६	३५३	
मैं तपाइ त्रय ताप सौं	२	२८१	८२	मोर मुकुट कटि पीत-	,,	७३६	३६६
मैं तोसों कै बा कद्यो	,,	६६	६६	मोर मुकुट की चंद्रिकनु२	४१६	६३	
मैं दीनों उननै लियौ	४	३१३	१६७	मोर मोर मुख लेत है ७	३६५	३७३	
मैं न लखी ऐसी दसा	५	४१०	२६०	मोर मोर धन घोर तैं	,,	५६१	३८६
मैं प्यारी हूँ रावरी	,,	७०६	२८३	मोरि मोरि मुख लेत है	,,	५४४	३८४
मैं बरजी कै बार तू	२	२५६	८०	मोरी सौं जनि मान	५	७०५	२८३
मैं मिसहा सोयौ समुझि	,,	६४२	११०	मोलै मोला कहत हैं	४	६७४	२२४
मैं मूँदति हूँ खेल मैं	३	२२०	१३४	मोसों क्यों न कहै हहा	५	७८	२३५
मैं मोही मोहे नयन	५	३६७	२५६	मोसों मिलवति चातुरी२	५०८	१००	
मैं यह तोही मैं लखी	२	४७०	६७	मोहन-छवि-दरियाव मैं	४	२१३	१८६
मैं लखि नारी-ज्ञानु	,,	५५७	१०३	मोहन तू था बात कौ	,,	६१८	२२०
मैं लै दयौ लयौ सु	,,	५३५	१०२	मोहन बँसुरी लेत है	,,	१८६	१८७
मैं समुझ्यौ निरधार	,,	१८१	७५	मोहन बँसुरी सौं कछू	,,	१६०	१८७
मैं हो जान्यौ लोइननु	,,	६४	६६	मोहन बान चलाय कै	५	३४७	२५५
मैत्री बरन यकार कौ	१	२७०	२२	मोहन-मुख लखि	४	२६०	१६५

मोहन मूरति स्याम की२	१६१	७३	यह अब कौन कला-	४	४६४	२११
मोहन लखि छवि	७	६	३४३	यह अहनिशि बिकसित५	३१५	२५३
मोहन लखि जो बढ़त	४	५६६	२१८	यह जर दग नहिँ लखि	४	३५३ २००
मोहन चारौ आप ही ,,	५५	१७७	यह करतब सब ताहि	१	३२५	२६
मोह महातम रहतु है	६	४२७	३१६	यह कहवत जैसौ करै	६	२०२ ३०२
मोहिँ करत कत बावरी२	५७६	१०५	यह ग्रीषम तीखन	७	४६७	३७६
मोहिँ जिवायौ चहत	४	५१६	२१२	यह छोटे बित नैन ये	४	३३२ १६८
मोहिँ तुम्हें बाढ़ी	२	४२७	६३	यह तन अनुपम अयन	१	३२० २६
मोहिँ रसाल की मंजरी३	३२२	१४१	यह तोमैं नोखी नई	७	८४	३४६
मोहिँ लजावत निलज	२	५६६	१०४	यह तोमैं नोखी नई ,,	५५३	३८५
मो चित लियौ सुचित	५	१६१	२४३	यह देखन कौ रैन दिन,,	६६	३५०
मो हित तू अति स्म	७	५३६	३८४	यह न लगी है कामिनी५	१७५	२४२
मोहि द्यौ मेरौ भयौ	२	८३	६७	यह निकुंज सीतल	७	४६३ ३७८
मोहि भरोसौ रीकिहै ,,	६८२	११३	यह निश्चय करि जाचियै	६	४५४	३२२
मोहि मनावन कौ कहो	५	५६३	२७२	यह निसि दिन माथे	७	५६८ ३८६
मोहि सिखावत तू कहा	७	१५४	३५४	यह पूजन कौ वेष	,,	४८२ ३८०
मोही कौं किन मारि तूँ	३	४५३	१५१	यह प्रसिद्ध है रसिक-	४	१७ १७४
मोही माहि दिखाय कै	५	२०८	२४५	यह बरिया नहिँ और	२	४०१ ६१
मोहूँ दीजै मोषु ज्यौं	२	२६१	८१	यह बसंत आयौ लखौ	७	५४२ ३८४
मोहूँ सौं तजि मोहु	,,	७७	६७	यह विचार छवि रस	४	३८० २०२
मोहूँ सौं बातुन लगै	,,	५६६	१०४	यह विधनै तोही दर्ई	,,	५०८ २१२
मोहे नैकु न नैन जे	४	२६	१७५	यह बिनसतु नगु	२	१२० ७०
मौर धरे सब हुम लता	७	२११	३५६	यह ब्रुकन को नैन ये	४	५२२ २१३
मौर नूत नूतन रहैं	३	८७	१२३	यह मग देख भयावनी	७	४५४ ३७८
य				यह मन महँ निहचय	१	४७८ ३८
यक तौ सर पंजर कियौ	५	२६६	२४६	यह रंग है घनश्याम	७	७२८ ३६६
यथा जोग की ठौर	६	२५५	३०६	यह अमकन नख-	५	१८० २४२
यथा शक्ति ही दंसकै	,,	५६७	३३०	यह समता क्यों करि	७	५३२ ३८४
यह अचरज की बात	५	७१०	२८३	यह समयो पैहो न फिरि,,	६६८	३६४
यह अटपट कैसे पटे	,,	६६२	२८२	यह सुनि जगपति पाय	५	४६१ २६४
यह अनखोही बात पर	६	६०२	३३३	यह स्यामा हँ कौन	,,	२६२ २४६

यहि डर सों हौं डरपि ४ ५३५ २१४  
 यही अवधि पर ल्याइहौं ७ ५६१ ३८८  
 यहै बात सब ही कहैं ६ २८६ ३०६  
 या अनुरागी चित्त की २ १२१ ७०  
 याके बल वह लेत हैं ४ ६६२ २२४  
 याके मन में जानियत ३ १४१ १२७  
 याकै दर औरै कछु २ ४८ ६४  
 या खिन लों चित पै ५ ४१२ २६०  
 या घट के सौ दूक कर ४ ४४६ २०७  
 या जग की बिपरीत १ ६५६ ५२  
 या जग की बिपरीति ६ १२६ २६६  
 या जग जे नय हीन १ ४४३ ३५  
 या कीनै हित तार में ४ ४४५ २०७  
 या ठोढ़ी सरि कों जबै ५ ६६ २३४  
 या तै पल-पलना ४ ३३१ १६८  
 या ब्रज में सखि साँवरी ७ १७६ ३५६  
 या ब्रज में हौं बसत ही ४ ३५० २००  
 या भव पारावार कों २ ४३३ ६४  
 या मैं अपनी गाँठ कौ ४ ५६३ २१८  
 या मैं कौन सयान है ३ २६५ १३६  
 या मैं कछु धोखौ नहीं ४ ४५२ २०७  
 या रस कौ रसना ॥ ४१६ २०५  
 यारि केर कै आप पै ॥ १५६ १८५  
 याही तै यह आदरै ॥ ६१७ २२०  
 ये अँखियाँ कैहूँ कहूँ ७ १८१ ३५७  
 ये चोखे कोयन लगैं ५ ६४१ २७८  
 येहि विधि तैं बर बोध १ ४६३ ३२०  
 यों निवाह सब जगत ६ ६४६ ३३६  
 यों कहि देरत प्रानपति ७ ६८ ३५०  
 यों तमोज की सुरँग ५ ६५ २३६  
 यों दल काढ़े बलक २ ७११ ११५

यों दलमलियतु निरदई २ ६५१ १११  
 यों न प्यार बिसराइयै ३ ४४५ १५१  
 यों वाजूवँद में भली ५ ५३० २६६  
 यों बिभाति दसनावली, १८४ २४३  
 यों सब जीवन की ४ ५२ १७७  
 यों सुखमा सरसाय री ५ ३३६ २५४  
 यों सेवा राजान की ६ ४२६ ३२०  
 यों सोभित सिति कंचुकी ५ ४८५ २६६  
 यों स्रुति भूपन भास ॥ ५५३ २७१  
 यों प्यारी परजंक में ७ ६० ३५०

र

रंग भवन प्रमुदित ५ ६१६ २७६  
 रंग भवन सखि संग ॥ २०३ २४४  
 रंग रँगिली सेज पर ७ ११८ ३५२  
 रँगराती रातै हियै २ १६४ ७३  
 रंग हिँडारे नवल तिय ७ २६६ ३६३  
 रँगी साँवरे रंग जे ॥ १५२ ३५४  
 रँगी सुरत रँग पिय २ १८३ ७५  
 रंच न देरि करहु ५ ६६५ २८२  
 रंच न लखियति पहिरि २ ६६५ ११४  
 रंजन कानन कोक नद १ २१६ १८  
 रंभ्र जाल मग हँ बड़त ३ ५२६ १५७  
 रंभ्र जाल हँ देखियतु ७ ७१ ३४८  
 रघुनंदन दसकंध के ॥ ३२० ३६७  
 रघुबर कीरति तिय १ ३२ ३  
 रची बिरंचि बनाइ तूँ ३ ४८७ १५४  
 रची सची सी तोहि री ५ ३२८ २५४  
 रचे बिरंचि बनाइ कै ३ ४८३ १५३  
 रज अप अनल अनिल १ २०३ १६  
 रटत रटत रसना लटी ॥ ६२ ८  
 रति नायक सायक ३ ३ ११७

रति बिपरीत प्रस्वेद-	३	५००	१५५	रसनिधि मन मधुकर	४	३५	१७५
रति बिपरीत समै दुवौ	७	३६६	३७३	रसनिधि मोहन नाम	॥	५१०	२१२
रति रंभा छवि निदरत	॥	२२४	३६०	रसनिधि मोहन रूप	॥	२८४	१६४
रति रस श्रुति रस	६	४२६	३१६	रसनिधि यह नैनन	॥	४२२	२०५
रती-रती के बहुत हीं	४	६६५	२२४	रसनिधि वाकौ कहंत	॥	२३	१७४
रद-छद अघर न	७	३८१	३७२	रसनिधि सुंदर मीत	॥	२००	१८८
रन सनमुख पग सूर	६	३६५	३१७	रस पोषै बिनही रसिक	६	५४६	३२६
रनित किं किनी हैं न	५	२५८	२४८	रस बरसत है रावरो	५	३७२	२५७
रनित भृंग-घंटावली	२	३८८	६०	रस भिजए दोऊ दुहुन	२	५१४	१००
रविचंचल अरु ब्रह्मद्रव-१	२	६४	२१	रसमि बिदित रवि रूप	१	४५२	३६
रवि बंदौं कर जेरी ए	२	२२४	७८	रस में हैं अनरस कियौ	७	७२०	३६८
रवि रजनीस धरा तथा	१	४४०	३५	रस रंगनि संगनि करत	॥	३६३	३७३
रवि ससि अवनि	४	६४२	२२२	रस रेसम में जो दई	४	२६२	१६३
रमन कहौ हठि रमन	२	३१६	८५	रस सिंगार मंजनु किए	४	६६	६४
रमन गमन सुनि	५	१४३	२४०	रस ही में औ रसिक में	७	५५	१७८
रवन गवन सुनि	७	६३७	३६२	रस ही में रस पाइयतु	७	६६७	३६४
रस अनरस समझै न	६	१५	२८८	रस ही रस बतरस	॥	४०३	३७४
रस बलही दुलही वही	७	११४	३५१	रसिक सभा में निरस	६	२३२	३०४
रस की कथा सुनी न	६	४४०	३२०	रहनहार जाइ न बसत	॥	५५६	३२६
रस की सी रुख	२	२४३	७६	रहत चाह चित नित	७	३८५	३७२
रसना मंत्री दसन जन	१	७००	५६	रहत नहीं मो जीव	३	५६४	१६०
रसना सुत पहिचान	॥	३२१	२६	रहत बिसूर बिसूर	७	७२७	३६६
रसनाही के सुत उपर	॥	३३०	२७	रहति चढ़ी चित चाय	५	५६५	२७२
रसनिधि कारे कान्ह ए	४	५०६	२१२	रहति न रन जय साहि	२	८०	६७
रसनिधि जब कबहुँ	॥	३८२	२०२	रहित बिंदु सब बरन	१	५२५	४२
रस धुनि गुनि अरु	७	७४२	४००	रहि न सकी सब जगत	२	३४४	८७
रसनिधि नैनन परि गई	४	२२४	१६०	रहि न सक्यौ कसु	॥	४४३	६५
रसनिधि पल भर होत	॥	५४८	२१५	रहि मुँहु फेरि कि हेरि	॥	५७७	१०५
रसनिधि पल भर होत	॥	५८४	२१८	रहि हैं चंचल प्राण ए	॥	३६५	६१
रसनिधि प्रेम तबीब	॥	३७५	२०१	रही अचल सी है मनौ	॥	५३३	१०२
रसनिधि बिन प्रीतम	॥	५७२	२१७	रही कहाँ चक आइ	४	६०१	२१६

रही दहेंडी ढिग धरी २ २४५ ७६	राजिव नैन बिना लहे ५ २३६ २४७
रही न तन की सुघ , ४ ५३६ २१४	राति आँधारी मझकि ३ १०४ १२५
रही पैज कीनी जु मैं २ ५४४ १०२	राति अनत बसि भोर ५ २३० २४६
रही भरोसे हौं सदा ७ १७५ ३५६	राति चौस हौंसै रहै २ ४५३ ६५
रही रुकी क्यों हूँ सु चलिर ३८६ ६१	राते पट बिच कुच- ७ ५६ ३४७
रही लहू है लाल हौं ,, ४७३ ६७	राख्यौ दिन जागति रहै ३ २०६ १३२
रहे और ही रूप है ३ ४५२ १५१	राधा की बेनी लखी ,, ५४५ १५६
रहे जु कान्ह सुहाग ४ ५४५ २१५	राधा के दग खेल मैं ,, २१६ १३३
रहे झुमड़ि घन गगन ७ २६० ३६३	राधा चरन सरोज नख ,, ३६० १४७
रही पकरि पाटी सु रिसर २११ ७७	राधापति हिय मैं धरौं ७ २ ३४३
रहे बरोठे मैं मिलत ,, २२३ ७८	राधा मोहन-लाल कौ ३ ४ ११७
रहे समीप बढेन के ६ २६ २८६	राधा हरि हरि राधिका २ १५५ ७३
रहै जहाँ बिचरै तहाँ १ ५५७ ४४	राम-काम-तरु परिहरत १ ३६ ४
रहै न कबहुँ दोय लखि ६ ६६२ ३३८	राम कामना दीन पुनि ,, १४१ १२
रहै निगोड़े नैन ढिगि २ ५६८ १०४	राम कृपा ते' होत ,, १२६ ११
रहै प्रजा घन यत्न सौं ६ ३८२ ३१६	राम कृपानिधि स्वामि ,, १३२ ११
रहौ गुनी बेनी लखे २ ४८० ६८	राम गरीब-नेवाज हैं ,, ११७ १०
रह्यौ ऐंचि अंतु न लहै ,, ४०० ६१	राम-चरन-अवलंब ,, ३७ ४
रह्यौ मोहु मिलनौ ,, ४६३ ६६	राम चरन परचे नहीं ,, ३८८ ३१
रह्यौ चकिनु चहुँधा २ ४१० ६२	राम चरन पहिचान बिनु ,, ३७५ ३०
रह्यौ दीठु ढाढ़सु गहैं ,, २०८ ७७	राम प्रेम बिनु दूबरो ,, १०६ ६
रह्यौ हारि बिपरीति मैं ३ ५५६ १६०	राम बिटप तरु बिसद ,, ५० ५
राई कौ बीसौ हिसा ,, ७० १७८	राम दास पहुँ जाय के ,, ६८५ ५४
राखत आँसुवन जल ,, ५२६ २१३	राम दूरि माया प्रबल ,, ४५ ४
राखे भरि दुपहरि सखी ३ ३२८ १४२	राम नाम तरु मूल ,, ३८ ४
राखे हैं हिय-सेज में ४ ४०५ २०४	राम नाम सुमिरत ,, १२१ १०
राग रोख गुन दोख को १ ६८३ ५४	राम बाम दिसि जानकी ,, २ १
रागी अवगुन ना गनै ६ ६ २८७	राम राम रटिबो भलो ,, ११६ १०
राजत अरुन सरोज हैं ३ ५०१ १५५	राम लखन बिजयी भए ,, ७१६ ५७
राजत राजस ता अनुज १ १५३ १३	राम सदासम सीलधरा ,, १५५ १३
राजा के बल लोक सब ६ २८७ ३०६	राम सरूप अनूप जल ,, १४ २

रामहिँ जानहि राम	१	१३३	११	रूप चिराक चिराक	४	४६०	२०८
रामहि जानै संत घर	,,	१७७	१४	रूप-जाल नँदलाल कै	३	२२३	१३४
रामानुज सदगुन	,,	१५२	१३	रूप-ठगौरी डार मन-	४	१५६	१८५
रामायन अनुहरत	,,	७०६	५६	रूप-ठगौरी डारि कै	,,	२२५	१६०
रावन रावन को हनेउ	,,	२०१	१६	रूप-तख्त पै आइ कै	,,	११४	१८१
रावनारि के दास सँग	,,	११५	१०	रूप-दीप जेतौ धरौ	,,	१३०	१८३
रिजु वृषभानु-सुता	५	६१७	२७६	रूप दगन श्रवनन	,,	३६	१७५
रीझ आपनी वृक्ष पर	१	६७५	५४	रूप-नगर दग जोगिया	,,	१६७	१८८
रीझत आपु नजार कै	४	२३३	१६१	रूप-नगर बस मदन	,,	११३	१८१
रिझवारे नँदलाल पै	,,	४०४	२०४	रूप-नगर में बसत है	,,	१४७	१८४
रीझि खीझि गुरु देत	१	७३५	५८	रूप-नगर में बसत हैं	,,	३७४	२०१
रितुपति पद पुन	,,	२४६	२०	रूप-निकाई मीत की	,,	१३७	१८३
रिस रस दधि सकर	४	३१७	१६७	रूप बसै मदिरा मदन	३	४५६	१५२
रिसु करि कछु बोली	५	१४०	२३६	रूप-भूप कौ हुकुम	४	१५५	१८५
रुक्त न खंजन नैन ये	४	३४१	१६६	रूप-बाग में रहत हैं	,,	१२०	१८२
रुक्ति चलति चलि	५	१८६	२४३	रूप-रासि वनको दई	,,	१३६	१८३
रुक्मौ साकिरै कुंज-	२	६८४	११३	रूप-रासि वह लच्छ	३	३४८	१४३
रुख रुखी मिस-रोष	,,	४१५	६३	रूप लोभ बस मिल	४	२८७	१६५
रुख रुखे भौहें सतर	५	४६४	२६७	रूप-समुद छवि-रस	,,	११८	१८२
रुचि बाढ़इ सत संग	१	३६६	३२	रूप-सदन मिलि तन-	३	३३५	१४२
रुचिराई चतवनि	५	२४	२३०	रूप सरस पानिप भरयौ	६	६८२	३६५
रुज तन भव परिचय	१	३६७	३२	रूप-सरोवर माहिँ तव	४	३४६	१६६
रुखी राखहि कहत	४	४७७	२०८	रूप-सिंधु तेरो मर्यौ	७	७२	३४८
रुखे बचन मिलाप मों	६	४०८	३१८	रूप-सिंधु मथि स्याम	४	४८५	२१०
रुखे रुख मुख प्रिय	५	२५३	२४८	रूप-सिंधु मुख रावरो	७	१३१	३५३
रुखे रुखे जे रहत	४	४५०	२०७	रूप-सिंधु में जाइ कै	४	१२४	१८२
रुखे सूखे उदर कौं	६	५८४	३३२	रूप-सुधा-आसव	२	६५०	१११
रूप इमारत में इन्हें	४	२७६	१६४	रूप-स्वाद कौ दगनि	४	१६५	१८५
रूप-कहर-दरियाव में	,,	१४३	१८४	रे कुचील तन तेलिया	,,	६३१	२२१
रूप किरकिरी पर गई	,,	१६०	१८५	रे निरमोही मन हरन	,,	५५२	२१५
रूप चाँदनी की गढ़ी	,,	१२८	१८२	रेफ रमित परमात्मा	१	१५	२

रेसम डोरे कर गहे ७	२६८	३६३	लखि नवला की घर ५	८८	२३५
रैयत राज-समाज घर १	६६६	५५	लखि निकुंज सूनौ ७	६३३	३६१
रोदन करत सुलोचना ७	३२१	३६७	लखि परछाईं लाल ,,	३७५	३७१
रोम घटे तन कंप ५	४२४	२६१	लखि पुरैन के पात मैं ,,	२६१	३६५
रोम तने तन मैं घने ,,	५६१	२७२	लखि वढ़वार सुजा- ४	६४६	२२२
रोम रोम जो अघ ४	६८३	३२५	लखियतु लाल गुलाल ७	२३५	३६१
रोम रोम ब्रह्मांड १	३३६	२७	लखि यमुना तट सूनौ ,,	२२१	३६०
रोमावली कृपान सौं ३	३४६	१४२	लखि रमनी कों अन- ५	३५	२३१
रोस किये कैसौ करै ,,	२००	१३२	लखि लखतहि मन ,,	६३	२३३
रोस न करि जौ तजि ,,	४१	१२०	लखि लखि अखियनु २	६३०	१०६
रोस न रसना खोलिय १	७३२	५८	लखि लालन प्रफुलित ७	४६६	३७८
रोस भरी अखियानि ३	३५३	१४४	लखि लोने लोइननु २	५८	६५
रोस मिटै कैसे सहत ६	६३	२६१	लखि सखि री इत ५	४३८	२६२
रोस रोस फिरि होस ७	५८२	३८७	लखि ससंक सूनौ ७	३१४	३६७
ल			लखि सु उदर रोमावली ५	४५०	२६३
लंक गहै अंकन लगौ ५	२३७	२४७	लखि सुछवीले ,,	१३५	२३६
लंक तलक छलकत ,,	४१८	२६१	लखि हरि रुचि गुरु ,,	५१०	२६८
लंगर को जीते जु करि ,,	५१६	२६८	लखी अपूरख लाल मैं ३	३२०	१७१
लई जु पीर जनाइ कै ३	७६	१२३	लखी कंज कर आम ७	५१५	३८२
लई सौंह सी सुनन कीर २	४६६	८०	लखी लाल कर नागरी,,	७१२	३६७
लकड़ी डौवा करछुली १	७०१	५६	लखौ लाल तुमकों ३	४०६	१४८
लखत छाई छन छवि ७	४६४	३८१	लखौ मैन तैं मैन मैं ४	१०४	१८१
लखत बाट पिय की ३	२७१	१३७	लखौ लाल कैसी ७	१०६	३५१
लखत लाल मुख ,,	४४६	१५१	लख्यौ न कंत सहेट ३	२६४	१३७
लखति एक टक साँवरी,,	२३०	१३४	लगत कमल दल नैन- ४	६०६	२१६
लखि आगम अतुराज ७	५०८	३८२	लगत सुभग सीतल २	३४२	८७
लखि औगुन तन ४	६८६	२२५	लगन दसा आबाल ७	७८	३४६
लखि कपास को नास ५	५६२	२७४	लगन नई घनि ठनि ५	७०३	२८३
लखि गुरुजन बिच २	३४	६३	लगन नई सों सखि ५	१२२	२३८
लखि जैहैं ब्रज गाँव ३	२४७	१३६	लगन मुहूरत जोग १	७१	६
लखि दारत पिय-कर- २	४६४	६६	लगन लगावत निपट ७	१७२	३५६

लगन लगी सो हिय	७	१३७	३५३	ललन चलनु सुनि	५	३४३	२५३
लगन लाग दुख एक	४	३६१	२०३	ललन चलनु सुनि	२	४०८	६२
लगनि-लगे लोचन	३	१५	११८	ललन चलनु सुनि	,,	३५८	८८
लगि गे नैन लगे	५	२४६	२४८	ललन सलौने अरु रहे	,,	३६३	६१
लगी अंग परजंक पर	७	७०८	३६७	ललित चरन कटि कर	१	३००	२४
लगी अनलगी सी जु	२	६६४	११२	ललित तिहारे गुननि	३	५१५	१५६
लगी रहै हरि-हिय यहै	३	५३४	१५८	ललित नाक नथुनी	,,	५०	१२०
लगे निसा अभिसार	,,	६१५	१६४	ललित नील कन	५	४३५	२६२
लगे पवन झुकि झुकि	७	२१३	३५६	ललित बिसदता नखन	,,	२०६	२४४
लगे लूत के जाल ए	३	८३	१२३	ललित मंद कल हंस	३	३४६	१४३
लगे सोय कर तोम	५	५७१	२७३	ललित मेंहदी बूँद यौ	५	२६५	२४६
लगे हमारे गात में	,,	४४२	२६३	ललित राग रंजित	३	४१२	१४८
लग्यौ सुमनु द्वैद	२	१६	६२	ललित लाइ की लपट	,,	६५	१२४
लघु मिलनो बिहुरन	४	२७२	१६४	ललित स्याम लीला	२	२७०	८१
लघु मिलिप गरुवे	६	२६६	३१०	लसत कोकनद करनि	३	५५३	१५६
लचकौहौं सौ लंक	३	२५	११६	लसत चार तीरनि	,,	६०३	१६३
लटकि लटकि लटकतु	२	१६२	७३	लसत पीत पट हरि	५	३६२	२५६
लटुवा लौं प्रभु कर	,,	५०१	६६	लसत बूँद अँसुवानि	३	१३४	१२७
लता लचत बिरही	७	६१३	३६०	लसत रतन-दरपन	,,	६६२	१७०
लपटानी अति प्रेम सौं	३	२१	११८	लसत सरस सिंधुर-	४	१	१७३
लपटानी घनश्याम सौं	७	३६६	३७३	लसत सुरत-श्रम-	३	४७८	१५३
लपटी पुहुप पराग	२	३६२	६१	लसत हियै छवि देत	७	५७३	३८७
लरिका लेवे कै मिसनु	,,	३८६	६०	लसति गूजरी ऊजरी	३	२५३	१३६
ललकि रूप लालच	७	१२३	३५२	लसति दांत की ज्योति	,,	५३६	१५८
ललचाने लखि भीर	५	६६८	२८०	लसति मुकुट रुचि	,,	४८६	१५४
ललचौंही कछु बात	७	६६१	३६६	लसति जाल रुचि	,,	५४६	१५६
ललन कृसन की	५	२५	२३१	लसतु सेत सारी	२	१०६	६६
ललन चलन कौ चलन	७	६३८	३६२	लसै मुरासा तिय	,,	६७३	११२
ललन चलन सुनि कै	,,	६४७	३६२	लहराती लतिकान्त	७	२५६	३६३
ललन चलन सुनि	,,	६३५	३६१	लहलहाति तरु तरुनई	२	५३२	१०२
ललन चलन सुनि महि	३२	२३१		लहि रति-सुखु लगियै	,,	६५५	१११



लहि सूने घर करु	२	५८२	१०५	लाल तिहारै <sup>१</sup> विरह	३	६७६	१६६
लही आखि कब	१	६५५	५२	लाल तुम्हारे विरह कीर	३६	६४	
लाई मान मिटाइ सखि	७	६१२	३६०	लाल तुम्हारे रूप की	११	३६८	८१
लाई लाल बिलोकियै	२	६१३	१०८	लालन लहि पाएँ दुरै	११	१८४	७५
लागत अगर अंगार	७	७३०	३६६	लाल तिहारै <sup>१</sup> नैकुहीं	३	३०४	१४०
लागत कुटिल कटाच्छ	२	३७५	८६	लाल घदन लखि	११	५५१	१५६
लागे नैना नैन में	५	१७२	२४२	लाल बाल अनुराग	११	४३६	१५०
लागै सकत सनेह जहँ	४	३६७	२०३	लाल बाल कौ उर	३	२१२	१३३
लाज गरब आलस	२	२३	६२	लाल भाल जावक	११	६१४	१६४
लाज गहै नींदहि <sup>१</sup> लहै	३	६४२	१६६	लाल भाल पै लसत	४	१२२	१८२
लाज गहौ धीरज धरौ	७	३८८	३७२	लाल रूप के अमृत	११	१६१	१८५
लाज गहौ बेकाज कत	२	१२६	७०	लाल लखावत एक	७	४३३	३७६
लाज छुटी गेहौ छुट्यौ	३	८१	१२३	लाल ललाई ललितई	५	३८२	२५८
लाजनि बोलि सकी	५	१७४	२४२	लाल लाल बिच वाल	७	३६	३४६
लाज भरी अखियाणि	११	५३६	२७०	लाल लाल लोइन	११	५७४	३८७
लाज मान गुरु जनन	७	२३४	३६१	लावति वीर पटीर	५	१२	२३०
लाज मै न दुहुँ बिच	३	४६६	१५५	ल्याई लाल निहारिण	११	४०६	२६०
लाज-लगाम न मानहीं	२	६१०	१०८	लिण लचीली लोद कर	७	२४२	३६१
लाल अचंचल चख	५	७१	२३४	लिखति अचनि तल	३	३६७	१४५
लाल अमोलक लालची	३	३४१	१४३	लिखति बाल नख भूमि	११	३५७	१४४
लाल अलौकिक	२	१६५	७३	लिखन बैठि जाकी	२	३४७	८७
लाल बतारि दई अली	५	३३१	२५४	लिखे चितेरे चित्र में	७	३११	३६७
लाल चलत लखि	११	३८७	२५८	लियै आरसी लालकर	११	६७५	३६५
लालच हूँ ऐसौ भलौ	६	६५	२६२	लीनी तो अखियाणि	३	३३३	१४२
लाल अगहि बावर	५	४६०	२६६	लीनै मुहुँ दीठि न	२	२८	६३
लाल जनायौ मैं तुम्हें	३	१८१	१३१	लीन हूँ साहस सहसु	११	२१३	७७
लाल तिहारे चलन	११	६१७	१६४	लीनौ रस कोकिल	३	५७१	१६१
लाल तिहारे नैन सर	११	६२	१२४	लेत अचनि रबि असु	१	४५३	३६
लाल तिहारे विरह	११	३०२	१४०	लेत देत आपन रहै	४	४८	१७६
लाल तिहारो रूप कौ	७	७०७	३६७	लै आवति हौं सेज	३	२५५	१३६
लाल तिहारे संग मैं	३	५५	१२१	लै कै दै राख्यौ तज	७	३२५	३६८

लै चुभकी चलि जाति २	१५२	७२	वा मुख की छवि पै	७	२०५	३३६
लै चुभकी निकसै धसै ५	४८२	२६६	वा मुख की छवि	,,	१८५	३५७
लै प्रसून पूजत सिवा ७	५६७	२८६	वाह वाह नीकी बनी ५	५३५	२७०	
लै लै मूठ गुलाल की ,,	२३०	३६०	वाहि चाहि चित	,,	५१७	२६८
लै लोयन लोयन लगी ५	६१६	२७६	वाहि लखैं लोइन लगै २	१०६	६६	
लोकन के अपवाद को ६	६३६	३३६	वाही की चित चटपटी,,	३३	६३	
लोक प्रसून-पराग तें ३	३७२	१४५	वाही दिन तैं ना	,,	५६५	१०४
लोक वेदहूँ लौं दगौ १	७१३	५७	विद्या गुरु की भक्ति ६	२६३	३०७	
लोक लाज कुलकानि ७	१६८	३५६	विद्या बिन न विराजहीं,,	५२७	३२७	
लोक लाज कुलकानि ३	२३७	१३५	विद्या मिलै अभ्यास तें ६	२००	३०२	
लोक लाज खाई ७	४८०	३८०	विद्या लक्ष्मी पुरुष पै ,,	६८०	३३८	
लोक लाज गुरु जन ,,	१६६	३५६	विसिष्टाद्यलंकार में १	३०२	२४	
लोचन पानिप ठिग ३	२६४	१३६	विषहू ते सरसी लगे ६	६६	२६२	
लोचन बड़ि कानन ७	३५६	३७०	वीर पराक्रम तैं करै ,,	२८५	३०६	
लोपे कोपे इंद्र लौं २	५२१	१०१	वीर पराक्रम ना करै ,,	२८४	३०८	
लोभ मोह मुख मेलि ७	२०१	३५८	बुद्ध न हैहै पाप तैं ,,	४६८	३२३	
लोभ लगे हरि-रूप के २	१६५	७६	वेई कर व्यौरनि बहै २	४३६	६४	
लोल नैनि धारे लसै ५	४८४	२६६	वेई गढ़ि गाहैं परी ,,	६७	६८	
लोल लोचनी कंठ ,,	३६	२३२	वे खाए ते बेवफा ४	४३	१७६	
लौढ़ लचीली लौ ७	२४३	३६१	वे न इहाँ नागर बड़ी २	४३८	६४	
<b>व</b>			वे नीके नीकी रहैं ५	२४५	२४७	
वह चितवन विहँसन ,,	७३५	३६६	वे नैनन से आसवी ,,	५६०	२७२	
वह न कहत हैं ,,	६३४	३६१	वे ढाढ़े उमदाहु उत २	३८२	६०	
वह पीतांबर की ४	४२५	२०५	वैसीयै जानी परति ,,	३६५	८६	
वह संपति केहि काम ६	६४४	३३६	व्यंग वचन तैं कढ़त ४	४६२	२०८	
वह ससि निसि में ४	१७४	१८६	<b>श</b>			
वही रंग वह आपुही ,,	५१	१७७	अम-जल-कन झलकन ३	१६४	१३२	
वाके दर लागे निला ७	५७८	३८७	अवत रहत मन कौं ४	३५७	२००	
वाके हिय के हनन कौं ३	५१६	१५७	श्री गुरुनाथ प्रभाव तैं ६	१	२८७	
वाकौ मन लीने लला ,,	२६८	१४०	श्रीफल दाख अँगुर ७	३३६	३६६	
वा दिन भाजे मुखनि ५	४५२	२६३	श्री राधा भाधव हमें ५	७२६	२८५	

श्री स्यामा कों करत	५	१	२२६	सखिन ओट कै पिय	७	३८७	३७२
स				सखि नख-रेख असेप	५	६३७	२७८
संग अनंग अनी लिए	१	३१४	२५३	सखिन संग कर गहि	७	६६२	३६६
संगति दोषु लगै सबनु	२	३०३	८४	सखिन संग नागरि	१	२०८	३५६
संगति सुमति न	१	२२८	७६	सखिन संग सोहत	१	६५३	३६३
संग दोख तें भेद अस	१	१६१	१६	सखिनि करत उपचार	३	५२१	१५७
संग्या कहतब गुन	१	५२६	४२	सखिनि दियौ उपदेस	१	७६	१२२
संत कमल मधुमास	१	१४३	१२	सखि लखि नंदकिसेर	५	४६७	२६७
संत कष्ट सहि आपुही	६	२६२	३०६	सखि संग जाति हुती	१	३२३	२५३
संतन की गति उरबिजा	१	४३५	३५	सखि सोहति गोपाल	२	३१२	८५
संतन की गति सीतकर	१	४४६	३६	सखि हरि राधा संग	५	७१६	२८४
संतन को लौ अभि-	१	४३३	३४	सखी तिहारी साँच	३	३७६	१४६
संत सभा बिमला	१	४१५	३३	सखी तिहारे दगन की	१	३३४	१४२
संपत्त बीतै बिलसबौ	६	३६४	३१७	सखी तिहारे नेह के	१	१६६	१३२
संपति केस सुदेस नर	२	११७	७०	सखी सबै सिंगार सुभ	१	५६०	१६०
संपति सकल जगत्र	१	४६	४	सखी सरस रस-केलि	१	३०१	१४०
संवत ससि रस बार	६	७०६	३४१	सखी सलोनी देह में	१	२६६	१४०
संसय सोक समूल रुज	१	४६८	४०	सखी साँवरो रूप वह	७	१६०	३५५
सकत न तुव ताते	२	१३२	७१	सखी सिखावन रावरे	३	६४१	१६६
सकल कला कमनीय	३	५४२	१५८	सगरब गरब खिचै	५	४७८	२६५
सकल सासिन तैं	७	२६७	३६५	सगुन पदारथ एक	१	४६५	३६
सकल सुखद गुन	१	४	१	सगुन सरूप तुमैं कहैं	५	२६४	२४६
सकुचि न रहियै	३	३१६	१४१	सघन कुंज घन घन	२	२६६	८४
सकुचि न रहियै स्याम	२	७२	६६	सघन कुंज छाया	१	६८१	११३
सकुचि सरकि पिय	१	४६६	६६	सघन तिमिर में तरुनि	३	४५८	१५३
सकुचि सुरत आरंभ	१	४६५	६६	सघन सगुन सधरम	१	७०४	५६
सकुचौहीं सुसुक्यानि	५	२७५	२५०	सघन स्याम कादंबिनी	३	३७४	१४५
सकै सताइ न तम	२	५६५	१०६	सघन घनै उडुगनि	७	३३४	३६८
सकै सताइ न पल	४	१७१	१८६	सचर अचर जगजीवते	१	७३८	३६६
सखि कपोल उर लाल	५	८०	२३५	सजन करत उपकार	६	६१४	३३४
सखि छपाव यह भाव	३	६८३	१६६	सजन बचन तुजन	१	४६७	३२५

सजन बचावत कष्ट तैं ६	६५३	३३७	सत्य बचन मुख जो १	३४३	३१३
सजनी निपट अचेत है ५	६४	२३४	सत्रुन मारथौ रोस ७	३२४	३६८
सजनी बिसद जलद ॥	४१	२३२	सत्रु सयाने सलिल ह्व १	६६८	५५
सजनी मेरौ मन परथौ ३	२८८	१३६	सदन निकट के ताल ५	४४	२३२
सजनी सज नीले बसन ५	५४६	२७१	सदन सदन के फिरन २	५४०	१०२
सजल जलद से नैन ए ॥	१३३	२३६	सद रद छुद रद छुद ५	४७५	२६५
सजि सिंगार अनुराग ७	६१६	३६०	सदा एकरस संत सिय १	४३४	३५
सजि सिंगार आनंद ॥	६०१	३८६	सदा नगन पद-प्रीति ॥	२६२	२३
सजि सिंगार कुंजन ॥	५८२	३८८	सदा प्रकासक रूप बर ॥	४२०	३४
सजि सिंगार भूषन ॥	७२३	३६८	सदा भजन गुरु साधु ॥	६०४	४८
सजि सिंगार सुख ॥	६०३	३८६	सदा सगुन खोता ॥	४६४	३६
सजि सिंगार सेजहि ३	२७८	१३८	सदा सत्य मय सत्य ७	३४६	३६६
सजि सुबरन अभरन ५	४१५	२६१	सदा समै बलवान पै ६	१६५	२६६
सज्जन अंगीकृत कियौ ६	११५	२६५	सदा सुधान प्रधान है ॥	४१३	३१८
सज्जन के प्रिय बचन ॥	४६६	३२५	सनमुख है रघुनाथ के १	१३०	११
सज्जन तजत न सज- ॥	१४५	२६८	सनि कजल चख मख २	५	६१
सज्जनता न मिलै कियै ॥	३७६	३१६	सनु सूख्यौ वीत्यौ ॥	१३५	७१
सज्जन पास न कहु अरे ४	८५	१७६	सपन न दरप न सदन-५	३११	२५३
सज्जन साँची बात यह ॥	२४०	१६१	सपने मैं अपने निकट ५	५२४	२६६
सज्जन सों रस पोखियै ६	६२१	३३४	सपने मैं लालन ३	१३६	१२७
सज्जन हो या बात को ४	८०	१७६	सपने मैं सपनौ समुक्ति ॥	३६५	१४५
सदकारे कारे सरल ७	६१६	३६०	सपनैं हूँ मन-भावतौ ॥	२६०	१३६
सदपटाति सैं ससि- २	६४६	११०	सपनैं मैं प्रीतम मिलै ७	७३४	३६६
सदपटाति हारी भई ५	४६	२३२	सपनैं हूँ चितवत नहीं ३	५६०	१६२
सत पुरुषनि तैं उतरि ६	५६४	३३२	सपनैं हूँ आए न जे ४	४३३	२०६
सतर भौंह रुठे बचन २	१०८	६६	सब आँग करि राखी २	२८४	८२
सतरौहीं भौंहनि नहीं ३	६६	१२२	सब आसान उपाय तैं ६	५१७	३२६
सतरौहैं मुख रुख ५	२७८	२५०	सब इक से होत न ॥	२२४	३०४
सत-संगत को फल १	५४१	४३	सब काहू की कहत हैं ॥	६२४	३३५
सत संगति सित पच्छ ॥	४०१	३२	सब की समै बिनास ॥	३६६	३१५
सतसैया तुलसी सतर ॥	३१४	२५	सब कोऊ चाहत ॥	४१६	३१६

सबकौ व्याकुल करति ६ ५५८ ३३०  
 सबको रस में राखिए ॥ २६८ ३०७  
 सब गनना चितचोर ५ १७० २४२  
 सब गुन आगर देखिए ७ ५७६ ३८७  
 सब घन नीचे दामिनी ५ १०० २३६  
 सबज पोस जरपोस ७ ५२२ ३८३  
 सब जुरि कै दरसन ५ २६६ २५२  
 सब तैं लघु है मांगिबो ६ २१६ ३०३  
 सब दरदन को ज्यों ४ ३८६ २०२  
 सबद रूप विवरन १ ५८० ४६  
 सब देखत मृत भाग ॥ ५१२ ४१  
 सब देखै पै आपनौ ६ २६१ ३०६  
 सब विधि अति रति- ५ १४२ २४०  
 सब विधि डरियै दुष्ट ६ ४७४ ३२३  
 सब विधि पूरन धाम १ ६०८ ४८  
 सब रंगन में नीर तुम ४ ६७१ २२४  
 सबल न पुष्ट सरीर ६ ३१६ ३११  
 सब संगी बाधक भए १ ५७ ५  
 सब संपति फल करत ६ ४३३ ३२०  
 सब सिंगार सुंदरि ३ २७३ १३८  
 सब सुख छाड़े नेहिया ४ २५ १७५  
 सब सुख है संतोष में ६ ३१७ ३११  
 सब सौं भलो मनाइबो १ ३५० २८  
 सब सौं आगे होय कै ६ ४८३ ३२४  
 सब स्वारथ स्वारथ १ ४६६ ३७  
 सब हित सहित समस्त ॥ ४७७ ३८  
 सबही कुल में होत ६ ६५५ ३३७  
 सबही को परखे लखे १ ६८ ६  
 सबही कौ पोषत रहै ४ ६५७ २२३  
 सबही त्यों समुहाति २ ३० ६३  
 सबुध अबुध की सेव ६ ४२८ ३२०

सबै कौन परमान सम ७ ४५१ ३७७  
 सबै धकावै निबल कौं ६ ३५५ ३१४  
 सबै समझ कै कीजिये ॥ ५८ २६१  
 सबै सहायक सबल के ॥ ५६ २६१  
 सबै सुहाएई लगौं २ २७१ ८१  
 सबै हँसत करतार दै ॥ २७६ ८२  
 समझै अन समझै ६ ३३० ३१२  
 समता स्वारथ हीन तें १ ४६५ ३७  
 सम दम समता दीनता ॥ ३०८ २५  
 समय परे सु-पुरुष ॥ ६२६ ५०  
 समय पाइ कै रूप धन ४ ६५६ २२३  
 समरस समर सकोच २ ५२७ १०१  
 सम सहाय के वित ६ ३७४ ३१५  
 समय सार दोहानि को ॥ ७०५ ३४१  
 समुक्त है संतोख धन १ ५६१ ४५  
 समुक्तव सम मजन ॥ ४०४ ३२  
 समुक्ति एक मो नेह को ४ ३३५ २५४  
 समुक्ति भली विधि ५ ४६२ २६६  
 समुक्ति समुक्ति गुन ७ २६ ३४५  
 समुक्ति सु-नीति १ ६७६ ५४  
 समुक्तै ही कहत हो ५ ११४ २३७  
 समै पलट पलटै प्रकृति २ ६६१ १११  
 समै पाइकै लगत है ४ ६२६ २२१  
 समै समै सुंदर सबै २ ४३२ ३६४  
 सरद कलानिधि कमल ७ ६२३ ३६१  
 सरकी सारी सीस ते ५ २५२ २४८  
 सरखप सूक्त जाहि १ २४१ २७  
 सरद चंद की चांदनी ३ ३२१ १४१  
 सरद चंद की चांदनी ॥ ४४२ १५१  
 सरद चांदनी में प्रगट ॥ ३०० १४०  
 सरद चांदनी में बिकच ॥ ४०० १४७

सरद जामिनी कुंज कों ५ ११० २३७	सहज अरुन पेंदीनि ७ २७१ ३६३
सरदागम पिय-आग- ३ १२१ १२६	सहज बात वृकत ३ १५३ १२८
सरनागत तेहि राम के १ १८४ १५	सहज रसीलौ होय सौं ६ २०५ ३०२
सरनागत पालक महा ३ ६६४ १७०	सहज सँतोष है साधं " ३१३ ३११
सरब सकल तैं है सदा १ ४८७ ३६	सहज सील गुन सजन " ४२५ ३१६
सरल बान जानै कहा ३ ६३८ १६६	सहज सचिकन स्याम-२ ६५ ६८
सरस कुलुम मँडरातु २ ३६६ ८६	सहज सेत पँच तोरिया " ३४० ८७
सरसत सुख दरसत ७ ६८७ ३६५	सह-बासी काची भखहि १ ७२३ ५७
सरस निरस नर होतु ६ ६२६ ३३५	सहस नाम मुनि " २८ ३
सरस बाल कौ मन ३ ६३२ १६५	सहसा परि पछिताय ५ ६५१ २७६
सरस मधुप गुंजत रहै ४ ६६४ २२४	सहि कु-बोल सांसति १ ६५६ ५२
सर सरिता चातक १ ६५ ८	सहित भला कहि ५ १५८ २४१
सरस रूप कौं भार पल ४ १५३ १८४	सहित सनेह सकोच २ २६५ ८१
सरस लौन की ढाल ६ १६१ ३०१	सही रँगिलें रति जगैं " ५११ १००
सरस सलौनी सखिन ७ ३८६ ३७३	साँच झूठ निरनै करै ६ १७२ ३००
सरस सुमन सौं बास ४ ४३५ २०६	साँच मदनजित आजु ३ ३५१ १४४
सरस सुमिल चित- २ १७८ ७४	साँचे कौ झूठै करन ७ ४५८ ३७८
सरसि जात तब बदन ५ २१५ २४५	साँची संपति और की ६ १८७ ३०१
सरसुति के भंडार की ६ ६०१ ३३३	साँची सी यह बात ४ ४५ १७६
सरित तीर मीतहिँ ७ ४७१ ३७६	साँची है यह भावते " ४२६ २०५
सरिता मैं मेरो सदन " ४६१ ३७८	साँझ समै कुंजन गई ७ ५३० ३८३
सलिल सुकर सोनित १ २०५ १७	साँझ समै वा झैल ३ १०३ १२५
ससकत मुख सीबी ७ ७१४ ३६८	साजि जतन तन अति ७ ४७३ ३७६
ससिकर सुखद सकल १ ४४८ ३६	साजि साज कुंजन गई " ५८७ ३८८
ससिकर स्रग रचना " ३५६ २६	साजि साजि भूपन " २४१ ३६१
ससि चकोर के दरद ४ ६६६ २२४	साजे मोहन मोह कौं २ ४७ ६४
ससि चकोर दग आरसी " ३६४ २०३	साधत इक छूटत ४ २३७ १६१
ससि निरमोही है " ६७५ २२५	साधन समय सुसिद्ध १ ७०५ ५६
ससि रवि सीताराम १ १२ २	साधन सांसति सब " ७३ ६
ससि लखि जगत ५ १६३ २४१	सामा सेन सयान की २ ७१० ११५
ससि सो गौने जात " ५७६ २७३	सायक-सम मायक " ५५ ६५

सारी डाली हरित अति४	६६	१८०	सीतल मंद सुगंध चलि५	५२०	२६६
सारी लटकति पाट की३	६०	१२४	सीतल मंद सुगंधित ७	२२०	३६०
सारी सारी लै भजे ५	१६४	२४१	सीरै जतननु सिसिर २	२६६	८१
सालक पालक सम १	५७६	४६	सील करम कुल भुत ६	५४०	३२८
सालति है नटसाल २	६	६१	सीस झरोखे डारि कै ५	३७६	२५८
सालै नित नटसाल ७	७००	३६६	सीस-मुकट कटि- २	३०१	८४
सासन चाहत साँस ४	५६४	२१६	सी सी करि मुरि मुरि ५	५६३	२७४
सास ननद जागत अबै ७	३८४	३७२	सी सी कै उमकै भुकै ,,	२७६	२५०
सास ननद नाहिन ५	३८४	२५८	सुंदर जोवन रूप जो ४	१३१	१८३
सास ननद ये क्रूर हैं ७	३८२	३७२	सुंदर थान न छोड़ियै ६	३१४	३११
सासौ बात सुनी न ५	४७१	२६५	सुंदर पलकन पै लसै ४	४६१	२०८
साहस करि कुंजनि ३	२६७	१३७	सुंदर हार सिँगार कौ ७	५१३	३८२
साहस ही सिख कोप १	६७३	५३	सुंदरि नगर अनंग कौ ३	५२४	१५७
सिखे आपनै डगन सै ४	६०४	२१६	सुंदरि मनि मंदिर गई ७	६१४	३६०
सिष्य सखा सेवक १	६४३	५१	सुअन देखि भूले सकल १	५३६	४३
सित अंबर जुत तियनि३	४४६	१५१	सुकनक वन कदली ५	२०५	२४४
सित कासी मगहर १	४०७	३२	सुक पिक मुनि गन १	३५३	२८
सिद्ध कला जब तै ४	१०६	१८१	सुकुल पच्छ ससि ,,	४००	३२
सिद्धि होत कारज सबै ६	५२३	३२७	सुकलाऽऽदिहि ,,	२१७	१८
सिर धारी सारी हरी ५	४२	२३२	सुख चाहत सुख में ,,	१६४	१३
सिरसि कुसुम सम ३	४५५	१५२	सुखद-दुखद कारन ,,	६१०	४८
सिला सघन घनस्याम ,,	५३३	१५८	सुखद संजोगिनि कौ ७	२८१	३६४
सिला-साप-मोचन १	२२२	१८	सुखद सरद ऋतु पाइ ,,	२७४	३६४
सिसक्यौ जल किन ४	२५५	१६२	सुखद सरद की कौमुदी५	५४०	२७०
सिसुताई के अमल ,,	२१६	१८६	सुखद साधु जन कौ ३	३६१	१४७
सिसुता में जोषन ७	३६८	३७१	सुखदाई ए देत दुख ६	४०	२६०
सीख मान मेरी हियै ,,	६६४	३६४	सुखदायक दूती चतुर ५	१४४	२४०
सीख सुधाई तीर तै ४	८३	१७६	सुख दिखाय दुख ६	३११	३११
सीत असह विप ५	१६०	२४३	सुख दुख-कारन सों १	३२७	२६
सीत-उष्ण-कर-रूप १	४५८	३७	सुख दुख दोनों एक ,,	१८०	१५
सीतलताऽऽरु सुवास कौर ५	६५	६५	सुख दुख मग अपने ,,	४४४	३६

सुख पाए हरखत हँसत १	१७३	१४	सुनि गौने की बात	५	१४८	२४०	
सुख बीतै दुख होत है ६	११०	२६५	सुनि तो दीपति दीप	,,	६६०	२८२	
सुख में होत सरीक सौ,,	१०७	२६५	सुनि पग-धुनि चितई	२	६२३	१०६	
सुख सज्जन के मिलन ,,	३६८	३१५	सुनि मानिनि अपराध	३	५५५	१५६	
सुख सौं बीती सब	२	५७१	१०५	सुनियत गुनगन रावरे	७	५७६	३८७
सुघर बदन के अधर ५	४६	२३२	सुनियत मीननि-सुख	४	१६१	१८७	
सुघर सौति बस पिउ	२	३४६	८७	सुनियै सबही की कही	६	५८०	३३१
सुचि सुगंध सोभा	७	४१३	३७४	सुनि सखियनि तें	५	५०५	२६७
सु-जन कु-जन महि	१	४८५	३६	सुनि सजनी सुरभान	,,	६६६	२८०
सुजन कुसंगति संग तैं ६	१६०	२६६	सुनि सजनी वह साँवरौ	३	५६६	१६३	
सुजन सुजन के दरस ,,	४३२	३२०	सुनि सुनि केकी कूकरी	५	३०८	२५२	
सुजस-ओज सौं साह-	३	३२४	१४२	सुनि सुनि गुनि सब	३	५२७	१५७
सुत कौं सुनौ पुरान ,,	७	११७	सुनि सुनि मीठी बात	६	४३६	३२०	
सुदुति दुराई दुरति	२	६६	६८	सुनै बरन मानै बरन	१	३७६	३०
सुदृढ़ सूर नाहिन चलै ६	६३४	३३५	सुन्यौ माइके तैं वहू	३	१६३	१३१	
सुध आवै जब मीत	४	५२४	२१३	सुपथ कुपथ लीन्हे	१	१६१	१३
सुध न रही देखतु रहै,,	३६८	२०३	सुप्रसंसा या बात की	५	४०७	२६०	
सुधरी बिगड़ै बेग ही ६	१६६	३०२	सुवरन बरन सुवास	३	७४	१२२	
सुधरौ बिगरि कुसंग तैं,,	२३७	३०५	सुबस बसत ते चित	४	६	१७३	
सुध लै जानत हौ कछु	५००	२११	सुवरन बेलि तमाल	३	१२६	१२७	
सुधा कुनाज सु-नाज	१	६६०	५५	सुबहनि निचलाई	५	५६८	२७२
सुधा-मधुर तेरौ अधर	३	१०७	१२५	सुवरन पाय लगे लगौ	,,	३६५	२५६
सुनत कोटि कोटिन	१	५६०	४५	सुबुध बीच परि दुहुन	६	३३१	३१२
सुनत पथिक मुँह माहर	२८५	८३	सुभग सरित सीतल	७	४६५	३७८	
सुनत सबै समुक्त सबै	७	१५६	३५५	सुभट समीर हरौल	,,	२१२	३५६
सुनत स्रवन पिय के	६	६५८	३३७	सुभर भरथौ तुव गुन	२	५४६	१०३
सुनत सदा गुरु बचन	३	६६३	१७०	सुमति निवारहिँ परि-	१	७२५	५७
सुनत स्रवन देखत	१	३४५	२८	सुमन-छरी सी वन गई	५	१७७	२४२
सुन पयान घन स्याम	४	५६३	२१६	सुमन सहित आँसू	४	१७६	१८६
सुन सखि हौं बैरौ	७	५१८	३८२	सुमन सिञ्जीमुख धनुष	५	६४७	२७८
सुनि इत दै मन	३	५५४	१५६	सुमन सुमन अरपन लिए,,	१६३	२४३	



सुमन खेल प्रफुलित	७	२१७	३१६	सेद-बिंदु चंदन सहित	३	६८५	१६६
सुमिरन सेवन राम-पद	१	१६	५	सेयौ छोटै ही भलौ	६	१८८	३०१
सुमिरु राम भजु राम	,,	२०२	१६	सेवरु पद सुखकर सदा	१	४५७	३७
सुरंगु महावरु सौति-	२	२८७	८३	सेवरु साहिब के बढै	६	५४६	३२६
सुरत श्रंत सुख-स्वमित	३	१३१	१२७	सेवरु सेवा के सुने	३	४५७	१५२
सुरत निसानी जात तकि	५	४५८	२६४	सेवरु सोई जाचियै	६	५०८	३२६
सुर तरु तैं बुधि कृत	७	८	३४३	सेस छबीहि न कहि	५	२०६	२४५
सुरत सहेली बाल	४	२३६	१६१	सोऽपि कहहि हम	१	३५७	२६
सुरति न ताल न	२	५५२	१०३	सोइ संग सुख जासि	३	३६१	१४४
सुरति प्रेम-मद सौं छकी,	,,	४०६	३७४	सोई अपना आपनो	६	३२३	३११
सुरति समै स्रम स्वेद	७	४००	३७३	सोई सेमर सोइ सुआ	१	३४४	२८
सुरभि-लोम-जुतअलिनि	३	२२१	१३४	सोक-पुंज सों भरि	५	४८०	२६६
सुर-सदनन तीरथ	१	६७६	५४	सोखक पोखक समुक्त	१	४२६	३४
सुहित सुखद गुन-जुत	,,	७०७	५६	सो गुरु राम सुजान	,,	१८२	१५
सुहृद जगत में दगन	४	३०४	१६६	सोच मोच मृग-	७	६४	३५०
सूखति है वह सुंदरी	३	२८	११६	सोच मोच मृग-	,,	६६२	३६४
सूखी सुता पटेल की	,,	६७	१२२	सोच-बिमोचन हैं	५	१७१	२४२
सूखे पतवारी बली	५	१२५	२३८	सो ताके अवगुन कहै	६	३६	२६०
सूद्र छुद्र पथ परिहरै	१	५५४	४४	सो तिनके दग दीप-	५	२२३	२४६
सूर उदित हूँ सुदित	२	२५८	८०	सो न कहौ वृक्षति	,,	५५७	२७१
सूरज कर परचंड सों	५	४०४	२६०	सोन जुही सी जग-	२	१६०	७५
सूर जथा रन जीति कै	१	१७०	१४	सोभित अवनि	७	२७३-३६४	
सूर वीर की संपदा	६	२८१	३०८	सोवत जागत में वही	,,	१६५	३५५
सूर वीर के वंस में	,,	४१८	३१६	सोवत जागत सुपन	२	२२७	७८
सृंगज असन सजुक्त	१	२६४	२४	सोवत लखि मन मानु	,,	२३३	७६
सेज चमेली की रचै	५	८७	२३५	सोवत सपनैं स्याम-	,,	११६	७०
सेज सुपेती तरुन तिय	७	२७६	३६४	सो स्वामी सो तर	१	६०६	४८
सेत कंचुकी कुचन पै	,,	३०८	३६६	सोहत अंगुठा पाइ कै	२	२०६	७७
सेत कंचुकी में लसत	,,	३८	३४६	सोहत अलक कपोल	७	४४	३४६
सेत वसन की चदिनी	३	४४८	१५१	सोहत ओढ़ैं पीतु पटु	२	६८६	११४
सेत वसन में यौ लगै	,,	२२२	१३४	सोहत गोल कपोल पर	७	३२	३४५

सोहत जड़ित जराय	७	५०	३४६	खवनात्मक ध्वन्यात्मक	१	३३५	२७
सोहत सघन सिवार	,,	३६	३४५	खी-कर को, रघुनाथ	,,	२८२	२३
सोहत है यह भाँति	४	३२३	१६७	खच्छ सुतिय तनभूमि	४	४४४	२०७
सोहति घोती सेत में	२	४७८	६७	खरनकार करता	१	५०८	४०
सोहतु संगु समान सौं	,,	२६७	८१	खर खेयस राजीव	,,	२७४	२२
सौहनि करि पाइनि	३	७७	१२३	खामी तीतानाथजी	,,	६६	६
सौहैं करि लोचन	७	७०३	३६७	खामी होना सहज है	,,	५३	५
सौहैं लखि सौहैं	,,	५५५	३६५	खारय के सबही सगे	६	१०८	२६५
सौहैं हूँ हेरथौ न तैं	२	५०६	१००	खारय परमारथ	१	४१	४
सौ जु सयाने एक मत	६	४४	२६०	खारय सो जानहु	,,	४६७	३७
सौरभ सुमन बरन	५	४६२	२६४	खारथु सुकृतु न श्रमु	२	३००	८४
स्याम हूँ नीठि न	,,	६२४	२७७	खास समीर प्रतच्छ	१	५१५	४१
स्याम तिहारे सीत की	५	५११	२८८	खास स्वेद कर ताडि	७	२६५	३६५
स्याम तिहारै विरह	३	६६७	१६८	स्वेदज जौ न प्रकार	१	४७५	३८
स्याम-नैन-प्रतिबिंब	,,	४८२	१५४	स्वेद भरे तनसिज खरे	५	४४७	२६३
स्याम बसन पहिरत	७	३५	३४५	स्वेद भरे तनसिज खरे	,,	५८०	२७३
स्याम बसन में स्याम	३	२७६	१३८	स्वेद भरे वर गात री	,,	१८८	२४३
स्याम बिंदु नहि चिबुक	५	३४२	२५५	स्वेद-सलिलु रोमांच-	२	२५६	८१
स्याम रंग के परस तैं	,,	२१२	२४५	ह.			
स्याम रूप अभिराम	३	४५०	१५१	हंस कपट रस सहित	१	२४१	२०
स्याम रूप स्यामा किए	५	६४	२३६	हंस कमल बिच वरन	,,	२६७	२४
स्याम सुरति करि	२	२६२	८३	हंस कै हरि सब सौं	७	७११	३६७
स्याही बार न तैं गई	४	६६७	२२६	हंसत बाल के बदन	३	४१५	१
स्यौं बिजुरी मनु मेह	२	४४५	६५	हंसनि जोन्ह तेरी लखैं	,,	५५७	१५६
स्रम बिलोकि दौरत	७	६६६	३६४	हंसि आवै हंसि जाय	५	६३	२३६
स्रम ही तैं सब मिलत है	१	१८६	३०१	हंसि उतारि हिय तैं	२	६०	६८
स्रवन करी त्यों कीजिए	,,	६७०	३३८	हंसि ओठनु बिच करु	,,	६२७	१०६
स्रवन सरोजन की कली	७	४११	३७४	हंसि हँसाइ उर लाइ	,,	३१४	८५
स्रवन सुनत देखत नयन	१	३३४	२७	हंसि हँसि हठि हियरा	७	७०२	३६७
स्रवन सुनत पिय	७	६५०	३६३	हंसि हँसि हेरति नवल	२	१७६	७४
स्रवन सुनौ है यह	४	४६७	२०६	हंसि हेरत फेरत दगनि	७	४८७	३८०

हठके हठ पैड़े परत	७	१४६	३५४	हरि बिछुरत रहते नहीं	४	५७४	२१७
हठके हठ मानत नहीं	,,	१६६	३५८	हरि बिधि बनई लोचन	५	३४४	२५५
हठ तरसावन चित	,,	२६४	३६३	हरि बिनु मन तुव	४	३२	१७५
हठि हितु करि प्रीतम	२	३८०	६०	हरि मुख लखि लोचन	३	४०६	१४८
हठु न हठीली करि	,,	५६२	१०४	हरि-रस परिहरि विषय-	६	६८	२६२
हनूमान बहु गिरि लिए	७	३१८	३६७	हरि राधा राधा भई	७	३०१	३६६
हन्यौ मोहि उहि	३	३१	११६	हरि रानिनि में राधिका	३	५४४	१५८
हम सबके हग मूँ दिहैं	७	१०	३६७	हरि हरि बरि वरि	१	११६	७०
हम सौं तुम सौं	३	१०५	१२५	हरिहि उपर सासी	५	६४६	२७८
हम हारी कै कै हहा	२	१०७	६६	हरि-हिय भृगु-पगु-	,,	४६५	२६४
हर जारयो लोचन	७	३०२	३६६	हरि हिय तै रति-रंग	३	६६२	१६८
हरत दैव हू निबल	६	१७८	३००	हरिहि हेरि ही हरि	५	४१६	२६१
हरद बरनैं तैं अधिक	३	६२६	१६५	हरी करत है पुहुमि	४	६४४	२२२
हरन करन संकट सतर	१	१५४	१३	हरण कर छुवत	७	५१	३४७
हरवी गरुवे के हिए	६	५६५	३३२	हरवौ हरवै धरन यै	४	४७१	२०६
हरप हि डोरे डोर गहि	७	२६६	३६३	हरे चरहि तापहि	१	६२	५
हरषित भई गई भयौ	५	५६८	२७५	हरे सुखवि तृन चरत	४	३३८	१६६
हरपि न बोली लखि	२	१४६	७२	हरौ हरौ रँग देखि कै	,,	६५२	२२३
हरि कीजति बिनती	,,	२४१	७६	हरयौ बसन मन-	३	६०६	१६३
हरि की सुधि कौं	३	४३२	१५०	हठक हठीली हठ	७	४७५	३७६
हरि कौं सुमिरौ हर	४	१६	१७४	हल जम मध्य समान	१	२७१	२२
हरि-छवि-जल जब तैं	२	३०७	८४	हलनि चलनि की	६	१०	२८७
हरि छवि सुधि बुधि	५	१३८	२३६	हहरत हारत रहित	१	३६४	२६
हरितन हरितन कत तकैं	,,	४३४	२६२	हाइ गई हैं आज	५	१८२	२४३
हरित पीत अंकुर	७	२५२	३६२	हानि लाभ जय विजय	१	५७५	४६
हरित बसन तन में	,,	४७६	३७६	हार द्यौ पिय पहिर	७	६४	३४८
हरित भूमि गिरि तरु	,,	२६२	३६३	हार निहार उतार घर	,,	१४३	३५४
हरि हग समता कवि	,,	५०६	३८२	हार बड़े की जीत है	६	३६४	३१६
हरिन-रूप बिरहीनि	३	६३५	१६५	हार हेरानो हेरि दे	५	२०७	२४५
हरि-पूजा हरि-भजन	४	३४	२७५	हारी जतन हजार कै	,,	१०६	२३७
हरि बिछुरत बीती	,,	४०६	२०४	हारी हरि करि करि	७	७३२	३६६

हारे घरसत बारि अरु ३ ३८६ १४६	हिय निरगुन नयनन्हि १ ३० ३
हावनि बहु भावनि ७ ६८४ ३६५	हिय लगाय सिसु ५ ६५२ २७६
हा हा कर जोरे खरे ५ २८० २५०	हिय लोचन मैं भरि ॥ ३७६ २५८
हा हा करि हारी अहे ॥ २६७ २५१	हिय सीसा मध हित ४ ४२६ २०६
हा हा बदन उषारि २ ५३ ६५	हिय हुलसत बिहँसत ७ ४०६ ३७४
हा हा री हारी हगै ५ ४४० २६२	हियें बसत मुख हसत ३ ३७५ १४५
हिंदू मैं क्या और है ४ ६७ १७८	हियै और मुख और ७ २८७ ३६५
हिण्डुष्ट के बदन तैं ६ ४०७ २१८	हियै नगर वा लगत ४ ५११ २१२
हिण्डु सुधादीधित-कला ५ ११२ २३७	हियो हिण्डु सौं मिलि ३ ६२ १२१
हित अनहित समुक्त ७ १७७ ३५६	हियौ जरायौ पाल कौं ॥ ६६१ १६७
हित आचारज दग ४ ५४७ २१५	हिलकी लै दिल कहत ७ ४४१ ३७७
हित उतही चितवत ७ ३४४ ३६६	ही औरै सी हूँ गई २ ५१० १००
हित करियत यह ४ ८६ १७६	हीन अकेलौ ही भलौ ६ २४७ ३०६
हित चित लेत चुराई ७ १८८ ३५७	हीन जानि न विरोधियै, ४५१ ३२१
हित पर बढ़त विरोध १ ६७२ ५३	हीरा भुज ताबीज मैं ४ १८० १८६
हित पुनीत स्वारथ ॥ ६२१ ४६	हुकुम पाइ जयसाहि २ ७१३ ११५
हित बतियन की रसिक-४ ४४३ २०७	हुका सौं कहु कौन पै ४ ६२२ २२०
हित मन कौ पहिचानि ६ ४०० २०३	हेतु बरन घर सुचि १ ५५५ ४४
हित मित बिन मन ४ ६५५ २२०	हेरत कहुँ जौ दीन ४ ६६६ २२७
हित राजी मैं राखवी ॥ ४५१ २०७	हेरत जित ये सहज ॥ ३३७ १६६
हित लालहि लै हिय ॥ ४६६ २०८	हेरत नैक न सामुहै ॥ ४४१ २०७
हित सन हित रति १ ४२ ४	हेरत मोहन रूप कौं ॥ २४२ १६१
हित ही कौ नौकौ कियौ ७ ५२५ ३८३	हेरति है सोतैं चकित ५ ३३७ २५५
हित हूँ की कहियै न ६ ५१ २६१	हेरि बिहारी की दसा ॥ ३१८ २५३
हित हू भलौ न नीच ॥ २०४ ३०२	हेरि हरी अचरज भरी ॥ ७११ २८३
हितु करि तुम पठ्यौ २ ५६३ १०६	हे हरि छेगभित कर ॥ २१४ २४५
हिम की मूरति के १ ३६५ ३२	हेरि हिंडोरैं गगन तैं २ ६६ ६८
हिय अनुराग रंगे ३ ६२० १६४	हे ही तूँ दरकत न ५ ३६१ २५६
हिय धरिया तामैं ४ ५८५ २१८	हे अयुक्त पै युक्त है ६ ५७८ ३३१
हिय तकि कन बिहँसन ५ ५२ २३३	हे इहि गाँव गुलाब ३ ६११ १६४
हिय दरपन को देख ४ ४१६ २०५	हे कपूर मनमय रही २ ३६२ ८८

है पासे के दाव पर	६	५१७	३२६	होय बड़ेन न हूजिए	६	३१	२८६
है प्रचंड अति पौन तैं	७	४	३४३	होय बुराई ते' बुरी	॥	१४६	२६८
है बिदेस तो प्रानपति	॥	३१३	३६७	होय भले कै' सुत बुरी	॥	३६३	३१५
है सुख अति छवि-	॥	७४	३४८	होय भले चाकरन तैं	॥	३६५	३१५
है साँचे कौधों भई	३	१३०	१२७	होय शुद्ध मिटि	॥	११८	२६६
है हिय रहलि हई	२	५०२	६६	होय सो होय हिसाव	॥	४५६	३२२
हां पुकारि कहि देति	५	५४३	२७०	होरी मिस भोरी।तिया७	२३३	३६१	
होत अधिक गुन	६	५६८	३३३	होरी में जोरी करत	॥	२३६	३६१
होत चाह तब होतु है	॥	३६६	३१५	हो हरि गोरी खेलते	५	३७	२३१
होत जगत में सुजन	३	६५६	१६७	होहि' वड़े लघु समय	१	६३५	५१
होत दसगुनौ अंक	॥	६८	१२४	हैं अति अघ-भारन	४	६८६	२२६
होत दूबरौ कूबरौ	४	६४३	२२२	हैं कब आवत ती	७	४४०	३७६
होत न कारज मो बिना	॥	२५३	३०६	हैं चलि देई दिखाय	५	५०४	२६७
होत न चातक पातकी	१	१०५	६	हैं चेरी तेरौ भयौ	७	१२	३४४
होत निबाह न आपनौ	६	३८१	३१६	हैं चेरी बजराज कौ	॥	२५	३४५
होत पिता तैं पुत्र जिमि	१	५३०	४२	हैं जानत हिय की	॥	१६२	३५५
होत बहुत धन होत	६	२५६	३०६	हैं तोसैं साँची कहत	॥	७२४	३६८
होत बुरे हूँ ते भलो	॥	३३३	३१२	हैं तो हैं गोरी खरी	५	४७३	२६५
होत सनेही कौ तहाँ	४	५०३	२११	हैं दुरबल-तन प्रभु	४	६६६	२२५
होत सिद्धि जैसे समय	६	१८५	३०१	हैं दग-कर जोरै रहैं	५	५८	२३३
होत सुजान अजान	७	५४१	३८४	हैं न दुखी मैं यह	॥	१८५	२४३
होत सुसंगति सहज	६	२३५	३०५	हैं न सखी ऐसी	॥	१५७	२४१
होत हरख का पाय	१	२७५	२२	हैं बरजी बहु बार जी	॥	३६३	२५७
होती बैदन के करै	४	५८६	२१८	हैं बूमथौ कबरीन	॥	७०१	२८३
होते जो पै चलत कहुँ	॥	६७६	२२५	हैं बोलौ लसि चुप	७	६३	३५०
होनहार सब आप ते'	१	१६३	१३	हैं मनमोहन कै लखति	३	३६६	१४५
होनहार सह जान	॥	१५६	१३	हैं रस में अनरस	७	५८६	३८८
होनहार का या घरी	५	११५	२३७	हैं रीझी लखि	२	८	६१
होमति सुखु करि	२	५४	६५	हैं हारी समुझाय कै	५	४०३	२६०
होय कछु समझै कछु	६	६१	२६४	हैं ही बौरी बिरह-	२	२२५	७८
होय पहुँच जाकी जिती	॥	२५१	३०६	हैं हूँ कहुँ सिधारिए	५	४३७	२६२

( ५८७ )

ह्याँ तै ह्याँ तै इहाँ २ ५२५ १०१

ह्याँ न चलै बलि ,, ३३२ ८६

ह्याँ श्रीधीन जाँचै नहीं १ ८५ ७

ह्याँ छपाइ भूपननि सौं ३ ५६३ १६०

ह्याँ सहाय हित हू करै ६ ८४ २६३

ह्याँ बड़े बड़ेन सों ,, २४० ३०५

छूट

बिटप तिहारे पुहुप ७ ३३८ ३६६

बिटप रसाल रसाल ,, ३२८ ३६८

विद्या बिनय विवेक १ ६६६ ५३

विषमय किधौं पियूष- ३ ३३६ १४३

कलप-विरिछ को चित्र लिखि कीन्है विनय हजार ।  
 बित्त न पावइ ताहि सों तुलसी देखु बिचार ॥३१७॥  
 बैठि निसागम निलय महुँ करै दीप की बात ।  
 तुलसी देखु बिचार उर नहिँ तम नेक नसात ॥३१८॥  
 गृह सुंदरि पुनि निकट कबि आंगन अमृत-मूरि ।  
 ते अति लघु ते' लघु रहहिँ बिनु समझे अति दूरि ॥३१९॥  
 यह तन अनुपम अयन बर उपमा रहित सुचै न ।  
 समुझ रहित रटि पचि मरै करत सकल अर्धयै न ॥३२०॥  
 रसना सुत पहिचान बिनु कहहु न कवन भुलान ।  
 जानै कोउ हरि-गुरु-कृपा उदित अए रवि-ग्यान ॥३२१॥  
 त्रिविध भांति को सबद बर बिघट न लट परमान ।  
 कारन अविरल अल अपितु तुलसी अबिद भुलान ॥३२२॥  
 दिग-भ्रम जा विधि होत है कौन भुलावत ताहि ।  
 जानि परत गुरु-ग्यान तें सब जग संसय माहिँ ॥३२३॥  
 कारन चार बिचार बर बरन न अपर न आन ।  
 सदा सोउ गुन-दोख-मय लखि न परत बिनु ग्यान ॥३२४॥  
 यह करतब सब ताहि को जेहि तें वह परमान ।  
 तुलसी मरम न पाइहैं बिनु सद-गुरु-वर-दान ॥३२५॥  
 दिग-भ्रम-कारन चारि ते जानहिँ संत सुजान ।  
 ते कैसे लखि पाइहैं जे वोहि विषय भुलान ॥३२६॥  
 सुख-दुख-कारन सो भएउ रसना को सुत बीर ।  
 तुलसी सो तब लखि परइ करै कृपा बर धीर ॥३२७॥  
 अपने खोदे कूप महुँ गिरे जथा दुख होइ ।  
 तुलसी सुखप्रद समुझि हिय रचत जगत सब कोइ ॥३२८॥  
 ता विधि ते' अपनी बिभव दुखद सुखद करतार ।  
 तुलसी कोउ कोउ संत बर कीन्हैं विरचि विचार ॥३२९॥

रसनाही के सुत उपर करत निरंतर प्रीति ।  
 तेहि पाछे सब जग लगेउ समुझ न रीति अरीति ॥३३०॥  
 माया मन तें ईस भनि ब्रम्हा बिस्तु महेस ।  
 सुर देवी औ ब्रम्ह लौं रसना-सुत उपदेस ॥३३१॥  
 बरन धार बारिधि अगम को गम करइ अपार ।  
 जन-तुलसी सत-संग-बल पाए बिसद बिचार ॥३३२॥  
 गहि सु-बेल बिरलइ समुझि बहिगे अपर हजार ।  
 कोटिन बूढ़े खबर नहिं तुलसी कहहिं बिचार ॥३३३॥  
 सवन सुनत देखत नयन तुलत न विविध विरोध ।  
 कहहु कोहि कोहि मानिए कोहि विधि करिय प्रबोध ॥३३४॥  
 सवनात्मक ध्वन्यात्मक वरनात्मक विधि तीन ।  
 त्रिविध सबद अनुभव अगम तुलसी कहहिं प्रबोन ॥३३५॥  
 कहत सुनत आदिहि बरन देखत बरन-बिहीन ।  
 दृश्यमान चर-अचर-गन एकहि एक न लीन ॥३३६॥  
 पांच भेद चर-गन विपुल तुलसी कहहिं बिचार ।  
 नर पसु स्वेदज खग कृमी बुध जन मत निरधार ॥३३७॥  
 अति विरोध तिन महुँ प्रबल प्रगट परत पहिचान ।  
 अस्थावर गति अपर नहिं तुलसी कहहिं प्रमान ॥३३८॥  
 रोम रोम ब्रह्मांड प्रभु देखत तुलसीदास ।  
 बिनु देखे कैसे कोऊ सुनि मानै बिसुआस ॥३३९॥  
 वेद कहत जहुँ लगि जगत तेहि तें अलग न आन ।  
 तेहि आधार बिधहरत लखु तुलसी परम प्रमान ॥३४०॥  
 सरखप सूझत जाहि कहँ ताहि सुमेरु असूझ ।  
 कहेउ न सो समुझत अबुझ तुलसी विगत बिबूझ ॥३४१॥  
 कहत अउर समुझत अउर गहत तजत कछु और ।  
 कहे सुने समुझत नहीं तुलसी अति मति बौर ॥३४२॥



देखेउ करइ अदेख इव अनदेखेउ बिसुआस ।  
 कठिन प्रबलता मोह की जल कह परम पियास ॥३४३॥  
 सोई सेमर सोइ सुआ सेवत पाइ बसंत ।  
 तुलसी महिमा मोह की सुनत सराहत संत ॥३४४॥  
 सुनत खवन देखत नयन संसय समन समान ।  
 तुलसी समता असम भौ कहत आन कहँ आन ॥३४५॥  
 बस हा भौ अरि हित अहित सोऽपि न समुझत हीन ।  
 तुलसी दीन मलीन मति मानत परम प्रबोन ॥३४६॥  
 भटकत पद अद्वैतता अटकत ग्यान गुमान ।  
 सटकत बितरन तें बिहरि फटकत तुख अभिमान ॥३४७॥  
 जो चाहत तेहि धिनु दुखित सुखित रहित तेहि होय ।  
 तुलसी सो अतिसय अगम सुगम राम तें होय ॥३४८॥  
 मातु पिता निज बालकहिँ करहिँ इष्ट उपदेस ।  
 सुनि मानै बिधि आपु जेहि निज सिर सहै कलेस ॥३४९॥  
 सब सो भलो मनाइबो भलो होन की आस ।  
 करत गगन को गेडुआ सो सठ तुलसीदास ॥३५०॥  
 बलि मिसु देखत देवता कर मिस मानव-देव ।  
 मुए मारि अबिचार-रत स्वारथ-साधक एव ॥३५१॥  
 विना बीज तरु एक भव साखा दल फल फूल ।  
 को बरनै अतिसय अमित सब बिधि अकल अतूल ॥३५२॥  
 सुक पिक मुनि गन बुध बिबुध फल आसित अति दीन ।  
 तुलसी ते सब बिधि रहित सो तरु तासु अधीन ॥३५३॥  
 को नहिँ सेवत आइ भव को न सेइ पछिताय ।  
 तुलसी वादहिँ पचत है आपुहिँ आप नसाय ॥३५४॥  
 कहत बिबिध फल विमल तेहि लहत न एक प्रमान ।  
 भरम प्रतिष्ठा मानि मन तुलसी कथत भुलान ॥३५५॥

मृग-जल घट भरि विविध विध सौंचत नभ-तरु-मूल ।  
 तुलसी मन हरखित रहत बिनहिँ लहे फल फूल ॥३५६॥  
 सोऽपि कहहिँ हम कहँ लहेउ नभ-तरु को फल फूल ।  
 ते तुलसी तिन तें बिलल सुनि मानहिँ मुद-मूल ॥३५७॥  
 तेऽपि तिनहिँ जांचहिँ विनय करि करि बार हजार ।  
 तुलसी गाढर को ढरन जानो जगत विचार ॥३५८॥  
 ससि कर स्रग रचना किए अति सोभा सरसात ।  
 स्वरग सुमन अवतंस खल चाहत अचरज वात ॥३५९॥  
 तुलसी बोल न बूझई देखत देख न जोइ ।  
 तिन सठ को उपदेस का करव सयाने लोइ ॥३६०॥  
 जो न सुने तेहि का कहिय कहा सुनाइय ताहि ।  
 तुलसी तेहि उपदेसहीं तासु सरिस मति जाहि ॥३६१॥  
 कहत सकल घट राम-मय तौ खोजत केहि काज ।  
 तुलसी कहँ यह कुमति सुनि उर आवत अति लाज ॥३६२॥  
 अलख कहहिँ देखन चहहिँ ऐसे परम प्रवीन ।  
 तुलसी जग उपदेसहीं बनि बुध अबुध मलीन ॥३६३॥  
 हहरत हारत रहित बिद रहत धरे अभिमान ।  
 ते तुलसी गुरुआ बनहिँ कहि इतिहास पुरान ॥३६४॥  
 निज नैनन देखत नहीं गही आंधरे बांह ।  
 कहत मोह बस तेहि अधम परम हमारे नाह ॥३६५॥  
 गगन-वाटिका सौंचहीं भरि भरि सिंधु-तरंग ।  
 तुलसी मानहिँ मोद मन ऐसे अधम अमंग ॥३६६॥  
 दखत करत रचना बिहरि रंग-रूप सम तूल ।  
 बिहँग बदन बिष्टा करत ताते भयो न तूल ॥३६७॥  
 चाह तिहारी आप ते मान न आनन आन ।  
 तुलसी कर पहिचान पति जातें अधिक न मान ॥३६८॥

आत्म-बोध विचार यह तुलसी कर उपकार ।  
 कोउ कोउ राम-प्रसाद तें पावत पर-मति पार ॥३६८॥  
 जहां तोख तहँ राम हैं राम तोख नहिँ भेद ।  
 तुलसी देखि गहत नहीं सहत विविध विधि खेद ॥३७०॥  
 गो-धन गज-धन बाजि-धन और रतन-धन खान ।  
 जब आवत संतोख धन सब धन धूरि समान ॥३७१॥  
 कुथि रटि अटत बिमूढ़ लट घट उदघटत न ग्यान ।  
 तुलसी रटत हटत नहीं अतिसय गत अभिमान ॥३७२॥  
 भू भुजंग गत दाम भव कामन विविध विधान ।  
 तो तन बरतत मान जत तत तुलसी परमान ॥३७३॥  
 भोडर सुक्ति विभव पडिक मनि गति प्रगट लखात ।  
 मनि भोडर अपि सुक्ति तें बिलग बिजानत तात ॥३७४॥  
 राम-चरन-पहिचान बिनु मिटी न मन की दैर ।  
 जनम गँवाए बादही रटत पराए पौर ॥३७५॥  
 सुनै बरन मानै बरन बरन बिलग नहिँ ग्यान ।  
 तुलसी सु-गुरु-प्रसाद-बल परै बरन पहिचान ॥३७६॥  
 बिटप बेलि गन बाग के माला-कार न जान ।  
 तुलसी ता विधि बिद बिना करता राम भुलान ॥३७७॥  
 करतबही सेाँ करम है कह तुलसी परमान ।  
 करनहार करता सोई भोगै करम निदान ॥३७८॥  
 तुलसी लट पद तें भटक अटक अपि तु नहिँ ग्यान ।  
 ता तें गुरु-उपदेस बिनु भरमत फिरत भुलान ॥३७९॥  
 ल्यों बरधा बनिजार के फिरत घनेरे देख ।  
 खाड़ भरे भुस खात हैं बिन गुरु के उपदेस ॥३८०॥  
 बुद्धिहिँ भारत अनय पद स्वपि न पदारथ लीन ।  
 तुलसी ते रासभ सरिस निज मन गनहिँ प्रबीन ॥३८१॥

कहत विविध देखे बिना गहत अनेक न एक ।  
 ते तुलसी सुनहा सरिस बानी बढहिँ अनेक ॥३८२॥  
 बिनु पाए परतीत अति करत जथारथ हेत ।  
 तुलसी अबुध अकास इव भरि भरि मूठो लेत ॥३८३॥  
 बसन बारि बांधत बिहठि तुलसी कौन बिचारि ।  
 हानि लाभ बिधि बोध बिनु होत नहीं निरधार ॥३८४॥  
 काम क्रोध मद लोभ की जब लगि मन में खान ।  
 का पंडित का मूरखौ दोऊ एक समान ॥३८५॥  
 उत कुल की करनी तजी इत न भजे भगवान ।  
 तुलसी अधबर को भए क्यों बधूर को पान ॥३८६॥  
 कीर सरिस बानी पढ़त चाखन चाहत खाड़ ।  
 मन राखत बैराग महुँ घर महुँ राखत रांड ॥३८७॥  
 राम - चरन परचे नहीं बिनु साधुन-पद नेह ।  
 मूढ़ मुड़ाए बादही भाड़ भए तजि गेह ॥३८८॥  
 काह भए बन बन फिरे जौ बनि आएउ नाहि ।  
 बनते बनते बनि गएउ तुलसी घरही माहिँ ॥३८९॥  
 जो गति जानै बरन की तन-गति सो अनुमान ।  
 बरन-बिंदु-कारन जथा तथा जानु नहिँ आन ॥३९०॥  
 बरन-जोग भौ नाम जग जानु भरम को मूल ।  
 तुलसी करता है तुही जानि मानु जनि भूल ॥३९१॥  
 नाम जगत सम समुझु जग बस्तु न करु चित चैन ।  
 बिंदु गए जिमि गैन तें रहत ऐन को ऐन ॥३९२॥  
 आपुहि ऐन बिचारु बिधि सिद्धि विमल मति मान ।  
 आन बासना बिंदु सम तुलसी परम प्रमान ॥३९३॥  
 धन धन कहे न होत कोउ समुझि देखु धनमान ।  
 होत धनिक तुलसी कहत दुखित न रहत जहान ॥३९४॥

हिम की मूरति के हिए लगी नीर की प्यास ।  
 लगत सवइ गुरु तर निकर सोमै रही न आस ॥३८५॥  
 जाके उर बर बासना भई भास कछु आन ।  
 तुलसी ताहि बिहंबना केहि बिधि कथहिँ प्रमान ॥३८६॥  
 रुज तन-भव परिचय विना भेखज कर किमि कोइ ।  
 जानि परइ भेखज करइ सहज नास रुज होइ ॥३८७॥  
 मानस व्याध कुचाह तव सतगुरु वैद समान ।  
 जासु बचन अलबल अवसि होत सकल रुज हान ॥३८८॥  
 रुचि बाढ़इ सतसंग महँ नीति-छुधा अधिकाइ ।  
 होत ग्यान बल पीन अल त्रिजिन बिपति मिटि जाइ ॥३८९॥  
 सुकुल पच्छ ससि स्वच्छ जिमि किसन पच्छ दुति-हीन ।  
 बढ़त घटत बिधि भांति बिद तुलसी कहहिँ प्रवीन ॥४००॥  
 सत-संगति सित पच्छ सम असित असंत-प्रसंग ।  
 जानु आपु कहँ चंद्र सम तुलसी बढत अभंग ॥४०१॥  
 तीरथ-पति सत-संग सम भगति देव-सरि जान ।  
 बिधि उलटी गति राम की तरनि-सुता अनुमान ॥४०२॥  
 बर मेधा मानहु गिरा धीर धरम न्यग्रोध ।  
 मिलन त्रिबेनी मल-हरनि तुलसी तजहु विरोध ॥४०३॥  
 समुभव सम मज्जन बिसद मल अनीति गइ धोइ ।  
 अवसि मिलन संसय नहीं सहज राम-पद होइ ॥४०४॥  
 छमा बिमल बारानसी सुर-अपगा सम भक्ति ।  
 ग्यान विसेसर अति विसद लसत दया सह सक्ति ॥४०५॥  
 बसत छमा गृह जासु मन बारानसी न दूरि ।  
 बिलसति सुरसरि भगति जहँ तुलसी नय-क्रिय भूरि ॥४०६॥  
 सित कासी मगहर असित लोभ मोह मद काम ।  
 हानि लाभ तुलसी समुक्ति बास करहु बसु जाम ॥४०७॥

गए पलटि आवै नहीं है सो कर पहिचान ।  
 आज सोई सोइ काल्हि है तुलसी भरम न मान ॥४०८॥  
 बरतमान आधीन दोउ भावी भूत विचार ।  
 तुलसी संसय मन न कर जो है सो निरुवार ॥४०९॥  
 मान-सरोवर मन मधुर राम सुजस सुचि नीर ।  
 हरइ त्रिजिन बुधि विसद अति बुध नय अगम सुधीर । ४१०॥  
 अलंकार कवि-रीति-जुत भूखन दूखन प्रीति ।  
 वारि-जात बरनन विविध तुलसी विमल विनीति ॥४११॥  
 विनय विचार सुहृदता सोइ पराग रस गंध ।  
 कामादिक तेहि सर लसत तुलसी घाट प्रबंध ॥४१२॥  
 प्रेम डमगि कवितावली चली सरित सुचि सार ।  
 राम बरा पुरि मिलन हित तुलसी हरख अपार ॥४१३॥  
 तरल तरंग सुहृंद वर हरत द्वैत तरु मूल ।  
 वैदिक लौकिक विधि विमल लसत विसद वर कूल ॥४१४॥  
 संत-सभा विमला नगरि सकल-सुमंगल-खानि ।  
 तुलसी-उर सुर-सर सुता लसत सुथल अनुमानि ॥४१५॥  
 मुक्त मुमुच्छ बर विखयि सोता त्रिविध प्रकार ।  
 ग्राम नगर पुर जुग सु-तट तुलसी कहहिं विचार ॥४१६॥  
 वारानसी विराग नहिं सैल-सुता-मन होय ।  
 तिमि अवधहि सरजू न तज कहत सु-कवि सब कोय ॥४१७॥  
 कहव सुनव समुझव सो पुनि सुनि समुझाव आन ।  
 लम-हर घाट प्रबंध वर तुलसी परम प्रमान ॥४१८॥

## पंचम सर्ग

जतन अनूपम जानु बर सकल-कला-गुन-धाम ।  
 अविनासी अन्यय अमल मौ यह तनु धरि राम ॥४१॥  
 सदा प्रकासक रूप बर अस्त न अपर न आन ।  
 अप्रमेय अद्वैत अज या तैं दुरत न ग्यान ॥४२॥  
 जानहिं हंस रसाल कहँ तुलसी संत न आन ।  
 जाकी कृपा-कटाच्छ तैं पाए पद निरवान ॥४२१॥  
 तजत सलिल अपि पुनि गहत घटत बढ़त नहिँ रीति ।  
 तुलसी यह गति उर निरखि करिय राम-पद-प्राति ॥४२२॥  
 चुंबक आहन रीति जिमि संतन हरि सुख-धाम ।  
 जानति रिच्छ-रसम सफरि तुलसी जानत राम ॥४२३॥  
 भरत हरत दरसत सबहि पुनि अदरस सब काहु ।  
 तुलसी सु-गुरु-प्रसाद-बल होत परम पद लाहु ॥४२४॥  
 जथा प्रतच्छ सरूप बहु जानत है सब कोय ।  
 तथा हि लय-गति को लखन असमंजस अति सोय ॥४२५॥  
 जथा सकल अप जात अपि रबिमंडल के माहिँ ।  
 मिलन तथा जिव राम पद होत तहां लय नाहिँ ॥४२६॥  
 करम कोस सँग लै गयो तुलसी अपनी बानि ।  
 जहां जाइ बिलसै तहां परै कहां पहिचानि ॥४२७॥  
 ज्यों धरनी महुँ हेतु सब रहत जथा धरि देह ।  
 त्यों तुलसी लय राम महुँ मिलन कबहुँ नहिँ एह ॥४२८॥  
 सोखक पोखक समुझ सुचि राम-प्रकास-सरूप ।  
 जथा तथा बिभु देखिए जिमि आदरस अनूप ॥४२९॥  
 करम मिटाए मिटत नहिँ तुलसी किए बिचार ।  
 करतबही को फेर है या बिधि सार असार ॥४३०॥

एक किए है दूसरे बहुरि तीसरो अंग ।  
 तुलसी कैसहु ना मिटै अतिसय करम तरंग ॥४३१॥  
 इन दोउन्ह तें रहित भौ कोउ न राम तजि आन ।  
 तुलसी यह गति जानिहैं कोउ कोउ संत सुजान ॥४३२॥  
 संतन को लै अभि-सदन समुझिहैं सुगति प्रवीन ।  
 करम-विपरजय कबहुँ नहिँ सदा राम-रस लीन ॥४३३॥  
 सदा एक-रस संत सिय निहचय निसिकर जान ।  
 राम-दिवाकर दुख-हरन तुलसी सील-निधान ॥४३४॥  
 संतन की गति उरविजा जानहु ससि परमान ।  
 रमित रहत रस-मय सदा तुलसी रति नहिँ आन ॥४३५॥  
 जात-रूप जिमि अनल मिलि ललित होत तन ताय ।  
 संत सीतकर सीय तिमि लसहिँ राम-पद पाय ॥४३६॥  
 आपुहि बाँधत आपु हठि कौन छुड़ावत ताहि ।  
 सुख-दायक देखत सुनत तदपि सो मानत नाहिँ ॥४३७॥  
 जौन तार तें अधम गति उरध तौन गति जात ।  
 तुलसी मकरी तंतु इव कबहुँ न करम नसात ॥४३८॥  
 जहाँ रहत तहँ सह सदा तुलसी तेरी बानि ।  
 सुधरै बिधि-बस होइ जब सत-संगति पहिचानि ॥४३९॥  
 रवि रजनीस धरा तथा यह असथिर असथूल ।  
 सूछम गुन को जीव कर तुलसी सो तन-मूल ॥४४०॥  
 आवत अप रवि तें जथा जात तथा रवि माहि ।  
 जहँ तें प्रगट तहाँ दुरत तुलसी जानत ताहि ॥४४१॥  
 प्रगट भए देखत सकल दुरत लखत कोइ कोइ ।  
 तुलसी यह अतिसय अगम बिनु गुरु सुगम न होइ ॥४४२॥  
 या जग जे नय-हीन नर बरवस दुख-मग जाहिँ ।  
 प्रगटत दुरत महा-दुखी कहँ लगि कहियत ताहि ॥४४३॥



सुख-दुख-मग अपने गहे मग केहु लगत न धाय ।  
 तुलसी राम-प्रसाद बिन सो किमि जानो जाय ॥४४४॥  
 महि तें रवि रवि तें अवनि सपनेहुँ सुख कहूँ नाहिँ ।  
 तुलसी तब लगि दुखित अति ससि-मग लहत न ताहि ॥४४५॥  
 संतन की गति सीत-कर लेस कलेस न होय ।  
 सो सिय-पद सुखदा सदा जानु परम-पद सोय ॥४४६॥  
 तजत अमिय ससि जान जग तुलसी देखत रूप ।  
 गहत नहीं सब कहँ विदित अतिसय अमल अनूप ॥४४७॥  
 ससि-कर सुखद सकल जगत को तेहि जानत नाहिँ ।  
 कोक कमल कहँ दुखद कर जदपि दुखद नहिँ ताहि ॥४४८॥  
 बिन देखे समुझे सुने सोड भव मिथ्या-वाद ।  
 तुलसी गुरु गम कै लखै सहजहिँ मिटै बिखाद ॥४४९॥  
 बरखि बिस्व हरखित करत हरत ताप अध-प्यास ।  
 तुलसी दोख न जलद कर जो जल जरै जवास ॥४५०॥  
 चंद्र देत अमि लेत बिख देखहु मनहिँ विचार ।  
 तुलसी तिमि सिय संत बर महिमा बिलद अपार ॥४५१॥  
 रसमि विदित रवि-रूप लखु सीत सीत-कर जान ।  
 लसत जोग जस-कार भव तुलसी समुझु समान ॥४५२॥  
 लेत अवनि रवि अंसु कहँ देत अमिय अप-सार ।  
 तुलसी सूछम को सदा रवि रजनीस आधार ॥४५३॥  
 भूमि भातु असथूल 'अप सकल चराचर-रूप ।  
 तुलसी बिनु गुरु ना लहै यह मत अमल अनूप ॥४५४॥  
 तुलसी जे नय-लीन नर ते निसि-कर-वन-लीन ।  
 अपर सकल रवि गत भए महा-कष्ट अति दीन ॥४५५॥  
 तुलसी कवनहुँ जोग तें सत-संगति जब होय ।  
 राम-मिलन संसय नहीं कहहिँ सु-मति सब कोय ॥४५६॥

सेवक पद सुख-कर सदा दुख-द सेव्य-पद जान ।  
 जथा विभीषन रावनहि तुलसी समुक्त प्रमान ॥४५७॥  
 सीत-उष्ण-कर-रूप सम निसि-दिन कर करतार ।  
 तुलसी तिन कहँ एऊ नहिँ निरखहु करि निरधार ॥४५८॥  
 नहिँ नयनन्ह काहू लखेउ धरत नाम सब कोइ ।  
 तातेँ साँची है समुक्त भूठ कबहुँ नहिँ होइ ॥४५९॥  
 वेद कहत सबको विदित तुलसी अमिय-सुभाव ।  
 करत पान अरु रुज हरत अविरल अमल प्रभाव ॥४६०॥  
 गंध सीत अपि उष्णता सबहि विदित जग जान ।  
 महि बन अनल सो अनिल गत विन देखे परमान ॥४६१॥  
 इन महुँ चेतन अमल अल बिलखत तुलसीदास ।  
 सो पद गुरु-उपदेस सुनि सहज होत परकास ॥४६२॥  
 येहि विधि तेँ वर बोध यह गुरु-प्रसाद कोउ पाव ।  
 हैं ते अल तिहुँ काल महुँ तुलसी सहज प्रभाव ॥४६३॥  
 काक-सुता-सुत वा सुता मिलत जननि पितु धाय ।  
 आदि-मध्य-अवसान गत चेतन सहज सुभाय ॥४६४॥  
 समता स्वारथ-हीन तेँ होत सु-विसद विवेक ।  
 तुलसी यह नितही फबै जिनहिँ अनेक न एक ॥४६५॥  
 सब स्वारथ स्वारथ रटत तुलसी घटत न एक ।  
 ज्ञान-रहित अज्ञान-रत कठिन कु-मन कर टेक ॥४६६॥  
 स्वारथ सो जानहु सदा जासों विपति नसाय ।  
 तुलसी गुरु-उपदेस धिनु सो किमि जानैउ जाय ॥४६७॥  
 कारज स्वारथ-हित करै कारन करै न होइ ।  
 मनवा ऊख बिसेख तेँ तुलसी समझहु सोइ ॥४६८॥  
 कारन कारज जान तो सब काहू परमान ।  
 तुलसी कारन कार जो सो तैं अपर न आन ॥४६९॥

विन करता कारज नहीं जानत है सब कोइ ।  
 गुरु-मुख खवन सुनत नहीं प्राप्त कवन विधि होइ ॥४७०॥  
 करता कारन कारजहु तुलसी गुरु परमान ।  
 लोपत करता मोह-बस ऐसउ अघुध मलान ॥४७१॥  
 अनिल सलिल विधि जोग तें जथा वीचि बहु होइ ।  
 करत करावत नहिँ कछुक करता कारन सोइ ॥४७२॥  
 छेम-धरन करेतार कर तुलसी-पति पर-धाम ।  
 सो बरतर ता सम न कोउ सब विधि पूरन-काम ॥४७३॥  
 करता कारन सार-पद अव्यय अमल अमेद ।  
 करम घटत अपि बढ़त है तुलसी जानत वेद ॥४७४॥  
 स्वेद-ज जौन प्रकार तें आप करै कोउ नाहिँ ।  
 भएउ प्रगट तेहि के सुनौ कौन बिलोकत ताहि ॥४७५॥  
 भई विखमता करम महुँ समता किए न होइ ।  
 तुलसी समता समुझ कर सकल मान मद धोइ ॥४७६॥  
 सम-हित सहित समस्त जग सुहृद जानु सब काहु ।  
 तुलसी यह मत धारु उर दिन प्रति अति सुख लाहु ॥४७७॥  
 यह मन महुँ निहचय धरहु है कोउ अपर न आन ।  
 कासन करत विरोध हठि तुलसी समुझ प्रमान ॥४७८॥  
 महि जल अनल सो अनिल नभ तहाँ प्रगट तुव रूप ।  
 जानि जाइ बर बोध तें अति सुभ अमल अनूप ॥४७९॥  
 जो पै आकसमात तें उपजै बुद्धि विसाल ।  
 ना तौ अति छल हीन है गुरु-सेवन कछु काल ॥४८०॥  
 कारज जुग जानहु हिए नित्य अनित्य समान ।  
 गुरु - गम ते देखत सु - जन कह तुलसी परमान ॥४८१॥  
 महि मर्यक अह-नाथ को आदि ग्यान भव भेद ।  
 ता विधि तेई जीव कहँ होत समुझ बिनु खेद ॥४८२॥

परो फेर निज करम महुँ भ्रम भव को यह हेत ।  
 तुलसी कहत सु-जन सुनहु चेतन समुझ अचेत ॥४८३॥  
 नाम - कार दूखन नहीं तुलसी किए बिचार ।  
 करमन की घटना समुझि ऐसे बरन उचार ॥४८४॥  
 सु-जन कु-जन महि गत जथा तथा भाजु ससि माहि ।  
 तुलसी जानत ही सुखी होत समुझ बिन नाहि ॥४८५॥  
 मातु-तात-भव-रीति जिमि तिमि तुलसी गति तोरि ।  
 मातु न तात न जानु तब है तेहि समुझ बहोरि ॥४८६॥  
 सरब सकल तै है सदा विसलेसित सब ठौर ।  
 तुलसी जानहि सुहृद ए ते अति मति-सिर-मौर ॥४८७॥  
 अलंकार घटना कनक रूप नाम गुन तीन ।  
 तुलसी राम-प्रसाद तें परखहि परम प्रबोन ॥४८८॥  
 एक पदारथ विविध गुन संग्या अगम अपार ।  
 तुलसी सु-गुरु - प्रसाद तें पाए पद निरधार ॥४८९॥  
 गंधन मूल उपाधि बहु भूखन तन गन जान ।  
 सोभा गुन तुलसी कहहि समुझहि सुमति-निधान ॥४९०॥  
 जैसो जहां उपाधि तहँ घटित पदारथ रूप ।  
 तैसो वहां प्रभास मन गुन गन सुमति अनूप ॥४९१॥  
 जानु बस्तु असथिर सदा मित्त मित्त नहि ।  
 रूप नाम प्रगटत दुरत समुझि बिलोकहु ताहि ॥४९२॥  
 पेखि रूप संग्या कहब गुन सु-विवेक बिचार ।  
 इतनोई उपदेस बर तुलसी किए बिचार ॥४९३॥  
 सदा सगुन सीता-रमन सुख-सागर बल-धाम ।  
 जन तुलसी परखे परम पाए पद बिस्राम ॥४९४॥  
 सगुन पदारथ एक नित निरगुन अमित उपाधि ।  
 तुलसी कहहि बिसेख तें समुझ सुगति सुठि साधि ॥४९५॥

जथा एक कहँ बेद गुन ता महँ को कहु नाहिँ ।  
 तुलसी बरतत सकल है समुक्त कोउ कोउ ताहिँ ॥४६६॥  
 तुलसी जानत साधु-जन उदय-अस्त-गत भेद ।  
 बिन जाने कैसे मिटै विविध जनन मन-खेद ॥४६७॥  
 संसय सोक स-मूल रुज देत अमित दुख ताहि ।  
 अहि अनुगत सपने विविध जाइ पराय न जाहि ॥४६८॥  
 तुलसी सांचो सांप है जब लागि खुलै न नैन ।  
 सो तब लागि जब लागि नहीं सुनै सु-गुरु-वर बैन ॥४६९॥  
 पूरन परमारथ दरस परस न जौ लागि आस ।  
 तौ लागि खन न अघात नर जौ लागि जल न प्रगास ॥४७०॥  
 तौ लागि हम तें सब बड़ो जौ लागि है कछु चाह ।  
 चाह रहित कह को अधिक पाय परम-पद थाह ॥४७१॥  
 कारन करता है अचल अपि अनादि अजरूप ।  
 तातें कारज विपुल-तर तुलसी अमल अनूप ॥४७२॥  
 करता जानि न परत है बिन गुरु-वर-परसाद ।  
 तुलसी निज सुख बिधि-रहित केहि विधि मिटै बिखाद ॥४७३॥  
 मृन-मय घट जानत जगत बिन कुलाल नहिँ होइ ।  
 तिमि तुलसी करता रहित करम करै कहु कोइ ॥४७४॥  
 तातें करता-ग्यान करु जा तें करम प्रधान ।  
 तुलसी ना लखि पाइहौ किए अमित अनुमान ॥४७५॥  
 अनूमान साछी रहित होत नहीं परमान ।  
 कह तुलसी परतच्छ जो सो कहु अपर को आन ॥४७६॥  
 मृद कारन करता सहित कारज किए अनेक ।  
 जौ करता जानै नहीं तौ कहु कवन विवेक ॥४७७॥  
 स्वरन-कार करता कनक कारन प्रगट लखाय ।  
 अलंकार कारज सुख-द गुन सोभा सरसाय ॥४७८॥

चामीकर भूखन अमित करता करतव भेद ।  
 तुलसी जे गुरु-गम-रहित ताहि रमित अति-खेद ॥५०६॥  
 तन निमित्त जहँ जो भयो तहँ सोई परमान ।  
 जिन जाने माने तहां तुलसी कहहिँ सु-जान ॥५१०॥  
 मृन-मय भाजन विविध विधि करता मन भव-रूप ।  
 तुलसी जाने ते सुख-द गुरु-गम-ग्यान अनूप ॥५११॥  
 सब देखत मृत भाजनहिँ कोउ कोउ लखत कुलाल ।  
 जाके मन के रूप बहु भाजन बिलघु बिसाल ॥५१२॥  
 एकै रूप कुलाल को माटी एक अनूप ।  
 भाजन अमित बिसाल लघु तौ करता मन-रूप ॥५१३॥  
 जहां रहत वरनत तहां तुलसी नित्य सरूप ।  
 भूत न भावी ताहि कह अतिसय अमल अनूप ॥५१४॥  
 खास समीर प्रतच्छ अप स्वच्छादर्स लखात ।  
 तुलसी राम-प्रसाद विन अविगति जानि न जात ॥५१५॥  
 तुलसी तुल रहि जात है जुग-तन अचल उपाधि ।  
 यह गति तेहिँ लखि परत जेहि भई सुमति सुठि साधि ॥५१६॥  
 करता कारन काल के जोग करम मत जान ।  
 पुनः काल करता दुरत कारन रहत प्रमान ॥५१७॥

### षष्ठ सर्ग

जल थल तन गत है सदा तैं तुलसी तिहुँ काल ।  
 जनम मरन समुझे बिना भासत समन बिसाल ॥५१८॥  
 तैं तुलसी करता सदा कारन सबद न आन ।  
 कारज संग्या सुख-दुख-द बिनु गुरु तेहिँ किमु जान ॥५१९॥

कारज-रत करता समुक्ति सुख दुख भोगत सोइ ।  
 तुलसी स्त्री-गुरुदेव बिन दुख-प्रद दूरि न होइ ॥५२०॥  
 कारन सबद सरूप है संग्या गुन भव जान ।  
 करता सुर-गुरु ते सुखद तुलसी अपर न आन ॥५२१॥  
 गंध बिभावरी नीर रस सलिल अनल गत ग्यान ।  
 बायु बेग कहँ बिनु लखे बुध-जन कहँहि प्रमान ॥५२२॥  
 अनुस्वार अच्छर रहित जानत हैं सब कोइ ।  
 कह तुलसी जहँ लगि बरन तासु रहित नहिँ होइ ॥५२३॥  
 आदिहु अंतहु है सोई तुलसी और न आन ।  
 बिनु देखे समुक्ते बिना किमि कोउ करै प्रमान ॥५२४॥  
 रहित बिंदु सब बरन ते' रेफ रहित सब जान ।  
 तुलसी स्वर-संजोग ते' होत बरन पद मान ॥५२५॥  
 अनुस्वार सूछम जथा जथा बरन असथूल ।  
 जो सूछम असथूल सो तुलसी कबहुँ न भूल ॥५२६॥  
 अनिल अनल पुनि सलिल रज तन गत तन तव होइ ।  
 बहुरि सो रज गत जल अनल मरुत सहित रवि सोइ ॥५२७॥  
 औरो भेद सिधांत यह निरखु सु-मति करि सोइ ।  
 तुलसी सुत भव जोग बिनु पितु संग्या नहिँ होइ ॥५२८॥  
 संग्या कह तव गुन समुक्त सुनब सबद परमान ।  
 देखब रूप बिसेख है तुलसी बेद बखान ॥५२९॥  
 होत पिता ते' पुत्र जिमि जानत को कहु नाहिँ ।  
 जौ लगि सुत परसो नहीं पितु पद लहइ न ताहि ॥५३०॥  
 तिमि बरनहिँ ते' बरन कर संग्या बरन सँजोग ।  
 तुलसी होइ न बरन कर जौ लगि बरन बियोग ॥५३१॥  
 तुलसी देखहु सकल कहँ यहि विधि सुत आधीन ।  
 पितु-पद परखि सु-दृढ़ भएउ कोउ कोउ परम प्रबोध ॥५३२॥

गहँ देखो सुत-पद सकल भएउ पिता-पद लोप ।  
 तुलसी सो जानै सोई जासु अमोलिक चोप ॥५३३॥  
 ख्यात सुअन तिहुँ लोक महँ महा-प्रबल अति सोइ ।  
 जो कोउ तेहि पाछे करै सो पुनि आगे होइ ॥५३४॥  
 तुलसी होत नहीं कछुक सुअन रहित व्यवहार ।  
 ताही ते' अगरज भएउ सब बिधि तेहि प्रचार ॥५३५॥  
 सुअन देखि भूले सकल भए अति परम अधीन ।  
 तुलसी जेहि समुझाइ सो मन करत मलीन ॥५३६॥  
 मानत सो साँचो हिए सुनत सुनावत बादि ।  
 तुलसी ते समुझत नहीं जो पद अमल अनादि ॥५३७॥  
 जाहि कहत हैं सकल सो जेहि कहतव सो ऐन ।  
 तुलसी ताहि समुझि हिए अजहुँ करै चित चैन ॥५३८॥  
 तुलसी जो है सो नहीं कहत आन सब कोइ ।  
 एहि बिधि परम बिडंबना कहहु न काको होइ ॥५३९॥  
 गुरु करिबो सिद्धांत यह होइ जथारथ बोध ।  
 अनुचित उचित लखाइ उर तुलसी मिटत विरोध ॥५४०॥  
 सत-संगति को फल यही संसय रहइ न लेस ।  
 है असथिर सुचि सरल चित पावै पुनि न कलेस ॥५४१॥  
 जौं मरिबो पद सबनि को जहँ लगि साधु असाधु ।  
 कवन हेतु उपदेस गुरु सत-संगति भव बाधु ॥५४२॥  
 जौं भावी कछु है नहीं भूठो गुरु सत-संग ।  
 ऐसि कुमति ते' छूट गुरु संतन को परसंग ॥५४३॥  
 जौं लौं लखि नाहीं परत तुलसी पर-पद आप ।  
 तौ लगि मोह-बिबस सकल कहत पूत कहँ बाप ॥५४४॥  
 जहँ लगि संग्या बरन-भव जासु कहे ते' होइ ।  
 ते तुलसी सो है स-बल आन कहाँ कहु कोइ ॥५४५॥



अपने नैननि देखि जे चलहिँ सु-मति वर लोग ।  
 तिनहिँ न विपति विखाद रुज तुलसी सुमति सु-जोग ॥५४६॥  
 मृगा गगन-चर ग्यान विनु करत नहीं पहिचान ।  
 पर बस सठ हठि तजत सुख तुलसी फिरत भुलान ॥५४७॥  
 कहा कहाँ तेहि तोहि को जेहि उपदेसहु तात ।  
 तुलसी कहत सु-दुख सहत समुझ रहित हित-वात ॥५४८॥  
 विनु काटे तरु-वर जथा मिटै कौन विधि छाहिँ ।  
 त्यों तुलसी उपदेस विनु निहसंसय कोउ नाहिँ ॥५४९॥  
 अपने करतअ आपु लखि सुनि गुनि आपु विचार ।  
 तौ तोहि को दुखदा कहा सुखदा सुमति आधार ॥५५०॥  
 ब्राह्मन वर विद्या-विनय सुरुति-विवेक-निधान ।  
 पथ-रति अनय-अतीत मति सहित दया स्मृति-मान ॥५५१॥  
 विनय छत्र सिर जासु के प्रति पद पर-उपकार ।  
 तुलसी सो छत्रो सही रहित सकल-व्यभिचार ॥५५२॥  
 वैश्य विनय मगु पगु धरै हरै कटुक वर वैत ।  
 सदय सदा सुचि रुचि सरल ताहि अचल सुख ऐन ॥५५३॥  
 सूद्र छुद्र पथ परिहरै हृदय विप्र - पद मान ।  
 तुलसी मन समता सु-मति सकल जीव सम जान ॥५५४॥  
 हेतु बरन वर सुचि रहनि रस निरास सुख-सार ।  
 चाह न काम-सुरा न रम तुलसी सु-दृढ़ विचार ॥५५५॥  
 जथा लाभ संतोख-रत गृह मग वन सम रीति ।  
 ते तुलसी सुख-मय सदा जिन तन विभव विनीति ॥५५६॥  
 रहै जहां बिचरै तहां कमी कहूं कछु नाहिँ ।  
 तुलसी तहँ आनंद सँग जात जथा रंग छाहिँ ॥५५७॥  
 करत तरक जेहि की सदा सो मन दुख-दातार ।  
 तुलसी जौ समुझै नहीं तो तेहि तजइ विचार ॥५५८॥

कहत सुनत समुझत लखत तेहि तें विपति न जाइ ।  
 तुलसी सब तें बिलग है जौ लगि नहिँ ठहराइ ॥५५॥  
 सुनत कोटि कोटिन कहत कौड़ो हाथ न एक ।  
 देखत सकल पुरान सुति तापर रहित बिबेक ॥५६॥  
 समुझत है संतोख धन या तें अधिक न आन ।  
 गहत नहीं ता तें कहत तुलसी अग्रुध मलान ॥५६॥  
 कहा होत देखे सुने अरु समुझे सब रीति ।  
 तुलसी जौ लगि होत नहिँ सुखद राम-पद प्रीति ॥५६॥  
 कोटिन साधन के किए अंतर मल नहिँ जाइ ।  
 तुलसी जौ लगि सकल गुन सहित न करम नलाइ ॥५६॥  
 चाह बनी जौ लगि सकल तौ लगि साधन सार ।  
 ता महुँ अमित कलेस - कर तुलसी देखु बिचार ॥५६॥  
 चाह किए दुखिया सकल ब्रह्मादिक सब कोइ ।  
 निहचलता तुलसी कठिन राम कृपा बस होइ ॥५६॥  
 अपनो करम न आपु कहँ भलो मंद जेहि काल ।  
 तब जानब तुलसी भई अतिसय बुद्धि बिसाल ॥५६॥  
 तुलसी जौ लौं लखि परत देह प्रान कौ भेद ।  
 तौ लगि कैसे कै मिटइ करम - जनित बहु खेद ॥५६॥  
 जोइ प्रान सो देह है प्रान देह नहिँ दोय ।  
 तुलसी जो लखि पाइहै सो निरदय नहिँ होय ॥५६॥  
 तुलसी तै भूठो भयो करि भूठे संग प्रीति ।  
 है सांचो है सांच जब गहै राम की रीति ॥५६॥  
 भूठी रचना सांच है रचत नहीं अलसात ।  
 बरजेहु भगरत बिहठि नेकु न बूझत बात ॥५७॥  
 करम खरी कर मोह थल अंक चराचर जाल ।  
 भरत हरत भरि हरि गनत जगत ज्योतिसी काल ॥५७॥

कहत काल किल सकल दुध ताकर यह व्यवहार ।  
 उतपति-धिति-लय होत है सकल तासु अनुहार ॥५७२॥  
 अंकुर किसलय दल विपुल साखा-जुत वर मूल ।  
 फूलि परत रितु अनुहरत तुलसी सकल सतूल ॥५७३॥  
 कहतव करतव सकल तेहि जाहि रहित नहि आन ।  
 जान न मान न आन विधि अनूमान अभिमान ॥५७४॥  
 हानि लाभ जय विजय विधि ज्ञान दान सनमान ।  
 खान पान सुचि रुचि अरुचि तुलसी विदित विधान ॥५७५॥  
 सालक पालक सम विखम भरम भगन गति ज्ञान ।  
 अट घट लट नट नादि जहँ तुलसी रहित न जान ॥५७६॥  
 कठिन करम-करनी कथन करता कारक काम ।  
 काय-कष्ट-कारन करम होत काल सह साम ॥५७७॥  
 चित रत वित व्यवहार विधि अगम सुगम जय मीच ।  
 धीर धरम धारन हरन तुलसी परत न बीच ॥५७८॥  
 खरब आतमा बोध वर खर बिनु कबहुँ न होइ ।  
 तुलसी खसम-बिहीन जे ते खर-तर नहि सोइ ॥५७९॥  
 खबद रूप बिबरन विसद तासु जोग भव नाम ।  
 करता नर बहु जाति तेहि संग्या सब गुन-धाम ॥५८०॥  
 नाम जाति गुन देखिकै भएउ प्रबल उर भर्म ।  
 तुलसी गुरु उपदेस बिनु जानि सकै को मर्म ॥५८१॥  
 अपन करम बर मानि कै आपु बँधेउ सब कोइ ।  
 कारज-रत करता भएउ आपु न समुक्त सोइ ॥५८२॥  
 करता कारन को लखै कारज अगम प्रभाव ।  
 जो जहँ सो तहँ तहँ हरख तुलसी सहज सुभाव ॥५८३॥  
 तुलसी बिनु गुरु को लखे बरतमान बिपरीत ।  
 कहु केहि कारन तँ भएउ सूर उसन ससि सीत ॥५८४॥

करता कारन करम तँ पर परमात्म' ग्यान ।  
 होत न विनु उपदेस गुरु जौ पढ़ वेद पुरान ॥५८५॥  
 प्रथम ग्यान समुझै हिए विधि निखेद व्यवहार ।  
 उचितानुचितहिँ हेरि हिय करतव करइ सँभार ॥५८६॥  
 जब मन महँ ठहराइ विधि स्त्री-गुरु-वर-परसाद ।  
 एहि विधि परमात्म लखै तुलसी भिटइ विखाद ॥५८७॥  
 वरवस करत विरोध हठि होन चहत अक-हीन ।  
 गहि गति बक वृक स्वान इव तुलसी परम प्रवीन ॥५८८॥  
 आक करम भेखज विदित लखत नहीं मति-हीन ।  
 तुलसी सठ अक-वस बिहठि दिन दिन दीन मलीन ॥५८९॥  
 करता ही तँ करम-जुग सो गुन-दोख सरूप ।  
 करत भोग करतव जथा होइ रंक किन भूप ॥५९०॥  
 वेद पुराणहु साखि जत तत बुधि-बल अनुमान ।  
 निज कर करि करि है वहुरि कह तुलसी परिमान ॥५९१॥  
 विविध प्रकार कथन करै जाहि जथा भौ भान ।  
 तुलसी सु-गुरु प्रसाद-बल कोइ कोइ कहइ प्रमान ॥५९२॥  
 उर डर अतिलघु होन की भौ लघु सुरति भुलानि ।  
 स्वरन-लाहु लखि परत नहिँ लखत लोह की हानि ॥५९३॥  
 नयन-दोख निज कहत नहिँ विविध बनावत बात ।  
 सहत जानि तुलसी विपति तदपि न नेक लजात ॥५९४॥  
 करत चातुरी मोह-वस लखत न निज-हित-हान ।  
 सुक मरकट इव गहत हठ तुलसी परम-सुजान ॥५९५॥  
 दुखिया सकल प्रकार सठ समुझि परत तेहि नाहि ।  
 लखत न कंटक मीन जिमि असन भखत भ्रम माहिँ ॥५९६॥  
 तुलसी निज मन-कामना चहत सून कहँ सेइ ।  
 वचन गाय सब के विविध कहहु पयस के देइ ॥५९७॥

वातहि दातहि बनि पडै वातहि वात नसाय ।  
 वातहि आदिहि दीप भौ वातहि अंत बुताय ॥५६८॥  
 वातहि तें बनि आवही पातहि तें वन जात ।  
 वातहि तें बरबर मिलत वातहि तें वौरात ॥५६९॥  
 वात बिना अतिसय विकल वातहि ते हरखात ।  
 बनत वात बर वात तें करत वात बर वात ॥६००॥  
 तुलसी जाने वात बिनु विगरेत हर एक वात ।  
 अनजाने दुख वात के जानि परे कुसलात ॥६०१॥  
 प्रेम वैर अरु पुन्य अध जस अपजस जय हान ।  
 वात बीज इन सबन को तुलसी कहहि सुजान ॥६०२॥  
 बंचक-विधि-रत नय-रहित विधि हिंसा अति लीन ।  
 तुलसी जग महँ विहित वर नरक निसेनी तीन ॥६०३॥  
 सदा भजन गुरु साधु द्विज जीव-दया सम जान ।  
 सुख-द सु-नय-रत सत्य-व्रत सरग सप्त सोपान ॥६०४॥  
 जे नर जग गुन-दोख-जुत तुलसी बहत विचार ।  
 कबहुँ सुखी कबहुँ दुखी उदय-अस्त-व्यवहार ॥६०५॥  
 कारण जुग के जुगल तम काल अचल बलवान ।  
 त्रिविधि बिबल तें ते हठहि तुलसी कहहि प्रमान ॥६०६॥  
 अनुभव अमल अनूप गुरु कछुक साख-गति होइ ।  
 बचइ काल-क्रम-दोख तें कहहि सु-बुध सब कोइ ॥६०७॥  
 सब विधि पूरन धाम बर राम अपर नहि आन ।  
 जाके कृपा-कटाच्छ तें होत हिए दढ़ ग्यान ॥६०८॥  
 सो स्वामी सो तर सखा सो बर-सुख-दातार ।  
 तात मात आपद-हरन सो असमय-धाधार ॥६०९॥  
 सुख-द दुख-द कारण कठिन जानत को तेहि नाहि ।  
 जानेहु पर बिनु गुरु-कृपा करतब बनत न काहि ॥६१०॥

तुलसी सकल प्रधान है वेद-विदित सुख-धाम ।  
 ता महुँ समुझव कठिन अति जुगल भेद गुन नाम ॥६११॥  
 नाम कहत सुख होत है नाम कहत दुख जात ।  
 नाम कहत दुख जात दुरि नाम कहत सुख-खात ॥६१२॥  
 नाम कहत वैकुण्ठ सुख नाम कहत अघ खान ।  
 तुलसी ता तें उर समुझि करहु नाम पहिचान ॥६१३॥  
 चारो चौदह अष्ट-दस रस समुझे भरि पूरि ।  
 नाम भेद समुझे बिना सकल समुझ महुँ धूरि ॥६१४॥  
 वार दिवस निसि मास सित असित वरख परमान ।  
 उत्तर दक्खिन आस रवि भेद सकल महुँ जान ॥६१५॥  
 करम सुभासुभ मित्र अरि रोदन हसन बखान ।  
 और भेद अति अमित है कहूँ लगि कहिय प्रमान ॥६१६॥  
 जहुँ लगि जन देखव सुनव समुझव कहव सु-रीत ।  
 भेद बिना कछु है नहीं तुलसी बहहिँ विनीत ॥६१७॥  
 भेद याहि विधि नाम महुँ बिनु गुरु जान न कोय ।  
 तुलसी कहहिँ विनीत वर जो विरंचि सिव होय ॥६१८॥

### चप्रम सर्ग

तिनहिँ पढ़े तिनहीं सुने तिनहिँ सुमति-परगास ।  
 जिन आसा पाछे करी गहि अबलंब निरास ॥६१९॥  
 तव लगि जोगी जगत-गुरु जव लगि रहै निरास ।  
 जव आसा मन में जगी जग गुरु जोगी दास ॥६२०॥  
 हित पुनीत स्वारथ सबहिँ अहित असुचि बिनु चाड़ ।  
 निज मुख मानिक सम दखन भूमि परत मौ हाड़ ॥६२१॥

निज गुन घटत न नाग-नग हरखि परिहरत कोल ।  
 गुंजा प्रभु भूखन करे ता तें बढ़इ न मोल ॥६२२॥  
 देइ कुसुम करि वास तिल परिहरि खरि रस लेत ।  
 स्वारथ-हित भू-तल भरे मन मेचक तन सेत ॥६२३॥  
 अँसुअन पथिक निरास ते' तट भुँइ सजल सरूप ।  
 तुलसी किन बंचे नहीं इन मरुथल के कूप ॥६२४॥  
 तुलसी मित्र महा सुखद सबहि मित्र की चाढ़ ।  
 निकट भए बिलसत सकल एक छपाकर छाढ़ ॥६२५॥  
 मित्र-कोप बर तर सुखद अनहित मृदुल कराल ।  
 द्रुम-दल सिसिर सुखात सब सह निदाघ अति लाल ॥६२६॥  
 खल नर गुन मानै नहीं मेढहि दाता-ओप ।  
 जिमि जल तुलसी देत रवि जलद करत तेहि लोप ॥६२७॥  
 बरखत हरखत लोग सब करखत लखत न कोइ ।  
 तुलसी भूपति भानु-सम प्रजा-भाग-बस होइ ॥६२८॥  
 समय परे सु-पुरुख नरहि लघु करि गनिय न कोइ ।  
 नायक पीपर-बीज-सम बचै तो तरु-घर होइ ॥६२९॥  
 बड़े राम-रत जगत में कै पर-हित चित जाहि ।  
 प्रेम-पैज निबही जिन्हें बड़े सो सबही चाहि ॥६३०॥  
 माली-भानु-कुसानु-सम नीति-निपुन महिपाल ।  
 प्रजा-भाग बस होहिँगे कबहिँ कबहिँ कलिकाल ॥६३१॥  
 तुलसी संतन ते' सुने संतत यहै विचार ।  
 तन धन चंचल अचल जग जुग जुग पर-उपकार ॥६३२॥  
 अँचहिँ आपद बिभव बर नीचहिँ दत्त न होइ ।  
 हानि वृद्धि द्विजराज कहँ नहिँ तारा-गन कोइ ॥६३३॥  
 बड़े रतहिँ लघु के गुनहिँ तुलसी लघुहि न हेत ।  
 गुंजा तें मुकुता अरुन गुंजा होत न स्वेत ॥६३४॥

होहिँ बड़े लघु समय सह तौ लघु सकहिँ न काढ़ि ।  
 चंद दूबरो कूबरो तऊ नखत तें जाढ़ि ॥६३५॥  
 सरग तुरग नारी नृपति नर नीचो हथियार ।  
 तुलसी परखत रहव नित इन्हहिँ न पलटत बार ॥६३६॥  
 दुरजन आपु समान करि को राखइ हित-लागि ।  
 तपत तोय सह जाहि पुनि पलटि बुतावत आगि ॥६३७॥  
 मंत्र तंत्र तंत्रो त्रिया पुरुख अख धन पाठ ।  
 प्रति गुन जोग बियोग तें तुरत जाहिँ ये आठ ॥६३८॥  
 नीच निचाई नहिँ तजइ जौ पावइ सत-संग ।  
 तुलसी चंदन बिटप बसि बिनु बिख मै न भुअंग ॥६३९॥  
 दुरजन दरपन सम सदा करि देखो हिय दैर ।  
 सनमुख की गति और है विमुख भए कछु और ॥६४०॥  
 मित्र क अवगुन मित्र जो पर पहुँ भाखत नाहिँ ।  
 कूप छाँइ जिमि आपनी राखत आपुहि माहिँ ॥६४१॥  
 तुलसी सो समरथ सु-मति सुकृती साधु सुजान ।  
 जौ बिचारि व्यवहरइ जग खरच लाभ अनुमान ॥६४२॥  
 सिख्य सखा सेवक सचिव सु-तिय सिखावन साँच ।  
 समुक्ति करिय पुनि परिहरिय पर-मन-रंजन पाँच ॥६४३॥  
 तूठहिँ निज रुचि काज करि रूठहिँ काज बिगारि ।  
 तिया तनय सेवक सखा मन के कंटक चारि ॥६४४॥  
 नगर नारि भोजन सचिव सेवक सखा अगार ।  
 सरस परिहरे रंग रस निरस बिखाद बिकार ॥६४५॥  
 दीरघ-रोगी दारिदी कटु-वच लोलुप लोग ।  
 तुलसी प्रान समान तउ तुरत त्यागिबे जोग ॥६४६॥  
 धाय लगे लोहा ललकि खैंचि लेइ नइ नीचु ।  
 समरथ पापी सों बयर जानि बेसाही मीचु ॥६४७॥



तुलसी स्वारथ सासुहो परमारथ तन पीठि ।  
 अंध कहे दुख पाइहै डिठिआरे केहि डीठि ॥६४८॥  
 अन-समुझे अनु-सोचनो अबसि समुझिए आपु ।  
 तुलसी आपन समुझ बिनु पल पल पर परितापु ॥६४९॥  
 कूप खनहिँ मंदिर जरत लावहिँ धारि बवूर ।  
 वोए लव चह समय बिनु कुमति-सिरोमनि कूर ॥६५०॥  
 निडर अनय करि अन-कुसल वीसबाहु सम होय ।  
 गयो गयो कह सुमति सब भयो कुमति कह कोय ॥६५१॥  
 बहु सुत बहु रुचि बहु वचन बहु अचार व्यवहार ।  
 इनको भलो मनाइबो यह अग्यान अपार ॥६५२॥  
 अपजस जोग कि जानकी मनि चोरी की कान्ह ।  
 तुलसी लोग रिझाइबो करसि कातिबो नान्ह ॥६५३॥  
 मांगि मधुकरी खात जे सोवत पाय पसारि ।  
 पाप प्रतिष्ठा बढ़ि परी ताते' बाढ़ी शरि ॥६५४॥  
 लही आंखि कब आंधरो बांझ पूत कब पाय ।  
 कब कोढ़ो काया लही जग बहराइच जाय ॥६५५॥  
 या जग की विपरीत गति काहि कहैं समुझाय ।  
 जल जल गौ भूख बांधि गौ जन तुलसी मुसकाय ॥६५६॥  
 कै जुझिबो कै बूझिबो दान कि काय-कलेस ।  
 चारि चारु परलोक-पथ जथा-जोग उपदेस ॥६५७॥  
 बुध किसान सर बेद निज मते' खेत सब साँच ।  
 तुलसी कृषि-गति जानिबो उत्तम मध्यम नीच ॥६५८॥  
 सहि कु-बोल सांसति सकल पाय अनट अपमान ।  
 तुलसी धरम न परिहरिय कहि करि गए सु-जान ॥६५९॥  
 अनहित ज्यों पर-हित किए आपन हित तम जान ।  
 तुलसी चारु बिचार मति करिय काज सम मान ॥६६०॥

मिथ्या माहुर सु-जन कहँ खलहिँ गरल सम साँच ।  
 तुलसी परसि पराइ जिमि पारद पावक आँच ॥६६१॥  
 तुलसी खल बानी बिमल सुनि समुझब हिय हेरि ।  
 राम - राज - बाधक भई मंद मंथरा चेरि ॥६६२॥  
 दान दयादिक जुद्ध के बीर धीर नहिँ आन ।  
 तुलसी कहहिँ बिनीत इति ते नर बर परमान ॥६६३॥  
 तुलसी साथी विपति के बिद्या विनय विवेक ।  
 साहस सु - करित सत्य - व्रत राम - भरोसो एक ॥६६४॥  
 तुलसी असमय के सखा साहस धरम बिचार ।  
 सु-करित सील स्वभाव रिजु राम-चरन-आधार ॥६६५॥  
 बिद्या विनय विवेक रति रीति जासु उर होइ ।  
 राम-परायन सो सदा आपद ताहि न कोइ ॥६६६॥  
 बिनु प्रपंच वरु भीख भलि नहिँ फल किए कलेस ।  
 बावन बलि सों लीन्ह छलि दीन्ह सबहि उपदेस ॥६६७॥  
 बिबुध-काज बावन बलिहिँ छलो भलो जिय जानि ।  
 प्रभुता तजि बस भे तदपि मन तें गइ न गलानि ॥६६८॥  
 बड़े बड़े तें छल करहिँ जनम कनौड़े होहिँ ।  
 तुलसी स्त्री-पति-सिर लसै बलि बावन गति सोहिँ ॥६६९॥  
 खल उपकार बिकार फल तुलसी जान जहान ।  
 मेढक मर्कट बनिक बक कथा सत्य उपखान ॥६७०॥  
 जो मूरख उपदेस के होते जोग जहान ।  
 दुरजोधन कहँ बोधि किन आए स्याम सुजान ॥६७१॥  
 हित पर घट्ट बिरोध जब अन-हित पर अनुराग ।  
 राम बिमुख बिधि बाम गति सगुन अघाय अभाग ॥६७२॥  
 साहसही सिख कोप-बस किए कठिन परिपाक ।  
 सठ संकठ-भाजन भएउ हठि कु-जाति कपि काक ॥६७३॥

मारि सौह करि खोज लै करि मत सब दिन त्रास ।  
 मुए नीच दिन मीच तें ये इनके विस्वास ॥६७४॥  
 रीझ आपनी बूझ पर खीझ बिचार विहीन ।  
 ते उपदेस न मानहीं मोह-महोदधि-मीन ॥६७५॥  
 समुझि सु-नीति कु-नीति-रत जागतही रह सोइ ।  
 उपदेसिवो जगाइवो तुलसी उचित न होइ ॥६७६॥  
 परमारथ-पथ-मत समुझि लसत विखय लपटान ।  
 उतरि चिता तें अध-जरी मानहुँ सती परान ॥६७७॥  
 तजत अमिय उपदेस गुरु भजत विखय-विख-पान ।  
 चंद किरन धोखे पयस चाटत जिमि सठ स्वान ॥६७८॥  
 सुर-सदनन तीरथ पुरिन निपटि कु-चाल कु-साज ।  
 मनहुँ मवाखे मारि कलि राजत सहित समाज ॥६७९॥  
 चोर चतुर बटपार नट प्रभु-प्रिय भडुआ भंड ।  
 सब भच्छक परमारथी कलि सु-पंथ पाखंड ॥६८०॥  
 गोंड गवार नृपाल कलि जनम महा-महि-पाल ।  
 साम न दान न भेद कलि केवल दंड कराल ॥६८१॥  
 काल तोपची तुपक महि दारु अनय कराल ।  
 पाप पलीता कठिन गुरु गोला पुहुमी-पाल ॥६८२॥  
 राग रोख गुन देख को साखी हृदय-सरोज ।  
 तुलसी बिकसत मित्र लखि सकुचत देखि मनोज ॥६८३॥  
 बैर सनेह सयानपहिँ तुलसी जे नहिँ जान ।  
 ते कि प्रेम-मग पग धरत पसु बिनु पूछ बिखान ॥६८४॥  
 राम-दास पहुँ जाय के जो नर कथहि सयान ।  
 तुलसी अपनी खांडि महुँ खाक मिलावहिँ स्वान ॥६८५॥  
 त्रिविधि एक-बिधि प्रभु-अगुन प्रजहि सवारहिँ राउ ।  
 कर तें होत कृपाण को कठिन घोर घन-घाउ ॥६८६॥

काल बिलोक्त ईस-रुख भानु काल अनुहार ।  
 रबिहिँ राहु राजहिँ प्रजा बुध व्यवहरहिँ विचार ॥६८७॥  
 जथा अमल पावन पवन पाय सु-संग कु-संग ।  
 गहत सु-वास कु-वास तिमि काल महीस-प्रसंग ॥६८८॥  
 भलउ चलत पथ पोच भय नृप नियोग नय नेम ।  
 कु-तिय सु-भूखन भूखियत लोह नेवारित हेम ॥६८९॥  
 सुधा कु-नाज सु-नाज फल आम असन सम जान ।  
 सु-प्रभु प्रजा-हित लेहिँ कर सामादिक अनुमान ॥६९०॥  
 पाके पकए बिटप दल उत्तम मध्यम नीच ।  
 फल नर लहहिँ नरेस तिमि करि विचार मन बीच ॥६९१॥  
 धरनि - धेनु चरि धरम - तिनु प्रजा - सु-वत्स पिन्हाइ ।  
 हाथ कंछू नहिँ लागिहै किए गोठ की गाय ॥६९२॥  
 कंट कंट हूँ परत गिरि साखा सहस खजूरि ।  
 गरहिँ कु-नृप करि करि कु-नय सो कुचाल भुवि भूरि ॥६९३॥  
 भूमि रुचिर रावन-सभा अंगद-पद महिपाल ।  
 धर्म - राम नय - सीय-वल अचल होइ तिहुँ काल ॥६९४॥  
 प्रीति राम-पद नीति-रत धरम-प्रतीत सुभाय ।  
 प्रभुहि न प्रभुता परिहरै कबहुँ बचन-मन - काय ॥६९५॥  
 करके कर मन के मनहिँ बचन बचन गुन जानि ।  
 भूपहिँ भूलि न परिहरहिँ बिजय - विभूति सयानि ॥६९६॥  
 गोली बान सु-मंत्र सर समुक्ति उलटि गति देख ।  
 उत्तम मध्यम नीच प्रभु-बचन विचारि बिसेख ॥६९७॥  
 सत्रु सयाने सलिल इव राख सीस रिपु नाव ।  
 बूझत लखि ढगमगत अति चपरि चहुँ दिसि धाव ॥६९८॥  
 रैयत राज-समाज घर तन धन धरम सु-बाहु ।  
 सत्य सु-सचिवहिँ सौपि सुख बिलसहिँ नित नर-नाहु ॥६९९॥

रसना मंत्री दसन जन तोख पोख सब काज ।  
 प्रभु कै सेन पदादिका बालक राज समाज ॥७००॥  
 लकड़ी डौवा करछुली सरस काज अनुहारि ।  
 सु-प्रभु जो नाहिँन परिहरइ सेवक सखा बिचारि ॥७०१॥  
 प्रभु समीप छोटे बड़े निबल होहिँ बलवान ।  
 तुलसी प्रगट बिलोकिए कर अँगुली अनुमान ॥७०२॥  
 तुलसी भल बर तरु बढ़त निज मूलहिँ अनुकूल ।  
 सकल भांति सब कहँ सुखद दलन सहित फल फूल ॥७०३॥  
 स-धन स-गुन स-धरम सगन स-बल सु-साई' महीप ।  
 तुलसी जे अभिमान बिन ते त्रिभुवन को दीप ॥७०४॥  
 साधन समय सु-सिद्ध लहि उभय मूल अनुकूल ।  
 तुलसी तीनौ समय सम ते महि मंगल-मूल ॥७०५॥  
 रामायन अनुहरत सिख जग भौ भारत रीति ।  
 तुलसी सठ की को सुनै कलि कुचालि परतीति ॥७०६॥  
 सु-हित सुखद गुन-जुत सदा काल-जोग दुख-होय ।  
 घर धन जारत अनल जिमि त्यागे सुख नहिँ कोय ॥७०७॥  
 तुलसी सर-बर खंभ जिमि तिमि चेतन घट माहिँ ।  
 सूख न तपनहुँ तनक सों समुझ सु-बुध-जन ताहि ॥७०८॥  
 तुलसी भगड़ा बड़न के बीच परहु जनि धाय ।  
 लडै लोह पाहन दोऊ बीच रुई जरि जाय ॥७०९॥  
 अरथ आदि हन परिहरहु तुलसी सहित बिचार ।  
 अंत गहन सब कहँ सुने संतन मत-सुख-सार ॥७१०॥  
 गहु उकार बिबिचार पद मा फल हानि बिमूल ।  
 अहो जान तुलसी जतन बिन जाने इब सूल ॥७११॥  
 नीच निरावहिँ निरस तरु तुलसी सौँचहिँ ऊख ।  
 पोखत पयइ समान सब बिखय ऊख के रुख ॥७१२॥

लोक वेदहूँ लौं दगौ नाम भले को पोच ।  
 धरम-राज जम गाज पवि कहत सकोच न सोच ॥७१३॥  
 तुलसी देवल देव के लागे लाख करोरि ।  
 काग अभागे हगि भरै महिमा भई न थोरि ॥७१४॥  
 भलो कहहि जाने बिना बिन जाने अपवाद ।  
 ते नर गाँवर जानि जिय करब न हरख विखाद ॥७१५॥  
 तन-धन महिमा धरम जेहि जा कहँ सह अभिमान ।  
 तुलसी जियत बिडंबना परिनामहु गति जान ॥७१६॥  
 बड़े बिबुध दरबार तें भूमि भूप-दरबार ।  
 जापक पूजक देखियत सहत निरादर-भार ॥७१७॥  
 खग मृग मीत पुनीत किय बनहुँ राम नय-पाल ।  
 कुनय बालि रावन घरहिँ सुखद बंधु किय काल ॥७१८॥  
 राम-लखन विजयो भए वनहुँ गरीब-नेवाज ।  
 मुखर बालि-रावन गए घरही सहित समाज ॥७१९॥  
 ठाढो द्वार न दै सकहिँ तुलसी जे नर नीच ।  
 निदरहिँ बलि हरिचंद कहँ का किय करन दधीच ॥७२०॥  
 तुलसी निज कीरति चहहिँ पर की कीरति खोय ।  
 तिनके मुँह मसि लागिहै मिटिहि न मरिहैं धोय ॥७२१॥  
 नीच चंग-सम जानिबो सुनि लखि तुलसी-दास ।  
 ढीलि देत महि गिरि परत खँचत चढ़त अकास ॥७२२॥  
 सह-बासी काची भलहिँ पुर-जन पाक प्रवीन ।  
 काल-छेप केहि बिधि करहिँ तुलसी खग मृग मीन ॥७२३॥  
 बड़े पाप बाढ़े किए छोटे करत लजात ।  
 तुलसी ता पर सुख चहत बिधि पर बहुत रिसात ॥७२४॥  
 सुमति निबारहिँ परिहरहिँ दल सुमनहु संग्राम ।  
 स-कुल गए तनु बिन भए साखी जादव काम ॥७२५॥

कलह न जानब छोड करि कठिन परम परिनाम ।  
 लगत अनल लघु नीच घर जरत धनिक-धन-धाम ॥७२६॥  
 जूझे तैं भल बूझिबो भली जीति तैं हारि ।  
 डहके ते डहकाइबो भलो जो करिय बिचारि ॥७२७॥  
 तुलसी तीनि प्रकार तैं हित अनहित पहिचानि ।  
 परबस परे परोस बसि परे मामला जान ॥७२८॥  
 दुरजन बदन कमान सम बचन बिमुंचत तीर ।  
 सज्जन डर बेधत नहीं छमा सनाह सरीर ॥७२९॥  
 कौरव पांडव जानिबो क्रोध छमा कौ सीम ।  
 पांचहिँ मारि न सौ सके सबै निपाते भीम ॥७३०॥  
 जो मधु दीन्हे तैं मरे माहुर देड न ताड ।  
 जग जिति हारे परसु-धर हारि जिते रघु-राड ॥७३१॥  
 रोस न रसना खेलिए बरु खेलिय तरवारि ।  
 सुनत मधुर परिनाम हित बेलिय बचन बिचारि ॥७३२॥  
 तुलसी मीठो अमिय तैं मांगी मिलै जो मीच ।  
 सुधा सुधाकर समय बिन कालकूट ते' नीच ॥७३३॥  
 पाही खेती लगनबटि रिन कुब्जाज मग-खेतु ।  
 बैर बड़े सों आपने कियो पांच दुख हेतु ॥७३४॥  
 रीझि खीझि गुरु देत सिख सखा सु-साहिब साधु ।  
 तोरि खाय फल होय भल तरु काटे अपराधु ॥७३५॥  
 चढ़े बधूरहि चंग ज्यों ग्यान ज्यों सोक-समाज ।  
 करम धरम सुख संपदा तिमि जानिबो कुराज ॥७३६॥  
 पेट न फूटत बिन कहे कहे न लागत ढेर ।  
 बोलब बचन बिचार-जुत समुझि सु-फेर कु-फेर ॥७३७॥  
 प्रीति सगाई सकल विधि बनिज उपाय अनेक ।  
 कल-बल-छल कलि-मल-मलिन डहकत एकहि एक ॥७३८॥

दंभ सहित कलि धरम सब छल समेत व्यवहार ।  
 स्वारथ सहित सनेह सब रुचि अनुहरत अचार ॥७३६॥  
 धातु-बाद निरुपाधि बर सद-गुरु लाभ सुमीत ।  
 देव-दरस कलिकाल महँ पौथिन दुरे समीत ॥७४०॥  
 फोरहिँ सिल लोढ़ा सदन लागे अहुक पहार ।  
 कायर कूर कपूत कलि घर घर सरिस डहार ॥७४१॥  
 जौ जगदीस तो अति भलो जौ महीस तौ भाग ।  
 जनम जनम तुलसी चहत राम-चरन-अनुराग ॥७४२॥  
 का भाखा का संसकृत भाव चाहिए सांच ।  
 काम जो आवै कामरी का लै करिय कमाच ॥७४३॥  
 बरन विसद मुक्ता सरिस अरथ सूत्र-सम-तूल ।  
 सतसैया जग बर विसद गुन सोभा-सुख-मूल ॥७४४॥  
 भूप कहहिँ लघु गुनिन कहँ गुनी कहहिँ लघु भूप ।  
 महि गिरि पर गत लखत जिमि तुलसी खरब सरूप ॥७४५॥  
 बर माला वाला सुमति उर धारै जुत नेह ।  
 सुख सोभा सरसाय नित लहै राम-पति-गेह ॥७४६॥  
 दोहा चारु विचारु चलु परिहरि बाद-बिबाद ।  
 सुकृत सीम स्वारथ अवधि परमारथ मरजाद ॥७४७॥





## ( २ ) बिहारी-सतसई

मेरी भव-बाधा हरौ राधा नागरि सोइ ।  
जा तन की भाई परै स्यामु हरित-दुति होइ ॥ १ ॥  
अपने अंग कै जानि कै जोवन-नृपति प्रवीन ।  
स्तन मन नैन नितंब कौ बडौ इजाफा कीन ॥ २ ॥  
अर तैं टरत न बर-परे दर्ई मरक मनु मैन ।  
होड़ाहोड़ी बढ़ि चले चितु चतुराई नैन ॥ ३ ॥  
औरै ओप कनीनिकनु गनी घनी सिरताज ।  
मनों धनी के नेह की बनी छनी पट लाज ॥ ४ ॥  
सनि कज्जल चख-भख-लगन उपज्यौ सुदिन सनेहु ।  
क्यों न नृपति है भोगवै लहि सुदेसु सबु देहु ॥ ५ ॥  
सालति है नटसाल सी क्यों हूं निकसति नाहि ।  
मनमथ - नेजा - नोक सी खुभी खुभी जिय माहि ॥ ६ ॥  
जुवति जोन्ह में मिलि गई नैक न होति लखाइ ।  
सौंधे कै डोरें लगी अली चली सँग जाइ ॥ ७ ॥  
हैं रीभी लखि रीझिहौ छविहि छबीले लाल ।  
सोनजुही सी होति दुति मिलत मालती माल ॥ ८ ॥  
वह्मके सब जिय की कहत ठौर कुठौर लखें न ।  
छिन औरै छिन और से ए छवि छाके नैन ॥ ९ ॥  
फिरि फिरि चितु उतहीं रहतु टुटी लाज की लाव ।  
अंग-अंग-छवि-भौर में भयौ भौर की नाव ॥ १० ॥  
नीकी दर्ई अनाकनी फीकी परी गुहारि ।  
तज्यौ मनौ तारन-बिरदु बारक बारनु तारि ॥ ११ ॥

चितई ललचौहैं चखनु डटि घूँघट-पट मांह ।  
 छल सौं चली छुवाइकै छिनकु छबीली छांह ॥ १२ ॥  
 जोग-जुगति सिखए सबै मनौ महामुनि मैन ।  
 चाहत पिय-अद्वैतता काननु सेवत नैन ॥ १३ ॥  
 खरी पातरी कान की कौन बहाऊ वानि ।  
 आक-कली न रली करै अली अली जिय जानि ॥ १४ ॥  
 पिय-बिछुरन कौ दुसहु दुखु हरषु जात प्यौसार ।  
 दुरजोधन लौं देखियति तजत प्रान इहि वार ॥ १५ ॥  
 भीनैं पट मैं झुलमुली झलकति ओप अपार ।  
 सुरतरु की मनु सिंधु मैं लसति सपल्लव डार ॥ १६ ॥  
 डारे ठोढ़ी-गाढ़ गहि नैन-बटोही मारि ।  
 चिलक - चौंध मैं रूप - ठग हांसी - फांसी डारि ॥ १७ ॥  
 कीनैं हूं कोरिक जतन अब कहि काढ़ै कौनु ।  
 भो मन मोहन-रूपु मिलि पानी मैं को लौनु ॥ १८ ॥  
 लभ्यो सुमनु द्वैद सफल आतप-रोसु निवारि ।  
 बारी बारी आपनी सींचि सुहृदता-वारि ॥ १९ ॥  
 अजौं तराँना हीं रह्यौ स्मृति सेवत इक-रंग ।  
 नाक-बास बेसरि लह्यौ बसि मुकुतनु कै संग ॥ २० ॥  
 जम-करि-मुँह तरहरि परयो इहिँ धरहरि चित लाउ ।  
 बिषय-नृषा परिहरि अजौं नरहरि के गुन गाउ ॥ २१ ॥  
 पलनु पीक अंजनु अधर धरे महावरु भाल ।  
 आजु मिले सु भली करी भले बने है लाल ॥ २२ ॥  
 लाज गरब आलस उमग भरे नैन मुसकात ।  
 राति रमी रति देति कहि औरै प्रभा प्रभात ॥ २३ ॥  
 पति रति की बतियां कहीं सखी लखी मुसकाइ ।  
 कै कै सबै टलाटलों अलों चलों सुख पाइ ॥ २४ ॥

तो पर वारों उरबसी सुनि राधिके सुजान ।  
 तू मोहन कै उर वसी है उरबसी समान ॥ २५ ॥  
 कुच-गिरि चढ़ि अति शक्ति है चली डीठि मुँह-चाड़ ।  
 फिरि न टरी परियै रही गिरी चिबुक की गाड़ ॥ २६ ॥  
 वेधक अनियारे नयन वेधत करि न निवेधु ।  
 वरबट वेधतु मो हियौ तो नासा कौ वेधु ॥ २७ ॥  
 लीनै मुहुँ दीठि न लगै यौ कहि दीनौ ईठि ।  
 दूनी है लागन लगी दियै दिठौना दीठि ॥ २८ ॥  
 चितवनि रुखे हगनु को हांसी बिनु मुसकानि ।  
 मानु जनायौ मानिनी जानि लियौ पिय जानि ॥ २९ ॥  
 सब ही त्यों समुहाति छिनु चलति सबनु दै पीठि ।  
 वाही त्यों ठहराति यह कविलनबी लौ दीठि ॥ ३० ॥  
 कौन भांति रहिहै विरदु अब देखिबी मुरारि ।  
 बीधे मोसौं आइ कै गीधे गीधहि तारि ॥ ३१ ॥  
 कहत नटत रीभत खिभत मिलत खिलत लजियात ।  
 भरे भौन में कहत हैं नैननु हों सब बात ॥ ३२ ॥  
 वाही की चित चटपटी धरत अटपटे पाइ ।  
 लपट बुझावत विरह की कपट भरेऊ आइ ॥ ३३ ॥  
 लखि गुरुजन बिच कमल सौं सीसु छुवायौ त्याम ।  
 हरि सनमुख करि आरसी हिये लगाई वाम ॥ ३४ ॥  
 पाइ महावरु दैन कौ नाइनि बैठो आइ ।  
 फिरि फिरि जानि महावरी एड़ो मीड़ति जाइ ॥ ३५ ॥  
 तोहीं निरमोही लग्यौ मो ही इहें सुभाउ ।  
 अन आएँ आवै नहीं आएँ आवतु आउ ॥ ३६ ॥  
 नेहु न नैननु कौं कछू उपजी बड़ो बलाइ ।  
 नीर भरे नित प्रति रहैं तऊ न प्यास बुझाइ ॥ ३७ ॥

नहि परागु नहि मधुर मधु नहि विकासु इहि काल ।  
 अली कली ही सौ बँधौ आगैं कौन हवाल ॥ ३८ ॥  
 लाल तुम्हारे बिरह की अगनि अनूप अपार ।  
 सरसै बरसैं नीर हूँ भर हूँ मिटै न भार ॥ ३९ ॥  
 देह दुलहिया की बढ़ै ज्यौ ज्यौ जोवन-जोति ।  
 त्यों त्यों लखि सौत्यैं सर्वे बदन मलिन दुति होति ॥ ४० ॥  
 जगनु जनायौ जिहि सकल सो हरि जान्यौ नाहि ।  
 ज्यों आंखिनु सब देखियै आंखि न देखी जाहि ॥ ४१ ॥  
 मंगल बिंदु सुरंगु मुखु ससि कोसरि आड़ गुरु ।  
 इक नारी लहि संगु रसमय किय लोचन-जगत ॥ ४२ ॥  
 पिय तिय सौँ हँसि कै कह्यौ लखै दिठौना दीन ।  
 चंदमुखी मुखचंदु तैं भली चंद समु कीन ॥ ४३ ॥  
 कौहर सी एड़ीनु की लाली देखि सुभाइ ।  
 पाइ महावर देइ को आपु भई बे-पाइ ॥ ४४ ॥  
 खेलन सिखए अलि भलैं चतुर अहेरी मार ।  
 कानन-चारी नैन-मृग नागर नरनु सिकार ॥ ४५ ॥  
 रस-सिंगार - मंजनु किए कंजनु भंजनु दैन ।  
 अंजनु रंजनु हूँ बिना खंजनु गंजनु नैन ॥ ४६ ॥  
 साजे मोहन - मोह कौँ मोहीं करत कुचैन ।  
 कहा करौँ उलटे परे दोने लोने नैन ॥ ४७ ॥  
 याकै उर औरै कछू लगी बिरह की लाइ ।  
 पजरै नीर गुलाब कै पिय की बात बुझाइ ॥ ४८ ॥  
 कहा लेहुगे खेल पै तजौ अपपटी बात ।  
 नैक हँसौहीं हैं भई भौहैं सौहैं खात ॥ ४९ ॥  
 डारी सारी नील की ओट अचूक चुकै न ।  
 मो मन मृगु करवर गहैं अहे अहेरी नैन ॥ ५० ॥

दीरघ सांस न लेहि दुख सुख साईहि न भूलि ।  
 दर्ई दर्ई क्यों करतु है दर्ई दर्ई सु कबूलि ॥ ५१ ॥  
 बैठि रही अति सघन बन पैठि सदन-तन मांह ।  
 देखि दुपहरी जेठ की छाँहैं चाहति छांह ॥ ५२ ॥  
 हा हा बदन उधारि दग सफल करें सब कोइ ।  
 रोज सरोजनु कै परै हँसी ससी की होइ ॥ ५३ ॥  
 होमति सुखु करि कामना तुमहिँ मिलन की लाल ।  
 ज्वालमुखी सी जरति लखि लगनि-अगनि की ज्वाल ॥ ५४ ॥  
 सायक-सम मायक नयन रँगो त्रिविध रँग गात ।  
 भ्रखौ बिलखि दुरि जात जल लखि जलजात लजात ॥ ५५ ॥  
 मरी डरी कि टरी विधा कहा खरी चलि चाहि ।  
 रही कराहि कराहि अति अब मुँह आहि न आहि ॥ ५६ ॥  
 कहा भयौ जौ बोछुरे मो मनु तो मन साथ ।  
 उड़ी जात कित हूँ तऊ गुड़ी उड़ाइक-हाथ ॥ ५७ ॥  
 लखि लोने लोइननु कै कोइनु होइ न आजु ।  
 कौनु गरीबु निवाजिबौ कित तूझ्यौ रतिराजु ॥ ५८ ॥  
 सीतलताऽरु सुवास कौ घटै न महिमा-भूरु ।  
 पीनसवारै जौ तज्यौ सोरा जानि कपूरु ॥ ५९ ॥  
 कागद पर लिखत न वनत कहत सँदेसु लजात ।  
 कहिहै सबु तेरौ हियौ मेरे हिय की बात ॥ ६० ॥  
 बंधु भए का दीन के को तार्यौ रघुराइ ।  
 तूठे तूठे फिरत है भूठे विरह कहाइ ॥ ६१ ॥  
 जब जब वै सुधि कीजियै तब तब सब सुधि जाहिँ ।  
 आंखिनु आंखि लगी रहैं आंखै लागति नाहिँ ॥ ६२ ॥  
 कौन सुनै कासों कहैं सुरति विसारी नाह ।  
 वदावदी ज्यों लेत हैं ए वदरा वदराह ॥ ६३ ॥

मैं हो जान्यौ लोइननु जुरत वाढ़िहै जोति ।  
 को हो जाननु दीठि कौं दीठि किरकिटी होति ॥ ६४ ॥  
 गहकि गांसु औरै गहे रहे अधकहे वैन ।  
 देखि खिसौहैं पिय-नयन किए रिसौहैं नैन ॥ ६५ ॥  
 मैं तोसौं कै बा कहौ तू जिन इन्हैं पत्याइ ।  
 लगालगी करि लोइननु उर मैं लाई लाइ ॥ ६६ ॥  
 बर जीते सर मैन को ऐसे देखे मैं न ।  
 हरिनी के नैनानु तै हरि नीके ए नैन ॥ ६७ ॥  
 थोरैं ही गुन रीझते बिसराई वह बानि ।  
 तुमहूँ कान्ह मनौ भए आजकाल्हि को दानि ॥ ६८ ॥  
 अंग अंग नग जगमगत दीपसिखा सी देह ।  
 दिया बढ़ाएँ हूँ रहै बढ़ौ उज्यारौ गेह ॥ ६९ ॥  
 छुटी न सिसुता की भलक भलक्यौ जोवनु अंग ।  
 दीपति देह दुहनु मिलि दिपति ताफता-रंग ॥ ७० ॥  
 कब कौ टेरतु दीन रट होत न स्याम सहाइ ।  
 तुमहूँ लागी जगत-गुरु जग-नाइक जग-वाइ ॥ ७१ ॥  
 सकुचि न रहियै स्याम सुनि ए सतरौहैं वैन ।  
 देत रचौहैं चित्त कहे नेह-नचौहैं नैन ॥ ७२ ॥  
 पत्रा हों तिथि पाइयै वा घर कौ चहुँ पास ।  
 नित प्रति पून्यौई रहै आनन - ओप - उजास ॥ ७३ ॥  
 बसि सकोच दसबदन बस सांचु दिखावति बाल ।  
 सिय लौं सोधति तिय तनहिँ लगनि-अगनि की उवाल ॥ ७४ ॥  
 जौ न जुगति पिय मिलन की धूरि मुकति-मुँह दीन ।  
 जौ लहियै सँग सजन तौ धरक नरक हूँ की न ॥ ७५ ॥  
 चमक तमक हांसी ससक मसक भपट लपटानि ।  
 ए जिहिँ रति सो रति मुकति और मुकति अति हानि ॥ ७६ ॥

मोहूँ सौं तजि मोहु, दृग चले लागि उहिँ गैल ।  
 छिनकु छाइ छवि-गुर-ढरी छले छबोलैं छैल ॥ ७७ ॥  
 कंज-नयनि मंजनु किए बैठी व्यौरति बार ।  
 कच-अँगुरी-बिच दीठि दै चितवति नंदकुमार ॥ ७८ ॥  
 पावक सो नयननु लगै जावकु लाग्यौ भाल ।  
 मुकुरु होहुगे नैक में मुकुरु बिलोकौ लाल ॥ ७९ ॥  
 रहति न रन जयसाहि-मुख लखि लाखनु की फौज ।  
 जाचि निराखरऊ चलै लै लाखनु की मौज ॥ ८० ॥  
 दियौ सु सीस चढ़ाइ लै आछी भाति अएरि ।  
 जापैँ सुख चाहतु लियौ ताके दुखहिँ न फेरि ॥ ८१ ॥  
 तरिवन-कनकु कपोल-दुति बिच बीच ही बिकान ।  
 लाल लाल चमकतिं चुनी चौका-चीन्ह-समान ॥ ८२ ॥  
 मोहि दयौ मेरौ भयौ रहतु जु मिलि जिय साथ ।  
 सो मनु बाधि न सौँपिए पिय सौतिनि कै हाथ ॥ ८३ ॥  
 कुंज-भवन तजि भवन कौं चलियै नंदकिशोर ।  
 फूलति कली गुलाब की चटकाहट चहुँ ओर ॥ ८४ ॥  
 कहति न देवर की कुबत कुल-तिय कलह डराति ।  
 पंजर-गत मंजार-ढिँग सुक ज्यों सूकति जाति ॥ ८५ ॥  
 औरै भाति भएख ए चौसरु चंदनु चंदु ।  
 पति बिनु अति पारतु बिपति मारतु मारतु मंदु ॥ ८६ ॥  
 चलन न पावतु निगम-मगु जगु उपन्यौ अति त्रासु ।  
 कुच-उत्तंग गिरिवर गह्यौ मैना मैनु मवासु ॥ ८७ ॥  
 त्रिबली नाभि दिखाइ कर सिर ढकि सकुचि समाहि ।  
 गली अली की ओट कै चली भली बिधि चाहि ॥ ८८ ॥  
 देखत बुरै कपूर ज्यों उपै जाइ जिन लाल ।  
 छिन छिन जाति परी खरी छीन छबोली बाल ॥ ८९ ॥